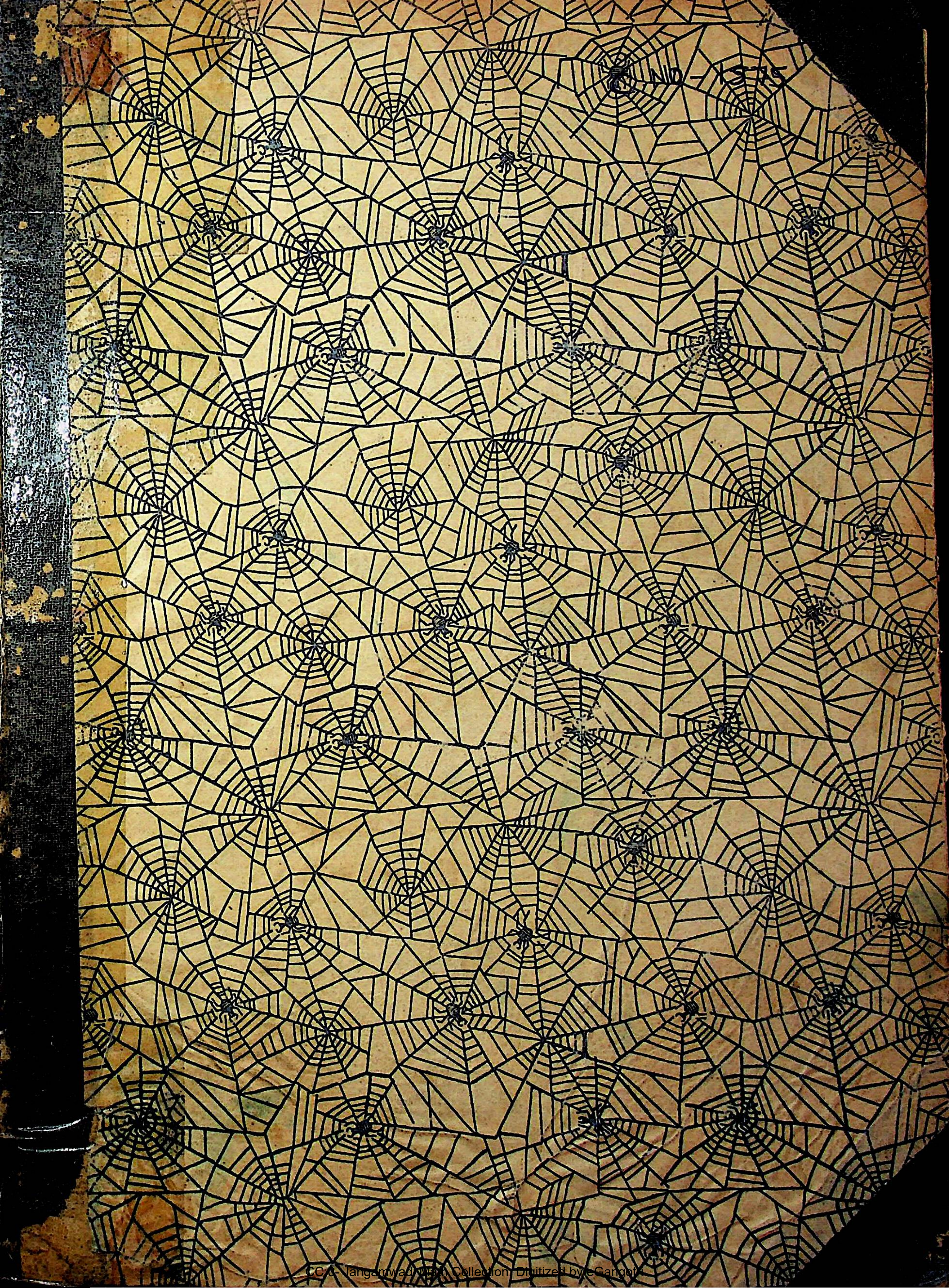
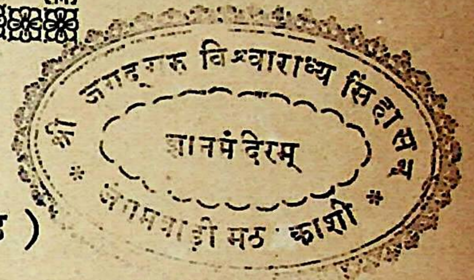

No-1575
CC-0. Jangamwadi Math Collection. Digitized by eGangotri

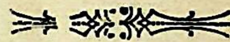


ऋग्वेद-संहिता



(सरल-हिन्दी-टीका-सहित)

पञ्चम अष्टक (प्रथम खण्ड)



टीकाकार

पण्डित रामगोविन्द त्रिवेदी वेदान्तशास्त्री

("दर्शन-परिचय", "हिन्दी-विष्णुपुराण", "हिन्दीपुस्तक-कोष", "राजर्षि प्रह्लाद", "भक्त ध्रुव", "महासती मदालसा", "रत्नावली" आदिके लेखक, "आर्यमहिला" (बनारस), "विश्वदूत" (रंगून), "सेनापति" (कलकत्ता). "गङ्गा" (सुलतानगंज) आदिके भूतपूर्व सम्पादक, "गीता-प्रचारक-महामण्डल" (मोरिशस) के जन्मदाता, "दक्षिण अफ्रीकन सनातन-धर्म-महामण्डल" (डरबन, नेटाल)के आजीवन सभापति तथा भारतधर्ममहामण्डल (बनारस) के महोपदेशक)

—*और*—

पण्डित गौरीनाथ झा व्याकरणतीर्थ

(प्राइवेट सेक्रेटरी, बनैलीराज्याधिपति साहित्य-विभूषण कुमार कृष्णानन्द सिंह बहादुर तथा "गङ्गा" और "वैदिकपुस्तकमाला"के अन्यतम जन्मदाता एवम् अध्यक्ष)



प्रकाशक

पण्डित गौरीनाथ झा व्याकरणतीर्थ

संचालक, "वैदिकपुस्तकमाला", सुलतानगंज (ई० आई० आर०)



मूल्य १) } ज्येष्ठ, १९९२ विक्रमीय { प्रथम संस्करण २०००

मिथिला प्रेस,

खलीफाबाग, भागलपुरमें मुद्रित

प्राथमिकी

चतुर्थ अष्टकके "आत्म-निवेदन"के अनुसार यह पञ्चम अष्टकका प्रथम खण्ड (प्रथम चार अध्याय) आपके सामने है। पञ्चम अष्टकके पञ्चम अध्यायसे अष्टम अध्याय तकका द्वितीय खण्ड होगा। इसी क्रमसे प्रत्येक अष्टकके दो-दो खण्ड होंगे और एक-एक मासमें एक-एक खण्ड निकला करेगा। खण्ड शब्द हमारा है---वेदका पारिभाषिक शब्द नहीं। सुभीतेके लिये हमने इस शब्दको रखा है।

ऋग्वेदमें ६४ अध्याय और ८ अष्टक हैं। प्रत्येक अष्टक ८ अध्यायोंका है। अष्टम अष्टक अर्थात् सम्पूर्ण ऋग्वेद निकल जानेपर एक अलग खण्डमें वर्णानुक्रमिक मन्त्र-सूची, कठिन शब्दोंकी सूची (अर्थ-सहित), वैदिक देवताओंकी सविवरण सूची आदिका समावेश किया जायगा। उसके अनन्तर प्रथम अष्टकमें विज्ञापित "वेद-रहस्य" नामका प्रकाण्ड ग्रन्थ प्रकाशित किया जायगा। हम जानते हैं कि, हमारे अतीव संक्षिप्त अक्षरानुवादको पढ़ते समय अनेक पाठकोंको कितने ही सन्देह होते होंगे मरुद्गण वलय और हार कैसे पहन सकते हैं ? अश्व, पर्वत, वृक्ष, प्रस्तर, धनुष्, चाबुक, लगाम आदिकी स्तुति क्यों की गयी हैं ? ऋषियों और स्तोताओंने गृह, पुत्र, धन, शत्रु-संहारकी बार-बार याचना क्यों की हैं ? सर्वत्र पुनरुक्ति क्यों की गयी हैं ? अष्टक, मण्डल, अध्याय, अनुवाक, सूक्त, वर्ग, देवता, ऋषि, छन्द, विनियोग और यज्ञका क्या रहस्य है ? सोमरसका इतना प्रचलन क्यों था ? आजकलकी दुनियामें वेदाध्ययनकी अनिवार्यता क्यों है ? वेदके प्रचारके विना हिन्दूजातिका अधःपतन क्योंकर हुआ ? इस तरहके और भी अनेक प्रश्न उठते होंगे। वेदको शीघ्र प्रकाशित कर देने और मूल्य कम रखनेके खयालसे ही हमने अपने अनुवादके साथ ऐसे प्रश्नोंका उत्तर देनेकी चेष्टा नहीं की है और ''वेद-रहस्य''में ही सबका विस्तृत उत्तर देनेका निश्चय किया हैं। हाँ, हमारे द्वारा सम्पादित "गङ्गा"के विशेषाङ्क ("वेदाङ्क") में ऐसे कितने ही प्रश्नोंका उत्तर दिया गया हैं। उसका मूल्य २॥) रु० हैं।

प्रेसके भूतोंकी दयासे २५ सूक्तके ५ वें मन्त्र (पृष्ठ ६७) की हिन्दी छूट गयी है और ६ ठे मन्त्रके अनुवादमें ५ अङ्क पड़ गया हैं। ४४ सूक्तके ५ वें मन्त्र (पृष्ठ १०२) की हिन्दी भी छपनेसे रह गयी हैं। इन दोनों मन्त्रोंकी हिन्दी यहाँ दी जाती हैं—

७ मण्डल, २५ सूक्त, ५ मन्त्र (पृष्ठ ६७) का अर्थ—

५ हम हर्यश्व इन्द्रके लिये सुखावह स्तोत्र करके और इन्द्रके समीप देव-प्रेरित बलकी याचना करके, सारे दुर्गोंको पार करते हुए, बल प्राप्त करेंगे। शूर, तुम सदा हमें शत्रु-बधमें समर्थ करना।

७ मण्डल, ४४ सूक्त, ५ मंन्त्र (पृष्ठ १०२)का अर्थ—

५ अश्व-रूप दधिक्रा देवता यज्ञ-मार्गका अनुगमन करनेवाले हमारे स्थानको जलसे सींचें। दिव्य बलवाले अग्नि हमारे आह्वानको सुनें। महान् और विद्वान् समस्त देवता हमारे आह्वानको सुनें।

इस भूलके लिये पाठकोंसे क्षमा-याचना है।

गङ्गा दशहरा, १९९२ — रामगोविन्द त्रिवेदी

कृष्णगढ़, सुलतानगंज — गौरीनाथ झा

पञ्चम अष्टक (प्रथम खण्ड) की कुछ जानने योग्य बातें

वैदिक-पुस्तकमालाकी नियमावली

(१) इस "माला"में हिन्दी-अनुवाद-सहित चारो वेद और विशेषतः वैदिक-ग्रन्थ-पुष्प ही गूँथे जायँगे।

(२) ॥) भेजकर "माला"के स्थायी ग्राहक बननेवालोंको किसी भी पुस्तकपर डाकखर्च नहीं देना पड़ेगा।

(३) स्थायी ग्राहकोंको "माला"में प्रकाशित सभी पुस्तकोंको खरीदना होगा।

(४) "माला"में प्रकाशित पुस्तकें वी०पी० से भेजी जायँगी।

संचालक, "वैदिक-पुस्तकमाला," सुलतानगंज (ई० आई० आर०)



ऋग्वेद-संहिता

(हिन्दी-टीका-सहित)

५ अष्टक । ६ मण्डल । १ अध्याय । ६ अनुवाक ।

६२ सूक्त

अश्वि-द्वय देवता । भरद्वाज ऋषि । अनुष्टुप् छन्द ।

स्तुषे नरा दिवो अस्य प्रसन्ताश्विना हुवे जरमाणो अर्कैः ।
या सद्य उस्रा व्युषि ज्मो अन्तान्युयूषतः पर्युरू वरांसि ॥१॥

१ जो क्षण मात्रमें शत्रुओंको हराते हैं और प्रभातमें पृथिवी-पर्यन्त प्रभूत अन्धकार दूर करते हैं; उन्हीं द्युलोकके नेता और भुवनोंके ईश्वर अश्विनीकुमारोंकी मैं स्तुति करता हूँ और मन्त्रों द्वारा स्तुति करता हुआ उन्हें बुलाता हूँ ।

ता यज्ञमा शुचिभिश्चक्रमाणा रथस्य भानुं रुरुचू रजोभिः ।
पुरू वरांस्यमिता मिमानापो धन्वान्यति याथो अज्रान् ॥२॥
ता ह त्यद्वर्तिर्यदरध्रमुग्रेत्था धिय ऊहथुः शश्वदश्वैः ।
मनोजवेभिरिषिरैः शयध्यै परि व्यथिर्दाशुषो मर्त्यस्य ॥३॥
ता नव्यसो जरमाणस्य मन्मोप भूषतो युयुजानसप्ती ।
शुभं पृक्षमिषमूर्जं वहन्ता होता यक्षत्प्रत्नो अध्रुग्युवाना ॥४॥
ता वल्गू दस्रा पुरुशाकतमा प्रत्ना नव्यसा वचसा विवासे ।
या शंसते स्तुवते शम्भविष्ठा बभूवतुर्गृणते चित्रराती ॥५॥
ता भुज्युं विभिरद्भ्यः समुद्रात्तुग्रस्य सूनुमूहथू रजोभिः ।
अरेणुभिर्योजनेभिर्भुजन्ता पतत्रिभिरर्णसो निरुपस्थात् ॥६॥
वि जयुषा रथ्या यातमद्रिं श्रुतं हवं वृषणा वध्रिमत्याः ।
दशस्यन्ता शयवे पिप्यथुर्गामिति च्यवाना सुमतिं भुरण्यू ॥७॥

२ अश्विनीकुमार यज्ञकी ओर आते हुए, निर्मल तेजोबलसे, रथकी दीप्ति प्रकट करते हैं और असीम रूपसे तेजोंका निर्माण करते हुए जलके लिये अश्वोंको, मरुदेशको लँघाकर, ले गये।

३ अश्विद्वय, उग्र तुमलोग उस असमृद्ध गृहमें जाते हो। इस प्रकार वाञ्छनीय और मनके समान वेगवान् अश्वों द्वारा स्तोताओंको स्वर्ग ले जाओ। हव्य दाता मनुष्यके हिंसकको दीर्घ निद्रामें सुला दो।

४ अश्विद्वय अश्व जोतते हुए सुन्दर अन्न, पुष्टि और रसका वहन करते हुए अभिनव स्तोताकी मनोज्ञ स्तुतिके समीप आवें। वे युवक हैं। होता, द्रोह-रहित और प्राचीन अग्नि उनका याग करें।

५ जो स्तुतिकारी (शस्त्र-स्तोता) और स्तोत्रकर्त्ता व्यक्तिको सुखी करते हैं और स्तुति-कर्त्ताको बहुविध दान देते हैं, उन्हीं रुचिर, बहुकर्मा, प्राचीन और दर्शनीय अश्विद्वयकी, नयी स्तुतिसे, मैं परिचर्या करता हूँ।

६ तुमने तुग्रके पुत्र भुज्युको नौका-रहित हो जानेपर धूलि-रहित मार्गमें रथ-युक्त और गमनशील अश्वों द्वारा जलके उत्पति-स्थान समुद्रके जलसे बाहर किया था।

७ रथारोही अश्विनी-कुमारो, विजयी रथके द्वारा मार्गमें स्थित पर्वतका विनाश करो। तुम काम-वर्षी हो। पुत्रार्थिनीका आह्वान सुनो। स्तोताओंका मनोरथ पूर्ण करते हो। तुम स्तोताकी निवृत्त-प्रसवा गायको दुग्धशालिनी करो। इस प्रकार सुबुद्धशाली होकर सर्वत्रगामी बनो।

यद्रोदसी प्रदिवो अस्ति भूमा हेळो देवानामुत मर्त्यत्रा ।
तदादित्या वसवो रुद्रियासो रक्षोयुजे तपुरघं दधात ॥८॥
य ईं राजानावृतुथा विदधद्रजसो मित्रो वरुणश्चिकेतत् ।
गम्भीराय रक्षसे हेतिमस्य द्रोघाय चिद्वचस आनवाय ॥९॥
अन्तरैश्चक्रैस्तनयाय वर्तिर्द्युमता यातं नृवता रथेन ।
सनुत्येन त्यजसा मर्त्यस्य वनुष्यतामपि शीर्षा ववृक्तम् ॥१०॥
आ परमाभिरुत मध्यमाभिर्नियुद्भिर्यातमवमाभिरर्वाक् ।
दृळ्हस्य चिद्गोमतो वि व्रजस्य दुरो वर्तं गृणते चित्राराती ॥११॥



६३ सूक्त

अश्विद्वय देवता । भरद्वाज ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

क्व १ त्या वल्गू पुरुहूताद्य दूतो न स्तोमोऽविदन्नमस्वान् ।
आ यो अर्वाङ्नासत्या ववर्त प्रेष्ठा ह्यसथो अस्य मन्मन् ॥१॥

---

८ प्राचीन द्यावापृथिवी आदित्यों, वसुओ और रुद्रपुत्रो, अश्विद्वयके परिचारक मनुष्योंके प्रति देवताओंका जो महान् क्रोध है, उस तापकारी क्रोधको राक्षस-पतिको मारनेके काममें लाओ ।

९ जो व्यक्ति लोकोंके राजा इन अश्विनीकुमारोंकी यथासमय परिचर्या करता है, उसे मित्र और वरुण जानते हैं । वह व्यक्ति महाबली राक्षसके विरुद्ध अस्त्र फेंकता है । वह अभिद्रोहात्मक मनुष्योंके वचनानुसार अस्त्र-क्षेप करता है ।

१० अश्विद्वय, तुम उत्तम चक्र, दीप्ति और सारथिवाले रथपर चढ़कर सन्तान देनेके लिये हमारे घरमें आओ और क्रोध छोड़ते हुए मनुष्योंके विघ्न-कर्त्ताओंके मस्तक छिन्न करो ।

११ अश्विद्वय, उत्कृष्ट, मध्यम और साधारण घोड़ोंके साथ हमारे सामने आओ । दृढ़ और गौओंसे भरी गोशालाका दरवाजा खोलो । मैं स्तुति करता हूँ । मुझे विचित्र धन दो ।

---

१ अनेकाहूत और मनोहर अश्विनीकुमार जहाँ ठहरते हैं, वहाँ हव्ययुक्त पञ्चदशादि स्तोम दूतकी तरह उन्हें प्राप्त करे । इसी स्तोमने अश्विद्वयको मेरी ओर घुमाया था । अश्विद्वय, स्तोताकी स्तुतिपर तुम प्रसन्न होते हो ।

अरं मेगन्तं हवनायास्मै गृणाना यथा पिबाथो अन्धः ।
परि ह त्यद्वर्तिर्याथो रिषो न यत्परो नान्तरस्तुतुर्यात् ॥२॥
अकारि वामन्धसो वरीमन्नस्तारि बर्हिः सुप्रायणतमम् ।
उत्तानहस्तो युवयुर्ववन्दा वां नक्षन्तो अद्रय आञ्जन् ॥३॥
ऊर्ध्वो वामग्निरध्वरेष्वस्थात्प्र रातिरेति जूर्णिनो घृताची ।
प्र होता गूर्तमना उराणोऽयुक्त यो नासत्या हवीमन् ॥४॥
अधि श्रिये दुहिता सूर्यस्य रथं तस्थौ पुरुभुजा शतोतिम् ।
प्र मायाभिर्मायिना भूतमत्र नरा नृतू जनिमन्यज्ञियानाम् ॥५॥
युवं श्रीभिर्दर्शताभिराभिः शुभे पुष्टिमूहथुः सूर्यायाः ।
प्र वां वयो वपुषेऽनु पप्तन्नक्षद्वाणी सुष्टुता धिष्ण्या वाम् ॥६॥
आ वां वयोऽश्वासो वहिष्ठा अभि प्रयो नासत्या वहन्तु ।
प्र वां रथो मनोजवा असर्जीषः पृक्ष इषिधो अनु पूर्वीः ॥७॥

२ अश्विद्वय, हमारे आह्वानके अनुसार भली भाँति गमन करो । स्तुति किये जानेपर सोम पान करो। शत्रुसे हमारे घरको बचाओ पास या दूरका शत्रु हमारे घरको नष्ट न करने पावे।

३ सोमका विस्तृत अभिषव, तुम्हारे लिये, प्रस्तुत किया गया है। मृदुतम कुश बिछाये गये हैं। तुम्हारी कामनासे होता हाथ जोड़कर तुम्हारी स्तुति करता है। पत्थरोंने तुम्हें व्याप्त करके सोम रस प्रकट किया है।

४ तुम्हारे यज्ञके लिये अग्नि ऊपर उठते, यज्ञमें जाते तथा हव्य और घृत वाले बनते हैं। जो स्तोता अश्विद्वयका स्तोत्र-युक्त करता है, वही बहुकर्मा और अतीव उद्युक्त-मना होता है।

५ अनेकोंके रक्षक अश्विद्वय, सूर्य पुत्री तुम्हारे बहु रक्षक रथको सुशोभित करनेके लिये अधिष्ठित हुई थी। तुम देवोंकी इसी जन्मकी प्रज्ञासे प्राज्ञ, नेता और नृत्यशाली बनो।

६ इस दर्शनीय कान्ति द्वारा तुम सूर्याको शोभाके लिये पुष्टि प्राप्त करो। शोभाके लिये तुम्हारे घोड़े भली भाँति अनुगमन करते हैं। स्तवनीय अश्विद्वय, भली भाँति की गयी स्तुतियाँ तुम्हें व्याप्त करें।

७ अश्विनी-कुमारो गतशील और ढोनेमें अत्यन्त चतुर घोड़े तुम्हें अन्नकी ओर ले आवें। मनकी तरह वेगशाली तुम्हारा रथ सम्पर्कके योग्य और अभिलषणीय प्रभूत अन्नके लिये छोड़ा गया है।

पुरु हि वां पुरुभुजा देष्णं धेनुं न इषं पिन्वतमसक्राम् ।
स्तुतश्च वां माध्वी सुष्टुतिश्च रसाश्च वामनु रातिमग्मन् ॥८॥
उत म ऋज्रे पुरयस्य रघ्वी सुमीह्ळे शतं पेरुके च पक्वा ।
शाण्डो दाद्धिरणिन स्मद्दिष्टीन्दश वशास अभिषाच ऋष्वान् ॥९॥
सं वां शता नासत्या सहस्राश्वानां पुरुपन्था गिरे दात् ।
भरद्वाजाय वीर नू गिरे दाद्धता रक्षांसि पुरुदंससा स्युः ॥१०॥
आ वां सुम्ने वरिमन्त्सूरिभिः ष्याम् ॥११॥

६४ सूक्त

उषा देवता । भरद्वाज ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

उदु श्रिय उषसो रोचमाना अस्थुरपां नोर्मयो रुशन्तः ।
कृणोति विश्वा सुपथा सुगान्यभूदु वस्वी दक्षिणा मघोनी ॥१॥
भद्रा ददृक्ष उर्विया वि भास्युत्ते शोचिर्भानवो द्यामपप्तन् ।
आविर्वक्षः कृणुषे शुम्भमानोषो देवि रोचमाना महोभिः ॥२॥

---

८ बहु-पालक अश्विनीकुमारो, तुम्हारे पास बहुत धन है; इसलिये हमारे लिये प्रीति-करी और दूसरे स्थानपर न जानेवाली धेनु तथा अन्न दो मादयिता अश्विद्वय, तुम्हारे लिये स्तोता हैं, स्तुतियां हैं और जो तुम्हारे दानके उद्देश्यसे जाते हैं, वे सोमरस भी हैं ।

९ पुरयकी सरल गति और शीघ्रगामिनी दो वड़वाएँ मेरे पास हैं; समीढ़की सौ गायें मेरे पास हैं। पेरुकके पक्व अन्न भी मेरे पास हैं । शान्त नामके राजाने अश्विद्वयके स्तोताओंको हिरण्ययुक्त और सुदृश्य दस रथ या अश्व दिये और उनके अनुरूप ही शत्रु-नाशक तथा दर्शनीय पुरुष भी दिये थे।

१० नासत्यद्वय, तुम्हारे स्तोताको पुरुपन्था नामके राजा सैकड़ो और हजारो अश्व देते हैं। वीर अश्विद्वय, वह स्तोता भरद्वाजको भी शीघ्र दें। बहुकर्म शाली अश्विनीकुमारो, राक्षस विनष्ट हों।

११ अश्विद्वय, मैं, विद्वान् व्यक्तियोंके साथ, तुम्हारे सुखद धनसे परिवेष्टित बनूँ ।

---

१ दीप्तिमती और शुक्लवर्ण उषाएँ, शोभाके लिये, जल-लहरीकी तरह, उत्थित होती हैं । समस्त स्थानोंको उषा सुपथवाले और सरलतासे जाने योग्य बनाती हैं। धनवती उषा प्रशस्ता और समृद्धिमती है ।

२ उषा देवी, तुम कल्याणीकी तरह दिखाई दे रही हो और विस्तृत होकर शोभा पा रही हो। तुम्हारी दीप्तिमती किरणें शोभा पा रही हैं। तुम्हारी दीप्तिमती किरणें अन्तरीक्षमें उठ रही हैं । तुम तेजोंमें शोभमाना और दीप्यमाना होकर रूप प्रकाश कर रही हो ।

वहन्ति सीमरुणासो रुशन्तो गावः सुभगामुर्विया प्रथानाम् ।
अपेजते शूरो अस्तेव शत्रून्बाधते तमो अजिरो नवोह्ला ॥३॥
सुगोत ते सुपथा पर्वतेष्ववाते अपस्तरसि स्वभानो ।
सा न आ वह पृथुयामन्नृष्वे रयिं दिवो दुहितरिषयध्यै ॥४॥
सा वह योक्षभिरवातोषो वरं वहसि जोषमनु ।
त्वं दिवो दुहितर्या ह देवी पूर्वहूतौ मंहना दर्शता भूः ॥५॥
उत्ते वयश्चिद्वसतेरपप्तन्नरश्च ये पितुभाजो व्युष्टौ ।
अमा सते वहसि भूर वाममुषो देवि दाशुषे मर्त्याय ॥६॥

६५ सूक्त

उषा देवता । भरद्वाज ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

एषा स्या नो दुहिता दिवोजाः क्षितीरुच्छन्ती मानुषीरजीगः ।
या भानुना रुशता राम्यास्वज्ञायि तिरस्तमसश्चिदक्तून् ॥१॥
वि तद्ययुररुणयुग्भिरश्वैश्चित्रं भान्त्युषसश्चन्द्ररथाः ।
अग्रं यज्ञस्य बृहतो नयन्तीर्वि ता बाधन्ते तम ऊर्म्यायाः ॥२॥

३ लोहित-वर्ण और दीप्तिमान् रश्मियाँ सुभगा, विस्तीर्ण और प्रथमा उषा देवताको वहन करती हैं जैसे शस्त्र फेंकनेमें निपुण वीर शत्रुको दूर करता है, वैसे ही उषा अन्धकारको दूर करती हैं तथा शीघ्रगामी सेनापतिकी तरह अन्धकारका रोकती हैं ।

४ पर्वत और वायु रहित प्रदेश तुम्हारे लिये सुपथ और सुगम हैं । हे स्वप्रकाश-युक्ता, तुम अन्तरीक्षको पार कर डालती हो । विशाल रथवाली और सुदर्शनीय द्युलोक-दुहिता, हमें अभिलषणीय धन दो ।

५ उषा देवी मुझे धन दो । तुम अप्रतिगत होकर प्रीति-पूर्वक अश्व द्वारा धन ढोती हो । हे द्युलोक-पुत्री, तुम दीप्तिमती हो । प्रथम आह्वानमें पूजनीया हो । इस लिये तुम दर्शनीया होओ ।

६ उषा देवी तुम्हारे प्रकट होनेपर चिड़ियाँ घोसलोंसे निकलती हैं और अन्नके उपार्जक मनुष्य सोकर उठते हैं । समीपमें वर्तमान हव्यदाता मनुष्यको यथेष्ट धन देती हो ।

१ जो उषा दीप्तिमान् किरणोंसे युक्त होकर रात्रिमें तेजःपदार्थ (नक्षत्रादि) और अन्धकारको तिरस्कृत करती दिखाई देती हैं, वही द्युलोकोत्पन्ना पुत्री उषा हमारे लिये अन्धकार दूर करके प्रजागणको प्रकाशित करती हैं ।

२ कान्तियुक्त रथवाली उषा देवी उसी समय बृहत् यज्ञका प्रथम चरण सम्पादित करके लाल रंगके घोड़ोंसे विस्तृत रूपसे गमन करती हैं । वह विचित्र रूपसे शोभा पाती हैं और रात्रिके अन्धकारको भली भाँति दूर हटाती हैं ।

श्रवो वाजमिषमूर्जं वहन्तीर्नि दाशुष उषसो मर्त्याय ।
मघोनोर्वीरवत्पत्यमाना अवो धात विधते रत्नमद्य ॥३॥
इदा हि वो विधते रत्नमस्तीदा वीराय दाशुष उषासः ।
इदा विप्राय जरते यदुक्था निष्म मावते वहथा पुरा चित् ॥४॥
इदा हि त उषो अद्रिसानो गोत्रा गवामङ्गिरसो गृणन्ति ।
व्य १ र्केण बिभिदुर्ब्रह्मणा च सत्या नृणामभवद्देवहूतिः ॥५॥
उच्छा दिवो दुहितः प्रत्नवन्नो भरद्वाजवद्विधते मघोनि ।
सुवीरं रयिं गृणते रिरीह्युरुगा यमधि धेहि श्रवो नः ॥६॥

६६ सूक्त

मरुद्गण देवता । भरद्वाज ऋषि त्रिष्टुप् छन्द ।

वपुर्नु तच्चिकितुषे चिदस्तु समानं नाम धेनु पत्यमानम् ।
मर्तेष्वन्यद्दोहसे पीपाय । सकृच्छुक्रं दुदुहे पृश्निरूधः ॥१॥

---

३ उषा देवियो, तुम हव्यदाता मनुष्यको कीर्त्ति, बल, अन्न और रस दान करती हो। तुम धनशालिनी और गमनशीला हो। आज परिचर्या करनेवालेको पुत्र-पौत्र आदिसे युक्त अन्न और धन दो।

४ उषा देवियो, तुम्हारी परिचर्या करनेवालेके लिये इस समय धन है इस समय वीर हव्यदाताके लिये तुम्हारे पास धन है। इस समय प्राज्ञ स्तोताके लिये तुम्हारे पास धन हैं जिस विप्रमें उक्थ नामक मन्त्र हैं, ऐसे मेरे समान व्यक्तिको, पहलेकी तरह, वहां धन दो।

५ गिरितट-प्रिय उषा देवो, अङ्गिरा लोगोंने तुम्हारी कृपासे तुरत ही गायोंको छोड़ दिया था और पूजनीय स्तोत्र द्वारा अन्धकारका विनाश किया था। नेता अङ्गिरा लोगोंकी स्तुति सत्य-फलवती हुई थी।

६ द्युलोक-पुत्री उषा, प्राचीन लोगोंको तरह हमारे लिये अन्धकार दूर करो धनशालिनी उषा, भरद्वाजकी तरह स्तुति करनेवाले मुझे पुत्र-पौत्र आदिसे युक्त धन दो। हमें अनेकोंके गन्तव्य अन्न दो।

१ मरुतोंके समान, स्थिर पदार्थोंमें भी स्थिर प्रीतिकर और गतिपरायण रूप, विद्वान् स्तोताके निकट, शीघ्र प्रकट हो। वह अन्तरीक्षमें एक बार शुक्लवर्ण जल क्षरण करता और मर्त्यलोकमें अन्य पदार्थ दोहन करनेके लिये बढ़ता है।

ये अग्नयो न शोशुचन्निधाना द्विर्यत्त्रिर्मरुतो वावृधन्त ।
अरेणवो हिरण्ययास एषां साकं नृम्णैः पौंस्येभिश्च भूवन् ॥२॥
रुद्रस्य ये मीह्लुषः सन्ति पुत्रा यांश्चो नु दाधृविर्भरध्यै ।
विदे हि माता महो मही षा सेत् पृश्निः सुभ्वे गर्भमाधात् ॥३॥
न य ईषन्ते जनुषोया न्वन्तः सन्तोऽवद्यानि पुनानाः ।
निर्यद्दुह्रे शुचयोऽनु जोषमनु श्रिया तन्वमुक्षमाणाः ॥४॥
मक्षू न येषु दोहसे चिदया आ नाम धृष्णु मारुतं दधानाः ।
न ये स्तौना अयासो मह्ना नू चित्सुदानुरव यासदुग्रान् ॥५॥
त इदुग्राः शवसा धृष्णुषेणा उभे युजन्त रोदसी सुमेके ।
अध स्मैषु रोदसी स्वशोचिरामवत्सु तस्थौ न रोकः ॥६॥

२ जो धनी अग्निके समान दीप्त होते हैं, जो इच्छानुसार द्विगुण और त्रिगुण बढ़ते हैं, उन मरुतोंके रथ धूलि-शून्य और सुवर्णालङ्कारवाले हैं । वे ही मरुत् धन और बलके साथ प्रादुर्भूत होते हैं।

३ सेचनकारी रुद्रके जो मरुद्गण पुत्र हैं और जिनको धारण-कर्त्ता अन्तरीक्ष धारण करनेमें समर्थ हैं, उन्हीं महान् मरुतोंकी माता (पृश्नि) महती हैं । वह माता मनुष्योत्पत्तिके लिये गर्भ या जल धारण करती है।

४ जो स्तोताओंके पास यानपर नहीं जाते; परन्तु उनके अन्तःकरणमें रहकर पापोंको विनष्ट करते हैं, जो दीप्तिमान् हैं, जो स्तोताओंकी अभिलाषाके अनुसार जल दूह लेते हैं, जो दीप्तियुक्त होकर अपनेको प्रकाशित करते हैं और भूमिको सींचते हैं।

५ जिनको उद्देश करके इस समय समीपवर्ती स्तोता मरुत्सञ्ज्ञक शस्त्रका उच्चारण करते हुए शीघ्र मनोरथ प्राप्त करते हैं, जो अपहरण-कर्त्ता, गमनशील और महत्त्वयुक्त हैं, उन्हीं उग्र मरुतोंको इस समय दानकर्त्ता यजमान क्रोध-शून्य करता है।

६ वे उग्र और बलशाली हैं। वे धर्षण करनेवाली सेनाको सुरूपिणी द्यावा-पृथिवीके सहित योजित करते हैं। इनकी रोदसी (माध्यमिकी वाक्) स्वदीप्तिसे संयुक्त है। इन बलवान् मरुतोंमें दीप्ति नहीं है।

अनेनो वो मरुतो यामो अस्त्वनश्वश्चिद्यमजत्यरथीः ।
अनवसो अनभीशू रजस्तूर्वि रोदसी पथ्या याति साधन् ॥७॥
नास्य वर्ता न तरुता न्वस्ति मरुतो यमवथ वाजसातौ ।
तोके वा गोषु तनये यमप्सु स व्रजं दर्ता पार्ये अध द्योः ॥८॥
प्र चित्रमर्कं गृणते तुराय मारुताय स्वतवसे भरध्वम् ।
ये सहांसि सहसा सहन्ते रेजते अग्ने पृथिवी मखेभ्यः ॥९॥
त्विषीमन्तो अध्वरस्येव दिद्युत्तृषुच्यवसो जुह्वो नाग्नेः ।
अर्चत्रयो धुनयो न वीरा भ्राजज्जन्मानो मरुतो अधृष्टाः ॥१०॥
तं वृधन्तं मारुतं भ्राजदृष्टिं रुद्रस्य सूनुं हवसा विवासे ।
दिवः शर्धाय शुचयो मनीषा गिरयो नाप उग्रा अस्पृध्रन् ॥११॥



६७ सूक्त

मित्र और वरुण देवता। भरद्वाज ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

विश्वेषां वः सतां ज्येष्ठतमा गीर्भिर्मित्रा वरुणा वावृधध्यै ।
सं या रश्मेव यमतुर्यमिष्ठा द्वा जनाँ असमा बाहुभिः स्वैः ॥१॥

७ मरुतो, तुम्हारा रथ पाप-रहित हो। सारथि न होकर भी स्तोता जिसे चलाता है, वही रथ अश्व-रहित होकर भी, भोजन-शून्य और पाशरहित होकर भी, जल-प्रेरक और अभीष्टप्रद होकर द्यावापृथिवी और अन्तरीक्षमें गमन करता है।

८ मरुतो, तुम लोग संग्राममें जिसकी रक्षा करते हो, उसका कोई प्रेरक नहीं होता और न उसकी कोई हिंसा ही होती है। तुम पुत्र, पौत्र, गौ और जलके संवरणमें जिसकी रक्षा करते हो, वह संग्राममें शत्रुओंके गो-समूहको विदीर्ण करता है।

९ अग्नि, जो बल द्वारा शत्रुओंका बल दबा देते हैं, जिन महान् मरुतोंसे पृथिवी काँपती है, उन्हीं शब्दकर्त्ता शीघ्र बलवान् मरुतोंको दर्शनीय अन्न दो।

१० मरुद्गण यज्ञकी तरह प्रकाशमान हैं। जो शीघ्रगामी अग्नि-शिखाकी तरह दीप्तिमान और पूजनीय हैं, वे शत्रुओंके प्रकम्पक व्यक्तियोंकी तरह वीर, दीप्त शरीरसे युक्त और अनभिभूत हैं।

११ मैं उन्हीं वर्द्धमान और दीप्तिमान्, खड्गसे युक्त रुद्रपुत्र मरुतोंकी स्तोत्र द्वारा परिचर्या करता हूँ। स्तोताकी निर्मल स्तुतियाँ उग्र होकर मेघकी तरह मरुतोंके बलकी बराबरी करती हैं।

१ सारे विश्वमें श्रेष्ठ मित्र और वरुण, तुम्हें मैं स्तुति द्वारा वर्द्धित करता हूँ। तुम दोनों विषम और यन्तृ-श्रेष्ठ हो। रज्जुकी तरह अपनी भुजाओं द्वारा तुम मनुष्योंको संयत करते हो।

इयं मद्वां प्रस्तृणीते मनीषोप प्रिया नमसा बर्हिरच्छ ।
यन्तं नो मित्रावरुणावधृष्टं छर्दिर्यद्वां वरूथ्यं सुदानू ॥२॥
आ यातं मित्रावरुणा सुशस्त्युप प्रिया नमसा हूयमाना ।
सं यावप्नःस्थो अपसेव जनाञ्छ्रुधीयतश्चिद्यतथो महित्वा ॥३॥
अश्वा न या वाजिना पूतबन्धू ऋता यद्गर्भमदितिर्भरध्यै ।
प्र या महि महान्ता जायमाना घोरा मर्ताय रिपवे नि दीधः ॥४॥
विश्वे यद्वां मंहना मन्दमानाः क्षत्रं देवासो अदधुः सजोषाः ।
परि यद्भूथो रोदसी चिदुर्वी सन्ति स्पशो अदब्धासो अमूराः ॥५॥
ता हि क्षत्रं धारयेथे अनु द्यून्दृंहेथे सानुमुपमादिव द्योः ।
दृह्लो नक्षत्र उत विश्वदेवो भूमिमातान्द्यां धासिनायोः ॥६॥
ता विग्रं धैथे जठरं पृणध्या आ यत्सद्म सभृतयः पृणन्ति ।
न मृष्यन्ते युवतयोऽवाता वि यत्पयो विश्वजिन्वा भरन्ते ॥७॥

२ प्रिय मित्र और वरुण, हमारी यही स्तुति तुम्हें प्रच्छादित करती है। हव्यके साथ तुम्हारे पास यही स्तुति जाती हैं और तुम्हारे यज्ञकी ओर जाती है। हे सुन्दर दानवाले मित्र और वरुण, हमें शीत आदिका निवारक और अनभिभूत गृह दो।

३ प्रिय मित्र और वरुण, अन्न और स्तोत्र द्वारा आहूत होकर आओ। जैसे कर्म-नियुक्त कर्म द्वारा अन्नार्थी व्यक्तिओंको संयत करता है, वैसे ही तुम भी अपनी महिमा द्वारा करो।

४ जो अश्वकी तरह बली, पवित्र स्तोत्रसे युक्त और सत्यरूप हैं, उन्हीं गर्भभूत मित्र और वरुणको अदितिने धारण किया था। जन्म लेनेके साथ ही जो महान्से भी महान् और हिंसक मनुष्यके घातक हुए, उन्हें अदितिने धारण किया था।

५ परस्पर प्रीतियुक्त होकर समस्त देवोंने, तुम्हारी महिमाका कीर्त्तन करते हुए, बल धारण किया है। तुम लोग विस्तीर्ण द्यावापृथिवीको परिभूत करते हो। तुम्हारी रश्मि अहिंसित और अगूढ़ हैं।

६ तुम प्रतिदिन बल धारण करते हो। अन्तरीक्षके उन्नत प्रदेश (मेघ अथवा सूर्य) को खूँटेकी तरह दृढ़ रूपसे धारण करो। तुम्हारे द्वारा दृढ़ीकृत मेघ अन्तरीक्षमें व्याप्त होता है और विश्वदेव (सूर्य) मनुष्यके हव्यसे तृप्त होकर भूमि और द्युलोकमें व्याप्त होते हैं।

७ सोम द्वारा उदर पूर्ण करनेके लिये तुम लोग प्राज्ञ व्यक्तिको धारण करते हो। हे विश्वजिन्वा मित्र और वरुण, जिस समय ऋत्विक् लोग यज्ञ-गृह पूर्ण करते हैं और तुम जल भेजते हो, उस समय युवतियाँ (नदियाँ अथवा दिशाएँ) धूलिसे नहीं भरतीं; परञ्च अशुष्क और अवात होकर विभूति धारण करती हैं।

ता जिह्वया सदमेदं सुमेधा आ यद्वां सत्यो अरतिर्ऋते भूत् ।
तद्वां महित्वं घृतान्नावस्तु युवं दाशुषे वि चयिष्टमंहः ॥८॥
प्र यद्वां मित्रावरुणा स्पूर्धन्प्रिया धाम युवधिता मिनन्ति ।
न ये देवास ओहसा न मर्ता अयज्ञसाचो अप्यो न पुत्राः ॥९॥
वि यद्वाचं कीस्तासो भरन्ते शंसन्ति के चिन्निविदो मनानाः ।
आद्वां ब्रवाम सत्यान्युक्था नकिर्देवेभिर्यतथो महित्वा ॥१०॥
अवोरित्था वां छर्दिषो अभिष्टौ युवोर्मित्रावरुणावस्कृधोयु ।
अनु यद्गावः स्फुरानृजिप्यं धृष्णुं यद्रणे वृषणं युनजन् ॥११॥



६८ सूक्त

इन्द्र और वरुण देवता। भरद्वाज ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

श्रुष्टी वां यज्ञ उद्यतः सजोषा मनुष्वद्वृक्तबर्हिषो यजध्यै ।
आ य इन्द्रावरुणाविषे अद्य महे सुम्नाय मह आववर्तत् ॥१॥

८ मेधावी व्यक्ति तुमसे सदा वचन द्वारा इस जलकी याचना करता है। हे घृतान्नयुक्त मित्र और वरुण, जैसे तुम्हारा अभिगन्ता यज्ञमें माया-रहित होता है, वैसी ही तुम्हारी महिमा हो। हव्यदाताका पाप विनष्ट करो।

९ मित्र और वरुण, जो लोग स्पर्द्धा करके तुम्हारे द्वारा विहित और तुम्हारे प्रिय कर्ममें विघ्न करते हैं, जो देवता और मनुष्य स्तोत्र-रहित हैं, जो कर्मशील होकर भी यज्ञ सम्पन्न नहीं हैं और जो पुत्र-रूप नहीं हैं, उन्हें विनष्ट करो।

१० जिस समय मेधावी लोग स्तुतिका उच्चारण करते हैं, कोई-कोई स्तुति करते हुए सूक्त-पाठ करते हैं, और जब हम तुम्हें लक्ष्यकर, सत्य मन्त्रोंका पाठ करते हैं, उस समय तुम लोग महिमान्वित होकर देवोंके साथ नहीं चला जाना।

११ रक्षक वरुण और मित्र, जिस समय स्तुतियाँ उच्चारित होती हैं और जब सरलगामी, धर्षक तथा अभीष्टवर्षी सोमको यज्ञमें संयुक्त किया जाता है, उस समय गृह-दानके लिये तुम्हारे आनेपर तुम्हारा दातव्य गृह अविच्छिन्न होता है, यह सत्य है।

---

१ महान् इन्द्र और वरुण, मनुकी तरह कुश-विस्तारक यजमानके अन्न और सुखके लिये जो यज्ञ आरम्भ होता है, आज, तुम लोगोंके लिये, वही क्षिप्र यज्ञ ऋत्विकों द्वारा प्रवृत्त किया गया है।

ता हि श्रेष्ठा देवताता तुजा शूराणां शविष्ठा ता हि भूतम् ।
मघोनां मंहिष्ठा तुविशुष्म ऋतेन वृत्रतुरा सर्वसेना ॥२॥
ता गृणीहि नमस्येभिः शूषैः सुम्नेभिरिन्द्रावरुणा चकाना ।
वज्रेणान्यः शवसा हन्ति वृत्रं सिषक्त्यन्यो वृजनेषु विप्रः ॥३॥
ग्नाश्च यन्नरश्च वावृधन्त विश्वे देवासो नरां स्वगूर्ताः ।
प्रैभ्य इन्द्रावरुणा महित्वा द्यौश्च पृथिवि भूतमुर्वी ॥४॥
स इत्सुदानुः स्ववाँ ऋतावेन्द्रा यो वां वरुण दाशति त्मन् ।
इषा स द्विषस्तरेद्दास्वान्वंसद्रयिं रयिवतश्च जनान् ॥५॥
यं युवं दाश्वध्वराय देवा रयिं धत्थो वसुमन्तं पुरुक्षुम् ।
अस्मे स इन्द्रावरुणावपि ष्यात् प्र यो भनक्ति वनुषामशस्तीः ॥६॥
उत नः सुत्रात्रो देवगोपाः सूरिभ्य इन्द्रावरुणा रयिः ष्यात् ।
येषां शुष्मः पृतनासु साह्वान्प्र सद्यो द्युम्ना तिरते ततुरिः ॥७॥

---

२ तुम श्रेष्ठ हो, यज्ञमें धन देनेवाले हो और वीरोंमें अतीव बलवान् हो। दाताओंमें श्रेष्ठ दाता तथा बहु-बलशाली सत्यके द्वारा शत्रुओंके हिंसक और सब प्रकारकी सेनाओंवाले हो।

३ स्तुति, बल और सुखके द्वारा स्तुत इन्द्र और वरुणकी स्तुति करो। उनमेंसे एक (इन्द्र) वृत्रका बध करते हैं, दूसरे प्रजा-युक्त (वरुण) उपद्रवोंसे रक्षा करनेके लिये बलशाली होते हैं।

४ इन्द्र और वरुण, मनुष्योंमें पुरुष और स्त्री एवम् समस्त देवगण स्वतः उद्यत होकर जब तुम्हें स्तुति द्वारा वर्द्धित करते हैं, तब महिमान्वित होकर तुम लोग उनके प्रभु बनो। विस्तीर्ण द्यावापृथिवी, तुम इनके प्रभु बनो ।

५ इन्द्र और वरुण, जो यजमान तुम्हें स्वयं हवि देता है, वह सुन्दर दानवाला धनवान् और यज्ञशाली होता है। वही दाता, जय-प्राप्त अन्नके साथ, शत्रुके हाथसे उद्धार पाता तथा धन और सम्पत्तिशाली पुत्र प्राप्त करता है ।

६ देव, इन्द्र और वरुण, तुम हव्यदाताको धनानुगामी और बहु-अन्नशाली जो धन देते हो और जो शत्रु-कृत अयशको दूर करता है, वही धन हमें मिले।

७ इन्द्र और वरुण, हम तुम्हारे स्तोता हैं। जो धन सुरक्षित है और जिसके रक्षक देवगण हैं, वही धन हम स्तोताको हो। हमारा बल संग्राममें शत्रुओंको दबानेवाला और हिंसक होकर तुरत उनके यशको तिरस्कृत करे।

नू न इन्द्रावरुणा गृणाना पृङ्क्तं रयिं सौश्रवसाय देवा ।
इत्था गृणन्तो महिनस्य शर्धोऽपो न नावा दुरिता तरेम ॥८॥
प्र सम्राजे बृहते मन्म नु प्रियमर्च देवाय वरुणाय सप्रथः ।
अयं य उर्वी महिना महिव्रतः क्रत्वा विभात्यजरो न शोचिषा ॥९॥
इन्द्रावरुणा सुतपाविमं सुतं सोमं पिबतं मद्यं धृतव्रता ।
युवो रथो अध्वरं देववीतये प्रति स्वसरमुप याति पीतये ॥१०॥
इन्द्रावरुणा मधुमत्तमस्य वृष्णः सोमस्य वृषणा वृषेथाम् ।
इदं वामन्धः परिषिक्तमस्मे आसद्यास्मिन्बर्हिषि मादयेथाम् ॥११॥

६९ सूक्त

इन्द्र और विष्णु देवता । भरद्वाज ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

सं वां कर्मणा समिषा हिनोमीन्द्राविष्णू अपसस्पारे अस्य ।
जुषेथां यज्ञं द्रविणं च धत्तमरिष्टैर्नः पथिभिः पारयन्ता ॥१॥

---

८ इन्द्र और वरुण, तुम लोग स्तुत होकर सुअन्नके लिये हमें शीघ्र धन दो। देवो, तुम लोग महान् हो। हम इस प्रकार तुम्हारे बलकी स्तुति करते हैं। हम नौका द्वारा जलकी तरह पापोंको पार कर सकें।

९ जो वरुण महिमान्वित, महाकर्मा, प्रज्ञा-युक्त, तेजःसम्पन्न और अजर हैं, जो विस्तीर्ण द्यावापृथिवीको विभासित करते हैं, उन्हीं सम्राट् और विराट् वरुणको लक्ष्य कर आज मनोहर और सब प्रकारसे विशालस्तोत्र पढ़ो ।

१० इन्द्र और वरुण, तुम सोमका पान करनेवाले हो; इसलिये इस मादक और अभिषुत सोमका पान करो। हे धृत-व्रत मित्र और वरुण, देवोंके पानके लिये तुम्हारा रथयज्ञकी ओर आता है।

११ हे काम-वर्षी इन्द्र और वरुण, तुम अतीव मधुर और मनोरथ-वर्षक सोमका पान करो। तुम्हारे लिये हमने इस सोम-रूप अन्नको ढाला है; इसलिये इसमें बैठकर इस यज्ञमें सोमपानसे मत्त होओ।



१ इन्द्र और विष्णु, तुम्हें लक्ष्य कर स्तोत्र और हवि मैं प्रेरित करता हूँ। इस कर्मके समाप्त होनेपर तुम लोग यज्ञकी सेवा करो। उपद्रव-शून्य मार्ग द्वारा हमें पार करते हो। तुम हमें धन दो ।

या विश्वासां जनितारा मतीनामिन्द्राविष्णू कलशा सोमधाना ।
प्र वां गिरः शस्यमाना अवन्तु प्र स्तोमासो गीयमानासो अर्कैः ॥२॥
इन्द्राविष्णू मदपती मदानामा सोमं यातं द्रविणो दधाना ।
सं वामञ्जन्त्वक्तुभिर्मतीनां सं स्तोमासः शस्यमानास उक्थैः ॥३॥
आ वामश्वासो अभिमातिषाह इन्द्राविष्णू सधमादो वहन्तु ।
जुषेथां विश्वा हवना मतीनामुप ब्रह्माणि शृणुतं गिरो मे ॥४॥
इन्द्राविष्णू तत्पनयाय्यं वां सोमस्य मद उरु चक्रमाथे ।
अकृणुतमन्तरिक्षं वरीयोऽप्रथतं जीवसे नो रजांसि ॥५॥
इन्द्राविष्णू हविषा वावृधानाग्राद्वाना नमसा रातहव्या ।
घृतासुती द्रविणं धत्तमस्मे समुद्रः स्थः कलशः सोमधानः ॥६॥
इन्द्राविष्णू पिबतं मध्वो अस्य सोमस्य दस्रा जठरं पृणेथाम् ।
आ वामन्धांसि मदिराण्यग्मन्नुप ब्रह्माणि शृणुतं हवं मे ॥७॥

---

२ इन्द्र और विष्णु, तुम स्तुतियोंके जनक हो। तुम कलश-स्वरूप और सोमके निधान-भूत हो कहे जानेवाले स्तोत्र तुम्हें प्राप्त हों। स्तोताओं द्वारा गीयमान स्तोत्र तुम्हें प्राप्त हों।

३ इन्द्र और विष्णु, तुम सोमोंके अधिपति हो। धन देते हुए तुम सोमके अभिमुख आओ। स्तोताओंके स्तोत्र, उक्थोंके साथ, तुम्हें तेज द्वारा वर्द्धित करें।

४ इन्द्र और विष्णु, हिंसाकारियोंको हरानेवाले और एकत्र मत्त अश्वगण तुम्हें वहन करें। स्तोताओंके सारे स्तोत्रोंका तुम सेवन करो। मेरे स्तोत्रों और वचनोंको भी सुनो।

५ इन्द्र और विष्णु, सोमका मद या हर्ष उत्पन्न होनेपर तुम लोग विस्तृत रूपसे परिक्रमा करते हो। तुमने अन्तरीक्षको विस्तृत किया है। तुमने लोकोंको हमारे जीनेके लिये प्रसिद्ध किया है। तुम्हारे ये सब कर्म प्रशंसाके योग्य हैं।

६ घृत और अन्नसे युक्त इन्द्र और विष्णु, तुम सोमसे बढ़ते हो और सोमके अग्र भागका भक्षण करते हो। नमस्कारके साथ यजमान लोग तुम्हें हव्य देते हैं। तुम हमें धन दो। तुम लोग समुद्रको तरह हो। तुम सोमकी खान और कलशके रूप हो।

७ दर्शनीय इन्द्र और विष्णु, तुम इस मदकारी सोमको पियो और उदर भरो। तुम्हारे पास मद-कर सोम-रूप अन्न जाय। मेरा स्तोत्र और आह्वान सुनो।

उभा जिग्यथुर्न परा जयेथे न पराजिग्ये कतरश्चनैनोः ।
इन्द्रश्च विष्णो यदपस्पृधेथां त्रेधा सहस्रं वि तदैरयेथाम् ॥८॥

७० सूक्त

द्यावापृथिवी देवता । भरद्वाज ऋषि । जगती छन्द ।

घृतवती भुवनानामभिश्रियोर्वी पृथ्वी मधुदुघे सुपेशसा ।
द्यावापृथिवी वरुणस्य धर्मणा विष्कभिते अजरे भूरिरेतसा ॥१॥
असश्चन्ती भूरिधारे पयस्वती घृतं दुहाते सुकृते शुचिव्रते ।
राजन्ती अस्य भुवनस्य रोदसी अस्मे रेतः सिञ्चतं यन्मनुर्हितम् ॥२॥
यो वामृजवे क्रमणाय रोदसी मर्तो ददाश धिषणे स साधति ।
प्र प्रजाभिर्जायते धर्मणस्परि युवोः सिक्ता विषुरूपाणि सव्रता ॥३॥
घृतेन द्यावापृथिवी अभीवृते घृतश्रिया घृतपृचा घृतावृधा ।
उर्वी पृथ्वी होतृवूर्ये पुरोहिते ते इद्विप्रा ईळते सुम्नमिष्टये ॥४॥

---

८ इन्द्र और विष्णु, तुम विजयी हो; कभी पराजित नहीं होते। तुम दोनोंमेंसे कोई भी पराजित होनेवाला नहीं है। तुमने जिस वस्तुके लिये असुरोंके साथ स्पर्द्धा की है, वह यद्यपि त्रिधा (लोक, वेद और वचनके रूपोंमें) स्थित और असङ्ख्य है, तथापि तुमने अपने विक्रमसे उसे प्राप्त किया है।

---

१ हे द्यावापृथिवी, तुम जलवती, भूतोंके आश्रय-स्थल, विस्तीर्णा, प्रसिद्धा, जलदोहन-कर्त्री, सुरूपा, वरुणके धारण द्वारा पृथक् रूपसे धारिता, नित्या और बहुकर्मा हो।

२ असङ्गता, बहुधारावती. जलवती और शुचिकर्मा द्यावापृथिवी, सुकृती व्यक्तिको तुम, जल देती हो। हे द्यावापृथिवी, तुम भुवनकी राज्ञी हो। तुम मनुष्योंका हितैषी वीर्य हमें दान दो ।

३ सर्व-निवासभूता द्यावापृथिवी, जो मनुष्य तुम्हें, सरल गमनके लिये, यह देता हैं, वह सिद्ध-मनोरथ होता और अपत्योंके साथ बढ़ता है। कर्मोंके ऊपर तुम्हारे द्वारा सिक्त रेत नाना रूप है और वह समानकर्मा उत्पन्न होता है।

४ द्यावापृथिवी जल द्वारा ढकी हुई हैं और और जलका आश्रय करती हैं। वह जलसे ओत प्रोत हैं, जलवर्षा विधायिनी और विस्तृता हैं, प्रसिद्धा और यज्ञमें पुरस्कृता हैं । यज्ञके लिये विद्वान् उनसे सुखकी याचना करता है।

मधु नो द्यावापृथिवी मिमिक्षतां मधुश्चुता मधुदुघे मधुव्रते ।
दधाने यज्ञं द्रविणं च देवता महि श्रवो वाजमस्मे सुवीर्यम् ॥५॥
ऊर्जं नो द्यौश्च पृथिवी च पिन्वतां पिता माता विश्वविदा सुदंससा ।
संरराणे रोदसी विश्वशम्भुवा सनिं वाजं रयिमस्मे समिन्वताम् ॥६॥

७१ सूक्त

सविता देवता भरद्वाज ऋषि जगती और त्रिष्टुप् छन्द ।

उदु ष्य देवः सविता हिरण्यया बाहू अयंस्त सवनाय सुक्रतुः ।
घृतेन पाणी अभिप्रष्णुते मखो युवा सुदक्षो रजसो विधर्मणि ॥१॥
देवस्य वयं सवितुः सवीमनि श्रेष्ठे स्याम वसुनश्च दावने ।
यो विश्वस्य द्विपदो यश्चतुष्पदो निवेशने प्रसवे चासि भूमनः ॥२॥
अदब्धेभिः सवितः पायुभिष्ट्वं शिवेभिरद्य परि पाहि नो गयम् ।
हिरण्यजिह्वः सुविताय नव्यसे रक्षा माकिर्नो अघशंस ईशत ॥३॥
उदु ष्य देवः सविता दमूना हिरण्यपाणिः प्रतिदोषमस्थात् ।
अयोहनुर्यजतो मन्द्रजिह्व आ दाशुषे सुवति भूरि वामम् ॥४॥

---

५ जलका क्षरण करनेवाली, जल दूहने वाली, उदककर्मा देवी तथा हमें यज्ञ, धन, महान् यश, अन्न और वीर्य देनेवाली द्यावापृथिवी हमें मधुसे सींचे ।

६ पिता द्युलोक और माता पृथिवी, हमें अन्न दो । संसारको जानने वाली सुकर्मा परस्पर रममाण और सबको सुख देनेवाली द्यावापृथिवी हमें पुत्रादि, बल और धन दें ।



१ वही सुकृती सविता देवता दानके लिये हिरण्मय बाहुओंको ऊपर उठाते हैं । विशाल, तरुण और विद्वान् सविता, संसारकी रक्षाके लिये दोनों जलमय बाहुओंको प्रेरित करते हैं ।

२ हम उन्हीं सविताके प्रसव-कर्म और प्रशस्त धनदानके विषयमें समर्थ हों । सविता, तुम सारे द्विपदों और चतुष्पदोंकी स्थिति और प्रसव (उत्पत्ति) में समर्थ हो ।

३ सविता, तुम आज अहिंसित और सुखावह तेजके द्वारा हमारे घरोंकी रक्षा करो । तुम हिरण्य-वाक् हो । नया सुख दो और हमारी रक्षा करो हमारा अहित करनेवाला व्यक्ति प्रभुत्वान करने पावे ।

४ शान्तमना, हिरण्य-हस्त, हिरण्मय हनु (जबड़ा) वाले, यज्ञके योग्य और मनोहर वचनवाले वही सविता देव रात्रिके अन्तमें उठें । वह हव्य-दाताके लिये, यथेष्ट अन्न प्रेरित करें ।

उदू अयां उपवक्तेव बाहू हिरण्यया सविता सुप्रतीका ।
दिवो रोहांस्यरुहत् पृथिव्या अरीरमत् पतयत् कच्चिदभ्वम् ॥५॥
वाममद्य सवितर्वाममु श्वो दिवेदिवे वाममस्मभ्यं सावीः ।
वामस्य हि क्षयस्य देव भूरेरया धिया वामभाजः स्याम ॥६॥



७२ सूक्त

इन्द्र और सोम देवता। भरद्वाज ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

इन्द्रासोमा महि तद्वां महित्वं युवं महानि प्रथमानि चक्रथुः ।
युवं सूर्यं विविदथुर्युवं स्वर्विश्वा तमांस्यहतं निदश्च ॥१॥
इन्द्रासोमा वासयथ उषासमुत्सूर्यं नयथो ज्योतिषा सह ।
उप द्यां स्कम्भथुः स्कम्भनेनाप्रथतं पृथिवीं मातरं वि ॥२॥
इन्द्रासोमा वहिमपः परिष्ठां हथो वृत्रमनु वां द्यौरमन्यत ।
प्राणांस्यैरयतं नदीनामासमुद्राणि पप्रथुः पुरूणि ॥३॥

---

५ सविता, अधिवक्ताकी तरह, हिरण्मय और शोभनांश, दोनों बाहुओंको उठावें। वह पृथिवीसे द्युलोकके उन्नत प्रदेशमें चढ़ते हैं। गतिशील, जो कुछ महान् वस्तुएँ हैं, सबको वह प्रसन्न करते हैं।

६ सविता, आज हमें धन दो। कल हमें धन देना। प्रतिदिन हमें धन देना। हे देव, तुम निवास-भूत प्रचुर धनके दाता हो; इसलिये हम इसी स्तुतिके द्वारा धन प्राप्त करेंगे।



१ इन्द्र और सोम, तुम्हारी महिमा महान् है। तुमने महान् और मुख्य भूतोंको बनाया है। तुमने सूर्य और जलको प्राप्त किया है। तुमने सारे अन्धकारों और निन्दकोंका बध किया है।

२ इन्द्र और सोम, तुम उषाको प्रकाशित करो और सूर्यको ज्योतिके साथ ऊपर उठाओ तथा अन्तरीक्षके द्वारा द्युलोकको स्तम्भित करो। माता पृथिवीको प्रसिद्ध करो।

३ इन्द्र और सोम, जलको रोकनेवाले अहि (मारक) वृत्रका बध करो। द्युलोकने तुम्हें संवर्द्धित किया था। नदीके जलको प्रेरित करो। जल द्वारा समुद्रको पूर्ण करो।

२

इन्द्रासोमा पक्वमामास्वन्तर्नि गवामिद्दधथुर्वक्षणासु ।
जगृभथुरनपिनद्धमासु रुशच्चित्रासु जगतीष्वंतः ॥४॥
इन्द्रासोमा युवमङ्ग तरुत्रमपत्यसाचं श्रुत्यं रराथे ।
युवं शुष्मं नर्यं चर्षणिभ्यः सं विव्यथुः पृतनाषाहमुग्रा ॥५॥

७३ सूक्त

बृहस्पति देवता। भरद्वाज ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

यो अद्रिभित् प्रथमजा ऋतावा बृहस्पतिराङ्गिरसो हविष्मान् ।
द्विबर्हज्मा प्राघर्मसत् पिता न आ रोदसी वृषभो रोरवीति ॥१॥
जनाय चिद्य ईवत उ लोकं बृहस्पतिर्देवहूतौ चकार ।
घ्नन्वृत्राणि वि पुरो दर्दरीति जयञ्छत्रूँरमित्रान् पृत्सु साहन् ॥२॥
बृहस्पतिः समजयद्वसूनि महो व्रजान् गोमतो देव एषः ।
अपः सिषासन्त्स्वरप्रतीतो बृहस्पतिर्हन्त्यमित्रमर्कैः ॥३॥

४ इन्द्र और सोम, तुमने गायोंके लिये अपक्व अन्तर्देशमें पक्व दुग्ध रखा है। नाना वर्ण गौओंके बीच तुमने अबद्ध और शुक्ल वर्ण दुग्ध धारण किया है।

५ इन्द्र और सोम, तुम लोग तारक, सन्तान-युक्त और श्रवणयोग्य धन हमें शीघ्र दो। उग्र इन्द्र और सोम, मनुष्योंके लिये हितकर और शत्रुसेनाको हरानेवाले बलको तुम वर्द्धित करो।



१ जिन बृहस्पतिने पर्वतको तोड़ा था, जो सबसे प्रथम उत्पन्न हुए थे, जो सत्य-रूप अङ्गिरा और यज्ञ-पात्र हैं, जो दोनों लोकोंमें भली भाँति जाते हैं, जो प्रदीप्त स्थानमें रहते हैं। और जो हम लोगोंके पालक हैं, वही बृहस्पति, वर्षक होकर, द्यावापृथिवीमें गर्जन करते हैं।

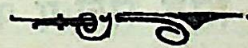
२ जो बृहस्पति यज्ञमें स्तोताको स्थान देते हैं, वह वृत्रों या आवरक अन्धकारोंको विनष्ट करते, युद्धमें शत्रुओंको जीतते, द्वेषियोंको अभिभूत करते और असुर-पुरियोंको अच्छी तरह छिन्न-भिन्न करते हैं।

३ इन्हीं बृहस्पतिदेवने असुरोंका धन और गौओंके साथ गोचरोंको जीता था। अप्रतिगत होकर यज्ञ-कर्म द्वारा, भोग करनेकी इच्छा करके, बृहस्पति स्वर्गके शत्रुका, अर्चना-साधन मन्त्र द्वारा, बध करते हैं।

७४ सूक्त

सोम और रुद्र देवता। भरद्वाज ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

सोमारुद्रा धारयेथामसुर्यं प्रवामिष्टयोरमश्नुवन्तु ।
दमेदमे सप्त रत्ना दधाना शं नो भूतं द्विपदे शं चतुष्पदे ॥१॥
सोमारुद्रा वि बृहतं विषूचीममीवा या नो गयमाविवेश ।
आरे बाधेथां निर्ऋतिं पराचैरस्मे भद्रा सौश्रवसानि सन्तु ॥२॥
सोमारुद्रा युवमेतान्यस्मे विश्वातनूषु भेषजानि धत्तम् ।
अव स्यतं मुंचतं यन्नो अस्ति तनूषु बद्धं कृतमेनो अस्मत् ॥३॥
तिग्मायुधौ तिग्महेती सुशेवौ सोमारुद्राविह सुमृलतं नः ।
प्र नो मुञ्चतं वरुणस्य पाशाद्गोपायतं नः सुमनस्य माना ॥४॥



१ सोम और रुद्र, तुम हमें असुर-सम्बन्धी बल दो। सारे यज्ञ तुम्हें प्रतिगृहमें अच्छी तरह व्याप्त करें। तुम सप्तरत्न धारण करते हो; इसलिये हमारे लिये तुम सुखकर होओ और द्विपदों और चतुष्पदोंके लिये भी कल्याणवाही बनो।

२ सोम और रुद्र, जो रोग हमारे घरमें पैठा है, उसी संक्रामक रोगको विदूरित करो। ऐसी बाधा दो, जिससे दरिद्रता पराङ्मुखी हो। हमारे पास सुखावह अन्न हो।

३ सोम और रुद्र, हमारे शरीरके लिये सब प्रसिद्ध औषध धारण करो। हमारे किया पाप, जो शरीरमें निबद्ध है, उसे शिथिल करो—हमसे हटा दो।

४ सोम और रुद्र, तुम्हारे पास दीप्त धनुष् और तीक्ष्ण शर है। तुम लोग सुन्द सुख देते हो। शोभन स्तोत्रकी अभिलाषा करते हुए हमें इस संसारमें खूब सुखी करो। तुम हमें वरुणके पाशसे छुड़ाओ और हमारी रक्षा करो।



७५ सूक्त

प्रथम मन्त्रके वर्म, द्वितीयके धनु, तृतीयकी ज्या, चतुर्थकी अर्त्नी, पञ्चमके इषुधि, षष्ठके पूर्वार्द्धके सारथि और उत्तरार्द्धकी रश्मि, सप्तमके अश्व, अष्टमके रथ, नवमके रथगोपगण दशमके स्तोता, पिता, सोम्य, द्यावा, पृथिवी और पूषा, एकादश और द्वादशके इषु, त्रयोदशके प्रतोद, चतुर्दशके हस्तघ्न, पञ्चदश और षोड़शके इषु, सप्तदशकी युद्धभूमि, ब्रह्मणस्पति और अदिति, अष्टादशके कवच, सोम और वरुण तथा ऊनविंशके देवगण और ब्रह्म देवता हैं। भरद्वाज-पुत्र पायु ऋषि। अनुष्टुप्, पङ्क्ति और त्रिष्टुप् छन्द।

जीमूतस्येव भवति प्रतीकं यद्वर्मी याति समदामुपस्थे।
अनाविद्धया तन्वा जय त्वं स त्वा वर्मणो महिमा पिपर्तु ॥१॥
धन्वना गा धन्वनाजिं जयेम धन्वना तीव्राः समदो जयेम।
धनुः शत्रोरपकामं कृणोति धन्वना सर्वाः प्रदिशो जयेम ॥२॥
वक्ष्यन्तीवेदा गनीगन्ति कर्णं प्रियं सखायं परिषस्वजाना।
योषेव शिङ्क्ते वितताधि धन्वन् ज्या इयं समने पारयन्ती ॥३॥
ते आचरन्ती समनेव योषा मातेव पुत्रं बिभृतामुपस्थे।
अप शत्रून्विध्यतां संविदाने आर्त्नी इमे विष्फुरन्ती अमित्रान् ॥४॥

१ युद्ध छिड़ जानेपर यह राजा जिस समय लौहमय कवच पहन कर जाता है, उस समय मालूम पड़ता है कि, यह साक्षात् मेघ है। राजन्, अविद्ध शरीर रह कर जय प्राप्त करो। वर्म (कवच) की वह महिमा तुम्हारी रक्षा करे।

२ हम धनुष्के द्वारा शत्रुओंकी गायोंको जीतेंगे, युद्ध जीतेंगे और मदोन्मत्त शत्रु-सेनाका बध करेंगे। शत्रुकी अभिलाषा धनुष् नष्ट करे। हम इस धनुष्से समस्त दिशाओंमें स्थित शत्रुओंको जीतेंगे।

३ धनुष्की यह ज्या, युद्ध-बेलामें, युद्धसे पार ले जानेकी इच्छा करके मानो प्रिय वचन बोलनेके लिये ही धनुर्द्धारीके कानके पास आती है। जैसे स्त्री प्रिय पतिका आलिङ्गन करके बात करती है, वैसे ही यह ज्या भी वाणका आलिङ्गन करके ही शब्द करती है।

४ वे दोनों धनुष्कोटियाँ, अन्यमनस्का स्त्रीकी तरह, आचरण करके शत्रुके ऊपर आक्रमण करते समय माताकी तरह पुत्र-तुल्य राजाकी रक्षा करें और अपने कार्यको भली भाँति जानकर जाते हुए इस राजाके द्वेषियोंका वध कर शत्रुओंको छेद डालें।

बह्वीनां पिता बहुरस्य पुत्रश्चिश्चा कृणोति समनावगत्य ।
इषुधिः संकाः पृतनाश्च सर्वाः पृष्ठे निनद्धो जयति प्रसूतः ॥५॥
रथे तिष्ठन्नयति वाजिनः पुरो यत्रयत्र कामयते सुषारथिः ।
अभीशूनां महिमानं पनायत मनः पश्चादनु यच्छन्ति रश्मयः ॥६॥
तीव्रान् घोषान् कृण्वते वृषपाणयोश्वा रथेभिः सह वाजयन्तः ।
अवक्रामन्तः प्रपदैरमित्रान् क्षिणन्ति शत्रूँरनपव्ययन्तः ॥७॥
रथवाहनं हविरस्य नाम यत्रायुधं निहितमस्य वर्म ।
तत्रा रथमुप शग्मं सदेम विश्वाहा वयं सुमनस्यमानाः ॥८॥
स्वादुषंसदः पितरो वयोधाः कृच्छ्रेश्रितः शक्तीवन्तो गभीराः ।
चित्रसेना इषुबला अमृध्राः सतोवीरा उरवो व्रातसाहाः ॥९॥
ब्राह्मणासः पितरः सोम्यासः शिवे नो द्यावापृथिवी अनेहसा ।
पूषा नः पातु दुरिताहतावृधो रक्षा माकिर्नो अघशंस ईशत ॥१०॥

५ यह तूणीर अनेक वाणोंका पिता है। कितने ही वाण इसके पुत्र हैं । वाण निकालनेके समय यह तूणीर "चिश्चा" शब्द करता है। यह योद्धाके पृष्ठ—देशमें निबद्ध रह कर युद्ध-कालमें वाणोंका प्रसव करता हुआ सारी सेनाको जीत डालता है।

६ सुन्दर सारथि रथमें अवस्थान करके आगेके घोड़ोंको, जहाँ इच्छा होती है, वहाँ, ले जाता है। रस्सियाँ अश्वोंके कण्ठ तक फैलकर और अश्वोंके पीछे फैलकर सारथिके मनके अनुकूल नियुक्त होती हैं। रस्सियोंकी महिमा बखानो ।

७ अश्व टापोंसे धूलि उड़ाते हुए और रथके साथ सवेग जाते हुए हिनहिनाते हैं तथा पलायन न करके हिंसक शत्रुओंको टापोंसे पीटते हैं।

८ जैसे हव्य अग्निको बढ़ाता है, वैसे ही इस राजाके रथ द्वारा ढोया जानेवाला धन इसे वर्द्धित करे । रथपर इस राजाके अस्त्र, कवच आदि रहते हैं। हम सदा प्रसन्न-चित्तसे उस सुखावह रथके पास जाते हैं।

९ रथके रक्षक शत्रुओंके सुस्वादु अन्नको नष्ट करके अपने पक्षके लोगोंको अन्न दान करते हैं। विपत्तिके समय इनका आश्रय लिया जाता है । ये शक्तिमान्, गम्भीर, विचित्र सेनासे युक्त, वाण-बल-सम्पन्न, अहिंसक, वीर, महान् और अनेक शत्रुओंको जीतनेमें समर्थ हैं ।

१० हे ब्राह्मणो, पितरो और यज्ञ-वर्द्धक सोम-सम्पादक, तुम हमारी रक्षा करो । पाप-शून्या द्यावापृथिवी हमारे लिये सुखकारी हों । पूषा हमें पापसे बचावें। हमारा पापी शत्रु प्रभुत्व न करने पावे ।

सुपर्णं वस्ते मृगो अस्या दन्तो गोभिः सन्नद्धा पतति प्रसूता ।
यत्रा नरः सं च वि च द्रवन्ति तत्रास्मभ्यमिषवः शर्म यन्सन् ॥११॥
ऋजीते परि वृङ्ग्धि नोऽश्मा भवतु नस्तनूः ।
सोमो अधि ब्रवीतु नोऽदितिः शर्म यच्छतु ॥१२॥
आ जङ्घन्ति सान्वेषां जघनाँ उप जिघ्नते ।
अश्वाजनि प्रचेतसोऽश्वान्त्समत्सु चोदय ॥१३॥
अहिरिव भोगैः पर्येति बाहुं ज्याया हेतिं परिबाधमानः ।
हस्तघ्नो विश्वा वयुनानि विद्वान् पुमान्पुमांसं परि पातु विश्वतः ॥१४॥
आलाक्ता या रुरुशीर्ष्ण्यथो यस्या अयो मुखम् ।
इदं पर्जन्यरेतस इष्वै देव्यै बृहन्नमः ॥१५॥
अवसृष्टा परा पत शरव्ये ब्रह्मसंशिते ।
गच्छामित्रान् प्र पद्यस्व मामीषां कं चनोच्छिषः ॥१६॥

११ वाण शोभन पंख धारण करता है। इसका दाँत मृग-शृङ्ग है। यह ज्या अथवा गोचर्म (ताँत) से अच्छी तरह बद्ध है। यह प्रेरित होकर पतित होता है। जहाँ नेता लोग एकत्र वा पृथक् रूपसे विचरण करते हैं, वहाँ वाण हमें शरण दे।

१२ वाण, हमें परिवर्द्धित करो। हमारा शरीर पाषाणकी तरह हो। सोम हमारे पक्षपर बोले। अदिति सुख दें।

१३ कशा (चाबुक), प्रकृष्ट ज्ञानी सारथि लोग तुम्हारे द्वारा अश्वोंके उरु और जघनमें मारते हैं। संग्राममें तुम अश्वोंको प्रेरित करो।

१४ हस्तघ्न (ज्याके आघातसे हाथको बचानेके लिये बँधा हुआ चर्म) ज्याके आघातका निवारण करता हुआ सर्पकी तरह शरीरके द्वारा प्रकोष्ठ (जानुसे मणिबन्ध तक) को परिवेष्टित करता है, सारे ज्ञातव्य विषयोंको जानता है और पौरुषशाली होकर चारो ओरसे रक्षा करता है।

१५ जो विषाक्त है, जिसका अग्र भाग हिंसक है और जिसका मुख लौहमय है, उसी पर्जन्यसे उत्पन्न विशाल वाण-देवताको नमस्कार।

१६ मन्त्र द्वारा तेज किये गये और हिंसा-निपुण वाण, तुम छोड़े जाकर गिरो, जाओ और शत्रुओंको मिलो। किसी भी शत्रुको जीते जी नहीं छोड़ना।

यत्र वाणाः सम्पतन्ति कुमारा विशिखा इव ।
तत्रा नो ब्रह्मणस्पतिरदितिः शर्म यच्छतु विश्वाहा शर्म यच्छतु ॥१७॥
मर्माणि ते वर्मणा छादयामि सोमस्त्वा राजामृतेनानु वस्ता ।
उरोर्वरीयो वरुणस्ते कृणोतु जयन्तं त्वानु देवा मदन्तु ॥१८॥
यो नः स्वो अरणो यश्च निष्ट्यो जिघांसति।
देवास्तं सर्वे धूर्वन्तु ब्रह्म वर्म ममान्तरम् ॥१९॥

---

१७ मुण्डित कुमारोंकी तरह जिस युद्धमें वाण गिरते हैं, उसमें हमें ब्रह्मणस्पति सदा सुख दें, अदिति सुख दें।

१८ राजन्, तुम्हारे शरीरके मर्मस्थानोंको कवचसे आच्छादित कर रहा हूँ। सोम राजा तुम्हें अमृत द्वारा आच्छादित करें, वरुण तुम्हें श्रेष्ठसे भी श्रेष्ठ सुख दें। तुम्हारे विजयी होनेपर देवगण हर्ष मनावें।

१९ जो कुटुम्बी हमारे प्रति प्रसन्न नहीं और जो अलग रहकर हमारे बधकी इच्छा करता है, उसे सारे देवगण मारें। हमारे लिये तो मन्त्र ही वाण-निवारक कवच है।

षष्ठ मण्डल समाप्त



सप्तम मण्डल

१ अनुवाक। १ सूक्त। अग्नि देवता। वसिष्ठ ऋषि। विराट् और त्रिष्टुप् छन्द।

अग्निं नरो दीधितिभिररण्योर्हस्तच्युती जनयन्त प्रशस्तम्।
दूरेदृशं गृहपतिमथर्युम् ॥१॥
तमग्निमस्ते वसवो न्यृण्वन्त्सुप्रतिचक्षमवसे कुतश्चित्।
दक्षाय्यो यो दम आस नित्यः ॥२॥
प्रेद्धो अग्ने दीदिहि पुरो नोऽजस्रया सूर्म्या यविष्ठ।
त्वां शश्वन्त उप यन्ति वाजाः ॥३॥
प्र ते अग्नयोऽग्निभ्यो वरं निः सुवीरासः शोशुचन्त द्युमन्तः।
यत्रा नरः समासते सुजाताः ॥४॥
दा नो अग्ने धिया रयिं सुवीरं स्वपत्यं सहस्य प्रशस्तम्।
न यं यावा तरति यातुमावान् ॥५॥

---

१ नेता ऋत्विक् लोग प्रशस्त, दूरस्थित, गृहपति और गतिशील अग्निको दो काठोंसे हस्तगति और अङ्गुलियोंके द्वारा, उत्पन्न करते हैं।

२ जो अग्नि गृहमें नित्य पूजनीय थे, उन्हीं सुदृश्य अग्निको, सब प्रकारके भयोंसे बचानेके लिये वसिष्ठगणने गृहमें रखा था।

३ तरुणतम अग्नि, भली भाँति समृद्ध होकर, सतत ज्वालाके साथ, हमारे आगे प्रदीप्त होओ। तुम्हारे पास बहुत अन्न जाता है।

४ सुजन्मा नेता या ऋत्विक् लोग जिन अग्निके पास बैठते हैं, वह लौकिक अग्नियोंसे अधिक दीप्तिमान्, कल्याणवाही, पुत्र-पौत्र-प्रद और विशेष रूपसे दीप्ति प्राप्त करनेवाले हैं।

५ अभिभवनिपुण अग्नि, हिंसक शत्रु जिसमें बाधा न दे सकें, ऐसी कल्याणकर, पुत्रपौत्रपूर्ण और सुन्दर सन्ततिसे युक्त धन, स्तोत्र सुनकर, हमें दो।

उप यमेति युवतिः सुदक्षं दोषा वस्तोर्हविष्मती घृताची ।
उप स्वैनमरमतिर्वसूयुः ॥६॥
विश्वा अग्नेऽप दहारातीर्येभिस्तपोभिरदहो जरूथम् ।
प्र निस्वरं चातयस्वामीवाम् ॥७॥
आ यस्ते अग्न इंधते अनीकं वसिष्ठ शुक्र दीदिवः पावक ।
उतो न एभिः स्तवथैरिह स्याः ॥८॥
वि ये ते अग्ने भेजिरे अनीकं मर्ता नरः पित्र्यासः पुरुत्रा ।
उतो न एभिः सुमना इह स्याः ॥९॥
इमे नरो वृत्रहत्येषु शूरा विश्वा अदेवीरभि सन्तु मायाः ।
ये मे धियं पनयन्त प्रशस्ताम् ॥१०॥
मा शूने अग्ने निषदाम नृणामाशेषसोऽवीरता परि त्वा ।
प्रजावतीषु दुर्यासु दुर्य ॥११॥
यमश्वी नित्यमुपयाति यज्ञं प्रजावन्तं स्वपत्यं क्षयं नः ।
स्वजन्मना शेषसा वावृधानम् ॥१२॥

---

६ हव्ययुक्ता युवती जुहू कुशल अग्निके पास दिन-रात आती है। स्वकीय दीप्ति धनाभिलाषी होकर उसके निकट आती है।

७ अग्नि, जिस तेजसे तुम कठोर-शब्द-कर्त्ता राक्षसको जलाते हो, उसी तेजके बलसे सारे शत्रुओंको जलाओ। उपताप दूर करके रोगको नष्ट करो।

८ हे श्रेष्ठ, शुभ्र, दीप्त और पावक अग्नि, जो तुम्हें समिद्ध करते हैं, उन्हींके समान हमारे इस स्तोत्रसे भी प्रसन्न होकर इस यज्ञमें ठहरो।

९ अग्नि, जो पितृ-हितैषी और (कर्म-नेता) मनुष्योंने तुम्हारे तेजको अनेक देशोंमें विभक्त किया है, उन्हींके समान हमारे इस स्तोत्रसे प्रसन्न होकर इस यज्ञमें ठहरो।

१० जो मनुष्य मेरे श्रेष्ठ कर्मकी स्तुति करते हैं, वही वीर नेता संग्रामोंमें सारी आसुरी मायाको दबा दें।

११ अग्नि, हम शून्य गृहमें नहीं रहेंगे; दूसरेके घरमें भी नहीं रहेंगे। गृहके हितैषी अग्निदेव, हम पुत्र-शून्य और वीर-रहित हैं। तुम्हारी परिचर्या करते हुए हम प्रजासे सम्पन्न घरमें रहें।

१२ जिस यज्ञाश्रय गृहमें अश्ववाले अग्नि नित्य जाते हैं, हमें वही, नौकर आदिसे युक्त, सुन्दर सन्तानवाले तथा औरसजात पुत्रके द्वारा वर्द्धमान गृह दो।

पाहि नो अग्ने रक्षसो अजुष्टात् पाहि धूर्तेररुषो अघायोः ।
त्वा युजा पृतनायूँरभिष्याम् ॥१३॥
सेदग्निरग्नींरत्यस्त्वन्यान्यत्र वाजी तनयो वीळुपाणिः ।
सहस्रपाथा अक्षरा समेति ॥१४॥
सेदग्निर्यो वनुष्यतो निपाति समेद्धारमंहस उरुष्यात् ।
सुजातासः परि चरन्ति वीराः ॥१५॥
अयं सो अग्निराहुतः पुरुत्रा यमीशानः समिदिन्धे हविष्मान् ।
परि यमेत्यध्वरेषु होता ॥१६॥
त्वे अग्न आहवनानि भूरीशानास आ जुहुयाम नित्या ।
उभा कृण्वन्तो वहतू मियेधे ॥१७॥
इमो अग्ने वीततमानि हव्याजस्रो वक्षि देवतातिमच्छ ।
प्रति न ईं सुरभीणिव्यन्तु ॥१८॥

१३ हमें अप्रीतिकर राक्षससे बचाओ। अदाता और पापी हिंसकसे बचाओ । हम तुम्हा सहायतासे सेनाके अभिलाषी व्यक्तिको पराजित करेंगे।

१४ बलवान्, दृढ़हस्त, प्रभूत अन्नवाला हमारा पुत्र क्षय-रहित स्तोत्र द्वारा जिस अग्निकी करता है, वही अग्नि दूसरेके अग्निको आविर्भूत करें।

१५ जो यज्ञकर्त्ता प्रबोधकको हिंसा और पापसे बचाते हैं और जिनकी सेवा कुलीन वीरगण कर हैं, वही अग्नि हैं।

१६ जिन्हें समृद्ध और हविष्मान् व्यक्ति भली भाँति दीप्त करता है और यज्ञमें जिनकी परि होता (देवोंको बुलानेवाला) करता है, वेही ये अग्नि अनेक देशोंमें बुलाये जाते हैं।

१७ अग्निदेव, धनपति होकर हम तुम्हें लक्ष्य करके नित्य स्तोत्र और उक्थ द्वारा यज्ञमें प्र हव्य देंगे।

१८ अग्नि, देवताओंके पास तुम सदा इस अतीव कमनीय हव्यको ले जाओ और गमन करो प्रत्येक देवता हमारे इस शोभन हव्यकी इच्छा करता है।

मा नो अग्नेऽवीरते परा दा दुर्वाससेऽमतये मा नो अस्यै ।
मा नः क्षुधे मा रक्षस ऋतावो मा नो दमे मा वन आ जुहूर्थाः ॥१९॥
नू मे ब्रह्माण्यग्न उच्छसाधि त्वं देव मघवद्भ्यः सुषूदः ।
रातौ स्यामोभयास आ ते यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥२०॥
त्वमग्ने सुहवो रण्वसन्दृक् सुदीती सूनो सहसो दिदीहि ।
मा त्वे सचा तनये नित्य आधङ्मा वीरो अस्मन्नर्यो वि दासीत् ॥२१॥
मा नो अग्ने दुर्भृतये सचैषु देवेद्धेष्वग्निषु प्र वोचः ।
मा ते अस्मान्दुर्मतयो भृमाच्चिद्देवस्य सूनो सहसो नशन्त ॥२२॥
स मर्तो अग्ने स्वनीक रेवानमर्त्ये य आजुहोति हव्यम् ।
स देवता वसुवनिं दधाति यं सूरिरर्थी पृच्छमान एति ॥२३॥

---

१९ अग्नि, हमें निःसन्तान नहीं करना । खराब कपड़े नहीं देना । हमें कुबुद्धि नहीं देना । हमें भूख नहीं देना । हमें राक्षसके हाथमें नहीं देना । हे सत्यवान् अग्नि, हमें न घरमें मारना, न वनमें ।

२० अग्नि, हमारा अन्न विशेष रूपसे शोधित करना । देव, याज्ञिकोंको अन्न देना । हम दोनों (स्तोता और यजमान) तुम्हारे दानमें रहें । तुम सदा हमें स्वस्ति द्वारा पालन करो ।

२१ अग्नि, तुम सुन्दर आह्वानवाले और रमणीय-दर्शन हो । शोभन दीप्तिके साथ प्रदीप्त होओ । सहायक बनो और औरस पुत्रको नहीं जलाओ । हमारा मनुष्योंका हितैषी पुत्र नष्ट न होने पावे ।

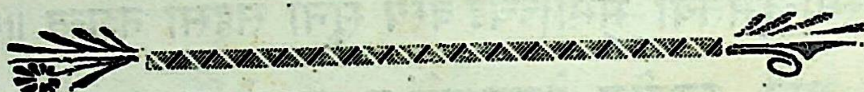
२२ अग्नि, तुम सहायक होओ; और, ऋत्विकों द्वारा समिद्ध अग्निगणको कहो कि, वे सुखके साथ हमारा भरण करें । बलके पुत्र अग्नि, तुम्हारी दुर्बुद्धि भ्रमसे भी हमें व्याप्त न करे ।

२३ सुतेजा और देवात्मा अग्नि, जो मनुष्य तुम्हें हव्य देता है, वही धनी होता है । जिसके पास धनाभिलाषी स्तोता जाननेकी इच्छासे जाता है, वही अग्निदेव यजमानकी रक्षा करते हैं ।

महो नो अग्ने सुवितस्य विद्वान्रयिं सूरिभ्य आ वहा बृहन्तम् ।
येन वयं सहसावन्मदेमाविक्षितास आयुषा सुवीराः ॥२४॥
नू मे ब्रह्माण्यग्न उच्छशाधि त्वं देव मघवद्भ्यः सुषूदः ।
रातौ स्यामोभयास आ ते यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥२५॥

२४ अग्नि, तुम हमारे महान् कल्याणवाले कार्यको जानते हो। बलके पुत्र, हम तुम्हारे स्तोता हैं, जिससे हम अक्षय, पुर्णायु और कल्याणकर पुत्र-पौत्र आदिसे सम्पन्न होकर प्रसन्न हो सकें, ऐसा महान् धन हमें दो।

२५ अग्निदेव, हमारे अन्नका भली भाँति शोधन करो। देव, तुम याज्ञिकोंको अन्न दो। हम दोनों (स्तोता और यजमान) तुम्हारे दानमें रहें। तुम हमें सदा कल्याण द्वारा पालन करो।



प्रथम अध्याय समाप्त

द्वितीय अध्याय

२ सूक्त

आप्री देवता। वसिष्ठ ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

जुषस्व नः समिधमग्ने अद्य शोचा बृहद्यजतं धूममृण्वन्।
उप स्पृश दिव्यं सानु स्तूपैः सं रश्मिभिस्ततनः सूर्यस्य ॥१॥
नराशंसस्य महिमानमेषामुप स्तोषाम यजतस्य यज्ञैः।
ये सुक्रतवः शुचयो धियन्धाः स्वदन्ति देवा उभयानि हव्या ॥२॥
ईळेन्यं वो असुरं सुदक्षमन्तर्दूतं रोदसी सत्यवाचम्।
मनुष्वदग्निं मनुना समिद्धं समध्वराय सदमिन्महेम ॥३॥

---

१ अग्नि आज हमारी समिधाको ग्रहण करो। यज्ञके योग्य धुआँ देते हुए अतीव दीप्त होओ। तप्त ज्वाला-मालासे अन्तरीक्षका तट-प्रदेश स्पर्श करो और सूर्यकी किरणोंके साथ मिलित होओ।

२ जो सुकर्मा, शुचि और कर्मोंके धारक देवगण सौमिक और हविःसंस्थादि, दोनोंका भक्षण करते हैं, उनके बीच हम स्तोत्र द्वारा यजनीय और नर-प्रशस्य अग्निकी महिमाकी स्तुति करते हैं।

३ यजमानो, तुम स्तुतियोग्य, असुर (बली)*, सुदक्ष, द्यावापृथिवीके बीच दूत, सत्यवक्ता, मनुष्यकी तरह मनु द्वारा समिद्ध अग्निदेवकी सदा पूजा करो।

---

* पञ्चम अष्टकमें असुर शब्दका इस प्रकार आठ बार व्यवहार हुआ है—

७ मण्डल	२	सूक्त	३	ऋचा	असुर	शब्द	अग्निके	सम्बन्धमें
"	६	"	१	"	"	"	वैश्वानरके	"
"	१३	"	१	"	असुरघ्न	"	अग्निके	"
"	३०	"	३	"	असुर	"	" के	"
"	३६	"	२	"	"	"	मित्र और वरुणके	"
"	५६	"	२४	"	"	"	वीरके	"
"	६५	"	२	"	"	"	मित्र और वरुणके	"
"	९९	"	५	"	"	"	वर्ची	"

सपर्यवो भरमाणा अभिज्ञु प्र वृञ्जते नमसा बर्हिरग्नौ ।
आजुह्वाना घृतपृष्ठं पृषद्वदध्वर्यवो हविषा मर्जयध्वम् ॥४॥
स्वाध्यो वि दुरो देवयन्तोऽशिश्रयू रथयुर्देवताता ।
पूर्वी शिशुं न मातरा रिहाणे सम ग्रुवो न समनेष्वञ्जन् ॥५॥
उत योषणे दिव्ये मही न उषासानक्ता सुदुघेव धेनुः ।
बर्हिषदा पुरुहूते मघोनी आ यज्ञिये सुविताय श्रयेताम् ॥६॥
विप्रा यज्ञेषु मानुषेषु कारू मन्ये वां जातवेदसा यजध्यै ।
ऊर्ध्वं नो अध्वरं कृतं हवेषु ता देवेषु वनथो वार्याणि ॥७॥
आ भारती भारतीभिः सजोषा इला देवैर्मनुष्येभिरग्निः ।
सरस्वती सारस्वतेभिरर्वाक् तिस्रो देवीर्बर्हिरेदं सदन्तु ॥८॥
तन्नस्तुरीपमध पोषयित्नु देवत्वष्टर्वि रराणः स्यस्व ।
यतो वीरः कर्मण्यः सुदक्षो युक्तग्रावा जायते देवकामः ॥९॥

४ सेवाभिलाषी लोग घुटने टेककर पात्र पूर्ण करते हुए अग्निको हव्यके साथ बर्हि दान करते हैं। अध्वर्युओ, घृत पृष्ठ और स्थूल बिन्दुसे युक्त बर्हि हवन करते हुए उसे प्रदान करो।

५ सुकर्मा, देवाभिलाषी और रथेच्छुक लोगोंने यज्ञमें द्वारका आश्रय किया है। जैसे गायें बछड़ोंको चाटती हैं, वैसे ही चाटनेवाले और पूर्वाभिलाषी (जुहू और उपभृति) को अध्वर्युगण नदीकी तरह यज्ञमें सिक्त करते हैं।

६ युवती, दिव्या, महती, कुशोंपर बैठी हुई, बहु-स्तुता, धनवती और यज्ञार्हा अहोरात्रि, कामदुघा धेनुकी तरह, कल्याणके लिये, हमें आश्रय करें।

७ हे विप्र और जातधन तथा मनुष्योंके यज्ञमें कर्मकर्त्ता, यज्ञ करनेके लिये मैं तुम्हारी स्तुति करता हूँ। स्तुति हो जानेपर हमारे अकुटिल यज्ञको देवाभिमुख करो। देवोंके बीच विद्यमान वरणीय धनका विभाग कर दो।

८ भारतीगण (सूर्य-सम्बन्धियों)के साथ भारती (अग्नि) आवें। देवों और मनुष्योंके साथ इला (अग्नि) भी आवें। सारस्वतों (अन्तरीक्षस्थ ववनों) के साथ सरस्वती आवें। ये तीनों देवियाँ आकर इन कुशोंपर बैठें।

९ अग्निरूप त्वष्टा देव, जिससे वीर, कर्मकुशल, बलशाली, सोमाभिषवके लिये प्रस्तर-हस्त और देवाभिलाषी पुत्र उत्पन्न हो सके, तुम सन्तुष्ट होकर हमें वैसा ही रक्षा-कुशल और पुष्टिकारी वीर्य प्रदान करो।

वनस्पतेऽव सृजोप देवानग्निर्हविः शमिता सूदयाति ।
सेदु होता सत्यतरो यजाति यथा देवानां जनिमानि वेद ॥१०॥
आ याह्यग्ने समिधानो अर्वाङिन्द्रेण देवैः सरथं तुरेभिः ।
बर्हिर्न आस्तामदितिः सुपुत्राः स्वाहा देवा अमृता मादयन्ताम् ॥११॥



३ सूक्त

अग्नि देवता । वसिष्ठ ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

अग्निं वो देवमग्निभिः सजोषा यजिष्ठं दूतमध्वरे कृणुध्वम् ।
यो मर्त्येषु निध्रुविॠतावा तपूर्मूर्धा घृतान्नः पावकः ॥१॥
प्रोथदश्वो न यवसेऽविष्यन्यदा महः संवरणाद्व्यस्थात् ।
आदस्य वातो अनु वाति शोचिरध स्म ते व्रजनं कृष्णमस्ति ॥२॥

---

१० अग्निरूप वनस्पति, देवोंको पास ले आओ । पशुके संस्कारक अग्नि वनस्पति देवोंके लिये हव्य दें । वे ही यज्ञ-रूप देवता लोगोंको बुलानेवाले अग्नि यज्ञ करें; क्योंकि वे ही देवोंका जन्म जानते हैं ।

११ अग्नि, तुम दीप्ति-शाली होकर इन्द्र और शीघ्रताकारी देवोंके साथ एक रथपर हमारे सामने आओ । सुपुत्र-युक्ता अदिति हमारे कुशपर बैठें । नित्य देवगण अग्निरूप स्वाहाकारवाले होकर तृप्ति प्राप्त करें ।



१ देवो, जो अग्नि मनुष्योंमें स्थिर भावसे रहते हैं, जो यज्ञवान्, तापक, तेजः—शाली, घृतान्न-सम्पन्न और शोधक हैं, जो याज्ञिकोंमें श्रेष्ठ हैं और अन्य अग्नि-समूहके साथ मिलित होते हैं, उन्हीं अग्निदेवको यज्ञमें तुम दूत बनाओ ।

२ जिस समय अश्वकी तरह घासका भक्षण और शब्द करते हुए महान् निरोधके साथ वृक्षोंमें दारु-रूप अग्नि अवस्थित रहते हैं, उस समय उनकी दीप्ति प्रवाहित होती है । इसके अनन्तर, अग्निदेव, तुम्हारा मार्ग काला (धुआँवाला) हो जाता है ।

उद्यस्य ते नवजातस्य वृष्णोग्ने चरन्त्यजरा इधानाः ।
अच्छा द्यामरुषो धूम एति सं दूतो अग्न ईयसे हि देवान् ॥३॥
वि यस्य ते पृथिव्यां पाजो अश्रेत्तृषु यदन्ना समवृक्त जम्भैः ।
सेनेव सृष्टा प्रसितिष्ट एति यवं न दस्म जुह्वा विवेक्षि ॥४॥
तमिद्दोषा तमुषसि यविष्ठमग्निमत्यं न मर्जयन्त नरः ।
निशिशाना अतिथिमस्य योनौ दीदाय शोचिराहुतस्य वृष्णः ॥५॥
सुसन्दृक्ते स्वनीक प्रतीकं वि यद्रुक्मो न रोचस उपाके ।
दिवो न ते तन्यतुरेति शुष्मश्चित्रो न सूरः प्रति चक्षि भानुम् ॥६॥
यथा वः स्वाहाग्नये दाशेम परीलाभिर्घृतवद्भिश्च हव्यैः ।
तेभिर्नो अग्ने अमितैर्महोभिः शतं पूर्भिरायसीभिर्नि पाहि ॥७॥
या वा ते सन्ति दाशुषे अधृष्टा गिरो वा याभिर्नृवतीरुरुष्याः ।
ताभिर्नः सूनो सहसो नि पाहि स्मत्सूरीञ्जरितॄञ्जातवेदः ॥८॥

---

३ अग्नि, नवजात और वर्षक तुम्हारी जो अजर ज्वाला समिद्ध होकर ऊपर उठती है, उसका रोचक धूम द्युलोकमें जाता है। अग्निदेव, दूत होकर तुम देवोंको प्राप्त होते हो।

४ अग्नि, जिस समय तुम दाँतों (ज्वालाओं) से काष्ठादि अन्नोंका भक्षण करते हो, उस समय तुम्हारा तेज पृथिवीमें मिल जाता है। सेनाकी तरह विमुक्त होकर तुम्हारी ज्वाला जाती है। अग्निदेव, अपनी ज्वालासे जौकी तरह काष्ठ आदिका भक्षण करते हो।

५ तरुण अतिथिकी तरह पूज्य अग्निकी, उनके स्थानपर, रात और दिनमें, पूजा करते हैं। मनुष्य सदागामी अश्वकी तरह अग्निकी सेवा करते हैं। आहूत और अभीष्टवर्षी अग्निकी शिखा प्रदीप्त होती है।

६ सुन्दर तेजवाले अग्नि, जिस समय तुम सूर्यकी तरह समीपमें दीप्ति पाते हो, उस समय तुम्हारा रूप दर्शनीय हो जाता है। अन्तरीक्षसे तुम्हारा तेज बिजलीकी तरह निकलता है। दर्शनीय सूर्यकी तरह ही तुम भी स्वयं अपना प्रकाश करते हो।

७ अग्नि, जैसे हमलोग गव्य और घृत-युक्त हव्यके द्वारा तुम्हें स्वाहा दान करते हैं, अग्नि, तुम भी वैसे ही, असीम तेजोबलके साथ, अपरिमित लौहमय अथवा सुवर्णमय पुरियों द्वारा, हमारी रक्षा करना।

८ बलके पुत्र और जातधन अग्नि, तुम दानशील हो, तुम्हारी जो शिखाएँ हैं और जिन वाक्यों द्वारा पुत्रवान् प्रजागणकी तुम रक्षा करते हो, इन दोनोंसे हमारी रक्षा करो। प्रशस्त और हव्य-दाता स्तोताओंकी रक्षा करो।

निर्यत्पूतेव स्वधितिः शुचिर्गात् स्वया कृपा तन्वा रोचमानः ।
आ यो मात्रोरुशेन्यो जनिष्ट देवयज्याय सुक्रतुः पावकः ॥९॥
एता नो अग्ने सौभगा दिदीह्यपि क्रतुं सुचेतसं वतेम ।
विश्वा स्तोतृभ्यो गृणते च सन्तु यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥१०॥



४ सूक्त

अग्नि देवता। वसिष्ठ ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

प्र वः शुक्राय भानवे भरध्वं हव्यं मतिं चाग्नये सुपूतम् ।
यो दैव्यानि मानुषा जनूंष्यन्तर्विश्वानि विद्मना जिगाति ॥१॥
स गृत्सो अग्निस्तरुणश्चिदस्तु यतो यविष्ठो अजनिष्ट मातुः ।
सं यो वना युवते शुचिदन्भूरि चिदन्ना समिदत्ति सद्यः ॥२॥

९ जिस समय विशुद्ध अग्नि अपने शरीर द्वारा कृपा-परवश और रोचक होकर तीक्ष्ण फरसे-की तरह काष्ठसे निकलते हैं, उस समय वह यज्ञके योग्य होते हैं। सुन्दर, सुकृती और शोधक अग्नि मातृ-रूप दो काष्ठोंसे उत्पन्न हुए हैं।

१० अग्नि, हमें यही सुन्दर धन दो। हम याज्ञिक और विशुद्धान्तःकरण पुत्र प्राप्त कर सकें। सारा धन उद्गाताओं और स्तोताओंका हो। तुम सदा हमें कल्याण-कार्यके द्वारा पालन करो।



१ हविवालो, तुम शुभ्र और दीप्त अग्निको शुद्ध हव्य और स्तुति प्रदान करो। अग्नि देवों और मनुष्योंके समस्त पदार्थोंके बीच प्रज्ञा द्वारा गमन करते हैं।

२ दो काष्ठों (अरणि-द्वय)से, तरुणतम होकर, अग्नि उत्पन्न हुए हैं; इसलिये वही मेधावी अग्नि तरुण बनें। दीप्तशिख अग्नि वनोंको जलाते और क्षणमात्रमें ही यथेष्ट अन्नका भक्षण कर डालते हैं।

अस्य देवस्य संसद्यनीके यं मर्तासः श्वेतं जगृभ्रे ।
नि यो गृभं पौरुषेयीमुवोच दुरोकमग्निरायवे शुशोच ॥३॥
अयं कविरकविषु प्रचेता मर्तेष्वग्निरमृतो नि धायि ।
स मा नो अत्र जुहुरः सहस्वः सदा त्वे सुमनसः स्याम ॥४॥
आ यो योनिं देवकृतं ससाद क्रत्वा ह्य १ ग्निरमृताँ अतारीत् ।
तमोषधीश्च वनिनश्च गर्भं भूमिश्च विश्वधायसं बिभर्ति ॥५॥
ईशे ह्य १ ग्निरमृतस्य भूरेरीशे रायः सुवीर्यस्य दातोः ।
मा त्वा वयं सहसावन्नवीरा माप्सवः परिषदाम मादुवः ॥६॥
परिषद्यं ह्यरणस्य रेक्णो नित्यस्य रायः पतयः स्याम ।
न शेषो अग्ने अन्यजातमस्त्यचेतानस्य मा पथो वि दुक्षः ॥७॥
नहि ग्रभायारणः सुशेवोऽन्योदर्यो मनसा मन्तवा उ ।
अधा चिदोकः पुनरित्स एत्या नो वाज्यभीषाळेतु नव्यः ॥८॥

३ मनुष्य जिन शुभ्र अग्निको मुख्य स्थानमें परिग्रहण करते हैं और जो पुरुषों द्वा[रा] गृहीत वस्तुकी सेवा करते हैं, वही मनुष्योंके लिये शत्रुओंकी दुःसेव्य रूपसे दी[प्ति] पाते हैं ।

४ कवि, प्रकाशक और अमर अग्नि अकवि मनुष्योंके बीच निहित हैं । अग्नि, हम तुम्हारे लि[ये] सदा सुबुद्धि रहेंगे । हमें नहीं मारना ।

५ अग्निने प्रज्ञा द्वारा देवोंको तारा है; इसलिये वह देवोंके स्थानपर बैठते हैं । ओषधियाँ, [वृ]क्ष धारक और गर्भमें वर्त्तमान अग्निका धारण करते हैं; पृथ्वी भी अग्निको धारण करती है ।

६ अग्नि अधिक अमृत देनेमें समर्थ हैं; सुन्दर अमृत देनेमें समर्थ हैं । बली अग्नि, हम पुत्रादि[से] शून्य होकर नहीं बैठें; रूप-रहित होकर न बैठें; सेवा-शून्य होकर भी नहीं बैठें ।

७ ऋण—रहित व्यक्तिके पास यथेष्ट धन रहता है; इसलिये हम नित्य धनके पति होंगे । अग्नि[,] हमारी सन्तान अन्यजात (अनौरस) न हो । मूर्खका मार्ग नहीं जानना ।

८ अन्यजात (दत्तक पुत्र) पुत्र सुखावह होनेपर भी उसे पुत्र कहकर ग्रहण नहीं किया जा सकता [और] नहीं समझा जा सकता; क्योंकि वह फिर अपने ही स्थानपर जा पहुँचता है । इसलिये अन्नवान्, श[त्रु]हन्ता और नवजात शिशु हमें प्राप्त हो ।

त्वमग्ने वनुष्यतो नि पाहि त्वमु नः सहसावन्नवद्यात् ।
सं त्वा ध्वस्मन्वदभ्येतु पाथः सं रयिः स्पृहयाय्यः सहस्री ॥९॥
एता नो अग्ने सौभगा दिदीह्यपि क्रतुं सुचेतसं वतेम ।
विश्वा स्तोतृभ्यो गृणते च सन्तु यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥१०॥



५ सूक्त

वैश्वानर अग्नि देवता। वसिष्ठ ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

प्राग्नये तवसे भरध्वं गिरं दिवो अरतये पृथिव्याः ।
यो विश्वेषाममृतानामुपस्थे वैश्वानरो वावृधे जागृवद्भिः ॥१॥
पृष्टो दिवि धाय्यग्निः पृथिव्यां नेता सिन्धूनां वृषभः स्तियानाम् ।
स मानुषीरभि विशो विभाति वैश्वानरो वावृधानो वरेण ॥२॥
त्वद्भिया विश आयन्नसिक्नीरसमना जहतीर्भोजनानि ।
वैश्वानर पूरवे शोशुचानः पुरो यदग्ने दरयन्नदीदेः ॥३॥

---

९ अग्नि, तुम हमें हिंसकसे बचाओ। बली अग्नि, तुम हमें पापसे बचाओ। निर्दोष अन्न तुम्हारे पास जाय। अभिलषणीय हजारों प्रकारके धन हमें प्राप्त हों।

१० अग्नि, हमें यही सुन्दर धन दो। हम यज्ञ-सेवी और विशुद्धान्तःकरण पुत्र प्राप्त करें। सारा धन उद्गाताओं और स्तोताओंका हो। तुम लोग सदा हमें कल्याण-कार्यके द्वारा पालन करो।

---

१ जो वैश्वानर अग्नि यज्ञमें जागे हुए सारे देवोंके साथ बढ़ते हैं, उन्हीं प्रवृद्ध और अन्तरीक्ष तथा पृथिवीपर गतिशील अग्निको लक्ष्य कर स्तुति करो।

२ जो नदियोंके नेता, जलवर्षक और पूजित अग्नि अन्तरीक्ष और पृथिवीपर निकले हैं, वही वैश्वानर नामक अग्नि हव्यद्वारा वर्द्धित होकर मनुष्य-प्रजाके सामने शोभा पाते हैं।

३ वैश्वानर अग्नि, जिस समय तुम पुरुके पास दीप्त होकर उनके शत्रुकी पुरीको विदीर्ण कर प्रज्वलित हुए थे, उस समय तुम्हारे डरसे असितवर्ण प्रजा, परस्पर असमान होकर, भोजन छोड़कर आयी थी।

तव त्रिधातु पृथिवी उत द्यौर्वैश्वानर व्रतमग्ने सचन्त ।
त्वं भासा रोदसी आ ततन्थाजस्रेण शोचिषा शोशुचानः ॥४॥
त्वामग्ने हरितो वावशाना गिरः सचन्ते धुनयो घृताचीः ।
पतिं कृष्टीनां रथ्यं रयीणां वैश्वानरमुषसां केतुमह्नाम् ॥५॥
त्वे असुर्यं वसवोन्यृण्वन् क्रतुं हि ते मित्रमहो जुषन्त ।
त्वं दस्यूँरोकसो अग्न आज उरु ज्योतिर्जनयन्नार्याय ॥६॥
स जायमानः परमे व्योमन्वायुर्न पाथः परि पासि सद्यः ।
त्वं भुवना जनयन्नभि क्रन्नपत्याय जातवेदो दशस्यन् ॥७॥
तामग्ने अस्मे इषमेरयस्व वैश्वानर द्युमतीं जातवेदः ।
यया राधः पिन्वसि विश्ववार पृथु श्रवो दाशुषे मर्त्याय ॥८॥
तं नो अग्ने मघवद्भ्यः पुरुक्षुं रयिं नि वाजं श्रुत्यं युवस्व ।
वैश्वानर महि नः शर्म यच्छ रुद्रेभिरग्ने वसुभिः सजोषाः ॥९॥

---

४ वैश्वानर अग्नि, अन्तरीक्ष, पृथिवी और द्युलोक तुम्हारे लिये प्रीतिजनक कर्म क[रते] हैं। तुम सतत प्रकाश द्वारा विभासित होकर अपनी दीप्तिसे द्यावापृथिवीको विस्तृत करते हो।

५ वैश्वानर अग्नि, तुम मनुष्योंके स्वामी, धनोंके नेता और उषा तथा दिनके महान् के[तु] स्वरूप हो। अश्वगण कामना करके तुम्हारी सेवा करते हैं। पाप-नाशक और घृत-युक्त व[चन] तुम्हारी सेवा करते हैं।

६ मित्रोंके पूजयिता अग्नि, वसुओंने तुममें बल स्थापित किया है; तुम्हारे कर्मकी सेवा [की] है। आर्य (कर्म-निष्ठ)के लिये अधिक तेज उत्पन्न करते हुए दस्युओं (अनार्यों) को उनके स्थानों[से] बाहर निकाल दिया है।

७ तुम दूरस्थ अन्तरीक्षमें सूर्य-रूपसे प्रकट होकर वायुकी तरह सबसे पहले सदा सो[म] पान करते हो। जातधन अग्नि, जल उत्पन्न करते हुए अपत्यकी तरह पालनीय व्यक्ति[को] अभिलाषाएँ देते हुए विद्युद्रूपसे गर्जन करते हो।

८ सबके वरणीय अग्निदेव, जिस अन्नके द्वारा धनकी रक्षा करते हो और हव्यदात[ा] मनुष्यके विस्तृत यशकी रक्षा करते हो, हमें तुम वही दीप्तिमान् अन्न दो।

९ अग्नि, हम हविर्दाताओंको प्रभूत अन्न, धन और श्रवणीय बल दो। वैश्वान[र] अग्नि, तुम रुद्रों और वसुओंके साथ हमें महान् सुख दो।

६ सूक्त

वैश्वानर अग्नि देवता। वसिष्ठ ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

प्र सम्राजो असुरस्य प्रशस्तिं पुंसः कृष्टीनामनुमाद्यस्य।
इन्द्रस्येव प्र तवसस्कृतानि वन्दे दारुं वन्दमानो विविक्मि ॥१॥
कविं केतुं धासिं भानुमद्रेर्हिन्वन्ति शं राज्यं रोदस्योः।
पुरन्दरस्य गीर्भिरा विवासेऽग्नेर्व्रतानि पूर्व्या महानि ॥२॥
न्यक्रतून् ग्रथिनो मृध्रवाचः पणीँरश्रद्धाँ अवृधाँ अयज्ञान्।
प्रप्र तान्दस्यूँरग्निर्विवाय पूर्वश्चकारापराँ अयज्यून् ॥३॥
यो अपाचीने तमसि मदन्तीः प्राचीश्चकार नृतमः शचीभिः।
तमीशानं वस्वो अग्निं गृणीषेऽनानतं दमयन्तं पृतन्यून् ॥४॥
यो देह्यो अनमयद्वधस्नैर्यो अर्यपत्नीरुषसश्चकार।
स निरुध्या नहुषो यह्वो अग्निर्विशश्चक्रे बलिहृतः सहोभिः ॥५॥

---

१ मैं पुरियोंके भेदकोंकी वन्दना करता हूँ। वन्दन करके सम्राट्, असुर, वीर और मनुष्योंकी स्तुतिके योग्य तथा बलवान् इन्द्रकी तरह उन्हीं वैश्वानरकी स्तुति और कर्मोंका कीर्त्तन करता हूँ।

२ अग्निदेव प्राज्ञ, प्रज्ञापक, पर्वतधारी, दीप्तिशाली, सुखदाता और द्यावापृथिवीके राजा हैं। देवगण उन्हीं अग्निको प्रसन्न करते हैं। मैं पुरी-विदारक अग्निके प्राचीन और महान् कर्मोंकी, स्तुति द्वारा; कीर्त्ति गाता हूँ।

३ अग्नि यज्ञ-शून्य, जल्पक, हिंसित-वचन, श्रद्धा-रहित, वृद्धि-शून्य और यज्ञ-रहित पणिनायक दस्युओंको विदूरित करें। अग्नि मुख्य होकर अन्य यज्ञ-शून्योंको हेय बनावें।

४ नेतृतम अग्निने अप्रकाशमान अन्धकारमें निमग्न प्रजाको प्रसन्न करते हुए प्रज्ञा द्वारा प्रजाको सरल-गामिनी किया था। मैं उन्हीं धनाधिपति, अनत और योद्धाओंका दमन करनेवाले अग्निकी स्तुति करता हूँ।

५ जिन्होंने आसुरी विद्याको आयुधसे हीन किया है और जिन्होंने सूर्यपत्नी उषाकी सृष्टि की है, उन्हीं अग्निने प्रजाको बल द्वारा रोककर नहुष राजाको करदाता बनाया था।

यस्य शर्मन्नुप विश्वे जनास एवैस्तस्थुः सुमतिं भिक्षमाणाः ।
वैश्वानरो वरमा रोदस्योराग्नि ससाद पित्रोरुपस्थ ॥६॥
आ देवो ददे बुन्ध्या वसूनि वैश्वानर उदिता सूर्यस्य ।
आ समुद्रादवरादा परस्मादाग्निर्ददे दिव आ पृथिव्या ॥७॥

७ सूक्त

अग्नि देवता । वसिष्ठ ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

प्र वो देवं चित् सहासानमग्निमश्वं न वाजिनं हिषे नमोभिः ।
भवा नो दूतो अध्वरस्य विद्वान् त्मना देवेषु विविदे मितद्रुः ॥१॥
आ याह्यग्ने पथ्या अनु स्वा मन्द्रो देवानां सख्यं जुषाणः ।
आ सानु शुष्मैर्नदयन् पृथिव्या जम्भेभिर्विश्वमुशधग्वनानि ॥२॥

---

६ सारे मनुष्य, सुखके लिये, जिनकी कृपा पानेके अर्थ हव्यके साथ उपस्थित होते हैं, वे वैश्वानर अग्नि पितृ-मातृ-तुल्य द्यावापृथिवीके बीच स्थित अन्तरीक्षमें आये हैं ।

७ वैश्वानर अग्नि सूर्यके उदय होनेपर अन्तरीक्षके अन्धकारको लेते हैं । अग्नि निम्नस्थ अन्तरीक्षका अन्धकार ग्रहण करते हैं । वे पर समुद्रसे, द्युलोकसे और पृथिवीसे अन्धकार ग्रहण करते हैं

---

१ अग्निदेव, तुम राक्षसादिकोंके अभिभविता और अश्वकी तरह वेगशाली हो । अग्नि, तुम विद्वान् हो । हमारे यज्ञके दूत बनो । तुम स्वयं देवोंमें "दग्धद्रुम" कहकर विख्यात हो ।

२ अग्नि, तुम स्तुति-योग्य हो और देवोंके साथ तुम्हारी मित्रता है । तुम अपने तेजोबलसे पृथिवी के तटप्रदेश (तृणगुल्मादि) को शब्दायमान करते हुए अपनी ज्वालाओंसे सारे वनको जलाकर अपने मार्ग द्वारा आओ ।

प्राचीनो यज्ञः सुधितं हि बर्हिः प्रीणीते अग्निरीलितो न होता ।
आ मातरा विश्ववारे हुवानो यतो यविष्ठ जज्ञिषे सुशेवः ॥३॥
सद्यो अध्वरे रथिरं जनन्त मानुषासोय विचेतसोय एषाम् ।
विशामधायि विश्पतिर्दुरोणेऽग्निर्मन्द्रो मधुवचा ऋतावा ॥४॥
असादि वृतो वह्निराज गन्वानग्निर्ब्रह्मा नृषदने विधर्ता ।
द्यौश्च यं पृथिवी वावृधाते आ यं होता यजति विश्ववारम् ॥५॥
एते द्युम्नेभिर्विश्वमातिरन्त मन्त्रं ये वारं नर्या अतक्षन् ।
प्र ये विशस्तिरन्त श्रोषमाणा आ ये मे अस्य दीधयन्नृतस्य ॥६॥
नू त्वामग्न ईमहे वसिष्ठा ईशानं सूनो सहसो वसूनाम् ।
इषं स्तोतृभ्यो मघवद्भ्य आनड्यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥७॥



३ तरुणतम अग्नि, जिस समय तुम सुन्दर सुखवाले होकर उत्पन्न होते हो, उस समय यज्ञ किया जाता और कुश रखा जाता हैं। स्तुति-योग्य अग्नि और होता तृप्त होते हैं और सबके लिये स्वीकरणीय मातृ-भूत द्यावापृथिवी बुलायी जाती हैं।

४ विद्वान् लोग यज्ञमें नेता, अग्निको तुरत उत्पन्न करते हैं। जो इनका हव्य वहन करते हैं, वही विश्वपति, मादक, मधु-वचन और यज्ञवान् अग्नि मनुष्योंके घरोंमें निहित हैं।

५ जिन अग्निको द्युलोक और पृथिवी वर्द्धित करती है और जिन विश्व-स्वीकरणीय अग्निका होता यज्ञ करता हैं, वही हव्यवाहक, ब्रह्मा और सबके धारक अग्नि द्युलोकसे आकर मनुष्योंके घरोंमें बैठे हुए हैं।

६ जिन मनुष्योंने यथेष्ट मन्त्र-संस्कार किया है, जो श्रवणेच्छु होकर वर्द्धित करते हैं और जिन्होंने सत्यभूत अग्निको प्रदीप्त किया है, वे अन्न द्वारा सारे पोष्य वृन्दको वर्द्धित करते हैं।

७ बलके पुत्र अग्नि, तुम वसुओंके पति हो। वसिष्ठगण तुम्हारे स्तोता हैं। तुम स्तोता और हविष्मान्को अन्न द्वारा शीघ्र व्याप्त करो। हमें सदा स्वस्ति द्वारा पालन करो।



८ सूक्त

अग्नि देवता। वसिष्ठ ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

इन्धे राजा समर्यो नमोभिर्यस्य प्रतीकमाहुतं घृतेन।
नरो हव्येभिरीलते सबाध अग्निरग्र उषसामशोचि ॥१॥
अयमुष्य सुमहाँ अवेदि होता मन्द्रो मनुषो यह्वो अग्निः।
वि भा अकः ससृजानः पृथिव्यां कृष्णपविरोषधीभिर्ववक्षे ॥२॥
कया नो अग्ने वि वसः सुवृक्तिं कामु स्वधामृणवः शस्यमानः।
कदा भवेम पतयः सुदत्र रायो वन्तारो दुष्टरस्य साधोः ॥३॥
प्रप्रायमग्निर्भरतस्य शृण्वे वि यत्सूर्यो न रोचते बृहद्भाः।
अभि यः पूरुं पृतनासु तस्थौ द्युतानो दैव्यो अतिथिः शुशोच ॥४॥
असन्नित्त्वे आहवनानि भूरि भुवो विश्वेभिः सुमना अनीकैः।
स्तुतश्चिदग्ने शृण्विषे गृणानः स्वयं वर्धस्व तन्वं सुजात ॥५॥

---

१ जिन अग्निका रूप घृतसे आहूत होता है और हव्यके साथ बाधा-युक्त होकर जिनकी स्तुति नेता लोग करते हैं, वही राजा और स्वामी अग्नि स्तुतिके साथ समिद्ध होते हैं। उषाके आगे अग्नि दीप्त होते हैं।

२ यही होता, मादक और विशाल अग्नि मनुष्यों द्वारा महान् गिने जाते हैं। अग्नि दीप्ति फैलाते हैं। यह कृष्णमार्ग अग्नि पृथिवीपर सृष्ट होकर ओषधियों द्वारा परिवर्द्धित होते हैं।

३ अग्नि, तुम किस हविद्वारा हमारी स्तुतिको व्याप्त करोगे? स्तूयमान होकर तुम कौन स्वधा प्राप्त करोगे? शोभन दानवाले अग्निदेव, हम कब दुस्तर समीचीन धनके पति और विभाग-कारी होंगे?

४ जिस समय यह अग्नि सूर्यकी तरह विशाल प्रतापशाली होकर प्रकाश पाते हैं, उस समय वह भरत (यजमान) द्वारा प्रसिद्ध होते हैं। जिन्होंने युद्धोंमें पुरुको अभिभूत किया है, वही दीप्तमान और देवोंके अतिथि अग्नि प्रज्वलित हुए।

५ अग्नि, तुम्हें यथेष्ट हव्य प्रदत्त हुआ है। सारे तेजोंके लिये प्रसन्न होओ और स्तोताका स्तोत्र सुनो। सुजन्मा अग्नि, स्तूयमान होकर स्वयं शरीर वर्द्धित करो।

इदं वचः शतसाः संसहस्रमुदग्नये जनिषीष्ट द्विवर्हाः ।
शं यत्स्तोतृभ्य आपये भवाति द्युमदमीवचातनं रक्षोहा ॥६॥
नू त्वामग्न ईमहे वसिष्ठा ईशानं सूनो सहसा वसूनाम् ।
इषं स्तोतृभ्यो मघवद्भ्य आनड्यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥७॥



६ सूक्त

अग्नि देवता। वसिष्ठ ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द ।

अबोधि जार उषसामुपस्थाद्धोता मन्द्रः कवितमः पावकः ।
दधाति केतुमुभयस्य जन्तोर्हव्या देवेषु द्रविणं सुकृत्सु ॥१॥
स सुक्रतुर्यो वि दुरः पणीनां पुनानो अर्कं पुरुभोजसन्नः ।
होता मन्द्रो विशां दमूनास्तिरस्तमो ददृशे राम्याणाम् ॥२॥

---

६ सौ गौओंके विभागकारी और हजार गौओंसे संयुक्त तथा विद्या और कर्मसे महान् वसिष्ठने इस स्तोत्रको अग्निके लिये उत्पन्न किया है।

७ बल-पुत्र अग्नि, तुम वसुओंके पति हो। वसिष्ठगण तुम्हारे स्तोता हैं। तुम स्तोता और हविष्मान्को अन्न द्वारा शीघ्र व्याप्त करो। हमें सदा स्वस्ति द्वारा पालन करो।



१ अग्नि सब प्राणियोंके जार, होता, मदयिता, प्राज्ञतम और शोधक हैं। वह उषाके बीच जागे हैं। वह देवों और मनुष्योंकी प्रज्ञा धारण करते हैं। देवोंमें हव्य और पुण्यात्माओंमें धन धारण करते हैं।

२ जिन अग्निने पणियोंका द्वार खोला था, वही सुकृती हैं। वह हमारे लिये बहु-क्षीर-युक्त और अर्चनीय गायोंका हरण करते हैं। वह देवोंको बुलानेवाले, मदयिता और शान्तमना हैं। अग्नि रात्रि और यजमानका अन्धकार दूर करते देखे जाते हैं।

अमूरः कविरदितिर्विवस्वान्त्सुसंसन्मित्रो अतिथिः शिवो नः ।
चित्रभानुरुषसां भात्यग्रेऽपां गर्भः प्रस्व आ विवेश ॥३॥
ईळेन्यो वो मनुषो युगेषु समनगा अशुचज्जातवेदाः ।
सुसन्दृशा भानुना यो विभाति प्रति गावः समिधानं बुधन्त ॥४॥
अग्ने याहि दूत्यं मा रिषण्यो देवाँ अच्छा ब्रह्मकृता गणेन ।
सरस्वतीं मरुतो अश्विनापो यक्षि देवान्रत्नधेयाय विश्वान् ॥५॥
त्वामग्ने समिधानो वसिष्ठो जरूथं हन्यक्षि राये पुरन्धिम् ।
पुरुणीथा जातवेदो जरस्व यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥६॥

---

३ अमूढ़, प्राज्ञ (कवि), अदीन, दीप्तिमान्, शोभन गृहसे युक्त, मित्र, अतिथि और हमारे म विधायक अग्नि, विशिष्ट दीप्तिसे युक्त होकर, उषाके मुखमें शोभा पाते और सलिलके गर्भ उत्पन्न होकर ओषधियोंमें प्रवेश करते हैं ।

४ अग्नि, तुम मनुष्योंके यज्ञ-कालमें स्तुति-योग्य हो । जातधन अग्नि युद्धमें सङ्गत होकर दी पाते हैं । वह दर्शनीय तेज द्वारा शोभा पाते हैं । स्तुतियाँ समिद्ध अग्निको प्रतिबोधित करती हैं ।

५ अग्नि, तुम देवोंके सामने दूत-कार्यके लिये जाओ । सङ्घके साथ स्तोताओंको मारना । हमें रत्न देनेके लिये तुम सरस्वती, मरुद्गण, अश्विद्वय, जल आदि सारे देवोंका यज्ञ करते

६ अग्नि, वसिष्ठ तुम्हें समिद्ध करते हैं । तुम कठोर-भाषी राक्षसोंको मारो । जातवेद अ अनेक स्तोत्रोंसे देवोंकी स्तुति करो । तुम हमें सदा स्वस्ति द्वारा पालन करो ।



१० सूक्त

अग्नि देवता। वसिष्ठ ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

उषो न जारः पृथु पाजो अश्रेद्दविद्युतद्दीद्यच्छोशुचानः।
वृषा हरिः शुचिरा भाति भासा धियो हिन्वान उशतीरजीगः॥१॥
स्वर्ण वस्तोरुषसामरोचि यज्ञं तन्वाना उशिजो न मन्म।
अग्निर्जन्मानि देव आ वि विद्वान्द्रवद्दूतो देवयावा वनिष्ठः॥२॥
अच्छा गिरो मतयो देवयन्तीरग्निं यन्ति द्रविणं भिक्षमाणाः।
सुसंदृशं सुप्रतीकं स्वञ्चं हव्यवाहमरतिं मानुषाणाम्॥३॥
इन्द्रं नो अग्ने वसुभिः सजोषा रुद्रं रुद्रेभिरा वहा बृहन्तम्।
आदित्येभिरदितिं विश्वजन्यां बृहस्पतिमृक्वभिर्विश्ववारम्॥४॥
मन्द्रं होतारमुशिजो यविष्ठमग्निं विश ईळते अध्वरेषु।
स हि क्षपावाँ अभवद्रयीणामतन्द्रो दूतो यजथाय देवान्॥५॥

---

१ उषाके जार सूर्यकी तरह अग्नि विस्तीर्ण तेजका आश्रय ग्रहण करते हैं। अत्यन्त दीप्तिमान्, काम-वर्षी, हव्य-प्रेरक और शुद्ध अग्नि कर्मोंको प्रेरित करके दीप्ति द्वारा प्रकाश पाते हैं। अग्नि अभिलाषियोंको जगाते हैं।

२ दिनमें अग्नि उषाके आगे ही सूर्यकी तरह शोभा पाते हैं। यज्ञका विस्तार करते हुए ऋत्विक्गण मननीय स्तोत्रोंका पाठ करते हैं। विद्वान्, दूत, देवोंके पास गमनकर्त्ता और दातृ-श्रेष्ठ अग्निदेव प्राणियोंको द्रवीभूत करते हैं।

३ देवाभिलाषी, धन-याचक और गतिशील स्तुति-रूप वाक्य अग्निके सामने जाते हैं। वह अग्नि दर्शनीय, सुरूप, सुन्दर-गमनकारी, हव्य-वाहक और मनुष्योंके स्वामी हैं।

४ अग्नि, तुम वसुओंके साथ मिलकर हमारे लिये इन्द्रका आह्वान करो; रुद्रोंके साथ संगत होकर महान् रुद्रका आह्वान करो; आदित्योंके साथ मिलकर विश्व-हितैषी अदितिको बुलाओ और स्तुत्य अङ्गिरा लोगोंके साथ मिल कर सबके वरणीय बृहस्पतिको बुलाओ।

५ अभिलाषी मनुष्य स्तुत्य, होता और तरुणतम अग्निकी यज्ञमें स्तुति करते हैं। अग्नि रात्रि-वाले हैं। वह देवोंके यज्ञके लिये हव्य-दाताके तन्द्रा-शून्य दूत हुए थे।

११ सूक्त

अग्नि देवता। वसिष्ठ ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

महाँ अस्यध्वरस्य प्रकेतो न ऋते त्वदमृता मादयन्ते ।
आ विश्वेभिः सरथं याहि देवैर्न्यग्ने होता प्रथमः सदेह ॥१॥
त्वामीलते अजिरं दूत्याय हविष्मन्तः सदमिन्मानुषासः ।
यस्य देवैरासदो बर्हिरग्नेऽहान्यस्मै सुदिना भवन्ति ॥२॥
त्रिश्चिदक्तोः प्र चिकितुर्वसूनि त्वे अन्तर्दाशुषे मर्त्याय ।
मनुष्वदग्न इह यक्षि देवान् भवा नो दूतो अभिशस्तिपावा ॥३॥
अग्निरीशे बृहतो अध्वरस्याग्निर्विश्वस्य हविषः कृतस्य ।
क्रतुं ह्यस्य वसवो जुषन्ताथा देवा दधिरे हव्यवाहम् ॥४॥
आग्ने वह हविरद्याय देवानिन्द्रज्येष्ठास इहमादयन्ताम् ।
इमं यज्ञं दिवि देवेषु धेहि यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥५॥

---

१ अग्नि, तुम यज्ञके प्रज्ञापक होकर महान् हो तुम्हारे विना देवलोग मत्त नहीं होते। तुम देवोंके साथ रथ-युक्त होकर आओ और कुशोंपर, मुख्य होता बनकर, बैठो।

२. अग्नि, तुम गमनशील हो। हविर्दाता मनुष्य तुमसे सदा दौत्य-कार्यके लिये प्रार्थना करते जिस यजमानके कुशोंपर तुम देवोंके साथ बैठते हो, उसके दिन शोभन होते हैं।

३ अग्नि, ऋत्विक् लोग दिनमें तीन बार हव्यदाता मनुष्यके लिये तुम्हारे बीच हव्य फ हैं। मनुकी तरह तुम इस यज्ञमें दूत होकर यज्ञ करो और हमें शत्रुओंसे बचाओ।

४ अग्नि महान् यज्ञके स्वामी हैं; अग्नि सारे संस्कृत हव्योंके पति हैं। वसु लोग इनके कर्म सेवा करते हैं और देवोंने अग्निको हव्यवाहक बनाया है।

५. अग्नि, हव्यका भक्षण करनेके लिये देवोंको बुलाओ। इस यज्ञमें इन्द्र आदि देवों प्रमत्त करो। इस यज्ञको द्युलोकमें, देवोंके पास, ले जाओ। सदा तुम स्वस्ति द्वारा हमारा पा करो।



१२ सूक्त

अग्नि देवता। वसिष्ठ ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

अगन्म महा नमसा यविष्ठं यो दीदाय समिद्धः स्वे दुरोणे ।
चित्रभानुं रोदसी अन्तरुर्वी स्वाहुतं विश्वतः प्रत्यञ्चम् ॥१॥
स मह्ना विश्वा दुरितानि साह्वानग्निष्टवे दम आ जातवेदाः ।
स नो रक्षिषद्दुरितादवद्यादस्मान् गृणत उत नो मघोनः ॥२॥
त्वं वरुण उत मित्रो अग्ने त्वां वर्द्धन्ति मतिभिर्वसिष्ठाः ।
त्वे वसु सुषणनानि सन्तु यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥३॥



१३ सूक्त

वैश्वानर अग्नि देवता। वसिष्ठ ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

प्राग्नये विश्वशुचे धियन्धेऽसुरघ्ने मन्म धीतिं भरध्वम् ।
भरे हविर्न बर्हिषि प्रीणानो वैश्वानराय यतये मतीनाम् ॥१॥

---

१ जो अपने गृहमें समिद्ध होकर दीप्ति पाते हैं, उन्हीं तरुणतम, विस्तीर्ण, द्यावापृथिवीके मध्यमें स्थित, विचित्र शिखावाले, सुन्दर रूपमें आहूत और सर्वत्र जानेवाले अग्निके पास हम नमस्कारके साथ गमन करते हैं।

२ जातधन अग्नि अपनी महिमा द्वारा सारे पापोंका अभिभव करते हैं। वह यज्ञ-गृहमें स्तुत होते हैं। वह हमें पाप और निन्दित कर्मसे बचावें। हम उनकी स्तुति और यज्ञ करते हैं।

३ अग्नि, तुम्हीं मित्र और वरुण हो। वसिष्ठवंशीय स्तुति द्वारा तुम्हें वर्द्धित करते हैं। तुममें विद्यमान धन सुलभ हो। तुम सदा हमें स्वस्ति द्वारा पालन करो।



१ सबके उद्दीपक, कर्मके धारक और असुर-विघातक अग्निको लक्ष्य कर स्तोत्र और कर्म करो। मैं प्रसन्न होकर मनोरथ-दाता वैश्वानर अग्निको लक्ष्य कर यज्ञमें, हव्यके साथ, स्तुति करता हूँ।

त्वमग्ने शोचिषा शोशुचान आ रोदसी अपृणा जायमानः ।
त्वं देवाँ अभिशस्तेरमुञ्चो वैश्वानर जातवेदोमहित्वा ॥२॥
जातो यदग्ने भुवना व्यख्यः पशून्न गोपा इर्यः परिज्मा ।
वैश्वानर ब्रह्मणे बिन्द गातुं यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥३॥

१४ सूक्त

अग्नि देवता । वसिष्ठ ऋषि । बृहती और त्रिष्टुप् छन्द ।

समिधा जातवेदसे देवाय देवहूतिभिः ।
हविर्भिः शुक्रशोचिषे नमस्विनो वयं दाशेमाग्नये ॥१॥
वयं ते अग्ने समिधा विधेम वयं दाशेम सुष्टुती यजत्र ।
वयं घृतेनाध्वरस्य होतर्वयं देव हविषा भद्रशोचे ॥२॥
आ नो देवेभिरुप देवहूतिमग्ने याहि वषट्कृतिं जुषाणः ।
तुभ्यं देवाय दाशतः स्याम यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥३॥

२ अग्नि, तुमने दीप्ति द्वारा दीप्त और उत्पन्न होकर द्यावापृथिवीको पूर्ण किया है। जातवे वैश्वानर, अपनी महिमा द्वारा तुमने देवोंको शत्रुओंसे मुक्त किया है ।

३ अग्नि, तुम सूर्य-रूपसे उत्पन्न हो, स्वामी हो, सर्वत्र गमनशील हो । जैसे गोपालक पशुओंका सन्दर्शन करता है, वैसे ही तुम जिस समय भूतोंका सन्दर्शन करते हो, उस समय स्तोत्र-रूप फल प्राप्त करो। सदा तुम हमें स्वस्ति द्वारा पालन करो ।

१ हम हविवाले हैं। हम समिधा द्वारा जातवेदा अग्निकी सेवा करते हैं। देव-स्तुति द्वारा हम अग्निकी सेवा करेंगे। हव्य द्वारा शुभ्र दीप्ति अग्निकी सेवा करेंगे।

२ अग्नि, समिधा द्वारा हम तुम्हारी सेवा करेंगे। हे यजनीय, हम स्तुति द्वारा तुम्हारी सेवा करेंगे। हे कल्याणमयी ज्वालावाले अग्नि, हम हव्य द्वारा तुम्हारी सेवा करेंगे।

३ अग्नि, तुम हव्य (वषट्कृति) का सेवन करते हुए देवोंके सङ्ग हमारे यज्ञमें आओ। तुम प्रकाशमान हो; हम तुम्हारे सेवक बनें। तुम सदा हमें स्वस्ति द्वारा पालन करो।

१५ सूक्त

अग्नि देवता । वसिष्ठ ऋषि । गायत्री छन्द ।

उपसद्याय मीह्लुष आस्ये जुहुता हविः । यो नो नेदिष्ठमाप्यम् ॥१॥
यः पञ्च चर्षणीरभि निषसाद दमेदमे । कविर्गृहपतिर्युवा ॥२॥
स नो वेदो अमात्यमग्नी रक्षतु विश्वतः । उतास्मान् पात्वंहसः ॥३॥
नवं नु स्तोममग्नये दिवः श्येनाय जीजनम् । वस्वः कुविद्वनाति नः ॥४॥
स्पार्हा यस्य श्रियो दृशे रयिर्वीरवतो यथा । अग्रे यज्ञस्य शोचतः ॥५॥
सेमां वेतु वषट्कृतिमग्निर्जुषत नो गिरः । यजिष्ठो हव्यवाहनः ॥६॥
नि त्वा नक्ष्य विश्पते द्युमन्तं देव धीमहि । सुवीरमग्न आहुत ॥७॥
क्षप उस्रश्च दीदिहि स्वग्नयस्त्वया वयम् । सुवीरस्त्वमस्मयुः ॥८॥
उप त्वा सातये नरो विप्रासो यन्ति धीतिभिः । उपाक्षरा सहस्रिणी ॥९॥

---

१ जो अग्नि हमारे समीपतम बन्धु हैं, उन्हीं पासमें बैठनेवाले और मनोरथवर्षक अग्निके लिये, उनके मुखमें, ऋत्विको, हव्य दो ।

२ प्राज्ञ, गृह-पालक और नित्य तरुण अग्नि पञ्चजनों (चार वर्णों और निषाद) के सामने घर-घर बैठते हैं ।

३ वही अग्नि हमारे मन्त्री हैं । बाधासे सारे धनकी रक्षा करें । हमें पापसे बचाओ ।

४ हम द्युलोकके, श्येन पक्षीकी तरह शीघ्रगामी अग्निको उद्देशकर नया मन्त्र उत्पन्न करते हैं । वह हमें बहुत धन दें ।

५ यज्ञके अग्रभागमें दीप्यमान अग्निकी दीप्तियाँ पुत्रवान् मनुष्यके धनकी तरह नेत्रोंको स्पृहणीय होती हैं ।

६ याज्ञिकोंके उत्तम हव्य-वाहक अग्नि इस हव्यकी अभिलाषा करें और हमारी स्तुतिकी सेवा करें ।

७ हे समीप जाने योग्य, विश्व-पति और यजमानों द्वारा बुलाये गये अग्निदेव, तुम प्रकाशमान और सुवीर हो । हमने तुम्हें स्थापित किया है ।

८ तुम दिन-रात प्रदीप्त होओ । इससे हम शोभन अग्निवाले होंगे । हमें चाहते हुए तुम सुवीर (सुन्दर स्तोत्रवाले) बनो ।

९ अग्नि, प्रतापी यजमान कर्म द्वारा, धन-लाभके लिये, तुम्हारे पास जाते हैं ।

अग्नी रक्षांसि सेधति शुक्रशोचिरमर्त्यः । शुचिः पावक ईड्यः ॥१०॥

स नो राधांस्याभरेशानः सहसो यहो । भगश्च दातु वार्यम् ॥११॥

त्वमग्ने वीरवद्यशो देवश्च सविता भगः । दितिश्च दाति वार्यम् ॥१२॥

अग्ने रक्षाणो अंहसः प्रतिष्म देव रीषतः । तपिष्ठैरजरो दह ॥१३॥

अधा मही न आयस्यनाधृष्टो नृपीतये । पूर्भवा शतभुजिः ॥१४॥

त्वं नः पाह्यंहसो दोषावस्तरघायतः । दिवा नक्तमदाभ्य ॥१५॥

१६ सूक्त

अग्नि देवता । वसिष्ठ ऋषि । बृहती और सती बृहती छन्द ।

एना वो अग्निं नमसोर्जो नपातमा हुवे ।
प्रियं चेतिष्ठमरतिं स्वध्वरं विश्वस्य दूतममृतम् ॥१॥

स योजते अरुषा विश्वभोजसा सदुद्रवत् स्वाहुतः ।
सुब्रह्मा यज्ञः सुशमी वसूनां देवं राधो जनानाम् ॥२॥

---

१० शुभ्र शिखावाले, अमर, स्वयंशुद्ध, शोधक और स्तुति-योग्य अग्नि, राक्षसोंको बाधा दो।

११ बलके पुत्र, तुम जगदीश्वर होकर हमें धन दो। भग देवता भी वरणीय धनदान करें।

१२ अग्नि, तुम पुत्रपौत्रादिसे युक्त अन्न दो। सविता देव भी वरणीय धन दें। भग और अदिति भी दें।

१३ अग्नि, हमें पापसे बचाओ। अजर देव, तुम हिंसकोंको अत्यन्त तापक तेज द्वारा जलाओ।

१४ तुम दुर्द्धर्ष हो। इस समय तुम हमारे मनुष्योंकी रक्षाके लिये महान् लौहसे निर्मित शतगुण पुरी बनाओ (ताकि लौह-नगरीमें शत्रु हमें न मार सकें)।

१५ अहिंसनीय रात्रिको अथवा अन्धकारको हटानेवाले अग्नि, तुम हमें पापसे और पाप-कामी व्यक्तिसे दिन-रात बचाओ।

---

१ तुम्हारे लिये बलके पुत्र, प्रिय, विद्वत्श्रेष्ठ, गतिशील, सुन्दर यज्ञवाले, सबके दूत और अमर अग्निको, इस स्तोत्रके द्वारा, मैं बुलाता हूँ।

२ अग्नि रुचिकर और सबके पालक हैं। वह दोनों अश्वोंको रथमें जोतते हैं। वह देवोंके प्रति अत्यन्त द्रुत-गमन करते हैं। वह सुन्दर रूपसे आहूत, सुन्दर स्तुतिवाले, यजनीय और सुकर्मा हैं। वसिष्ठवंशीयोंका धन अग्निके पास जाय।

उदस्य शोचिरस्थादाजुह्वानस्य मीह्लषः ।
उद्धूमासो अरुषासो दिविस्पृशः समग्निमिन्धते नरः ॥३॥
तं त्वा दूतं कृण्महे यशस्तमं देवाँ आ वीतये वह ।
विश्वा सूनो सहसो मर्तभोजना रास्व तद्यत्त्वेमहे ॥४॥
त्वमग्ने गृहपतिस्त्वं होता नो अध्वरे ।
त्वं पोता विश्ववार प्रचेता यक्षि वेषि च वार्यम् ॥५॥
कृधि रत्नं यजमानाय सुक्रतो त्वं हि रत्नधा असि ।
आ न ऋते शिशीहि विश्वमृत्विजं सुशंसो यश्च दक्षते ॥६॥
त्वे अग्ने स्वाहुत प्रियासः सन्तु सूरयः ।
यन्तारो ये मघवानो जनानामूर्वान्दयन्त गोनाम् ॥७॥
येषामिला घृतहस्ता दुरोण आँ अपि प्राता निषीदति ।
ताँस्त्रायस्व सहस्य द्रुहो निदो यच्छा नः शर्म दीर्घश्रुत् ॥८॥

---

३ अभीष्टकारी और बुलाये जानेवाले इन अग्निका तेज ऊपर उठ रहा है। रुचिकर और आकाश छूनेवाले धुएँ उठ रहे हैं। मनुष्य अग्निको जला रहे हैं।

४ बल-पुत्र अग्नि, तुम यशः-शाली हो। हम तुम्हें दूत बनाते हैं। हव्य-भक्षणके लिये देवोंको बुलाओ। जिस समय तुम्हारी हम याचना करते हैं, उस समय मनुष्योंके भोग-योग्य धन हमें दो।

५ विश्व-माननीय अग्नि, तुम हमारे यज्ञमें गृह-पति हो। तुम होता, पोता और प्रकृष्ट-बुद्धि हो। वरणीय हव्यका यज्ञ करो और भक्षण करो।

६ सुन्दरकर्मा अग्नि, तुम यजमानको रत्न दो। तुम रत्न-दाता हो। हमारे यज्ञमें सबको तेज बनाओ। जो होता बढ़ता है, उसे बढ़ाओ।

७ सुन्दर रूपसे आहूत अग्नि, तुम्हारे स्तोता प्रिय हों। जो धनवान् दाता लोग जन-समुदाय और गो-समूह दान करते हैं, वे भी प्रिय हों।

८ जिन घरोंमें घृतहस्ता, अन्न-रूपा और हविर्लक्षणा देवी पूर्णा होकर बैठी हैं, उनको, हे बल-वान् अग्नि, द्रोहियों और निन्दकोंसे बचाओ। हमें बहुत समय तक स्तुति-योग्य सुख दो।

स मन्द्रया च जिह्वया वह्निरासा विदुष्टरः ।
अग्ने रयिं मघवद्भ्यो न आ वह हव्यदातिं च सूदय ॥९॥
ये राधांसि ददत्यश्व्या मघा कामेन श्रवसो महः ।
ताँ अंहसः पिपृहि पर्तृभिष्ट्वं शतं पूर्भिर्यविष्ठ्य ॥१०॥
देवो वो द्रविणोदाः पूर्णां विवष्ट्यासिचम् ।
उद्वा सिञ्चध्वमुप वा पृणध्वमादिद्वो देव ओहते ॥११॥
तं होतारमध्वरस्य प्रचेतसं वह्निं देवा अकृण्वत ।
दधाति रत्नं विधते सुवीर्यमग्निर्जनाय दाशुषे ॥१२॥



१७ सूक्त

अग्नि देवता । वसिष्ठ ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

अग्ने भव सुषमिधा समिद्ध उत बर्हिरुर्विया वि स्तृणीताम् ॥१॥
उत द्वार उशतीर्वि श्रयन्तामुत देवाँ उशत आ वहेह ॥२॥

---

९ अग्नि, तुम हव्य-वाहक और विद्वान् हो। मोदयित्री और मुखस्थिता जिह्वा द्वारा धन दो। हम हव्यवाले हैं। हव्यदाताको कर्ममें प्रेरित करो।

१० तरुणतम अग्नि, जो यजमान महान् यशकी इच्छासे साधक-रूप और अश्वात्मक दान करते हैं, उन्हें पापसे बचाओ और सौ नगरियों द्वारा पालन करो।

११ धनदाता अग्निदेव तुम्हारे हविःपूर्ण स्रुक् वा चमसकी इच्छा करते हैं। सोमद्वारा पात्र सिक्त करो, सोम दान करो। अनन्तर अग्निदेव तुम्हें वहन करते हैं।

१२ देवो, तुमने उत्तम-बुद्धि अग्निको यज्ञ-वाहक और होता बनाया है। वह अग्नि परिचर्या हव्यदाता जनको शोभन वीर्यवाला और रमाणीय धन दें।



१ अग्नि, शोभन समिधाके द्वारा समिद्ध होओ। अध्वर्यु भली भाँति कुश फैलावें।

२ देव-कामी द्वारोंको आश्रित करो और यज्ञाभिलाषी देवोंको इस यज्ञमें बुलाओ।

अग्ने वीहि हविषा यक्षि देवान्त्स्वध्वरा कृणुहि जातवेदः ॥३॥
स्वध्वरा करति जातवेदा यक्षद्देवाँ अमृतान्पिप्रयच्च ॥४॥
वंस्व विश्वा वार्याणि प्रचेतः सत्या भवन्त्वाशिषो नो अद्य ॥५॥
त्वामु ते दधिरे हव्यवाहं देवासो अग्न ऊर्ज आ नपातम् ॥६॥
ते ते देवाय दाशतः स्याम महो नो रत्ना वि दध इयानः ॥ ७॥



२ अनुवाक । १८ सूक्त

इन्द्र देवता हैं; किन्तु २२--२५ मन्त्रोंके सुदास देवता हैं । वसिष्ठ ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

त्वे ह यत् पितरश्चिन्न इन्द्र विश्वा वामा जरितारो असन्वन् ।
त्वे गावः सुदुघास्त्वे ह्यश्वास्त्वं वसु देवयते वनिष्ठः ॥१॥
राजेव हि जनिभिः क्षेष्येवाव द्युभिरभि विदुष्कविः सन् ।
पिशा गिरो मघवन् गोभिरश्वैस्त्वायतः शिशीहि राये अस्मान् ॥२॥

---

३ जातधन अग्नि, देवोंके सामने जाओ। हव्यद्वारा देवोंका यज्ञ करो और देवोंको शोभन यज्ञवाले करो।

४ जातधन अग्नि, अमर देवोंको सुन्दर यज्ञसे युक्त करो। हव्यसे यज्ञ करो और स्तोत्रसे प्रसन्न करो।

५ हे सुबुद्धि अग्नि, समस्त वरणीय धन हमें दान करो। हमारे आशीर्वाद आज सत्य हों।

६ अग्नि, तुम बल-पुत्र हो। तुम्हें उन्हीं देवोंने हव्यवाहक बनाया है।

७ तुम प्रकाशमान हो। तुम्हें हम हवि देंगे। तुम महान् और पास जाने योग्य हो। हमें रत्न (धन) दान करो ।



१ इन्द्र, हमारे पितरोंने, स्तुति करते हुए, तुमसे ही सारे मनोहर धनोंको प्राप्त किया है। तुमसे ही गायें सरलतासे दोहनमें समर्थ होती हैं। तुममें अश्व हैं। देवाभिलाषी व्यक्तिको तुम प्रभूत धन देते हो।

२ इन्द्र, पत्नियोंके साथ राजाकी तरह तुम दीप्तिके साथ रहते हो। इन्द्र, तुम विद्वान् और क्रान्त-कर्मा (कवि) होकर स्तोताओंको रूप दान करो और गौ तथा अश्व द्वारा रक्षा करो। हम तुम्हारी कामना करते हैं। धनके लिये तुम हमें संस्कृत करो।

इमा उ त्वा पस्पृधानासो अत्र मन्द्रा गिरो देवयन्तीरुपस्थुः ।
अर्वाची ते पथ्या राय एतु स्याम ते सुमताविन्द्र शर्मन् ॥३॥
धेनुं न त्वा सुयवसे दुदुक्षन्नुप ब्रह्माणि ससृजे वसिष्ठः ।
त्वामिन्मे गोपतिं विश्व आहान इन्द्रः सुमतिं गन्त्वच्छ ॥४॥
अर्णांसि चित् पप्रथाना सुदास इन्द्रो गाधान्यकृणोत्सुपारा ।
शर्द्धन्तं शिम्युमुचथस्य नव्यः शापं सिन्धूनामकृणोदशस्तीः ॥५॥
पुरोला इत्तुर्वशो यक्षुरासीद्राये मत्स्यासो निशिता अपीव ।
श्रुष्टिं चक्रुर्भृगवो द्रुह्यवश्च सखा सखायमतरद्विषूचोः ॥६॥
आ पक्थासो भलानसो भनन्तालिनासो विषाणिनः शिवासः ।
आ यो नयत्सधमा आर्यस्य गव्या तृत्सुभ्यो अजगन्युधा नॄन् ॥७॥
दुराध्यो अदितिं स्रेवयन्तोऽचेतसो वि जगृभ्रे परुष्णीम् ।
मह्नाविव्यक्पृथिवीं पत्यमानः पशुष्कविरशयच्चायमानः ॥८॥

---

३ इन्द्र, इस यज्ञकी स्पर्द्धमान और रमणीय स्तुतियाँ तुम्हारे पास जाती हैं। तुम्हारा हमारी ओर आवे। तुम्हारी कृपा प्राप्त कर हम सुखी होंगे।

४ बढ़िया घासवाली गोशालाकी गायकी तरह तुम्हें दूहनेकी इच्छासे वसिष्ठ वत्स-रूप स बनाते है। समस्त संसार तुम्हें ही गायोंका पति कहता है। इन्द्र, हमारी सुन्दर स्तुतिके पास आओ

५ स्तवनीय इन्द्र, तुमने, परुष्णी नदीके जलके विकट-धार होनेपर भी, सुदास राजाके जलको तलस्पर्श और पार करनेके योग्य बना दिया था। स्तोताके लिये नदियोंके तरङ्गायित रोकनेवाले शापको तुमने दूर किया था।

६ याज्ञिक और पुरोदाता तुर्वश नामके एक राजा थे। जलमें मत्स्यकी तरह बँधे रह भी भृगुओं और द्रुह्युओंने धनके लिये सुदास और तुर्वशका साक्षात्कार करा दिया। इन दोनों व्य परायणोंमें एक (तुर्वश) का इन्द्रने वध किया और अन्य (सुदास) को तार दिया।

७ हव्योंके पाचक, कल्याण-मुख, तपस्यासे अप्रवृद्ध, विषाण-हस्त (दीक्षित) और मङ्गल व्यक्ति इन्द्रकी स्तुति करते हैं। सोमपानसे मत्त होकर इन्द्र आर्यकी गायें हिंसकोंसे छुड़ा थे। स्वयं गायोंको प्राप्त किया था और युद्ध करके उन गो-तस्कर रिपुओंको मारा था।

८ दुष्ट-मानस और मन्दमति शत्रुओंने परुष्णी नदीको खोदते हुए उसके तटोंको दिया था। इन्द्रकी कृपासे सुदास विश्व-व्यापक हो गये थे। चयमानका पुत्र कवि, पालित प तरह, सुदास द्वारा सुला दिया गया अर्थात् मार दिया गया।

ईयुरर्थं न न्यर्थं परुष्णीमाशुश्चनेदभिपित्वं जगाम ।
सुदास इन्द्रः सुतुकाँ अमित्राननरन्धयन्मानुषे वध्रिवाचः ॥९॥
ईयुर्गावो न यवसादगोपा यथाकृतमभि मित्रं चितासः ।
पृश्निगावः पृश्निनिप्रेषितासः श्रुष्टिं चक्रुर्नियुतो रन्तयश्च ॥१०॥
एकं च यो विंशतिं च श्रवस्या वैकर्णयोर्जनान्राजा न्यस्तः ।
दस्मो न सद्मन्नि शिशाति बर्हिः शूरः सर्गमकृणोदिन्द्र एषाम् ॥११॥
अध श्रुतं कवषं वृद्धमप्स्वनु द्रुह्युं नि वृणक्वज्रबाहुः ।
वृणाना अत्र सख्याय सख्यं त्वायन्तो ये अमदन्ननु त्वा ॥१२॥
वि सद्यो विश्वा दृंहितान्येषामिन्द्रः पुरः सहसा सप्त दर्दः ।
व्यानवस्य तृत्सवे गयं भाग्जेष्म पूरुं विदथे मृध्रवाचम् ॥१३॥

---

९ इन्द्र द्वारा परुष्णीके तट ठीक कर दिये जानेपर उसका जल गन्तव्य स्थानकी ओर, नदीमें चला गया—इधर-उधर नहीं गया। सुदास राजाका घोड़ा भी अपने गन्तव्य स्थानको चला गया। सुदासके लिये इन्द्रने मनुष्योंमें सन्ततिवाले और बकवादी शत्रुओंको, उनकी सन्ततियोंके साथ, वशमें किया था।

१० जैसे चरवाहोंके विना गायें जौकी ओर जाती हैं, वैसे ही माता द्वारा भेजे गये और एकत्र मरुद्गण, अपनी पूर्वकी प्रतिज्ञाके अनुसार, मित्र इन्द्रकी ओर गये। मरुतोंके नियुत् (घोड़े) भी प्रसन्न होकर गये।

११ कीर्त्ति अर्जित करनेके लिये राजा सुदासने दो प्रदेशोंके २१ मनुष्योंका बध कर डाला था। जैसे युवक अध्वर्यु यज्ञ-गृहमें कुश काटता है, वैसे ही वह राजा शत्रुओंको काटता है। वीर इन्द्रने सुदासकी सहायताके लिये मरुतोंको उत्पन्न किया था।

१२ इसके सिवा वज्रबाहु इन्द्रने श्रुत, कवष, वृद्ध और द्रुह्यु नामक व्यक्तियोंको पानीमें डुबो दिया था। उस समय जिन लोगोंने उनकी इच्छा करके उनकी स्तुति की थी, वे सखा माने गये और मित्र बन गये।

१३ अपनी शक्तिसे इन्द्रने उक्त श्रुत आदिकी सुदृढ़ समस्त नगरियोंको और सात प्रकारके

नि गव्यवोऽनवो द्रुह्यवश्च षष्टिः शता सुषुपुः षट् सहस्रा ।
षष्टिर्वीरासो अधि षड्दुवोयु विश्वेदिन्द्रस्य वीर्या कृतानि ॥१४॥
इन्द्रेणैते तृत्सवो वेविषाणा आपो न सृष्टा अधवन्त नीचीः ।
दुर्मित्रासः प्रकलविन्मिमाना जहुर्विश्वानि भोजना सुदासे ॥१५॥
अर्धं वीरस्य शृतपामनिन्द्रं परा शर्धन्तं नुनुदे अभि क्षाम् ।
इन्द्रो मन्युं मन्युम्यो मिमाय भेजे पथो वर्तनिं पत्यमानः ॥१६॥
आध्रेण चित्तद्वेकं चकार सिंह्यं चित्पेत्वेना जघान ।
अव स्रक्तीर्वेश्यावृश्चदिन्द्रः प्रायच्छद्विश्वा भोजना सुदासे ॥१७॥
शश्वन्तो हि शत्रवो रारधुष्टे भेदस्य चिच्छर्धतो विन्द रन्धिम् ।
मर्ताँ एनः स्तुवतो यः कृणोति तिग्मं तस्मिन्नि जहि वज्रमिन्द्र ॥१८॥

रक्षा-साधनोंको तुरत विदीर्ण किया था। अनुके पुत्रके गृहको तृत्सुको दे दिया था। इन्द्र, ह दुष्ट वचनवाले मनुष्यको जीत सकें—इन्द्र, ऐसी कृपा करो।

१४ अनु और द्रुह्युकी गौओंको चाहनेवाले छियासठ हजार छियासठ सम्बन्धियोंको, सेवाभिलाषी सुदासके लिये, मारा गया था। यह सब कार्य इन्द्रकी शूरताके सूचक हैं।

१५ दुष्ट मित्रोंवाले ये अनाड़ी तृत्सुलोग इन्द्रके सामने युद्ध-भूमिमें उतरनेपर पलायन करने पर उद्यत होनेपर निम्नगामी जलकी तरह दौड़े थे; परन्तु बाधा प्राप्त होनेपर उन लोगोंने सारी भोग्य वस्तुएँ सुदासको दे दी थीं।

१६ वीर्य-शाली सुदासके हिंसक, इन्द्र-शून्य, हव्यपाता और उत्साही मनुष्योंको इन्द्रने धरा शायी किया था। इन्द्रने क्रोधियोंके क्रोधको चौपट किया था। मार्गमें जाते हुए सुदासके शत्रुने पला यन-पथका आश्रय लिया था।

१७ इन्द्रने उस समय दरिद्र सुदासके द्वारा एक कार्य कराया था। प्रबल सिंहको छाग द्वारा मरवाया था। सूईसे यूपादिका कोना काट दिया था। सारा धन सुदास राजाको प्रदान किया था।

१८ इन्द्र, तुम्हारे अधिकांश शत्रु वशी हो गये हैं। मनस्वी भेद (नास्तिक) को वशमें करो। जो तुम्हारी स्तुति करता है, भेद उसीका अहित करता है। इसके विरोधमें तेज योद्धाको उत्साहित करो (भेजो)। इसे वज्रसे मारो।

आवदिन्द्रं यमुना तृत्सवश्च प्रात्र भेदं सर्वताता मुषायत्।
अजासश्च शिग्रवो यक्षवश्च बलिं शीर्षाणि जभ्रुरश्व्यानि ॥१९॥
न त इन्द्र सुमतयो न रायः सञ्चक्षे पूर्वा उषसो न नूत्नाः।
देवकं चिन्मान्यमानं जघन्थाव त्मना बृहतः शम्बरं भेत् ॥२०॥
प्र ये गृहादममदुस्त्वाया पराशरः शतयातुर्वसिष्ठः।
न ते भोजस्य सख्यं मृषन्ताधा सूरिभ्यः सुदिना व्युच्छान् ॥२१॥
द्वे नप्तुर्देववतः शते गोर्द्वा रथा बधूमन्ता सुदासः।
अर्हन्नग्ने पैजवनस्य दानं होतेव सद्म पर्येमि रेभन् ॥२२॥
चत्वारो मा पैजवनस्य दानाः स्मद्दिष्टयः कृशनिनो निरेके।
ऋज्रासो मा पृथिविष्ठाः सुदासस्तोकं तोकाय श्रवसे वहन्ति ॥२३॥

---

१९ इस युद्धमें इन्द्रने भेदका बध किया था। यमुनाने इन्द्रको सन्तुष्ट किया था। तृत्सुओंने भी उन्हें सन्तुष्ट किया था। अज, शिग्रु और यक्षु नामक जनपदोंने इन्द्रको, अश्वोंके सिर, उपहारमें दिये थे।

२० इन्द्र, तुम्हारी प्राचीन कृपाएँ और धन, उषाके समान, वर्णन करने योग्य नहीं हैं। तुम्हारी नयी कृपाएँ और धन भी वर्णनातीत हैं। तुमने मन्यमानके पुत्र देवकका बध किया था। स्वयं विशाल शैल-खण्डसे शम्बरका बध किया था।

२१ इन्द्र, अनेक राक्षस जिनके बधकी इच्छा करते हैं, उन्हीं पराशर, वसिष्ठ आदि ऋषियोंने, तुम्हारी इच्छा करके, अपने गृहकी ओर जाते हुए, तुम्हारी स्तुति की थी। वे तुम्हारा सख्य नहीं भूले; क्योंकि तुम उनका पालन नहीं भूले, जिससे उनके दिन सदा सुन्दर रहते हैं।

२२ देवोंमें श्रेष्ठ इन्द्र, देववान् राजाके पौत्र और पिजवनके पुत्र राजा सुदासकी दो सौ गौओं और दो रथोंको मैंने, इन्द्रकी स्तुति करके, पाया है। जैसे होता यज्ञ-गृहमें जाता है, वैसे ही मैं भी गमन करता हूँ।

२३ पिजवनपुत्र सुदास राजाके श्रद्धा, दान आदिसे युक्त, सोनेके अलङ्कारोंसे सम्पन्न, दुर्गतिके अवसरपर सरल-गामी और पृथिवीस्थित चार घोड़े पुत्रकी तरह पालनीय वसिष्ठको पुत्रके अन्न यों यशके लिये ढोते हैं।

यस्य श्रवो रोदसी अन्तरुर्वी शीर्ष्णेशीर्ष्णे विबभाजा विभक्ता ।
सप्तेदिन्द्रं न स्रवतो गृणन्ति नि युध्यामधिमशिशादभीके ॥२४॥
इमं नरो मरुतः सश्चतानु दिवोदासं न पितरं सुदासः ।
अविष्टना पैजवनस्य केतं दूणाशं क्षत्रमजरं दुवोयु ॥२५॥

१९ सूक्त

इन्द्र देवता । वसिष्ठ ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

यस्तिग्मशृङ्गो वृषभो न भीम एकः कृष्टीश्च्यावयति प्र विश्वाः ।
यः शश्वतो अदाशुषो गयस्य प्रयन्तासि सुष्वितराय वेदः ॥१॥
त्वं ह त्यदिन्द्र कुत्समावः शुश्रूषमाणस्तन्वा समर्ये ।
दासं यच्छुष्णं कुयवं न्यस्मा अरन्धय आर्जुनेयाय शिक्षन् ॥२॥
त्वं धृष्णो धृषता वीतहव्यं प्रावो विश्वाभिरूतिभिः सुदासम् ।
प्र पौरुकुत्सिं त्रसदस्युमावः क्षेत्रसाता वृत्रहत्येषु पूरुम् ॥३॥

२४ जिन सुदासका यश द्यावापृथिवीके बीच अवस्थित है और जो दातृ-श्रेष्ठ श्रेष्ठ व्यक्ति धन दान करते हैं, उनकी स्तुति, सातो लोक, इन्द्र की तरह, करते हैं। नदियोंने युद्धमें युध्यामधि नामके शत्रुका विनाश किया था।

२५ नेता मरुतो, यह सुदास राजाके पिता (पिजवन) हैं । दिवोदास अथवा पिजवनकी तरह सुदासकी भी सेवा करो। सुदास (दिवोदास-पुत्र) के घरकी रक्षा करो। सुदासका बल अविनाशी और अशिथिल रहे ।

---

१ जो इन्द्र तीखी सींगँवाले बैलकी तरह भयंकर होकर अकेले ही सारे शत्रुओंको स्थान-च्युत करते हैं और जो हव्य-शून्य लोगोंके घरको ले लेते हैं, वही इन्द्र अतीव सोमाभिष-कर्त्ताको धन दान करें।

२ इन्द्र, जिस समय तुमने अर्जुनीके पुत्र कुत्सको धन देकर दास, शुष्ण और कुयवको वशीभूत किया था, उस समय शरीरसे शुश्रूषमाण होकर युद्धमें कुत्सकी रक्षा की थी।

३ हे धर्षक इन्द्र, हव्यदाता सुदासको वज्रके द्वारा. सारी रक्षाओंके साथ बचाओ। भूमिलाभके लिये युद्धमें पुरुकुत्सके पुत्र त्रसदस्यु और पुरुकी रक्षा करो।

त्वं नृभिर्नृमणो देववीतौ भूरीणि वृत्रा हर्यश्व हंसि ।
त्वं नि दस्युं चुमुरिं धुनिं चास्वापयो दभीतये सुहन्तु ॥४॥
तव च्यौत्नानि वज्रहस्त तानि नव यत्पुरो नवतिं च सद्यः ।
निवेशने शततमाविवेषीरहञ्च वृत्रं नमुचिमुताहन् ॥५।
सना ता त इन्द्र भोजनानि रातहव्याय दाशुषे सुदासे ।
वृष्णे ते हरी वृषणा युनज्मि व्यन्तु ब्रह्माणि पुरुशाक वाजम् ॥६॥
मा ते अस्यां सहसावन् परिष्टावघाय भूम हरिवः परादै ।
त्रायस्व नोऽवृकेभिर्वरूथैस्तव प्रियासः सूरिषु स्याम ॥७॥
प्रियास इत्ते मघवन्नभिष्टौ नरो मदेम शरणे सखायः ।
नि तुर्वशं नि याद्वं शिशीह्यतिथिग्वाय शंस्यं करिष्यन् ॥८॥
सद्यश्चिन्नु ते मघवन्नभिष्टौ नरः शंसन्त्युक्थशास उक्था ।
ये ते हवेभिर्वि पणीँरदाशन्नस्मान्वृणीष्व युज्याय तस्मै ॥९॥

---

४ नेताओंकी स्तुतिके योग्य इन्द्र, मरुतोंके साथ युद्धमें तुमने अनेक वृत्रों (शत्रुओं) को मारा था । हरि अश्वसे युक्त इन्द्र, दभीतिके लिये तुमने दस्यु, चुमुरि और धुनिका बध किया है ।

५ वज्रहस्त इन्द्र, तुममें इतना बल है कि, तुमने शम्बरासुरकी निन्यानवे नगरियोंको छिन्न-विछिन्न कर डाला था । अपने निवासके लिये सौवीँ पुरीको अधिकृत कर रखा है । वृत्र और नमुचिका बध किया है ।

६ इन्द्र, हव्यदाता यजमान सुदासके लिये तुम्हारी सम्पत्तियाँ सनातन हुईं बहुकर्मा इन्द्र, तुम कामवर्षी हो, तुम्हारे लिये मैं दो अभिलाषादाता अश्वोंको रथमें जोतता हूँ । तुम बलिष्ठ हो । तुम्हारे पास स्तोत्र जायँ ।

७ बल और अश्ववाले इन्द्र, तुम्हारे इस यज्ञमें हम वरदान और पापके भागी न बनें । हमें बाधा-शून्य रक्षासे बचाओ, ताकि हम स्तोताओंमें प्रिय हों ।

८ धनपति इन्द्र, तुम्हारे यज्ञमें हम स्तोतृ-नेता, सखा और प्रिय होकर घरमें प्रसन्न हों । अतिथि-वत्सल सुदासको सुख देते हुए तुर्वश और याद्व (यदुवशी) को वशाभूत करो ।

९ धनवान् इन्द्र, तुम्हारे यज्ञके हमीं नेता और उक्थका (मन्त्रोंका) उच्चारण करनेवाले हैं । आज उक्थोंका उच्चारण करते हैं और तुम्हारे हव्यके द्वारा पणियों (अदाता वणिकों) को भी धन देते हैं । हमें सख्य रूपसे स्वीकार करो ।

एते स्तोमा नरां नृतम तुभ्यमस्मद्र्यञ्चो ददतो मघानि ।
तेषामिन्द्र वृत्रहत्ये शिवो भूः सखा च शूरोऽविता च नृणाम् ॥१०॥
नू इन्द्र शूर स्तवमान ऊती ब्रह्मजूतस्तन्वा वावृधस्व ।
उप नो वाजान्मिमीह्युप स्तीन् यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥११॥

१० नेतृ-श्रेष्ठ इन्द्र, नेताओंकी स्तुतियोंने तुम्हें पूजनीय हव्य दान करके हमारी ओर दिया है। युद्धमें इन्हीं नेताओंका तुम कल्याण करो और इनके सखा, शूर तथा रक्षक ह

११ वीर इन्द्र, आज तुम स्तूयमान और स्तोत्रवाले होकर शरीरसे वर्द्धित होओ। अन्न और घर दो। तुम सदा स्वस्ति द्वारा हमारी रक्षा करो।

द्वितीय अध्याय समाप्त



तृतीय अध्याय

२० सूक्त

इन्द्र देवता। वसिष्ठ ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

उग्रो यज्ञे वीर्याय स्वधावाञ्चक्रिरपो नर्यो यत्करिष्यन्।
जग्मुर्यु वा नृषदनमवोभिस्त्राता न इन्द्र एनसो महश्चित् ॥१॥
हन्ता वृत्रमिन्द्रः शूशुवानः प्रावीन्नु वीरो जरितारमूती।
कर्ता सुदासे अह वा उ लोकं दाता वसु मुहुरा दाशुषे भूत् ॥२॥
युध्मो अनर्वा खजकृत्समद्वा शूरः सत्राषाड् जनुषेमषाड्हः।
व्यास इन्द्रः पृतनाः स्वोजा अधा विश्वं शत्रूयन्तं जघान ॥३॥
उभे चिदिन्द्र रोदसी महित्वा पप्राथ तविषीभिस्तुविष्मः।
नि वज्रमिन्द्रो हरिवान्मिमिक्षन्त्समन्धसा मदेषु वा उवोच ॥४॥

१ बली और ओजस्वी इन्द्र वीर्य (प्रकाश) के लिये उत्पन्न हुए हैं। मनुष्यके जिस हितकारी कार्यको करनेकी इच्छा इन्द्र करते हैं, उसे अवश्य ही करते हैं। तरुण और रक्षाके लिये यज्ञ-गृहको जानेवाले इन्द्र महापापसे हमें बचावें।

२ वर्द्धमान होकर इन्द्र वृत्रका बध करते हैं। वह वीर हैं। वह शीघ्र ही शरण देकर स्तोताकी रक्षा करते हैं। उन्होंने सुदास राजाके लिये प्रदेशका निर्माण किया है। वह यजमानको लक्ष्य कर बार-बार धन देते हैं।

३ इन्द्र योद्धा, निष्पक्ष, युद्धकर्त्ता, कलह-तत्पर, शूर और स्वभावतः बहुतोंका अभिभव करनेवाले हैं। वह शत्रुओंके लिये अजेय और उत्तम बलवाले हैं। इन्द्रने ही शत्रु-सेनाको बाधा दी है। जो लोग शत्रुता करते हैं, उनका बध इन्द्र ही करते हैं।

४ बहुधनशाली इन्द्र, तुमने अपने बल और महिमासे द्यावापृथिवी, दोनोंको परिपूर्ण किया किया है। अश्ववाले इन्द्र शत्रुओंके ऊपर वज्र फेंकते हुए यज्ञमें सोमरस द्वारा सेवित होते हैं।

वृषा जजान वृषणं रणाय तमु चिन्नारी नर्यं ससूव ।
प्र यः सेनानीरध नृभ्यो अस्तीनः सत्वा गवेषणः स धृष्णुः ॥५॥
नू चित् स भ्रेषते जनो न रेषन्मनो यो अस्य घोरमाविवासात् ।
यज्ञैर्य इन्द्रे दधते दुवांसि क्षयत् स राय ऋतपा ऋतेजाः ॥६॥
यदिन्द्र पूर्वो अपराय शिक्षन्नयज्ज्यायान् कनीयसो देष्णम् ।
अमृत इत्पर्यासीत दूरमा चित्र चित्र्यं भरा रयिं नः ॥७॥
यस्त इन्द्र प्रियो जनो ददाशदसन्निरेके अद्रिवः सखा ते ।
वयं ते अस्यां सुमतौ चनिष्ठाः स्याम वरूथे अघ्नतो नृपीतौ ॥८॥
एषः स्तोमो अचिक्रदद्वृषा त उत स्तामुर्मघवन्नक्रपिष्ट ।
रायस्कामो जरितारं त आगन् त्वमंग शक्रवस्व आ शको नः ॥९॥

---

५ युद्धके लिये पिता (कश्यप)ने कामवर्षी इन्द्रको उत्पन्न किया है। नारीने मनुष्य-हि उन इन्द्रको उत्पन्न किया हैं । इन्द्र मनुष्योंके सेनापति होकर स्वामी बनते हैं । इन्द्र शत्रुहन्ता, गौओंके अन्वेषक और शत्रुओंके पराभवकारी हैं ।

६ जो व्यक्ति इन्द्रके शत्रु-विनाशी मनकी सेवा करता है, वह कभी भी स्थान-भ्रष्ट नहीं होता, क्षीण नहीं होता। जो जन इन्द्रकी स्तुति करता है, यज्ञोत्पन्न और यज्ञ-रक्षक इन्द्र उसे धन दें।

७ विचित्र इन्द्र, पूर्ववर्ती पिता या ज्येष्ठ भ्राता परवर्तीको जो दान करता है और जो धन कनि ज्येष्ठ प्राप्त करता है तथा जो धन पितासे, अमृतकी तरह, पुत्र प्राप्त कर, दूर देश जाता है, इन तरहके धनोंको हमारे लिये ले आओ।

८ वज्रधर इन्द्र, तुम्हें जो प्रिय सखा हव्य देता है, वह तुम्हारे दानमें ही अवस्थित रहे। हम, सक होकर, तुम्हारी दया प्राप्त करते हुए, सबसे अधिक अन्नवान् होकर मनुष्योंके रक्षणशील रह सकें।

९ धनशाली इन्द्र, तुम्हारे लिये बरस कर यह सोम रो रहा है। स्तोता तुम्हारी स्तुति करता शक्र, मैं तुम्हारा स्तोता हूँ। हमें धनकी अभिलाषा हुई है। इसलिये तुम शीघ्र हमलोगोंको योग्य धन दो।

स न इन्द्र त्वयताया इषे धास्त्मना च ये मघवानो जुनन्ति ।
वस्वी षु ते जरित्रे अस्तु शक्तिर्यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥१०॥



२१ सूक्त

इन्द्र देवता । वसिष्ठ ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

असावि देवं गो ऋजीकमन्धो न्यस्मिन्निन्द्रो जनुषेमुवोच ।
बोधामसि त्वा हर्यश्व यज्ञैर्बोधा नः स्तोममन्धसो मदेषु ॥१॥
प्र यन्ति यज्ञं विपयन्ति बर्हिः सोममादो विदथे दुध्रवाचः ।
न्यु भ्रियन्ते यशसो गृभादा दूर उपब्दो वृषणो नृषाचः ॥२॥
त्वमिन्द्र स्रवितवा अपस्कः परिष्ठिता अहिना शूर पूर्वीः ।
त्वद्वावक्रे रथ्यो न धेना रेजन्ते विश्वा कृत्रिमाणि भीषा ॥३॥
भीमो विवेषायुधेभिरेषामपांसि विश्वा नर्याणि विद्वान् ।
इन्द्रः पुरो जर्हृषाणो वि दूधोद्वि वज्रहस्तो महिना जघान ॥४॥

---

१० इन्द्र, अपने दिये हुए अन्नको भोगनेके लिये हमें धारण करो । जो हव्यदाता स्वयमेव हव्य प्रदान करते हैं, उन्हें धारण करो । अतीव प्रशंसा-योग्य स्तुति-कार्यमें हमारी शक्ति हो । मैं तुम्हारा स्तोता हूँ । तुम हमें सदा स्वस्ति द्वारा पालन करो ।



१ दीप्त और गव्य-मिश्रित सोम अभिषुत हुआ है । यह इन्द्र स्वभावतः इसमें सङ्गत होते हैं । हर्यश्व, तुम्हें हम यज्ञके द्वारा प्रबोधित करेंगे । सोमजात मत्तताके समय हमारे स्तोत्रको समझो ।

२ यजमान यज्ञमें जाते और कुश फैलाते हैं । यज्ञ-स्थानमें पत्थर दुर्द्धर्ष शब्द करते हैं । अन्नवान्, दूरतक शब्द करनेवाले, ऋत्विकोंद्वारा संगत तथा वर्षक प्रस्तर गृहसे गृहीत होते हैं ।

३ हे शूर इन्द्र, तुमने वृत्र द्वारा आक्रान्त बहुत जल भेजा था । तुम्हारे ही कारण नदियाँ, रथियोंकी तरह, निकलती हैं । तुमसे डरके मारे सारा विश्व काँपता है ।

४ इन्द्रने मनुष्योंके सारे हितकर कार्योंको जानकर तथा आयुधोंसे भयङ्कर होकर असुरोंको व्याप्त किया था और उनके सारे नगरोंको कम्पित किया था । उन्होंने प्रसन्न, महिमान्वित और वज्रहस्त होकर उनका बध किया था ।

न यातव इन्द्र जूजुवुर्नो न वन्दना शविष्ठ वेद्याभिः ।
स शर्धदर्यो विषुणस्य जन्तोर्मा शिश्नदेवा अपि गुर्ऋतं नः ॥५॥
अभि क्रत्वेन्द्र भूरध ज्मन्न ते विव्यङ्महिमानं रजांसि ।
स्वेना हि वृत्रं शवसा जघन्थ न शत्रुरन्तं विविदद्युधा ते ॥६॥
देवाश्चित्ते असुर्याय पूर्वेऽनु क्षत्राय ममिरे सहांसि ।
इन्द्रो मघानि दयते विषह्येन्द्रं वाजस्य जोहुवन्त सातौ ॥७॥
कीरिश्चिद्धि त्वामवसे जुहावेशानमिन्द्र सौभगस्य भूरेः ।
अवो बभूथ शतमूते अस्मे अभिक्षत्तुस्त्वावतो वरूता ॥८॥
सखायस्त इन्द्र विश्वह स्याम नमोवृधासो महिना तरुत्र ।
वन्वन्तु स्मा तेऽवसा समीके भीतिमर्यो वनुषां शवांसि ॥९॥
स न इन्द्र त्वयताया इषे धास्त्मना च ये मघवानो जुनन्ति ।
वस्वी षु ते जरित्रे अस्तु शक्तिर्यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥११॥

---

५ इन्द्र, राक्षस हमें न मारें। बलि-श्रेष्ठ इन्द्र, प्रजासे हमें राक्षस अलग न करें। स्वामी इ… विषम जन्तुको मारनेमें उत्साहान्वित होते हैं। शिश्नदेव (अब्रह्मचारी) हमारे यज्ञमें वि… न डालें।

६ इन्द्र, कर्म द्वारा पृथिवीके सारे जीवोंको अभिभूत करते हो। संसार तुम्हारी महिमाको व्या… नहीं कर सकता। तुमने अपने बाहु-बलसे वृत्रका बध किया है। युद्धसे शत्रु तुम्हारा पार नहीं पा सके…

७ इन्द्र, प्राचीन देवगणने भी बल और शत्रु-बधमें इन्द्रके बलसे अपने बलको कम समझा था… शत्रुओंको पराजित करके इन्द्र भक्तोंको धन देते हैं। अन्न-प्राप्तिके लिये स्तोता इन्द्रको बुलाते हैं।

८ इन्द्र, तुम ईशान वा ईश्वर हो। रक्षाके लिये स्तोता तुम्हें बुलाते हैं। बहुत्राता इन्द्र, तुम हमा… यथेष्ट धनके रक्षक हुए थे। तुम्हारे समान हमारा जो हिंसक हो, उसका निवारण करो।

९ इन्द्र, स्तुति द्वारा हम तुम्हें वर्द्धित करते हुए सदा तुम्हारे सखा हों। अपनी महिमाके द्वारा तु… सबके तारक हो। तुम्हारे रक्षणसे, आर्य स्तोता, संग्राममें आये हुए अनार्योंके बलकी हिंसा करें।

१० इन्द्र, तुम हमें धारण करो, ताकि हम तुम्हारे दिये अन्नका भोग कर सकें। जो हव्यदा… स्वयं हव्य प्रदान करते हैं, उन्हें भी धारण करो। मैं तुम्हारा स्तोता हूँ। अतीव प्रशंसा-योग्य स्तुति… कर्ममें मेरी शक्ति हो। तुम हमें सदा स्वस्ति द्वारा पालन करो।

२२ सूक्त

इन्द्र देवता। वसिष्ठ ऋषि। विराट् और त्रिष्टुप् छन्द।

पिबा सोममिन्द्र मन्दतु त्वा यं ते सुषाव हर्यश्वाद्रिः।
सोतुर्बाहुभ्यां सुयतो नार्वा ॥१॥
यस्ते मदोयुज्यश्चारुरस्ति येन वृत्राणि हर्यश्व हंसि।
स त्वामिन्द्र प्रभूव सो ममत्तु ॥२॥
बोधा सु मे मघवन्वाचमेमां यां ते वसिष्ठो अर्चति प्रशस्तिम्।
इमा ब्रह्म सधमादे जुषस्व ॥३॥
श्रुधि हवं विपिपानस्याद्रेर्बोधा विप्रस्यार्चतो मनीषाम्।
कृष्व दुवांस्यन्तमा सचेमा ॥४॥
न ते गिरो अपि मृष्ये तुरस्य न सुष्टुतिमसुर्यस्य विद्वान्।
सदा ते नाम स्वयशो विवक्मि ॥५॥
भूरि हि ते सवना मानुषेषु भूरि मनीषी हवते त्वामित्।
मारे अस्मन्मघवञ्ज्योक्कः ॥६॥

१ इन्द्र, सोम पान करो। वह सोम तुम्हें मत्त करे। हरि नामक अश्ववाले इन्द्र, रस्सी द्वारा संयत अश्वकी तरह अभिषवकर्त्ताके दोनों हाथोंमें परिगृहीत पत्थरने इस सोमका अभिषव किया है।

२ हरि नामके अश्ववाले और प्रभूत-धनी इन्द्र, तुम्हारा जो उपयुक्त और सम्यक् प्रस्तुत सोम हैं और जिसके द्वारा तुमने वृत्र आदिका बध किया है, वही सोम तुम्हें मत्त करे।

३ इन्द्र, तुम्हारी स्तुति-स्वरूपिणी जो बात वसिष्ठ कहते हैं, उन वसिष्ठकी (मेरी) इस बातको तुम जानो और यज्ञमें इन स्तुतियोंकी सेवा करो।

४ इन्द्र, मैंने सोम पान किया है। तुम मेरे इस पत्थरकी पुकार सुनो। स्तोता विप्रकी स्तुति जानो। यह जो मैं सेवा करता हूँ, वह सब, सहायक होकर, बुद्धिस्थ करो।

५ इन्द्र, तुम रिपुञ्जय हो। मैं तुम्हारा बल जानता हूँ। मैं तुम्हारी स्तुति करना नहीं छोड़ सकता। मैं सदा तुम्हारे यशस्वी नामका उच्चारण करूँगा।

६ इन्द्र, मनुष्योंमें तुम्हारे अनेक सवन हैं। मनीषी स्तोता तुम्हारा ही अत्यन्त आह्वान करता है। अपनेको हमसे दूर नहीं रखना।

तुभ्येदिमा सवना शूर विश्वा तुभ्यं ब्रह्माणि वर्धना कृणोमि ।
त्वं नृभिर्हव्यो विश्वधासि ॥७॥
नू चिन्नु ते मन्यमानस्य दस्मोदश्नुवन्ति महिमानमुग्र ।
न वीर्यमिन्द्र ते न राधः ॥८॥
ये च पूर्व ऋषयो ये च नूत्ना इन्द्र ब्रह्माणि जनयन्त विप्राः ।
अस्मे ते सन्तु सख्या शिवानि यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥९॥



२३ सूक्त

इन्द्र देवता। वसिष्ठ ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द ।

उदु ब्रह्माण्यैरत श्रवस्येन्द्रं समर्ये महया वसिष्ठ ।
आ यो विश्वानि शवसा ततानोपश्रोता म ईवतो वचांसि ॥१॥
अयामि घोष इन्द्र देवजा मिरिरज्यन्त यच्छुरुधो विवाचि ।
नहि स्वमायुश्चिकिते जनेषु तानीदंहांस्यति पर्ष्यस्मान् ॥२॥

---

७ शूर इन्द्र, तुम्हारे ही लिये यह सब सवन हैं; तुम्हारे ही लिये यह वर्द्धक स्तोत्र करता हूँ। सब तरहसे मनुष्योंके आह्वानके योग्य हो।

८ दर्शनीय इन्द्र, स्तुति करनेपर तुम्हारी महिमाको कौन नहीं तुरत प्राप्त करेगा? कौन तुम्हारा धन प्राप्त करेगा?

९ जितने प्राचीन ऋषि हो गये हैं और जितने नवीन हैं, सभी तुम्हारे लिये स्तोत्र उत्पन्न क हैं। हमारे लिये तुम्हारा सख्य मङ्गलमय हो। तुम हमें सदा स्वस्ति द्वारा पालन करो।



१ अन्नकी इच्छासे सारे स्तोत्र कहे गये हैं। वसिष्ठ, तुम भी यज्ञमें इन्द्रकी स्तुति क बल द्वारा उन्होंने सारे लोकोंको व्याप्त किया था। मैं उनके पास जानेकी इच्छा करता हूँ। वह स्तुतिवचनका श्रवण करें।

२ जिस समय औषधियाँ बढ़ती हैं, उस समय देवोंके लिये प्रिय शब्द कहे जाते मनुष्योंमें कोई भी तुम्हारी आयु नहीं जान सकता। हमें सारे पापोंके पार ले जाओ।

युजे रथं गवेषणं हरिभ्यामुप ब्रह्माणि जुजुषाणमस्थुः ।
वि बाधिष्ट स्य रोदसी महित्वेन्द्रो वृत्राण्यप्रती जघन्वान् ॥३॥
आपश्चित् पिप्युः स्तर्यो न गावो नक्षन्नृतं जरितारस्त इन्द्र ।
याहि वायुर्न नियुतो नो अच्छा त्वं हि धीभिर्दयसे वि वाजान् ॥४॥
ते त्वा मदा इन्द्र मादयन्तु शुष्मिणं तुविराधसं जरित्रे ।
एको देवत्रा दयसे हि मर्तानस्मिञ्छूर सवने मादयस्व ॥५॥
एवेदिन्द्रं वृषणं वज्रबाहुं वसिष्ठासो अभ्यर्चन्त्यर्कैः ।
स नः स्तुतो वीरवद्धातु गोमद्यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥६॥

२४ सूक्त

इन्द्र देवता । वसिष्ठ ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

योनिष्ट इन्द्र सदने अकारि तमा नृभिः पुरुहूत प्रयाहि ।
असो यथा नोऽविता वृधे च ददो वसूनि ममदश्च सोमैः ॥१॥

---

३ मैं हरि नामके दोनों अश्वोंके द्वारा इन्द्रके गोप्रापक रथको जोतता हूँ। इन्द्र स्तोत्रोंकी सेवा करते हैं। सबलोग उनकी उपासना करते हैं। उन्होंने अपनी महिमासे द्यावापृथिवीको बाधित किया है। इन्द्रने शत्रुओंके दलोंका नाश किया है।

४ इन्द्र, अप्रसूता गायकी तरह जल बढ़े। तुम्हारे स्तोता जल व्याप्त करें। जैसे वायु नियुत (अश्व) के पास आता है, वैसे ही तुम मेरे निकट आओ। कर्म द्वारा तुम अन्न प्रदान करो।

५ इन्द्र, मदकारी सोम तुम्हें मत्त करें। स्तोताको बलवान् और बहुधनवान् पुत्र दान करो। शूर, देवोंमें तुम्हें अकेले मनुष्योंके प्रति अनुकम्पा प्रदर्शित करते हो। इस यज्ञमें प्रमत्त होओ।

६ वसिष्ठ लोग इसी प्रकार अर्चनीय स्तोत्र द्वारा वज्रबाहु अभीष्टवर्षी इन्द्रकी पूजा करते हैं। स्तुत होकर वह हमें वीर और गौसे युक्त धन दें। तुम हमें सदा स्वस्ति द्वारा पालन करो।

१ तुम्हारे गृहके लिये स्थान किया गया है। पुरुहुत इन्द्र, मरुतोंके साथ वहाँ आओ। जैसे तुम हमारे रक्षक हुए हो, जैसे तुम हमारी वृद्धिके लिये हुए हो, वैसे ही धन दो। हमारे सोमके द्वारा मत्त होओ।

गृभीतं ते मन इन्द्र द्विबर्हाः सुतः सोमः परिषिक्ता मधूनि ।
विसृष्टधेना भरते सुवृक्तिरियमिन्द्रं जोहुवती मनीषा ॥२॥
आ नो दिव आ पृथिव्या ऋजीषिन्निदं बर्हिः सोमपेयाय याहि ।
वहन्तु त्वा हरयो मद्र्यञ्चमाङ्गूषमच्छा तवसं मदाय ॥३॥
आ नो विश्वाभिरूतिभिः सजोषा ब्रह्म जुषाणो हर्यश्व याहि ।
वरीवृजत् स्थविरेभिः सुशिप्रास्मेदधद्वृषणं शुष्ममिन्द्र ॥४॥
एषः स्तोमो मह उग्राय वाहे धुरी वात्यो न वाजयन्नधायि ।
इन्द्र त्वायमर्क ईट्टे वसूनां दिवीव द्यामधि नः श्रोमतन्धाः ॥५॥
एवा न इन्द्र वार्यस्य पूर्धि प्र ते महीं सुमतिं वेविदाम ।
इषं पिन्व मघवद्भ्यः सुवीरां यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥६॥



२ इन्द्र तुम दोनों स्थानोंमें पूज्य हो। हमने तुम्हारे मनको ग्रहण किया है। सोमका हमने अभि[षव] किया है । हमने मधुको पात्रमें परिषिक्त किया है। मध्यम स्वरमें कही जानेवाली यह सुस[म्पन्न] स्तुति बार-बार इन्द्रकी आह्वान करके उच्चारित होती है।

३ इन्द्र, तुम हमारे इस यज्ञमें सोमपानके लिये स्वर्ग और अन्तरीक्षसे आओ; और, आनन्दके [लिये] हमारे पास, अश्वगण स्त्रोत्रकी ओर ले जायँ ।

४ हरि अश्व और शोभन हनुवाले इन्द्र, तुम सब प्रकारकी रक्षाओंके साथ वृद्ध मरुतोंके [साथ] शत्रुओंको मारते हुए हमें अभीष्टवर्षी तथा बलवान् पुत्र देते हुए एवम् स्तोत्र-सेवा करते [हुए] हमारी ओर आओ ।

५ रथके घोड़की तरह यह बलकर्त्ता मन्त्र महान् और ओजस्वी इन्द्रको लक्ष्य कर स्थापित [हुआ] है। इन्द्र, स्तोता तुमसे धन माँगता है। तुम हमें आकाशके स्वर्गकी तरह श्रीमान् पुत्र प्रदान करो।

६ इन्द्र, इस प्रकार तुम हमें वरणीय धनसे परिपूर्ण करो। हम तुम्हारा महान् अनुग्रह प्राप्त करें। हम हव्यवाले हैं। हमें वीर पुत्रवाला अन्न दो। तुम हमें सदा स्वस्ति द्वारा पालन करो ।



२५ सूक्त

इन्द्र देवता। वसिष्ठ ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

आ ते मह इन्द्रोत्युग्र समन्यवो यत्समरन्त सेनाः।
पताति दिद्युन्नर्यस्य बाह्वोर्मा ते मनो विष्वद्र्यग्वि चारीत् ॥१॥
नि दुर्ग इन्द्र श्नथिह्यमित्रानभि ये नो मर्तासो अमन्ति।
आरे तं शंसं कृणुहि निनित्सोरा नो भर सम्भरणं वसूनाम् ॥२॥
शतं ते शिप्रिन्नूतनयः सुदासे सहस्रं शंसा उत रातिरस्तु।
जहि वधर्वनुषो मर्त्यस्यास्मे द्युम्नमधि रत्नं च धेहि ॥३॥
त्वावतो हीन्द्र क्रत्वे अस्मि त्वावतोऽवितुः शूर रातौ।
विश्वेदहानि तविषीव उग्रँ ओकः कृणुष्व हरिवो न मर्धीः ॥४॥
कुत्सा एते हर्यश्वाय शूषमिन्द्रे सहो देवजूतमियानाः।
सत्रा कृधि सुहना शूर वृत्रा वयं तरुत्राः सनुयाम वाजम् ॥५॥

१ ओजस्वी इन्द्र, तुम महान् और मनुष्य-हितैषी हो। तुम्हारी सेनाएँ समान हैं—ऐसा अभिमान कर जब युद्ध किया जाता है, तब तुम्हारा हस्त-स्थित वज्र हमारे त्राणके लिये पतित हो। तुम्हारा सर्वतोगामी मन विचलित न हो।

२ इन्द्र, युद्धमें जो मनुष्य हमारे सामने आकर हमारा अभिभव करते हैं, वही शत्रुओंका विनाश करते हैं। जो हमारी निन्दा करनेकी इच्छा करते हैं, उनकी कथा दूर कर दो। हमारे लिये सम्पत्तियाँ लाओ।

३ उष्णीष (चादर) वाले इन्द्र, मुझ सुदासके लिये तुम्हारी सैकड़ो रक्षाएँ हों। तुम्हारी सैकड़ो अभिलाषाएँ और धन मेरे हों। हिंसकके हिंसा-साधन हथियारोंको विनष्ट करो। हमारे लिये दीप्त यश और रत्न दो।

४ इन्द्र, मैं तुम्हारे समान व्यक्तिके कर्ममें नियुक्त हूँ। तुम्हारे समान रक्षक व्यक्तिके दानमें नियुक्त हूँ। बलवान् और ओजस्वी इन्द्र, सारे दिन हमारे लिये स्थान बनाओ। हरिवाले इन्द्र, हमारी हिंसा नहीं करना।

एवा न इन्द्रवार्यस्य पूर्धि प्रों ते मह सुमतिं वेविदाम ।
इषं पिन्व मघवद्भ्यः सुवीरां यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥६॥



२६ सूक्त

इन्द्र देवता। वसिष्ठ ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

न सोम इन्द्रमसुतो ममाद नाब्रह्माणो मघवानं सुतासः ।
तस्मा उक्थं जनये यज्जुजोषन्नृवन्नवीयः शृणवद्यथा नः ॥१॥
उक्थउक्थे सोम इन्द्रं ममाद नीथे मघवानं सुतासः ।
यदीं सबाधः पितरं न पुत्राः समानदक्षा अवसे हवन्ते ॥२॥
चकार ता कृणवन्नूनमन्या यानि ब्रुवन्ति वेधसः सुतेषु ।
जनीरिव पतिरेकः समानो नि मामृजे पुर इन्द्रः सु सर्वाः ॥३॥

---

६ हम हर्यश्व इन्द्रके लिये सुखकर स्तोत्र कहते हुए और इन्द्रसे देव-प्रेरित बलकी या करते हुए, सारे दुर्गोंको लाँघ कर, बल प्राप्त करेंगे। हम हविवाले हैं। हमें वीर पुत्रवाला दो। तुम हमें सदा स्वस्ति (कल्याण) द्वारा पालन करो।



१ जो सोम धनाधिपति इन्द्रके लिये अभिषुत नहीं हैं, उससे तृप्ति नहीं होती। अभि होनेपर भी स्तोत्र-हीन सोम तृप्तिकर नहीं होता। हमलोगोंका जो उक्थ इन्द्रकी सेवा है और राजा जिसे श्रवण करता है, उसी नवीन उक्थका पाठ, इन्द्रके लिये, मैं करता हूँ।

२ प्रत्येक उक्थ-स्तुति-पाठ-कालमें सोम धनवान् इन्द्रको तृप्त करता है। प्रत्येक स पाठ-कालमें अभिषुत सोम इन्द्रको तृप्त करता है। जैसे पुत्र पिताको बुलाता है, वैसे ही, लिये, परस्पर मिलित और समान उत्साहवाले ऋत्विक् लोग इन्द्रको बुलाते हैं।

३ सोमके अभिषुत होनेपर स्तोता लोग जिन सब कर्मोंकी बातें कहते हैं, उस सारे कर्मों प्राचीन कालमें, इन्द्रने किया था। इस समय अन्य कर्म भी करते हैं। जैसे पति पत्नीका परिम करता है, वैसे ही समवृत्ति और सहायक-शून्य इन्द्रने शत्रु-नगरियोंका परिमार्जन (संशोधन) किया।

एवा तमाहुरुत शृण्व इन्द्र एको विभक्ता तरणिर्मघानाम् ।
मिथस्तुर ऊतयो यस्य पूर्वीरस्मे भद्राणि सश्चत प्रियाणि ॥४॥
एवा वसिष्ठ इन्द्रमूतये नॄन् कृष्टीनां वृषभं सुते गृणाति ।
सहस्रिण उप नो माहि वाजान् यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥५॥

२७ सूक्त

इन्द्र देवता। वसिष्ठ ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

इन्द्रं नरो नेमधिता हवन्ते यत्पार्या युनजते धियस्ताः ।
शूरो नृषाता शवसश्चकान आ गोमति व्रजे भजा त्वं नः ॥१॥
य इन्द्र शुष्मो मघवन्ते अस्ति शिक्षा सखिभ्यः पुरुहूत नृभ्यः ।
त्वं हि दृळ्हा मघवन्विचेता अपा वृधि परिवृतं न राधः ॥२॥
इन्द्रो राजा जगतश्चर्षणीनामधि क्षमि विषुरूपं यदस्ति ।
ततो ददाति दाशुषे वसूनि चोदद्राध उपस्तुतश्चिदर्वाक् ॥३॥

---

४ परस्परमिली इन्द्रकी अनेक रक्षाएँ हैं—ऋत्विकोंने इन्द्रके बारेमें ऐसा कहा है । यह भी सुना जाता है कि, इन्द्र पूजनीय धनको देनेवाले और आपद्से उद्धार करनेवाले हैं। उनकी कृपासे हमें प्रीतिप्रद कल्याण आश्रित करें।

५ रक्षाके लिये और प्रजाके अभीष्ट-वर्षणके लिये सोमाभिषवमें वसिष्ठ इन्द्रकी ऐसी स्तुति करते हैं। इन्द्र, हमें नाना प्रकारके अन्न दो। तुम हमें सदा स्वस्ति द्वारा पालन करो।

१ जिस समय युद्धकी तैयारीके कार्य किये जाते हैं, उस समय लोग युद्धमें इन्द्रको बुलाते हैं। इन्द्र, तुम मनुष्योंके लिये धनदाता और बलाभिलाषी होकर हमें गो-पूर्ण गोष्ठमें ले जाओ।

२ पुरुहूत इन्द्र, तुम्हारे पास जो बल है, उसे स्ताताओंको दो। इन्द्र, तुमने सुदृढ़ पुरियोंको छिन्न-भिन्न किया है; इसलिये, प्रज्ञाका प्रकाश करते हुए, छिपाये धनको प्रकट कर दो।

३ इन्द्र जङ्गम जगत् और मनुष्योंके राजा हैं। पृथिवीमें तरह-तरहके जो धन हैं, उनके भी राजा इन्द्र ही हैं। इन्द्र हव्यदाताको धन देते हैं। वही इन्द्र हमारे द्वारा स्तुत होकर हमारे सामने धन भेजें।

नू चिन्न इन्द्रो मघवा सहूती दानो वाजन्नियमते नऊती ।
अनूना यस्य दक्षिणा पीपाय वामं नृभ्यो अभिवीता सखिभ्यः ॥४॥
नू इन्द्र राये वरिवस्कृधी न आ ते मनो ववृत्याम मघाय ।
गोमदश्वावद्रथवद्व्यन्तो यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥५॥



२८ सूक्त

इन्द्र देवता। वसिष्ठ ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

ब्रह्माण इन्द्रोप याहि विद्वानर्वाञ्चस्ते हरयः सन्तु युक्ताः ।
विश्वे चिद्धि त्वा विहवन्त मर्ता अस्माकमिच्छृणुहि विश्वमिन्व ॥१॥
हवं त इन्द्र महिमा व्यानड्ब्रह्म यत्पासि शवसिन्नृषीणाम् ।
आ यद्वज्रं दधिषे हस्त उग्र घोरः सन्क्रत्वा जनिष्ठा अषाढ्हः ॥२॥
तव प्रणीतीन्द्र जोहुवानान्त्सं यन्नॄन्न रोदसी निनेथ ।
महे क्षत्राय शवसे हि जज्ञेऽतूतुजिं चित्तूतुजिरशिश्नत् ॥३॥

---

४ धनी और दानी इन्द्रको हमने, मरुतोंके साथ, बुलाया है; इसलिये वह हमारी [...] लिये शीघ्र अन्न भेजें। यह इन्द्र ही सखाओंको जो सम्पूर्ण और सर्वव्यापी दान करते हैं, मनुष्योंके लिये मनोहर धन दूहता है।

५ इन्द्र, धन-प्राप्तिके लिये शीघ्र हमें धन दो। पूज्य स्तुति द्वारा हम तुम्हारे मनको [...] लेंगे। तुम गौ, अश्व, रथ और धनवाले हो। तुम सदा हमें स्वस्ति द्वारा पालन करो।

---

१ इन्द्र, तुम जानकर हमारे स्तोत्रकी ओर आओ। तुम्हारे घोड़े हमारे सामने जोते [...] सबके हर्षकारी इन्द्र, यद्यपि अलग-अलग सारे मनुष्य तुम्हें बुलाते हैं, तथापि तुम हमारा आह्वान सुनते हो।

२ बली इन्द्र, जिस समय तुम ऋषियोंके स्तोत्रोंकी रक्षा करते हो, उस समय तुम्हारी म[...] स्तोताको व्याप्त करे। ओजस्वी इन्द्र, जिस समय हाथमें वज्र धारण करते हो, उस समय कर्म [...] भयङ्कर होकर शत्रुओंके लिये दुर्द्धर्ष हो जाते हो।

३ इन्द्र, तुम्हारे उपदेशके अनुसार जो लोग बार-बार स्तव करते हैं, उन्हें द्युलोक और भू[...] सुप्रतिष्ठित करते हो। तुम महाबल और महाधनके लिये उत्पन्न हुए हो; इसलिये जो तुम्हारे उ[...] यज्ञ करता है, वह अयाज्ञिकोंको मारनेमें समर्थ होता है।

एभिर्न इन्द्राहभिर्दशस्य दुर्मित्रासो हि क्षितयः पवन्ते ।
प्रति यच्चष्टे अनृतमनेना अव द्विता वरुणो मायी नः सात् ॥४॥
वोचेमेदिन्द्रं मघवानमेनं महो रायो राधसो यद्दन्नः ।
यो अर्चतो ब्रह्मकृतिमविष्ठो यूयम्पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥५॥



२९ सूक्त

इन्द्र देवता । वसिष्ठ ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

अयं सोम इन्द्र तुभ्यं सुन्व आ तु प्र याहि हरिवस्तदोकाः ।
पिबा त्वस्य सुषुतस्य चारोर्ददो मघानि मघवन्नियानः ॥१॥
ब्रह्मन्वीर ब्रह्मकृतिं जुषाणोऽर्वाचीनो हरिभिर्याहि तूयम् ।
अस्मिन्नूषु सवने मादयस्वोप ब्रह्माणि शृणव इमा नः ॥२॥
का ते अस्त्यरङ्कृतिः सूक्तैः कदा नूनं ते मघवन् दाशेम ।
विश्वा मतीरा ततने त्वायाधा म इन्द्र शृणवो हवेमा ॥३॥

४ इन्द्र, दुष्ट मित्रभूत मनुष्य आते हैं । उनसे धन लेकर इन सारे दिनोंमें हमें दान करो । पाप-घातक और बुद्धिमान् वरुण हमारे सम्बन्धमें जो पाप देख पावें, उसे दो तरहसे छुड़ावें ।

५ जिन इन्द्रने हमें भली भाँति आराध्य महाधन दिया है और जो स्तोताके स्तोत्र-कार्यकी रक्षा करते हैं, उन धनी इन्द्रकी हम स्तुति करते हैं । तुम हमें सदा स्वति द्वारा पालन करो ।



१ इन्द्र, तुम्हारे लिये यह सोम अभिषुत हुआ है । हरि अश्ववाले इन्द्र, उस सोमकी सेवाके लिये तुरत आओ । भली भाँति अभिषुत चारु सोमका पान करो । इन्द्र, हम याचना करते हैं, हमें धन दो ।

२ हे ब्रह्मन् और वीर इन्द्र, स्तोत्र-कार्यका सेवन करते हुए अश्वोंपर सवार होकर शीघ्र हमारी ओर आओ । इस यज्ञमें ही भली भाँति प्रसन्न होओ । हमारे इन स्तोत्रोंको सुनो ।

३ इन्द्र, हम जो सूक्तों द्वारा तुम्हारी स्तुति करते हैं, उससे कैसी अलङ्कृति (शोभा होती है ? हम कब तुम्हारी प्रसन्नता उत्पन्न करें ? तुम्हारी अभिलाषासे ही मैं सारी स्तुति करता हूँ; इसलिये, हे इन्द्र, मेरी ये स्तुतियां सुनो ।

उतो घा ते पुरुष्या इदासन्येषां पूर्वेषामश्रृणोर्ऋषीणाम् ।
अधाहं त्वा मघवञ्जोहवीमि त्वं न इन्द्रासि प्रमतिः पितेव ॥४॥
वोचेमेदिन्द्रं मघवानमेनं महो रायो राधसो यद्ददन्नः ।
यो अर्चतो ब्रह्मकृतिमविष्ठो यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥५॥



३० सूक्त

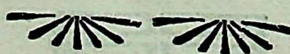
इन्द्र देवता । वसिष्ठ ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

आ नो देव शवसा याहि शुष्मिन्भवा वृध इन्द्र रायो अस्य ।
महे नृम्णाय नृपते सुवज्र महि क्षत्राय पौंस्याय शूर ॥१॥
हवन्त उ त्वा हव्यं विवाचि तनूषु शूराः सूर्यस्य सातौ ।
त्वं विश्वेषु सेन्यो जनेषु त्वं वृत्राणि रन्धया सुहन्तु ॥२॥
अहा यदिन्द्र सुदिना व्युच्छान्दधो यत् केतुमुपमं समत्सु ।
न्य ग्निः सीददसुरो न होता हुवानो अत्र सुभगाय देवान् ॥३॥

---

४ इन्द्र, तुमने जिन सब ऋषियोंकी स्तुति सुनी है, वे प्राचीन ऋषि लोग मनुष्योंके हितैषी फलतः मैं तुम्हारा बार-बार आह्वान करता हूँ । इन्द्र, पिताकी तरह तुम हमारे हितैषी हो।

५ जिन इन्द्रने हमें भली भाँति आराध्य महाधन दिया है और जो स्तोताके स्तोत्रकार्य रक्षा करते हैं, उन धनी इन्द्रकी हम स्तुति करते हैं । तुम हमें सदा स्वति द्वारा पालन करो।



१ बली और ज्योतिष्मान् इन्द्र, बलके साथ हमारे पास आओ। हमारे धनके वर्द्धक बनो। सुवज्र और नृपति इन्द्र, महाबली होओ और शत्रुमारक महापुरुषत्व प्राप्त करो ।

२ इन्द्र, तुम आह्वानके योग्य हो । महाकोलाहलके समय शरीर-रक्षाके लिये और सूर्य पानेके लिये लोग तुम्हें बुलाते हैं । सब मनुष्योंमें तुम्हीं सेनाके योग्य हो । सुहन्त नामके वज्रसे शत्रुओंको हमारे अधिकारमें करो ।

३ इन्द्र, जब दिन अच्छे होते हैं, जब तुम अपनेको युद्धके समीपवर्त्ती जानते हो, तब होता हमें उत्तम धन देनेके लिये, देवोंको बुलाते हुए, इस यज्ञमें बैठते हैं ।

वयं ते त इन्द्र ये च देव स्तवन्त शूर ददतो मघानि ।
यच्छा सूरिभ्य उपमं वरूथं स्वाभुवो जरणामश्नवन्त ॥४।
वोचेमेदिन्द्रं मघवानमेनं महो रायो राधसो यद्ददन्नः ;
यो अर्चतो ब्रह्मकृतिमविष्ठो यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥५॥



३१ सूक्त

इन्द्र देवता। वसिष्ठ ऋषि। विराट्, गायत्री और त्रिष्टुप् छन्द।

प्र व इन्द्राय मादनं हर्यश्वायगायत । सखायः सोमपावे ॥१॥
शंसेदुक्थं सुदानव उत द्युक्षं यथा नरः । चकृमा सत्यराधसे ॥२॥
त्वं न इन्द्र वाजयुस्त्वं गव्युः शतक्रतो । त्वं हिरण्ययुर्वसो ॥३॥
वयमिन्द्र त्वायवोभि प्रणोनुमो वृषन् । विद्धीत्व स्य नो वसो ॥४॥
मा नो निदे च वक्तवेऽर्यो रन्धीरराव्णे । त्वे अपि क्रतुर्मम ॥५॥

४ इन्द्र, हम तुम्हारे हैं। जो तुम्हें पूजनीय हव्य देते हुए स्तुति करते हैं, वह भी तुम्हारे ही हैं। उन्हें श्रेष्ठ गृह दो। वे सुसमृद्ध होकर बूढ़े होने पावें।

५ जिन इन्द्रने हमें भली भाँति आराध्य महाधन दिया है और जो स्तोताके स्तोत्र-कार्यकी रक्षा करते हैं, उन्हीं धनी इन्द्रकी हम स्तुति करते हैं। तुम सदा हमें स्वस्ति द्वारा पालन करो।

१ सखा लोग, तुम लोग हर्यश्व और सोमपायी इन्द्रके लिये मदकर स्तोत्र गाओ।

२ शोभन-दानी और सत्यधन इन्द्रके लिये जैसे स्तोता दीप्त स्तोत्र पाठ करता है, वैसे ही तुम भी करो; हम भी करेंगे।

३ इन्द्र, तुम हमारे लिये अन्नाभिलाषी होओ। सौ यज्ञ करने वाले इन्द्र तुम हमारे लिये गो-कामी होओ। हे वास-दाता इन्द्र, तुम हिरण्य-दाता होओ।

४ अभीष्ट-वर्षक इन्द्र, तुम्हारी इच्छा करके हम विशेष रूपसे स्तुति करते हैं। वासप्रद इन्द्र, तुम शीघ्र हमारी स्तुतिका अवधारण करो।

५ आर्य इन्द्र, जो कठोर वचन बोलता है जो निन्दा करता है और जो दान नहीं करता, उसके वशमें हमें नहीं करना। मेरा स्तोत्र तुम्हारे ही पास जाय।

त्वं वर्मासि सप्रथः पुरोयोधश्च वृत्रहन् । त्वया प्रति ब्रुवे युजा ॥६॥

महाँ उतासि यस्य तेऽनु स्वधावरी सहः । मम्नाते इन्द्र रोदसी ॥७॥

तं त्वा मरुत्वती परि भुवद्वाणी सयावरी । नक्षमाणा सह द्युभिः ॥८॥

ऊर्ध्वासस्त्वान्विन्दवो भुवन्दस्ममुप द्यवि । सन्ते नमन्त कृष्टयः ॥९॥

प्र वो महे महिवृधे भरध्वं प्रचेतसे प्र सुमतिं कृणुध्वम् ।

विशः पूर्वीः प्र चरा चर्षणिप्राः ॥१०॥

उरुव्यचसे महिने सुवृक्तिमिन्द्राय ब्रह्म जनयन्त विप्राः ।

तस्य व्रतानि न मिनन्ति धीराः ॥११॥

इन्द्रं वाणीरनुत्तमन्युमेव सत्रा राजानं दधिरे सहध्यै ।

हर्यश्वाय बर्हया समापीन् ॥१२॥



६ वृत्रघातक इन्द्र, तुम हमारे कवच हो। तुम सर्वत्र प्रसिद्ध हो। तुम सम्मुख युद्ध क वाले हो। तुम्हारी सहायतासे मैं शत्रु-बध करूँगा।

७ अन्नवाली द्यावापृथिवीको जिन इन्द्रके बलका लोहा मानना है, वह तुम इन्द्र, म हुए हो।

८ इन्द्र, तुम्हारी सहचरी, तेजोयुक्ता और स्तोतृ-सम्पन्ना स्तुति तुम्हें चारो ओरसे करे।

९ तुम स्वर्गके पास स्थित और दर्शनीय हो। हमारे सब सोम तुम्हारे उद्देशसे उद्यत सती प्रजा तुम्हें नमस्कार करती है।

१० मेरे पुरुषो, तुम महाधनके वर्द्धक हो। महान् इन्द्रके उद्देशसे सोम बनाओ। प्रकृष्ट-बुद्धि लक्ष्य कर प्रहृष्ट स्तुति करो। प्रजाओंके अभिलाषापूरक तुम उन लोगोंके अभिमुख आ करो, जो तुम्हें हव्य द्वारा पूर्ण करते हैं।

११ जो इन्द्र अतीव व्यापक और महान् हैं, उन्हें लक्ष्य कर मेधावी लोग स्तुति और का उत्पादन करते हैं। उन इन्द्रके व्रत आदि कर्मोंको धीर लोग हिंसित नहीं कर सकते।

१२ सब प्रकारसे सारे जगत्के ईश्वर और अबाधित-क्रोध इन्द्रकी सारी स्तुतियाँ शत्रुओं दबानेके लिये हैं। इसलिये हे स्तोता, इन्द्रकी स्तुतिके लिये बन्धुओंको उत्साहित करो।



३२ सूक्त

इन्द्र देवता। वसिष्ठ ऋषि। बृहती, सतोबृहती, द्विपदा विराट् छन्द।

मो षु त्वा वाघतश्चनारे अस्मन्नि रीरमन्।
आरात्ताच्चित् सधमादं न आ गहीह वा सन्नुप श्रुधि ॥१॥
इमे हि ते ब्रह्मकृतः सुते सचा मधौ न मक्ष आसते।
इन्द्रे कामं जरितारो वसूयवो रथे न पादमा दधुः ॥२॥
रायस्कामो वज्रहस्तं सुदक्षिणं पुत्रो न पितरं हुवे ॥३॥
इम इन्द्राय सुन्विरे सोमासो दध्याशिरः।
ताँ आ मदाय वज्रहस्त पीतये हरिभ्यां याह्योक आ ॥४॥
श्रवच्छ्रुत्कर्ण ईयते वसूनां नू चिन्नो मर्धिषद्गिरः।
सद्यश्चिद्यः सहस्राणि शता ददन्नकिर्दित्सन्तमा मिनत् ॥५॥
स वीरो अप्रतिष्कुत इन्द्रेण शूशुवे नृभिः।
यस्ते गभीरा सवनानि वृत्रहन्त्सुनोत्या च धावति ॥६॥

१ इन्द्र, हमसे दूर यह यजमानगण भी तुम्हारे साथ रमण न करें। तुम दूर रहनेपर भी हमारे यज्ञमें आओ। यहाँ आकर श्रवण करो।

२ जैसे मधुपर मधुमक्षिका बैठती है, वैसे ही स्तोता लोग, तुम्हारे लिये, सोमके तैयार होने-पर, बैठते हैं। जैसे रथपर पैर रखा जाता है, वैसे ही धनकामी स्तोता लोग इन्द्रपर स्तुति समर्पण करते हैं।

३ जैसे पुत्र पिताको बुलाता है, वैसे ही मैं, धनाभिलाषी होकर, सुन्दर दानवाले इन्द्रको बुलाता हूँ।

४ दही-मिले ये सोम इन्द्रके लिये प्रस्तुत हुए हैं। हे वज्रहस्त इन्द्र, आनन्दके लिये उस सोम-पानके निमित्त, अश्वके साथ, यज्ञ-मण्डपकी ओर आओ।

५ याचना सुननेके कर्णवाले इन्द्रके पास हम धनकी याचना करते हैं। वह हमारे वाक्यको सुनें, वाक्य निष्फल न करें। जो इन्द्र, याचना करते ही, तुरत सैकड़ो और सहस्रों दान करते हैं, उन दानाभिलाषी इन्द्रको कोई मना न करे।

६ वृत्रघातक इन्द्र, जो तुम्हारे लिये गभीर सोमका अभिषव करता और तुम्हारा अनुगमन करता है, वह वीर है। उसके विरुद्ध कोई कुछ नहीं बोल सकता। वह परिचारकोंके द्वारा घिरा रहता है।

भवा वरूथं मघवन्मघोनां यत्समजासि शर्धतः ।
वि त्वाहतस्य वेदनं भजेमह्या दूणाशो भरा गयम् ॥७॥
सुनोता सोमपाव्ने सोममिन्द्राय वज्रिणे ।
पचता पक्तीरवसे कृणुध्वमित् पृणन्नित् पृणते मयः ॥८॥
मा स्रेधत सोमिनो दक्षता महे कृणुध्वं राय आतुजे ।
तरणिरिज्जयति क्षेति पुष्यति न देवासः कवत्नवे ॥९॥
नकिः सुदासो रथं पर्यास न रीरमत् ।
इन्द्रो यस्याविता यस्य मरुतो गमत् स गोमति व्रजे ॥१०॥
गमद्वाजं वाजयन्निन्द्र मर्त्यो यस्य त्वमविता भुवः ।
अस्माकं बोध्यविता रथानामस्माकं शूर नृणाम् ॥११॥
उदिन्न्वस्य रिच्यतेंऽशो धनं न जिग्युषः ।
य इन्द्रो हरिवान्न दभन्ति तं रिपो दक्षं दधाति सोमिनि ॥१२॥

---

७ हे धनवान् इन्द्र, तुम हव्य दाताओंके उपद्रव-निवारक वर्म बनो। उत्साही शत्रुओंका वि करो। तुमने जिस शत्रुका विनाश किया है, उसका धन हम बाँट लें। तुम्हें कोई विनष्ट कर सकता। तुम हमारे लिये धन ले आओ।

८ मेरे पुरुषो, वज्रधर और सोमपाता इन्द्रके लिये सोमका अभिषव करो। इन्द्रकी तृ लिये पचाये जाने योग्य पुरोडाश आदि पकाओ और किये जाने योग्य कार्यका सम्पादन क यजमानको सुख देते हुए इन्द्र हव्यको पूर्ण करते हैं।

९ सोमवाले यज्ञका विनाश नहीं करना। उत्साही बनो। महान् और रिपुघातक इन्द्र लक्ष्य करके, धन-प्राप्तिके लिये, कर्म करो। क्षिप्र-कर्त्ता व्यक्ति ही विजय करता, निवास करता पुष्ट होता है। कुत्सित कर्म-कर्त्ताके देवता नहीं हैं।

१० सुन्दर दानवाले व्यक्तिका रथ कोई दूरपर नहीं फेंक सकता और उसे कोई रोक नहीं सकता। जिसके रक्षक इन्द्र और मरुद्गण हैं, वह गौओंवाले गोष्ठमें जाता है।

११ इन्द्र, तुम जिस मनुष्यके रक्षक बनोगे, वह स्तोत्र द्वारा तुम्हें बली करते हुए अन्न प्र करेगा। शूर, हमारे रथके रक्षक होओ; हमारे पुत्रादिके भी रक्षक होओ।

१२ जो हरिवाले इन्द्र सोमवाले यजमानको बल देते हैं, उसे शत्रु नहीं मार सकते। विजा व्यक्तिकी तरह इन्द्रका भाग सभी देवोंसे बढ़ा-चढ़ा है।

मन्त्रमखर्वं सुधितं सुपेशसं दधात यज्ञियेष्वा ।
पूर्वीश्चन प्रसितयस्तरन्ति तं य इन्द्रे कर्मणा भुवत् ॥१३॥
कस्तमिन्द्र त्वावसुमा मर्त्यो दधर्षति
श्रद्धा इत्ते मघवन् पार्ये दिवि वाजी वाजं सिषासति ॥१४॥
मघोनः स्म वृत्रहत्येषु चोदय ये ददति प्रिया वसु ।
तव प्रणीती हर्यश्व सूरिभिर्विश्वा तरेम दुरिता ॥१५॥
तवेदिन्द्रावमं वसु त्वं पुष्यसि मध्यमम् ।
सत्रा विश्वस्य परमस्य राजसि नकिष्ट्वा गोषु वृण्वते ॥१६॥
त्वं विश्वस्य धनदा असि श्रुतो य ईं भवन्त्याजयः ।
तवायं विश्वः पुरुहूत पार्थिवावस्युर्नाम भिक्षते ॥१७॥
यदिन्द्र यावतस्त्वमेतावदहमीशीय ।
स्तोतारमिद्दिधिषेय रदावसो न पापत्वाय रासीय ॥१८॥

---

१३ देवोंमेंसे इन्द्रको ही अनल्प, सुविहित और शोभन स्तोत्र अर्पण करो। जो व्यक्ति कर्मानुष्ठान द्वारा इन्द्रके चित्तको आकृष्ट कर सकता है, उसके पास अनेकानेक बन्धन नहीं जाते।

१४ इन्द्र, तुम जिसे व्याप्त करते हो, उसे कौन दबा सकता है? धनी इन्द्र, तुम्हारे प्रति श्रद्धा-युक्त होकर जो हविवाला होता है, वह द्युलोक और दिवसमें धन पाता है।

१५ इन्द्र, तुम धनी हो। जो तुम्हें प्रिय धन देते हैं, उन्हें रण-भूमिमें भेजो। हर्यश्व इन्द्र, हम तुम्हारे उपदेशानुसार, स्तोताओंके साथ सारे पापोंके पार जायँगे।

१६ इन्द्र, पृथिवीस्थ (अधम) धन तुम्हारा ही है। अन्तरीक्षस्थ (मध्यम) धन तुम्हारी ही है। तुम सारे उत्तम धनोंके कर्त्ता हो—यह बात सच्ची है। गौके सम्बन्धमें तुम्हें कोई भी नहीं हटा सकता।

१७ इन्द्र, तुम संसारके धनदाता हो। ये सब जो युद्ध होते हैं, उनमें भी आप धनद कहकर प्रसिद्ध हैं। पुरुहूत इन्द्र, रक्षाके लिये, ये सब पार्थिव मनुष्य तुमसे अन्नकी भिक्षा चाहते हैं।

१८ इन्द्र, तुम जितने धनके ईश्वर हो, उतनेके हम भी स्वामी बनें। धनद, मैं स्तोताकी रक्षा करूँगा। पापके लिये मैं धन नहीं दूँगा।

शिक्षेयमिन्महयते दिवेदिवे राय आ कुहचिद्विदे ।
नहि त्वदन्यन्मघवन्न आप्यं वस्यो अस्ति पिता चन ॥१९॥
तरणिरित् सिषासति वाजं पुरन्ध्या युजा ।
आ व इन्द्रं पुरुहूतं नमे गिरा नेमिं तष्टेव सुद्र्वम् ॥२०॥
न दुःष्टुती मर्त्यो विन्दते वसु न स्रेधन्तं रयिर्नशत् ।
सुशक्तिरिन्मघवन्तुभ्यं मावते देष्णं यत्पार्ये दिवि ॥२१॥
अभि त्वा शूर नोनुमोऽदुग्धा इव धेनवः ।
ईशानमस्य जगतः स्वर्दृशमीशानमिन्द्र तस्थुषः ॥२२॥
न त्वा वाँ अन्यो दिव्यो न पार्थिवो न जातो न जनिष्यते ।
अश्वायन्तो मघवन्निन्द्रवाजिनो गव्यन्तस्त्वा हवामहे ॥२३॥
अभी षतस्तदा भरेन्द्र ज्यायः कनीयसः ।
पुरूवसुर्हि मघवन्त्सनादसि भरेभरे च हव्यः ॥२४॥

---

१९ जिस किसी भी स्थानमें विद्यमान पूजक पुरुषको लक्ष्य कर प्रतिदिन दान कर इन्द्र, तुम्हारे विना न तो हमारा कोई बन्धु है, न प्रशंसनीय पिता है ।

२० क्षिप्रकर्म-कारी व्यक्ति ही महान् कर्मके बलसे अन्नका भोग करता है । जैसे विश (बढ़ई) उत्तम काष्ठवाले चक्रको नवाता है, वैसे ही स्तुति द्वारा पुरुहूत इन्द्रको मैं नवाउँगा ।

२१ मनुष्य दुष्ट स्तुतिसे धन लाभ नहीं कर सकता । हिंसकके पास धन नहीं जाता । घ इन्द्र, द्युलोक और दिनमें मेरे समान मनुष्यके प्रति जो कुछ तुम्हारा दातव्य है, उसे सुन्दर कर्म व्यक्ति ही पा सकता है ।

२२ वीर इन्द्र, तुम इस जङ्गम पदार्थके स्वामी हो । तुम स्थावर पदार्थोंके ईश्वर और सर्वदर्श हम न दोही गयी गायकी तरह तुम्हारी स्तुति करते हैं ।

२३ धनी इन्द्र, तुम्हारे समान न तो पृथिवीमें कोई जनमा, न जनमेगा । हम अश्व, अन्न गौ चाहते हैं । तुम्हें बुलाते हैं ।

२४ इन्द्र, तुम ज्येष्ठ हो और मैं कनिष्ठ हूँ । मेरे लिये उस धनको ले आओ । बहुत दिनोंसे प्रभूत-धनी हो और प्रत्येक युद्धमें हव्य लाभके योग्य हो ।

परा णुदस्व मघवन्नमित्रान्त्सुवेदा नो वसू कृधि ।
अस्माकं बोध्यविता महाधने भवावृधः सख नाम् ॥ २५॥

इन्द्र क्रतुं न आ भर पिता पुत्रेभ्यो यथा ।
शिक्षा णो अस्मिन् पुरुहूत यामनि जीवा ज्योतिरशीमहि ॥२६॥

मा नो अज्ञाता वृजना दुराध्यो माशिवासो अव क्रमुः ।
त्वया वयं प्रवतः शश्वतीरपोति शूर तरामसि ॥२७॥



३३ सूक्त

१–६ के वसिष्ठपुत्रगण देवता । १-६ मन्त्रोंके वसिष्ठ ऋषि । शेष मन्त्रोंके वसिष्ठ देवता और वसिष्ठपुत्रगण ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

श्वित्यञ्चो मा दक्षिणतस्कपर्दा धियं जिन्वासो अभि हि प्रमन्दुः ।
उत्तिष्ठन्वोचे परि बर्हिषोनॄन्न मे दूरादवितवे वसिष्ठाः ॥१॥

---

२५ मघवन्, शत्रुओंको पराङ्मुख करके हटाओ। हमारे लिये धनको सुलभ करो। युद्धमें हमारे रक्षक बनो। हम तुम्हारे सखा हैं। हमारे वर्द्धक बनो।

२६ इन्द्र, हमारे लिये प्रज्ञान ले आओ। जैसे पिता पुत्रको देता है, वैसे ही तुम हमें धन दो। हम यज्ञके जीव हैं। हम प्रतिदिन सूर्यको प्राप्त करें।

२७ इन्द्र, अज्ञात-गति, हिंसक, दुराराध्य और अशुभ शत्रु हमें आक्रमण न करें। शूर, हम तुम्हारे निकट नम्र होकर अनेक कार्योंमें उत्तीर्ण होंगे।



१ श्वेतवर्ण और कर्म-पूरक वसिष्ठ पुत्रगण अपने शिरके दक्षिण भागमें चूड़ा धारण करनेवाले हैं। वे हमें प्रसन्न करते हैं; क्योंकि यज्ञसे उठते हुए मैं सबको कहता हूँ कि, वसिष्ठपुत्रगण मुझसे दूर न जायँ।

दूरादिन्द्रमनयन्ना सुतेन तिरो वैशन्तमतिपान्तमुग्रम् ।
पाशद्युम्नस्य वायतस्य सोमात् सुतादिन्द्रो वृणीता वसिष्ठान् ॥२॥
एवेन्नु कं सिन्धुमेभिस्ततारेवेन्नु कं भेदमेभिर्जघान ।
एवेन्नु कं दाशराज्ञे सुदासं प्रावदिन्द्रो ब्रह्मणा वो वसिष्ठाः ॥३॥
जुष्टी नरो ब्रह्मणा वः पितॄणामक्षमव्ययं न किला रिषाथ ।
यच्छक्करीषु बृहता रवेणेन्द्रे शुष्ममदधाता वसिष्ठाः ॥४॥
उद्द्यामिवेत्तृष्णजो नाथितासोदीधयुर्दाशराज्ञे वृतासः ।
वसिष्ठस्य स्तुवत इन्द्रो अश्रोदुरुं तृत्सुभ्यो अकृणोदु लोकम् ॥५॥
दण्डा इवेद्गो अजनास आसन् परिच्छिन्ना भरता अर्भकासः ।
अभवच्च पुर एता वसिष्ठ आदित्तृत्सूनां विशो अप्रथन्त ॥६॥

२ वयत्‌के पुत्र पाशद्युम्नका दूरसे ही तिरस्कार करके चमस-स्थित सोमका पान करते हुए इन्द्र वसिष्ठपुत्रगण ले आये थे। इन्द्रने भी वयत्‌के पुत्र पाशद्युम्नको छोड़कर सोमाभिषव करनेवाले वसि को वरण किया था। ❋

३ इसी प्रकार वसिष्ठ पुत्रोंने अनायास ही नदी (सिन्धु) को पार किया था। इसी प्र भेद नामके शत्रुका भी इन्होंने विनाश किया था। वसिष्ठपुत्रो, इसी प्रकार प्रसिद्ध "दाशराज्ञयु तुम्हारे ही मन्त्र-बलसे इन्द्रने सुदास राजाकी रक्षा की थी।

४ मनुष्यो, तुम्हारे स्तोत्र (ब्रह्म) से पितरोंकी तृप्ति होती है। मैं रथकी धुरीको चलाता। तुम क्षीण नहीं होना। वसिष्ठगण, तुमने शक्करी ऋचाओं और श्रेष्ठ शब्द द्वारा इन्द्रका बल पाया

५ ज्ञात-तृष्ण राजाओं द्वारा घिरे हुए और वृष्टि-याचक वसिष्ठपुत्रोंने दस राजाओंके संग्राममें, सूर्यकी तरह, इन्द्रको ऊपर उठाया था। स्तोता वसिष्ठका स्तोत्र इन्द्रने सुना था और राजाओंके लिये विस्तृत लोक दिया था।

६ गो-प्रेरक दण्डोंकी तरह (तृत्सुओंके) भरतगण शत्रुओंके बीच ससीम और सङ्ख्यक थे। अनन्तर वसिष्ठ ऋषि भरतोंके पुरोहित हुए और तृत्सुओंकी प्रजा लगी।

❋ सायणाचार्यने लिखा है कि, एक समय सुदास राजाके यज्ञ-कार्यमें वसिष्ठगण व्यस्त थे। इसी समय पुत्र पाशद्युम्न राजाने भी यज्ञ किया था। जिस समय इन्द्र पाशद्युम्नके यज्ञमें सोम पान कर रहे थे, उसी वसिष्ठपुत्र, मन्त्र-बलसे, इन्द्रको उठाकर सुदास राजाके यज्ञमें ले आये थे।

त्रयः कृण्वन्ति भुवनेषु रेतस्तिस्रः प्रजा आर्या ज्योतिरग्राः ।
त्रयो घर्मास उषसं सचन्ते सर्वाँ इत्ताँ अनु विदुर्वसिष्ठाः ॥७॥
सूर्यस्येव वक्षथो ज्योतिरेषां समुद्रस्येव महिमा गभीरः ।
वातस्येव प्रजवो नान्येन स्तोमो वसिष्ठा अन्वेतवे वः ॥८॥
त इन्निण्यं हृदयस्य प्रकेतैः सहस्रवल्शमभि सञ्चरन्ति ।
यमेन ततं परिधिं वयन्तोऽप्सरस उप सेदुर्वसिष्ठाः ॥९॥
विद्युतो ज्योतिः परि सञ्जिहानं मित्रावरुणा यदपश्यतां त्वा ।
तत्ते जन्मोतैकं वसिष्ठागस्त्यो यत्त्वा विश आजभार ॥१०॥
उतासि मैत्रावरुणो वसिष्ठोर्वश्या ब्रह्मन्मनसोऽधि जातः ।
द्रप्सं स्कन्नं ब्रह्मणा दैव्येन विश्वेदेवाः पुष्करे त्वाददन्त ॥११॥

---

७ अग्नि, वायु और सूर्य ही संसारमें जल देते हैं। उनमें आदित्य आदि तीन श्रेष्ठ आर्य-प्रजा हैं। दीप्तिमान् वे तीनों उषाका वयन करते हैं। वसिष्ठ लोग उन सबको जानते हैं।

८ वसिष्ठ-पुत्रो, तुम्हारी महिमा (वा स्तोम) सूर्यकी ज्योतिकी तरह प्रकाशित होती है। तुम्हारी महिमा समुद्रकी तरह गम्भीर है। वायु-वेगके समान तुम्हारे स्तोत्रका कोई दूसरा अनुगमन नहीं कर सकता।

९ वे वसिष्ठगण (वसिष्ठ) ज्ञान द्वारा तिरोहित सहस्र शाखाओंवाले संसारमें विचरण करने लगे। वे सर्व-नियन्ता (यम) द्वारा विस्तृत वस्त्र (विश्व-प्रवाह) को बुनते हुए मातृ-रूपसे अप्सराके निकट गये। *

१० वसिष्ठ, विद्युत्की तरह (देह धारण करनेके लिये) अपनी ज्योतिका परित्याग करते हुए तुम्हें, मित्र और वरुणने देखा था। उस समय तुम्हारा एक जन्म हुआ। इसकेअ तिरिक्त वासस्थानसे अगस्त्य भी तुम्हें ले आये थे।

११ और, हे वसिष्ठ, तुम मित्र और वरुणके पुत्र हो। हे ब्रह्मन्, तुम उर्वशीके मनसे उत्पन्न हो। उस समय मित्र और वरुणका वीर्य-स्खलन हुआ था। विश्वदेवगणने दैव्य स्तोत्र द्वारा पुष्करके बीच तुम्हें धारण किया था।

---

* Selected Essays (1881 V. I, P. 406) में मैक्समूलर साहबने यह सिद्ध करनेकी चेष्टा की है कि, वसिष्ठ शब्दका अर्थ सूर्य है और मित्र-वरुणका अर्थ दिन और रात्रि। उर्वशीका अर्थ उषा है। इस प्रकार सूर्य (वसिष्ठ) दिन और रात्रि (मित्र और वरुण) तथा उषा (उर्वशी) से उत्पन्न हुए। परन्तु इन मन्त्रोंमें तो इस कल्पनाका मूलोच्छेद है।

स प्रकेत उभयस्य प्रविद्वान्त्सहस्रदान उत वा सदानः ।
यमेन ततं परिधिं वयिष्यन्नप्सरसः परि जज्ञे वसिष्ठः ॥१२॥
सत्रे ह जाताविषिता नमोभिः कुम्भे रेतः सिषिचतुः समानम् ।
ततो ह मान उदियाय मध्यात्ततो जातमृषिमाहुर्वसिष्ठम् ॥१३॥
उक्थभृतं सामभृतं बिभर्ति ग्रावाणं बिभ्रत् प्र वदात्यग्रे ।
उपैनमाध्वं सुमनस्यमाना आ वो गच्छाति प्रतृदो वसिष्ठः ॥१४॥

३ अनुवाक । ३४ सूक्त

विश्वदेवगण देवता । वसिष्ठ ऋषि । द्विपदा, विराट् और त्रिष्टुप् छन्द ।

प्र शुक्रैतु देवी मनीषा अस्मत् सुतष्टो रथो न वाजी ॥१॥
विदुः पृथिव्या दिवो जनित्रं शृण्वन्त्यापो अध क्षरन्तीः ॥२॥
आपश्चिदस्मै पिन्वन्त पृथ्वीर्वृत्रेषु शूरा मंसन्त उग्राः ॥३॥

---

१२ प्रकृष्ट ज्ञानवाले वसिष्ठ दोनों लोकोंको (पृथिवी और स्वर्गको) जानकर सहस्र सर्वदानवाले हुए थे। सर्व-नियन्ता (यम) द्वारा विस्तीर्ण वस्त्र (संसार-प्रवाह) को बुननेकी वसिष्ठ उर्वशीसे उत्पन्न हुए थे।

१३ यज्ञमें दीक्षित मित्र और वरुणने, स्तुति द्वारा प्रार्थित होकर, कुम्भ (वसतीवर कल बीच एक साथ ही रेतः-स्खलन किया था। अनन्तर मान (अगस्त्य) उत्पन्न हुए। लोग कहते ऋषि वसिष्ठ उसी कुम्भसे जनमे थे।

१४ तृत्सुओ, तुम्हारे पास वसिष्ठ आ रहे हैं। प्रसन्न चित्तसे तुम इनकी पूजा करो। अग्रवर्ती होकर उक्थ और सोमके धारण-कर्त्ता तथा प्रस्तरसे अभिषव करनेवाले (अध्वर्यु) को करते और कर्त्तव्य भी बताते हैं।

१ दीप्त और अभीष्टप्रद स्तुति, वेगशाली और सुसंस्कृत रथकी तरह, हमारे पाससे पास जाय।

२ क्षरण-शील जल स्वर्ग और पृथिवीकी उत्पत्ति जानता है। जल स्तुति सुनता है।

३ विस्तीर्ण जल इन्द्रको आप्यायित करता है। उपद्रव उठनेपर उग्र शूर लोग इन्द्रकी स्तुति करते हैं।

आ धूर्ष्वस्मै दधाताश्वानिन्द्रो न वज्री हिरण्यबाहुः ॥४॥
अभि प्र स्थाताहेव यज्ञं यातेव पत्मन्त्मना हिनोत ॥५॥
त्मना समत्सु हिनोत यज्ञं दधात केतुं जनाय वीरम् ॥६॥
उदस्य शुष्माद्भानुर्नार्त बिभर्ति भारं पृथिवी न भूम ॥७॥
ह्वयामि देवाँ अयातुरग्ने साधन्नृतेन धियं दधामि ॥८॥
अभि वो देवीं धियं दधिध्वं प्र वो देवत्रा वाचं कृणुध्वम् ॥९॥
आ चष्ट आसां पाथो नदीनां वरुण उग्रः सहस्रचक्षाः ॥१०॥
राजा राष्ट्राणां पेशो नदीनामनुत्तमस्मै क्षत्रं विश्वायु ॥११॥
अविष्टो अस्मान्विश्वासु विक्ष्वद्युं कृणोत शंसं निनित्सोः ॥१२॥
व्येतु दिद्युद् द्विषामशेवा युयोत विष्वग्रपस्तनूनाम् ॥१३॥
अवीन्नो अग्निर्हव्यान्नमोभिः प्रेष्ठो अस्मा अधायि स्तोमः ॥१४॥

४ इन्द्रके आगमनके लिये अश्वोंको रथके आगे जोतो। इन्द्र वज्रधर और सोनेके हाथवाले हैं।

५ मनुष्यो, यज्ञके सामने गमन करो। गन्ताकी तरह स्वयमेव यज्ञमार्गपर जाओ।

६ मेरे पुरुषो, संग्राममें स्वयमेव जाओ। लोगोंके लिये प्रज्ञापक और पापोंके नाशक यज्ञ करो।

७ इस यज्ञके बलसे ही सूर्य उगते हैं। जैसे पृथिवी जीवोंको ढोती है, वैसे ही यज्ञ भी भार वहन करता है।

८ हे अग्नि, अहिंसा आदि विषयोंसे युक्त यज्ञ द्वारा मनोरथपूर्ण करते हुए मैं देवोंको बुलाता हूँ और उनके लिये कर्म करता हूँ।

९ मनुष्यो, देवोंको लक्ष्य करके दीप्त कर्म करो। देवोंके लिये स्तुति करो।

१० ओजस्वी और अनेक आँखोंवाले वरुण नदियोंके जलको देखते हैं।

११ वरुण राष्ट्रोंके राजा और नदियोंके रूप हैं। उनका बल अप्रतिहत और सर्वत्रगामी है।

१२ देवो, सारी प्रजामें हमारी रक्षा करो। निन्दा करनेकी इच्छावाले शत्रुको दीप्ति-शून्य करो।

१३ शत्रुओंके अमङ्गल-जनक आयुध चारो ओर हट जायँ। देवो, शरीरका पाप हमसे अलग करो।

१४ हव्यभोजी अग्नि हमारे नमस्कारों द्वारा प्रियतम होकर हमारी रक्षा करें। हम अग्निके लिये स्तुति करते हैं।

सजूर्देवेभिरपां नपातं सखायं कृध्वं शिवो नो अस्तु ॥१५॥
अब्जामुक्थैरहिं गृणीषे बुध्ने नदीनां रजःसु षीदन् ॥१६॥
मा नोऽहिर्बुध्न्यो रिषे धान्मा यज्ञो अस्य स्त्रिधदृतायोः ॥१७॥
उत न एषु नृषु श्रवो धुः प्र राये यन्तु शर्धन्तो अर्यः ॥१८॥
तपन्ति शत्रुं स्वर्ण भूमा महासेनासो अमेभिरेषाम् ॥१९॥
आ यन्नः पत्नीर्गमन्त्यच्छा त्वष्टा सुपाणिर्दधातु वीरान् ॥२०॥
प्रति नः स्तोमन्त्वष्टा जुषेत स्यादस्मे अरमतिर्वसूयुः ॥२१॥
ता नो रासन्रातिषाचो वसून्या रोदसी वरुणानी शृणोतु ।
वरूत्रीभिः सुशरणो नो अस्तुत्वष्टा सुदत्रो विदधातु रायः ॥२२॥
तन्नो रायः पर्वतास्तन्न आपस्तद्रातिषाच ओषधीरुत द्यौः ।
वनस्पतिभिः पृथिवी सजोषा उभे रोदसी परि पासतो नः ॥२३॥

---

१५ देवोंके सहचर अग्निको सखा बनाओ । वह हमारे लिये मङ्गलकर हों ।

१६ मेघोंके घातक, नदी-स्थान (जल)में बैठे हुए और जलसे उत्पन्न अग्निकी स्तोत्र स्तुतिकी जाती है।

१७ अहिर्बुध्न्य (अग्नि) हमें हिंसकके हाथमें समर्पण नहीं करें। याज्ञिकका यज्ञ क्षीण न

१८ देवतालोग हमारे लोगोंके लिये अन्न धारण करते हैं। धनके लिये उत्साही शत्रु जायँ।

१९ जैसे सूर्य सारे भुवनोंको तप्त करते हैं, वैसे ही महासेनावाले राजालोग देवोंके बलसे शत्रु को ताप देते हैं।

२० जिस समय देव-स्त्रियाँ हमारे सामने आती हैं, उस समय उत्तम हाथवाले त्वष्टा हमें पुत्र प्रदान करें।

२१ त्वष्टा हमारे स्तोत्रोंकी सेवा करते हैं। पर्याप्त-बुद्धि त्वष्टा हमारे धनाभिलाषी हों।

२२ दान-निपुण देव-पत्नियाँ हमारा मनोरथ हमें प्रदान करें। द्यावापृथिवी और वरुण-पत्नी श्रवण करें। कल्याण कर और दान-शील त्वष्टा, उपद्रव-निवारिणी देव-स्त्रियोंके साथ, हमारे लिये शरण

२३ हमारे उस धनका पालन पर्वतगण करें। सारे जल भी हमारे उस धनका पालन दान-परायणा देव-पत्नियाँ भी उसका पोषण करें। ओषधियाँ और द्युलोक भी पालन करें। वनस्पति साथ अन्तरीक्ष भी उसका पालन करें। द्यावापृथिवी हमारी रक्षा करें।

अनु तदुर्वी रोदसी जिहातामनु द्युक्षो वरुण इन्द्रसखा ।
अनु विश्वे मरुतो ये सहासो रायः स्याम वरुणं धियध्यै ॥२४॥
तन्न इन्द्रो वरुणो मित्रो अग्निराप ओषधीर्वनिनो जुषन्त ।
शर्मन्त्स्याम मरुतामुपस्थे यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥२५॥



३५ सूक्त

वविश्वदेव गण देवता । वसिष्ठ ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द । *

शं न इन्द्राग्नी भवतामवोभिः शं न इन्द्रावरुणा रातहव्या
शमिन्द्रासोमा सुविताय शं योः शं न इन्द्रापूषणा वाजसातौ ॥१॥
शं नो भगः शमु नः शंसो अस्तु शं नः पुरन्धिः शमु सन्तु रायः ।
शं नः सत्यस्य सुयमस्य शंसः शं नो अर्यमा पुरुजातो अस्तु ॥२॥

२४ हम धारणीय धनके आश्रय होंगे। विस्तृत द्यावापृथिवी उसका अनुमोदन करें। दीप्तिके आधार इन्द्र और सखा वरुण भी उसका समर्थन करें। पराजय करनेवाले मरुद्गण भी अनुमोदन कर ।

२५ इन्द्र, वरुण, मित्र, अग्नि, जल, ओषधियाँ और वृक्ष भी, हमारे लिये, इस स्तोत्रका सेवन करें। मरुतोंके पास निवास कर हम सुखसे रहेंगे। तुम सदा हमें स्वस्ति द्वारा पालन करो ।



१ इन्द्र और अग्नि, हमारे लिये रक्षण द्वारा शान्तिप्रद होओ। इन्द्र और वरुण, यजमानने हव्य प्रदान किया है। तुमलोग हमारे लिये शान्तिप्रद होओ। इन्द्र और सोम हमारे लिये शान्ति और कल्याण देनेवाले हों। इन्द्र और पूषा हमारे लिये शान्ति और सुख दें।

२ भग देवता हमारे लिये शान्ति दें। हमारे लिये नराशंस शान्तिप्रद हों। हमारे लिये पुरन्धि शान्तिप्रद हों। सारे धन हमारे लिये शान्तिप्रद हों। उत्तम और यम-युक्त सत्यका वचन हमारे लिये शान्ति दे। बहु बार आविर्भूत अर्यमा हमारे लिये शान्तिदाता हों।

* इस सूक्तमें गौ, अश्व, ओषधि, पर्वत, नदी, वृक्ष आदिकी भी अर्चना है।

शं नो धाता शमु धर्ता नो अस्तु शं न उरूची भवतु स्वधाभिः ।
शं रोदसी बृहती शं नो अद्रिः शं नो देवानां सुहवानि सन्तु ॥३॥
शं नो अग्निर्ज्योतिरनीको अस्तु शं नो मित्रावरुणावश्विना शम् ।
शं नः सुकृतां सुकृतानि सन्तु शं न इषिरो अभि वातु वातः ॥४॥
शं नो द्यावापृथिवी पूर्वहूतौ शमन्तरिक्षं दृशये नो अस्तु ।
शं न ओषधीर्वनिनो भवन्तु शं नो रजसस्पतिरस्तु जिष्णुः ॥५॥
शं न इन्द्रो वसुभिर्देवो अस्तु शमादित्येभिर्वरुणः सुशंसः ।
शं नो रुद्रो रुद्रे भिर्जलाषः शं नस्त्वष्टा ग्नाभिरिह शृणोतु ॥६
शं नः सोमो भवतु ब्रह्म शं नः शं नो ग्रावाणः शमु सन्तु यज्ञाः ।
शं नः स्वरूणां मितयो भवन्तु शं नः प्रस्वः शंवस्तु वेदिः ॥७॥
शं नः सूर्य उरुचक्षा उदेतु शं नश्चतस्रः प्रदिशो भवन्तु ।
शं नः पर्वता ध्रुवयो भवन्तु शं नः सिन्धवः शमु सन्त्वापः ॥८॥

---

३ धाता हमारे लियें शान्ति दें। धर्त्ता वरुण हमारे लिये शान्ति दें। अन्नके साथ पृथि हमारे लिये शान्ति दे। महती द्यावापृथिवी हमारे लिये शान्ति दें। पर्वत हमारे लिये शा दें। देवोंकी सारी उत्तम स्तुतियाँ हमें शान्ति दें।

४ ज्वाला-मुख अग्नि हमारे लिये शान्ति दें। मित्र और वरुण हमें शान्ति दें। अश्विनीकु हमें शान्ति दें। पुण्यात्माओंके पुण्यकर्म हमें शान्ति दें। गति-शील वायु भी हमारी शान्तिके लि बहें।

५ प्रथम आह्वानमें द्यावापृथिवी हमारे लिये शान्ति दें। दर्शनार्थ अन्तरीक्ष हमारे लि शान्ति दे। ओषधियाँ और वृक्ष हमें शान्ति दें। विजय-परायण लोकपति इन्द्र भी हमें शान्ति

६ वसुओंके साथ इन्द्रदेव हमें शान्ति दें। आदित्योंके साथ शोभन स्तुतिवाले वरुण शान्ति दें। रुद्रगणके लिये रुद्रदेव हमें शान्ति दें। देव-स्त्रियोंके साथ त्वष्टा हमें शान्ति दें। हमारा स्तोत्र सुने।

७ सोम हमें शान्ति दे। स्तोत्र हमें शान्ति दे। पत्थर हमें शान्ति द। यज्ञ हमें शा दे। यूपोंका माप हमें शान्ति दें। ओषधियाँ हमें शान्ति दें। वेदी हमें शान्ति दे।

८ विस्तीर्ण-तेजा सूर्य हमारी शान्तिके लिये उदित हों। चारो महादिशाएँ हमें शान्ति स्थिर पर्वत हमें शान्ति दें। नदियाँ हमें शान्ति दें। जल हमें शान्ति दे।

शं नोऽदितिर्भवतु व्रतेभिः शं नो भवन्तु मरुतः स्वर्काः ।
शं नो विष्णुः शमु पूषा नो अस्तु शं नो भवित्रं शंवस्तु वायुः ॥९॥
शं नो देवः सविता त्रायमाणः शं नो भवन्तूषसो विभातीः ।
शं नः पर्जन्यो भवतु प्रजाभ्यः शं नः क्षेत्रस्य पतिरस्तु शंभुः ॥१०॥
शं नो देवा विश्वदेवा भवन्तु शं सरस्वती सह धीभिरस्तु ।
शमभिषाचः शमु रातिषाचः शं नो दिव्याः पार्थिवाः शं नो अप्याः ॥११॥
शं नः सत्यस्य पतयो भवन्तु शं नो अर्वन्तः शमु सन्तु गावः ।
शं न ऋभवः सुकृतः सुहस्ताः शं नो भवन्तु पितरो हवेषु ॥१२॥
शं नो अज एकपाद्देवो अस्तु शं नोऽहिर्बुध्न्यः शं समुद्रः ।
शं नो अपां नपात् पेरुरस्तु शं नः पृश्निर्भवतु देवगोपा ॥१३॥

९ कर्म द्वारा अदिति हमें शान्ति दें। शोभन स्तुतिवाले मरुद्गण हमें शान्ति दें। विष्णु हमें शान्ति दें। पूषा हमें शान्ति दें। अन्तरीक्ष हमें शान्ति दे। वायु हमें शान्ति दे।

१० रक्षण करते हुए सविता हमें शान्ति दें। अन्धकार-विनाशिनी उषाएँ हमें शान्ति दें। हमारी प्रजाके लिये पर्जन्य शान्ति दें। क्षेत्रपति शम्भु हमें शान्ति द ।

११ प्रकाशमान विश्वदेवगण हमें शान्ति दें। कर्मके साथ सरस्वती हमें यज्ञ-सेवक शान्ति दें। दान-निपुण हमें शान्ति दें। भूलोक, द्युलोक और अन्तरीक्ष लोकमें उत्पन्न प्राणी हमें शान्ति दें।

१२ सत्य-पालक देवता हमें शान्ति दें। अश्वगण हमें शान्ति दें। गायें हमारे लिये सुखद-दात्री हों। सुकर्म-कर्त्ता और सुन्दर हाथवाले ऋभुगण हमें शान्ति दें। स्तोत्र करनेपर हमारे पितर भी हमारे लिये शान्ति दें।

१३ अज-एकपाद देव हमें शान्ति दें। अहिर्बुध्न्य देव हमें शान्ति दें। समुद्र हमें शान्ति दे। उपद्रव शान्ति करनेवाले "अपां नपांत्" देव हमें शान्ति दें। देव-पालिका पृश्नि हमें शान्ति दें।

आदित्या रुद्रा वसवो जुषन्तेदं ब्रह्म क्रियमाणं नवीयः ।
शृण्वन्तु नो दिव्याः पार्थिवासो गोजाता उत ये यज्ञियासः ॥१४॥
ये देवानां यज्ञिया यज्ञियानां मनोर्यजत्रा अमृता ऋतज्ञाः ।
ते नो रासन्तामुरुगायमद्य यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥१५॥



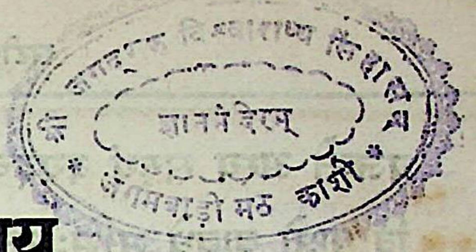
१४ हम यह नया स्तोत्र बनाते हैं। आदित्यगण, रुद्रगण और वसुगण इसका सेवन करें। द्युलोक, पृथिवी और पृश्निसे उत्पन्न तथा अन्य भी जितने यज्ञीय हैं, सब हमारा आह्वान सु...

१५ यज्ञयोग्य देवो, यजनीय मनु प्रजापति और यजनीय अमर सत्यज्ञ जो देवगण हैं, वे हमें बहुकीर्त्तिवाला पुत्र प्रदान करें। तुम सदा हमें कल्याण द्वारा पालन करो।



तृतीय अध्याय समाप्त





चतुर्थ अध्याय

३६ सूक्त

विश्वदेव देवता। वसिष्ठ ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

प्र ब्रह्मै तु सदनादृतस्य वि रश्मिभिः ससृजे सूर्यो गाः।
वि सानुना पृथिवी सस्र उर्वी पृथु प्रतीकमध्येधे अग्निः॥१॥
इमां वां मित्रावरुणा सुवृक्तिमिषं न कृण्वे असुरा नवीयः।
इनो वामन्यः पदवीरदब्धो जनं च मित्रो यतति ब्रुवाणः॥२॥
आ वातस्य ध्रजतो रन्त इत्या अपीपयन्त धेनवो न सूदाः।
महो दिवः सदने जायमानोऽचिक्रदद्वृषभः सस्मिन्नूधन्॥३॥
गिरा य एता युनजद्धरी त इन्द्र प्रिया सुरथा शूर धायू।
प्र यो मन्युं रिरिक्षतो मिनात्या सुक्रतुमर्यमणं ववृत्याम्॥४॥

---

१ यज्ञस्थानसे स्तोत्र, उत्तमतासे, सूर्य आदिके पास जाय। किरणोंके द्वारा सूर्यने वृष्टिका जल बनाया है। पृथिवी अपने सानुओं (पर्वतादि तटों) को विस्तृत करके व्याप्त हुई है। पृथिवीके विस्तृत अङ्गोंके ऊपर अग्नि जलते हैं।

२ बली मित्र और वरुण, हव्य-रूप अन्नकी तरह तुम्हारे लिये नयी स्तुति करता हूँ। तुम लोगोंमें एक स्वामी वरुण हैं, जो स्थानके उत्पादक (धर्माधर्मके धारक) हैं और मित्र, स्तुति किये जानेपर, प्राणियोंको प्रवर्त्तित करते हैं।

३ गति-परायण वायुकी गति चारो ओर शोभा पाती है। दूध देनेवाली गाय बढ़ती हैं। महान् और प्रकाशमान आदित्यके स्थान(अन्तरीक्ष) में उत्पन्न और वर्षणशील मेघ उस अन्तरीक्षमें क्रन्दन (गर्जन) करता है।

४ शूर इन्द्र, जो मनुष्य तुम्हारे प्रिय, सुन्दर गमनवाले और धारक इन हरि नामके दोनों घोड़ोंको, स्तुति द्वारा, रथमें जोतता है, उसके यज्ञमें आओ। अर्यमा हिंसाकी इच्छा करनेवाले शत्रुका कोप विनष्ट करते हैं। उन्हीं शोभन कर्मवाले अर्यमाको स्तुतिसे आवर्त्तित करता हूँ।

यजन्ते अस्य सख्यं वयश्च नमस्विनः स्व ऋतस्य धामन् ।
वि पृक्षो बाबधे नृभिः स्तवान इदं नमो रुद्राय प्रेष्ठम् ॥५॥
आ यत् साकं यशसो वावशानाः सरस्वती सप्तथी सिन्धुमाता ।
याः सुष्वयन्त सुदुघाः सुधारा अभि स्वेन पयसा पीप्यानाः ॥६॥
उत त्ये नो मरुतो मन्दसाना धियं तोकं च वाजिनोऽवन्तु ।
मा नः परि ख्यदक्षरा चरन्त्यवीवृधन्युज्यन्ते रयिं नः ॥७॥
प्र वो महीमरमतिं कृणुध्वं प्र पूषणं विदथ्यं नवीरम् ।
भगं धियोऽवितारं नो अस्याः सातौ वाजं रातिषाचं पुरन्धिम् ॥८॥
अच्छायं वो मरुतः श्लोक एत्वच्छा विष्णुं निषिक्तपामवोभिः ।
उत प्रजायै गृणते वयो धुर्यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥९॥



---

५ जमान लोग, अन्नवाले होकर और यज्ञ-स्थलमें अवस्थित रहकर, रुद्रका सख्य चाहते। नेताओं द्व. । स्तुत होनेपर रुद्र अन्न देते हैं । मैं रुद्रका प्रिय नमस्कार करता हूँ ।

६ जिन नदियोंमें सिन्धु (नदी) माता है और सरस्वती (नदी) सप्तमा है, वे ही मनोर करनेवाली और सुन्दर धारोंवाली नदियाँ प्रवाहित होती हैं । अपने जलसे बढ़नेवाली, अन्नवाली इच्छा करनेवाली नदियाँ एक साथ ही आवें ।

७ प्रसन्न और वेगवान् मरुद्गण हमारे यज्ञ-कर्म और पुत्रकी रक्षा करें । व्याप्त और वि नेवाली वाग्देवता (सरस्वती देवी) हमें छोड़कर दूसरेको न देखें । मरुत् और वाक् हमारा धन वि रहनेपर भी उसे बढ़ावें ।

८ तुम असीम और महती पृथिवीको बुलाओ । यज्ञ-योग्य वीर पूषाको बुलाओ । हमारे कर्म-र भग देवताको बुलाओ । दान-निपुण और प्राचीन (ऋभुओंमेंसे एक) वाजदेवको यज्ञमें बुलाओ ।

९ मरुतो, हमारा यह श्लोक (स्तोत्र) तुम्हारे सामने जाय । आश्रयदाता और गर्भपाल विष्णुके निकट भी जाय । वे स्तोताको पुत्र और अन्न दें । तुम हमें सदा कल्याण (स्वस्ति) द्वारा पा करो ।



३७ सूक्त

विश्वदेवगण देवता। वसिष्ठ ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द

आ वो वाहिष्ठो वहतु स्तवध्यै रथो वाजा ऋभुक्षणो अमृक्तः।
अभि त्रिपृष्ठैः सवनेषु सोमैर्मदे सुशिप्रा महभिः पृणध्वम् ॥१॥
यूयं ह रत्नं मघवत्सु धत्थ स्वर्दृश ऋभुक्षणो अमृक्तम्।
सं यज्ञेषु स्वधावन्तः पिबध्वं वि नो राधांसि मतिभिर्दयध्वम् ॥२॥
उवोचिथ हि मघवन्देष्णं महो अभस्य वसुनो विभागे।
उभा ते पूर्णा वसुना गभस्ती न सूनृतानि यमते वसव्या ॥३॥
त्वमिन्द्र स्वयशा ऋभुक्षा वाजो न साधुरस्तमेष्यृक्वा।
वयं नु ते दाश्वांसः स्याम ब्रह्म कृण्वन्तो हरिवो वसिष्ठाः ॥४॥
सनितासि प्रवतो दाशुषे चिद्याभिर्विवेषो हर्यश्व धीभिः।
ववन्मा नु ते युज्याभिरुती कदा न इन्द्र राय आ दशस्येः ॥५॥

१ विस्तृत तेजके आधार ऋभुओ (वाजो), वाहक, प्रशस्य और अहिंसक रथ तुम्हें ढोवे। सुन्दर जबड़ोंवाले ऋभुओ, यज्ञमें आनन्दके लिये दूध, दही और सत्तू में मिले सोमरस द्वारा उदर-पूर्त्ति करो।

२ स्वर्गदर्शी ऋभुओ, तुमलोग हविष्मान् लोगोंके लिये अहिंसक (चोरों आदिसे न चुराया जानेवाला) रत्न धारण करो। अनन्तर बलवान् होकर यज्ञमें सोम पान करो। कृपा द्वारा हमें विशेष रूपसे धन दो।

३ धनी इन्द्र, तुम विशेष और अल्प धनके दानके समय धनका सेवन करते हो। तुम्हारी दोनों बाहें धनसे पूर्ण हैं। धन-प्राप्तिमें तुम्हारा वचन बाधक नहीं होता।

४ इन्द्र, तुम असाधारण-यशा, ऋभुओंके ईश्वर और साधक हो। दूसरेकी तरह तुम स्तोताके घरमें आओ। हरि अश्ववाले इन्द्र, आज हम (वसिष्ठ) हव्य प्रदान करके तुम्हारा स्तोत्र करते हैं।

५ हर्यश्व, तुम हमारी स्तुति द्वारा व्याप्त होते हो; इसलिये हव्य देनेवाले यजमानके लिये प्रवण धनके दाता हो। इन्द्र, तुम हमें कब धन दोगे? आज तुम्हारे योग्य रक्षणसे हम प्रतिपालित होंगे।

वासयसीव वेधसस्त्वं नः कदा न इन्द्र वचसो बुबोधः ।
अस्तं तात्या धिया रयिं सुवीरं पृक्षो नो अर्वान्युहीत वाजी ॥६॥
अभि यं देवी निर्ऋतिश्चिदीशे नक्षन्त इन्द्रं शरदः सुपृक्षः ।
उप त्रिबन्धुर्जरदष्टिमेत्यस्ववेशं यं कृणवन्त मर्ताः ॥७॥
आ नो राधांसि सवितः स्तवध्या आ रायो यन्तु पर्वतस्य रातौ ।
सदा नो दिव्यः पायुः सिषक्तु यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥८॥



३८ सूक्त

सविता देवता । वसिष्ठ ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

उदुष्य देवः सविता ययाम हिरण्ययीममतिं यामशिश्रेत् ।
नूनं भगो हव्यो मानुषेभिर्वि यो रत्ना पुरूवसुर्दधाति ॥१॥

६ तुम कब हमारे स्तोत्र-रूप वाक्यको समझोगे ? तुम इस समय हमें निवास दे रहे हो । बली वेगशाली अश्व हमारी स्तुतिसे वीर पुत्रसे युक्त धन और अन्न हमारे गृहमें ले आवें ।

७ प्रकाशमाना निर्ऋति (भूमि) जिन इन्द्रको, अधिपति बनानेके लिये, व्याप्त करती है, अन्नवाले वर्ष जिन इन्द्रको व्याप्त करते हैं और जिन इन्द्रको मनुष्य स्तोता अपने गृहमें ले जाते हैं, त्रिलोकधारी इन्द्र अन्नको जीर्ण करनेवाला बल प्राप्त करते हैं ।

८ सविता देवता, तुम्हारे यहाँसे प्रशंसा-योग्य धन हमारे पास आवे । पर्वत (इन्द्र-सखा मेघ) धन देनेपर हमारे पास धन आवे । सर्व-रक्षक स्वर्गीय इन्द्र सदा रक्षक-रूपसे हमारा सेवन करें । तुम सदा स्वस्ति द्वारा हमें पालन करो ।



१ जिस सुवर्णमयी प्रभाका आश्रय सविता (सूर्य) करते हैं, उसीको उदित करते हैं । सविता मनुष्योंके लिये स्तुत्य हैं । अनेक धनोंवाले सविता स्तोताओंको मनोहर धन देते हैं ।

उदु तिष्ठ सवितः श्रुध्यस्य हिरण्यपाणे प्रभृता वृतस्य ।
व्युर्वीं पृथ्वीममतिं सृजान आ नृभ्यो मर्तभोजनं सुवानः ॥२॥
अपि ष्टुतः सविता देवो अस्तु यमा चिद्विश्वे वसवो गृणन्ति ।
स नः स्तोमान्नमस्य श्चनो धाद्विश्वेभिः पातु पायुभिर्नि सूरीन् ॥३॥
अभि यं देव्यदितिर्गृणाति सवं देवस्य सवितुर्जुषाणा ।
अभि सम्राजो वरुणो गृणन्त्यभि मित्रासो अर्जमा सजोषाः ॥४॥
अभि ये मिथो वनुषः सपन्ते रातिं दिवो रातिषाचः पृथिव्याः ।
अहिर्बुध्न्य उत नः शृणोतु वरूत्र्येक धेनुभिर्नि पातु ॥५॥
अनु तन्नो जास्पतिर्मंसीष्ट रत्नं देवस्य सवितुरियानः ।
भगमुग्रोऽवसे जोहवीति भगमनुग्रो अध याति रत्नम् ॥६॥
शं नो भवन्तु वाजिनो हवेषु देवताता मितद्रवः स्वर्काः ।
जम्भयन्तोऽहिंवृकं रक्षांसि सनेम्यस्मद्युयवन्नमीवाः ॥७॥

---

२ सविता देव, उदित होओ। हे हिरण्यबाहु, विस्तृत और प्रसिद्ध प्रभा देते हुए और मनुष्योंके भोग-योग्य धन नेताओंको देते हुए यज्ञ प्रारम्भ हुआ। तुम हमारा स्तोत्र सुनो।

३ सविता देव हमारे द्वारा स्तुत हों। जिन सविता देवकी स्तुति समस्त देव करते हैं, वह पूजनीय सविता हमारा स्तोम (स्तोत्र) और अन्न धारण करें। सब प्रकारके रक्षा-कार्य द्वारा स्तोताओंका पालन करें।

४ सविता देवताकी अनुमतिके अनुसार अदिति देवी स्तुति करती हैं, वरुण आदि देवता सविताकी स्तुति करते हैं तथा मित्र आदि और समान प्रीतिवाले अर्यमा उनकी स्तुति करते हैं।

५ दान-निपुण और भक्त यजमान, आपसमें मिल कर, द्युलोक और भूलोकके मित्र सविताकी सेवा करते हैं। अहिबुध्न्य हमारा स्तोत्र सुनें। मुख्य धेनुओं द्वारा वाग्देवी भी हमारा पालन करें।

६ प्रजा-रक्षक सविता, हमारी प्रार्थनाके अनुसार, अपना मनोहर धन दें। ओजस्वी स्तोता हमारी रक्षाके लिये भग नामके देवताको बार-बार बुलाते हैं। असमर्थ स्तोता रत्न माँगता है।

७ यज्ञ-कालीन हमारे स्तोत्रोंमें मित-द्रव, मित-मार्ग और शोभन अन्नवाले वाजी नामके देवगण हमारे लिये सुख-प्रद हों। ये वाजी देवगण अदाता (चोर); हन्ता और राक्षसोंको मारते हुए सारे पुराने रोगोंको हमसे अलग करें।

वाजे वाजेवत वाजिनो नो धनेषु विप्रा अमृता ऋतज्ञाः ।
अस्य मध्वः पिबत मादयध्वं तृप्ता यात पथिभिर्देवयानैः ॥८॥



३६ सूक्त

विश्वदेवगण देवता। वसिष्ठ ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

ऊर्ध्वो अग्निः सुमतिं वस्वो अश्रेत् प्रतीची जूर्णिर्देवतातिमेति ।
भेजाते अद्री रथ्येव पन्थामृतं होता न इषितो यजाति ॥१॥
प्र वावृजे सुप्रया बर्हिरेषामा विश्पतीव बीरिट इयाते ।
विशामक्तोरुषसः पूर्वहूतौ वायुः पूषा स्वस्तये नियुत्वान् ॥२॥
जमया अत्र वसवो रन्त देवा उरावन्तरिक्षे मर्जयन्त शुभ्राः ।
अर्वाक् पथ उरुज्रयः कृणुध्वं श्रोता दूतस्य जग्मुषो नो अस्य ॥३॥

८ वाजी देवगण, तुमलोग मेधावी, अमर और सत्य-ज्ञाता होकर धनके निमित्त-अ… युद्धोंमें हमारा पालन करो। इस सोमको पियो और प्रमत्त होओ। अनन्तर तृप्त होकर दे…को मार्गसे जाओ।



१ अग्नि ऊपर उठकर स्तोताकी शोभन स्तुतिका आश्रय करें। सबको बुढ़ापा दे… उषा देवी पूर्वाभिमुखी होकर यज्ञमें गमन करें। आदरसे युक्त पत्नी और यजमान, रथियों… यज्ञ-मार्गका आश्रय करते हैं। हमारा भेजा हुआ होता यज्ञ करता है।

२ इन यजमानोंका अन्न-युक्त कुश पाया जाता है। इस समय प्रजापालक और … वायु और पूषा, प्रजाके मङ्गलके लिये, रात्रिकी उषाके पहलेका आह्वान सुनकर अन्तरीक्ष…

३ इस यज्ञमें वसुगण पृथिवीपर रमण कर। विस्तीर्ण अन्तरीक्षमें स्थित और … मरुद्गण सेवित होते हैं। हे प्रभूतगामी वसुओ और मरुतो, अपना गन्तव्य पथ हमार… करो। हमारा दूत तुमलोगोंके पास गया है। उसका आह्वान सुनना।

ते हि यज्ञेषु यज्ञियास ऊमाः सधस्थं विश्वे अभि सन्ति देवाः ।
ताँ अध्वर उशतो यक्ष्यग्ने श्रुष्टी भगं नासत्या पुरन्धिम् ॥४॥
आग्ने गिरो दिव आ पृथिव्या मित्रं वह वरुणमिन्द्रमग्निम् ।
आर्यमणमदितिं विष्णुमेषां सरस्वती मरुतो मादयन्ताम् ॥५॥
ररे हव्यं मतिभिर्यज्ञियानां नक्षत्कामं मर्त्यानामसिन्वन् ।
धाता रयिमविदस्यं सदासां सक्षीमहि युज्येभिर्नु देवैः ॥६॥
नू रोदसी अभिष्टुते वसिष्ठैर्ऋतावानो वरुणो मित्रो अग्निः ।
यच्छन्तु चन्द्रा उपमं नो अर्कं यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥७॥



४ प्रख्यात, यजनीय और रक्षक विश्वदेवगण यज्ञ-स्थानमें आते हैं। अग्नि, हमारे यज्ञमें हमारे अभिलाषी देवोंके लिये यज्ञ करो। भग, अश्विनीकुमारों और इन्द्रकी शीघ्र पूजा करो।

५ अग्नि, तुम द्युलोकसे स्तुति-योग्य मित्र, वरुण, इन्द्र, अग्नि, अर्यमा, अदिति और विष्णुको हमारे यज्ञमें बुलाओ। पृथिवीसे भी बुलाओ। सरस्वती और मरुद्गण हृष्ट हो।

६ हम यजनीय देवोंके लिये स्तुतिके साथ हव्य प्रदान करते हैं। अग्नि हमारी अभिलाषाके प्रतिबन्धक न होकर यज्ञको व्याप्त करते हैं। देवों, तुम ग्राह्य और सदा संभजनीय धन दो। आज हम सहायक देवोंसे मिलेंगे।

७ वसिष्ठोंके द्वारा आज द्यावापृथिवी भली भाँति स्तुत हुए। यज्ञसे युक्त वरुण, इन्द्र और अग्नि भी स्तुत हुए। आह्लादकारी देवगण हमें पूजनीय और सर्वोत्तम अन्न प्रदान करें। तुम हमें सदा स्वस्ति द्वारा पालन करो।



४० सूक्त

विश्वदेवगण देवता। वसिष्ठ ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

ओ श्रुष्टिर्विदथ्या समेतु प्रति स्तोमं दधीमहि तुराणाम् ।
यदद्य देवः सविता सुवाति स्यामास्य रत्निनो विभागे ॥१॥
मित्रस्तन्नो वरुणो रोदसी च द्युभक्तमिन्द्रो अर्यमा ददातु ।
दिदेष्टु देव्यदिती रेक्णो वायुश्च यन्नियुवैते भगश्च ॥२॥
सेदुग्रो अस्तु मरुतः स शुष्मी यं मर्त्यं पृषदश्वा अवाथ ।
उतेमग्निः सरस्वती जुनन्ति न तस्य रायः पर्येतास्ति ॥३॥
अयं हि नेता वरुण ऋतस्य मित्रो राजानो अर्यमापो धुः ।
सुहवा देव्यदितिरनर्वा ते नो अंहो अति पर्षन्नरिष्टान् ॥४॥

---

१ देवो, तुम्हारा चित्त द्वारा सम्पादनीय सुख हमारे पास आवे। हम वेगवान् देवोंके स्तोत्र करते हैं। इस समय जो धन सविता भेजेंगे, हम रत्नवाले सविताके उसी धनको करेंगे।

२ मित्र, वरुण और द्यावापृथिवी हमें वही प्रसिद्ध धन दें। इन्द्र और अर्यमा हमें प्र मान स्तोताओं द्वारा सेवित धन दें। वायु और भग हमारे लिये जिस धनकी योजना हैं, देवी अदिति उसी धनको हमें दें।

३ पृषत् नामक अश्ववाले मरुतो, जिस मनुष्यकी तुम रक्षा करते हो, वही ओजस्वी बलवान् हो। अग्नि और सरस्वती आदि देवगण यजमानको प्रवर्त्तित करते हैं। इस यज धनका कोई विघातक नहीं है।

४ यज्ञके प्रापक ये वरुण, मित्र और अर्यमा सबकी शक्तिसे युक्त हैं। ये हमारा धारण करते हैं। न रोकी गयी और प्रकाशमाना अदिति शोभन आह्वानवाली हैं। हमें बाधा न हो, इस प्रकार पापसे हमें ये सब देव बचावें।

अस्य देवस्य मीह्लुषो वया विष्णोरेषस्य प्रभृथेहविर्भिः ।
विदे हि रुद्रो रुद्रियं महित्वं यासिष्टं वर्तिरश्विनाविरावत् ॥५॥
मात्र पूषन्नाघृण इरस्यो वरूत्री यद्रातिषाचश्च रासन् ।
मयो भुवो नो अर्वन्तो नि पान्तु वृष्टिं परिज्मा वातो ददातु ॥६॥
नू रोदसी अभिष्टुते वसिष्ठैर्ऋतावानो वरुणो मित्रो अग्निः ।
यच्छन्तु चन्द्रा उपमं नो अर्कं यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥७॥



४१ सूक्त

१ म ऋक्के इन्द्रादि देवता, २ य—५ मके भग देवता और ७ मकी उषा देवता। इस सूक्तका नाम भग-सूक्त है। वसिष्ठ ऋषि। जगती और त्रिष्टुप् छन्द।

प्रातरग्निं प्रातरिन्द्रं हवामहे प्रातर्मित्रावरुणा प्रातरश्विना ।
प्रातर्भगं पूषणं ब्रह्मणस्पतिं प्रातः सोममुत रुद्रं हुवेम ॥१॥

५ अन्य देवगण यज्ञमें हव्य द्वारा प्रापणीय और अभीष्टदाता विष्णुके अंश-रूप हैं। रुद्र अपनी महिमा प्रदान करें। अश्विनीकुमारो, तुम हमारे हव्यवाले गृहमें आओ।

६ सबकी वरणीया सरस्वती और दान-निपुणा देवपत्नियाँ जो धन हमें देती हैं, उसमें, हे दीप्तिवाले पूषन्, बाधा नहीं देना। सुखप्रद और गतिशील देवगण हमें पालन करें। सर्वत्र-गामी वायु वृष्टिका जल प्रदान करें।

७ आज देवोंके द्वारा द्यावापृथिवी भली भाँति स्तुत हुई। यज्ञवाले वरुण, इन्द्र और अग्नि भी स्तुत हुए। आह्लादकारी देवगण हमें पूजनीय और सर्वोत्तम अन्न प्रदान करें। तुम सदा हमें स्वस्ति द्वारा पालन करो।



१ हम प्रातःकाल अग्नि, इन्द्र, मित्र और वरुणको बुलाते हैं तथा प्रातःकाल अश्विनी-कुमारोंकी स्तुति करते हैं। प्रातःकाल भग, पूषा, ब्रह्मणस्पति, सोम और रुद्रकी स्तुति करते हैं।

प्रातर्जितं भगमुग्रं हुवेम वयं पुत्रमदितेर्यो विधर्ता ।
आध्रश्चिद्यं मन्यमानस्तुरश्चिद्राजा चिद्यं भगं भक्षीत्याह ॥२॥
भग प्रणेतर्भग सत्यराधो भगेमां धियमुदवा ददन्नः ।
भग प्र णो जनय गोभिरश्वैर्भग प्र नृभिर्नृवन्तः स्याम ॥३॥
उतेदानीं भगवन्तः स्यामोत प्रपित्व उत मध्ये अह्नाम् ।
उतोदिता मघवन्त्सूर्यस्य वयं देवानां सुमतौ स्याम ॥४॥
भग एव भगवाँ अस्तु देवास्ते न वयं भगवन्तः स्याम ।
तं त्वा भग सर्व इज्जोहवीति स नो भग पुरएता भवेह ॥५॥
समध्वरायोषसो नमन्त दधिक्रावेव शुचये पदाय ।
अर्वाचीनं वसुविदं भगं नो रथमिवाश्वा वाजिन आ वहन्तु ॥६॥

---

२ जो संसारके धारक, जय-शील और उग्र अदितिके पुत्र हैं, उन्हीं भग देवताको प्रातःकाल बुलाते हैं। दरिद्र स्तोता और धनी राजा दोनों ही भग देवताकी स्तुति करते हुए "भोग-योग्य धन दो" की याचना करते हैं।

३ भग, तुम उत्तम नेता हो। भग, तुम सत्य धन हो। हमें तुम अभिलषित वस्तु देकर हमारी स्तुति सफल करो। भग, तुम हमें गौ और अश्व द्वारा प्रवर्द्धित करो। भग, पुत्रादि द्वारा मनुष्यवान् बनेंगे।

४ हम इस समय भगवान् (तुम्हारे) हों, दिनके प्रारम्भ और मध्यमें भी भगवान्, धनी भग देव, सूर्योदयके समय हम इन्द्र आदिका अनुग्रह प्राप्त करें।

५ देवो, भग ही भगवान् हों। हम भगके अनुग्रहसे ही भगवान् हों। भग, सब लोग बार-बार बुलाते हैं। भग, तुम इस यज्ञमें हमारे अग्रगामी बनो।

६ शुद्ध स्थानके लिये दधिक्रावाकी तरह उषा देवता हमारे यज्ञमें आवें। वेगशाली अश्व रथकी तरह उषा देवता धनदाता भगदेवको हमारे सामने ले आवें।

अश्वावतीर्गोमतीर्न उषासो वीरवतीः सदमुच्छन्तु भद्राः ।
घृतं दुहाना विश्वतः प्रपीता यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥७



४२ सूक्त

विश्वदेवगण देवता । वसिष्ठ ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

प्र ब्रह्माणो अङ्गिरसो नक्षन्त प्र क्रन्दनुर्नभन्यस्य वेतु ।
प्र धेनव उदप्रुतो नवन्त युज्यातामद्री अध्वरस्य पेशः ॥१॥
सुगस्ते अग्ने सनवित्तो अध्वा युक्ष्वा सुते हरितो रोहितश्च ।
ये वा सद्मन्नरुषा वीरवाहो हुवे देवानां जनिमानि सत्तः ॥२॥
समु वो यज्ञं महयन्नमोभिः प्र होता मन्द्रो रिरिच उपाके ।
यजस्व सु पुर्वणीक देवाना यज्ञियामरमतिं ववृत्याः ॥३॥

७ सारे गुणोंसे प्रवृद्ध और भजनीय उषा देवता अश्व, गौ और वीर पुरुषसे युक्त होकर तथा जल-सेचन करके सदा हमारे रात्रि-जात अन्धकारको नाश करें । तुम सदा हमें स्वस्ति द्वारा पालन करो ।

१ स्तोता (ब्राह्मण) अङ्गिरा लोग सर्वत्र व्याप्त हों । पर्जन्य हमारे स्तोत्रकी अभिलाषा विशेष रूपसे करें । प्रसन्नता-दायिका नदियाँ जल-सेचन करते हुए गमन करें । आदर-सम्पन्ना पत्नी और यजमान यज्ञके रूपकी योजना कर ।

२ अग्नि, तुम्हारा चिर-प्राप्त पथ सुगम हो । जो श्याम और लोहित वर्णके अश्व यज्ञ-गृहमें तुम्हारे समान वीरको ले जाते हुए शोभा पाते हैं, उन्हें रथमें योजित करो । मैं यज्ञ-गृहमें बैठकर देवोंको बुलाता हूँ ।

३ देवो, नमस्कारवाले ये स्तोता तुम्हारे यज्ञका भली भाँति पूजन करते हैं । हमारे समीपमें रहने वाला होता सर्वोत्तम है । यजमान, देवोंका यज्ञ भली भाँति करो । बहुत तेजवाले, तुम भूमिको आवर्तित करो ।

यदा वीरस्य रेवतो दुरोणे स्योनशीरतिथिराचिकेतत् ।
सुप्रीतो अग्निः सुधितो दम आ स विशे दाति वार्यमियत्यै ॥४॥
इमं नो अग्ने अध्वरं जुषस्व मरुत्स्विन्द्रे यशसं कृधी नः ।
आ नक्ता बर्हिः सदतामुषासोशन्ता मित्रावरुणा यजेह ॥५॥
एवाग्निं सहस्यं वसिष्ठो रायस्कामो विश्वप्स्न्यस्य स्तौत् ।
इषं रयिं पप्रथद्वाजमस्मे यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥६॥



४३ सूक्त

विश्वदेवगण देवता। वसिष्ठ ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

प्र वो यज्ञेषु देवयन्तो अर्चन्द्यावा नमोभिः पृथिवी इषध्यै ।
येषां ब्रह्माण्यसमानि विप्रा विष्वग्वियन्ति वनिनो न शाखाः ॥१॥

४ सबके अतिथि अग्नि जिस समय वीर और धनीके गृहमें सुखसे सोये हुए देखे जाते हैं, जिस समय अग्नि घरमें भली भाँति निहित होकर प्रसन्न होते हैं, उस समय वह समीपवर्त्ती प्र वरणीय धन देते हैं।

५ अग्नि, हमारे इस यज्ञकी सेवा करो। इन्द्र और मरुतोंके बीच हमें यशस्वी बनाओ। रात्रि उषाके कालमें कुशोंपर बैठो। यज्ञाभिलाषी मित्र और वरुणकी इस यज्ञमें पूजा करो।

६ धन-कामी होकर वसिष्ठने, इसी प्रकार, बल-पुत्र अग्निकी, बहुरूपवाले धनकी प्राप्तिके स्तुति की थी। अग्नि हमें अन्न, बल और धन दें। तुम हमें सदा स्वस्ति द्वारा पालन करो।



१ वृक्ष-शाखाकी तरह जिन मेधावियोंके स्तोत्र सब ओर जाते हैं, वे ही देव-कामी यज्ञमें नम (वा स्तुति) द्वारा तुम्हें पानेके लिये, विशेष रूपसे, स्तुति करते हैं। वे द्यावापृथिवीकी भी करते हैं।

प्र यज्ञ एतु हेत्वो न सप्तिरुद्यच्छध्वं समनसो घृताचीः ।
स्तृणीत बर्हिरध्वराय साधूर्ध्वा शोचींषि देवयून्यस्थुः ॥२॥
आ पुत्रासो न मातरं विभृत्राः सानौ देवासो बर्हिषः सदन्तु ।
आ विश्वाची विदथ्यामनक्त्वग्ने मा नो देवताता मृधस्कः ॥३॥
ते सीषपन्त जोषमा यजत्रा ऋतस्य धाराः सुदुघा दुहानाः ।
जेष्ठं वो अद्य मह आ वसूनामा गन्तन समनसो यतिष्ठ ॥४॥
एवा नो अग्ने विक्ष्वा दशस्य त्वया वयं सहसावन्नस्क्राः ।
राया युजा सधमादो अरिष्टा यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥५॥



४४ सूक्त

दधिक्रा देवता । वसिष्ठ ऋषि । जगती और त्रिष्टुप् छन्द ।

दधिक्रां वः प्रथममश्विनोषसमग्निं समिद्धं भगमूतये हुवे ।
इन्द्रं विष्णुं पूषणं ब्रह्मणस्पतिमादित्यान्द्यावापृथिवी अपः स्वः ॥१॥

२ शीघ्र-गामी अश्वकी तरह इस यज्ञमें जाओ । समान मनसे तुम घी बहानेवाली स्त्रुक्को उठाओ । यज्ञके लिये बढ़िया कुश बिछाओ । अग्नि, तुम्हारी देवकामी किरणें ऊर्द्ध्व-मुख रहें ।

३ विशेष रूपसे प्रतिपालनीय पुत्र जैसे माताकी गोदमें बैठते हैं, वैसे ही देवगण यज्ञके उन्नत स्थानपर विराजें । अग्नि, जुहू तुम्हारी यजनीय ज्वालाको भली भाँति सींचे । युद्धमें तुम हमारे शत्रुओंकी सहायता नहीं करना ।

४ यजनीय देवगण जलकी दूहने योग्य धाराको बरसाते हुए यथेष्ट रूपसे हमारी सेवाको स्वीकार करें । देवो, आज धनोंमें जो पूज्य धन है, वह आवे । एक मन होकर तुम भी आओ ।

५ अग्नि, इसी प्रकार तुम प्रजामेंसे हमें धन दो । बली अग्नि, तुम्हारे द्वारा हम छोड़े न जाकर नित्य-युक्त धनके साथ मत्त और अहिंसित हों । तुम सदा हमें स्वस्ति द्वारा पालन करो ।

—o—

१ तुम्हारी रक्षाके लिये पहले मैं दधिक्रा (अश्वाभिमानी) देवको बुलाता हूँ । इसके पश्चा अश्वि-द्वय, उषा, समिद्ध अग्नि और भग देवताका आह्वान करता हूँ । इन्द्र, विष्णु, पूषा, ब्रह्मणस्पति, आदित्यगण, द्यावापृथिवी, जल-देवता और सूर्यको बुलाता हूँ ।

दधिक्रामु नमसा बोधयन्त उदीराणा यज्ञमुप प्रयन्तः ।
इळां देवीं बर्हिषि सादयन्तोऽश्विना विप्रा सुहवा हुवेम ॥२॥
दधिक्रावाणं बुबुधानो अग्निमुप ब्रुव उषसं सूर्यं गाम् ।
ब्रध्नं मंश्चतोर्वरुणस्य बभ्रुं ते विश्वास्मद्दुरिता यावयन्तु ॥३॥
दधिक्रावा प्रथमो वाज्यर्वाग्रे रथानां भवति प्रजानन् ।
संविदान उषसा सूर्येणादित्येभिर्वसुभिरङ्गिरोभिः ॥४॥
आ नो दधिक्राः पथ्यामनक्त्वृतस्य पन्थामन्वेतवा उ ।
शृणोतु नो दैव्यं शर्धो अग्निः शृण्वन्तु विश्वे महिषा अमूराः ॥५॥



४५ सूक्त

सविता देवता । वसिष्ठ ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

आ देवो यातु सविता सुरत्नोऽन्तरिक्षप्रा वहमानो अश्वैः ।
हस्ते दधानो नर्या पुरूणि निवेशयन् च प्रसुवन् च भूम ॥१॥

२ यज्ञके प्रारम्भमें हम स्तोत्र द्वारा दधिक्रा देवताको प्रबोधित और प्रवर्त्तित करते हुए और देवी (हवीरूपा देवी) को स्थापित करते हुए शोभन आह्वानसे सम्पन्न मेधावी अश्वि-द्वय बुलाते हैं ।

३ दधिक्राको प्रबोधित करके मैं अग्नि, उषा, सूर्य और वाग्देवता (वा भूमि) की स्तुति करता हूँ । मैं अभिमानियोंके विनाशकारी वरुणके महान् पिङ्गल वर्ण अश्वकी स्तुति करता हूँ । वे सब गण सारे पापोंको मुझसे अलग करें ।

४ अश्वोंमें मुख्य, शीघ्रगामी और गति-शील दधिक्रा ज्ञातव्यको भलीभाँति जानकर उषा, आदित्यगण, वसुगण और अङ्गिरा लोगोंके साथ सहमत होकर स्वयम् रथके अग्र भागमें लगते



१ रत्न-युक्त, अपने तेजसे अन्तरीक्षके पूरक और अपने अश्वों द्वारा ढोये जाते हुए सविता मनुष्यके लिये हितकर प्रभूत धन, हाथमें, धारण करते हुए, प्राणियोंको अपने स्थानमें धारण अपने कर्ममें प्रेरित करते हुए आवें ।

उदस्य बाहू शिथिरा बृहन्ता हिरण्यया दिवो अन्ताँ अनष्टा ।
नूनं सो अस्य महिमा पनिष्ट सूरश्चिदस्मा अनु दादपस्या ॥२॥
स घा नो देवः सविता सहावा साविषद्वसुपतिर्वसूनि ।
विश्रयमाणो अमतिमुरूचीं मर्तभोजनमध रासते नः ॥३॥
इमा गिरः सवितारं सुजिह्वं पूर्णगभस्तिमीलते सुपाणिम् ।
चित्रं वयो बृहदस्मे दधातु यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥४॥



४६ सूक्त

रुद्र देवता । वसिष्ठ ऋषि । जगती और त्रिष्टुप् छन्द ।

इमा रुद्राय स्थिरधन्वने गिरः क्षिप्रेषवे देवाय स्वधान्वे ।
अषाह्लाय सहमानाय वेधसे तिग्मायुधाय भरता शृणोतु नः ॥१॥

२ दानके लिये प्रसारित और विशाल हिरण्मय बाहुओं द्वारा सविता अन्तरीक्षके अन्तको व्याप्त करें । आज हम सविताकी उसी महिमाकी स्तुति करते हैं । सूर्य भी सविता (सूर्यकी तीक्ष्ण शक्ति देव)को कर्मेच्छा दें ।

३ तेजस्वी और धनाधिपति सविता देव ही हमारे लिये धन भेजें । वह बहु विस्तीर्ण रूपको धारण करते हुए हमें मनुष्योंके भोग-योग्य धन दें ।

४ ये स्तोत्र-रूप वचन (वा प्रजाएँ)उत्तम जिह्वावाले, धन-सम्पन्न और सुन्दर हाथवाले सविता देवताकी स्तुति करते हैं । वह हमें विचित्र और विशाल अन्न दें । तुम हमें सदा स्वस्ति द्वारा पालन करो ।



१ दृढ़-धनुष्क, शीघ्रगामी बाणवाले, अन्नवाले, किसीके लिये भी अजेय तथा सबके विजेता और तीक्ष्ण अस्त्र बनानेवाले रुद्रको स्तुति करो । वह सुनें ।

सहि क्षयेण क्षम्यस्य जन्मनः साम्राज्येन दिव्यस्य चेतति ।
अवन्नवन्तीरुप नो दुरश्चरानमीवो रुद्र जासुनो भव ॥२॥
या ते दिद्युदवसृष्टा दिवस्परि क्ष्मया चरति परिसा वृणक्तु नः ।
सहस्रन्ते स्वपिवात भेषजा मा नस्तोकेष तनयेषु रीरिषः ॥३॥
मा नो वधी रुद्र मा परा दा मा ते भूम प्रसितौ हीलितस्य ।
आ नो भज बर्हिषि जीवशंसे यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥४॥



४७ सूक्त

अप् (जल) देवता। वसिष्ठ ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

आपो यं वः प्रथमं देवयन्त इन्द्रपानमूर्मिमकृणवतेलः ।
तं वो वयं शुचिमरिप्रमद्य घृतप्रुषं मधुमन्तं वनेम ॥१॥

२ पृथिवीस्थ और स्वर्गस्थ मनुष्यके ऐश्वर्य द्वारा उन्हें जाना सकता है। रुद्र, तुम्हारा करनेवाली (हमारी) प्रजाका पालन करते हुए हमारे घरमें जाओ। हमें रोग नहीं देना।

३ रुद्र, अन्तरीक्षसे छोड़ी गयी जो तुम्हारी बिजली पृथिवीपर विचरण करती है हमें छोड़ दे। हे स्वपिवात रुद्र, तुम्हारे पास हजारों औषधियाँ हैं। हमारे पुत्र या पौत्रको नहीं करना।

४ रुद्र, न हमें मारना, न छोड़ना। तुम क्रोध करने पर जो बन्धन करते हो, उसमें हम प्राणियोंके प्रशस्य यज्ञका हमें भागी बनाओ। तुम सदा हमें स्वस्ति द्वारा पालन करो।



१ हे अप् देवता, देवेच्छुक अध्वर्युओंके द्वारा इन्द्रके लिये पीने योग्य और भूमि-समुत्पन्न लोगोंका सोमरस पहले संस्कृत किया गया है, उसी शुद्ध, निष्पाप, वृष्टि-जल-सेवनकारी रससे युक्त सोमरसका हम भी सेवन करेंगे।

तमूर्मिमापो मधुमत्तमं वोऽपां नपादवत्वाशुहेमा ।
यस्मिन्निन्द्रो वसुभिर्मादयाते तमश्याम देवयन्तो वो अद्य ॥२॥
शतपवित्राः स्वधयामदन्तीर्देवीर्देवानामपि यन्ति पाथः ।
ता इन्द्रस्य न मिनन्ति व्रतानि सिन्धुभ्यो हव्यं घृतवज्जुहोत ॥३॥
याः सूर्यो रश्मिभिराततान याभ्य इन्द्रो अरदद्गातुमूर्मिम् ।
ते सिन्धवो वरिवो धातना नो यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥४॥



४८ सूक्त

ऋभु देवता । वसिष्ठ ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

ऋभुक्षणो वाजा मादयध्वमस्मे नरो मघवानः सुतस्य ।
आ वोऽर्वाचः क्रतवो न यातां विभ्वो रथं नर्यं वर्तयन्तु ॥१॥

---

२ शीघ्र-गति "अपां नपात्" (अग्नि) देवता तुम्हारे उस रसवत्तम सोमरसका पालन कर। वसुओंके साथ इन्द्र जिसमें मत्त होते हैं, तुम्हारे उसी सोमरसको हम देवाभिलाषी होकर आज प्राप्त करेंगे।

३ अनेक पावन रूपोंवाले और लोगोंमें हर्षोत्पादक तथा प्रकाशमान जल-देवता देवोंके स्थानोंमें प्रवेश करते हैं। वे इन्द्रके यज्ञादि कर्मोंकी हिंसा नहीं करते। अध्वर्युओ, तुम सिन्धु आदिके लिये घृत-युक्त हव्यका होम करो।

४ सूर्य, किरणों द्वारा, जिन जलोंका विस्तार करते हैं और जिनके लिये इन्द्रने गमनीय पथको विदीर्ण किया है, हे सिन्धुगण वे ही तुमलोग हमारा धन धारण करो। तुम सदा हमें स्वस्ति द्वारा पालन करो।



१ नेता और धनवान् ऋभुओ, हमारे सोमपानसे तुम मत्त होओ। तुमलोग जा रहे हो। तुम्हारे कर्म-कर्त्ता और समर्थ अश्व हमारे अभिमुख होकर मनुष्योंके लिये हितकर रथ आवर्त्तित करें।

ऋभुर्ऋभुभिरभि वः स्याम विभ्वो विभुभिः शवसा शवांसि ।
वाजो अस्माँ अवतु वाजसाताविन्द्रेण युजा तरुषेम वृत्रम् ॥२॥
ते चिद्धि पूर्वीरभि सन्ति शासा विश्वाँ अर्य उपरतातिवन्वन् ।
इन्द्रो विभ्वाँ ऋभुक्षा वाजो अर्यः शत्रोर्मिथत्या कृणवन्वि नृम्णम् ॥३॥
नू देवासो वरिवः कर्तना नो भूत नो विश्वेवसे सजोषाः ।
समस्मे इषं वसवो ददीरन्यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥४॥



४९ सूक्त

अप् देवता। वसिष्ठ ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

समुद्रज्येष्ठाः सलिलस्य मध्यात्पुनाना यन्त्यनिविशमानाः ।
इन्द्रो या वज्री वृषभो रराद ता आपो देवीरिह मामवन्तु ॥१॥

---

२ हम तुम्हारे द्वारा विभु (प्रथित) हैं। तुमलोग समर्थ हो। हम तुम्हारी सहायतासे होकर तुम्हारे बल द्वारा शत्रुओंको दबावेंगे। वाज नामके ऋभु युद्धमें हमारी रक्षा करें। सहायक पाकर हम वृत्रके हाथसे बच जायँगे।

३ हमारी अनेक शत्रु-सेनाओंको इन्द्र और ऋभुगण आयुध द्वारा पराजित करते हैं होनेपर वे सारे शत्रुओंको मारते हैं। विभ्वा, ऋभुक्षा और वाज नामके तीनों ऋभु और इन्द्र-मन्थन द्वारा शत्रु-बलको विनष्ट करेंगे।

४ प्रकाशक ऋभुओ, तुम आज हमें धन दो। हे समस्त ऋभुओ, प्रसन्न तुम हमारे रक्षक होओ। प्रशस्य ऋभुगण हमें अन्न प्रदान करें। तुम सदा हमें (कल्याण) द्वारा पालन करो।



१ जिन जलोंमें समुद्र ज्येष्ठ है, वे सदा गमन-शील और शोधक जल समूह (अ अन्तरीक्षके बीचसे जाते हैं। वज्रधर और अभीष्टवर्षक इन्द्रने जिनको छोड़ दिया था, वे यहाँ हमारी रक्षा करें।

या आपो दिव्या उत वा स्रवन्ति खनित्रिमा उत वा याः स्वयञाः ।
समुद्रार्था याः शुचयः पावकास्ता आपो देवीरिह मामवन्तु ॥२॥
यासां राजा वरुणो याति मध्ये सत्यानृते अवपश्यञ्जनानाम् ।
मधुश्चुतः शुचयो याः पावकास्ता आपो देवीरिह मामवन्तु ॥३॥
यासु राजा वरुणो यासु सोमो विश्वेदेवा यासूर्जं मदन्ति ।
वैश्वानरो यास्वग्निः प्रविष्टस्ता आपो देवीरिह मामवन्तु ॥४॥



५० सूक्त

प्रथमके मित्र और वरुण देवता, द्वितीयके अग्नि, तृतीयके वश्वानर और चतुर्थकी नदी देवता हैं। वसिष्ठ ऋषि। जगती, शक्करी और अतिजगती छन्द।

आ मां मित्रावरुणेह रक्षतं कुलाययद्विश्वयन्मा न आ गन् ।
अजकावं दुर्दृशीकं तिरो दधे मा मां पद्येन रपसा विदत्त्सरुः ॥१॥

---

२ जो जल अन्तरीक्षमें उत्पन्न होते हैं, जो नदी आदिमें प्रवाहित होते हैं, जो खोद कर निकाले जाते हैं और जो स्वयं उत्पन्न होकर समुद्रकी ओर जाते हैं, वे ही दीप्तिसे युक्त और पवित्र (देवी-स्वरूप) जल हमारी रक्षा करें।

३ जिनके स्वामी वरुणदेव जल-समूहमें सत्य और मिथ्याके साक्षी होकर मध्यम लोकमें जाते हैं, वे ही रस गिरानेवाली, प्रकाशसे युक्त और शोधिका जल-देवियाँ हमारी रक्षा करें।

४ जिनमें राजा वरुण निवास करते हैं, जिनसे सोम रहता है. जिनमें अन्न पाकर विश्व-देवगण प्रमत्त होते हैं और जिनमें वैश्वानर पैठते हैं, वे ही प्रकाशक जल (अप् देवता) हमारी रक्षा करें।



१ मित्र और वरुण, इस लोकमें तुम हमारी रक्षा करो। स्थानकारी और विशेष वर्द्धमान विष हमारी ओर न आवे। अजका (कदाचित् स्तनाकृति) नामक रोगकी तरह दुर्दर्शन विष विनष्ट हो। छद्मगामी सर्प हमें पद-ध्वनिसे न पहचान सके।

यद्विजामन् परुषिवन्दनं भुवदष्ठीवन्तौ परि कुल्फौ च देहत् ।
अग्निष्टच्छोचन्नप बाधतामितो मा मां पद्येन रपसा विदत्त्सरुः ॥२॥
यच्छल्मलौ भवति यन्नदीषु यदोषधीभ्यः परि जायते विषम् ।
विश्वे देवा निरितस्तत्सुवन्तु मा मां पद्येन रपसा विदत्त्सरुः ॥३॥
याः प्रवतो निवत उद्वत उदन्वतीरनुदकाश्च याः ।
ता अस्मभ्यं पयसा पिन्वमानाः शिवा देवीरशिपदा
भवन्तु सर्वा नद्यो अशिमिदा भवन्तु ॥४॥



५१ सूक्त

आदित्य देवता । वसिष्ठ ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

आदित्यानामवसा नूतनेन सक्षीमहि शर्मणा शन्तमेन ।
अनागास्त्वे अदितित्वे तुरास इमं यज्ञन्दधतु श्रोषमाणाः ॥१॥

---

२ जो वन्दन नामका विष नाना जन्मोंमें वृक्षादिके ग्रन्थि-स्थानमें उत्पन्न होता है और विष जानु (घुटना) और गुल्फ (पाद-ग्रन्थि) को फुला देता है, दीप्तिमान् अग्निदेव, हमारे मनुष्यसे उस विषको दूर करो। छद्मगामी सर्प पद-ध्वनि द्वारा हमें जानने न पावे।

३ जो विष शाल्मली (वा वक्षःस्थान) में होता है और जो नदी-जलमें ओषधियोंसे होता है, विश्वदेवगण, उस विषको हमसे दूर कर दो। छद्मगामी सर्प पद-ध्वनि द्वारा जानने न पावे।

४ जो नदियाँ प्रवल (वा प्रवण) देशमें जाती हैं, जो निम्न देशमें जाती हैं, जो देशमें जाती हैं, जो जल-युक्त और जल-शून्य होकर संसारको आप्यायित (तृप्त) करती सारी प्रकाशक नदियाँ हमारे शिपद नामक रोगका निवारण करके कल्याणकारिणी नदियाँ अहिंसक हों।

---

१ हम आदित्योंके रक्षण द्वारा नवीन और सुखकर गृह प्राप्त करें। क्षिप्रकारी आदित्यगण स्तोत्र सुनकर इस यज्ञ-कर्ताको निरपराध और अदरिद्र कर दें।

आदित्यासो अदितिर्मादयन्तां मित्रो अर्यमा वरुणो रजिष्ठाः ।
अस्माकं सन्तु भुवनस्य गोपाः पिबन्तु सोममवसे नो अद्य ॥२॥
आदित्या विश्वे मरुतश्च विश्वे देवाश्च विश्व ऋभवश्च विश्वे ।
इन्द्रो अग्निरश्विना तुष्टुवाना यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥३॥



५२ सूक्त

आदित्य देवता। वसिष्ठ ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

आदित्यासो अदितयः स्याम पूर्देवत्रा वसवो मर्त्यत्रा ।
सनेम मित्रावरुणा सनन्तो भवेम द्यावापृथिवी भवन्तः ॥१॥
मित्रस्तन्नो वरुणो मामहन्त शर्म तोकाय तनयाय गोपाः ।
मा वो भुजेमान्यजातमेनो मा तत्कर्म वसवो यच्चयध्वे ॥२॥

२ आदित्यगण, अदिति, अत्यन्त सरल-स्वभाव मित्र, वरुण और अर्यमा प्रमत्त हों। भुवन-रक्षक देवगण हमारे रक्षक हों। वे आज हमारी रक्षाके लिये सोमपान करें।

३ हमने समस्त आदित्यगग (१२), समस्त मरुद्गण (४६), समस्त देवगण (३३३३), समस्त ऋभुगण (३), इन्द्र, अग्नि और अश्विनीकुमारोंकी स्तुति की। तुम सदा हमें स्वस्ति द्वारा पालन करो।



१ हम आदित्योंके आत्मीय हैं; हम अखण्डनीय हों। देवोंमें हे वसुओ, मनुष्योंकी तुम रक्षा करो। मित्र और वरुण, तुम्हारा भजन करते हुए हम धनका उपभोग करेंगे। द्यावापृथिवी, हम भूति (शक्ति) वाले हों।

२ मित्र और वरुण (मित्र = उषा और सूर्यकी चालक शक्तिका देवता, वरुण = आकाशका देवता) आदि आदित्यगण हमारे पुत्र और पौत्रको सुख दें। दूसरेका किया पाप हम न भोगें। जिस कर्मको करने पर तुम नाश करते हो, वसुओ, हम वह कर्म न करें।

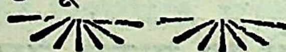
तुरण्यवोऽङ्गिरसो नक्षन्त रत्नं देवस्य सवितुरियानाः ।
पिता च तन्नो महान्यजत्रो विश्वे देवाः समनसो जुषन्त ॥३॥



५३ सूक्त

द्यावापृथिवी देवता। वसिष्ठ ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

प्र द्यावा यज्ञैः पृथिवी नमोभिः सबाध ईळे बृहती यजत्रे ।
ते चिद्धि पूर्वे कवयो गृणन्तः पुरो मही दधिरे देवपुत्रे ॥१॥
प्र पूर्वजे पितरा नव्यसीभिर्गीर्भिः कृणुध्वं सदने ऋतस्य ।
आ नो द्यावापृथिवी दैव्येन जनेन यातं महि वां वरूथम् ॥२॥
उतो हि वां रत्नधेयानि सन्ति पुरूणि द्यावापृथिवी सुदासे ।
अस्मे धत्तं यदसदस्कृधोयु यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥३॥



३ क्षिप्रकारी अङ्गिरा लोगोंने सविताके पास याचना करके सविताके जिस रमणीय ध व्याप्त किया था, उसी धनको यज्ञ-शील महान् पिता (प्रजापति) और सारे देवगण, समाव हमें दें।



१ जिन विशाल और देवोंकी जननी द्यावापृथिवी (द्यौ वा द्यावा = देवलोक और पृथि भूमिकी देवी) को स्तोताओंने, स्तुति करते हुए, आगे स्थापित किया था, मैं उन्हीं यजनीय महती द्यावापृथिवीकी, ऋत्विकोंके बाधा-सहित होकर, यज्ञ और नमस्कारके साथ, करता हूँ।

२ स्तोताओ, तुमलोग नयी स्तुतियों द्वारा पूर्व-ज्ञाता और मातृपितृ-भूता द्यावापृथि यज्ञ-स्थानके अग्रभागमें स्थापित करो। द्यावापृथिवी, अपना महान् और वरणीय धन देवोंके देवोंके साथ, हमारे पास आओ।

३ द्यावापृथिवी, तुम्हारे पास शोभन हवि देनेवाले यजमानके लिये देने योग्य बहुत धन है। धनमें जो धन अक्षय हो, उसे ही हमें देना। तुम हमें सदा कल्याण (स्वस्ति) द्वारा पालन करो।

—०—

५४ सूक्त

वास्तोष्पति देवता। वसिष्ठ ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

वास्तोष्पते प्रति जानीह्यस्मान्त्स्वावेशो अनमीवो भवा नः।
यत्त्वेमहे प्रति तन्नो जुषस्व शं नो भव द्विपदे शं चतुष्पदे ॥१॥
वास्तोष्पते प्रतरणो न एधि गयस्फानो गोभिरश्वेभिरिन्दो।
अजरासस्ते सख्ये स्याम पितेव पुत्रान् प्रति नो जुषस्व ॥२॥
वास्तोष्पते शग्मया संसदा ते सक्षीमहि रण्वया गातुमत्या।
पाहि क्षेम उत योगे वरं नो यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥३॥



५५ सूक्त

वास्तोष्पति और इन्द्र देवता। वसिष्ठ ऋषि। गायत्री, अनुष्टुप् और बृहती छन्द।

अमीवहा वास्तोष्पते विश्वा रूपाण्याविशन्।
सखा सुशेव एधि नः ॥१॥

---

१ हे वास्तोष्पति (गृह-पालक देव), तुम हमें जगाओ। हमारे घरको नीरोग करो। हम जो धन माँगें, वह दो। हमारे पुत्र, पौत्र आदि द्विपदों और गौ, अश्व आदि चतुष्पदोंको सुखी करो।

२ वास्तोष्पति, तुम हमारे और हमारे धनके वर्द्धयिता होओ। सोमकी तरह आह्लादक देव, तुम्हारे सखा होनेपर हम गौओं और अश्वोंवाले और जरारहित होंगे। जैसे पिता पुत्रका पालन करता है, वैसे ही तुम हमारा पालन करो।

३ वास्तोष्पति, हम तुम्हारा सुखकर, रमणीय और धनवान् स्थान प्राप्त करें। तुम हमारे प्राप्त और अप्राप्त वरणीय धनकी रक्षा करो और हमें स्वस्तिके साथ सदा पालन करो।

---

१ वास्तोष्पति, तुम रोग-नाशक हो। सब प्रकारके रूपमें पैठ कर हमारे सखा और सुखकर बनो।

यदर्जुन सारमेय दतः पिशङ्ग यच्छसे ।
वीव भ्राजन्त ऋष्टय उप स्रक्वेषु बप्सतो नि षु स्वप ॥२॥
स्तेनं राय सारमेय तस्करं वा पुनःसर ।
स्तोतॄनिन्द्रस्य रायसि किमस्मान्दुच्छुनायसे नि षु स्वप ॥३॥
त्वं सूकरस्य दर्दृहि तव दर्दर्तु सूकरः ।
स्तोतॄ-निन्द्रस्य रायसि किमस्मान्दुच्छुनायसे निषु स्वप ॥४॥
सस्तु माता सस्तु पिता सस्तु श्वा सस्तु विश्पतिः ।
ससन्तु सर्वे ज्ञातयः सस्त्वयमभितो जनः ॥५॥
य आस्ते यश्च चरति यश्च पश्यति नो जनः ।
तेषां सं हन्मो अक्षाणि यथेदं हर्म्यं तथा ॥६॥
सहस्रशृङ्गो वृषभो यः समुद्रादुदाचरत् ।
तेना सहस्येना वयं नि जनान् स्वापयामसि ॥७॥

---

२ हे श्वेतवर्ण और किसी-किसी अंशमें पिङ्गलवर्ण तथा सरमा (देव-कुकुरी) वंशोद्भूत वास्तोष्पति, जिस समय तुम दाँत निकालते हो, उस समय हमारे पास, समय, ओष्ठ-प्रान्तमें, आयुधकी तरह दाँत विशेष शोभा पाते हैं। इस समय तुम सुखसे

३ हे सारमेय, तुम जिस स्थानमें जाते हो, वहाँ फिर आते हो। तुम स्तेन (चोर) तस्कर (डकैत) के पास जाओ। इन्द्रके स्तोताके पास क्या जाते हो ? हमें क्यों बाधा दे सुखसे सोओ।

४ तुम सूअरको फाड़ो और सूअर तुम्हें फाड़े। इन्द्रके स्तोताओंके पास क्या जाते हमें क्यों बाधा देते हो ? अच्छी तरहसे सोओ।

५ तुम्हारी माता सोवे। तुम्हारे पिता सोवें। कुक्कुर (तुम) सोवो। गृहस्वामी सोवें लोग भी सोवें। चारो ओरके ये मनुष्य भी सोवें।

६ जो व्यक्ति यहाँ है, जो विचरण करता है, जो हमें देखता है, ऐसे सबकी आँखें हम देंगे। जैसे यह हर्म्य (कोठा) निश्चल है, वैसे ही वह भी हो जायँगे।

७ जो सहस्रशृङ्गों वा किरणोंवाले वृषभ (सूर्य) समुद्रसे ऊपर उठे हैं, उन सहायतासे हम सारे मनुष्योंको सुला देंगे।

प्रोष्ठेशया वह्येशया नारीर्यास्तल्पशीवरीः ।
स्त्रियो याः पुण्यगन्धास्ताः सर्वाः स्वापयामसि ।८॥



४ अनुवाक । ५६ सूक्त

मरुत् देवता । वसिष्ठ ऋषि । द्विपदा, विराट् और त्रिष्टुप् छन्द ।

क ईं व्यक्ता नरः सनीला रुद्रस्य मर्या अधा स्वश्वाः ॥१॥
नकिर्ह्येषां जनूंषि वेद ते अङ्ग विद्रे मिथो जनित्रम् ॥२॥
अभि स्वपूभिर्मिथो वपन्त वातस्वनसः श्येना अस्पृध्रन् ॥३॥
एतानि धीरो निण्या चिकेत पृश्निर्यदूधो मही जभार ॥४॥
सा विट् सुवीरा मरुद्भिरस्तु सनात् सहन्ती पुष्यन्ती नृम्णम् ॥५॥

---

८ जो स्त्रियाँ आँगनमें सोनेवाली हैं, जो वाहनपर सोनेवाली हैं, जो तल्प (बिस्तरे) पर सोनेवाली हैं और जो पुण्य-गन्धा हैं, ऐसी सब स्त्रियोंको हम सुला देंगे।



१ कान्तियुक्त नेता, समानगृह-निवासी, महादेवके पुत्र, मनुष्य-हितैषी और सुन्दर अश्ववाले ये रुद्र-पुत्रगण कौन हैं ?

२ इनकी उत्पत्ति कोई नहीं जानता । ये ही परस्पर अपनी जन्म-कथा जानते हैं ।

३ स्वयं ही घूमते हुए ये परस्पर मिलते हैं । वायुके समान वेगशाली श्येन (बाज) पक्षीकी तरह ये परस्पर स्पर्द्धा (होड़) करते हैं ।

४ शास्त्रज्ञ मनुष्य इन श्वेतवर्ण जीवों (मरुतों) को जानते हैं । महती पृश्नि (मरुतोंकी माता) ने इन्हें अन्तरीक्षमें धारण कर रखा है ।

५ वह बुद्धि, मरुतोंके अनुग्रहसे, सदा शत्रुओंको हरानेवाली, धनकी पुष्टि देनेवाली और वीर पुत्रवाली है ।

यामं येष्ठाः शुभा शोभिष्ठाः श्रिया संमिश्ला ओजोभिरुग्राः ॥६॥
उग्रं व ओजः स्थिरा शवांस्यधा मरुद्भिर्गणस्तुविष्मान् ॥७॥
शुभ्रो वः शुष्मः क्रुध्मी मनांसि धुनिर्मुनिरिव शर्धस्य धृष्णोः ॥८॥
सनेम्यस्मद्युयोत दिद्युं मा वो दुर्मतिरिह प्रणङ्नः ॥९॥
प्रिया वो नाम हुवे तुराणामा यत्तृपन् मरुतो वावशानाः ॥१०॥
स्वायुधास इष्मिणः सुनिष्का उत स्वयं तन्वः शुम्भमानाः ॥११॥
शुची वो हव्या मरुतः शुचीनां शुचिं हिनोम्यध्वरं शुचिभ्यः ।
ऋतेन सत्यमृतसाप आयञ्छुचिजन्मानः शुचयः पावकाः ॥१२॥
अंसेष्वा मरुतः खादयो वो वक्षःसु रुक्मा उपशिश्रियाणाः ।
वि विद्युतो न वृष्टिभी रुचाना अनु स्वधामायुधैर्यच्छमानाः ॥१३॥

---

६ मरुत् लोग (जल-वायुके देवता और रुद्रके अनुचर) जानेवाले स्थानोंको सबसे अधिक हैं। वे अलङ्कार द्वारा सबसे अधिक शोभा पाते हैं। वे कान्तिपूर्ण और ओजस्वी हैं।

७ तुम्हारा तेज उग्र है और बल स्थिर। मरुद्गण बुद्धिमान् हों।

८ तुम्हारा बल सर्वत्र शोभित है। तुम्हारा चित्त क्रोध-शील है। पराभव करनेवाले बलवान् मरुतोंका वेग, स्तोताकी तरह, बहुविध-शब्दकारी है।

९ मरुतो, हमारे पाससे पुराने हथियार अलग करो। तुम्हारी क्रूर बुद्धि हमें व्याप्त न

१० तुम क्षिप्रकर्त्ता हो। तुम्हारे प्रिय नामको हम पुकारते हैं। प्रिय मरुद्गण इससे होते हैं।

११ मरुद्गण सुन्दर आयुधवाले, गतिशील और सुन्दर अलङ्कारवाले हैं। वे हमारे रको सजाते हैं।

१२ मरुतो, तुम शुद्ध हो। शुद्ध हव्य तुम्हारे लिये हो। तुम शुद्ध हो तुम्हारे लिये शुद्ध यज्ञ करते हैं। जलस्पर्शी मरुद्गण सत्यसे सत्यको प्राप्त हुए हैं। मरुद्गण शुद्ध हैं। जन्म शुद्ध है और वे अन्यको शुद्ध करते हैं।

१३ मरुतो, तुम्हारे कंधोंपर खादि (एक प्रकारका अलङ्कार वा वलय) स्थित है, उत्तम (हार) तुम्हारे हृदय-स्थलमें है। जैसे वर्षाके साथ बिजली शोभा पाती है, वैसे ही जल-शून्य समय आयुध (मेघगर्जन) द्वारा तुम शोभा पाते हो।

प्र बुध्न्या व ईरते महांसि प्र नामानि प्रयज्यवस्तिरध्वम् ।
सहस्रियं दम्यं भागमेतं गृहमेधीयं मरुतो जुषध्वम् ॥१४॥
यदि स्तुतस्य मरुतो अधीथेत्था विप्रस्य वाजिनो हवीमन् ।
मक्षू रायः सुवीर्यस्य दात नू चिद्यमन्य आदभदरावा ॥१५॥
अत्यासो न ये मरुतः स्वञ्चो यक्षदृशो न शुभयन्त मर्याः ।
ते हर्म्येष्ठाः शिशवो न शुभ्रा वत्सासो न प्रक्रीळिनः पयोधाः ॥१६॥
दशस्यन्तो नो मरुतो मृळन्तु वरिवस्यन्तो रोदसी सुमेके ।
आरे गोहा नृहा वधो वो अस्तु सुम्नेभिरस्मे वसवो नमध्वम् ॥१७॥
आ वो होता जोहवीति सत्तः सत्राचीं रातिं मरुतो गृणानः ।
य ईवतो वृषणो अस्ति गोपाः सो अद्वयावी हवते व उक्थैः ॥१८॥

---

१४ मरुतो, तुम्हारा अन्तरीक्षमें उत्पन्न तेज विशेष रूपसे गमन करता है। तुम विशेष रूपसे यजनीय हो। जल-वृद्धि करो। मरुतो, तुम सहस्र संख्यावाले, गृहोत्पन्न और गृहमेधियों द्वारा दत्त इस भागका आश्रय करो।

१५ मरुतो, तुम अन्नवाले मेधावीके हव्यसे युक्त स्तोत्रको जानते हो; इसलिये शोभन पुत्र-वालेको शीघ्र धन दो। उस धनको शत्रु नहीं नष्ट कर सकता।

१६ मरुद्गण सततगामी अश्वकी तरह सुन्दर गमनवाले हैं। उत्सवदर्शक मनुष्योंकी तरह शोभन हैं और गृह-स्थित शिशुओंकी तरह सुन्दर हैं। वे क्रीड़ा-परायण वत्सोंकी तरह हैं और जलके धारक हैं।

१७ हमारे लिये धन देते हुए और अपनी महिमासे सुन्दर द्यावपृथिवीको पूर्ण करते हुए मरुद्गण हमें सुखी करें। मरुतो, मनुष्य-नाशक तुम्हारा आयुध हमारे पाससे दूर रहे। सुखसे हमारे अभिमुख होओ।

१८ होतृ-गृहमें बैठा हुआ होता तुम्हारे सर्वत्रगामी दान-कार्यकी प्रशंसा करके तुम लोगोंको भली भाँति बार-बार बुलाता है। कामवर्षक मरुतो, जो होता कार्य-निष्ठ यजमानका रक्षक है, वह माया-शून्य होकर स्तोत्रों द्वारा तुम्हारी स्तुति करता है।

इमे तुरं मरुतो रामयन्तीमे सहः सहस आ नमन्ति ।
इमे शंसं वनुष्यतो नि पान्ति गुरु द्वेषो अररुषे दधन्ति ॥१९॥
इमे रध्रं चिन्मरुतो जुनन्ति भृमिं चिद्यथा वसवो जुषन्त ।
अप बाधध्वं वृषणस्तमांसि धत्त विश्वं तनयं तोकमस्मे ॥२०॥
मा वो दात्रान्मरुतो निरराम मा पश्चाद्दध्म रथ्यो विभागे ।
आ नः स्पार्हे भजतना वसव्ये यदीं सुजातं वृषणो वो अस्ति ॥२१॥
सं यद्धनन्त मन्युभिर्जनासः शूरा यह्वीष्वोषधीषु विक्षु ।
अध स्मा नो मरुतो रुद्रियासस्त्रातारो भूत पृतनास्वर्यः ॥२२॥
भूरि चक्र मरुतः पित्र्याण्युक्थानि या वः शस्यन्ते पुरा चित् ।
मरुद्भिरुग्रः पृतनासु साह्ला मरुद्भिरित् सनिता वाजमर्वा ॥२३॥
अस्मे वीरो मरुतः शुष्म्यस्तु जनानां यो असुरो विधर्ता ।
अपो येन सुक्षितये तरेमाध स्वमोको अभि वः स्याम ॥२४॥

१९ ये मरुद्गण यज्ञमें क्षिप्रकारी यजमानको प्रसन्न करते हैं। ये बल द्वारा बलवान् हो नीचे करते हैं। ये हिंसकसे स्तोताकी रक्षा करते हैं। परन्तु जो हव्य नहीं देता, उसका महान् करते हैं।

२० ये धनी और दरिद्र—दोनोंको उत्तेजित करते हैं। जैसा कि, देवगण अथवा बन्धुगण हैं—काम-वर्षक मरुतो, तुम अन्धकार नष्ट करो और हमें यथेष्ट पुत्र और पौत्र प्रदान करो।

२१ तुम्हारे दानसे हम बाहर न हों। रथवाले मरुतो, धन-दानके समय हमें पीछे नहीं अभिलषणीय धनोंमें हमें भागी बनाना। कामवर्षक मरुतो, तुम्हारा जो सुजात धन है, उसका भागी बनाना।

२२ जिस समय विक्रम-शाली मनुष्य अनेक ओषधियों और मनुष्योंको जीतनेके लिये क्रु हैं, उस समय, रुद्र-पुत्र मरुतो, संग्राममें शत्रुके निकटसे हमारे रक्षक बनना।

२३ मरुतो, हमारे पूर्वजनोंके लिये तुमने अनेक कार्य किये हैं। तुम्हारे पहलेके जो स्त प्रशंसित होते हैं, उन्हें भी तुमने किया है। युद्धमें तुम्हारी सहायतासे ओजस्वी व्यक्ति शत्रु पराजित करता है। तुम्हारी ही सहायतासे स्तोता अन्न भोग करता है।

२४ मरुतो, हमारा वीर पुत्र बली हो। वह असुर (प्रज्ञावान् पुत्र) शत्रुओंका विधारक हो पुत्रके द्वारा हम सुन्दर निवासके लिये शत्रुओंका विनाश करेंगे। तुम्हारे हम आत्मीय स्थानमें रहें

तन्न इन्द्रो वरुणो मित्रो अग्निराप ओषधीर्वनिनो जुषन्त ।
शर्मन्त्स्याम मरुतामुपस्थे यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥२५॥



५७ सूक्त

मरुद्गण देवता । वसिष्ठ ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

मध्वो वो नाम मारुतं यजत्राः प्र यज्ञेषु शवसा मदन्ति ।
ये रेजयन्ति रोदसी चिदुर्वी पिन्वन्त्युत्सं यदयासुरुग्राः ॥१॥
निचेतारो हि मरुतो गृणन्तं प्रणेतारो यजमानस्य मन्म ।
अस्माकमद्य विदथेषु बर्हिरा वीतये सदत पिप्रियाणाः ॥२॥
नैतावदन्ये मरुतो यथेमे भ्राजन्ते रुक्मैरायुधैस्तनूभिः ।
आ रोदसी विश्वपिशः पिशानाः समानमञ्ज्यञ्जते शुभे कम् ॥३॥

२५ इन्द्र, वरुण, मित्र, अग्नि, जल, ओषधि और वृक्ष हमारे स्तोत्रका आश्रय करें। मरुतोंकी गोदमें हम सुखसे रहेंगे। तुम सदा हमें स्वस्ति द्वारा पालन करो।



१ यजनीय मरुतो, मत्त स्तोता लोग यज्ञ-समयमें, बलके साथ, तुम्हारे नामकी स्तुति करते हैं। मरुद्गण विस्तृत द्यावापृथिवीको कम्पित करते हैं। वे मेघोंसे जल बरसाते हैं और ओजस्वी होकर सर्वत्र जाते हैं।

२ मरुद्गण स्तोताको खोजते हैं। यजमानका मनोरथ पूर्ण करते हैं। तुमलोग प्रसन्न होकर हमारे यज्ञमें, सोमपानके लिये, कुशपर बैठो ।

३ मरुद्गण जितना दान करते हैं, उतना और कोई नहीं करता। ये हार, आयुध और शरीरकी शोभासे शोभित होते हैं। द्यावापृथिवीका प्रकाश करनेवाले और व्याप्त-प्रकाश मरुद्गण शोभाके लिये समानरूप आभरण प्रकट करते हैं।

ऋधक्सा वो मरुतो दिद्युदस्तु यद्व आगः पुरुषता कराम ।
मा वस्तस्यामपि भूमा यजत्रा अस्मे वो अस्तु सुमतिश्चनिष्ठा ॥४॥
कृते चिदत्र मरुतो रणन्तानवद्यासः शुचयः पावकाः ।
प्र णोऽवत सुमतिभिर्यजत्राः प्र वाजेभिस्तिरत पुष्यसे नः ॥५॥
उत स्तुतासो मरुतो व्यन्तु विश्वेभिर्नामभिर्नरो हवींषि ।
ददात नो अमृतस्य प्रजायै जिगृत रायः सूनृता मघानि ॥६॥
आ स्तुतासो मरुतो विश्व ऊती अच्छा सूरीन्त्सर्वताता जिगात ।
ये नः त्मना शतिनो वर्द्धयन्ति यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥७॥



५८ सूक्त

मरुत् देवता । वसिष्ठ ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

प्र साकमुक्षे अर्चता गणाय यो दैव्यस्य धाम्नस्तुविष्मान् ।
उत क्षोदन्ति रोदसी महित्वा नक्षन्ते नाकं निर्ऋतेरवंशात् ॥१॥

---

४ मरुतो, तुम्हारा प्रसिद्ध आयुध हमसे दूर रहे। यद्यपि हम मनुष्य होनेके कारण पास अपराध करते हैं, तो भी, हे यजनीय मरुतो, तुम्हारे उस आयुधमें न पड़ें। तुम्हारी जो सबसे अधिक अन्न देनेवाली हैं, वह हमारी हो।

५ हमारे यज्ञ-कार्यमें मरुद्गण रमण करें। वे अनिन्दित, दीप्ति-युक्त और शोधक हैं नीय मरुतो, कृपा करके अथवा सुन्दर स्तुतिके कारण, हमें विशेष रूपसे पालन करो। द्वारा पोषणके लिये हमें प्रवर्द्धित करो।

६ स्तुत होकर मरुद्गण हविका भक्षण करें। वे नेता हैं और सारे जलोंके साथ हैं। मरुतो, हमारी सन्तानके लिये जल दो। हव्यदाताको सत्य और प्रिय धन दो।

७ स्तुत होकर मरुद्गण सारे रक्षणोंके साथ यज्ञमें स्तोताके सामने आवें। ये स्वयं ओंको शत-सङ्ख्या (पुत्रादि) से युक्त करके बढ़ाते हैं। तुम सदा हमें स्वस्ति द्वारा पालन

१ स्तोताओ, तुम सदावर्षक मरुद्वृन्दकी पूजा करो। ये देवताओंके स्थान (सबसे बुद्धिमान् हैं। अपनी महिमासे ये द्यावापृथिवीको भग्न करते हैं। भूमि और अन्त स्वर्गको व्याप्त करते हैं।

जनूश्चिद्वो मरुतस्त्वेष्येण भीमासस्तुविमन्यवोऽयासः ।
प्र ये महोभिरोजसोत सन्ति विश्वो वो यामन् भयते स्वर्दृक् ॥२॥
बृहद्वयो मघवद्भ्यो दधात जुजोषन्निन्मरुतः सुष्टुतिं नः ।
गतो नाध्वा वि तिराति जन्तुं प्र णः स्पार्हाभिरूतिभिस्तिरेत ॥३॥
युष्मोतो विप्रो मरुतः शतस्वी युष्मोतो अर्वा सहुरिः सहस्री ।
युष्मोतः सम्राळुत हन्ति वृत्रं प्र तद्वो अस्तु धूतयो देष्णम् ॥४॥
ताँ आ रुद्रस्य मीह्लुषो विवासे कुविन्नंसन्ते मरुतः पुनर्नः ।
यत् सस्वर्ता जिहीळिरे यदाविरव तदेन ईमहे तुराणाम् ॥५॥
प्र सा वाचि सुष्टुतिर्मघोनामिदं सूक्तं मरुतो जुषन्त ।
आराच्चिद्द्वेषो वृषणो युयोत यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥६॥



२ हे भीम, प्रवृद्ध-बुद्धि और गमनशील मरुतो, तुम्हारा जन्म दीप्त रुद्रसे हुआ है। मरुद्गण तेज और बलसे प्रभावशाली हुए हैं। तुम्हारे गमनमें सूर्यको देखनेवाला सारा प्राणि-जगत् डरता है।

३ तुम हव्य-युक्तको बहुत अन्न दो। हमारे सुन्दर स्तोत्रका अवश्य सेवन करो। मरुद्गण जिस मार्गको प्राप्त होते हैं, वह प्राणियोंको नहीं विनष्ट करता। वे हमें अभिलषणीय रक्षण द्वारा प्रवर्द्धित करें।

४ मरुतो, तुम्हारे द्वारा रक्षित होकर स्तोता शतसङ्ख्यासे युक्त धनवाला होता है। तुम्हारे द्वारा रक्षित होकर स्तोता आक्रमण-कर्त्ता, शत्रुओंको दबानेवाला और सहस्र धनवाला होता है। तुम्हारे द्वारा रक्षित होकर वह सम्राट् और शत्रु-नाशक होता है। हे कम्पक, तुम्हारा दिया हुआ वह धन बहुत बढ़े।

५ काम-वर्षक मरुतोंकी मैं सेवा करता हूँ। वे फिर कई बार हमारे अभिमुख हों। जिस प्रकट वा अप्रकट पापसे मरुद्गण क्रुद्ध होते हैं, उसे मरुतोंकी स्तुति करके हम धो देंगे।

६ हमने धनी मरुतोंकी उस शोभन स्तुतिको इस सूक्तमें किया है। मरुद्गण उस सूक्तका सेवन करें। अभीष्ट-वर्षक मरुतो, तुम दूरसे ही शत्रुओंको अलग करो। तुम हमें सदा स्वस्ति द्वारा पालन करो।



५ सूक्त

मरुद्गण देवता। अन्तिम मन्त्रके रुद्र देवता। वसिष्ठ ऋषि। बृहती, सतोबृहती, त्रिष्टुप्, गायत्री और अनुष्टुप् छन्द।

यं त्रायध्व इदमिदं देवासो यं च नयथ।
तस्मा अग्ने वरुण मित्रार्यमन्मरुतः शर्म यच्छत ॥१॥
युष्माकं देवा अवसाहनि प्रिय ईजानस्तरति द्विषः।
प्र स क्षयं तिरते वि महीरिषो यो वो वराय दाशति ॥२॥
नहि वश्चरमं चन वसिष्ठः परिमंसते।
अस्माकमद्य मरुतः सुते सचा विश्वे पिबत कामिनः ॥३॥
नहि व ऊतिः पृतनासु मर्धति यस्मा अराध्वं नरः।
अभि व आवर्त्सुमतिर्नवीयसी तूयं यात पिपीषवः ॥४॥
ओ षु घृष्विराधसो यातनान्धांसि पीतये।
इमा वो हव्या मरुतो ररे हि कं मो ष्वन्यत्र गन्तन ॥५॥
आ च नो बर्हिः सदताविता च नः स्पार्हाणि दातवे वसु।
अस्रेधन्तो मरुतः सोम्ये मधौ स्वाहेह मादयाध्वै ॥६॥

---

१ देवो, भयसे स्तोताको बचाओ। अग्नि, वरुण, मित्र, अर्यमा और मरुतो, तुम जिसे स... ले जाते हो, उसे सुख दो।

२ देवो, तुम्हारे रक्षणसे तुम्हारे प्रिय दिनमें जो यज्ञ करता है, जो शत्रुको आक्रान्त क... जो तुम्हें दूसरे स्थानमें न जाने देनेके लिये तुम्हें बहुत हव्य देता है, वह अपने निवासको बढ़ाता है...

३ मैं वसिष्ठ तुम लोगोंमें जो अवर (मन्द) हैं, उन्हें छोड़कर स्तुति नहीं करता। म... सोमाभिलाषी होकर और तुम सब मिलकर हमारे सोमके अभिषुत होनेपर पान करो।

४ नेताओ, जिसे तुम अभिलषित प्रदान करते हो, उसे तुम्हारी रक्षा युद्धमें बचाती है।... नयी कृपा-बुद्धि हमारे सामने आवे। सोमपानाभिलाषियो, तुम शीघ्र आओ।

५ मरुतो, तुम्हारा धन परस्पर मिला हुआ है। सोमरूप हवि भक्षण करनेके लिये... तरह आओ। मरुतो, तुम्हें मैं यह हवि देता हूँ; इसलिये तुम अन्यत्र नहीं जाना।

६ मरुतो, तुम हमारे कुशोंपर बैठो। अभिलषणीय धन देनेके लिये हमारे पास आओ।... तुम लोग अहिंसक होकर इस यज्ञमें मदकर सोमरूप हव्यपर स्वाहा कहकर प्रमत्त होओ।

सस्वश्चिद्धि तन्वः शुम्भमाना आ हंसासो नीलपृष्ठा अपप्तन् ।
विश्वं शर्धो अभितो मा निषेद नरो न रण्वाः सवने मदन्तः ॥७॥
यो नो मरुतो अभि दुर्हृणायुस्तिरश्चित्तानि वसवो जिघांसति ।
द्रुहः पाशान् प्रति स मुचीष्ट तपिष्ठेन हन्मना हन्तना तम् ॥८॥
सान्तपना इदं हविर्मरुतस्तज्जुजुष्टन ।
युष्माकोती रिशादसः ॥९॥
गृहमेधास आ गत मरुतो माप भूतन ।
युष्माकोती सुदानवः ॥१०॥
इहेह वः स्वतवसः कवयः सूर्यत्वचः ।
यज्ञं मरुत आ वृणे ॥११॥
त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टिवर्धनम् ।
उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात् ॥१२॥

---

७ अन्तर्हित मरुतो, अपने अङ्गोंको अलङ्कारोंसे अलङ्कृत करके नीलवर्ण हंसोंकी तरह आओ। मेरे यज्ञमें आनन्दित और रमणीय मनुष्योंकी तरह विश्व-व्याप्त मरुद्गण मेरी चारों ओर बैठें।

८ प्रशंसनीय मरुतो, अशोभन क्रोध करके जो तिरस्कृत मनुष्य हमारे चित्तका विनाश करना चाहता है, वह पाप-द्रोही वरुणदेवके पाशसे हमें बाँधना चाहता है। उसे तुम लोग अतीव तापक आयुधसे विनष्ट करो।

९ शत्रुतापक, यही तुम्हारा हव्य है। तुम शत्रु-भक्षक हो। अपनी रक्षा द्वारा हविका सेवन करो।

१० मरुतो, तुम गृहमें भी शोभनदाता हो। रक्षाके साथ आओ। जाओ नहीं।

११ हे स्वयं प्रवृद्ध और क्रान्तदर्शी तथा सूर्यवर्ण मरुतो, मैं यज्ञकी कल्पना करता हूँ।

१२ हम सुगन्धि (प्रसारित-पुण्य-कीर्ति) और पुष्टिवर्द्धक (जगद्वीज वा अणिमादिशक्ति-वर्द्धन) त्र्यम्बक (ब्रह्मा, विष्णु और महेशके पिता वा आदिकारण)की पूजा वा यज्ञ करते हैं। रुद्रदेव, उर्वारुकफल (बदरीफल) की तरह हमें मृत्यु-बन्धन (संसार) से मुक्त करो और अमृत (चिर जीवन स्वर्ग)से मत मुक्त करो।

चतुर्थ अध्याय समाप्त

(प्रथम खण्ड समाप्त)

ऋग्वेद-संहिता

[सरल-हिन्दी-टीका-सहित]

पञ्चम अष्टक (द्वितीय खण्ड)



टीकाकार

पण्डित रामगोविन्द त्रिवेदी वेदान्तशास्त्री

"(दर्शन-परिचय," "हिन्दी-विष्णु-पुराण," "हिन्दीपुस्तक-कोष," "राजर्षि प्रह्लाद," "भक्त ध्रुव," "महासती मदालसा," "रत्नावली" आदिके लेखक, "आर्यमहिला" (बनारस), "विश्वदूत" (रंगून), "सेनापति" (कलकत्ता), "गङ्गा" (सुलतानगंज) आदिके भूतपूर्व सम्पादक, गीताप्रचारक-महामण्डल" (मोरिशस)के जन्मदाता, "दक्षिण अफ्रीकन सनातनधर्म-महामण्डल" (डरबन, नेटाल) के आजीवन सभापति तथा भारतधर्ममहामण्डल (बनारस) के महोपदेशक)

—* और *—

पण्डित गौरीनाथ झा व्याकरणतीर्थ

(प्राइवेट सेक्रेटरी, बनैलीराज्याधिपति साहित्य-विभूषण कुमार कृष्णानन्द सिंह बहादुर तथा "गङ्गा" और "वैदिकपुस्तकमाला"के अन्यतम जन्मदाता एवम् अध्यक्ष)



प्रकाशक

पण्डित गौरीनाथ झा व्याकरणतीर्थ

सञ्चालक, "वैदिकपुस्तकमाला," सुलतानगंज (ई० आई० आर०)

मूल्य १) } श्रावण, १९९२ विक्रमीय { प्रथम संस्करण २०००



मिथिला प्रेस,

खलीफाबाग, भागलपुरमें मुद्रित

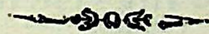
पञ्चम अष्टक (द्वितीय खण्ड) की कुछ जानने योग्य बातें





ऋग्वेद-संहिता

(हिन्दी-टीका-सहित)



५ अष्टक । ७ मण्डल । ५ अध्याय । ४ अनुवाक ।



६० सूक्त

प्रथम ऋचाके सूर्य और शेषके मित्र तथा वरुण देवता। वसिष्ठ ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

यदद्य सूर्य ब्रवोऽनागा उद्यन्मित्राय वरुणाय सत्यम् ।
वयं देवत्रादिते स्याम तव प्रियासो अर्यमन् गृणन्तः ॥१॥

१ हे सूर्य (सबके प्रेरक) देव, उदित होकर तुम आज, अनुष्ठान-कालमें, हमें पाप-रहित करो। हे अदिति (अदीन देव), हम देवोंके बीच, मित्र और वरुणके पास यथार्थ हों। अर्यमन् (दाता), तुम्हारी स्तुति करके हम तुम्हारे प्रिय हों।

एषः स्य मित्रावरुणा नृचक्षा उभे उदेति सूर्यो अभि ज्मन् ।
विश्वस्य स्थातुर्जगतश्च गोपा ऋजु मर्त्येषु वृजिना च पश्यन् ॥२॥
अयुक्त सप्त हरितः सधस्थाद्या ईं वहन्ति सूर्यं घृताचीः ।
धामानि मित्रावरुणा युवाकुः सं यो यूथेव जनिमानि चष्टे ॥३॥
उद्वां पृक्षासो मधुमन्तो अस्थुरा सूर्यो अरुहच्छुक्रमर्णः ।
यस्मा आदित्या अध्वनो रदन्ति मित्रो अर्यमा वरुणः सजोषाः ॥४॥
इमे चेतारो अनृतस्य भूरेर्मित्रो अर्यमा वरुणो हि सन्ति ।
इम ऋतस्य वावृधुर्दुरोणे शग्मासः पुत्रा अदितेरदब्धाः ॥५॥
इमे मित्रो वरुणो दूलभासोऽचेतसं चिच्चितयन्ति दक्षैः ।
अपिक्रतुं सुचेतसं वतन्तस्तिरश्चिदंहः सुपथा नन्यति ॥६॥
इमे दिवो अनिमिषा पृथिव्याश्चिकित्वांसो अचेतसं नयन्ति ।
प्रव्राजे चिन्नद्यो गाधमस्ति पारं नो अस्य विष्पितस्य पर्षन् ॥७॥

---

२ मित्र और वरुण, यह वही मनुष्योंके दर्शक सूर्य अन्तरीक्षमें जाते हुए द्यावापृ लक्ष्य कर उदित होते हैं। सूर्य सारे स्थावर और जङ्गम संसारके पोषक हैं। वह मनुष्यों और पापको देखते हैं।

३ मित्र और वरुण, सूर्यने अन्तरीक्षमें सात हरिद् वर्णके अश्वोंको रथमें जोता सातो जलदाता होकर सूर्यको ले जाते हैं। जैसे गोपालक गोसमूहको भली भाँति देखता ही सूर्य उदित होकर संसारके स्थानों और प्राणियोंको देखते हैं। वह तुम दोनोंकी करते हैं।

४ मित्र और वरुण, तुम दोनोंके लिये अन्न और मधुर पुरोडाशादि थे। सूर्य दी रीक्षमें चढ़ते हैं। समान प्रीतिवाले मित्र, अर्यमा, वरुण आदि सूर्यके लिये मार्ग प्रस्तुत

५ ये मित्र, वरुण और अर्यमा यथेष्ट पापके नाशक हैं। ये सुखकर, अहिंसक तिके पुत्र हैं। ये यज्ञ-गृहमें बढ़ते हैं।

६ आदित्य, मित्र और वरुण दबाने योग्य नहीं हैं। ये अज्ञानीको ज्ञानवान् ये उत्तम ज्ञानवाले और कर्मानुष्ठानवालेके पास जाकर, दुष्कृतका विनाश करते हुए, गंपर ले जाते हैं।

७ ये निर्निमेष होकर द्युलोक और पृथिवीके अज्ञानीको कर्ममें ले जाते हैं। इनके अत्यन्त निम्न देशमें भी नदीका तल होता है। ये हमें इस व्यापक कर्मके पार ले

यद्गोपावददितिः शर्म भद्रं मित्रो यच्छन्ति वरुणः सुदासे ।
तस्मिन्ना तोकं तनयं दधाना मा कर्म देवहेलनं तुरासः ॥८॥
अव वेदिं होत्राभिर्यजेत रिपः काश्चिद्वरुण ध्रुतः सः ।
परि द्वेषोभिरर्यमा वृणक्तूरुं सुदासे वृषणा उ लोकम् ॥९॥
सस्वश्चिद्धि समृतिस्त्वेष्येषामपीच्येन सहसा सहन्ते ।
युष्मद्भिया वृषणो रेजमाना दक्षस्य चिन्महिना मृलता नः ॥१०॥
यो ब्रह्मणे सुमतिमायजाते वाजस्य सातौ परमस्य रायः ।
सीक्षन्त मन्युं मघवानो अर्य उरु क्षयाय चक्रिरे सुधातु ॥११॥
इयं देव पुरोहितिर्युवभ्यां यज्ञेषु मित्रावरुणावकारि ।
विश्वानि दुर्गा पिपृतं तिरो नो यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥१२॥



८ अर्यमा, मित्र और वरुण जो रक्षणसे युक्त और स्तुत्य सुख हव्यदाताको देते हैं वही सुख पुत्र और पौत्रके लिये धारण करते हुए हम शीघ्रकारी देवोंके लिये क्रोधजनक कार्य न करें ।

९ जो हमारा द्वेषी यज्ञ-वेदीपर कार्य करते हुए देवोंकी स्तुति नहीं करता, वह वरुण द्वारा मारा जाकर विनष्ट हो जाय। अर्यमा हमें राक्षसादिसे अलग रखें। मनोरथ-पूरयिता मित्र और वरुण, सुफ हव्यदाताको विस्तीर्ण स्थान दो।

१० इन मित्रादिकी सङ्गति निगूढ़ और दीप्त है। ये निगूढ़ बल द्वारा हमारे द्वेषियोंको पराजित करते हैं । अभिमतदाता मित्रादि देवो, तुम्हारे डरसे हमारे विरोधी काँपते हैं। अपने बलकी महिमासे हमें सुखी बनाओ।

११ जो यजमान अन्न और उत्तम धन देनेके लिये तुम्हारे स्तोत्रमें अपनी शोभन बुद्धिको नियुक्त करता है, उस स्तोताका स्तोत्र मघवा लोग (दानी अर्यमा आदि) आश्रित करते और उसके लिये सुन्दर धाम बनाते हैं ।

१२ मित्र और वरुण, तुम दोनोंके यज्ञमें यह स्तुति की गयी है। इसकी सेवा करके हमारी सारी दुरन्त विपत्तियोंको दूर करते हुए हमें पार लगाओ। तुम हमें सदा स्वस्ति द्वारा पालन करो।



६१ सूक्त

मित्र और वरुण देवता। वसिष्ठ ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

उद्वां चक्षुर्वरुण सुप्रतीकं देवयोरेति सूर्यस्ततन्वान्।
अभि यो विश्वा भुवनानि चष्टे स मन्युं मर्त्येष्वा चिकेत ॥१॥
प्र वां स मित्रावरुणावृतावा विप्रो मन्मानि दीर्घश्रुदियर्ति।
यस्य ब्रह्माणि सुक्रतू अवाथ आ यत् क्रत्वा न शरदः पृणैथे ॥२॥
प्रोरोर्मित्रावरुणा पृथिव्याः प्र दिव ऋष्वाद्बृहतः सुदानू।
स्पशो दधाथे ओषधीषु विक्ष्वृधग्यतो अनिमिषं रक्षमाणा ॥३॥
शंसा मित्रस्य वरुणस्य धाम शुष्मो रोदसी बद्बधे महित्वा।
अयन्मासा अयज्वनामवीराः प्र यज्ञमन्मा वृजनं तिराते ॥४॥
अमूरा विश्वा वृषणाविमा वां न यासु चित्रं ददृशे न यक्षम्।
द्रुहः सचन्ते अनृता जनानां न वान्निण्यान्यचिते अभूवन् ॥५॥

---

१ मित्र और वरुण, तुम प्रकाशमान हो। तुम्हारे नेत्र-रूप और शोभन रूपवाले सूर्य विस्तार करते हुए आकाशमें उठते हैं। सूर्यदेव सारे भुवनों अथवा भूतों (प्राणियों)को देखते हैं मनुष्योंके बीच प्रवृत्त स्तोत्रको जानते हैं।

२ मित्र और वरुण, वह याज्ञिक, विप्र (प्रसिद्ध ब्राह्मण) और चिर श्रोता वसिष्ठ तुम लिये मननीय स्तुति करते हैं। तुम दोनों शोभन कर्मवाले हो। वसिष्ठके स्तोत्रकी रक्षा करते तुम बहुत वर्षोंसे वसिष्ठके कर्मको पूरण करते आ रहे हो।

३ मित्र और वरुण, तुमने विस्तृत पृथिवीकी परिक्रमा की है और गुणों तथा स्वरूपसे द्युलोककी भी प्रदक्षिणा कर डाली है। हे शोभन दाता, तुम ओषधियों और प्रजाके लिये करते हो। तुम निर्निमेष भावसे सन्मार्गगामीका पालन करते हो।

४ ऋषि, तुम मित्र और वरुणके तेजकी स्तुति करो। अपनी महिमासे मित्र और वरुण द्यावापृथिवीको अलग-अलग रखे हुए है। यज्ञ न करनेवालोंके महीने पुत्रसे रहित होकर बीतें। पुरुष बल बढ़ावें।

५ हे प्राज्ञ, व्यापक और मनोरथ-वर्षी मित्र और वरुण, तुम्हारी स्तुतिमें आश्चर्य, यज्ञ और कुछ भी नहीं दिखाई देता। द्रोही लोग मनुष्योंकी मिथ्या स्तुतिका सेवन करते हैं। तुम दोनों किये जाते हुए रहस्यमय स्तोत्र अज्ञानके लिये न हों।

समु वां यज्ञं महयन्नमोभिर्हुवे वां मित्रावरुणा सबाधः ।
प्र वां मन्मान्यृचसे नवानि कृतानि ब्रह्म जुजुषन्निमानि ॥६॥
इयं देव पुरोहितिर्युवभ्यां यज्ञेषु मित्रावरुणावकारि ।
विश्वानि दुर्गा पिपृतं तिरो नो यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥७॥



६२ सूक्त

मित्र और वरुण देवता। वसिष्ठ ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

उत् सूर्यो बृहदर्चींष्यश्रेत् पुरु विश्वा जनिम मानुषाणाम् ।
समो दिवा ददृशे रोचमानः क्रत्वा कृतः सुकृतः कर्तृभिर्भूत् ॥१॥
स सूर्य प्रति पुरो न उद्गा एभिः स्तोमेभिरेतशेभिरेवैः ।
प्र नो मित्राय वरुणाय वोचोऽनागसो अर्यम्णे अग्नये च ॥२॥
वि नः सहस्रं शुरुधो रदन्त्वृतावानो वरुणो मित्रो अग्निः ।
यच्छन्तु चन्द्रा उपमं नो अर्कमा नः कामं पूपुरन्तु स्तवानाः ॥३॥

६ मित्र और वरुण, नमस्कार द्वारा तुम्हारे यज्ञकी पूजा करता हूँ। मित्र और वरुण, मैं बाधा-सम्पन्न होकर तुम दोनोंको बुलाता हूँ। तुम्हारी सेवाके लिये नये स्तोत्र बनाये जायँ। मेरे द्वारा इकट्ठा किया हुआ स्तोत्र तुम्हें प्रसन्न करे।

७ मित्र और वरुण, तुम दोनोंके यज्ञमें यह स्तुति की गयी है। इसकी सेवा करके हमारी सारी दुरन्त विपत्तियोंको दूर करते हुए हमें पार लगाओ। तुम हमें सदा स्वस्ति द्वारा पालन करो।

---

१ सूर्य अत्यधिक और प्रभूत तेजका ऊर्द्ध्वमुख होकर आश्रय करें। वह मनुष्योंके सभी जनोंका आश्रय करें। वह दिनमें रुचिकर होकर एक-रूप दिखाई देते हैं। वह सबके कर्ता, कृत और प्रजापति द्वारा तेज होते हैं।

२ सूर्य, तुम स्तोत्रों द्वारा हरिद्वर्ण और गमनशील अश्वोंसे, उद्र्ध्वमुख होकर, प्रत्येकके सम्मुख गमन करो। तुम मित्र, वरुण, अर्यमा और अग्निके पास हमें निरपराध कहना।

३ दुःखको रोकनेवाले और सत्यवान् वरुण, मित्र और अग्नि हमें सहस्र-संख्यक धन दें। वे प्रसन्नता-दायक हैं। हमें स्तुत्य और पूजनीय वस्तु दें। हमारे द्वारा स्तुति किये जानेपर हमारी अभिलाषा पूर्ण करें।

द्यावाभूमी अदिते त्रासीथां नो ये वां जज्ञुः सुजनिमान ऋष्वे ।
मा हेळे भूम वरुणस्य वायोर्मा मित्रस्य प्रियतमस्य नृणाम् ॥४॥
प्र बाहवा सिसृतं जीवसे न आ नो गव्यूतिमुक्षतं घृतेन ।
आ नो जने श्रवयतं युवाना श्रुतं मे मित्रावरुणा हवेमा ॥५॥
नू मित्रो वरुणो अर्यमा नः त्मने तोकाय वरिवो दधन्तु ।
सुगा नो विश्वा सुपथानि सन्तु यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥६॥

६३ सूक्त

साढ़े चार मन्त्रोंके सूर्य देवता और शेषके मित्र तथा वरुण। वसिष्ठ ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

उद्वेति सुभगो विश्वचक्षाः साधारणः सूर्यो मानुषाणाम् ।
चक्षुर्मित्रस्य वरुणस्य देवश्चर्मेव यः समविव्यक्तमांसि ॥१॥
उद्वेति प्रसवीता जनानां महान् केतुरर्णवः सूर्यस्य ।
समानं चक्रं पर्याविवृत्सन्यदेतशो वहति धूर्षु युक्तः ॥२॥

४ हे द्यावापृथिवी, अदिति और महान् हमारी रक्षा करो। हम सुन्दर जन्मवाले हैं। तुम्हें जानते हैं। हम वरुण, वायु और नेताओं (मनुष्यों) के प्रियतम मित्रके क्रोधमें न पड़ें।

५ मित्र और वरुण, अपनी बाँहें पसारो। हमारे जीवनके लिये हमारी गोमार्ग-भूमिको जलसे सिक्त करो। मनुष्योंके बीच हमें विख्यात करो। तुम लोग नित्य तरुण हो। हमारा यह आह्वान सुनो।

६ मित्र, वरुण और अर्यमा, हमारे लिये और पुत्रके लिये धन प्रदान करो। हमारे लिये सब गन्तव्य स्थान सुगम और सुपथ हों। तुम हमें सदा स्वस्ति द्वारा पालन करो।

१ शोभन-भाग्य, सर्वदर्शक, सभी मनुष्योंके लिये साधारण, मित्र और वरुणके नेत्र-स्वरूप और प्रकाशमान सूर्य उग रहे हैं। सूर्य चमड़ेकी तरह अन्धकारको संवेष्टित करते हैं।

२ मनुष्योंके उत्पादक, महान्, सबके सूचक और जलप्रद यह सूर्य सबके एक मात्र चक्रको परिवर्तित करनेकी इच्छा करके उगते हैं। रथमें नियुक्त हरिद्व वर्ण अश्व सूर्यको ढोते हैं।

विभ्राजमान उषसामुपस्थाद्रेभैरुदेत्यनुमद्यमानः ।
एक मे देवः सविता चच्छन्द यः समानं न प्रमिनाति धाम ॥३॥
दिवो रुक्म उरुचक्षा उदेति दूरे अर्थस्तरणिर्भ्राजमानः ।
नूनं जनाः सूर्येण प्रसूता अयन्नर्थानि कृणवन्नपांसि ॥४॥
यत्रा चक्रुरमृता गातुमस्मै श्येनो न दीयन्नन्वेति पाथः ।
प्रति वां सूर उदिते विधेम नमोभिर्मित्रावरुणोत हव्यैः ॥५॥
नू मित्रो वरुणो अर्यमा नस्त्मने तोकाय वरिवो दधन्तु ।
सुगा नो विश्वा सुपथानि सन्तु यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥६॥

६४ सूक्त

मित्र और वरुण देवता। वसिष्ठ ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

दिवि क्षयन्ता रजसः पृथिव्यां प्र वां घृतस्य निर्णिजो ददीरन् ।
हव्यं नो मित्रो अर्यमा सुजातो राजा सुक्षत्रो वरुणो जुषन्त ॥१॥

३ अतीव प्रकाशमान ये सूर्य स्तोताओंके स्तोत्रोंको सुननेमें प्रमत्त होकर उषाओंके बीच उगते हैं। ये हमें अभिलषित पदार्थ देते हैं। ये सबके लिये समान हैं। अपने तेजको संकुचित नहीं करते।

४ ये दूरगामी, त्राता और दीप्तिमान् सूर्य शोभन और बहु-तेजः-सम्पन्न होकर अन्तरीक्षमें उदित होते हैं। जीवगण निश्चय ही सूर्यसे उत्पन्न होकर कर्तव्य कर्म करते हैं।

५ अमर देवोंने जहाँ इन सूर्यके लिये मार्ग बनाया था, वह मार्ग गति-परायण गृध्रकी तरह अन्तरीक्षका अनुगमन करता है। मित्र और वरुण, सूर्योदय होनेपर प्रातःसवनमें नमस्कार और हव्य द्वारा तुम्हारी हम सेवा करेंगे।

६ मित्र, वरुण और अर्यमा हमारे लिये और पुत्रके लिये धन दें। हमारे सारे गन्तव्य सुगम और सुपथ हों। तुम हमें सदा स्वस्ति द्वारा पालन करो।

१ मित्र और वरुण, तुमलोग द्युलोक और पृथिवीमें जलके स्वामी हो। तुम्हारे द्वारा प्रेरित मेघ जलको रूप देता है। मित्र, सुजन्मा अर्यमा, राजा और बली वरुण हमारे हव्यको आश्रित करें।

आ राजाना मह ऋतस्य गोपा सिन्धुपती क्षत्रिया यातमर्वाक् ।
इलां नो मित्रावरुणोत वृष्टिमव दिव इन्वतं जीरदानू ॥२॥
मित्रस्तन्नो वरुणो देवो अर्यः प्र साधिष्ठेभिः पथिभिर्नयन्तु ।
ब्रवद्यथा न आदरिः सुदास इषा मदेम सह देवगोपाः ॥३॥
यो वां गर्तं मनसा तक्षदेतमूर्ध्वां धीतिं कृणवद्धारयच्च ।
उक्षेथां मित्रावरुणा घृतेन ता राजाना सुक्षितीस्तर्पयेथाम् ॥४॥
एषः स्तोमो वरुण मित्र तुभ्यं सोमः शुक्रो न वायवेऽयामि ।
अविष्टं धियो जिगृतं पुरन्धीर्यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥५॥



६५ सूक्त

मित्र और वरुण देवता। वसिष्ठ ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

प्रति वां सूर उदिते सूक्तैर्मित्रं हुवे वरुणं पूतदक्षम् ।
ययोरसुर्यमक्षितं ज्येष्ठं विश्वस्य यामन्नाचिता जिगत्नु ॥१॥

२ तुमलोग राजा, महायज्ञके रक्षक, सिन्धुपति (नदी-पालक) और क्षत्रिय (वीर) हमारे सामने पधारो। हे शीघ्रदानी मित्र और वरुण, अन्तरीक्षसे हमें अन्न और वृष्टि भेजो।

३ मित्र, वरुण और अर्यमा हमें उत्तम मार्ग द्वारा, जब चाहें, ले जायँ। अर्यमा सुन्दर... पास हमारी कथा कहें। तुम्हारे द्वारा रक्षित होकर हम अन्न द्वारा, पुत्र पौत्रादिके साथ, प्रमत्त हों।

४ मित्र और वरुण, जिसने मनके द्वारा तुम्हारे इस रथका निर्माण किया है, जो उन्न... करता है और जो यज्ञमें तुम्हें धारण करता है—तुम लोग राजा हो, उसे जल द्वारा सिक्त करो उसे सुन्दर निवास प्रदान कर तृप्त करो।

५ मित्र और वरुण, तुम्हारे और वायुके लिये, दीप्त सोमकी तरह, यह सोम बनाया हैं। हमारे कर्ममें प्रवेश करो, स्तुतिको जानो और हमें सदा स्वस्ति द्वारा पालन करो।

---

१ हे मित्र और शुद्ध-बल वरुण, सूर्यके उगनेपर तुम दोनोंको, सूक्त द्वारा, मैं ... करता हूँ। इन दोनोंका बल अक्षय और प्रचुर है। संग्राम होनेपर दोनों विजयी होते

ता हि देवानामसुरा तावर्या ता नः क्षितीः करतमूर्जयन्ती ।
अश्याम मित्रावरुणा वयं वां द्यावा च यत्र पीपयन्नहा च ॥२॥
ता भूरिपाशावनृतस्य सेतू दुरत्येतू रिपवे मर्त्याय ।
ऋतस्य मित्रावरुणा पथा वामपो न नावा दुरिता तरेम ॥३॥
आ नो मित्रावरुणा हव्यजुष्टिं घृतैर्गव्यूतिमुक्षतमिळाभिः ।
प्रति वामत्र वरमा जनाय पृणीतमुद्नो दिव्यस्य चारोः ॥४॥
एषः स्तोमो वरुण मित्र तुभ्यं सोमः शुक्रो न वायवेऽयामि ।
अविष्टं धियो जिगृतं पुरन्धीर्यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥५॥

---

६६ सूक्त

४ से १३ तक आदित्य देवता, १४ से १६ तक सूर्य देवता और आदि तथा अन्तके तीन-तीन मन्त्रोंके मित्र और वरुण देवता। वसिष्ठ ऋषि। गायत्री, प्रगाथ, पुर उष्णिक्, बृहती, सतो-बृहती आदि छन्द।

प्र मित्रयोर्वरुणयोः स्तोमो न एतु शूष्यः । नमस्वान्तुविजातयोः ॥१॥

---

२ वे दोनों देव देवोंमें असुर (बली) हैं। वे आर्य (सबके ईश्वर) हैं। वे हमारी प्रजाको प्रवृद्ध करें। मित्र और वरुण, हम तुम दोनोंको व्याप्त करेंगे। तुम्हारी व्यापकतामें हमें द्यावापृथिवी दिन-रात आप्यायित करेंगे।

३ मित्र और वरुण बहुत पाश (बन्धन) वाले हैं। वे यज्ञ-शून्य व्यक्ति (अनृत) के लिये सेतुकी तरह बन्धनकारी हैं। वे शत्रुओंके लिये दुरतिक्रम हैं। मित्र और वरुण, जैसे नौका द्वारा जलको पार किया जाता है, वैसे ही हम तुम्हारे यज्ञ-मार्गमें पापसे पार पायँगे।

४ मित्र और वरुण हमारे हव्यकी सेवाके लिये आवें। अन्नके साथ जल द्वारा हमारे गोचर स्थानको सिक्त करें। तुम्हें इस संसारमें उत्कृष्ट हव्य कौन देगा? तुम संसारके लिये स्वर्गीय और रमणीय जल दो।

५ मित्र और वरुण, तुम्हारे और वायुके लिये, दीप्त सोमकी तरह, यह सोम बनाया गया है। हमारे कर्ममें प्रवेश करो, स्तुतिको जानो और हमें सदा स्वस्ति द्वारा पालन करो।

---

१ बारम्बार आविर्भूत मित्र और वरुणका सुखकर और अन्नवान् स्तोम गमन करे।

या धारयन्त देवाः सुदक्षा दक्षपितरा । असुर्याय प्रमहसा ॥२॥
ता नः स्तिपा तनूपा वरुण जरितॄणाम् । मित्र साधयतं धियः ॥३॥
यदद्य सूर उदितेऽनागा मित्रो अर्यमा । सुवाति सविता भगः ॥४॥
सुप्रावीरस्तु स क्षयः प्र नु यामन्त्सुदानवः । ये नो अंहोऽतिपिप्रति ॥
उत स्वराजो अदितिरदब्धस्य व्रतस्य ये । महो राजान ईशते ॥६॥
प्रति वां सूर उदिते मित्रं गृणीषे वरुणम् । अर्यमणं रिशादसम् ॥
राया हिरण्यया मतिरियमवृकाय शवसे । इयं विप्रा मेधसातये ॥८॥
ते स्याम देव वरुण ते मित्र सूरिभिः सह । इषं स्वश्च धीमहि ॥९॥
बहवः सूरचक्षसोऽग्निजिह्वा ऋतावृधः ।
त्रीणि ये येमुर्विदथानि धीतिभिर्विश्वानि परिभूतिभिः ॥१०॥

२ शोभन बलवाले, बलके रक्षक और प्रकृत तेजवाले मित्र और वरुणको बलके देवोंने धारण किया था।

३ वे मित्र और वरुण गृह और शरीरके पालक हैं। मित्र और वरुण, तुम लोग स्तोताओंके रूप स्तोत्रोंको सफल करो।

४ सूर्योदय होनेपर आज, हमारे लिये, अपेक्षित धनको पाप-नाशक मित्र, सविता, अर्यमा भग प्रेरित करें।

५ शोभन-दान-परायण, तुमलोग हमारे पापको दूर करो। तुम्हारा आगमन होनेपर वह सुरक्षित हो।

६ मित्र आदि और अदिति अहिंसक व्रत वा कर्मके ईश्वर हैं; वे महाधनके भी ईश्वर हैं।

७ सूर्योदय होनेपर मित्र, वरुण और शत्रु-भक्षक अर्यमाकी मैं स्तुति करूँगा।

८ हित-रमणीय धनके साथ यह स्तुति हमारे अहिंसनीय बलके लिये हो।

९ वरुण और मित्र, ऋत्विकोंके साथ हम तुम्हारे स्तोता होंगे। हम अन्न और जल धारण करेंगे।

१० मित्रादि, महान् सूर्यकी तरह दीप्त, अग्नि-जिह्व और यज्ञ-वर्द्धक हैं। वे परिभवकारक कर्मों व्याप्त स्थानोंको देते हैं।

वि ये दधुः शरदं मासमादहर्यज्ञमक्तुं चादृचम् ।
अनाप्यं वरुणो मित्रो अर्यमा क्षत्रं राजान आशत ॥११॥
तद्वो अद्य मनामहे सूक्तैः सूर उदिते ।
यदोहते वरुणो मित्रो अर्यमा यूयमृतस्य रथ्यः ॥१२॥
ऋतावान ऋतजाता ऋतावृधो घोरासो अनृतद्विषः ।
तेषां वः सुम्ने सुच्छर्दिष्टमे नरः स्याम ये च सूरयः ॥१३॥
उदु त्यद्दर्शतं वपुर्दिव एति प्रतिह्वरे ।
यदीमाशुर्वहति देव एतशो विश्वस्मै चक्षसे अरम् ॥१४।
शीर्ष्णः शीर्ष्णो जगतस्तस्थुषस्पतिं समया विश्वमा रजः ।
सप्त स्वसारः सुविताय सूर्यं वहन्ति हरितो रथे ॥१५॥
तच्चक्षुर्देवहितं शुक्रमुच्चरत् । पश्येम शरदः शतं जीवेम शरदः शतम् ॥१६॥
काव्येभिरदाभ्या यातं वरुण द्युमत् । मित्रश्च सोमपीतये ॥१७॥

११ जिन्होंने वर्ष, मास, दिन, यज्ञ, रात्रि और मन्त्रकी रचना की है, उन मित्र, वरुण और अर्यमाने, शोभमान होकर, दूसरोंके लिये अप्राप्त बल पाया था।

१२ आज सूर्योदय होनेपर, सूक्त द्वारा, तुमसे उस धनकी याचना करेंगे, जिसे जलके नेता मित्र, वरुण और अर्यमा धारण करते हैं।

१३ नेताओ, तुम लाग यज्ञवान्, यज्ञके लिये उत्पन्न, यज्ञ-वर्द्धक, भयानक और यज्ञ-हीनके द्वेषी हो। तुम्हारे सुखतम धनके लिये जो अन्य ऋत्विक् हैं, वे और हम अधिकारी होंगे।

१४ वह दर्शनीय मण्डल अन्तरीक्षके समीप उदित होता है। शीघ्रगामी और हरितवर्ण अश्व सबके भली भाँति देखनेके लिये उस मण्डलको धारण करते हैं।

१५ मस्तकके भी मस्तक (सबके मस्तक), स्थावर-जङ्गमके पति और रथारोही सूर्यको, संसारके कल्याणके लिये, सात गति-परायण हरितगण (अश्व) सारे संसारके समीप ले जाते हैं

१६ वह चक्षुः-स्वरूप (सबका प्रकाश), देव-हितैषी और निर्मल सूर्य-मण्डल उदित हो रहा है। हम सौ वर्ष देखें और सौ वर्ष जीयें।

१७ वरुण, तुम और मित्र अहिंसनीय और द्युतिमान् हो । हमारे स्तोत्रोंके द्वारा सोमपानके लिये आओ।

दिवो धामभिर्वरुण मित्रश्चा यातमद्रुहा । पिबतं सोममातुजी ॥१८॥
आ यातं मित्रावरुणा जुषाणावाहुतिं नरा । पातं सोममृतावृधा ॥१९॥

—:०:—

६७ सूक्त

अश्विद्वय देवता । वसिष्ठ ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

प्रति वां रथं नृपती जरध्यै हविष्मता मनसा यज्ञियेन ।
यो वां दूतो न धिष्ण्यावजीगरच्छा सूनुर्न पितरा विवक्मि ॥१॥
अशोच्यग्निः समिधानो अस्मे उपो अदृश्रन्तमसश्चिदन्ताः ।
अचेति केतुरुषसः पुरस्ताच्छ्रिये दिवो दुहितुर्जायमानः ॥२॥
अभि वां नूनमश्विना सुहोता स्तोमैः सिषक्ति नासत्या विवक्वान् ।
पूर्वीभिर्यातं पथ्याभिरर्वाक् स्वर्विदा वसुमता रथेन ॥३॥

१८ मित्र, तुम और वरुण द्रोहरहित हो । तुम द्युलोकसे आओ और शत्रु-
होकर सोम-पान करो ।

१९ मित्र और वरुण यज्ञ-नेता हैं । आहुतिकी सेवा करके आओ । यज्ञ-वर्द्धक सोम पान

—:०:—

१ हे दोनों ऋत्विग्-यजमान-स्वामियो, हम हव्य-युक्त स्तोत्रके साथ तुम्हारे रथकी करनेके लिये जाते हैं । स्तुति-योग्य अश्विनीकुमारो, जैसे पुत्र पिताको जगाता है, यह रथ, तुम्हारे दूतकी तरह, लोगोंको जगाता है। उसी रथको अपने सामने आनेको मैं बोलता हूँ ।

२ हमारे द्वारा समिद्ध होकर अग्नि दीप्त होते हैं। तब अन्धकारके सारे प्रदेश देखते हैं । प्रज्ञापक सूर्य द्युलोक-दुहिता (उषा , की पूर्व दिशामें, शोभाके लिये, उत्पन्न होते जाते हैं ।

३ हे नासत्य-(सत्य-रूप)-द्वय, सुन्दर होता और स्तुति-वक्ता स्तोम द्वारा हम तुम्हारी सेवा हैं । फलतः तुमलोग पूर्व मार्गसे जल-ज्ञाता और धन-युक्त रथपर चढ़कर हमारे सामने

अवोर्वां नूनमश्विना युवाकुर्हुवे यद्वां सुते माध्वी वसूयुः ।
आ वां वहन्तु स्थविरासो अश्वाः पिबाथो अस्मे सुषुता मधूनि ॥४॥
प्राचीमु देवाश्विना धियं मेऽमृध्रां सातये कृतं वसूयुम् ।
विश्वा अविष्टं वाज आ पुरन्धीस्ता नः शक्तं शचीपती शचीभिः ॥५॥
अविष्टं धीष्वश्विना न आसु प्रजावद्रेतो अह्रयं नो अस्तु ।
आ वां तोके तनये तूतुजानः सुरत्नासो देववीतिं गमेम ॥६॥
एष स्य वां पूर्वगत्वेव सख्ये निधिर्हितो माध्वी रातो अस्मे ।
अहेलता मनसा यातमर्वागश्नन्ता हव्यं मानुषीषु विक्षु ॥७॥
एकस्मिन्योगे भुरणा समाने परि वां सप्त स्रवतो रथो गात् ।
न वायन्ति सुभ्वो देवयुक्ता ये वां धूर्षु तरणयो वहन्ति ॥८॥

---

४ हे रक्षक और मधुर सोमके योग्य अश्वि-द्वय, मैं सोमके अभिषुत होनेपर, तुम्हारी इच्छासे, धनाभिलाषी होकर तुम्हारी स्तुति करता हूँ; इसलिये आज तुम्हारे प्रवृद्ध अश्वगण तुम्हें ले आवें। हमारे द्वारा अभिषुत और मधुर सोमका पान करो।

५ अश्विनी-देव-द्वय, तुम हमारी धनाभिलाषिणी, सरला और अहिंसिका बुद्धिको लाभके योग्य करो। संग्राममें भी हमारी सारी बुद्धिकी रक्षा करो। शचीपति (कर्मस्वामी) अश्विद्वय, कर्म द्वारा हमें धन प्रदान करो।

६ अश्वि-द्वय, इन कर्मोंमें हमारी रक्षा करो। हमारा वीर्य क्षीण न होने योग्य और पुत्रोत्पादनमें समर्थ हो। तुम्हारी कृपासे पुत्र और पौत्रोंको अभिमत धन देकर और सुन्दर धनवाले होकर हम देव-लाभ-कर यज्ञमें आवें।

७ मधु-प्रिय अश्विनीकुमारो, सखाके लिये पुरोगामी दूतकी तरह हमारा संकलिपत यह सोम निधि-स्वरूप तुम्हारे सामने रखा हुआ है। इसलिये क्रोधशून्य चित्तसे हमारे सामने आओ। मनुष्य-रूप प्रजामें वर्त्तमान हव्य भक्षण करो।

८ सबके पोषक अश्वि-द्वय, तुम दोनोंका मिलन होनेपर तुम्हारा रथ बहनेवाली सात नदियोंको पार कर आता है। सुजन्मा और देव-सम्पन्न जो तुम्हारे अश्व रथको लेकर शीघ्र चलनेवाले तुम्हें ढोते हैं, वे कभी नहीं थकते।

असश्चता मघवद्भ्यो हि भूतं ये राया मघदेयं जुनन्ति ।
प्र ये बन्धुं सूनृताभिस्तिरन्ते गव्या पृञ्चन्तो अश्व्या मघानि ॥९॥
नू मे हवमा श्रृणुतं युवाना यासिष्टं वर्तिरश्विनाविरावत् ।
धत्तं रत्नानि जरतं च सूरीन्यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥१०॥

—:०.—

६८ सूक्त

अश्वि-द्वय देवता । वसिष्ठ ऋषि । विराट् और त्रिष्टुप् छन्द ।

आ शुभ्रा यातमश्विना स्वश्वा गिरो दस्रा जुजुषाणा युवाकोः ।
हव्यानि च प्रतिभृता वीतं नः ॥१॥
प्र वामन्धांसि मद्यान्यस्थुररं गन्तं हविषो वीतये मे ।
तिरो अर्यो हवनानि श्रुतं नः ॥२॥
प्र वां रथो मनोजवा इयर्त्ति तिरो रजांस्यश्विनाशतोतिः ।
अस्मभ्यं सूर्यावसू इयानः ॥३॥

९ तुम लोग कहीं भी आसक्त नहीं होते । जो धनी धनके लिये देने योग्य हव्यको दे, जो सखाको सच्चे वचनोंसे प्रवर्द्धित करता है तथा जो गौ, अश्व और धन देता है, उसके लिये तुम लोग हुए हो ।

१० तुम आज हमारा आह्वान सुनो । नित्य-तरुण अश्वि-द्वय, हव्यवाले गृहमें आओ । रत्नदान करो । स्तोताको वर्द्धित करो । तुम हमें सदा स्वस्ति द्वारा पालन करो ।



१ हे दीप्त और अश्ववाले अश्विद्वय, आओ । तुम शत्रु-हन्ता हो । जो तुम्हें चाहता है, उसकी स्तुतिकी सेवा करो । हमारे प्रस्तुत हव्यका भक्षण करो ।

२ अश्विद्वय, तुम्हारे लिये मदकर अन्न (सोम) प्रस्तुत है । हमारी हविका भक्षण करनेके लिये शीघ्र आओ । हमारे शत्रुका आह्वान न सुनकर हमारा आह्वान सुनो ।

३ सूर्याके साथ रथपर रहनेवाले हे अश्विनीकुमारो, मनकी तरह वेगशाली और सैकड़ों रक्षणसे युक्त तुम्हारा रथ हमारे लिये प्रार्थित होकर और सारे लोकोंको तिरस्कृत करके यज्ञमें आता है ।

अयं ह यद्वां देवया उ अद्रिरूर्ध्वो विवक्ति सोमसुद्युवभ्याम्
आ वल्गू विप्रो ववृतीत हव्यैः ॥४॥
चित्रं ह यद्वां भोजनं न्वस्ति न्यत्रये महिष्वन्तं युयोतम्।
यो वामोमानं दधते प्रियः सन् ॥५॥
उत त्यद्वां जुरते अश्विना भूच्च्यवानाय प्रतीत्यं हविर्दे ।
अधि यद्वर्प इत ऊति धत्थः ॥६॥
उत त्यं भुज्युमश्विना सखायो मध्ये जहुर्दुरेवासः समुद्रे ।
निरीं पर्षदरावा यो युवाकुः ॥७॥
वृकाय चिज्जसमानाय शक्तमुत श्रुतं शयवे हूयमाना ।
यावघ्न्यामपिन्वतमपो न स्तर्यं चिच्छक्त्यश्विना शचीभिः ॥८॥
एष स्य कारुर्जरते सूक्तैरग्रे बुधान उषसां सुमन्मा ।
इषा तं वर्धदघ्न्या पयोभिर्यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥९॥

——:०:——

४ जिस समय मैं तुम्हें देवता बनानेकी इच्छा करता हूँ और जिस समय तुम्हारे लिये सोमका अभिषव करनेवाला यह पत्थर उच्च शब्द करता है, उस समय हे सुन्दर, तुम्हें विप्र (मेधावी यजमान) हव्य द्वारा आवर्त्तित करता हैं।

५ तुम्हारा जो यापनीय (चित्र=भोज्य) धन हैं, उसे हमें दो । जो प्रिय होकर तुम्हारे दिये हुए सुखको धारण करते हैं, उन अत्रिसे महिष्वत् (ऋचीस) को अलग करो ।

६ अश्विनीकुमारो, तुम्हारी स्तुति करनेवाले जीर्ण हव्यदाता च्यवन ऋषिके लिये जो रूप मृत्युसे लाकर तुमने दिया था, वह उनके प्रति गया था।

७ (भुज्युके) दुष्ट-बुद्धि मित्रोंने जो भुज्युको समुद्रके बीच छोड़ दिया था, तुम लोगोंने उन्हें पार किया था। भुज्युने तुम लोगोंकी कामना की थी और कभी विरुद्धाचरण नहीं किया था।

८ जिस समय वृक ऋषि क्षीण हो रहे थे, उस समय अश्वि-द्वय, तुम लोगोंने कर्म और सामर्थ्य द्वारा उन्हें धन दिया था । पुकारे जाकर शयु ऋषिकी बात तुम लोगोंने सुनी थी । जैसे नदी जलसे पूर्ण करती है, वैसे ही वृद्धा गायको तुम लोगोंने दुग्धसे पूर्ण किया था।

९ वह स्तोता (वसिष्ठ) शोभन-मति होकर, उषाके पहले जागकर, सूक्तों द्वारा स्तुति करता है। उसे अन्न द्वारा वर्द्धित करो, दुग्ध द्वारा वर्द्धित करो और उसकी गौको वर्द्धित करो। तुम सदा हमें स्वस्ति द्वारा पालन करो।

६६ सूक्त

अश्वि-द्वय देवता। वसिष्ठ ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

आ वां रथो रोदसी बद्बधानो हिरण्ययो वृषभिर्यात्वश्वैः ।
घृतवर्तनिः पविभी रुचान इषां वोढा नृपतिर्वाजिनीवान् ॥१॥
स पप्रथानो अभि पञ्च भूमा त्रिबन्धुरो मनसा यातु युक्तः ।
विशो येन गच्छथो देवयन्तीः कुत्रा चिद्याममश्विना दधाना ॥२॥
स्वश्वा यशसा यातमर्वाग्दस्रा निधिं मधुमन्तं पिबाथः ।
वि वां रथो बध्वा यादमानोऽन्तान्दिवो बाधते वर्तनिभ्याम् ॥३॥
युवोः श्रियं परि योषावृणीत सूरो दुहिता परितक्म्यायाम् ।
यद्देवयन्तमवथः शचीभिः परि घ्रंसमोमना वां वयो गात् ॥४॥
यो ह स्य वां रथिरा वस्त उस्रा रथो युजानः परियाति वर्तिः ।
तेन नः शं योरुषसो व्युष्टौ न्यश्विना वहतं यज्ञे अस्मिन् ॥५॥

---

१ तरुण अश्वोंसे युक्त होकर तुम्हारा रथ आवे। वह द्यावापृथिवीको बाधा देनेवाला हिरण्मय है। उसके चक्रमें जल है। वह रथकी नेमि (डंडों) के द्वारा दीप्तिमान्, अन्नवाहक यजमानोंका स्वामी (नेता) है।

२ वह रथ पञ्चभूतों (सारे प्राणियों) को प्रसिद्ध करनेवाला तीन बन्धुरों (...योंके बैठनेके तीन उच्च और निम्न काठके स्थानों) और स्तुतिसे युक्त है। अश्वि-द्वय, ... चाहे जिस किसी स्थानमें जानेकी इच्छा करके इस रथपर देवाभिलाषी पूजाके पास ... करो।

३ सुन्दर अश्व और अन्नके साथ तुमलोग हमारे सामने आओ। दस्रद्वय (शत्रु-...) तुम मधुमान् निधि (सोम) का पान करो। तुम लोगोंका रथ सूर्याके साथ गमन करके चक्रके द्वारा द्युलोक तकके प्रदेशोंको, शीघ्र गमनके कारण, पीड़ित करता है।

४ रातमें स्त्री सूर्य-पुत्री तुम्हारे रथको घेरती है। जिस समय तुम देवाभिलाषीको द्वारा रक्षित करते हो, उस समय रक्षणके लिये दीप्त अन्न तुम्हारे यहाँ जाता है।

५ रथवाले अश्विद्वय, वह रथ तेजोंको ढक लेता और अश्वके साथ मार्गमें गमन करता है। अश्विद्वय, उषा (प्रातःकाल) होनेपर हमारे इस यज्ञमें उस रथसे, पापोंके शमन और ... प्राप्तिके लिये, उपस्थित होओ।

नरा गौरेव विद्युतं तृषाणास्माकमद्य सवनोप यातम् ।
पुरुत्रा हि वां मतिभिर्हवन्ते मा वामन्ये नि यमन्देवयन्तः ॥६॥
युवं भुज्युमवविद्धं समुद्र उदूहथुरर्णसो अस्त्रिधानैः ।
पतत्रिभिरश्रमैरव्यथिभिर्दंसनाभिरश्विना पारयन्ता ॥७॥
नू मे हवमा श्रृणुतं युवाना यासिष्टं वर्तिरश्विनाविरावत् ।
धत्तं रत्नानि जरतं च सूरीन्यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥८॥

—:०:—

७० सूक्त

अश्विद्वयदेवता । वसिष्ठ ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

आ विश्ववाराश्विना गतं नः प्र तत्स्थानमवाचि वां पृथिव्याम् ।
अश्वो न वाजी शुनपृष्ठो अस्थादा यत्सेदथुर्ध्रुवसे न योनिम् ॥१॥
सिषक्ति सा वां सुमतिश्चनिष्ठातापि घर्मो मनुषो दुरोणे ।
यो वां समुद्रान्त्सरितः पिपर्त्येतग्वा चिन्न सुयुजा युजानः ॥२॥

---

६ नेतृ-द्वय, मृगीकी तरह विशेष रूपसे दीप्यमान सोमको पीनेकी इच्छा करके आज हमारे सवनोंमें आओ। अनेक यज्ञोंमें यजमान तुम्हें स्तुति द्वारा बुलाते हैं। इसलिये अन्य-देवाभिलाषी तुम्हें दान न करने पावें।

७ अश्विद्वय, तुमलोगोंने समुद्रमें निमग्न भुज्युको अक्षत, अश्रान्त और शीघ्रगामी अश्वों और कार्य द्वारा, पार करते हुए, जलसे निकाला था।

८ तुमलोग आज हमारा आह्वान सुनो। सदा तरुण अश्विद्वय, हव्यवाले घरमें आओ, रत्न दान करो और स्तोताको वर्द्धित करो। तुम सदा हमें स्वस्ति द्वारा पालन करो।

—:०:—

१ सबके वरणीय अश्विनीकुमारो, हमारी यज्ञ-वेदीपर आओ। पृथिवीपर तुम्हारा यही स्थान कहा जाता है। जिस अश्वपर तुमलोग बैठते हो, वह सुखकर पीठवाला अश्व तुम्हारे ही पासमें रहे।

२ अतीव अन्नवाली वह सुन्दर स्तुति तुमलोगोंकी सेवा करती है। घर्म (घाम=धूप) मनुष्यके यज्ञ-गृहमें तप रहा है। वह तुम्हें मिलता है। वह घाम सरितों और समुद्रोंको वृष्टि द्वारा भरता है। जैसे रथमें अश्व जोते जाते हैं, वैसे ही तुम्हें यज्ञमें जोता जाता है।

यानि स्थानान्यश्विना दधाथे दिवो यह्वीष्वोषधीषु विक्षु ।
नि पर्वतस्य मूर्धनि सदन्तेषं जनाय दाशुषे वहन्ता ॥३॥
चनिष्टं देवा ओषधीष्वप्सु यद्योग्या अश्नवैथे ऋषीणाम् ।
पुरूणि रत्ना दधतौन्य स्मे अनु पूर्वाणि चख्यथुर्युगानि ॥४॥
शुश्रुवांसा चिदश्विना पुरूण्यभि ब्रह्माणि चक्षाथे ऋषीणाम् ।
प्रति प्र यातं वरमा जनायास्मे वामस्तु सुमतिश्चनिष्ठा ॥५॥
यो वां यज्ञो नासत्या हविष्मान् कृतब्रह्मा समर्यो भवाति ।
उप प्र यातं वरमा वसिष्ठमिमा ब्रह्माण्यृच्यन्ते युवभ्याम् ॥६॥
इयं मनीषा इयमश्विना गीरिमां सुवृक्तिं वृषणा जुषेथाम् ।
इमा ब्रह्माणि युवयून्यग्मन्यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥७॥



३ अश्विद्वय, तुमलोग द्युलोकसे आकर विशाल ओषधियों और प्रजाओंके बीच स्थान अधिकृत करते हो, पर्वतके मस्तकपर बैठते हुए, अन्नदाताको वही स्थान दो।

४ देवद्वय, तुमलोग ऋषियों द्वारा दिये ओषधि और जलको व्याप्त करते हो, हमारी ओषधि (चरु-पुरोडाश आदि) और जल (सोमरस) की कामना करो। हमें बहुत देते हुए तुमने पहलेके दम्पतियोंको आकृष्ट किया था।

५ अश्वि-द्वय, सुनकर तुमलोगोंने ऋषियोंके अनेक कर्मोंका अभिदर्शन किया इसलिये यजमानके यज्ञमें आओ। हमारे लिये तुम्हारा अत्यन्त अन्न-पूर्ण अनुग्रह हो।

६ नासत्यद्वय, जो यजमान हव्ययुक्त, कृतस्तोत्र और मनुष्योंके साथ मिलता है, वरणीय वसिष्ठके पास आओ। ये सारे मन्त्र तुम्हीं लोगोंके लिये स्तुत होते हैं।

७ अश्विद्वय, तुम्हारे लिये यही स्तुति और यही वचन हुआ। काम-वर्षक-द्वय, इस स्तुतिका सेवा करो। ये सारे कर्म, तुम्हारी कामना करते हुए, सङ्गत हों। तुम सदा हमें द्वारा पालित करो।

—:०:—

७१ सूक्त

अश्विद्वय देवता। वसिष्ठ ऋषि। त्रिष्टुप्छन्द।

अप स्वसुरुषसो नग्जिहीते रिणक्ति कृष्णीररुषाय पन्थाम्।
अश्वामघा गोमघा वां हुवेम दिवा नक्तं शरुमस्मद्युयोतम् ॥१॥
उपायातं दाशुषे मर्त्याय रथेन वाममश्विना वहन्ता।
युयुतमस्मदनिराममीवां दिवा नक्तं माध्वी त्रासीथां नः ॥२॥
आ वां रथमवमस्यां व्युष्टौ सुम्नायवो वृषणो वर्तयन्तु।
स्यूमगभस्तिमृतयुग्भिरश्वैराश्विना वसुमन्तं वहेथाम् ॥३॥
यो वां रथो नृपती अस्ति वोळ्हा त्रिवन्धुरो वसुमाँ उस्रयामा।
आ न एना नासत्योप यातमभि यद्वां विश्वप्स्न्यो जिगाति ॥४॥
युवं च्यवानं जरसोऽमुमुक्तं नि पेदव ऊहथुराशुमश्वम्।
निरंहसस्तमसः स्पर्तमत्रिं नि जाहुषं शिथिरे धातमन्तः ॥५॥

१ अपनी भगिनी उषाके पाससे रात स्वयमेव हट जाती है। कृष्ण-वर्णा रात्रि अरुष (दिन अथवा सूर्य) के लिये मार्ग प्रदान करती है। फलतः हे अश्व-धन और गोधन अश्विद्वय, तुमलोगोंको हम बुलाते हैं। तुमलोग दिन-रात हमारे पाससे हिंसकोंको दूर करो।

२ अश्विद्वय, हविर्दाताके लिये रथ द्वारा रमणीय पदार्थ लाते हुए तुम लोग आओ। अन्नकी दरिद्रता और रोग हमसे दूर करो। हे मधुमान् अश्विद्वय, तुम हमें दिन-रात बचाओ।

३ तुम्हारे रथमें अनायास जोते गये और कामदाता अश्व तुम्हें ले आवें। अश्विद्वय, रश्मिवाले और धनसे युक्त रथको, तुमलोग, जलदाता अश्वोंके द्वारा, ढोओ।

४ यजमान-पालको, तुमलोगोंका वाहक जो रथ तीन वन्धुरों (सारथियोंके बैठने-उठनेके तीन स्थानों) से युक्त, धनवान्, दिनके प्रति गमन करनेवाला और व्यापक होकर जानेवाला है, उसी रथपर तुम हमारे पास आओ।

५ तुमने च्यवन ऋषिका बुढ़ापा छुड़ाया था, पेदु नामक राजाके लिये युद्धमें शीघ्रगामी अश्व भेजा था, अत्रिको पाप और अन्धकारसे पार किया था और जाहुषको भ्रष्ट-राज्यमें पुनः स्थापित किया था।

इयं मनीषा इयमश्विना गीरिमां सुवृक्तिं वृषणा जुषेथाम् ।
इमा ब्रह्माणि युवयून्यग्मन्यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥६॥

—:०:—

७२ सूक्त

अश्विद्वयदेवता। वसिष्ठ ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

आ गोमता नासत्या रथेनाश्वावता पुरश्चन्द्रेण यातम् ।
अभि वां विश्वा नियुतः सचन्ते स्पार्हया श्रिया तन्वा शुभाना ॥१॥
आ नो देवेभिरुप यातमर्वाक् सजोषसा नासत्या रथेन ।
युवोर्हि नः सख्या पित्र्याणि समानो बन्धुरुततस्य वित्तम् ॥२॥
उदु स्तोमासो अश्विनोरबुध्रञ्जामि ब्रह्माण्युषसश्च देवीः ।
आविवासन्रोदसी धिष्ण्येमे अच्छा विप्रो नासत्या विवक्ति ॥३॥
वि चेदुच्छन्त्यश्विना उषासः प्र वां ब्रह्माणि कारवो भरन्ते ।
ऊर्ध्वं भानुं सविता देवो अश्रेद्बृहदग्नयः समिधा जरन्ते ॥४॥

६ अश्वि-द्वय, तुम्हारे लिये यही स्तुति और यही वचन हुआ। काम-वर्षक-द्वय, इस स्तुतिकी सेवा करो। ये सारे कर्म, तुम्हारी कामना करते हुए, सङ्गत हों। तुम सदा हमें द्वारा पालित करो।

—:०:—

१ नासत्यद्वय, तुमलोग गौ, अश्व और धनसे युक्त रथपर आओ। अनेक तुम्हारी सेवा करती हैं। तुमलोग अभिलषणीय शोभा और शरीर द्वारा दीप्यमान

२ नासत्यद्वय, तुमलोग देवोंके साथ समान प्रीतिसे युक्त होकर और रथपर हमारे पास आओ। तुम्हारे साथ हमारा बन्धुत्व पूर्वजोंके समयसे ही चला आता है। और हमारे एक ही बन्धु (=पितामह) हैं। उनका धन भी एक ही है।

३ अश्विद्वयको स्तुतियाँ भली भाँति जगाती हैं। बन्धुस्थानीय सारे कर्म प्रकाशमान जगाते हैं। मेधावी वसिष्ठ स्तुतिसे द्यावापृथिवीकी परिचर्या करके नासत्यद्वयके अभिमुख करते हैं।

४ अश्विद्वय, यदि उषाएँ अन्धकार दूर करें, तो स्तोता विशेष रूपसे तुम्हारा स्तोत्र सविता देवता ऊद्र्ध्व तेजका आश्रय करते हैं। समिधाके द्वारा अग्निदेव भी भली भाँति होते हैं।

आ पश्चातान्नासत्या पुरस्तादाश्विना यातमधरादुदक्तात् ।
आ विश्वतः पाञ्चजन्येन राया यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥५॥

—:०:—

७३ सूक्त

अश्विद्वय देवता। वसिष्ठ ऋषि त्रिष्टुप् छन्द।

अतारिष्म तमसस्पारमस्य प्रति स्तोमं देवयन्तो दधानाः ।
पुरुदंसा पुरुतमा पुरा जामर्त्या हवते अश्विना गीः ॥१॥
न्यु प्रियो मनुषः सादि होता नासत्या यो यजते वन्दते च ।
अश्नीतं मध्वो अश्विना उपाक आ वां वोचे विदथेषु प्रयस्वान् ॥२॥
अहेम यज्ञं पथामुराणा इमां सुवृक्तिं वृषणा जुषेथाम् ।
श्रुष्टीवेव प्रेषितो वामबोधि प्रति स्तोमैर्जरमाणो वसिष्ठः ॥३॥
उप त्या वह्नी गमतो विशं नो रक्षोहणा सम्भृता वीळुपाणी ।
समन्धांस्यग्मत मत्सराणि मा नो मर्धिष्टमा गतं शिवेन ॥४॥

५ नासत्यद्वय, पूर्व, पश्चिम, दक्षिण और उत्तरसे आओ। पञ्च श्रेणियों (ब्राह्मणादि चार वर्ण और निषाद) का हित करनेवाली सम्पत्तिसे भीं आओ। तुम सदा हमें स्वस्ति द्वारा पालन करो।

—:०:—

१ देवाभिलाषी होकर, स्तोत्र करते हुए, हम अज्ञानके पार जायँगे। हे बहुकर्मा, प्रभूततम, पूर्वजात और अमर्त्य अश्विद्वय, तुम्हें स्तोता बुलाता है।

२ तुम्हारा प्रिय मनुष्य होता यहाँ बैठा है। नासत्यद्वय, जो तुम्हारा यज्ञ और वन्दन करता है, उसका मधुर सोमरस, पासमें ठहर कर; भक्षण करो। अन्नवान् होकर यज्ञमें तुम्हें बुलाता हूँ।

३ हम महान् स्तोता हैं। हम आगमनशील देवोंके लिये यज्ञको बढ़ाते हैं। कामवषक-द्वय, इस सुन्दर स्तुतिकी सेवा करो। मैं वसिष्ठ, शीघ्रगामी दूतकी तरह, तुम्हारे पास प्रेरित होकर, स्तोत्र द्वारा स्तुति करते हुए प्रबोधित हुआ हूँ।

४ वे दोनों हव्यवाहक, राक्षस-नाशक, पुष्टाङ्ग और दृढ़-पाणि हैं। वे हमारी प्रजाके पास उपस्थित हों। तुम मदकर अन्नके साथ सङ्गत होओ। हमारी हिंसा नहीं करना। मङ्गलके साथ आओ।

आ पश्चातान्नासत्या पुरस्तादाश्विना यातमधरादुदक्तात् ।
आ विश्वतः पाञ्चजन्येन राया यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥५॥

—:०:—

७४ सूक्त

अश्विद्वय देवता। वसिष्ठ ऋषि। बृहती और सतोबृहती छन्द।

इमा उ वां दिविष्टय उस्रा हवन्ते अश्विना ।
अयं वामह्वेऽवसे शचीवसू विशंविशं हि गच्छथः ॥१॥
यूवं चित्रं ददथुर्भोजनं नरा चोदथां सूनृतावते ।
अर्वाग्रथं समनसा नि यच्छतं पिबतं सोम्यं मधु ॥२॥
आ यातमुप भूषतं मध्वः पिबतमश्विना ।
दुग्धं पयो वृषणा जेन्यावसू मा नो मर्धिष्टमा गतम् ॥३॥
अश्वासो ये वामुप दाशुषो गृहं युवां दीयन्ति बिभ्रतः ।
मक्षूयुभिर्नरा हयेभिरश्विना देवा यातमस्मयू ॥४॥

---

५ नासत्यद्वय, पूर्व, पश्चिम, दक्षिण और उत्तर दिशाओंसे आओ। पञ्च श्रेणियों (आ-दि चार वर्ण और निषाद) का हित करनेवाली सम्पत्तिसे भी आओ। तुम सदा हमें स्वस्ति-पालन करो।

—:०:—

१ निवासप्रद अश्विद्वय, ये स्वर्गकामी लोग तुम्हें बुलाते हैं। कर्मधनद्वय, रक्षाके लिये वसिष्ठ भी तुम्हें बुलाता हूँ। कारण, तुम प्रत्येक प्रजाके पास जाते हो।

२ अश्विद्वय, तुमलोग जो चित्र (भोज्य) धन धारण करते हो, स्तोताके पास उसे प्रेरित करो। समान-मन होकर अपना रथ हमारे सामने प्ररित करो। सोम-सम्बन्धी मधुर रसको पियो।

३ अश्विद्वय, आओ, पासमें ठहरो और मधु (सोमरस) का पान करो। अभीष्टवर्षक धनञ्जय तुम जलका दोहन करो। हमें नहीं मारना। आओ।

४ तुम्हारे जो अश्व हव्यदाताके गृहमें तुम्हें धारण करते हुए जाते हैं, उन्हीं शीघ्रगामी अश्वोंकी सहायतासे हमारी कामना करके आओ।

अधा ह यन्तो अश्विना पृक्षः सचन्त सूरयः ।
ता यंसतो मघवद्भ्यो ध्रुवं यशश्छर्दिरस्मभ्यं नासत्या ॥५॥
प्र ये ययुरवृकासो रथा इव नृपातारो जनानाम् ।
उत स्वेन शवसा शूशुवुर्नर उत क्षियन्ति सुक्षितिम् ॥६॥

—:०:—

७५ सूक्त

उषा देवता । वसिष्ठ ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

व्युषा आवो दिविजा ऋतेनाविष्कृण्वाना महिमानमागात् ।
अप द्रुहस्तम आवरजुष्टमङ्गिरस्तमा पथ्या अजीगः ॥१॥
महे नो अद्य सुविताय बोध्युषो महे सौभगाय प्रयन्धि ।
चित्रं रयिं यशसं धेह्यस्मे देवि मर्तेषु मानुषि श्रवस्युम् ॥२॥
एते त्ये भानवो दर्शतायाश्चित्रा उषसो अमृतास आगुः ।
जनयन्तो दैव्यानि व्रतान्यापृणन्तो अन्तरिक्षा व्यस्थुः ॥३॥

---

५ अश्विद्वय, गमनकर्त्ता स्तोता लोग प्रभूत अन्नका आश्रय करते हैं । तुम हमें अविचल यश और गृह दो । नासत्यद्वय, हम मघवान् (धनी) हैं ।

६ जो दूसरेका धन न ग्रहण कर और मनुष्योंके बीच मनुष्य-रक्षक होकर, रथकी तरह, तुम्हारे पास जाते हैं, वे अपने बलसे वर्द्धित होते और रहनेके सुन्दर स्थानमें जाते हैं ।

—:।:—

१ उषाने अन्तरीक्षमें प्रादुर्भूत होकर प्रकाश किया । अपने तेजके बलसे वह अपनी महिमाको प्रकट करते हुए आयीं । उन्होंने अप्रिय शत्रु और अन्धकारको दूर किया । प्राणियोंके व्यवहारके लिये सबसे गन्तव्य पथको प्रकाशित किया ।

२ आज हमारे महासुखकी प्राप्तिके लिये जागो । उषा, महासौभाग्य प्रदान करो । विचित्र यशसे युक्त धन हमारे लिये धारण करो । मनुष्य-हितकारिणी देवी, मनुष्योंको अन्नवान् पुत्र दो ।

३ दर्शनीय उषाकी ये सब प्रवृद्ध, विचित्र और अविनाशी किरणें, देवोंका व्रत उत्पादन करती और सारे अन्तरीक्षको पूर्ण करती हुई, आती और विविध प्रकारसे फैलती है ।

एषा स्या युजाना पराकात् पञ्च क्षितीः परि सद्यो जिगाति ।
अभिपश्यन्ती वयुना जनानां दिवो दुहिता भुवनस्य पत्नी ॥४॥
वाजिनीवती सूर्यस्य योषा चित्रामघा राय ईशे वसूनाम् ।
ऋषिष्टुता जरयन्ती मघोन्युषा उच्छति वह्निभिर्गृणाना ॥५॥
प्रति द्युतानामरुषासो अश्वाश्चित्रा अदृश्रन्नुषसं वहन्तः ।
याति शुभ्रा विश्वपिशा रथेन दधाति रत्नं विधते जनाय ॥६॥
सत्या सत्येभिर्महती महद्भिर्देवी देवेभिर्यजता यजत्रैः ।
रुजद्दृहलानि ददुस्रियाणां प्रति गाव उषसं वावशन्त ॥७॥
नू तो गोमद्वीरवद्धेहि रत्नमुषो अश्वावत् पुरुभोजो अस्मे ।
मा नो बर्हिः पुरुषता निदे कर्यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥८॥

—:०:—

४ यह वही द्युलोककी दुहिता और भुवनोंकी पालिका उषा प्राणियोंके अभिज्ञानोंको है और दूसरे भी उद्योग करके पञ्च श्रेणियों (चार वर्ण और निषाद) के पास तुरत जाती हैं।

५ अन्नवती, सूर्यगृहिणी, विचित्र धन (रश्मि) वाली उषा धन और देव-धनकी स्वामिनी हैं। ऋषियोंके द्वारा स्तुता, बुढ़ापा देनेवाली और धनवाली उषा यजमान द्वारा स्तुत होकर प्रभात करती हैं।

६ जो दीप्तिवाली उषाको ले जाते हैं, वही विचित्र और शोभन अश्व दिखाई देते हैं। वह उषा दिप्तमती होकर अनेक रूपोंवाले रथसे सर्वत्र जाती हैं। वह अपने परिवारको देती हैं।

७ सत्यरूपा, महती और यजनीया उषा देवी सत्य, महान् और यजनीय देवोंके साथ स्थिर अन्धकारका भेदन करती हैं। गौओंके चरनेके लिये प्रकाश देती हैं। गायें उषाकी करती हैं।

८ उषा, हमें गौ, वीर और अश्वसे युक्त धन दो। हमें बहुत अन्न दो। पुरुषोंके बीच हमारी निन्दा नहीं करना। तुम हमें सदा स्वस्ति द्वारा पालन करो।

———

७६ सूक्त

उषा देवता। वसिष्ठ ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

उदु ज्योतिरमृतं विश्वजन्यं विश्वानरः सविता देवो अश्रेत्।
क्रत्वा देवानामजनिष्ट चक्षुराविरकर्भुवनं विश्वमुषाः ॥१॥
प्र मे पन्था देवयाना अदृश्रन्नमर्धन्तो वसुभिरिष्कृतासः।
अभूदु केतुरुषसः पुरस्तात् प्रतीच्यागादधि हर्म्येभ्यः ॥२॥
तानीदहानि बहुलान्यासन्या प्राचीनमुदिता सूर्यस्य।
यतः परि जार इवाचरन्त्युषो ददृक्षे नपुनर्यतीव ॥३॥
त इद्देवानां सधमाद आसन्नृतावानः कवयः पूर्व्यासः।
गूळ्हं ज्योतिः पितरो अन्वविन्दन्त्सत्यमन्त्रा अजनयन्नुषासम् ॥४॥
समान ऊर्वे अधि संगतासः संजानते न यतन्ते मिथस्ते।
ते देवानां न मिनन्ति व्रतान्यमर्धन्तो वसुभिर्यादमानाः ॥५॥

१ सबके नेता सविता ऊद्र्ध्वदेशमें अविनाशी और सबके लिये हितैषी ज्योतिका आश्रय करते हैं। वह देवोंके कर्मोंके लिये प्रकट हुए हैं। देवोंकी नेत्र-स्वरूपिणी होकर उषाने सारे भुवनोंको प्रकट किया है।

२ मैं हिंसा-रहित और तेज द्वारा सुसंस्कृत देव-यान-पथको देख चुका हूँ। उषाका केतु (प्रज्ञापक तेज) पूर्व दिशामें था। हमारे अभिमुख होकर उषा उन्नत प्रदेशसे आती हैं।

३ उषा, तुम्हारा जो तेज सूर्योदयके पहले ही उदित होता है और जिस तेजके गुणसे तुम कुलटाकी तरह न होकर पति-समीप-गामिनी रमणीकी तरह देखी जाती हो, वही सब तुम्हारा तेज प्रभूत है।

४ जो अङ्गिरोगण सत्यवान्, कवि और प्राचीन समयके पालक हैं; जिन्होंने गूढ़ तेज प्राप्त किया है और जिन्होंने सत्य-स्तुति होकर मन्त्रोंके बलसे उषाको प्रादुर्भूत किया है, वे ही देवोंके साथ एकत्र प्रमत्त हुए थे।

५ वे साधारण गौओंके लिये सङ्गत होकर एक-बुद्धि हुए थे। क्या उन लोगोंने परस्पर यत्न नहीं किया था? वे देवोंके कर्मोंकी हिंसा नहीं करते। हिंसा-शून्य और वासप्रद तेजके द्वारा जाते हैं।

प्रति त्वा स्तोमैरीलते वसिष्ठा उषर्बुधः सुभगे तुष्टुवांसः ।
गवां नेत्री वाजपत्नी न उच्छोषः सुजाते प्रथमा जरस्व ॥६॥
एषा नेत्री राधसः सूनृतानामुषा उच्छन्ती रिभ्यते वसिष्ठैः ।
दीर्घश्रुतं रयिमस्मे दधाना यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥७॥

७७ सूक्त

उषा देवता। वसिष्ठ ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

उषो रुरुचे युवतिर्न योषा विश्वं जीवं प्रसुवन्ती चरायै ।
अभूदग्निः समिधे मानुषाणामकर्ज्योतिर्बाधमाना तमांसि ॥१॥
विश्वं प्रतीची सप्रथा उदस्थाद्रुशद्वासो विभ्रती शुक्रमश्वैत् ।
हिरण्यवर्णा सुदृशीकसंदृग्गवां माता नेत्र्यह्नामरोचि ॥२॥

---

६ सुभगा उषा, प्रातःकाल जगे हुए स्तोता वसिष्ठगण स्तोत्र द्वारा तुम्हारी स्तुति हैं। तुम गौओंकी प्रापिका और अन्न-पालिका हो। हमारे लिये प्रभात करो। सुजन्मा तुम प्रथम स्तुत हो।

७ यह उषा स्तोताकी स्तुतियोंकी नेत्री हैं। यह अन्धकारको दूर कर और सर्वत्र धन हमें देकर वसिष्ठों द्वारा स्तुत होती हैं। तुम सदा हमें स्वस्ति द्वारा पालन करो।

१ तरुणी पत्नीकी तरह उषा सारे जीवोंको, संचरणके लिये, प्रेरित करते हुए सूर्यके दीप्ति पाती हैं। अग्नि मनुष्योंके समिन्धनके योग्य हुए हैं। अग्नि अन्धकार-नाशक तेजको करते हैं।

२ सारे संसारकी अभिमुखी और सर्वत्र प्रसिद्धा उषा उदित हुई। तेजोमय वसन धारण वर्द्धित हुई। हिरण्यवर्णा, दर्शनीय और तेजसे युक्त वाक्योंकी माता और दिनोंकी नेत्री उषा शोभित रही हैं।

देवानां चक्षुः सुभगा वहन्तीः श्वेतं नयन्ती सुदृशीकमश्वम् ।
उषा अदर्शि रश्मिभिर्व्यक्ता चित्रामघा विश्वमनु प्रभूता ॥३॥
अन्तिवामा दूरे अमित्रमुच्छोर्वीं गव्यूतिमभयं कृधी नः ।
यावय द्वेष आ भरा वसूनि चोदय राधो गृणते मघोनि ॥४॥
अस्मे श्रेष्ठेभिर्भानुभिर्वि भाह्युषो देवि प्रतिरन्ती न आयुः ।
इषं च नो दधती विश्ववारे गोमदश्वावद्रथवच्च राधः ॥५॥
यां त्वा दिवो दुहितर्वर्धयन्त्युषः सुजाते मतिभिर्वसिष्ठाः ।
सास्मासु धा रयिमृष्वं बृहन्तं यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥६॥

---

७८ सूक्त

उषा देवता । वसिष्ठ ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

प्रति केतवः प्रथमा अदृश्रन्नूर्ध्वा अस्या अञ्जयो विश्रयन्ते ।
उषो अर्वाचा बृहता रथेन ज्योतिष्मता वाममस्मभ्यं वक्षि ॥१॥

---

३ देवोंके नेत्र स्थानीय तेजका वहन करनेवाली, सुभगा, अपनी किरणोंसे प्रकाशिता, विचित्र धनवाली और संसारके सम्बन्धमें प्रवृद्धा उषा सुदर्शन अश्वको श्वेतवर्ण करते दिखाई दे रही हैं।

४ उषा, हमारे पास तुम वननीय (विचित्र) धनवाली होकर और हमारे शत्रुको दूर करके विभासित होओ। हमारी विस्तृत गोचर-भूमिको भय-रहित करो। द्वेषियोंको अलग करो। शत्रुओंका धन ले आओ। धनवाली उषा, स्तोताके पास धन भेजो।

५ उषा देवी, हमारी आयु बढ़ाते हुए, श्रेष्ठ किरणोंके साथ, हमारे लिये प्रकाशित होओ सबकी वरणीया (स्वीकरणीया) उषा. हमें लक्ष्य करके गौ और अश्वसे युक्त धन धारण करते हुए। प्रकाशित होओ।

६ हे द्युलोककी पुत्री और सुजन्मा उषा, वसिष्ठ लोग स्तुति द्वारा तुम्हें वर्द्धित करते हैं। तुम हमें रमणीय और महान् धन दो। तुम हमें सदा स्वस्ति द्वारा पालन करो।

—:o:—

१ प्रथम उत्पन्न केतु देखे जाते हैं। इनकी व्यञ्जक रश्मियाँ ऊद्ध्र्व-मुख होकर सर्वत्र आश्रय करती हैं। उषा देवी, हमारे सामने आये हुए, विशाल और ज्योतिष्क रथ द्वारा हमारे लिये रमणीय धन ढोओ।

प्रतिषीमग्निर्जरते समिद्धः प्रति विप्रासो मतीभिर्गृणन्तः ।
उषा याति ज्योतिषा बाधमाना विश्वा तमांसि दुरिताप देवी ॥२॥
एता उत्याः प्रत्यदृश्रन् पुरस्ताज्ज्योतिर्यच्छन्तीरुषसो विभातीः ।
अजीजनन्त्सूर्यं यज्ञमग्निमपाचीनं तमो अगादजुष्टम् ॥३॥
अचेति दिवो दुहिता मघोनी विश्वे पश्यन्त्युषसं विभातीम् ।
आस्थाद्रथं स्वधया युज्यमानमायमश्वासः सुयुजो वहन्ति ॥४॥
प्रति त्वाद्य सुमनसो बुधन्तास्माकासो मघवानो वयं च ।
तिल्विलायध्वमुषसो विभातीर्यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥५॥

७६ सूक्त

उषा देवता । वसिष्ठ ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

व्युषा आवः पथ्या जनानां पञ्चक्षितीर्मानुषीर्बोधयन्ती ।
सुसंदृग्भिरुक्षभिर्भानुमश्रेद्वि सूर्यो रोदसी चक्षसावः ॥१॥

---

२ समिद्ध होकर अग्नि सर्वत्र बढ़ते हैं। मेधावी लोग स्तुति द्वारा उषाकी स्तुति द्वारा प्रवृद्ध होते हैं। उषा देवी भी ज्योति द्वारा सारे अन्धकारों और पापोंको रोकते हुए जाती हैं।

३ ये सब प्रभात-कारिणी और तेजःप्रदायिनी उषाएँ पूर्व दिशामें देखी जाती हैं। इन्होंने अग्नि और यज्ञको प्रादुर्भूत किया, जिससे नीचगामी और अप्रिय अन्धकार दूर हुआ।

४ द्युलोककी पुत्री और धनवती उषा जानी गयी हैं। सभी लोग प्रभातकारिणी उषाको देखते हैं। वे अन्नवाले रथपर चढ़ी हैं। सुयोजित अश्व इस रथको ले जाते हैं।

५ उषा, हम और हमारे सुमना तथा धनवान् लोग आज तुम्हें जगाते हैं। उषाओ, तुम प्रभात-कारिणी होकर संसारको स्निग्ध करो। तुम सदा हमें स्वस्ति द्वारा पालन करो।

१ मनुष्योंकी हितैषिणी उषा अन्धकारका विनाश करती हैं, पञ्चश्रेणियोंके मनुष्योंको जगाती हैं और उत्तम तेजवाली किरणों द्वारा सूर्यका आश्रय करती हैं। सूर्य भी तेजसे द्यावापृथिवीको प्रकाशित करते हैं।

व्यञ्जते दिवो अन्तेष्वक्तून् विशो न युक्ता उषसो यतन्ते ।
सन्ते गावस्तम आवर्तयन्ति ज्योतिर्यच्छन्ति सवितेव बाहू ॥२॥
अभूदुषा इन्द्रतमा मघोन्यजीजनत् सुविताय श्रवांसि ।
वि दिवो देवी दुहिता दधात्यङ्गिरस्तमा सुकृते वसूनि ॥३॥
तावदुषो राधो अस्मभ्यं रास्व यावत् स्तोतृभ्यो अरदो गृणाना ।
यां त्वा जज्ञुर्वृषभस्या रवेण वि दृह्लस्य दुरो अद्रेरौर्णोः ॥४॥
देवं देवं राधसे चोदयन्त्यस्मद्र्यक् सूनृता ईरयन्ती ।
व्युच्छन्ती नः सनये धियो धा यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥५॥

८० सूक्त

उषा देवता । वसिष्ठ ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

प्रति स्तोमेभिरुषसं वसिष्ठा गीर्भिर्विप्रासः प्रथमा अबुध्रन् ।
विवर्तयन्तीं रजसी समन्ते आविष्कृण्वतीं भुवनानि विश्वा ॥१॥

---

२ उषाएँ अन्तरिक्ष-प्रदेशमें तेज व्यक्त करती हैं और परस्पर मिलकर, प्रजाकी तरह, तमोनाशके लिये, चेष्टा करती हैं । उषा, तुम्हारी किरणें अन्धकारका विनाश करती हैं । सूर्यकी भुजाओंकी तरह वे ज्योति प्रदान करती हैं ।

३ सबसे बढ़कर स्वामिनी और धनवती उषा प्रादुर्भुत हुई । उन्होंने सबके कल्याणके लिये अन्न उत्पन्न किया है । स्वर्गकी पुत्री और सबसे उत्तम अङ्गिरा (गतिशीला अथवा अङ्गिरोगोत्रोत्पन्ना) उषा देवी सुकृतीके लिये धन धारण करती हैं ।

४ उषा, तुमने प्राचीन स्तोताओंको जितना धन दिया है, उतना हमें भी दो । वृषभ (प्रवृद्ध स्तोत्र) के शब्दसे तुम्हें प्राणी जानते हैं । प्राणियों द्वारा गोहरणके समय तुमने दृढ़ पर्वतका द्वार खोला था

५ धनके लिये स्तोताओंको और हमारे सामने सूनृत (सच्चे) वाक्यको प्रेरित करते हुए, तमोविनाशिनी होकर, हमारे दानके लिये अपनी बुद्धिको स्थिर करो । तुम हमें सदा स्वस्ति द्वारा पालन करो ।

—:०:—

१ मेधावी (विप्र) वसिष्ठगणने स्तोत्र और स्तवके द्वारा उषा देवीको, सभी लोगोंसे पहले, गाया था । उषा समान प्रान्तवाली, द्यावापृथिवीको आवृत करती और प्राणियोंको प्रकाशित करती हैं ।

एषा स्या नव्यमायुर्दधाना गूढ्वीतमो ज्योतिषोषा अबोधि ।
अग्र एति युवतिरह्रयाणा प्राचिकितत् सूर्यं यज्ञमग्निम् ॥२॥
अश्वावतीर्गोमतीर्न उषासो वीरवतीः सदमुच्छन्तु भद्राः ।
घृतं दुहाना विश्वतः प्रपीता यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥३॥

---

२ यह वही उषा हैं, जो नवयौवन धारण करके और तेज द्वारा निगूढ़ अन्धकारको करके जागती हैं। लज्जाहीना युवतीकी तरह यह सूर्यके सम्मुख आगमन करती और सूर्य, अग्निको सूचित करती हैं।

३ अनेक अश्वों और गौओंवाली तथा स्तुत्य उषाएँ सदा अन्धकार दूर करती हैं। दूहती और सर्वत्र वढ़ती हैं। तुम सदा हमें स्वस्ति द्वारा पालन करो।

पञ्चम अध्याय समाप्त

षष्ठ अध्याय

८१ सूक्त

उषा देवता । वसिष्ठ ऋषि । बृहती और सतोबृहती छन्द ।

प्रत्यु अदर्श्यायत्युच्छन्ती दुहिता दिवः ।
अपो महि व्ययति चक्षसे तमो ज्योतिष्कृणोति सूनरी ॥१॥
उदुस्रियाः सृजते सूर्यः सचाँ उद्यन्नक्षत्रमर्चिवत् ।
तवेदुषो व्युषि सूर्यस्य च संभक्तेन गमेमहि ॥२॥
प्रति त्वा दुहितर्दिव उषो जीरा अभुत्स्महि ।
या वहसि पुरु स्पार्हं वनन्वति रत्नं न दाशुषे मयः ॥३॥
उच्छन्ती या कृणोषि मंहना महि प्रख्यै देवि स्वर्दृशे ।
तस्यास्ते रत्नभाज ईमहे वयं स्याम मातुर्न सूनवः ॥४॥

---

१ द्युलोक वा सूर्यकी पुत्री और अन्धकार-नाशिनी उषा आती हुई देखी जाती हैं । सबके देखनेके लिये वह रात्रिके घोर अन्धकारको दूर करती हैं और मनुष्योंकी नेत्री होकर तेजका विकास करती हैं ।

२ सूर्य किरणोंको एक साथ फेंकते हैं । सूर्य प्रकट होकर ग्रह-नक्षत्रादिकोंको प्रकाशशाली करते हैं । उषा, तुम्हारा और सूर्यका प्रकाश होनेपर हम अनके साथ मिलें वा अन्नको प्राप्त करें ।

३ द्युलोक-पुत्री उषा, हम शीघ्रकर्मी होकर तुम्हें जगावेंगे । धनशालिनी उषा, तुम अभिलषणीय बहुत धनका वहन करती हो । यजमानके लिये रत्न और सुखका वहन करती हो ।

४ महती देवी, तुम अन्धकारका नाश करनेवाली और महिमाशाली हो । तुम सारे जगत्का प्रबोधन और उसे दर्शनके योग्य करती हो । तुम रत्नवाली हो । तुमसे हम याचना करते हैं । जैसे पुत्र माताके लिये प्रिय होता है, वैसे ही हम तुम्हारे होंगे ।

तच्चित्रं राध आ भरोषो यद्दीर्घश्रुत्तमम् ।
यत्ते दिवो दुहितर्मर्तभोजनं तद्रास्व भुनजामहै ॥५॥
श्रवः सूरिभ्यो अमृतं वसुत्वनं वाजाँ अस्मभ्यं गोमतः ।
चोदयित्री मघोनः सूनृतावत्युषा उच्छदप स्त्रिधः ॥६॥

—:०:—

८२ सूक्त

इन्द्र और वरुण देवता । वसिष्ठ ऋषि । जगती छन्द ।

इन्द्रावरुणा युवमध्वराय नो विशे जनाय महि शर्म यच्छत
दीर्घप्रयज्युमति यो वनुष्यति वयं जयेम पृतनासु दूढ्यः
सम्राउन्यः स्वराउन्य उच्यते वां महान्ताविन्द्रावरुणा महाव
विश्वेदेवासः परमे व्योमनि सं वामोजो वृषणा सं बलं द
अन्वपां खन्यतृन्तमोजसा सूर्यमैरयतं दिवि प्रभुम् ।
इन्द्रावरुणा मदे अस्य मायिनोऽपिन्वतमपितः पिन्वतं धिय

५ उषा, जो धन अत्यन्त दूरके स्थानमें विख्यात है, वही विचित्र धन ले
द्युलोक दुहिता, तुम्हारे पास मनुष्योंके लिये भोज्य जो अन्न है, वह दो । हम भी भोग

६ उषा, स्तोताओंको अमर, निवास-प्रद और प्रसिद्ध यश दो । हमें अनेक गौओंसे
दो। यजमानकी प्रेरिका और सत्य वचनवाली उषा शत्रुओंको दूर करें ।

---

१ इन्द्र और वरुण, तुम हमारे परिचारकके लिये, यज्ञ-कर्मार्थ, महागृह दो। जो
समय तक यज्ञ-कर्त्ताको मारता है, युद्धमें हम उसी दुर्बुद्धि शत्रुको जीतेंगे ।

२ इन्द्र और वरुण, तुम महान् हो और महाधनवाले हो। तुममेंसे एक (वरुण)
और दूसरे (इन्द्र) स्वयं विराजमान हैं । काम-वर्षक-द्वय, उत्तम आकाशमें विश्वदेवोंने
प्रदान किया था—साथ ही बल भी प्रदान किया था।

३ इन्द्र और वरुण, तुम लोगोंने बल द्वारा जलका द्वार (वृष्टि) उद्घाटित
तुमने सबके प्रेरक सूर्यको आकाशमें गमन कराया था । इस मायी (प्रजोत्पादक)
पानसे आनन्द होने पर तुमलोग सूखी नदियोंको जलसे पूर्ण करो और कर्मोंको भी पूर्ण

युवामिद्युत्सु पृतनासु वह्नयो युवां क्षेमस्य प्रसवे मितज्ञवः ।
ईशाना वस्व उभयस्य कारव इन्द्रावरुणा सुहवा हवामहे ॥४॥
इन्द्रावरुणा यदिमानि चक्रथुर्विश्वा जातानि भुवनस्य मज्मना ।
क्षेमेण मित्रो वरुणं दुवस्यति मरुद्भिरुग्रः शुभमन्य ईयते ॥५॥
महे शुल्काय वरुणस्य नु त्विष ओजो मिमाते ध्रुवमस्य यत्स्वम् ।
अजामिमन्यः श्नथयन्तमातिरद्दभ्रेभिरन्यः प्र वृणोति भूयसः ॥६॥
न तमंहो न दुरितानि मर्त्यमिन्द्रावरुणा न तपः कुतश्चन ॥
यस्य देवा गच्छथो वीथो अध्वरं न तं मर्तस्य नशते परिह्वृतिः ॥७॥
अर्वाङ्नरा दैव्येनावसा गतं शृणुतं हवं यदि मे जुजोषथः ।
युवोर्हि सख्यमुत वा यदाप्यं मार्डीकमिन्द्रावरुणा नि यच्छतम् ॥८॥

---

४ इन्द्र और वरुण, स्तोता लोग, युद्ध-स्थलमें, शत्रु-सेनाके बीच, रक्षाके लिये और सङ्कुचित-जानु अङ्गिरा लोग रक्षणके लिये, तुम्हें ही बुलाते हैं। तुमलोग दिव्य और पार्थिव—दोनों धनोंके ईश्वर और अनायास बुलाने योग्य हो। हम स्तोता तुम्हें बुलाते हैं।

५ इन्द्र और वरुण, तुमलोगोंने संसारके सारे प्राणियोंका निर्माण किया है। तुमलोगोंमेंसे मङ्गलके लिये एक (वरुण) की परिचर्या मित्र करते हैं और दूसरे (इन्द्र) मरुतोंके साथ तेजस्वी होकर शोभन अलङ्कार प्राप्त करते हैं।

६ महान् धनकी प्राप्तिके लिये, इन्द्र और वरुणके प्रकाशनार्थ, शीघ्र बल प्राप्त हो जाता है। इन दोनोंका यह बल नित्य और असाधारण है। इनमेंसे एक जन (वरुण) हिंसाकारीका अपघात करते हैं और दूसरे (इन्द्र) अल्प उपायोंसे ही अनेक शत्रुओंको बाधित करते हैं।

७ इन्द्र और वरुण देवो, तुम जिस मनुष्यके यज्ञमें गमन करते हो, जिसकी कामना करते हो, उसके पास बाधा नहीं जा सकती, पाप नहीं जा सकता, दुष्कर्म नहीं जा सकता और किसी भी कारणसे उसके पास सन्ताप भी नहीं जा सकता।

८ नेता इन्द्र और वरुण, यदि मुझसे प्रसन्न हो, तो दिव्य रक्षाके साथ मेरे सामने आओ। स्तोत्र श्रवण करो। तुम लोगोंके सखित्व (मित्रता) और बन्धुत्व (कुटुम्बत्व) सुखके साधक हैं। हमें दोनों दो।

अस्माकमिन्द्रावरुणा भरे भरे पुरोयोधा भवतं कृष्ट्योजसा ।
यद्वाँ हवन्त उभये अध स्पृधि नरस्तोकस्य तयनस्य सातिषु ॥९॥
अस्मे इन्द्रो वरुणो मित्रो अर्यमा द्युम्नं यच्छन्तु महि शर्म सप्रथः ।
अवध्रं ज्योतिरदितेर्ऋतावृधो देवस्य श्लोकं सवितुर्मनामहे ॥१०॥



८३ सूक्त

इन्द्र और वरुण देवता । वसिष्ठ ऋषि । जगती छन्द ।

युवां नरा पश्यमानास आप्यं प्राचा गव्यन्तः पृथुपर्शवो ययुः ।
दासा च वृत्रा हतमार्याणि च सुदासमिन्द्रावरुणावसावतम् ॥१॥
यत्रा नरः समयन्ते कृतध्वजो यस्मिन्नाजा भवति किं चन प्रियम् ।
यत्रा भयन्ते भुवना स्वर्दृशस्तत्रा न इन्द्रावरुणाधि वोचतम् ॥२॥
सं भूम्या अन्ता ध्वसिरा अदृक्षतेन्द्रावरुणा दिवि घोष आरुहत् ।
अस्थुर्जनानामुप मामरातयोऽर्वागवसा हवनश्रुता गतम् ॥३॥

९ शत्रु-कर्षक तेजवाले इन्द्र और वरुण, प्रत्येक संग्राममें हमारे अग्रणी योद्धा ... तुम्हें प्राचीन और आधुनिक—दोनों प्रकारके नेता ही युद्धमें और पुत्र, पौत्र आदिकी ... बुलाते हैं।

१० इन्द्र, वरुण, मित्र और अर्यमा हमें प्रकाशमान धन और महान् विस्तीर्ण गृह प्रदान ... यज्ञ-वर्द्धिका अदितिका तेज हमारे लिये अहिंसक हो । हम सविता देवताकी स्तुति करें।

१ नेता इन्द्र और वरुण, तुम्हारी मित्रता देखकर, गो-प्राप्तिकी इच्छासे, मोटे परशु (... काटनेका हथियार) वाले यजमान पूर्व दिशाकी ओर गये । तुमलोग दास, वृत्र और सुदास-शत्रु... गणको मार डालो और सुदास राजाके लिये, रक्षणके साथ, आओ।

२ जहाँ मनुष्य ध्वजा उठाकर युद्धार्थ मिलते हैं, जिस युद्धमें कुछ भी अनुकूल नहीं हो... जिसमें प्राणी स्वर्ग-दर्शन करते हैं, उस युद्धमें, हे इन्द्र और वरुण, हमरे पक्षपात... कहना ।

३ इन्द्र और वरुण, पृथिवीके सारे अन्त सैनिकों द्वारा विनष्ट होकर दिखाई देते हैं। ... कोंका कोलाहल द्युलोकमें फैल रहा है। मेरी सेनाके सारे शत्रु मेरे पास आये हुए हैं। ... श्रवणकारी इन्द्र और वरुण, रक्षणके साथ, हमारे पास आओ।

इन्द्रावरुणा वधनाभिरप्रति भेदं वन्वन्ता प्र सुदासमावतम् ।
ब्रह्माण्येषां शृणुतं हवीमनि सत्या तृत्सूनामभवत् पुरोहितिः ॥४॥
इन्द्रावरुणाभ्या तपन्ति माघान्यर्यो वनुषामरातयः ।
युवं हि वस्व उभयस्य राजथोऽध स्मा नोवतं पार्ये दिवि ॥५॥
युवां हवन्त उभयास आजिष्विन्द्रं च वस्वो वरुणं च सातये ।
यत्र राजभिर्दशभिर्निबाधितं प्र सुदासमावतं तृत्सुभिः सह ॥६॥
दश राजानः समिता अयज्यवः सुदासमिन्द्रावरुणा न युयुधुः ।
सत्या नृणामद्म सदामुपस्तुतिर्देवा एषामभवन्देवहूतिषु ॥७॥
दाशराज्ञे परियत्ताय विश्वतः सुदास इन्द्रावरुणावशिक्षतम् ।
श्वित्यञ्चो यत्र नमसा कपर्दिनो धिया धीवन्तो असपन्त तृत्सवः ॥८॥
वृत्राण्यन्यः समिथेषु जिघ्नते व्रतान्यन्यो अभि रक्षते सदा ।
हवामहे वां वृषणा सुवृक्तिभिरस्मे इन्द्रावरुणा शर्म यच्छतम् ॥९॥

---

४ इन्द्र और वरुण, आयुध द्वारा अप्राप्त भेद नामक शत्रुको मारते हुए तुमलोगोंने सुदास राजाकी रक्षा की थी और तृत्सुओंके स्तोत्रोंको सुना था। युद्ध-कालमें तृत्सुओंका पौरोहित्य सफल हुआ था।

५ इन्द्र और वरुण, मुझे चारो ओरसे शत्रुओंके हथियार घेर रहे हैं और हिंसकोंके बीच मुझे शत्रु बाधा दे रहे हैं। तुमलोग दोनों (दिव्य और पार्थिव) प्रकारके धनोंके स्वामी हो; इसलिये युद्धके दिनोंमें हमारी रक्षा करो।

६ युद्ध-कालमें दोनों (सुदास और तृत्सु) प्रकारके लोग धन-प्राप्तिके लिये इन्द्र और वरुणको बुलाते हैं। इस युद्धमें दस राजाओं द्वारा प्रपीड़ित सुदासको, तृत्सुओंके साथ, तुमने बचाया था।

७ इन्द्र और वरुण, दस यज्ञ-हीन राजा परस्पर मिलकर भी सुदास राजापर प्रहार करनेमें समर्थ नहीं हुए। हव्य-युक्त यज्ञमें नेताओंका स्तोत्र सफल हुआ है। इनके यज्ञमें समस्त देवता आविर्भूत हुए थे।

८ जहाँ निर्मल, जटावाले और कर्मठ तृत्सुगण (वसिष्ठ-शिष्य) अन्न और स्तुतिके साथ परिचर्या किया करते हैं, उसी देशमें दस राजाओं द्वारा चारो ओरसे घेरे हुए सुदासको, हे इन्द्र और वरुण, तुमलोगोंने बल प्रदान किया था।

९ इन्द्र और वरुण, तुममेंसे एक (इन्द्र) युद्धमें वृत्रोंका नाश करते हैं और दूसरे (वरुण) व्रत वा कर्मकी रक्षा करते हैं। अभीष्ट-वर्षक-द्वय, सुन्दर स्तुति द्वारा तुम्हें हम बुलाते हैं। तुम हमें सुख दो।

अस्मे इन्द्रो वरुणो मित्रो अर्यमा द्युम्नं यच्छन्तु महि शर्म सप्रथः।
अवधूज्योतिरदितेऋतावृधो देवस्य श्लोकं सवितुर्मनामहे ॥१०॥



८४ सूक्त

इन्द्र और वरुण देवता। वसिष्ठ ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

आ वां राजानावध्वरे ववृत्यां हव्येभिरिन्द्रावरुणा नमोभिः।
प्र वां घृताची बाह्वोर्दधाना परि त्मना विषुरूपा जिगाति ॥१॥
युवो राष्ट्रं बृहदिन्वति द्यौर्यौ सेतृभिररज्जुभिः सिनीथः।
परि नो हेळो वरुणस्य वृज्या उरुं न इन्द्रः कृणवदु लोकम् ॥२॥
कृतं नो यज्ञं विदथेषु चारुं कृतं ब्रह्माणि सूरिषु प्रशस्ता।
उपो रयिर्देवजूतो न एतु प्र णः स्पार्हाभिरूतिभिस्तिरेतम् ॥३॥
अस्मे इन्द्रावरुणा विश्ववारं रयिं धत्तं वसुमन्तं पुरुक्षुम्।
प्र य आदित्यो अनृता मिनात्यमिता शूरो दयते वसूनि ॥४॥

१० इन्द्र, वरुण, मित्र और अर्यमा हमें प्रकाशमान धन और महान् विस्तीर्ण गृह प्रदान करें। यज्ञ-वर्द्धिका अदितिका तेज हमारे लिये अहिंसक हो। हम सविता देवताकी स्तुति करते हैं।



१ इन्द्र और वरुण, इस यज्ञमें, मैं तुम्हें, हव्य और स्तोत्र द्वारा, आवर्त्तित करता हूँ। हाथों नाना रूपोंवाली जुहू स्वयं तुमलोगोंकी ओर जाती है।

२ इन्द्र और वरुण, तुम्हारा स्वर्गरूप विशाल राष्ट्र वृष्टि द्वारा सबको प्रसन्न करता है। तुम रज्जुशून्य और बाधक उपायोंसे पापीको बाँधो। वरुणका क्रोध हमलोगोंकी रक्षा करके गमन करे। इन्द्र भी स्थानको विस्तृत करें।

३ इन्द्र और वरुण, हमारे गृहके यज्ञको मनोरम करो। स्तोताओंके स्तोत्रको उत्तम करो। देवों द्वारा प्रेरित धन हमारे पास आवे। अभिलषणीय रक्षा द्वारा वे हमें वर्द्धित करें।

४ इन्द्र और वरुण हमें सबके लिये वरणीय निवास स्थान और बहुत अन्नवाला धन दो। जो आदित्य (वरुण) असत्यका विनाश करते हैं, वही शूर लोगोंको अपरिमित धन देते हैं।

इयमिन्द्रं वरुणमष्ट मे गीः प्रावत्तोके तनये तूतुजाना ।
सुरत्नासो देववीतिं गमेम यू यं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥५॥

८५ सूक्त

इन्द्र और वरुण देवता। वसिष्ठ ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

पुनीषे वामरक्षसं मनीषां सोममिन्द्राय वरुणाय जुह्वत् ।
घृतप्रतीकामुषसं न देवीं ता नो यामन्नुरुष्यतामभीके ॥१॥
स्पर्धन्ते वा उ देवहूये अत्र येषु ध्वजेषु दिद्यवः पतन्ति ।
युवं ताँ इन्द्रावरुणावमित्रान् हतं पराचः शर्वा विषूचः ॥२॥
आपश्चिद्धि स्वयशसः सदःसु देवीरिन्द्रं वरुणं देवता धुः ।
कृष्टीरन्यो धारयति प्रविक्ता वृत्राण्यन्यो अप्रतीनि हन्ति ॥३॥

---

५ मेरी यह स्तुति इन्द्र और वरुणको व्याप्त करे। मेरी की हुई स्तुति, पुत्र और पौत्रके सम्बन्धमें, हमारी रक्षा करे। हम सुन्दर रत्नवाले होकर यज्ञ पावेंगे। तुम सदा हमें स्वस्ति द्वारा पालन करो।

---

१ इन्द्र और वरुण, तुमलोगोंके लिये अग्निमें सोमकी आहुति करते हुए दीप्तमती उषाकी तरह दीप्ताङ्ग और राक्षस-शून्या स्तुतिका मैं शोधन करता हूँ । वे युद्ध उपस्थित होनेपर यात्रा करते समय हमें बचावें।

२ परस्पर स्पर्द्धावाले युद्धमें हमसे शत्रु स्पर्द्धा करते हैं। जिस युद्धमें ध्वजाके ऊपर आयुध गिरते हैं, उसमें, हे इन्द्र और वरुण, तुम लोग हिंसक आयुध द्वारा पराङ्मुख और विविध गतियोंवाले शत्रुओंका नाश करो।

३ सारे सोम स्वायत्त यशवाले और द्योतमान होकर गृहोंमें इन्द्र और वरुण देवोंको धारण करते हैं। उनमेंसे एक (वरुण) प्रजागणको अलग-अलग करके धारण करते हैं और दूसरे (इन्द्र) दूसरों द्वारा अप्रतिहत शत्रुओंका विनाश करते हैं।

स सुक्रतुर्ऋतचिदस्तु होता य आदित्य शवसा वां नमस्वान्।
आववर्तदवसे वा हविष्मानसदित् स सुविताय प्रयस्वान् ॥४॥
इयमिन्द्रं वरुणमष्ट मे गीः प्रावत्तोके तनये तूतुजाना।
सुरत्नासो देववीतिं गमेम यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥५॥



८६ सूक्त

वरुण देवता। वसिष्ठ ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

धीरा त्वस्य महिना जनूंषि वि यस्तस्तम्भ रोदसी चिदुर्वी।
प्र नाकमृष्वं नुनुदे बृहन्तं द्विता नक्षत्रं पप्रथच्च भूम ॥१॥
उत स्वया तन्वा सं वदे तत् कदा न्वन्त र्वरुणे भुवानि।
किं मे हव्यमहृणानो जुषेत कदा मृलीकं सुमना अभि ख्यम् ॥२॥

४ आदित्यो (अदिति-पुत्रो), तुमलोग बलशाली हो। जो नमस्कारके साथ तुम्हें करता है, वही शोभन कर्मवाला होता यज्ञ-ज्ञाता हो। जो हव्यवाला व्यक्ति, तृप्तिके लिये, तुम्हें करता है, वह अन्नवान् होकर प्राप्तव्य फलको पाता है।

५ मेरी यह स्तुति इन्द्र और वरुणको व्याप्त करे। मेरी की हुई स्तुति, पुत्र-पौत्रके बारेमें, मेरी रक्षा करे। सुन्दर रत्नवाले होकर हम यज्ञ पावेंगे। तुम हमें सदा स्वस्ति-पालन करो।

---

१ महिमासे वरुणका जन्म धीर वा स्थिर हुआ है। इन्होंने विशाल द्यावापृथिवीको कर रखा हैं। इन्होंने आकाश और दर्शनीय नक्षत्रको दो बार प्रेरित किया है। इन्होंने विस्तृत किया है।

२ क्या मैं अपने शरीरके साथ अथवा वरुणके साथ रहूँगा? कब वरुणके पास क्या वरुण क्रोध-शून्य होकर मेरे हव्यकी सेवा करेंगे? मैं सुन्दर मनवाला होकर कब वरुणको देख पाऊँगा?

पृच्छे तदेनो वरुण दिदृक्षूपो एमि चिकितुषो विपृच्छम् ।
समानमिन्मे कवयश्चिदाहुरयं तुभ्यं वरुणो हृणीते ॥३॥
किमाग आस वरुण ज्येष्ठं यत् स्तोतारं जिघांससि सखायम् ।
प्र तन्मे वोचो दूलभ स्वधावोव त्वानेना नमसा तुर इयाम् ॥४॥
अव द्रुग्धानि पित्र्या सृजा नोव या वयं चकृमा तनूभिः ।
अव राजन् पशुतृपं न तायुं सृजा वत्सं न दाम्नो वसिष्ठम् ॥५॥
न स स्वो दक्षो वरुण ध्रुतिः सा सुरा मन्युर्विभीदको अचित्तिः ।
अस्ति ज्यायान् कनीयस उपारे स्वप्नश्चनेदनृतस्य प्रयोगता ॥६॥
अरं दासो न मीह्लुषे कराण्यहं देवाय भूर्णयेऽनागाः ।
अचेतयदचितो देवो अर्यो गृत्सं राये कवितरो जुनाति ॥७॥

३ वरुण, देखनेकी इच्छा करके मैं उस पापकी बात तुमसे पूछूँगा । मैं विविध प्रश्नोंके लिये विद्वानोंके पास गया हूँ । सभी कवि (क्रान्तदर्शी, मुझे एक-समान बोल चुके हैं कि, "यह वरुण तुमसे क्रुद्ध हुए हैं ।"

४ वरुण, मैंने ऐसा क्या अपराध किया है कि, तुम मेरे मित्र स्तोताको मारनेकी इच्छा करते हो ? दुर्द्धर्ष तेजस्वी वरुण, मुझसे ऐसा (पाप) कहो कि, मैं क्षिप्रकारी होकर, नमस्कारके साथ, प्रायश्चित्त करके तुम्हारे पास गमन करूँ ।

५ वरुण, हमारे पितृक्रमागत द्रोहको छुड़ाओ । हमने अपने शरीरसे जो कुछ किया है, उसे भी छुड़ाओ । राजा वरुण, पशु चुराकर प्रायश्चित्त-रूप पशुको घास आदि खिलाकर तृप्त करनेवाले चोरकी तरह और रस्सीसे बँधे बछड़ेकी तरह मुझे पापसे छुड़ाओ ।

६ वह पाप अपने दोषसे नहीं होता । वह भ्रम, क्रोध, द्यूत-क्रीड़ा अथवा अज्ञान आदि दैव-गतिके कारण होता है । कनिष्ठ (अल्पज्ञ पुरुष) को ज्येष्ठ (ईश्वर) भी कुपथमें ले जाते हैं । स्वप्नमें भी दैव-गतिसे पाप उत्पन्न हो जाते हैं ।

७ काम-वर्षी और पोषक वरुणको, पाप-शून्य होकर, मैं, दासकी तरह, यथेष्ट रूपसे सेवा करूँगा । हम अज्ञानी हैं; स्वामी वरुण हमें ज्ञान दें । ज्ञानी वरुण स्तोताको धनके लिये प्रेरित करें ।

अयं सु तुभ्यं वरुण स्वधावो हृदि स्तोम उपश्रितश्चिदस्तु ।
शं नः क्षेमे शमु योगे नो अस्तु यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥८॥



८७ सूक्त

वरुण देवता। वसिष्ठ ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

रदत् पथो वरुणः सूर्याय प्रार्णांसि समुद्रिया नदीनाम् ।
सर्गो न सृष्टो अर्वतीऋतायन् चकार महीरवनीरहभ्यः ॥१॥
आत्मा ते वातो रज आ नवीनोत् पशुर्न भूर्णिर्यवसे ससवान् ।
अन्तर्मही बृहती रोदसीमे विश्वा ते धाम वरुण प्रियाणि ॥२॥
परिस्पशो वरुणस्य स्मदिष्टा उभे पश्यन्ति रोदसी सुमेके ।
ऋतावानः कवयो यज्ञधीराः प्रचेतसो य इषयन्त मन्म ॥३॥

---

८ अन्नवान् वरुण, तुम्हारे लिये बनाया हुआ यह सूक्त-रूप स्तोत्र तुम्हारे हृदयमें भली निहित हो। लाभ हमारे लिये मङ्गलमय हो; क्षेम (धन-रक्षा) हमारे लिये मङ्गलमय हो। तुम स्वस्ति द्वारा पालन करो।



१ इन्हीं वरुणदेवने सूर्यके लिये अन्तरीक्षमें मार्ग प्रदान किया था। वरुणने नदी अन्तरीक्षमें उत्पन्न जल प्रदान किया था। अश्व जैसे घोड़ीके प्रति दौड़ता है, वैसे ही शीघ्र इच्छा करके वरुण अथवा सूर्यने विशाल रात्रियोंको दिनसे अलग किया था।

२ वरुण, तुम्हारा वायु जगत्की आत्मा है। वह जलको चारो ओर भेजता है। घास जैसे पशु अन्नवान् (भारवाही) होता है, वैसे ही संसारका भरण करनेवाला वायु अन्नवान् है। महती और बड़ी द्यावापृथिवीके बीचके तुम्हारे सारे स्थान लोकप्रिय हैं।

३ वरुणके सारे अनुचरोंकी गति प्रशंसनीय है। वे सुन्दर रूपोंवाली द्यावापृथिवीको भाँति देखते हैं। वे कर्मी, यज्ञ-धीर और प्राज्ञ कवियोंके स्तोत्रोंको भी चारो ओरसे देखते हैं।

उवाच मे वरुणो मेधिराय त्रिः सप्त नामाघ्न्या बिभर्ति ।
विद्वान् पदस्य गुह्या न वोचद्युगाय विप्र उपराय शिक्षन् ॥४॥
तिस्रो द्यावो निहिता अन्तरस्मिन्तिस्रो भूमीरुपराः षड्विधानाः ।
गृत्सो राजा वरुणश्चक्र एतं दिवि प्रेंखं हिरण्ययं शुभे कम् ॥५॥
अव सिन्धुं वरुणो द्यौरिव स्थाद्द्रप्सो न श्वेतो मृगस्तुविष्मान् ।
गम्भीरशंसो रजसो विमानः सुपारक्षत्रः सतो अस्य राजा ॥६॥
यो मृलयाति चक्रुषे चिदागो वयं स्याम वरुणे आनागाः ।
अनु व्रतान्यदितेर्ऋधन्तो यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥७॥



४ मैं मेधावी ऋत्विक हूं। वरुणने मुझसे कहा था कि, पृथिवी अथवा वाक्के इक्कीस (उर, कण्ठ और शिरमें गायत्र्यादि सात-सात छन्दोंवाले) नाम हैं। विद्वान् और मेधावी वरुणने योग्य अन्तेवासी (छात्र) को उपदेश देकर, उत्तम स्थानमें, इन सब गोपनीय वार्तोंको भी बताया है।

५ इन वरुणके भीतर तीन (उत्तम, मध्यम और अधम) प्रकारके द्युलोक हैं। इनमें तीन (उत्तम, मध्यम और अधम) प्रकारकी भूमियाँ और छ (छ ऋतुएँ) प्रकारकी दशाएँ भी हैं। वरुण राजाने स्वर्णके झूलेकी तरह सूर्यको, दिप्तिके लिये, निर्माण किया है।

६ सूर्यकी तरह दीप्त वरुणने समुद्रको स्थापित किया है। वरुण जाल-बिन्दुकी तरह शुभ्र, गौर मृगकी तरह बली, गभीर स्तोत्रवाले, जलके रचयिता, दुःखसे पार पानेवाले बलसे युक्त और संसारके समस्त विद्यमान पदार्थोंके राजा हैं।

७ अपराध करनेपर भी वरुण दया करते हैं। अदीन (धनी) वरुणके कर्मोंको हम यथाक्रम समृद्ध करके उनके पास अपराध-शून्य हों। तुम सदा हमें स्वस्ति द्वारा पालन करो। *

* अपने Selected Essays (१८८१, भाग २, पृष्ठ १५०) में मैक्समूलर साहबने इस मन्त्रको लक्ष्य कर जो वाक्य लिखे हैं, वे यों हैं—"The consciousness of sin is a prominent feature in the religion of the Veda; so is likewise the belief that the gods are able to take away from man the heavy burden of his sins. And when we read such passages as "Varun is merciful even to him who his committed sin," we should...... remember that it (Varun) is one of the many names which invented in their helplessness to express their ideas of the diety."

६

८८ सूक्त

वरुण देवता। वसिष्ठ ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

प्र शुंध्युवं वरुणाय प्रेष्ठां मतिं वसिष्ठ मीह्लुषे भरस्व ।
य ईमर्वाञ्चं करते यजत्रं सहस्रामघं वृषणं बृहन्तम् ॥१॥
अधा न्वस्य सन्दृशं जगन्वानग्नेरनीकं वरुणस्य मंसी ।
स्वर्यदश्मन्नधिपा उ अन्धोऽभि मा वपुर्दृशये निनीयात् ॥२॥
आ यद्रुहाव वरुणश्च नावं प्र यत् समुद्रमीरयाव मध्यम् ।
अधि यदपां स्नुभिश्चराव प्र प्रेंख ईंखयावहै शुभे कम् ॥३॥
वसिष्ठं ह वरुणो नाव्याधादृषिं चकार स्वपा महोभिः ।
स्तोतारं विप्रः सुदिनत्वे अह्नां यान्नु द्यावस्ततनन्यादुषासः ॥४॥
क त्यानि नौ सख्या बभूवुः सचावहे यदवृकं पुरा चित् ।
बृहन्तम्मानं वरुण स्वधावः सहस्रद्वारं जगमा गृहन्ते ॥५॥

---

१ वसिष्ठ, तुम काम-वर्षक वरुणको उद्देश करके स्वयं शुद्ध और प्रियतम स्तुति करो। यजनीय, बहु-धनवान् और अभीष्ट-वर्षी और विशाल हैं। वरुण सूर्यको हमारे अभिमुख क

२ इस समय मैं शीघ्र वरुणका सुन्दर दर्शन करके अग्निकी ज्वालाओंकी स्तुति क जब वरुण सुखकर पाषाणमें अवस्थित इस सोमको अधिक मात्रामें पीते हैं, उस समय दर्शन मुझे प्रशस्त रूप (शरीर) देते हैं।

३ जिस समय मैं और वरुण, दोनों नावपर चढ़े थे, जिस समय समुद्रके बीचमें नावको भाँति, प्रेरित किया था, जिस समय जलके ऊपर गति-परायण नावपर हम थे, उस समय शोभा नौका-रूपी झूलेपर हमने सुखसे क्रीड़ा की थी।

४ मेधावी वरुणने (सूर्यात्म-रूपसे) दिन और रात्रिका विस्तार करके दिनोंके बीच सुन वसिष्ठको (मुझे) नौकापर चढ़ाया था। वरुणने रक्षणोंके द्वारा वसिष्ठको सुकर्मा किया।

५ वरुण, हमलोगोंकी पुरानी मैत्री कहाँ हुई थी? पूर्व समयमें हमलोगोंमें जो हिंसा-शून्य हुई थी, हमलोग उसीको निबाहते हैं। अन्नवान् वरुण, तुम्हारे महान्, प्राणियोंके विशे हजार दरवाजोंवाले गृहमें मैं जाऊँगा।

य आपिर्नित्यो वरुण प्रियः सन्त्वामागांसि कृणवत् सखा ते ।
मा त एनस्वन्तो यक्षिन् भुजेम यन्धि ष्मा विप्रः स्तुवते वरूथम् ॥६॥
ध्रुवासु त्वासु क्षितिषु क्षियन्तो व्यस्मत् पाशं वरुणो मुमोचत् ।
अवो वन्वाना अदितेरुपस्थाद्यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥७॥

---

८९ सूक्त

वरुण देवता । वसिष्ठ ऋषि । गायत्री और जगती छन्द ।

मोषु वरुण मृन्मयं गृहं राजन्नहं गमम् । मृळा सुक्षत्र मृळय ॥१॥
यदेमि प्रस्फुरन्निव दृतिर्न ध्मातो अद्रिवः । मृळा सुक्षत्र मृळय ॥२॥
क्रत्वः समह दीनता प्रतीपं जगमा शुचे । मृळा सुक्षत्र मृळय ॥३॥
अपां मध्ये तस्थिवांसं तृष्णाविदज्जरितारम् । मृळा सुक्षत्र मृळय ॥४॥

---

६ वरुण, जो वसिष्ठ नित्य बन्धु (औरस पुत्र) हैं, जिन्होंने पूर्व समयमें प्रिय होकर तुम्हारे प्रति अपराध किया था, वह इस समय तुम्हारे सखा हों । यजनीय वरुण, हम तुम्हारे आत्मीय हैं; इसलिये पाप-युक्त होकर हम भोग न भोगने पावें । तुम मेधावी हो; स्तोताओंको वरणीय गृह प्रदान करो ।

७ इन सब नित्य भूमियोंमें निवास करते हुए हम तुम्हारा स्तोत्र करते हैं । वरुण हमारा बन्धन छुड़ावें । हम अखण्डनीय पृथिवीके पाससे वरुणकी रक्षाका भोग करें । हमें तुम सदा स्वस्ति द्वारा पालन करो ।

---

१ राजा वरुण, तुम्हारे मिट्टीके मकानको मैं न पाऊँ (सोनेका घर पाऊँ) । शोभन-धन वरुण, मुझे सुखी करो, दया करो ।

२ आयुधवाले वरुण, मैं काँपता हुआ, वायु-चालित बादलकी तरह, जाता हूँ । शोभन-धन वरुण, मुझे सुखी करो, दया करो ।

३ धनी और निर्मल वरुण, दीनता वा असमर्थताके कारण श्रौत, स्मार्त्त आदि अनुष्ठानोंकी मैंने प्रतिकूलता की है । सुधन वरुण, मुझे सुखी करो, दया करो ।

४ समुद्र-जलमें रहकर भी मुझ स्तोताको पिपासा लग गयी (क्योंकि समुद्रका जल पीने योग्य नहीं होता) । सुधन वरुण, मुझे सुखी करो, दया करो ।

यत् किश्चेदं वरुण दैव्ये जनेभिद्रोहं मनुष्याश्चरामसि ।
अचित्तीयत्तव धर्मा युयोपिममानस्तस्मादेनसो देवरीरिषः ॥५॥

-०——०-

६ अनुवाक । ९० सूक्त

वायु देवता । वसिष्ठ ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

प्रवीरया शुचयो दद्रिरे वामध्वर्युभिर्मधुमन्तः सुतासः ।
वहवायो नियुतो याह्यच्छापिबा सुतस्यान्धसो मदाय ॥१॥
ईशानाय प्रहुतिं यस्त आनट् शुचिं सोम शुचिपास्तुभ्य वायो ।
कृणोषि तं मर्त्येषु प्रशस्तं जातोजातो जायते वाज्यस्य ॥२॥
राये नु यं जज्ञतू रोदसीमे राये देवी धिषणा धाति देवम् ।
अध वायुं नियुतः सश्चत स्वा उत श्वेतं वसुधितिं निरेके ॥३॥

---

५ वरुण, हम मनुष्य हैं; इसलिये देवोंका जो हमने अपकार किया है और अज्ञानता तुम्हारे जिस कार्यमें हमने असावधानी की है, उन सब पापों (अपराधों)के कारण हमें नहीं



१ वायु, तुम वीर हो । शुद्ध, मधुरता-पूर्ण और अभिषुत सोमको अध्वर्युगण उद्देशसे प्रेरित करते हैं । तुम नियुद्गण (अश्वों) को रथमें जोतो, सामने आओ और लिये अभिषुत सोमरसके भागका भक्षण करो ।

२ वायु, तुम ही ईश्वर हो । जो यजमान तुम्हें उत्तम आहुति देता है और सोमपा जो तुम्हें पवित्र सोम प्रदान करता है, उसे मनुष्योंमें तुम प्रधान बनाओ । वह सर्वत्र प्रख्यात प्राप्तव्य धन प्राप्त करता है ।

३ इन द्यावापृथिवीने जिन वायुको, धनके लिये, उत्पन्न किया है और प्रकाशमान धनके लिये, जिन वायुदेवको धारण करती है, इस समय वह वायु, अपने अश्वों द्वारा, सेवित

उच्छन्नुषसः सुदिना अरिप्रा उरुज्योतिर्विविदुर्दीध्यानाः ।
गव्यं चिदूर्वमुशिजो वि वव्रुस्तेषामनु प्रदिवः सस्रुरापः ॥४॥
ते सत्येन मनसा दीध्यानाः स्वेन युक्तासः क्रतुना वहन्ति ।
इन्द्रवायू वीरवाहं रथं वामीशानयोरभि पृक्षः सचन्ते ॥५॥
ईशानासो ये दधते स्वर्णो गोभिरश्वेभिर्वसुभिर्हिरण्यैः ।
इन्द्रवायू सूरयो विश्वमायुरर्वद्भिर्वीरैः पृतनासु सह्युः ॥६॥
अर्वन्तो न श्रवसो भिक्षमाणा इन्द्रवायू सुष्टुतिभिर्वसिष्ठाः ।
वाजयन्तः स्ववसे हुवेम यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥७॥

—*—

९१ सूक्त

वायु देवता । वसिष्ठ ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

कुविदङ्ग नमसा ये वृधासः पुरा देवा अनवद्यास आसन् ।
ते वायवे मनवे बाधितायावासयन्नुषसं सूर्येण ॥१॥

---

४ पाप-शून्या उषाए सुदिनोंकी कारण-भूता होकर अन्धकार नष्ट करती हैं। दीप्यमाना होकर उन्होंने विस्तीर्ण ज्योति प्राप्त की है। अङ्गिरा लोगोंने गो रूप धन प्राप्त किया था। अङ्गिरा लोगोंका प्राचीन जलने अनुसरण किया था।

५ इन्द्र और वायु यजमान लोग यथार्थ मनसे मननीय स्तोत्र द्वारा दीप्यमान होकर अपने कर्म द्वारा वीरों द्वारा प्रापणीय रथका अपने-अपने यज्ञमें वहन करते हैं, तुमलोग ईश्वर हो। सारे अन्न तुम्हारी सेवा करते हैं।

६ इन्द्र और वायु, जो क्षमता-शाली जन हमें गौ, अश्व, निवास-प्रद धन और हिरण्यके साथ सुख प्रदान करते हैं. वे ही दातागण युद्धमें अश्व और वीरोंकी सहायतासे व्याप्त जीवन (आयु)को जीत लेते हैं।

७ अश्वकी तरह हविर्वाहक, अन्नप्रार्थी और बलेच्छु वसिष्ठगण उत्तम रक्षाके लिये उत्तम स्तुति द्वारा इन्द्र और वायुको बुलाते हैं। तुम सदा हमें स्वस्ति द्वारा पालन करो।

१ प्राचीन समयमें जो प्रवृद्ध स्तोता लोग वायुदेवके लिये किये गये अनेक स्तोत्रोंके कारण प्रशस्य हुए थे, उन्होंने विपद्ग्रस्त मनुष्योंके उद्धारके लिये, वायुको हवि देनेके निमित्त. सूर्यके साथ उषाको एकत्र ठहराया था।

उशन्ता दूता न दभाय गोपा मासश्च पाथः शरदश्च पूर्वीः ।
इन्द्रवायू सुष्टुतिर्वामियाना मार्डीकमीट्टे सुवितं च नव्यम् ॥२
पीवो अन्नाँरयिवृधः सुमेधाः श्वेतः सिषक्ति नियुतामभिश्रीः ।
ते वायवे समनसो वि तस्थुर्विश्वेन्नरः स्वपत्यानिचक्रुः ॥३॥
यावत्तरस्तन्वो यावदोजो यावन्नरश्चक्षसा दीध्यानाः ।
शुचिं सोमं शुचिपा पातमस्मे इन्द्रवायू सदतं बर्हिरेदम् ॥४॥
नियुवाना नियुतः स्पार्हवीरा इन्द्रवायू सरथं यातमर्वाक् ।
इदं हि वां प्रभृतं मध्वो अग्रमध प्रीणाना वि मुमुक्तमस्मे ॥५॥
या वां शतं नियुतो याः सहस्रमिन्द्रवायू विश्ववाराः सचन्ते ।
आभिर्यातं सुविदत्राभिरर्वाक् पातं नरा प्रतिभृतस्य मध्वः ॥६॥

---

२ इन्द्र और वायु, तुम कामयमान दूत और रक्षक हो। तुमलोग हिंसा नहीं करना। महीने वर्षों रक्षा करना। सुन्दर स्तुति तुम्हारे पास जाकर सुख और प्रशंसनीय तथा सुलभ्य धनकी करती है।

३ सुबुद्धि और अपने अश्वोंके लिये आश्रयणीय श्वेतवर्ण वायु प्रचुर अन्नवाले और व्यक्तियोंको आश्रित करते हैं। वे व्यक्ति भी समान-मना होकर वायुके निमित्त यज्ञ करनेके लि प्रकारसे अवस्थित हुए हैं। उन्होंने सुन्दर सन्ततिके कारण-भूत कार्योंको किया था।

४ जब तक तुम्हारे शरीरका वेग है, जबतक बल है और जबतक नेतालोग ज्ञान-बलसे प्र रहते हैं, तबतक हे विशुद्ध सोमको पीनेवाले हे इन्द्र और वायु, तुमलोग हमारे विशुद्ध पान करो और इन कुशोंपर बैठो।

५ इन्द्र और वायु, तुमलोग अभिलषणीय स्तोतावाले हो। अपने अश्वोंको एक रथमें तुमलोग सामने आओ। इस मधुर सोमका अग्रभाग तुमलोगोंके लिये लाया गया है अनन्तर तुमलोग प्रसन्न होकर हमें पापोंसे छुड़ाओ।

६ इन्द्र और वायु, जो तुम्हारे अश्व शत-संख्यक होकर तुम्हारी सेवा करते हैं सबके वरणीय अश्व सहस्रसंख्यक होकर तुम्हारी सेवा करते हैं, उन्हीं शोभन धन अश्वोंके साथ हमारे सामने आओ।

अर्वन्तो न श्रवसो भिक्षमाणा इन्द्रवायू सुष्टुतिभिर्वसिष्ठाः ।
वाजयन्तः स्ववसे हुवेम यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥७॥

६२ सूक्त

वायु देवता । वसिष्ठ ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

आ वायो भूष शुचिपा उप नः सहस्रं ते नियुतो विश्ववार ।
उपो ते अन्धो मद्यमयामि यस्य देव दधिषे पूर्वपेयम् ॥१॥
प्र सोता जीरो अध्वरेष्वस्थात् सोममिन्द्राय वायवे पिबध्यै ।
प्र यद्वां मध्वो अग्रियं भरन्त्यध्वर्यवो देवयन्तः शचीभिः ॥२॥
प्र याभिर्यासि दाश्वांसमच्छा नियुद्भिर्वायविष्टये दुरोणे ।
नि नो रयिं सुभोजसं युवस्व नि वीरं गव्यमश्व्यं च राधः ॥३॥

७ अश्वकी तरह हविर्वाहक, अन्नप्रार्थी और बलेच्छु वसिष्ठगण, उत्तम रक्षणके लिये उत्तम स्तुति द्वारा, इन्द्र और वायुको बुलाते हैं। तुम सदा हमें स्वस्ति द्वारा पालन करो।

१ पवित्र सोमको पीनेवाले वायु, हमारे समीप आओ। हे सबके वरणीय, तुम्हारे सब अश्व हजार हैं। वायु, तुम जिस सोमके प्रथम पानके अधिकारी हो, वही मदकर सोम पात्रमें तुम्हारे लिये रखा हुआ है।

२ क्षिप्रकारी और सोमका अभिषव करनेवाले अध्वर्युने इन्द्र और वायुके पीनेके लिये यज्ञमें सोम रखा है। इन्द्र और वायु, देवाभिलाषी अध्वर्युओंने कर्म द्वारा तुम्हारे लिये इस यज्ञमें सोमका अग्र भाग प्रस्तुत किया है।

वायु, गृहमें अवस्थित हव्यदाताके सम्मुख यज्ञके लिये जिन नियुतो (अश्वों) के साथ जाते हो, उन्हीं अश्वोंके साथ आओ। हमें सुन्दर अन्नवाला धन दो। वीर पुत्र तथा गौ और अश्वसे युक्त वैभव दो।

ये वायव इन्द्रमादनास आदेवासो नितोशनासो अर्यः ।
घ्नन्तो वृत्राणि सूरिभिः ष्याम सासह्वांसो युधा नृभिरमित्रान् ॥४॥
आ नो नियुद्भिः शतिनीभिरध्वरं सहस्रिणीभिरुप याहि यज्ञम् ।
वायो अस्मिन्त्सवने मादयस्व यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥५॥

६३ सूक्त

इन्द्र और अग्नि देवता । वसिष्ठ ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

शुचिं नु स्तोमं नवजातमद्येन्द्राग्नी वृत्रहणा जुषेथाम् ।
उभाहि वां सुहवा जोहवीमि ता वाजं सद्य उशते धेष्ठा ॥१॥
ता सानसी शवसाना हि भूतं साकम्वृधा शवसा शूशुवांसा ।
क्षयन्तौ रायो यवसस्य भूरेः पृंक्तं वाजस्य स्थविरस्य घृष्वेः ॥२॥
उपो ह यद्विदथं वाजिनो गुर्धीभिर्विप्राः प्रमतिमिच्छमानाः ।
अर्वन्तो न काष्ठां नक्षमाणा इन्द्राग्नी जोहुवतो नरस्ते ॥३॥

४ जो स्तोता इन्द्र और वायुकी तृप्ति करते हैं । वे देव-युक्त हैं; इसलिये वे
विनाशक हैं । उन्हींकी सहायतासे हम शत्रु-विनाशमें समर्थ हों । उन्हीं अपने स्तोताओं
युद्धमें हम शत्रुओंका पराभव कर सकें ।

५ वायु, शतसंख्या और सहस्रसंख्यावाले अपने अश्वोंके साथ हमारे हिंसा-शून्य
समीप आगमन करो । इस यज्ञमें सोम पीकर प्रमत्त होओ । तुम सदा स्वस्ति द्वारा हमें पाल

१ वृत्रघ्न इन्द्र और अग्नि, शुद्ध और नवोत्पन्न मेरा स्तोत्र आज सेवन करो । तुम
बुलाने योग्य हो । तुम दोनोंको बार-बार बुलाता हूँ । यजमान तुम्हारी अभिलाषा करता है ।
अन्न प्रदान करो ।

२ इन्द्र और अग्नि, तुम लोग भली भाँति भजनके योग्य हो । तुम बलकी तरह शत्रुओं
बनो । तुमलोग एक साथ प्रवृद्ध बल द्वारा वर्द्धमान तथा प्रचुर धन और अन्नके ईश्वर
स्थूल और शत्रु-विनाशक अन्न हमें दो ।

३ जो हविवाले और कृपाभिलाषी मेधावी (विप्र) लोग अनुष्ठान द्वारा यज्ञको प्राप्त
वे ही नेता लोग— जैसे अश्व युद्ध भूमिको व्याप्त करते हैं वैसे ही—इन्द्र और अग्निके कर्मोंको
उन्हें बार-बार बुलाते हैं ।

गीर्भिर्विप्रः प्रमतिमिच्छमान ईट्टे रयिं यशसं पूर्वभाजम् ।
इन्द्राग्नी वृत्रहणा सुवज्रा प्र नो नव्येभिस्तिरतं देष्णैः ॥४॥
सं यन्मही मिथती स्पर्धमाने तनूरुचा शूरसाता यतैते ।
अदेवयुं विदथे देवयुभिः सत्राहतं सोमसुता जनेन ॥५॥
इमामुषु सोमसुतिमुप न एन्द्राग्नी सौमनसाय यातम् ।
नूचिद्धि परिमम्नाथे अस्माना वां शश्वद्भिर्ववृतीय वाजैः ॥६॥
सो अग्न एना नमसा समिद्धोच्छा मित्रं वरुणमिन्द्रं वोचेः ।
यत् सीमागश्चकृमा तत् सुमृळ तदर्यमादितिः शिश्रथन्तु ॥७॥
एता अग्न आशुषाणास इष्टीर्युवोः सचाभ्यश्याम वाजान् ।
मेन्द्रो नो विष्णुर्मरुतः परिख्यन् यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥८॥

---

४ इन्द्र और अग्नि, कृपाप्रार्थी विप्र यशवाले और प्रथम उपभोग्य धनके लिये स्तुति द्वारा तुम्हारा स्तवन करता है। वृत्रघ्न और सुन्दर आयुधवाले इन्द्र और अग्नि, नये और देने योग्य धनके द्वारा हमें प्रवर्द्धित करो।

५ विशाल, परस्पर युद्ध करती हुई. स्पर्द्धा करनेवाली तथा युद्धमें प्रयत्न करती हुई दोनों शत्रु-सेनाओंको, अपने तेज द्वारा, सदा विनष्ट करो। सोमाभिषव-कर्त्ता और देवाभिलाषी यजमानकी सहायतासे यज्ञमें देवाभिलाष न करनेवाले व्यक्तिका विनाश करो।

६ इन्द्र और अग्नि, सुन्दर मनके लिये हमारी इस सोमाभिषव-कर्ममें आगमन करो। तुमलोग हमें छोड़कर दूसरेको नहीं जानते हो; इसलिये मैं तुम्हें प्रचुर अन्न द्वारा आवर्त्तित करता हूँ।

७ अग्नि, तुम इस अन्न द्वारा समिद्ध होकर मित्र, इन्द्र और मित्रको कहो कि, यह हमारा रक्षणीय है। हमलोगोंने जो अपराध किया है, उससे हमारी रक्षा करो। अर्यमा और अदिति भी हमारे उस अपराधको हटावें।

८ अग्नि, शीघ्र इस यज्ञका आश्रय करते हुए हम एक साथ ही तुम्हारा अन्न प्राप्त करें। इन्द्र, विष्णु और मरुद्गण हमें छोड़कर दूसरेको न देखें। तुम हमें सदा स्वस्ति द्वारा पालन करो।

६४ सूक्त

इन्द्र और अग्नि देवता। वसिष्ठ ऋषि। गायत्री और अनुष्टुप् छन्द।

इयं वामस्य मन्मन इन्द्राग्नी पूर्व्यस्तुतिः अभ्राद्वृष्टिरिवाजनि ॥१॥
शृणुतं जरितुर्हवमिन्द्राग्नी वनतं गिरः। ईशाना पिप्यतं धियः ॥२॥
मा पापत्वाय नो नरेन्द्राग्नी माभिशस्तये। मा नो रीरधतं निदे ॥३॥
इन्द्रे अग्ना नमो बृहत् सुवृक्तिमेरयामहे। धिया धेना अवस्यवः ॥४॥
ता हि शश्वन्त ईलत इत्था विप्रास ऊतये। सबाधो वाजसातये ॥५॥
तावां गीर्भिर्विपन्यवः प्रयस्वन्तो हवामहे। मेधसाता सनिष्यवः ॥६॥
इन्द्राग्नी अवसा गतमस्मभ्यं चर्षणीसहा। मा नो दुःशंस ईशत ॥७॥
मा कस्य नो अररुषो धूर्त्तिः प्रणङ्मर्त्यस्य। इन्द्राग्नी शर्म यच्छतम् ॥८॥

---

१ इन्द्र और अग्नि, जैसे मेघसे वर्षा होती है, वैसे ही इस स्तोतासे यह प्रधान स्तुति हुई है।

२ इन्द्र और अग्नि, स्तोताका आह्वान सुनो। उसकी स्तुतिका भोग करो। तुमलोग ईश्वर अनुष्ठित कर्मकी पूर्त्ति करो।

३ नेता इन्द्र और अग्नि, हमें हीनभाव, पराभव और निन्दाके लिये परवश नहीं करना।

४ रक्षाभिलाषी होकर हम विशाल हव्य, सुन्दर स्तुति और कर्म-युक्त वाक्य, इन्द्र और अग्नि पास भेजते हैं।

५ रक्षणके लिये मेधावी लोग उन दोनों इन्द्र और अग्निकी इस प्रकार स्तुति करते समान बाधा पाये हुए लोग भी अन्न-प्राप्तिके लिये स्तुति करते हैं।

६ स्तोत्रके इच्छुक, अन्नवान् और धनाभिलाषी होकर हम यज्ञकी प्राप्तिके लिये तुम स्तुति द्वारा, बुलावें।

७ इन्द्र और अग्नि, तुम मनुष्यों (शत्रुओं) को आभिभूत करते हो। हमारे लिये तुम साथ, आओ। कठोर वचनवाला व्यक्ति हमारा प्रभु न हो।

८ इन्द्र और अग्नि, हमें किसी भी शत्रुकी हिंसा न मिले। हमें सुख दो।

गोमद्धिरण्यवद्वसु यद्वामश्वावदीमहे । इन्द्राग्नी तद्वनेमहि ॥९॥

यत् सोम आ सुते नर इन्द्राग्नी अजोहवुः । सप्तीवन्ता सपर्यवः ॥१०॥

उक्थेभिर्वृत्रहन्तमा या मन्दाना चिदा गिरा । आंगूषैराविवासतः ॥११॥

ताविद्दुःशंसं मर्त्यं दुर्विद्वांसं रक्षस्विनम् ।

आ भोगं हन्मना हतमुदधिं हन्मना हतम् ॥१२॥

६५ सूक्त

सरस्वती देवता । वसिष्ठ ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

प्र क्षोदसा धायसा सस्र एषा सरस्वती धरुणमायसी पूः ।

प्रबाबधाना रथ्येव यातिविश्वा अपो महिना सिन्धु रन्याः ॥१॥

९ इन्द्र और अग्नि, हम जो तुम्हारे पास गौ, हिरण्य और स्वर्णसे युक्त धनकी याचना करते हैं, उसका हम भोग कर सकें।

१० सोमके अभिषुत होनेपर कर्म-नेता लोग सेवाभिलाषी होकर उत्तम अश्ववाले इन्द्र और अग्निका बार-बार आह्वान करते हैं।

११ सबसे बढ़कर वृत्र-हन्ता और अतीव आनन्द-मग्न इन्द्र और अग्निको, हम, उक्थ (शस्त्र नामकी स्तुति) और स्तोत्र तथा अन्य स्तवों द्वारा परिचर्या करते हैं।

१२ इन्द्र और अग्नि, तुमलोग दुष्ट धारणा और दुष्ट ज्ञानवाले तथा बलवान् और अपहरण करनेवाले मनुष्यको आयुध द्वारा, घड़ेकी तरह, फोड़ो।



१ यह सरस्वती लौह-निर्मित पुरीकी तरह धारयित्री होकर धारक जलके साथ प्रधावित होती हैं। वह अपनी महिमा द्वारा अन्य सारी बहनेवाली जल-रुपिणी नदियोंको बाधा देते हुए सारथिकी तरह जाती हैं।

एकाचेतत् सरस्वती नदीनां शुचिर्यती गिरिभ्य आसमुद्रात् ।
रायश्चेतन्ती भुवनस्य भूरेर्घृतं पयो दुदुहे नाहुषाय ॥२॥
स वावृधे नर्यो योषणासु वृषा शिशुर्वृषभो यज्ञियासु ।
स वाजिनं मघवद्भ्यो दधाति वि सातये तन्वं मामृजीत ॥३॥
उत स्या नः सरस्वती जुषाणोप श्रवत् सुभगा यज्ञे अस्मिन् ।
मितज्ञुभिर्नमस्यैरियाना राया युजा चिदुत्तरा सखिभ्यः ॥४॥
इमा जुह्वाना युष्मदा नमोभिः प्रति स्तोमं सरस्वति जुषस्व ।
तव शर्मन् प्रियतमे दधाना उप स्थेयाम शरणं न वृक्षम् ॥५॥
अयमु ते सरस्वति वसिष्ठो द्वारा वृतस्य सुभगे व्यावः ।
वर्ध शुभ्रे स्तुवते रासि वाजान्यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥६॥



२ नदियोंमें विशुद्धा, पर्वतसे लेकर समुद्रतक जानेवाली और अकेली सरस्वती राजाकी प्रार्थनाको जाना। उन्होंने भुवनस्थ प्रचुर धन प्रदान करके नहुषके लिये (हजार वर्षों घी और दूध दूहा था अर्थात् नहुषको दिया था।

३ मनुष्योंकी भलाईके लिये वर्षा करनेमें समर्थ और शिशु (प्रादुर्भावके समयमें छोटे) (मध्यमस्थान वायु) यज्ञके योग्य योषित (मध्यम-स्थान-वर्ती जल-समूह)के बीच बढ़े थे। वह यज्ञमानोंको बली पुत्र देते हैं और लाभके लिये उनके शरीरका संस्कार करते हैं।

४ शोभन-धना सरस्वती प्रसन्न होकर हमारे इस यज्ञमें स्तुति सुनें। पूजनीय दे घुटने टेककर सरस्वतीके निकट जाते हैं। सरस्वती नित्य धनवाली और अपने सखा लिये अत्यन्त दयावती हैं।

५ सरस्वती हम इस हव्यका हवन करते हुए नमस्कार द्वारा तुम्हारे पास करेंगे। हमारी स्तुतिकी सेवा करो। हमलोग तुम्हारे अतीव प्रिय घरमें अवस्थित अश्रय-भूत वृक्षकी तरह तुम्हारे साथ मिलेंगे।

६ सुधना सरस्वती, तुम्हारे लिये यह वसिष्ठ (स्तोता) यज्ञका द्वार खोलता है। शुभ्र बढ़ो और स्तोताको अन्न दो। तुम सदा हमें स्वस्ति द्वारा पालन करो।



९६ सूक्त

१-३ तक सरस्वती और शेषके सरस्वान् देवता । वसिष्ठ ऋषि । बृहती, सतोबृहती, प्रस्तार-पङ्क्ति और गायत्री छन्द ।

बृहदु गायिषे वचोसुर्या नदीनाम् ।
सरस्वतोमिन्महया सुवृक्तिभिः स्तोमैर्वसिष्ठ रोदसी ॥१॥
उभे यत्ते महिना शुभ्रे अन्धसी अधिक्षियन्ति पूरवः ।
सा नो बोध्यवित्री मरुत्सखा चोद राधो मघोनाम् ॥२॥
भद्रमिद्भद्रा कृणवत् सरस्वत्यकवारी चेतति वाजिनीवती ।
गृणाना जमदग्निवत् स्तुवाना च वसिष्ठवत् ॥३॥
जनीयन्तो न्वग्रवः पुत्रीयन्तः सुदानवः । सरस्वन्तं हवामहे ॥४॥
ये ते सरस्व ऊर्मयो मधुमन्तो घृतश्चुतः । तेभिर्नोऽविता भव ॥५॥

१ वसिष्ठ, तुम नदियोंमें बलवती सरस्वतीके लिये बृहत् स्तोत्र गाओ । द्यावापृथिवीमें वर्त्तमान सरस्वतीकी ही, निर्दोष स्तोत्रों द्वारा पूजा करो ।

२ शुभ्रवर्णा सरस्वती, तुम्हारी महिमा द्वारा मनुष्य दिव्य और पार्थिव दोनों प्रकारका अन्न प्राप्त करता है। तुम रक्षिका होकर हमें जानो । मरुतोंकी सखी होकर तुम हविर्दाताओंके पास धन भेजो ।

३ कल्याण-कारिणी सरस्वती केवल कल्याण करें । सुन्दर-गमना और अन्नवती होकर हमारी प्रज्ञा उत्पन्न करें । जमदग्नि ऋषिकी तरह मेरे स्तव करनेपर तुम वसिष्ठके उपयुक्त स्तोत्र प्राप्त करो ।

४ हम स्त्री और पुत्रके अभिलाषी तथा सुन्दर दानवाले स्तोता हैं । हम सरस्वान् देवताकी स्तुति करते हैं ।

५ सरस्वान, तुम्हारे जो जल-सङ्घ रसवान् और वृष्टि-जल देनेवाले हैं उन्हींके द्वारा हमारे रक्षक होओ ।

पीपिवांसं सरस्वतः स्तनं यो विश्वदर्शतः । भक्षीमहि प्रजामिषम् ॥६॥



९७ सूक्त

प्रथमके इन्द्र, तृतीय और नवमके इन्द्र तथा ब्रह्मणस्पति, दशमके इन्द्र और वृहस्पति तथा अवशिष्टके वृहस्पति देवता हैं । वसिष्ठ ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

यज्ञे दिवो नृषदने पृथिव्या नरो यत्र देवयवो मदन्ति ।
इन्द्राय यत्र सवनानि सुन्वे गमन्मदाय प्रथमं वयश्च ॥१॥
आ दैव्या वृणीमहेवांसि बृहस्पतिर्नो मह आ सखायः ।
यथा भवेम मीह्लुषे अनागा यो नो दाता परावतः पितेव ॥२॥
तमु ज्येष्ठं नमसा हविर्भिः सुशेवं ब्रह्मणस्पतिं गृणीषे ।
इन्द्रं श्लोको महि दैव्यः सिषक्तु यो ब्रह्मणो देवकृतस्य राजा ॥३॥
स आ नो योनिं सदतु प्रेष्ठो बृहस्पतिर्विश्ववारो यो अस्ति ।
कामो रायः सुवीर्यस्य तं दात् पर्षन्नो अति सश्चतो अरिष्टान् ॥४॥

६ प्रवृद्ध सरस्वान् देवके स्तनवत् रसाधारको हम प्राप्त हों । वह सरस्वान् सबके द्र हम प्रज्ञा और अन्न प्राप्त करें ।

१ जिस यज्ञमें देवाभिलाषी नेतालोग मत्त होते हैं, पृथिवीके नेताओंके जिस य सवन (सोम) इन्द्रके लिये अभिषुत होते हैं, उसी यज्ञमें, हृष्ट होनेके लिये, द्युलोक प्रथम आगमन करें और गमन-परायण अश्वगण भी आवें ।

२ सखालोग, हम देवोंकी रक्षाके लिये प्रर्थना करते हैं । वृहस्पति हमारे हव्यको स्वी जैसे दूर देशसे धन ले आकर पिता पुत्रको देता है, वैसे ही वृहस्पति हमें दान करते हैं काम-वर्षक वृहस्पतिके निकट अपराधी न होने पावें, वैसे ही करो ।

३ ज्येष्ठ और सुन्दर सुखवाले उन ब्रह्मणस्पतिकी, नमस्कार और हव्य द्वारा करता हूँ । जो देव-(स्तोतृ-) कृत मन्त्रके राजा हैं, देवाई श्लोक उन्हीं महान् इन्द्रकी सेवा

४ वही प्रियतम ब्रह्मणस्पति हमारे स्थान (वेदी) पर बैठें । वह सबके वरणीय हैं । और शोभन वीर्यकी जो अभिलाषा है, उसे ब्रह्मणस्पति पूर्ण करें । हम उपद्रवोंसे युक्त हैं अहिंसित करके पार करें ।

तमा नो अर्कममृताय जुष्टमिमे धासुरमृतासः पुराजाः ।
शुचिक्रन्दं यजतं पस्त्यानां बृहस्पतिमनर्वाणं हुवेम ॥५॥
तं शग्मासो अरुषासो अश्वा बृहस्पतिं सहवाहो वहन्ति ।
सहश्चिद्यस्य नीलवत् सधस्थं नभो न रूपमरुषं वसानाः ॥६॥
स हि शुचिः शतपत्रः स शुन्ध्युर्हिरण्यवाशीरिषिरः स्वर्षाः ।
बृहस्पतिः स स्वावेश ऋष्वः पुरू सखिभ्य आसुतिं करिष्ठः ॥७॥
देवी देवस्य रोदसी जनित्री बृहस्पतिं वावृधतुर्महित्वा ।
दक्षाय्याय दक्षता सखायः करद्ब्रह्मणे सुतरा सुगाधा ॥८॥
इयं वां ब्रह्मणस्पते सुवृक्तिर्ब्रह्मेन्द्राय वज्रिणे अकारि ।
अविष्टं धियो जिगृतं पुरन्धीर्जजस्तमर्यो वनुषामरातीः ॥९॥
बृहस्पते युवमिन्द्रश्च वस्वो दिव्यस्येशाथे उत पार्थिवस्य ।
धत्तं रयिं स्तुवते कीरये चिद्यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥१०॥



५ प्रथम उत्पन्न हुए अमर देवगण हमें वही यथेष्ट और पूजा-साधन अन्न दें। हम शुद्ध स्तोत्रवाले, गृहियोंके यज्ञ-योग्य और अप्रतिगत बृहस्पतिको बुलाते हैं।

६ सुखकर, रुचिकर, वहनशील और आदित्यकी तरह ज्योतिवाले अश्वगण उन्हीं बृहस्पतिको वहन करें। बृहस्पतिके पास बल और निवासके लिये गृह है।

७ बृहस्पति पवित्र हैं। उनके अनेक वाहन हैं। वह सबके शोधक हैं। वह हित और रमणीय वाद्यवाले हैं। वह गमनशील, स्वर्ग-भोक्ता, दर्शनीय और उत्तम निवासवाले हैं। वह स्तोताओंके लिये अधिक अन्न देते हैं।

८ बृहस्पतिदेवकी जननी देवी द्यावापृथिवी अपनी महिमाके जोरसे बृहस्पतिको वर्द्धित करें। सखालोग, वर्द्धनीय बृहस्पतिको वर्द्धित करो। वह प्रचुर अन्नके लिये जल-राशिको तरल और उनके योग्य बनाते हैं।

९ ब्रह्मणस्पति, तुम्हारी और वज्रवाले इन्द्रके लिये मैंने मन्त्र-रूप सुन्दर स्तुति की। तुम हमारे अनुष्ठानकी रक्षा करो। अनेक स्तुतियाँ सुनो। हम तुम्हारे संभक्त हैं। हमारी आक्रमणकारी शत्रु-सेना विनष्ट करो।

१० बृहस्पति, तुम और इन्द्र—दोनों पार्थिव और स्वर्गीय धनके स्वामी हो। इसलिये स्तोताको धन देते हो। तुम हमें सदा स्वस्ति द्वारा पालन करो।



९८ सूक्त

इन्द्र और बृहस्पति देवता। वसिष्ठ ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

अध्वर्यवोरुणं दुग्धमंशुं जुहोतन वृषभाय क्षितीनाम्।
गौराद्वेदीयाँ अवपानमिन्द्रो विश्वाहेद्याति सुतसोममिच्छन् ॥१॥
यद्दधिषे प्रदिवि चार्वन्नं दिवेदिवे पीतिमिदस्य वक्षि।
उत हृदोत मनसा जुषाण उशन्निन्द्र प्रस्थितान् पाहि सोमान् ॥२॥
जज्ञानः सोमं सहसे पपाथ प्र ते माता महिमानमुवाच।
एन्द्र पप्राथोर्वन्तरिक्षं युधा देवेभ्यो वरिवश्चकर्थ ॥३॥
यद्योधया महतो मन्यमानान्त्साक्षाम तान्बाहुभिः शाशदानान्।
यद्वा नृभिर्वृत इन्द्राभियुध्यास्तं त्वयाजिं सौश्रवसं जयेम ॥४॥
प्रेन्द्रस्य वोचं प्रथमा कृतानि प्र नूतना मघवा या चकार।
यदेददेवीरसहिष्ट माया अथाभवत् केवलः सोमो अस्य ॥५॥

---

१ अध्वर्युओं, मनुष्योंमें श्रेष्ठ इन्द्रके लिये रुचिकर और अभिषुत सोमका हव[न करो।] गौर मृगकी अपेक्षा भी जल्दी दूरस्थित और पीने योग्य सोमको जानकर, सोमका [अभिषव] करनेवाले यजमानको खोजते हुए बराबर आया करते हैं।

२ इन्द्र, पूर्व समयमें जिस शोभन अन्न (सोम)को तुम धारण करते थे, इस स[मय] प्रतिदिन उसी सोमको पीनेकी इच्छा करो। इन्द्र, हृदय और मनसे हमारी इच्छा [से] सम्मुख लाये गये, सोमका पान करो।

३ इन्द्र, जन्म लेनेके साथ ही तुमने, बलके लिये, सोम पान किया था। तुम्हारी मा[ताने] तुम्हारी महिमा बतायी है। तुमने विस्तृत अन्तरीक्षको अपने तेजसे पूर्ण किया है [और] देवोंके लिये तुमने धन उत्पन्न किया है।

४ इन्द्र, जिस समय प्रभूत और अभिमानसे युक्त शत्रुओंके साथ हमारा युद्ध करा[ओगे, उस] समय उन हिंसक शत्रुओंको हाथोंसे ही हम पराजित करेंगे। यदि तुम मरुतोंके साथ स्वयं [युद्ध] करोगे, तब सुन्दर अन्नके कारण उस संग्रामको तुम्हारी सहायतासे हम जीत लेंगे।

५ मैं इन्द्रके पुराने कर्मोंको कहता हूँ। इन्द्रने जो नया कर्म किया है, उसे भी मैं कहूँ[गा।] आसुरी मायाको परास्त किया है, इसलिये केवल इन्द्रके लिये ही सोम है अर्थात् सोमसे [इन्द्रका] असाधारण सम्बन्ध है।

तवेदं विश्वमभितः पशव्यं यत् पश्यसि चक्षसा सूर्यस्य ।
गवामसि गोपतिरेक इन्द्र भक्षीमहि ते प्रयतस्य वस्वः ॥६॥
बृहस्पते युवमिन्द्रश्च वस्वो दिव्यस्येशाथे उत पार्थिवस्य ।
धत्तं रयिं स्तुवते कीरये चिद्यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥७॥

९९ सूक्त

४—६ तकके इन्द्र और विष्णु तथा शेषके विष्णु देवता । वसिष्ठ ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

परो मात्रया तन्वा वृधान न ते महित्वमन्वश्नुवन्ति ।
उभे ते विद्म रजसी पृथिव्या विष्णो देव त्वं परमस्य वित्से ॥१॥
न ते विष्णो जायमानो न जातो देव महिम्नः परमन्तमाप ।
उदस्तभ्ना नाकमृष्वं बृहन्तं दाधर्थ प्राचीं ककुभं पृथिव्याः ॥२॥

---

६ इन्द्र, पशुओं (प्राणियों)के लिये हितकर यह जो विश्व चारो ओर अवस्थित है और जिसे तुम सूर्यके तेजसे देखते हो, सो सब तुम्हारा ही है। अकेले ही तुम समस्त गौओंके स्वामी हो। तुम्हारे दिये हुए धनका हम भोग करते हैं ।

७ बृहस्पति, तुम और इन्द्र—दोनों ही पार्थिव और स्वर्गीय धनके स्वामी हो। तुम दोनों स्तोत्र-कर्त्ता स्तोताको धन देते हो । तुम हमें सदा स्वस्ति द्वारा पालन करो।

१ विष्णु, तुम शब्द-स्पर्शादि पञ्चतन्मात्राओंसे अतीत शरीरसे (त्रिविक्रम वा वामन अवतारके समय) बढ़नेपर कोई तुम्हारी महिमा नहीं जान सकता। हम तुम्हारे दोनों लोकों (पृथिवीसे अन्तरिक्षतक) को जानते हैं । किन्तु तुम ही, हे देव, परम लोकको जानते हो ।

२ विष्णुदेव, जो पृथिवीमें हो चुके हैं और जो जन्म लेंगे, उनमेंसे कोई भी तुम्हारी महिमाका अन्त नहीं पा सकता। दर्शनीय और विराट् द्युलोकको तुमने ऊपर धारण कर रखा है। तुमने पृथिवीकी पूर्व दिशाको धारण कर रखा है।

इरावती धेनुमती हि भूतं सूयवसिनी मनुषे दशस्या ।
व्यस्तभ्ना रोदसी विष्णवेते दाधर्थ पृथिवीमभितो मयूखैः ॥३॥
उरुं यज्ञाय चक्रथुरु लोकं जनयन्ता सूर्यमुषासमग्निम् ।
दासस्य चिद्वृषशिप्रस्य माया जघ्नथुर्नरा पृतनाज्येषु ॥४॥
इन्द्राविष्णू दृंहिताः शम्बरस्य नव पुरो नवतिं च श्नथिष्टम् ।
शतं वर्चिनः सहस्रं च साकं हथो अप्रत्यसुरस्य वीरान् ॥५॥
इयं मनीषा बृहती बृहन्तोरुक्रमा तवसा वर्धयन्ती ।
ररे वां स्तोमं विदथेषु विष्णो पिन्वतमिषो वृजनेष्विन्द्र ॥६॥
वषट् ते विष्णवास आकृणोमि तन्मे जुषस्व शिपिविष्ट हव्यम् ।
वर्द्धन्तु त्वा सुष्टुतयो गिरो मे यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥७॥

---

३ द्यावापृथिवी, तुम स्तोता मनुष्यको दान करनेकी इच्छासे अन्नवाली, धेनुवाली और सुन्दर जौवाली हुई हो। विष्णु, द्यावापृथिवीको तुमने विविध प्रकारसे नीचे-ऊपर रखा है। सर्वत्रस्थित पर्वत द्वारा तुमने उस पृथिवीको धारण कर रखा है।

४ इन्द्र और विष्णु, सूर्य, अग्नि और उषाको उत्पन्न करके तुमने यजमानके लिये स्वर्गका निर्माण किया है। नेताओ, तुमने वृषशिप्र नामके दासकी मायाको संग्राममें नष्ट किया है।

५ इन्द्र और विष्णु, तुमने शम्बरकी ९९ और दृढ़ पुरियोंको नष्ट किया है। तुमने वर्चि नामके असुरके सौ और हजार वीरोंको (ताकि वें फिर सामने खड़े न हो सकें) नष्ट किया है।

६ यह महती स्तुति वृहत्, विस्तीर्ण, विक्रमसे युक्त और बलवान् इन्द्र तथा विष्णुको बढ़ाती है। विष्णु और इन्द्र, यज्ञस्थलमें तुमलोगोंको स्तोत्र प्रदान किया है। युद्धमें तुम हमारा अन्न बढ़ाओ।

७ विष्णु, तुम्हारे लिये यज्ञमें मुखसे मैंने वषट्कार किया है। शिपिविष्ट (तेजस्वी), हमारे उस हव्यका आश्रय करो। हमारी शोभन स्तुति और वाक्य तुम्हें बढ़ावें। तुम सदा स्वस्ति द्वारा हमें पालन करो।

१०० सूक्त

विष्णु देवता। वसिष्ठ ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

नू मर्तो दयते सनिष्यन्यो विष्णव उरुगायाय दाशत्।
प्र यः सत्राचा मनसा यजात एतावन्तं नयमाविवासात् ॥१॥
त्वं विष्णो सुमतिं विश्वजन्यामप्रयुतामेवयावो मतिं दाः।
पर्चो यथा नः सुवितस्य भूरेरश्वावतः पुरुश्चन्द्रस्य रायः ॥२॥
त्रिर्देवः पृथिवीमेष एतां विचक्रमे शतर्चसं महित्वा।
प्र विष्णुरस्तु तवसस्तवीयान्त्वेषं ह्यस्य स्थविरस्य नाम ॥३॥
विचक्रमे पृथिवीमेष एतां क्षेत्राय विष्णुर्मनुषे दशस्यन्।
ध्रुवासो अस्य कीरयो जनास उरुक्षितिं सुजनिमा चकार ॥४॥
प्रतत्ते अद्य शिपिविष्ट नामार्यः शंसामि वयुनानि विद्वान्।
तं त्वा गृणामि तवसमतव्यान् क्षयन्तमस्य रजसः पराके ॥५॥

१ जो मनुष्य बहुतोंके कीर्त्तन-योग्य विष्णुको हव्य प्रदान करता है, जो एक साथ कहे मन्त्रोंसे पूजा करता है और मनुष्योंके हितैषी विष्णुकी सेवा करता है, वही मनुष्य धनकी इच्छा करके उसे शीघ्र प्राप्त करता है।

२ मनोरथ-पूरक विष्णु, सबके लिये हितकारक और दोष-रहित अनुग्रह हमें प्रदान करो। जिससे भली भाँति पाने योग्य, अनेक अश्वोंवाले और बहुतोंके लिये आह्लादक धन प्राप्त किया जाय, ऐसा करो।

३ इन विष्णुदेवने सौ किरणोंसे युक्त पृथिवीपर अपनी महिमासे तीन बार चरण-क्षेप किया अर्थात् पृथिव्यादि तीनों लोकोंको (वामनावतारमें) घेर डाला। वृद्धसे वृद्ध विष्णु हमारे स्वामी हों। प्रवृद्ध विष्णुका रूप दीप्ति-युक्त हैं।

४ इस पृथिवीको मनुष्यके निवासके लिये देनेकी इच्छा करके इन विष्णुने पृथिवीको पद-क्रमण किया था। इन विष्णुके स्तोता निश्चल होते हैं। सुजन्मा विष्णुने विस्तृत निवास-स्थान बनाया था।

५ शिपिविष्ट विष्णु, आज हम स्तुतियोंके स्वामी और ज्ञातव्य विषयोंको जानकर तुम्हारे उस प्रसिद्ध नामका कीर्त्तन करेंगे। तुम प्रवृद्ध हो और हम अवृद्ध हैं, तो भी तुम्हारी स्तुति करेंगे; क्योंकि तुम रज (लोक)के पारमें रहते हो।

किमित्ते विष्णो परिचक्ष्यं भूत् प्रयद्ववक्षे शिपिविष्टो अस्मि ।
मा वर्पो अस्मदप गूह एतद्यदन्यरूपः समिथे बभूथ ॥६॥
वषट् ते विष्णवास आ कृणोमि तन्मे जुषस्व शिपिविष्ट हव्यम्।
वर्धन्तु त्वा सुष्टुतयो गिरो मे यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥

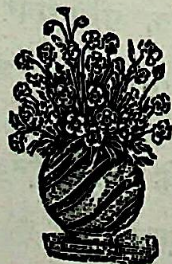
-०——०-

६ विष्णु, मैं जो "शिपिविष्ट" (संयत-रश्मि) नाम कहता हूँ, उसे प्रख्यापित (आ... करना क्या तुम्हें उचित है ? युद्धमें तुमने अन्य प्रकारका रूप धारण किया है। हमारे पाससे शरीर नहीं छिपाओ।

७ विष्णु, तुम्हारे लिये मुखसे मैं वषट्कार करता हूँ; इसलिये, हे शिपिविष्ट, मेरे उस... आश्रय करो। मेरी सुन्दर स्तुति और वाक्य तुम्हें वर्द्धित करें। तुम सदा हमें स्वस्ति द्वारा पाल...

—*—

षष्ठ अध्याय समाप्त



सप्तम अध्याय

१०१ सूक्त

पर्जन्य देवता। अग्निपुत्र कुमार अथवा वसिष्ठ ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द। शौनक ऋषिका मत है कि, स्नान करके, उपवास करके और पूर्व-मुख होकर इस सूक्तको और इसके अगले सूक्तका जप करनेपर पाँच रातोंके पश्चात् निश्चय ही वृष्टि होगी।

तिस्रो वाचः प्रवदज्योतिरग्रा या एतद्दुह्रे मधुदोघमूधः ।
स वत्सं कृण्वन् गर्भमोषधीनां सद्यो जातो वृषभो रोरवीति ॥१॥
यो वर्धन् ओषधीनां यो अपां यो विश्वस्य जगतो देव ईशे ।
स त्रिधातु शरणं शर्म यंसत् त्रिवर्तु ज्योतिः स्वभिष्ट्यस्मे ॥२॥
स्तरीरु त्वद्भवति सूत उत्वद्यथावशं तन्वं चक्र एषः ।
पितुः पयः प्रतिगृभ्णाति माता तेन पिता वर्धते तेन पुत्रः ॥३॥

---

१ अग्र भागमें ओङ्कार (वा बिजली)वाले ऋक्, यजुः और साम नामके (अथवा द्रुत, विलम्बित और मध्यम नामके) जो तीन प्रकारके वाक्य (वा मेघ-ध्वनि) जलको दूहते हैं, उन्हीं वाक्यों वा ध्वनियोंको कहो। पर्जन्य ही सहवासी विद्युदग्निको उत्पन्न करते हुए और ओषधियों (वा धान्यों) का गर्भ उत्पन्न करते हुए, शीघ्र ही उत्पन्न होकर, वृषभकी तरह (वा वर्षक होकर), शब्द करते हैं।

२ जो ओषधियों और जलके वर्द्धक हैं, जो सारे संसारके ईश्वर हैं, वह पर्जन्यदेव तीन प्रकारकी भूमियोंसे युक्त गृह और सुख दें। वह तीन ऋतुओं (सूर्यकी ज्योति वसन्तमें प्रातः, ग्रीष्ममें मध्याह्न और शरद्में अपराह्नमें विशेष प्रकाशक होती है) में वर्त्तमान सुन्दर गमनवाली ज्योति हमें दो।

३ पर्जन्यका एक रूप निवृत्त-प्रसवा गौकी तरह है और दूसरा रूप जल-वर्षक है। ये इच्छानुसार अपने शरीरको बनाते हैं। माता (पृथिवी) पिता (द्युलोक) से पय (दूध) लेती है, जिससे द्युलोक (पिता) और प्राणिवर्ग (पुत्र), दोनों वर्द्धित होते हैं।

यस्मिन्विश्वानि भुवनानि तस्थुस्तिस्रो द्यावस्त्रेधा सस्रुरापः ।
त्रयः कोशास उपसेचनासो मध्वः श्चोतन्त्यभितो विरप्शम् ॥४॥
इदं वचः पर्जन्याय स्वराजे हृदो अस्त्वन्तरं तज्जुजोषत् ।
मयोभुवो वृष्टयः सन्त्वस्मे सुपिप्पला ओषधीर्देवगोपाः ॥५॥
स रेतोधा वृषभः शश्वतीनां तस्मिन्नात्मा जगतस्तस्थुषश्च ।
तन्म ऋतं पातु शतशारदाय यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥६॥

१०२ सूक्त

पर्जन्य देवता । वसिष्ठ ऋषि । गायत्री छन्द ।

पर्जन्याय प्रगायत दिवस्पुत्राय मीह्लुषे । स नो यवसमिच्छतु ॥१॥
यो गर्भमोषधीनां गवां कृणोत्यर्वताम् । पर्जन्यः पुरुषीणाम् ॥२॥

---

४ जिनमें सभी भुवन (प्राणी) अवस्थित हैं, जिनमें द्युलोक आदि तीनों लोक अवस्थित हैं, जिनसे जल तीन प्रकार (पूर्व, पश्चिम और नीचे) से निकलता है और जिन पर्जन्यकी चारों ओर उपसेचन करनेवाले तीन प्रकार (पूर्व, पश्चिम और ऊपर) के मेघ जल बरसाते हैं, वे ही देव हैं ।

५ स्वयं प्रकाश पर्जन्यके लिये यह स्तोत्र किया जाता है। वह स्तोत्र ग्रहण करें। उनके लिये हृदय-ग्राही हो। हमारे लिये सुखकर वृष्टि गिरे । जिनके रक्षक पर्जन्य हैं, वे ओषधियाँ सुफलवती हों।

६ वृषभकी तरह वह पर्जन्य अनेक ओषधियोंके लिये रेत (जल) के धारक हैं। स्थावर जङ्गमकी देह (आत्मा) पर्जन्यमें ही रहती है । पर्जन्यका दिया हुआ जल सौ वर्षतक और मेरी रक्षा करो। तुम हमें सदा स्वस्ति द्वारा पालन करो।

---

१ स्तोताओ, अन्तरीक्षके पुत्र और सेचक पर्जन्यके लिये स्तोत्र गाओ।

२ जो पर्जन्यदेव ओषधियों, गौओं, वड़वाओं (अश्वजातीयों) और स्त्रियोंके गर्भ उत्पन्न करते हैं—

तस्मा इदास्ये हविर्जुहोता मधुमत्तमम् । इलां नः संयतं करत् ॥३॥

———

१०३ सूक्त

मण्डूक देवता । वसिष्ठ ऋषि । अनुष्टुप् और त्रिष्टुप् छन्द । वृष्टिकी इच्छासे वसिष्ठने पर्जन्यकी स्तुति की थी और मण्डूकोंने अनुमोदन । मण्डूकोंको अनुमोदक जानकर वसिष्ठने उनकी ही स्तुति इस सूक्तमें की है ।

संवत्सरं शशयाना ब्राह्मणा व्रतचारिणः ।
वाचं पर्जन्यजिन्वितां प्र मण्डूका अवादिषुः ॥१॥
दिव्या आपो अभि यदेनमायन्दृतिं न शुष्कं सरसी शयानम् ।
गवामह न मायुर्वत्सिनीनां मण्डूकानां वग्नुरत्रा समेति ॥२॥
यदीमेनाँ उशतो अभ्यवर्षीत्तृष्यावतः प्रावृष्यागतायाम् ।
अक्खलीकृत्या पितरं न पुत्रो अन्यो अन्यमुपवदन्तमेति ॥३॥
अन्यो अन्यमनु गृभ्णात्येनोरपां प्रसर्गे यदमन्दिषाताम् ।
मण्डूको यदभिवृष्टः कनिष्कन् पृश्निः सम्पृङ्क्ते हरितेन वाचम् ॥४॥

---

३ उन्हींके लिये देवोंके मुख-रूप अग्निमें अत्यन्त रसवान् हव्यका हवन करो । वह हमारे लिये नियत अन्न दें ।

———

१ एक वर्षका व्रत करनेवाले स्तोताकी तरह वर्षभरतक सोये हुए रहकर मण्डूक (मेढ़क) पर्जन्य (मेघ-विशेष) के लिये प्रसन्नता-कारक वाक्य कहते हैं ।

२ सूखे चमड़ेकी तरह सरोवरोंमें सोये हुए मण्डूकोंके पास जिस समय स्वर्गीय जल आता है, उस समय बछड़ावाली धेनुकी तरह मण्डूकोंका कल-कल शब्द होता है ।

३ वर्षा-कालके आनेपर जिस समय पर्जन्य अभिलाषी और पिपासु मेढ़कोंको जलसे सींचते हैं, उस समय जैसे पुत्र 'अक्खल" शब्द करते हुए पिताके पास जाता है, वैसे ही एक मेढ़क दूसरेके पास जाता है ।

४ जल गिरनेपर जिस समय दो जातियोंके मण्डूक प्रसन्न होते हैं और जिस समय पर्जन्य द्वारा सींचे जाकर लम्बी छलाँगें भरते हुए भूरे रँगके मेढ़क हरित वर्णके मेढ़कके साथ शब्द करते हैं, उस समय एक मण्डूक दूसरेपर अनुग्रह करता है ।

यदेषामन्यो अन्यस्य वाचं शाक्तस्येव वदति शिक्षमाणः ।
सर्वं तदेषां समृधेव पर्व यत् सुवाचो वदथनाध्यप्सु ॥५॥
गोमायुरेको अजमायुरेकः पृश्निरेको हरित एक एषाम् ।
समानं नाम बिभ्रतो विरूपाः पुरुत्रा वाचं पिपिशुर्वदन्तः ॥६॥
ब्राह्मणासो अतिरात्रे न सोमे सरो न पूर्णमभितो वदन्तः ।
संवत्सरस्य तदहः परिष्ठ यन्मण्डूकाः प्रावृषीणं बभूव ॥७॥
ब्राह्मणासः सोमिनो वाचमक्रत ब्रह्म कृण्वन्तः परिवत्सरीणम् ।
अध्वर्यवो घर्मिणः सिष्विदाना आविर्भवन्ति गुह्या न केचित् ॥८॥
देवहितिं जुगुपुर्द्वादशस्य ऋतुं नरो न प्रमिनन्त्येते ।
संवत्सरे प्रावृष्यागतायां तप्ता घर्मा अश्नुवते विसर्गम् ॥९॥

---

५ शिष्य-गुरुकी तरह जिस समय इन मेढ़कोंमें एक दूसरेकी ध्वनिका अनुकरण है और जिस समय हे मण्डूकगण, तुमलोग सुन्दर शब्दवाले होकर जलके ऊपर छलाँग हुए शब्द करते हो, उस समय तुम्हारे शरीरके सारे जोड़ ठीक हो जाते हैं।

६ मेढ़कोंमें किसीकी ध्वनि गौकी तरह है और किसीकी बकरेकी तरह। कोई धू है. कोई हरे रंगका। नाम तो सबका एक है; किन्तु रूप नाना प्रकारके हैं। ये अनेक देशों करते हुए, प्रकट होते हैं।

७ मण्डूको, अतिरात्र नामके सोम-यज्ञमें स्तोताओंकी तरह इस समय भरे हुए चारो ओर शब्द करते हुए (जिस दिन खूब वृष्टि होती है, उस दिन) चारो ओर रहो।

८ सोमसे युक्त और वार्षिक स्तुति करनेवाले स्तोताओंकी तरह ये मेढ़क शब्द क प्रवर्गचारी ऋत्विकोंकी तरह घामसे आर्द्र-शरीर और बिलमें छिपे हुए कुछ मण्डूक वृष्टिमें, प्रकट होते हैं।

९ नेता मण्डूक दैवी नियमकी रक्षा करते हैं, वे बारह महीनोंकी ऋतुओंको नष्ट नहीं वर्ष पूरा होनेपर, वर्षा ऋतुके आनेपर, ग्रीष्मके तापसे पीड़ित मण्डूक गड्ढोंके बन्धनसे छू

उलूकयातुं शुशुलूकयातुं जहि श्वयातुमुत कोकयातुम् ।
सुपर्णयातुमुत गृध्रयातुं दृषदेव प्रमृण रक्ष इन्द्र ॥२२॥
मा नो रक्षो अभिनड्यातुमावतामपोच्छतु मिथुना या किमीदिना ।
पृथिवी नः पार्थिवात्पात्वंहसोन्तरिक्षं दिव्यात् पात्वस्मान् ॥२३॥
इन्द्र जहि पुमांसं यातुधानमुत स्त्रियं मायया शाशदानाम् ।
विग्रीवासो मूरदेवा ऋदन्तु मा ते दृशन्त् सूर्यमुच्चरन्तम् ॥२४॥
प्रतिचक्ष्व विचक्ष्वेन्द्रश्च सोम जागृतम् ।
रक्षोभ्यो वधमस्यतमशनिं यातुमद्भ्यः ॥२५॥



२२ इन्द्र, ऊलूकोंके साथ जो राक्षस हिंसा करते हैं, उन्हें विनष्ट करो। जो क्षुद्र ऊलूक-रूपसे हिंसा करते हैं, उन्हें विनष्ट करो। जो कुक्कुर, चक्रवाक, बाज (श्येन) और गृध्र रूपोंसे हिंसा करते हैं, उन्हें, हे इन्द्र, पाषाणके समान वज्र द्वारा मार डालो।

२३ हमें राक्षस न घेरने पावें। दुःख देनेवाले राक्षसोंके जोड़े दूर हों। ये राक्षस "यह क्या, यह क्या" कहते हुए घूमते हैं। पृथिवी हमें अन्तरीक्षके पापसे रक्षा करे, अन्तरीक्ष हमें स्वर्गीय पापसे बचावे।

२४ इन्द्र, पुरुष-राक्षसका विनाश करो और जो राक्षसी माया द्वारा हिंसा करती है, उसे भी विनष्ट करो। मारना ही जिन राक्षसोंका खेल है, वे कबन्ध (छिन्न-ग्रीव) होकर विनष्ट हों। वे उदय-शील सूर्य देखने न पावें।

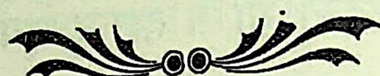
२५ सोम, तुम और इन्द्र प्रत्येकको देखो और विविध प्रकारसे देखो। जागो और राक्षसोंके लिये वज्र-रूप आयुध फेंको।



सप्तम मण्डल समाप्त

अष्टम मण्डल

५ अष्टक । ८ मण्डल । ७ अध्याय । १ अनुवाक



१ सूक्त

इन्द्र देवता । कण्वगोत्रीय मेध्यातिथि और मेधातिथि ऋषि । प्रथमकी दो ऋचाओंके ऋषि, अनन्तर भ्राता कण्वकी मित्रता प्राप्त किये हुए प्रगाथ नामक ऋषि, ३०से ३३ तकके असङ्ग राजपुत्र ऋषि और ३४ मन्त्रके ऋषि असङ्गकी भार्या और अङ्गिराकी कन्या शश्वती । बृहती, सतो और त्रिष्टुप् छन्द ।

माचिदन्यद्विशंसत सखायो मा रिषण्यत ।
इन्द्रमित् स्तोता वृषणं सचा सुते मुहुरुक्था च शंसत ॥१॥
अवक्रक्षिणं वृषभं यथाजुरं गां न चर्षणीसहम् ।
विद्वेषणं संवननोभयङ्करं मंहिष्ठमुभयाविनम् ॥
यच्चिद्धित्वा जना इमे नाना हवन्त ऊतये ।
अस्माकं ब्रह्मेदमिन्द्र भूतु तेहाविश्वा च वर्धनम् ॥३॥

१ सखा स्तोताओ, इन्द्रके सिवा दूसरेकी स्तुति नहीं करना । हिंसित मत होना। सोम होनेपर एकत्र होकर अभीष्ट-वर्षी इन्द्रकी स्तुति करो । बार-बार उक्थ उच्चारण करना ।

२ वृषभकी तरह शत्रुओंके हिंसक, अजर वृषभकी तरह मनुष्योंके विजेता, शत्रुओंके स्तोताओंके भजनीय, दिव्य और पार्थिव धनवाले और दाताओंमें श्रेष्ठ इन्द्रकी स्तुति करो।

३ इन्द्र यद्यपि रक्षाके लिये ये मनुष्य अलग-अलग तुम्हारी स्तुति करते हैं, तो भी यह स्तोत्र ही सदा तुम्हारा वर्द्धक हो ।

वितर्तूर्यन्ते मघवन् विपश्चितोर्यो विपो जनानाम् ।
उपक्रमस्व पुरुरूपमाभर वाजं नेदिष्ठमूतये ॥४॥
महे चन त्वामद्रिवः परा शुल्काय देयाम् ।
न सहस्राय नायुताय वज्रिवो न शताय शतामघ ॥५॥
वस्याँ इन्द्रासि मे पितुरुत भ्रातुरभुञ्जतः ।
माता च मे छदयथः समा वसो वसुत्वनाय राधसे ॥६॥
क्वेयथ क्वेदसि पुरुत्रा चिद्धि ते मनः ।
अलर्षि युध्म खजकृत् पुरन्दर प्र गायत्रा अगासिषुः ॥७॥
प्रास्मै गायत्रमर्चत वावातुर्यः पुरन्दरः ।
याभिः काण्वस्योप बर्हिरासदं यासद्वज्री भिनत् पुरः ॥८॥
ये ते सन्ति दशग्विनः शतिनो ये सहस्रिणः ।
अश्वासो ये ते वृषणो रघुद्रुवस्तेभिर्नः स्तूयमागहि ॥९॥

---

४ धनी इन्द्र, तुम्हारे विद्वान् स्तोता शत्रुओंमें विकम्प उत्पन्न करते हुए सदा ही आपद्से उत्तीर्ण होते हैं। हमारे निकट आओ। तृप्तिके लिये बहुरूपीवाले और निकटस्थित अन्न हमें प्रदान करो।

५ वज्री इन्द्र, तुम्हें महामूल्यमें भी मैं नहीं बेंच सकता। वज्रहस्त, हजार और दस हजारमें भी तुम्हें नहीं बेंच सकता। असीम धनके लिये भी नहीं बेंच सकता।

६ इन्द्र, तुम मेरे पितासे भी अधिक धनी हो। न भागनेवाले मेरे भाईसे भी तुम अधिक धनी हो। निवासी इन्द्र, मेरी माता और तुम सामन होकर मुझे व्यापक धनके लिये पूजित करो।

७ इन्द्र तुम कहाँ गये हो ? कहाँ हो ? तुम्हारा मन नाना दिशाओंमें रहता है। युद्ध-कुशल और युद्धकारी पुरन्दर, आओ। गाता तुम्हारी स्तुति करते हैं।

८ इन इन्द्रके लिये गाने योग्य गान करो। पुरन्दर (शत्रु-पुरी-भेदक) इन्द्र सबके लिये संभजनीय हैं। जिन ऋचाओंसे कण्व-पुत्रोंके यज्ञमें वज्री होकर इन्द्र गये थे और जिन ऋचाओंसे शत्रुओंकी पुरियोंको नष्ट किया था, उन्हीं ऋचाओंसे गाने योग्य गान गाओ।

९ इन्द्र, तुम्हारे जो दस योजन चलनेवाले सौ और हजार घोड़े हैं, वे सींचनेवाले शीघ्रगामी हैं। इन्हीं अश्वोंकी सहायतासे शीघ्र आओ।

आ त्वद्य सवर्दुघां हुवे गायत्रवेपसम् ।
इन्द्रं धेनुं सुदुघामन्यामिषमुरुधारामरङ्कृतम् ॥१०॥
यत्तुदत् सूर एतशं वङ्कू वातस्य पर्णिना ।
वहत् कुत्समार्जुनेयं शतक्रतुः त्सरद्गन्धर्वमस्तृतम् ॥११॥
य ऋते चिदभिश्रिषः पुरा जत्रुभ्य आतृदः ।
सन्धाता सन्धिं मघवा पुरूवसुरिष्कर्ता विह्रुतं पुनः ॥१२॥
मा भूम निष्ट्याइवेन्द्र त्वदरणाइव ।
वनानि न प्रजहितान्यद्रिवो दुरोषासो अमन्महि ॥१३॥
अमन्महीदनाशवोऽनुग्रासश्च वृत्रहन् ।
सकृत् सु ते महता शूर राधसानु स्तोमं मुदीमहि ॥१४॥
यदि स्तोमं मम श्रवदस्माकमिन्द्रमिन्दवः ।
तिरः पवित्रं ससृवांस आशवो मन्दन्तु तुग्र्यावृधः ॥१५॥

---

१० आज दूध देनेवाली, प्रशंसनीय वेगवाली और अनायास दुही जानेवाली गाय (स्वरूप इन्द्र) की मैं स्तुति करता हूँ। इसके अतिरिक्त बहुत धाराओंवाली वाञ्छनीया स्वरूप यथेष्ट-कर्त्ता इन्द्रकी मैं स्तुति करता हूँ।

११ जिस समय सूर्यने "एतश" नामके राजर्षिको कष्ट दिय था, उस समय वक्रगामी वायु-वेगसे चलनेवाले दोनों अश्वोंने अर्जुन-पुत्र कुत्स ऋषिको ढोया था। बहुविधकर्मा किरण-धारक और अहिंसित सूर्यको, छद्म-वेशसे, आक्रमण करने गये थे।

१२ जो इन्द्र सन्धान-(संघटन-) द्रव्यके विना ही, गर्दनसे रुधिर निकलनेके पहले ही, जोड़ देते हैं, वही धनी—बहु-धनी—इन्द्र विच्छिन्नका पुनः संस्कार कर देते हैं।

१३ इन्द्र, तुम्हारी दयासे हम नीच न होने पावें; दुःखी न हों। क्षीण वनोंकी तरह हम पुत्रादि-शून्य न हों। वज्रधर इन्द्र, हमें दूसरे जला न सकें। घरमें रहते हुए हम तुम्हारी स्तुति करते हैं।

१४ वृत्र-घातक, शीघ्रता-रहित और उग्रता-शून्य होकर हम धीरे-धीरे तुम्हारी स्तुति करते हैं। वीर, एक बार यथेष्ट धनके साथ हम तुम्हारे लिये सुन्दर स्तोत्र कहेंगे।

१५ यदि इन्द्र हमारा स्तोत्र सुनें, तो, उसी समय, हमारे सोम उन्हें प्रसन्न कर सकेंगे। वह सोम वक्र भावसे स्थित "दशापवित्र" से पवित्र किये गये हैं और "एक धन" आदि द्वारा वर्द्धमान हुए हैं; इस लिये सब सोम शीघ्र मदकारी हो गये हैं।

गोमायुरदादजमायुरदात् पृश्निरदाद्धरितो नो वसूनि ।
गवां मण्डूका ददतः शतानि सहस्रसावे प्रतिरन्त आयुः ॥१०॥



१०४ सूक्त

६, १२ और १३ के सोम, ११ के "देव", ८ और १६के इन्द्र, १७ के ग्रावा, १८ के मरुत्, १० और १४ के अग्नि, १९से २३ तक इन्द्र, २३के पूर्वार्द्धमें वसिष्ठकी प्रार्थना और अपरार्द्धके पृथिवी और अन्तरीक्ष देवता हैं। शेष मन्त्रोंके देवता हैं राक्षस नाशक इन्द्र और सोम। वसिष्ठ ऋषि। जगती, त्रिष्टुप् और अनुष्टुप् छन्द।

इन्द्रासोमा तपतं रक्ष उब्जतं न्यर्पयतं वृषणा तमोवृधः ।
परा शृणीतमचितोन्योषतं हतं नुदेथां निशिशीतमत्रिणः ॥१॥
इन्द्रासोमा समघशंसमभ्यघं तपुर्ययस्तु चरुरग्निवाँइव ।
ब्रह्मद्विषे क्रव्यादे घोरचक्षसे द्वेषो धत्तमनवायं किमीदिने ॥२॥
इन्द्रासोमा दुष्कृतो वव्रे अन्तरनारम्भणे तमसि प्रविध्यतम् ।
यथा नातः पुनरेकश्चनोदयत्तद्वामस्तु सहसे मन्युमच्छवः ॥३॥

---

१० धेनुकी तरह शब्द करनेवाले मण्डूक हमें धन दें। बकरेकी तरह शब्द करनेवाले मेढ़क हमें धन दें। भूरे रंग (धूम्रवर्ण) मण्डूक हमें धन दें। हरे रंगके मण्डूक हमें धन दें। हजार वनस्पतियोंकी उत्पादक वर्षा ऋतुमें मण्डूकगण असीम गायें देते हुए हमारी आयु बढ़ावें।



१ इन्द्र और सोम, तुम राक्षसोंको दुःख दो और मारो। अभीष्ट-वर्षक-द्वय, अन्धकारमें बढ़ते हुए राक्षसोंको नीच कर दो। अज्ञानी राक्षसोंको विमुख करके हिंसित करो, जलाओ, मार फेंको और दूर कर दो। भक्षक राक्षसोंको जर्जर करके फेंक दो।

२ इन्द्र और सोम, अनर्थ प्रशंसक और आक्रामक राक्षसको शीघ्र ही दबा दो। तुम्हारे तेजसे तपे हुए राक्षसको, अग्निमें फेंके गये "चरु" की तरह, विलुप्त करो। ब्राह्मणोंके द्वेषी, मांस-भक्षक, घोर-नेत्र तथा कठोर-वक्ता राक्षसके प्रति जैसे सदा द्वेष रहे, वैसे करो।

३ इन्द्र और सोम, दुष्कर्मी राक्षसोंको, वारक मध्यस्थलमें निरवलम्ब अन्धकारमें, फेंककर मारो, ताकि वहाँसे एक भी राक्षस फिर ऊपर न उठ सके। तुम्हारा वह प्रसिद्ध क्रोधवाला बल दबानेमें समर्थ हो।

अघशंसाय तर्हणम् ।
इन्द्रासोमा वर्तयतं दिवो वधं सम्पृथिव्या अघशंसाय तर्हणम् ।
उत्तक्षतं स्वर्यं पर्वतेभ्यो येन रक्षो वावृधानं निजूर्वथः ॥४॥
इन्द्रासोमा वर्तयतं दिवस्पर्यग्नितप्तेभिर्युवमश्महन्मभिः ।
तपुर्वधेभिरजरेभिरत्रिणो नि पर्शाने विध्यतं यन्तु निस्वरम् ॥५॥
इन्द्रासोमा परिवां भूतु विश्वत इयं मतिः कक्ष्याश्वेव वाजिना ।
यां वां होत्रं परिहिनोमि मेधयेमा ब्रह्माणि नृपतीव जिन्वतम् ॥६॥
प्रति स्मरेथां तुजयद्भिरेवैर्हतं द्रुहो रक्षसो भङ्गुरावतः ।
इन्द्रासोमा दुष्कृते मा सुगं भूद्यो नः कदाचिदभिदासति द्रुहा ॥७॥
यो मा पाकेन मनसा चरन्तमभिचष्टे अनृतेभिर्वचोभिः ।
आप इव काशिना सङ्गृभीता असन्नस्त्वासत इन्द्र वक्ता ॥८॥
ये पाकशंसं विहरन्त एवैर्ये वा भद्रं दूषयन्ति स्वधाभिः ।
अहये वा तान् प्रददातु सोम आ वा दधातु निर्ऋतेरुपस्थे ॥९॥

---

४ इन्द्र और सोम, अन्तरीक्षसे घातक आयुध उत्पन्न करो। अनर्थकारीके लिये इस घातक आयुध उत्पन्न करो। मेघसे वह संतापक वज्र उत्पन्न करो, जिससे प्रवृद्ध राक्षस... किया है।

५ इन्द्र और सोम, अन्तरीक्षसे चारो ओर आयुध भेजो। अग्निसे संतप्त, तापक प्रहार... और पत्थरके विकार-भूत घातक अस्त्रोंसे राक्षसोंके पार्श्व स्थानोंको फाड़ो। वे राक्षस चुपचाप...

६ इन्द्र और सोम, बगलको बाँधनेवाली रस्सी जैसे घोड़ेको बाँधती है, वैसे ही ... स्तुति तुम्हें प्राप्त हो। तुम बली हो। स्मरण-शक्तिके बल मैं इस स्तोत्रको प्रेरित करता... राजालोग धनसे पूरण करते हैं, वैसे ही तुमलोग इन स्तोत्रोंको फलवाले करो।

७ इन्द्र और सोम, शीघ्रगामी अश्वकी सहायतासे अभिगमन करो। द्रोही और भञ्जक... मारो। पापी राक्षसको सुख न हो; क्योंकि द्रोह-युक्त होकर वह राक्षस हमें कभी न कभी मार...

८ विशुद्ध मनसे रहनेवाले मुझे जो राक्षस झूठी बातोंवाला बनाता है, हे इन्द्र, ... वादी राक्षस, मुट्ठीमें बाँधे हुए जलकी तरह, अस्तित्व-शून्य हो जाय।

९ सत्यवादी मुझे जो अपने स्वार्थके लिये लाञ्छित करते हैं एवम् कल्याण-वृत्ति मु... होकर दोषी बनाते हैं, उन्हें सोम साँपके ऊपर गिरा दें अथवा उन्हें पाप-देवताकी गोदमें...

यो नो रसं दिप्सति पित्वो अग्ने यो अश्वानां यो गवां यस्तनूनाम् ।
रिपुः स्तेनः स्तेयकृद्दभ्रमेतु नि ष हीयतां तन्वा तनाच ॥१०॥
परः सो अस्तु तन्वा तना च तिस्रः पृथिवीरधो अस्तु विश्वा ।
प्रतिशुष्यतु यशो अस्य देवा यो नो दिवा दिप्सति यश्च नक्तम् ॥११॥
सुविज्ञानम् चिकितुषे जनाय सच्चासच्च वचसी पस्पृधाते ।
तयोर्यत् सत्यं यतरदृजीयस्तदित् सोमोऽवति हन्त्यासत् ॥१२॥
न वाउ सोमो वृजिनं हिनोति न क्षत्रियं मिथुरा धारयन्तम् ।
हन्ति रक्षो हन्त्यसद्वदन्तमुभाविन्द्रस्य प्रसितौ शयाते ॥१३॥
यदि वाहमनृतदेव आस मोघं वा देवां अप्यूहे अग्ने ।
किमस्मभ्यं जातवेदो हृणीषे द्रोघवाचस्ते निर्ऋथं सचन्ताम् ॥१४॥
अद्या मुरीय यदि यातुधानो अस्मि यदि वायुस्ततप पूरुषस्य ।
अधा स वीरैर्दशभिर्वियूया यो मा मोघं यातुधानेत्याह ॥१५॥

१० अग्नि, जो राक्षस हमारे अन्नका सार विनष्ट करनेकी इच्छा करता है और जो अश्वों, गौओं और सन्तानोंका सार नष्ट करनेको इच्छा करता है, वह शत्रु, चोर और धनापहारी हिंसा पावे, वह अपने शरीर और सन्तानके साथ नष्ट हो जाय।

११ वह राक्षस शरीर और सन्तानसे रहित हो। तीनों व्यापक लोकोंके नीचे वह चला जाय। जो राक्षस हमें दिन और रात मारनेकी इच्छा करता है, हे देवो, उसका यश सूख जाय।

१२ विद्वान्को यह विदित है कि, सत्य और असत्य वचन परस्पर प्रतिस्पर्द्धा करते हैं। उनमें जो सत्य और सरलतम है, उसीका पालन सोम करते हैं और असत्यकी हिंसा करते हैं।

१३ सोमदेव पापी और बल-युक्त मिथ्यावादीको नहीं छोड़ते, मार देते हैं। वह राक्षसको मारते हैं और असत्यवादीको भी मारते हैं। वे मारे जाकर इन्द्रके बन्धनमें रहते हैं।

१४ यद्यपि मैं असत्य देवोंवाला हूँ अथवा यद्यपि मैं वृथा देवोंके निकट जाता हूँ, तो भी हे धनी अग्नि, क्यों मेरे प्रति क्रुद्ध होते हो। मिथ्यावादी लोग तुम्हारी हिंसाको विशेष रूपसे प्राप्त करें।

१५ यदि मैं (वसिष्ठ) राक्षस हूँ अथवा यदि मैं पुरुषकी आयु नष्ट करता हूँ, तो मैं अभी मर जाऊँ अथवा मुझे जो वृथा राक्षस कहकर सम्बोधन करता है, उसके दस वीर पुत्र (सारा परिवार) नष्ट हो जायँ।

यो मायातुं यातुधानेत्याह यो वा रक्षाः शुचिरस्मीत्याह ।
इन्द्रस्तं हन्तु महता बधेन विश्वस्य जन्तोरधमस्पदीष्ट ॥१६॥
प्र या जिगाति खर्गलेव नक्तमप द्रुहा तन्वं गूहमाना ।
वव्राँ अनन्ताँ अवसा पदीष्ट ग्रावाणो घ्नन्तु रक्षस उपब्दैः ॥१७॥
वितिष्ठध्वं मरुतो विक्ष्विच्छत गृभायत रक्षसः सम्पिनष्टन ।
वयो ये भूत्वी वतयन्ति नक्तभिर्ये वा रिपो दधिरे देवे अध्वरे ॥१८॥
प्रवर्तय दिवो अश्मानमिन्द्र सोमसितं मघवन्त् संशिशाधि ।
प्राक्तादपाक्तादधरादुदक्तादभि जहि रक्षसः पर्वतेन ॥१९।
एत उ त्ये पतयन्ति श्वयातव इन्द्रं दिप्सन्ति दिप्सवो दाभ्यम् ।
शिशीते शक्रः पिशुनेभ्यो बधं नूनं सृजदशनिं यातुमद्भ्यः ॥२०॥
इन्द्रो यातुनामभवत् पराशरो हविर्मथीनामभ्याविवासताम् ।
अभिदु शक्रः परशुर्यथा वनं पात्रेव भिन्दन्त् सत एति रक्षसः ॥२१॥

---

१६ जो राक्षस मुझ अराक्षसको "राक्षस" कहकर सम्बोधन करता है और जो राक्षस "शुद्ध" समझता है, उसे महान् आयुध द्वारा इन्द्र विनष्ट करें। वह सारे प्राणियोंमें अधम पतित हो ।

१७ जो राक्षसी रात्रि-समय द्रोहिणी होकर उल्लूकी तरह अपने शरीरको चलती है, वह निम्नमुखी होकर अनन्त गर्त्तमें पतित हो जाय । अभिषव-शब्दोंसे पत्थर भी विनष्ट करें ।

१८ मरुतो, तुमलोग प्रजामें विविध रीतियोंसे निवास करो। जो राक्षस पक्षी रात्रिमें आते हैं और जो प्रदीप यज्ञमें हिंसा करते हैं, उन्हें चाहो, पकड़ो और चूर्ण

१९ इन्द्र, अन्तरीक्षसे वज्र प्रेरित करो । धनी इन्द्र, सोम द्वारा तीक्ष्ण यजमानको करो। ग्रन्थि-युक्त वज्र द्वारा पूर्व, पश्चिम, दक्षिण और उत्तरसे राक्षसोंको विनष्ट करो।

२० ये राक्षस कुकुरोंके साथ मारते-काटते आते हैं । जो राक्षस मारनेकी इच्छासे सनीय इन्द्रकी हिंसा करनेकी इच्छा करते हैं, उन कपटियोंको मारनेके लिये इन्द्र वज्रको रहे हैं । इन्द्र शीघ्र राक्षसोंके लिये वज्र फेंकें ।

२१ इन्द्र हिंसकोंके भी हिंसक हैं । जैसे फरसा वनको काटता है और जैसे मुद्गर नोंको फोड़ता है, वैसे ही इन्द्र, हव्य-मन्थनकर्त्ता और अभिमुख-आगमन-कर्त्ताके लिये, विनाश करते हुए आ रहे हैं।

आ त्वद्य सधस्तुतिं वावातुः सख्युरागहि ।
उपस्तुतिर्मघोनां प्र त्वावत्वधा ते वश्मि सुष्टुतिम् ॥१६॥
सोता हि सोममद्रिभिरेमेनमप्सु धावत ।
गव्या वस्त्रेव वासयन्त ईम्नरो निर्धुक्षन्वक्षणाभ्यः ॥१७॥
अध ज्मो अध वा दिवो बृहतो रोचनादधि ।
अया वर्द्धस्व तन्वा गिरा ममा जाता सुक्रतो पृण ॥१८॥
इन्द्राय सु मदिन्तमं सोमं सोता वरेण्यम् ।
शक्र एणं पीपयद्विश्वया धिया हिन्वानं न वाजयुम् ॥१९॥
मा त्वा सोमस्य गल्दया सदा याचन्नहं गिरा ।
भूर्णिं मृगं न सवनेषु चुक्रुधं क ईशानं न याचिषत् ॥२०॥
मदेनेषितं मदमुग्रमुग्रेण शवसा ।
विश्वेषां तरुतारं मदच्युतं मदे हि ष्मा ददाति नः ॥२१॥

१६ इन्द्र, अपने सेवक स्तोताकी, अन्योंके साथ की जाती, स्तुतिकी ओर आज शीघ्र आओ । अन्य हविवालोंका स्तोत्र तुम्हारे पास जाय । इस समय मैं भी तुम्हारी सुन्दर स्तुतिकी इच्छा करता हूँ ।

१७ अध्वर्युओ, पत्थरोंसे सोमका अभिषव करो और इसे जलमें धोओ । गोचर्मकी तरह मेघोंके द्वारा शरीर ढककर मरुद्गण नदियोंके लिये जल दूहते हैं ।

१८ इन्द्र, पृथिवी, अन्तरीक्ष अथवा विशाल प्रकाशित प्रदेशसे आकर मेरी इस विस्तृत स्तुति द्वारा वर्द्धित होओ । सुयज्ञ इन्द्र, हमारे यहाँ उत्पन्न मनुष्योंको अभिलषित फलसे पूर्ण करो ।

१९ अध्वर्युओ, इन्द्रके लिये तुम सबसे अधिक मदकर सोम प्रस्तुत करो । इन्द्र सारी क्रियाओं द्वारा प्रसन्नता-दायक और अन्नाभिलाषी यजमानको वर्द्धित करो ।

२० इन्द्र, सवनों (यज्ञों) में सोम प्रस्तुत करते और स्तुति तथा सदा प्रार्थना करते हुए मैं तुम्हें क्रुद्ध करूँ । तुम भरण-कर्त्ता और सिंहकी तरह भयङ्कर हो । संसारमें ऐसा कौन है, जो तुमसे याचना नहीं करता ?

२१ उग्र बलवाले इन्द्र, मद उत्पन्न करनेवाले स्तोता द्वारा प्रस्तुत मदकर सोमका पान करें । सोम-पानसे हर्ष उत्पन्न होनेपर इन्द्र हमें शत्रु-जेता और गर्व-ध्वंसक पुत्र देते हैं ।

शेवारे वार्या पुरु देवो मर्ताय दाशुषे ।
स सुन्वते च स्तुवते च रासते विश्वगूर्तो अरिष्टुतः ॥२२॥
ऐन्द्र याहि मत्स्व चित्रेण देव राधसा ।
सरो न प्रास्युदरं सपीतिभिरा सोमेभिरुरु स्फिरम् ॥२३॥
आ त्वा सहस्रमाशतं युक्ता रथे हिरण्यये ।
ब्रह्मयुजो हरय इन्द्र केशिनो वहन्तु सोमपीतये ॥२४॥
आ त्वा रथे हिरण्यये हरी मयूरशेप्या ।
शितिपृष्ठा वहतां मध्वो अन्धसो विवक्षणस्य वीतये ॥२५॥
पिबात्वस्य गिर्वणः सुतस्य पूर्वपा इव ।
परिष्कृतस्य रसिन इयमासुतिश्चारुर्मदाय पत्यते ॥२६॥
य एको अस्ति दंसना महाँ उग्रो अभि व्रतैः ।
गमत् स शिप्री न स योषदा गमद्धवं न परिवर्जति ॥२७॥

२२ इन्द्रदेव सुख-जनक यज्ञमें हव्य देनेवाले यजमानके लिये बहु-वरणीय धन। वही सोमाभिषव-कर्त्ता और स्तोताको धन देते हैं। वह सारे कार्यों में उद्यत और प्रशस्य हैं।

२३ इन्द्र, आओ। देव, तुम दर्शनीय धन द्वारा हृष्ट होओ। एकत्र पीत सोम द्वारा विस्तीर्ण और वृद्ध उदर, सरोवरकी तरह, पूर्ण करो।

२४ इन्द्र, शत-सङ्ख्यक और सहस्र-सङ्ख्यक अश्व, सोमपानके लिये, हिरण्मय रथपर इन्द्रको वहन करें वे अश्व इन्द्रसे युक्त और केशवाले हैं।

२५ श्वेत-पृष्ठ और मयूर वर्णवाले अश्व मधुर स्तुतिके योग्य सोमको पीने हिरण्मय रथसे इन्द्रको ले जायँ।

२६ स्तुति–योग्य इन्द्र, प्रथम सोम-पाताकी तरह इस अभिषुत सोमका पान परिष्कृत और रसवाला है। यह आसव (सोम)- मदकारक और शोभन है। यह मदकारक सम्पन्न किया गया है।

२७ जो इन्द्र अपने कर्म द्वारा अकेले सबको परास्त करते हैं और जो कर्मसे शीघ्र और शिरस्त्राण (शिप्र) वाले हैं, वही इन्द्र आवें। वह पृथक् न हों। वह हमारे स्तोत्रमें आगमन करें। हमें छोड़ें नहीं।

त्वं पुरं चरिष्णवं बधैः शुष्णस्य सम्पिणक् ।
त्वं भा अनुचरो अध द्विता यदिन्द्र हव्यो भुवः ॥२८॥
मम त्वा सूर उदिते मम मध्यन्दिने दिवः ।
मम प्रपित्वे अपिशर्वरे वसवा स्तोमासो अवृत्सत ॥२९॥
स्तुहि स्तुहीदेते घाते मंहिष्ठासो मघोनाम् ।
निन्दिताश्वः प्रपथी परमज्या मघस्य मेध्यातिथे ॥३०॥
आ यदश्वान्वनन्वतः श्रद्धयाहं रथे रुहम् ।
उत वामस्य वसुनश्चिकेतति यो अस्ति याद्वः पशुः ॥३१॥
य ऋज्रा मह्यं मामहे सह त्वचा हिरण्यया ।
एष विश्वान्यभ्यस्तु सौभगासङ्गस्य स्वनद्रथः ॥३२॥
अध प्लायोगिरति दासदन्यानासङ्गो अग्ने दशभिः सहस्रैः ।
अधोक्षणो दश मह्यं रुशन्तो नलाइव सरसो निरतिष्ठन् ॥३३॥

---

२८ इन्द्र, तुमने शुष्ण असुरके संचरणशील निवासस्थानको वज्रसे चूर्ण कर डाला था। म स्तोता और यज्ञ-कर्त्ताके द्वारा आह्वानके योग्य हो। दीप्तिमान् होकर तुमने शुष्णका अनुगन किया था।

२९ सूर्योदय होनेपर तुम मेरे सारे स्तोत्रोंको आवर्त्तित करो। दिनके मध्यमें मेरी स्तुति- आवर्त्तित करो। दिनके अन्तमें मेरे स्तोत्रको आवर्त्तित करो। रातमें भी मेरी स्तुतिको ावर्त्तित करो।

३० मेध्यातिथि, बार-बार मेरी (राजर्षि आसङ्ग की) स्तुति करो। मेरी प्रशंसा करो। धन- नोंमें हम (आसङ्ग लोग) सबसे अधिक धन देनेवाले हैं। मेरी शक्ति (वीर्य) से दूसरेके अश्व ाये गये हैं। मेरा पथ उत्कृष्ट है, मेरा आयुध उत्कृष्ट है।

३१ आहारके अन्तमें श्रद्धा-युक्त होकर मैंने तुम्हारे रथको जोता था। मैं मनोरम दान करना नता हूँ। मैं यदुवंशोत्पन्न और पशुवाला हूँ।

३२ जिन्होंने (आसङ्गने), हिरण्मय चर्मास्तरणके साथ, गतिशील धन मुझे (मेध्यातिथिको) ान किया था, वह शब्द करनेवाले रथसे युक्त होकर शत्रुओंके सारे धनको जीत डालें।

३३ अग्नि, प्लयोगके पुत्र आसङ्ग दस हजार गायोंका दान करनेसे दानमें सारे दाताओंको घ गये। अनन्तर सेचन-समर्थ और दीप्यमान् सारे पशु, सरोवरसे नलकी तरह, (आसङ्गसे) निकल थे।

अन्वस्य स्थुरं ददृशे पुरस्तादनस्थ ऊरुरवरम्बमाणः ।
शश्वती नार्यभिचक्ष्याह सुभद्रमर्य भोजनं बिभर्षि ॥३४॥

---

२ सूक्त

इन्द्र देवता। कण्वगोत्रीय मेधातिथि और अङ्गिरागोत्रीय प्रियमेध ऋषि। अनुष्टुप् और गायत्री

इदं वसो सुतमन्धः पिबा सुपूर्णमुदरम् ।
अनाभयिन्ररिमाते ॥१॥
नृभिर्धूतः सुतो अश्नैरव्यो वारैः परिपूतः ।
अश्वो न निक्तो नदीषु ॥२॥
तं ते यवं यथा गोभिः स्वादुमकर्म श्रीणन्तः ।
इन्द्र त्वास्मिन्त्सधमादे ॥३॥

---

३४ आसङ्गके आगे (गुह्य देशमें) "स्थूल" देखा जाता है। वह अस्थि (हड्डी) से रहित और नीचेकी ओर लम्बायमान है। आसङ्गकी शश्वती नामकी स्त्रीने उसे देखकर कहा, उत्तम भोग-साधक वस्तुको तुम धारण करते हो।*

---

१ वासयिता इन्द्र, इस अभिषुत सोमका पान करो। तुम्हारा उदर पूर्ण हो। इन्द्र, तुम्हें हम सोम देंगे।

२ नेताओं द्वारा धोया गया और वस्त्र द्वारा अभिषुत तथा मेष-लोमसे परिपूत सोम, नहाये हुए अश्वकी तरह, शोभा पा रहा है।

३ इन्द्र, हमने जौकी तरह उक्त सोम तुम्हारे लिये, क्षीर आदिमें मिलाकर, स्वादिष्ट इसलिये हे इन्द्र, इस यज्ञमें वैसा सोम पीनेके लिये मैं तुम्हें बुलाता हूँ।

* प्लयोग नामक राजाके पुत्र आसङ्ग शाप-ग्रस्त होकर स्त्री बन गये थे। अनन्तर थिके प्रभावसे उन्होंने पुरुषत्व प्राप्त किया था। शश्वती उनकी स्त्री और अङ्गिराकी इस सूक्तकी ऋषिका वही है।

इन्द्र इत् सोमपा एक इन्द्रः सुतपा विश्वायुः । अन्तर्देवान्मर्त्यांश्च ॥४॥
न यं शुक्रो न दुराशीर्न तृप्रा उरुव्यचसम् । अपस्पृण्वते सुहार्दम् ॥५॥
गोभिर्यदीमन्ये अस्मन्मृगं न व्रा मगयन्ते । अभित्सरन्ति धेनुभिः ॥६॥
त्रय इन्द्रस्य सोमाः सुतासः सन्तु देवस्य । स्वे क्षये सुतपाव्नः ॥७॥
त्रयः कोशासः श्चोतन्ति तिस्रश्चम्वः सुपूर्णाः । समाने अधि भार्मन् ॥८॥
शुचिरसि पुरुनिःष्ठाः क्षीरैर्मध्यत आशीर्तः । दध्ना मन्दिष्ठः शूरस्य ॥९॥
इमे त इन्द्र सोमास्तीव्रा अस्मे सुतासः । शुक्रा आशिरं याचन्ते ॥१०॥
ताँ आशीरं पूरोलासमिन्द्रेमं सोमं श्रीणीहि ।
रेवन्तं हि त्वा श्रृणोमि ॥११॥

---

४ देवों और मनुष्योंके बीच इन्द्र ही समस्त सोमके पानके अधिकारी हैं । अभिषुत सोम पीनेवाले इन्द्र ही सब प्रकारके अन्नोंसे युक्त हैं ।

५ जिन विस्तृत व्यापक इन्द्रको प्रदीप्त सोम अप्रसन्न नहीं करता, दुर्लभ आश्रयण द्रव्य (क्षीरादि) वाला सोम जिन्हें अप्रसन्न नहीं करता तथा तृप्ति करनेवाले अन्य पुरोडाशादि जिन्हें अप्रसन्न नहीं करते, उन इन्द्रकी हम स्तुति करते हैं ।

६ जाल आदिसे रोके गये मृगको जैसे व्याध खोजते हैं, उसी प्रकार हमसे दूसरे जो ऋत्विक् और यजमान आदि संस्कृत सोम द्वारा इन्द्रका अन्वेषण करते हैं और जो स्तुतियोंसे, कुत्सित रूपसे, इन्द्रके पास जाते हैं, वे उनको नहीं पाते ।

७ अभिषुत सोमको पीनेवाले इन्द्रदेवके लिये तीन प्रकार (सवन-त्रय) के सोम यज्ञ-गृहमें बनाया जाय ।

८ ऋत्विकोंका एकमात्र भरण करनेवाले यज्ञमें तीन प्रकारके कोश (सोम प्रस्तुत करनेके कलश) सोमका क्षरण (स्रवण) करते हैं । तीनों चमस (सवन-त्रयके) भी सोम-पूर्ण हैं ।

९ सोम, तुम पवित्र और अनेक पात्रोंमें अवस्थित हो और बीचमें क्षीर तथा दधि द्वारा मिश्रित हो । तुम वीर इन्द्रको सबसे अधिक प्रमत्त करो ।

१० इन्द्र, तुम्हारे ये सोम तीव्र हैं । हमारे अभिषुत और दीप्त मिश्रण द्रव्य (क्षीरादि) तुम्हारी कामना (याचना) करते हैं ।

११ इन्द्र, उन सोमों और मिश्रण द्रव्यको मिलाओ । पुरोडाश और सोमको मिलाओ । जिससे मैं तुम्हें धनवान् सुनूँ ।

हृत्सु पीतासो युध्यन्ते दुर्मदासो न सुरायाम् ।
ऊधर्न नग्ना जरन्ते ॥१२॥
रेवाँ इन्द्रेवतः स्तोता स्यात्त्वावतो मघोनः ।
प्रेदु हरिवः सुतस्य ॥१४॥
उक्थं चन शस्यमानमगोररिरा चिकेत । न गायत्रं गीयमानम् ॥१४
मा न इन्द्र पीयत्नवे माशर्धते परादाः ।
शिक्षा शचीवः शचीभिः ॥१५॥
वयमु त्वा तदिदर्था इन्द्र त्वायन्तः सखायः ।
कण्व उक्थेभिर्जरन्ते ॥१६॥
न घेमन्यदा पपन वज्रिन्नपसो नविष्टौ । तवेदु स्तोमं चिकेत ॥१७
इच्छन्ति देवाः सुन्वन्तं न स्वप्नाय स्पृहयन्ति । यन्ति प्रमादमतन्द्रा

१२ जैसे सुराके पीये जानेपर दुष्ट मत्तता सुरापायीको प्रमत्त करनेके लिये उसके करणमें युद्ध करती है, वैसे ही, हे इन्द्र, पिये हुए सोम हृदयोंमें युद्ध करते हैं। जैसे दूधसे भरे हुए स्तनको लोग रक्षा करते हैं, इन्द्र, तुम सोम-पूर्ण हो; स्तोता लोग उसी तरह तुम्हारी रक्षा करते

१३ हर्यश्व, तुम धनी हो। तुम्हारा स्तोता धनी हो। तुम्हारी तरह धनी और प्रसिद्ध स्तोता प्रभु होता है।

१४ इन्द्र स्तुति-रहितके शत्रु हैं। वह गाया जाता हुआ उक्थ जान सकते हैं। इस योग्य गान गाया जाता है।

१५ इन्द्र, तुम बधिक रिपुके हाथमें मुझे नहीं छोड़ना। अभिषव करनेवालेके हाथमें नहीं शक्तिमान् इन्द्र, तुम अपने कर्मबलसे हमें धन देना।

१६ इन्द्र, हम तुम्हारे सखा हैं। तुम्हारी कामना करते हैं। हमारा प्रयोजन तुम्हारा स्तोत्र ही है। हम तुम्हारी स्तुति करते हैं। कण्वगोत्रीय उक्थ द्वारा तुम्हारी स्तुति करते हैं।

१७ वज्री इन्द्र, तुम कर्मवान् हो। तुम्हारे अभिनव यज्ञमें मैं दूसरा स्तोत्र नहीं उच्चारण केवल तुम्हारे स्तोत्रको ही मैं जानता हूँ।

१८ सोमाभिषव करनेवाले यजमानकी इच्छा देवता लोग सदा करते हैं। सोये हुए मनुष्य इच्छा नहीं करते। देवता लोग आलस्य शून्य होकर मदकर सोम प्राप्त करते हैं।

ओ षु प्र याहि वाजेभिर्मा हृणीथा अभ्य स्मान् । महाँ इव युवजानिः ॥१९॥
मो ष्वद्य दुर्हणावान्त्सायं करदारे अस्मत् । अश्रीरइव जामाता ॥२०॥
विद्मा ह्यस्य वीरस्य भूरिदावरीं सुमतिम् । त्रिषु जातस्य मनांसि ॥२१॥
आ तू षिञ्च कण्वमन्तं न घा विद्म शवसानात् । यशस्तरं शतमूतेः ॥२२॥
ज्येष्ठेन सोतरिन्द्राय सोमं वीराय शक्राय । भरा पिबन्नर्याय ॥२३॥
यो वेदिष्ठो अव्यथिष्वश्वावन्तं जरितृभ्यः वाजं स्तोतृभ्यो गोमन्तम् ॥२४॥
पन्यंपन्यमित् सोतार आधावत मद्याय । सोमं वीराय शूराय ॥२५॥
पाता वृत्रहा सुतमाघा गमन्नारे अस्मत् । नियमते शतमूतिः ॥२५॥
एह हरी ब्रह्मयुजा शग्मा वक्षतः सखायम् । गीर्भिः श्रुतं गिर्वणसम् ॥२७॥

१९ इन्द्र, अन्नके साथ हमारे सामने उत्तम रीतिसे आओ । जैसे युवती भार्या पानेपर गुणी व्यक्ति उसके ऊपर क्रुद्ध नहीं होते, वैसे ही, इन्द्र, तुम हमारे प्रति क्रुद्ध नहीं होना ।

२० दुःसहनीय इन्द्र, आज हमारे पास आओ । बुलाये जानेपर कुत्सित जामाताके समान सन्ध्या-काल नहीं करना ।

२१ हम इन वीर इन्द्रकी बहुत धन देनेवाली कल्याणकारिणी अनुग्रह-बुद्धिको जानते हैं । तीनों लोकोंमें आविर्भूत इन्द्रको हम जानते हैं ।

२२ अध्वर्यु, कण्वगोत्रीय स्तोतालोग इन्द्रके लिये शीघ्र सोमका हवन करें । अति बली और प्रभूत रक्षावाले इन्द्रकी अपेक्षा अधिक यशस्वीको हम नहीं जानते ।

२३ अभिषव करनेवाले अध्वर्यु, वीर, शक्तिशाली और मानव-हितैषी इन्द्रके लिये मुख्य रूपसे सोम प्रदान करो । वह सोमका पान करें ।

२४ जो सुखकर स्तोताओंको अच्छी तरह जानते हैं, वही इन्द्र होत्रादिको और स्तोतागणको बहुत अश्वोंवाला और गौओंवाला अन्न दें ।

२५ अभिषवकारियो, तुमलोग मत्त करने योग्य, वीर और शूर इन्द्रके लिये स्तुति-योग्य सोम दो ।

२६ सोमपानमें परायण और वृत्रहन्ता इन्द्र आवें । हम दूर न जायँ । बहु-रक्षावाले इन्द्र शत्रुओंको तिरस्कृत करें ।

२७ स्तोत्रवाले और सुखावह दोनों अश्व इस यज्ञमें स्तुति द्वारा विश्रुत और आश्रय-योग्य सखा इन्द्रको ले आवें ।

स्वादवः सोमा आयाहि श्रीताः सोमा आयाहि ।
शिप्रिन्नृषीवः शचीवो नायमच्छा सधमादम् ॥२८॥
स्तुतश्च यास्त्वा वर्धन्ति महे राधसे नृम्णाय । इन्द्र कारिणं वृधन्त
गिरश्च यास्ते गिर्वाह उक्था च तुभ्यं तानि । सत्रा दधिरे शवांसि
एवेदेष तुविकूर्मिर्वाजाँ एको वज्रहस्तः । सनादमृक्तो दयते ॥३१॥
हन्ता वृत्रं दक्षिणेनेन्द्रः पुरूपुरुहूतः । महान्महीभिः शचीभिः ॥३२॥
यस्मिन्विश्वाश्चर्षणय उत च्यौत्ना ज्रयांसि च ।
अनु घेन्मन्दी मघोनः ॥३३॥
एष एतानि चकारेन्द्रो विश्वा योऽति शृण्वे वाजदावा मघोनाम् ॥
प्रभर्ता रथं गव्यन्तमपाकाच्चिद्यमवति इनो वसु स हि वोढा ॥

२८ शिरस्त्राण, ऋषि और शक्तिवाले इन्द्र, यह स्वादिष्ट सोम है । तुम आओ
सोम मिश्रण द्रव्य (क्षीरादि) में मिश्रित हुए हैं । आओ । तुम प्रसन्नता-प्रिय हो। स्तोता
स्तुति करता है ।

२९ इन्द्र, वर्द्धन-परायण स्तोता लोग और सारे स्तोत्र, महान् धन और बलकी प्राप्ति
तुम्हें बढ़ाते हैं ।

३० स्तुतियों द्वारा वहनीय इन्द्र तुम्हारे लिये जो स्तोत्र और उक्थ हैं, वे सत्य
तुम्हारे बलको धारण करते हैं ।

३१ इन्द्र, बहुकर्मा, एक और वज्रपाणि हैं । वह सदासे शत्रुओंके लिये अजेय
स्तोताको बल देते हैं ।

३२ इन्द्रने दाहिने हाथसे वृत्रका बध किया है। वह अनेक स्थानोंमें बहुबार बुलाये
वह नाना प्रकारकी क्रियाओं द्वारा महान् हैं ।

३३ सारी प्रजा जिन इन्द्रके अधीन है और जिन इन्द्रमें अच्युत बल और अभिनव
इन्द्र यजमानोंके अनुमोदक हों ।

३४ इन्द्रने ये सारे काम किये हैं । वह सर्वत्र विश्रुत हैं, वह
अन्नदाता हैं ।

३५ प्रहरणशील इन्द्र, जिस गमनशील और गवाभिलाषी स्तोताको अपक्व बुद्धि
बचाते हैं, वह स्तोता स्वामी होकर धनका वाहक होता है ।

सनिता विप्रो अर्वद्भिर्हन्ता वृत्रं नृभिः शूरः। सत्योविता विधन्तम् ॥३६॥
यजध्वैनं प्रियमेधा इन्द्रं सत्राचा मनसा। यो भूत् सोमैः सत्यमद्वा ॥३७॥
गाथश्रवसं सत्पतिं श्रवस्कामं पुरुत्मानम्।
कण्वासो गात वाजिनम् ॥३८
य ऋते चिद्गास्पदेभ्यो दात् सखा नृभ्यः शचीवान्।
ये अस्मिन् काममश्रियन् ॥३६॥
इत्था धीवन्तमद्रिवः काण्वं मेध्यातिथिम्।
मेषो भूतोभि यन्नयः ॥४०॥
शिक्षा विभिन्दो अस्मै चत्वार्ययुता ददत्।
अष्टा परः सहस्रा ॥४१॥
उत सु त्ये पयोवृधा माकी रणस्य नप्त्या।
जनित्वनाय मामहे ॥४२॥

---

३६ अश्वकी सहायतासे धनी इन्द्र जाने योग्य स्थानपर जाते हैं। वह शूर हैं। वह नेता मरुतोंकी सहायतासे वृत्रासुरका बध करते हैं। वह अपने सेवक यजमानके रक्षक और सत्य-स्वरूप हैं।

३७ प्रियमेध ऋषि, इन्द्रके लिये, उनमें मन लगाकर, यज्ञ करो। सोम पानेपर इन्द्र प्रसन्न होते हैं। उनका हर्ष निष्फल नहीं होता।

३८ कण्व-पुत्रो, तुम साधुके रक्षक, अन्नाभिलाषी, नाना-देशगामी, वेगवान् और गेय-यशा इन्द्रकी स्तुति करो।

३६ पद-चिन्ह न रहनेपर भी सखा और सुकर्मा इन्द्रने नेता देवोंको फिर गायें दी थीं। देवोंने अभिलषित पदार्थको इन्द्रसे पाया था।

४० वज्री इन्द्र, मेष-रूपसे सामने जाते हुए तुमने इस प्रकार स्तुति करनेवाले कण्वपुत्र मेध्यातिथिको प्राप्त किया था।

४१ विभिन्दु (नामक राजा), तुम दाता हो। तुमने मुझे चालीस हजार धन दिया है। अनन्तर आठ हजार दान दिया है।

४२ प्रख्यात, जल-वर्द्धक और प्राणि-रचयिता स्तोताके प्रति अनुग्रह-शील द्यावापृथिवीकी, धनोत्पत्तिके लिये, मैंने स्तुति की है।

—:०:—

३ सूक्त

२१—२४ तकके मन्त्रोंमें कुरुयानके पुत्र पाकस्थान राजाकी स्तुति की गयी है; इसलिये वही देवता हैं। शेषके इन्द्र हैं। कण्वगोत्रीय मेध्यातिथि ऋषि। बृहती, सतोबृहती, अनुष्टुप् गायत्री छन्द।

पिबा सुतस्य रसिनो मत्स्वा न इन्द्र गोमतः।
आपिर्नो बोधि सधमाद्यो वृधेऽस्माँ अवन्तु ते धियः ॥१॥
भूयाम ते सुमतौ वाजिनो वयं मा नः स्तरभिमातये।
अस्मान् चित्राभिरवतादभिष्टिभिरा नः सुम्नेषु यामय ॥२॥
इमा उ त्वा पुरूवसो गिरो वर्द्धन्तु या मम।
पावकवर्णाः शुचयो विपश्चितोऽभि स्तोमैरनूषत ॥३॥
अयं सहस्रमृषिभिः सहस्कृतः समुद्रइव पप्रथे।
सत्यः सो अस्य महिमा गृणे शवो यज्ञेषु विप्रराज्ये ॥४॥
इन्द्रमिद्देवतातय इन्द्रं प्रयत्यध्वरे।
इन्द्रं समीके वनिनो हवामह इन्द्रं धनस्य सातये ॥५॥

---

१ इन्द्र, हमारे रसवान् और दुग्ध-युक्त अभिषुत सोमको पीकर तृप्त होओ। तुम हमारे मत्त होने योग्य हो। बन्धु होकर हमें वर्द्धित करनेके लिये तुम प्रवृद्ध होओ। तुम्हारी बुद्धि रक्षा करे।

२ तुम्हारी कृपा-बुद्धिमें हम हविवाले हों। शत्रुके लिये हमें नहीं मारना। अनेक हमें बचाओ। हमें सदा सुखी करो।

३ बहु-धनवान् इन्द्र, मेरी ये स्तुति-रूप बातें तुम्हें वर्द्धित करें। अग्निदेवके सामने तेजस्वी विशुद्ध विद्वान् तुम्हारी स्तुति करते हैं।

४ इन्द्र सहस्र ऋषियोंसे बल प्राप्त करके विस्तीर्ण हुए हैं। इनकी यथार्थ प्रख्याति और बल, यज्ञमें, विप्रोंके राज्यमें, स्तुत होते हैं।

५ यज्ञके प्रारम्भमें हम इन्द्रको बुलाते हैं और यज्ञकी समाप्तिमें भी इन्द्रको बुलाते मत्त होकर, धन-प्राप्तिके लिये, इन्द्रको बुलाते हैं।

इन्द्रो मह्ना रोदसी पप्रथच्छव इन्द्रः सूर्यमरोचयत् ।
इन्द्रे ह विश्वा भुवनानि येमिर इन्द्रे सुवानास इन्दवः ॥६॥
अभि त्वा पूर्वपितय इन्द्र स्तोमेभिरायवः ।
समीचीनास ऋभवः समस्वरन्रुद्रा गृणन्त पूर्व्यम् ॥७॥
अस्येदिन्द्रो वावृधे वृष्ण्यं शवो मदे सुतस्य विष्णवि ।
अद्यातमस्य महिमानमायवोऽनुष्टुवन्ति पूर्वथा ॥८॥
तत्त्वा यामि सुवीर्यं तद्ब्रह्म पूर्वचित्तये ।
येना यतिभ्यो भृगवे धने हिते येन प्रस्कण्वमाविथ ॥९॥
येना समुद्रमसृजो महीरपस्तदिन्द्र वृष्णि ते शवः ।
सद्यः सो अस्य महिमा न संनशे यं क्षोणीरनुचक्रदे ॥ १०॥
शग्धी न इन्द्र यत्त्वा रयिं यामि सुवीर्यम् ।
शग्धि वाजाय प्रथमं सिषासते शग्धि स्तोमाय पूर्व्य ॥११॥

६ अपने बलकी महिमासे इन्द्रने द्यावापृथिवीको विस्तारित किया है। इन्द्रने सूर्यको दीप्त किया है। सारे भुवन इन्द्र द्वारा नियमित हैं। सोम भी इन्हीं इन्द्रमें नियमित हैं।

७ इन्द्र, स्तोता लोग, सभी देवोंसे पहले सोम पानके लिये, स्तोत्र द्वारा तुम्हारी स्तुति करते हैं। समीचीन ऋभुगण भली भाँति तुम्हारी ही स्तुति करते हैं। इन्द्र तुम प्राचीन हो। रुद्रोंने तुम्हारी ही स्तुति की है।

८ अभिषुत सोमके पीनेसे सारे शरीरमें मत्तता चढ़नेपर इन्द्र इस यजमानका ही वीर्य और बल बढ़ाते हैं। प्राचीन समयके समान ही आज मनुष्यगण इन्द्रके उन्हीं गुणोंकी स्तुति करते हैं।

९ इन्द्र, तुम शोभन वीर्यवाले हो। प्रथम लाभके लिये तुमसे मैं उत्तम अन्नकी माँग करता हू। जिसके द्वारा कर्म-रहित लोगोंसे हितकर धन लेकर तुमने भृगुको दिया है और जिसके द्वारा प्रस्कण्वकी तुमने रक्षा की हैं, उसी वीर्य और अन्नको मैं माँगता हूँ।

१० इन्द्र, जिस बलके द्वारा तुमने समुद्रको यथेष्ठ जल दिया है, तुम्हारा वही बल मनोरथ-पूरक है। तुम्हारी महिमा व्यापनीय नहीं है। इस महिमाका अनुधावन पृथिवी करती है।

११ इन्द्र, जिस शोभन वीर्यवाले धनको मैं तुमसे माँग रहा हूँ, वह धन दो। भजनाभिलाषी और हविवाले यजमानको सर्व-प्रथम धन दो। प्राचीन इन्द्र, इसके अनन्तर स्तोताको देना।

शग्धी नो अस्य यद्ध पौरमाविथ धिय इन्द्र सिषासतः ।
शग्धि यथा रुशमं श्यावकं कृपमिन्द्र प्रावः स्वर्णरम् ॥१२॥
कन्नव्यो अतसीनां तुरो गृणीत मर्त्यः ।
नहीन्वस्य महिमानमिन्द्रियं स्वर्गृणन्त आनशुः ॥१३॥
कदु स्तुवन्त ऋतयन्त देवत ऋषिः को विप्र ओहते ।
कदा हवं मघवन्निन्द्र सुन्वतः कदु स्तुवत आगमः ॥१४॥
उदु त्ये मधुमत्तमा गिरः स्तोमास ईरते ।
सत्राजितो धनसा अक्षितोतयो वाजयन्तो रथाइव ॥१५॥
कण्वाइव भृगवः सूर्याइव विश्वमिद्धीतमानशुः ।
इन्द्रं स्तोमेभिर्महयन्त आयवः प्रियमेधासो अस्वरन् ॥१६॥
युक्ष्वा हि वृत्रहन्तम हरी इन्द्र परावतः ।
अर्वाचीनो मघवन्त्सोमपातय उग्र ऋष्वेभिरागहि ॥१७॥

---

१२ इन्द्र, स्तोत्र-भजन-कारी जिस धनसे तुमने राजा पुरुके पुत्रकी रक्षा की थी, यजमानको दो। जैसे रुशम, श्यावक और कृप नामक राजर्षियोंकी तुमने रक्षा की है, हविवाले यजमानोंकी रक्षा करो।

१३ सन्तत गमन करनेवाली स्तुतियोंका प्रेरक कौन अभिनव मनुष्य इन्द्रकी स्तुति शक्ति रखता है? सुखलभ्य इन्द्रकी स्तुति करनेवाले लोग इन्द्रकी इन्द्रिय और महिमा प्राप्त कर सकते ।

१४ इन्द्र, तुम देवता हो। कौन स्तोता तुम्हारे लिये यज्ञ-सम्पादनाभिलाषकी शक्ति है? कौन मेधावी ऋषि तुम्हारी स्तुतिको वहन कर सकता है? इन्द्र, स्तोताके बुलानेपर आते हो? स्तोताके पास कब आते हो?

१५ प्रसिद्ध और अतीव मधुर वाक्य तथा स्तोत्र, शत्रु-विजयी, धन-भाक्, अक्षय और अन्नाभिलाषी रथकी तरह, कहे जाते हैं ।

१६ कण्वोंकी तरह भृगुओंने सूर्य-किरणोंके समान ध्यात और व्याप्त इन्द्रको ... था। प्रियमेध नामके मनुष्योंने इन्द्रकी पूजा करते हुए स्तोत्र द्वारा इन्द्रकी ही पूजा की।

१७ वृत्रका भली भाँति वध करनेवाले इन्द्र, अपने हरि-द्वयको रथमें जोतो। धनी उग्र हो। दर्शनीय मरुतोंके साथ सोम-पानके लिये दूर देशसे हमारे अभिमुख आओ।

इमे हि ते कारवो वावशुर्धिया विप्रासो मेधसातये ।
स त्वं नो मघन्निन्द्र गिर्वणो वेनो न शृणुधी हवम् ॥१८॥
निरिन्द्रबृहतीभ्यो वृत्रं धनुभ्यो अस्फुरः ।
निरर्बुदस्य मृगयस्य मायिनो निः पर्वतस्य गा आजः ॥१६॥
निरग्नयो रुरुचुर्निरु सूर्यो निः सोम इन्द्रियो रसः ।
निरन्तरीक्षादधमो महामहिं कृषे तदिन्द्र पौंस्यम् ॥२०॥
यं मे दुरिन्द्रो मरुतः पाकस्थामा कौरयाणः ।
विश्वेषां त्मना शोभिष्ठमुपेव दिवि धावमानम् ॥२१॥
रोहितं मे पाकस्थामा सुधुरं कक्ष्यप्राम् ।
अदाद्रायो विबोधनम् ॥२२॥
यस्मा अन्ये दश प्रति धुरं वहन्ति वह्नयः ।
अस्तं वयो न तुग्र्यम् ॥२३॥

---

१८ इन्द्र, कर्म-कर्त्ता और मेधावी ये यजमान यज्ञसेवनके लिये तुम्हारी ही स्तुति करते हैं। धनी और स्तुति पात्र इन्द्र, कामी पुरुषके समान हमारा आह्वान सुनो।

१६ इन्द्र, महाधनुष्के द्वारा तुमने वृत्रका बध किया है। मायावी अर्बुद और मृगयका तुमने विनाश किया है। पर्वतसे गौओंको निकाला है।

२० इन्द्र, जब तुमने अन्तरीक्षसे महान् और हनन-शील वृत्रको हटा दिया था, तब बलका प्रकाश किया था। उस समय सारे अग्नि, सूर्य और इन्द्रके सेवनीय सोमरस भी प्रदीप्त हुए थे।

२१ इन्द्र और मरुतोंने मुझे जो दिया था, कुरुयानके पुत्र पाकस्थामाने भी मुझे वही दिया था। वह धन सारे धनोंके बीच स्वर्गमें जाते हुए और प्रभा-युक्त सूर्यके समान शोभा पाता है।

२२ पाकस्थामाने मुझे लोहित-वर्ण, सुन्दर-वहन-प्रदेश, बन्धन-रज्जु-पूरक और नाना प्रकारके धनोंका प्रापक अश्व दिया था।

२३ उस अश्वके दस प्रतिनिधि अश्व मुझे ढोते हैं। इसी प्रकार अश्वोंने तुग्र-पुत्र भुज्युको ढोया था।

आत्मा पितुस्तनुर्वास ओजोदा अभ्यञ्जनम् ।
तुरीयमिद्रोहितस्य पाकस्थामानं भोजं दातारमब्रवम् ॥२४॥



४ सूक्त

१६—२१ के कुरङ्गदान, १५—१८ के पूषा अथवा इन्द्र और शेषके इन्द्र देवता हैं। देवातिथि ऋषि। उष्णिक्, बृहती और सतोबृहती छन्द ।

यदिन्द्र प्रागपागुदक् न्यग्वा हूयसे नृभिः ।
सिमा पुरू नृषूतो अस्यानवेसि प्रशर्ध तुर्वशे ॥१॥
यद्वा रुमे रुशमे श्यावके कृप इन्द्र मादयसे सचा ।
कण्वासस्त्वा ब्रह्मभिः स्तोमवाहस इन्द्रा यच्छन्त्यागहि ॥२॥
यथा गौरो अपा कृतं तृष्यन्नेत्यवेरिणम् ।
आपित्वे नः प्रपित्वे तूयमागहि कण्वेषु सु सचा पिब ॥३॥

---

२४ पाकस्थामा अपने पिताके उपयुक्त पुत्र हैं । वह निवासदाता तथा स्पष्ट ... देनेवाले हैं। वह शत्रुओंके हिंसक और रिपुओंके भोजयिता हैं। लोहित-वर्ण अश्व देनेवाले ... स्थामाकी मैं स्तुति करता हूँ ।

---

१ इन्द्र, यद्यपि तुम पूर्व, पश्चिम, उत्तर और दक्षिण देशोंके रहनेवाले स्तोता... बुलाये जाते हो; तथापि आनुक राजाके पुत्रके लिये स्तोताओं द्वारा तुम प्रेरित हो... तुर्वशके लिये भी स्तोताओं द्वारा प्रेरित हो जाते हो ।

२ इन्द्र, यद्यपि तुम रुम, रुमश, श्यावक और कृप नामक राजाओंके साथ प्र... करते हो; तथापि स्तोत्र-वाहक कण्वलोग तुम्हें स्तोत्र प्रदान करते हैं; आओ ।

३ जैसे गौर मृग तृणार्त्त होकर जल-पूर्ण और तृण-शून्य स्थानको जान जाता है, हे इन्द्र, सखित्व प्राप्त हो जानेपर तुम हमारे सम्मुख शीघ्र आओ । हम कण्व-पुत्र हैं। ... एकत्र सोम पान करो ।

मन्दन्तु त्वा मघवन्निन्द्रेन्दवो राधोदेयाय सुन्वते ।
आमुष्या सोममपिबश्चमू सुतं ज्येष्ठं तद्दधिषे सहः ॥४॥
प्र चक्रे सहसा सहो बभञ्ज मन्युमोजसा ।
विश्वे त इन्द्र पृतनायवो यहो नि वृक्षाइव येमिरे ॥५॥
सहस्रेणेव सचते यवीयुधा यस्त आनलुपस्तुतिम् ।
पुत्रं प्रावर्गं कृणुते सुवीर्ये दाश्नोति नमउक्तिभिः ॥६॥
मा भेम माश्रमिष्मोग्रस्य सख्ये तव ।
महत्ते वृष्णो अभिचक्ष्यं कृतं पश्येम तुर्वशं यदुम् ॥७॥
सव्यामनु स्फिग्यं वावसे वृषा न दानो अस्य रोषति ।
मध्वा सम्पृक्ताः सारघेण धेनवस्तूयमेहि द्रवा पिब ॥८॥
अश्वी रथी सुरूप इद्गोमाँ इदिन्द्र ते सखा ।
श्वात्रभाजा वयसा सचते सदा चन्द्रो याति सभामुप ॥९॥

---

४ धनवान् इन्द्र, सोम अभिषव-कर्त्ताको धन देनेके लिये तुम्हें प्रमत्त करें। तुमने सोमपान किया हैं। यह सोम अभिषवण-फलक (चमस) द्वारा अभिषुत किया गया है; इसलिये यह अतीव प्रशस्य है। इसीके लिये तुमने महान् बलको धारण कर रखा है।

५ अपने वीर-कर्मके द्वारा इन्द्रने शत्रुओंको दबाया हैं। उन्होंने बलके द्वारा परकीय क्रोधको नष्ट किया है। महान् इन्द्र, सारे युद्धेच्छु शत्रुओंको तुमने वृक्षकी तरह निश्चल किया है।

६ इन्द्र, जो तुम्हारा स्तोत्र करता है, वह सहस्र-सङ्ख्यक वज्रायुध (वीर) प्राप्त करता है और जो नमस्कार द्वारा हव्य प्रदान करता है, वह शोभन वीर्यवाला और शत्रुघातक पुत्र प्राप्त करता है।

७ इन्द्र, तुम उग्र हो। तुम्हारी मित्रता प्राप्त करके हम नहीं डरेंगे, थकेंगे भी नहीं। तुम अभीष्ट-वर्षक हो। तुम्हारे सारे महान् कर्मोंको प्रकाशित करना ठीक है। हमने तुर्वश और यदुको देखा है।

८ काम-वर्षक इन्द्रने अपनी बायीँ कमरसे सारे प्राणियोंको आच्छादित किया है। हविर्दाता इन्द्रका क्रोध नहीं उत्पन्न करता। मधुमक्षिकासे उत्पन्न मधुद्वारा संस्पृष्ट और प्रसन्नता-दाता सोमके सम्मुख शीघ्र आओ। उस सोमके पास जाओ और उसे पियो।

९ इन्द्र, तुम्हारा सखा ही अश्ववाला, रथवाला, गौवाला और रूपवाला है। वह सदा शीघ्र धन प्राप्त करता है और सबके लिये आह्लाद-जनक होकर सभामें जाता है।

ऋश्यो न तृष्यन्नवपानमा गहि पिबा सोमं वशाँ अनु ।
निमेघमानो मघवन्दिवेदिव ओजिष्ठं दधिषे सहः ॥१०॥
अध्वर्यो द्रावया त्वं सोममिन्द्रः पिपासति ।
उप नूनं युयुजे वृषणा हरी आ च जगाम वृत्रहा ॥११॥
स्वयं चित्स मन्यते दाशुरिर्जनोयत्रा सोमस्य तृम्पसि ।
इदं ते अन्नं युज्यं समुक्षितं तस्येहि प्रद्रवा पिब ॥१२॥
रथेष्ठायाध्वर्जवः सोममिन्द्राय सोतन ।
अधि ब्रध्नस्याद्रयो विचक्षते सुन्वन्तो दाश्वध्वरम् ॥१३॥
उप ब्रध्नं वावाता वृषणा हरी इन्द्रमपसु वक्षतः ।
अर्वाञ्चं त्वा सप्तयोऽध्वरश्रियो वहन्तु सवनेदुप ॥१४॥
प्र पूषणं वृणीमहे युज्याय पुरूवसुम् ।
स शक्र शिक्ष पुरुहूत नो धिया तुजे राये विमोचन ॥१५॥

---

१० ऋश्य नामक मृगकी तरह तुम पात्रमें लाये गये सोमके सम्मुख आओ और इ पान करो। धनवान् इन्द्र, तुम प्रतिदिन निम्नमुख वृष्टिको गिराते हुए अतीव तेजस्वी धारण करो ।

११ अध्वर्यु, इन्द्र सोम पीनेकी इच्छा करते हैं। तुम सोमका अभिषव करो। दोनों अ आज जोते गये हैं। वृत्रघ्न आये हैं।

१२ इन्द्र, जिसके सोमसे तुम सन्तुष्ट होते हो, वह हव्यदाता स्वयं ही उस बा सकता है। तुम्हारे योग्य सोम पात्रमें सींचा गया है। आओ, उसके पास जाओ और उसे पि

१३ अध्वर्युओ, इन्द्र रथपर हैं। उनके लिये सोम प्रस्तुत करो। अभिषवके लिये चर्मप मूल पत्थरके ऊपर पत्थर यजमानके लिये यज्ञ-निष्पादक सोमका अभिषव करते हुए बा शोभा पा रहे हैं ।

१४ हमारे कर्ममें अन्तरीक्षमें विचरण करनेवाले और सींचनेमें समर्थ हरि नामके इन्द्रको ले आवें। इन्द, यज्ञ-सेवी और गतिशील दोनों अश्व तुम्हें सवनोंके समीप ले जायँ।

१५ मैत्रीकी प्राप्तिके लिये हम बहु धनवाले पूषाका वरण करते हैं। शक्र, अनेकों द्वारा आ पाप-विमोचक पूषन्; अपनी बुद्धिके द्वारा धनकी प्राप्ति और शत्रु-विनाशके लिये हमें सम इच्छा करो ।

सन्नः शिशीहि भुरिजोरिव क्षुरं रास्व रायो विमोचन ।
त्वे तन्नः सुवेदमुस्रियं वसु यं त्वं हिनोषि मर्त्यम् ॥१६॥
वेमि त्वा पूषन्नृञ्जसे वेमि स्तोतव आघृणे ।
न तस्य वेम्यरणं हि तद्वसो स्तुषे पज्राय साम्ने ॥१७॥
परा गावो यवसं कच्चिदाघृणे नित्यं रेक्णो अमर्त्य ।
अस्माकं पूषन्नविता शिवो भव मंहिष्ठो वाजसातये ॥१८॥
स्थूरं राधः शताश्वं कुरुङ्गस्य दिविष्टिषु ।
राज्ञस्त्वेषस्य सुभगस्य रातिषु तुर्वशेष्वमन्महि ॥१९॥
धीभिः सातानि काण्वस्य वाजिनः प्रियमेधैरभिद्युभिः ।
षष्टिं सहस्रानु निर्मजामजे निर्यूथानि गवामृषिः ॥२०॥
वृक्षाश्चिन्मे अभिपित्वे अरारणुः । गां भजन्त मेहनाश्वं भजन्त मेहना ॥२१॥

---

१६ (नाईकी) बाँहमें रहनेवाले छुरेकी तरह हमें तीक्ष्ण-बुद्धि करो। हे पाप-विमोचक, हमें धन दो। तुम्हारा गोधन हमारे लिये सुलभ हो। तुम मनुष्यके लिये यह धन भेजा करते हो।

१७ पूषन्, मैं तुम्हें प्रसाधित करनेकी इच्छा करता हूँ। दीप्तिमान् पूषन्, तुम्हारी स्तुति करनेकी इच्छा करता हूँ। अन्य देवोंकी स्तुति करनेकी मैं इच्छा नहीं करता; क्योंकि वे असुखकर हैं। निवास-प्रद, स्तोता और साम-मन्त्र-युक्त पज्र (कक्षीवान्) को अभिलषित धन दो।

१८ दीप्तिवाले और अमर पूषन्, किसी समय हमारी गायें चरनेके लिये लौटती हैं। हमारा गो-रूप धन नित्य हो। तुम हमारे रक्षक और मङ्गलकर होओ। अन्न-दानके लिये महान् होओ।

१९ कुरुङ्ग नामके दीप्त और सौभाग्यवान् राजाकी स्वर्ग-प्राप्तिके लिये यज्ञ और दानमें मनुष्योंके बीच हमने प्रचुर और सौ अश्वोंसे युक्त धनको प्राप्त किया था।

२० कण्व-पुत्र और हविवाले मेधातिथि तथा उनके स्तोताओं द्वारा भजनके योग्य तथा दीप्ति पाये हुए प्रियमेध नामके ऋषियों द्वारा सेवित एवम् अतीव पवित्र साठ हज़ार गौओंको मैं (देवातिथि) सबके अन्तमें प्राप्त किया।

२१ मेरे धन पानेपर वृक्षोंने भी हर्ष ध्वनि की थी कि, इन्होंने प्रशंसनीय गोधन और अश्वधन प्राप्त किया है।

सप्तम अध्याय समाप्त

अष्टम अध्याय

५ सूक्त

अश्वि-द्वय देवता। अन्तकी पाँच आधी ऋचाओंमें कशु नामक राजाके दानकी कथा है, वही देवता हैं। कण्वगोत्रीय ब्रह्मातिथि ऋषि। गायत्री, बृहती और अनुष्टुप् छन्द।

दूरादिहेव यत् सत्यरुणप्सुरशिश्वितत्। वि भानुं विश्वधातनत् ॥१॥
नृवद्दस्रा मनोयुजा रथेन पृथुपाजसा। सचेथे अश्विनोषसम् ॥२॥
युवाभ्यां वाजिनीवसू प्रति स्तोमा अदृक्षत। वाचं दूतो यथोहिषे ॥३॥
पुरुप्रिया ण ऊतये पुरुमन्द्रा पुरूवसू। स्तुषे कण्वासो अश्विना ॥४॥
मंहिष्ठा वाजसातमेषयन्ता शुभस्पती। गन्तारा दाशुषो गृहम् ॥५॥

---

१ दूरसे ही निकटमें विद्यमान दिखाई देनेवाली और दीप्त रूपवाली उषा जिस समय ... थोंको श्वेत-वर्ण कर देती हैं, उस समय दीप्तिको अनेक प्रकारसे विस्तारित करती हैं। ... द्वय, मन्त्रोंको सुननेके लिये तुम भी प्रादुर्भूत होओ।)

२ दर्शनीय अश्विद्वय, तुमलोग नेताओंके समान हो। इच्छा मात्रसे ही अश्वोंमें ... और प्रचुर अन्नसे युक्त रथसे तुमलोग उषाके साथ मिलो।

३ अन्न-युक्त और धन-सम्पन्न अश्विद्वय, अपने लिये बनाये गये स्तोत्रोंको ... दूत स्वामीके वचनके लिये प्रार्थना करता है, वैसे ही हम तुम्हारे वाक्यके लिये ... करते हैं।

४ तुम बहुतोंके प्रिय, अनेकोंके आनन्द-दाता और बहु धनवाले हो। हम कण्ववंशी ... हम अपनी रक्षाके लिये अश्वि द्वयकी प्रार्थना करते हैं।

५ तुमलोग पूज्य हो। सबसे अधिक अन्न देनेवाले हो। शोभन धनके स्वामी हो। ... मङ्गल-प्रद और हव्यदाताके गृहमें जाया करते हो।

ता सुदेवाय दाशुषे सुमेधामवितारिणीम् । घृतैर्गव्यूतिमुक्षतम् ॥६॥
आ नः स्तोममुप द्रवत्तूयं श्येनेभिराशुभिः । यातमश्वेभिरश्विना ॥७॥
येभिस्तिस्रः परावतो दिवो विश्वानि रोचना । त्रीँरक्तून् परिदीयथः ॥८॥
उत नो गोमतीरिष उत सातीरहर्विदा । वि पथः सातये सितम् ॥९॥
आ नो गोमन्तमश्विना सुवीरं सुरथं रयिम् । वोळ्हमश्वावतीरिषः ॥१०॥
वावृधाना शुभस्पती दस्रा हिरण्यवर्तनी । पिबतम् सोम्यं मधु ॥११॥
अस्मभ्यं वाजिनीवसू मघवद्भ्यश्च सप्रथः । छर्दिर्यन्तमदाभ्यम् ॥१२॥
नि षु ब्रह्म जनानां याविष्टं तूयमा गतम् । मो ष्वन्याँ उपारतम् ॥१३॥
अस्य पिबतमश्विना युवं मदस्य चारुणः । मध्वो रातस्य धिष्ण्या ॥१४॥
अस्मे आवहतं रयिं शतवन्तं सहस्रिणम् । पुरुक्षुं विश्वधायसम् ॥१५॥

६ जो हव्यदाता सुन्दर देवतावाला है, उसके लिये तुमलोग उत्तम यज्ञसे युक्त और अविनाशी गोचर-भूमिको जलके द्वारा सिक्त करो ।

७ अश्विद्वय, अश्वोंपर चढ़कर अत्यन्त शीघ्र हमारे स्तोत्रकी ओर आओ । इन अश्वोंकी गति प्रशंसनीय है ।

८ अश्विद्वय, तीन दिन और तीन रात सारे दीप्ति-युक्त स्थानोंपर अश्व-साहाय्यसे दूरसे गमन करो ।

९ तुमलोग प्रभात-समयमें स्तुतिके योग्य हो । हमारे लिये गौसे युक्त अन्न और सम्भोगके योग्य धन दो । इन सबके भोगके लिये मार्ग दो ।

१० अश्वि-द्वय, हमारे लिये गौ, पुत्र, सुन्दर रथ और अश्वसे युक्त धन ले आओ ।

११ शोभन पदार्थोंके स्वामी, दर्शनीय, हिरण्मय और मार्गसे युक्त अश्वि-द्वय, प्रवृद्ध होकर सोममय मधुका पान करो ।

१२ अन्न और धनसे युक्त अश्वि-द्वय, हम धनी हैं । हमें चारो ओर विस्तृत और अहिंसनीय गृह प्रदान करो ।

१३ तुमलोग मनुष्यके स्तोत्रकी रक्षा करो । शीघ्र आओ । दूसरेके पास नहीं जाना ।

१४ स्तुति-योग्य अश्वि-द्वय, तुम हमारा दिया हुआ मदकर, मनोहर और मधुर सोम-भागका पान करो ।

१५ हमारे लिये सौ और हजार प्रकारके एवम् अनेक निवासोंसे युक्त तथा सबका धारण करनेमें समर्थ धन ले आओ ।

पुरुत्रा चिद्धि वां नरा विह्वयन्ते मनीषिणः । वाघद्भिरश्विना गतम् ॥
जनासो वृक्तबर्हिषो हविष्मन्तो अरङ्कृतः । युवां हवन्ते अश्विना ॥
अस्माकमद्य वामयं स्तोमो वाहिष्ठो अन्तमः ।
युवाभ्यां भूत्वश्विना ॥१८॥
यो ह वां मधुनो दृतिराहितो रथचर्षणे । ततः पिबतमश्विना ॥१९॥
तेन नो वाजिनीवसू पश्वे तोकाय शं गवे । वहतं पीवरीरिषः ॥२०॥
उत नो दिव्या इष उत सिन्धूँ रहर्विदा । अप द्वारेव वर्षथः ॥२१॥
कदा वां तौग्र्यो विधत्समुद्रे जहितो नरा ।
यद्वां रथो विभिस्पतात् ॥२२॥
युवं कण्वाय नासत्यापिरिप्ताय हर्म्ये । शश्वदूतीर्दशस्यथः ॥२३॥
ताभिरा यातमूतिभिर्नव्यसीभिः सुशस्तिभिः । यद्वां वृषण्वसू हुवे ॥

१६ नेतृ-द्वय, मनीषीलोग अनेक देशोंमें तुम्हें बुलाते हैं । अश्वि-द्वय वाहक अश्वों... तासे आओ ।

१७ हव्य-सम्पन्न और पर्याप्त कार्य करनेवाले मनुष्य कुश तोड़ते हुए तुम्हें बु...

१८ अश्वि-द्वय, हमारा यह स्तोत्र (मन्त्र) सर्वापेक्षा अधिक तुमलोगोंका वाह... तुम्हारा समीप-वर्त्ती हो ।

१९ अश्वि-द्वय, जो मधु-पूर्ण चर्म-पात्र मध्यस्थानमें रखा हुआ है, उससे मधु...

२० अन्नसे युक्त और धनवान् अश्विद्वय, हमारे पशु, पुत्र और गौओंके लिये... प्रवृद्ध अन्न अनायास ले आओ ।

२१ प्रभात-कालमें जानने योग्य अश्वि-द्वय, स्वर्गीय और वाञ्छनीय जल, हमारे... द्वारसे ही सिञ्चित करो ।

२२ नेता अश्वि-द्वय, समुद्रमें फेंके जानेपर तुग्र-पुत्र भुज्युने स्तुति द्वारा कब तु... सेवा की थी कि, तुम्हारा रथ अश्वोंके साथ गया था ।

२३ नासत्य-द्वय, प्रासाद (हर्म्य) के नीचे असुरों द्वारा बाँधे गये कण्वको तुमलोगों... प्रकारकी रक्षा प्रदान की थी ।

२४ वर्षण-परायण और धनसे युक्त अश्वि-द्वय, जिस समय तुमलोगोंको बुलाता... समय उसी अभिनव और प्रशस्य रक्षणके साथ आओ ।

यथा चित् कण्वमावतं प्रियमेधमुपस्तुतम् । अत्रिं शिञ्जारमश्विना ॥२५॥

यथोत कृत्व्ये धनेंशुं गोष्वगस्त्यम् । यथा वाजेषु सोभरिम् ॥२६॥

एतावद्वां वृषण्वसू अतो वा भूयो अश्विना ।
गृणन्तः सुम्नमीमहे ॥२७॥

रथं हिरण्यवन्धुरं हिरण्याभीशुमश्विना ।
आ हि स्थाथो दिविस्पृशम् ॥२८॥

हिरण्ययी वां रभिरीषा अक्षो हिरण्ययः । उभा चक्रा हिरण्यया ॥२९॥

तेन नो वाजिनीवसू परावतश्चिदा गतम् । उपेमां सुष्टुतिं मम ॥३०॥

आ वहेथे पराकात् पूर्वीरश्नन्तावश्विना । इषो दासीरमर्त्या ॥३१॥

आ नो द्युम्नैराश्रवोभिरा राया यातमश्विना । पुरुश्चन्द्रा नासत्या ॥३२॥

---

२५ अश्वि-द्वय, तुमलोगोंने जैसे कण्व, प्रियमेध, उपस्तुत और स्तोता अत्रिकी रक्षा की थी, वैसे ही हमारी रक्षा करो।

२६ धनके लिये अंशु, गौओंके लिये अगस्त्य और अन्नके लिये सौभारकी जैसे तुमने रक्षा की थी, वैसे ही हमारी रक्षा करो।

२७ वर्षणशील और धन-सम्पन्न अश्वि-द्वय, स्तुति करते हुए हम "इतना" अथवा इससे भी अधिक धनकी याचना करते हैं।

२८ अश्विद्वय, सुवर्ण-निर्मित सारथि-स्थानवाले और सुवर्णमय प्रग्रह (लगाम) वाले रथपर अवस्थान करो।

२९ अश्वि-द्वय, तुम्हारे प्रापणीय रथकी ईषा (लाङ्गल-दण्ड) सोनेकी है, अक्ष (चक्र-मण्डल) सोनेके हैं और दोनों चक्र सोनेके हैं।

३० अन्न और धनवाले अश्वि-द्वय, इस रथपर दूर देशसे भी आओ। हमारी इस शोभन स्तुतिके पास गमन करो।

३१ अमर अश्वि-द्वय, दासोंकी अनेक नगरियोंको भग्न करते हुए तुमलोग दूर देशसे अन्न ले आओ।

३२ अनेकोंके मित्र और सत्य-स्वभाव अश्वि-द्वय, हमारे पास अन्नके साथ आगमन करो। यशके साथ आगमन करो और धनके साथ आगमन करो।

एह वां प्रुषितप्सवो वयो वहन्तु पर्णिनः । अच्छा स्वध्वरं जनम् ॥३३॥
रथं वामनुगायसं य इषा वर्तते सह । न चक्रमभि बाधते ॥३४॥
हिरण्ययेन रथेन द्रवत्पाणिभिरश्वैः । धीजवना नासत्या ॥३५॥
युवं मृगं जागृवांसं स्वदथो वा वृषणवसू ।
ता नः पृंक्तमिषा रयिम् ॥३६॥
ता मे अश्विना सनीनां विद्यातं नवानाम् ।
यथा चिच्चैद्यः कशुः शतमुष्ट्रानां ददत्सहस्रा दश गोनाम् ॥३७॥
यो मे हिरण्यसन्दृशो दश राज्ञो अमंहत ।
अधस्पदा इच्चैद्यस्य कृष्टयश्चर्मम्ना अभितो जनाः ॥३८॥
माकिरेना पथा गाद्येनेमे यन्ति चेदयः ।
अन्यो नेत् सूरिरोहते भूरिदावत्तरो जनः ॥३९॥



३३ अश्वि-द्वय, स्निग्ध रूपवाले और पक्षियोंकी तरह शीघ्रगामी अश्व तुम्हें सुन्दर मनुष्यके पास ले जायँ।

३४ जो रथ अश्वके साथ वर्त्तमान है और स्तोताओंके द्वारा प्रशंसित है, तुम्हारा वह समूहको बाधा नही देता।

३५ मनके समान वेगवान् अश्वि-द्वय, क्षिप्त पदवाले और अश्वोंसे युक्त हिरण्मय रथसे आओ।

३६ वर्षण करनेवाले धनसे युक्त अश्वि-द्वय, तुमलोग सदा जागरूक और अन्वेषणीय ... वाले हो। वही तुमलोग हमें अन्न दो।

३७ अश्वि-द्वय, तुमलोग अभिनव और सम्भजनीय धनको जानो। चेदि-वंशीय कशु राजाने जैसे सौ ऊँट और दस हजार गायें दी थीं; सो सब जानो।

३८ जिन कशु राजाने मेरी सेवाके लिये सोनेके समान चमकनेवाले दस राजाओंको ... उन कशुके पैरोंके नीचे सारी प्रजा रहती है।

३९ जिस मार्गसे ये चेदि-वंशीय जाते हैं, उससे दूसरा कोई नहीं जा सकता। कशुसे अधिकतर दान-परायण और विद्वान् व्यक्ति स्तोताके लिये दान नहीं करता।

२ अनुवाक । ६ सूक्त

इन्द्र देवता। शेषकी तीन ऋचाओंमें परशु नामके राजाके पुत्र तिरिन्दिरके दानकी प्रशंसा की गयी है; इसलिये इन तीनोंके वही देवता हैं। वत्स ऋषि। गायत्री छन्द।

महाँ इन्द्रो य ओजसा पर्जन्यो वृष्टिमाँइव । स्तोमैर्वत्सस्य वावृधे ॥१॥

प्रजामृतस्य पिप्रतः प्रयद्भरन्त वह्नयः । विप्रा ऋतस्य वाहसा ॥२॥

कण्वा इन्द्रं यदक्रत स्तोमैर्यज्ञस्य साधनम् । जामि ब्रुवत आयुधम् ॥३॥

समस्य मन्यवे विशो विश्वा नमन्त कृष्टयः। समुद्रायेव सिन्धवः ॥४॥

ओजस्तदस्य तित्विष उभे यत्समवर्तयत् । इन्द्रश्चर्मेव रोदसी ॥५॥

वि चिद्वृत्रस्य दोधतो वज्रेण शतपर्वणा । शिरो बिभेद वृष्णिना ॥६॥

इमा अभि प्र णोनुमो विपमग्रेषु धीयतः ।

अग्नेः शोचिर्न दिद्युतः ॥७॥

गुहा सतीरुपत्मना प्र यच्छोचन्त धीतयः । कण्वा ऋतस्य धारया ॥८॥

---

१ जो इन्द्र पर्जन्यके समान बलमें महान् हैं, वह पुत्रतुल्य स्तोताके स्तोत्र द्वारा वर्द्धित होते हैं।

२ जिस समय आकाशको पूर्ण करनेवाले अश्व यज्ञकी प्रजा इन्द्रको वहन करते हैं, उस समय विद्वान् लोग यज्ञके प्रापक स्तोत्र द्वारा स्तुति करते हैं।

३ कण्वोंने स्तोत्र द्वारा इन्द्रको यज्ञ-साधक बनाया है; इसीलिये लोग इन्द्रको भ्राता कहते हैं।

४ जैसे नदियाँ समुद्रको प्रणाम करती हैं, वैसे ही समस्त मानव-प्रजा इन्द्रके क्रोधके भयसे इन्द्रको स्वयं प्रणाम करती है।

५ जिस बलके द्वारा इन्द्र द्यावापृथिवीको चमड़ेकी तरह भली भाँति रखते हैं, वह बल दीप्त हुआ था।

६ इन्द्रने काँपते हुए वृत्रके मस्तकको सौ धारोंवाले और पराक्रमशाली वज्रके द्वारा छेद डाला।

७ स्तोताओंके आगे हमलोग, अग्निकी दीप्तिकी तरह, दीप्यमान इन स्तोत्रोंको बार-बार कहेंगे।

८ गुहामें वर्तमान जो स्तुतियाँ स्वयमेव इन्द्रके पास जाकर दीप्त होती हैं, उन्हें कण्वलोग सोमकी धारासे युक्त करें।

प्र तमिन्द्र नशीमहि रयिं गोमन्तमश्विनम्। प्र ब्रह्म पूर्वचित्तये॥
अहमिद्धि पितुष्परि मेधामृतस्य जग्रभ। अहं सूर्यइवाजनि ॥१०॥
अहं प्रत्नेन मन्मना गिरः शुम्भामि कण्ववत्। येनेन्द्रः शुष्ममिद्दधे॥
ये त्वामिन्द्र न तुष्टुवुर्ऋषयो ये च तुष्टुवुः। ममेद्वर्धस्व सुष्टुतः॥
यदस्य मन्युरध्वनीद्विवृत्रं पर्वशो रुजन्। अपः समुद्रमैरयत् ॥१३॥
नि शुष्ण इन्द्र धर्णसिं वज्रं जघथ दस्यवि। वृषा ह्युग्र शृण्विषे॥
न द्याव इन्द्रमोजसा नान्तरिक्षाणि वज्रिणम्। न विव्यचन्त भूमयः॥
यस्त इन्द्र महीरपः स्तभूयमान आशयत्। नि तं पद्यासु शिश्नथः॥
य इमे रोदसी मही समीची समजग्रभीत्। तमोभिरिन्द्र तं गुहः॥

९ इन्द्र, हम गौ और अश्वसे युक्त धन प्राप्त करें और दूसरोंके पहले ही, ज्ञानके लि... प्राप्त करें।

१० मैंने ही पिता और सत्य रूप इन्द्रकी कृपा प्राप्त की है। मैं सूर्यके समान प्रकाशित हु...

११ कण्वकी तरह मैं नित्य स्तोत्र द्वारा वाक्योंको अलङ्कृत करता हूँ। ...द्वारा इन्द्र बल प्राप्त करते हैं।

१२ इन्द्र, जो तुम्हारी स्तुति नहीं करते और जो ऋषि (मन्त्र-द्रष्टा) तुम्हारी स्तुति करते... दोनोंके बीच मेरी स्तुति भली भाँति स्तुत होकर वृद्धि प्राप्त करे।

१३ जिस समय इन्द्रके क्रोधने वृत्रको टुकड़े-टुकड़े करते हुए शब्द किया था, ... इन्द्रने समुद्रके प्रति वृष्टि-जल भेजा था।

१४ इन्द्र, तुमने दस्यु शुष्णके प्रति धारण करने योग्य वज्रका आघात किया था। ... तुम अभीष्टवर्षी हो।

१५ द्युलोक इन्द्रको बल द्वारा व्याप्त नहीं कर सकते, अन्तरीक्ष वज्रधर इन्द्रको ... कर सकते और भूलोक भी इन्द्रको नहीं व्याप्त कर सकते।

१६ इन्द्र, जिस वृत्रने तुम्हारे महान् जलको अन्तरीक्षमें रोककर व्याप्त कर र... वृत्रको तुमने गति-परायण जलके बीच मारा था।

१७ जिस वृत्रने महती और सङ्गता द्यावापृथिवीको ढक रखा था, इन्द्र, उसे तु... और अनन्त मरण-लक्षण अन्धकारमें घुसा दिया।

य इन्द्र यतयस्त्वा भृगवो ये च तुष्टुवुः । ममेदुग्र श्रुधी हवम् ॥१८॥
इमास्त इन्द्र पृश्नयो घृतं दुहत आशिरम् । एनामृतस्य पिप्युषीः ॥१९॥
या इन्द्र प्रस्वस्त्वासा गर्भमचक्रिरन् । परि धर्मेव सूर्यम् ॥२०॥
त्वामिच्छवसस्पते कण्वा उक्थेन वावृधुः । त्वां सुतास इन्दवः ॥२१॥
तवेदिन्द्र प्रणीतिषूत प्रशस्तिर द्रिवः । यज्ञो वितन्त साय्यः ॥२२॥
आ न इन्द्र महीमिषं पुरं न दर्षि गोमतीम् । उत प्रजां सुवीर्यम् ॥२३॥
उतत्यदाश्वश्व्यं यदिन्द्र नाहुषीष्वा । अग्रे विक्षु प्रदीदयत् ॥२४॥
अभि व्रजं न तत्निषे सूर उपाकचक्षसम् । यदिन्द्र मृळयासि नः ॥२५॥
यदङ्ग तविषीयस इन्द्र प्रराजसि क्षितीः । महाँ अपार ओजसा ॥२६॥
तं त्वा हविष्मतीर्विश उपब्रुवत ऊतये । उरुज्रयसमिन्दुभिः ॥२७॥

१८ ओजस्वी इन्द्र, जो यति अङ्गिरोगण तुम्हारी स्तुति करते हैं और जो भृगुलोग तुम्हारी स्तुति करते हैं, उन सबमें मेरा स्तोत्र सुनो।

१९ इन्द्र, ये यज्ञ-वर्द्धिका गायें घी और दूध देती हैं।

२० इन्द्र, इन प्रसव करनेवाली गायोंने मुखसे तुम्हारे द्वारा प्रदत्त अन्नका भक्षण करके सूर्यके चारो ओर जलकी तरह गर्भ धारण किया था।

२१ बलाधीश इन्द्र, उक्थ द्वारा कण्वलोग तुम्हें वर्द्धित करते हैं। अभिषुत सोमोंने तुम्हें वर्द्धित किया था।

२२ वज्रवान् इन्द्र, तुम्हारे पथ-प्रदर्शक बननेपर उत्तम स्तुति और प्रवृद्ध यज्ञ किया जाता है।

२३ इन्द्र, हमारे लिये महान् और गो-युक्त अन्नकी रक्षा करने और वीर्यवान् पुत्र आदि दान करनेकी इच्छा करो।

२४ इन्द्र, नहुष राजाकी प्रजाओंके सामने शीघ्रगामी और अश्वसे युक्त जो बल तुमने प्रदान किया है, हमें उसे दो।

२५ इन्द्र, तुम प्राज्ञ हो। इस समय निकटसे दर्शनीय गोशालाको पूर्ण करो और हमें सुखी करो।

२६ इन्द्र, बलके समान आचरण करो। मनुष्योंके राजा बनो। बल द्वारा तुम महान् और अपराजेय हो।

२७ इन्द्र, तुम बहुत व्यापक हो। हविवाले लोग सोम द्वारा तुम्हें तृप्त करनेके लिये, तुम्हारे पास आकर, स्तुति करते हैं।

उपह्वरे गिरीणां सङ्गथे च नदीनाम् । धिया विप्रो अजायत ॥२८॥
अतः समुद्रमुद्वतश्चिकित्वाँ अवपश्यति । यतो विपान एजति ॥२९॥
आदित् प्रत्नस्य रेतसो ज्योतिष्पश्यन्ति वासरम् ।
परो यदिध्यते दिवा ॥३०॥
कण्वास इन्द्र ते मतिं विश्वे वर्द्धन्ति पौंस्यम् ।
उतो शविष्ठ वृष्ण्यम् ॥३१॥
इमां म इन्द्र सुष्टुतिं जुषस्व प्र सु मामव ।
उत प्र वर्धया मतिम् ॥३२॥
उत ब्रह्मण्या वयं तुभ्यं प्रवृद्ध वज्रिवः । विप्रा अतक्ष्म जीवसे ॥३३॥
अभि कण्वा अनूषतापो न प्रवता यतीः । इन्द्रं वनन्वती मतिः ॥३४॥
इन्द्रमुक्थानि वावृधुः समुद्रमिव सिन्धवः । अनुत्तमन्युमजरम् ॥३५॥

---

२८ पर्वतोंके प्रान्तमें, नदियोंके सङ्गम-स्थलपर, यज्ञ-क्रिया करनेपर मेधावी इन्द्र उत्पन्न करते हैं ।

२९ सर्व-व्यापक इन्द्र, जो संसारमें विहार करते हैं, वही विद्वान् इन्द्र ऊर्ध्व निम्न मुखसे समुद्रको देखते हैं ।

३० द्युलोकके ऊपर जिस समय इन्द्र दीप्ति प्राप्त करते हैं, उसी समय प्राचीन इन्द्रकी निवासप्रद ज्योतिका लोग दर्शन करते हैं ।

३१ इन्द्र, समस्त कण्वगण तुम्हारी बुद्धि और बलको बढ़ाते हैं । हे श्रेष्ठ तुम्हारे वीर-कर्मका भी वर्द्धन करते हैं ।

३२ इन्द्र, तुम हमारी इस सुन्दर स्तुतिकी सेवा करो । हमें भली भाँति बचाओ । बुद्धिको प्रवर्द्धित करो ।

३३ प्रवृद्ध और वज्रधर इन्द्र, हम मेधावी हैं । जीवनके निमित्त तुम्हारे लिये हमने स्तोत्र कि

३४ कण्वलोग स्तुति करते हैं । निम्नाभिमुख गमन-शील जलोंकी तरह रमणी स्तुति इन्द्रकी सेवाके उपयुक्त हो जाती है ।

३५ जैसे नदियाँ समुद्रको बढ़ाती हैं, वैसे ही मन्त्र इन्द्रको बढ़ाते हैं । इन्द्र अजर कोपका निवारण कोई नहीं कर सकता ।

आ नो याहि परावतो हरिभ्यां हर्यताभ्याम् । इममिन्द्र सुतं पिब ॥३६॥
त्वामिद्वृत्रहन्तम जनासो वृक्तबर्हिषः । हवन्ते वाजसातये ॥३७॥
अनु त्वा रोदसी उभे चक्रं न वर्त्येतशम् ।
अनु सुवानास इन्दवः ॥३८॥
मन्दस्वा सु स्वर्णर उतेन्द्र शर्यणावति । मत्स्वा विवस्वतो मती ॥३९॥
वावृधान उप द्यवि वृषा वज्र्यरोरवीत् । वृत्रहा सोमपातमः ॥४०॥
ऋषिर्हि पूर्वजा अस्येक ईशान ओजसा । इन्द्र चोष्कूयसे वसु ॥४१॥
अस्माकं त्वा सुताँ उप वीतपृष्ठा अभि प्रयः ।
शतं वहन्तु हरयः ॥४२॥
इमां सु पूर्व्यां धियं मधोर्घृतस्य पिप्युषीम् ।
कण्वा उक्थेन वावृधुः ॥४३॥
इन्द्रमिद्विमहीनां मेधे वृणीत मर्त्यः । इन्द्रं सनिष्युरूतये ॥४४॥

३६ इन्द्र, सुन्दर रथपर चढ़कर दूर देशसे हमारे पास आओ । अभिषुत सोमका पान करो ।

३७ सबकी अपेक्षा अधिक शत्रु-संहारक इन्द्र, जो लोग कुश काटते हैं, वे अन्न-प्राप्तिके लिये तुम्हें बुलाते हैं ।

३८ इन्द्र, जैसे रथ-चक्र अश्वका अनुगमन करते हैं, वैसे ही द्यावापृथिवी तुम्हारा अनुगमन करती है। अभिषुत सोम भी तुम्हारा अनुवर्त्तन करते हैं ।

३९ इन्द्र, शर्यणादेश (कुरुक्षेत्रके समीप)के तड़ागके पास समस्त ऋत्विकोंके द्वारा आरब्ध यज्ञमें तृप्त होओ । सेवककी स्तुतिसे आनन्द लो ।

४० प्रवृद्ध, काम-वर्षक, वज्रवान्, अतीव सोम-पाता और वृत्रघ्न इन्द्र द्युलोकके पास बोलते हैं ।

४१ इन्द्र, तुम पूर्वोत्पन्न ऋषि हो । अद्वितीय बल द्वारा तुम सारे देवोंके स्वामी हुए हो । तुम बार-बार धन दो ।

४२ प्रशस्त पृष्ठवाले सौ अश्व, हमारे अभिषुत सोम और अन्नके लिये, तुम्हें ले आवें ।

४३ उक्थ (मन्त्र) द्वारा कण्वलोग पूर्वजों द्वारा कृत और मधुर जलकी वर्द्धयित्री याग-क्रियाको बढ़ावें ।

४४ देवगण विशेष रूपसे महान् हैं । उनके बीच इन्द्रको ही, मनुष्य लोग, धनेच्छु होकर, रक्षणके लिये, वरण करते हैं ।

अर्वाञ्चन्त्वा पुरुष्टुत प्रियमेधस्तुता हरी । सोमपेयाय वक्षतः ॥४५॥
शतमहं तिरिन्दिरे सहस्रं पर्शावाददे । राधांसि याद्वानाम् ॥४६॥
त्रीणि शतान्यर्वतां सहस्रा दश गोनाम् । ददुष्पज्राय साम्ने ॥४७॥
उदानट् ककुहो दिवमुष्ट्रान् चतुर्युजो ददत् ।
श्रवसा याद्वं जनम् ॥४८॥



७ सूक्त

मरुद्गण देवता । कण्वगोत्रीय वत्स ऋषि । गायत्री छन्द ।

प्र यद्वस्त्रिष्टुभमिषं मरुतो विप्रो अक्षरत् । वि पर्वतेषु राजथ ॥१॥
यदङ्ग तविषीयवो यामं शुभ्रा अचिध्वम् । नि पर्वता अहासत ॥२॥
उदीरयन्त वायुभिर्वाश्रासः पृश्निमातरः । धुक्षन्त पिप्युषीमिषम् ॥३॥

४५ अनेकों द्वारा स्तुत इन्द्र, यज्ञ-प्रिय ऋषियों द्वारा स्तुत दो अश्व, सोम पानके लिये, तु... सामने ले आवें ।

४६ यदुओंमें परशुके पुत्र तिरिन्दिरके निकट सौ और सहस्र धन मैंने ग्रहण किये हैं।

४७ तिरिन्दिर राजाओंने पज्र और सामको तीन सौ अश्व और दस सौ गायें दी थीं।

४८ तिरिन्दिर राजाने, उन्नत होकर, चार स्वर्ण-भारोंसे युक्त ऊटोंको देते हुए यदुओं... रूपसे देते हुए कीर्त्तिके द्वारा स्वर्गको व्याप्त किया था ।



१ मरुतो, जिस समय विद्वान् व्यक्ति तीनों सवनोंमें (सोम-रूप) प्रशस्त अन्न (अग्निमें)... उस समय तुमलोग पर्वतोंमें दीप्ति पाते हो ।

२ बलाभिलाषी और शोभन मरुतो, जिस समय तुमलोग रथको अश्व द्वारा जोतते... समय पर्वत भी चलने (काँपने) लगते हैं ।

३ शब्दकर्त्ता और पृश्निके पुत्र मरुद्गण (वायुके चलाक देवता) वायुओंके द्वारा ... ऊपर उठाते और वृद्धिकर अन्न दान करते हैं ।

वपन्ति मरुतो मिहं प्र वेपयन्ति पर्वतान् । यद्यामं यान्ति वायुभिः ॥४॥
नि यद्यामाय वो गिरिर्नि सिन्धवो विधर्मणे । महे शुष्माय येमिरे ॥५॥
युष्माँ उ नक्तमूतये युष्मान्दिवा हवामहे । युष्मान् प्रयत्यध्वरे ॥६॥
उदु त्ये अरुणप्सवश्चित्रा यामेभिरीरते । वाश्रा अधिष्णुना दिवः ॥७॥
सृजन्ति रश्मिमोजसा पन्थां सूर्याय यातवे । ते भानुभिर्वितस्थिरे ॥८॥
इमां मे मरुतो गिरमिमं स्तोममृभुक्षणः । इमं मे वनता हवम् ॥९॥
त्रीणि सरांसि पृश्नयो दुदुह्रे वज्रिणे मधु । उत्सं कवन्धमुद्रिणम् ॥१०
मरुतो यद्ध वो दिवः सुम्नायन्तो हवामहे । आ तू न उपगन्तन ॥११॥
यूयं हिष्ठा सुदानवो रुद्रा ऋभुक्षणो दमे । उत प्रचेतसो मदे ॥१२॥

---

४ जिस समय मरुद्गण, वायुओंके साथ, जाते हैं, उस समय वे वर्षा गिराते और पर्वतोंको कँपाते हैं ।

५ तुम्हारे रथके लिये पर्वतोंकी गति नियत है । नदियाँ रक्षा और महान् बलके लिये, तुम्हारे गमनके अर्थ, नियत हैं ।

६ हम तुम्ह, रात्रिको रक्षाके लिये बुलाते हैं, दिनमें भी तुम्हें बुलाते हैं और यज्ञ आरम्भ होनेपर तुम्हें बुलाते हैं ।

७ वे ही अरुण वर्णवाले, आश्चर्य-भूत (विचित्र) और शब्दकर्त्ता मरुद्गण रथके द्वारा द्युलोकके ऊपर, अग्र भागसे, जाते हैं ।

८ जो मरुद्गण सूर्यके गमनके लिये किरणयुक्त मार्गका सृजन करते हैं, वह तेजके द्वारा अवस्थिति करते हैं ।

९ मरुतो, मेरे इस वाक्यका आश्रयण करो । हे महान् मरुतो, इस स्तोत्रका आश्रय करो । मेरे इस आह्वानकी सेवा करो ।

१० पृश्नियोंने (मरुतोंकी माताओंने) वज्री इन्द्रके लिये मधुर सोम-रसको उत्स (निर्झर), कबन्ध (जल) और अद्रि (मेघ)—इन तीन सरोवरोंसे दूहा था ।

११ मरुतो, जिस समय अपने सुखाभिलाषके लिये हम स्वर्गसे तुम्हें बुलाते हैं, उस समय शीघ्र ही हमारे पास आओ ।

१२ सुन्दर दानमें परायण और महातेजस्वी रुद्र-पुत्रो, तुमलोग यज्ञ-गृहमें मदकर सोम पीनेपर उत्तम ज्ञानसे युक्त हो जाते हो ।

आ नो रयिं मदच्युतं पुरुक्षुं विश्वधायसम् । इयर्ता मरुतो दिवः
अधीव यग्दिरीणां यामं शुभ्रा अचिध्वम् । सुवानैर्मन्दध्व इन्दुभिः
एतावतश्चिदेषां सुम्नं भिक्षेत मर्त्यः । अदाभ्यस्य मन्मभिः ॥
ये द्रप्साइव रोदसी धमन्त्यनु वृष्टिभिः । उत्सं दुहन्तो अक्षितम् ।
उदु स्वानेभिरीरत उद्रथैरुदु वायुभिः । उत् स्तोमैः पृश्निमातरः ॥
येनाव तुर्वशं यदुं येन कण्वं धनस्पृतम् । राये सुतस्य धीमहि ॥
इमा उ वः सुदानवो घृतं न पिप्युषारिषः । वर्धान् काण्वस्य मन्म
क्व नूनं सुदानवो मदथा वृक्तबर्हिषः । ब्रह्मा को वः सपर्यति ॥
नहि ष्म यद्ध वः पुरा स्तोमेभिर्वृक्तबर्हिषः । शर्धां ऋतस्य जिन्व
समु त्ये महतीरपः सं क्षोणी समु सूर्यम् । सं वज्रं पर्वशो दधुः

१३ मरुतो, स्वर्गसे हमारे लिये मद-स्रावी, बहु-निवासदाता और सबका भर समर्थ धन ले आओ ।

१४ शुभ्र मरुतो, जिस समय तुमलोग पर्वतके ऊपर अपना यान ले जाते हो, उस सुत सोमके बलसे प्रमत्त होते हो ।

१५ स्तोता स्तोत्रोंके द्वारा अहिंसनीय मरुतोंके पास अपने सुखके लिये भिक्षा माँ

१६ मरुत् लोग अक्षीण मेघका दोहन करते हुए, जल-बिन्दुकी तरह, वृष्टि द्वारा द्यावा भली भाँति व्याप्त करते हैं ।

१७ पृश्निके पुत्र मरुत् लोग शब्द करते हुए ऊपर जाते हैं । रथ द्वारा ऊपर वायु द्वारा ऊपर जाते हैं । मन्त्र द्वारा ऊपर जाते हैं ।

१८ जिस रक्षणके द्वारा यदु और तुर्वशकी तुमलोगोंने रक्षा की थी और जिसके द्वारा कण्वकी रक्षा की है, धनके लिये हम उसका ही ध्यान करते हैं ।

१९ उत्तम दान देनेवाले मरुतो, घृतके समान शरीरको पुष्ट करनेवाले इस अन्न गोत्रोत्पन्न स्तोत्रके समान, वर्द्धित करो ।

२० मरुतो, तुम दान-परायण हो । तुम्हारे लिये कुश काटे गये हैं । इस समय तुम मत्त हो रहे हो ? कौन स्तोता तुम्हारी सेवा करता है ?

२१ हे प्रवृत्त-यज्ञ मरुतो, तुमलोग जो पूर्व ही दूसरोंके द्वारा किये गये स्तोत्रोंसे अपने बलोंको प्रसन्न करते हो, वह ठीक नहीं है ।

२२ उन मरुतोंने ओषधियोंके साथ जलको मिलाया था, द्यावापृथिवीको उनके अवस्थित किया था और सूर्यको स्थापित किया था । उन्होंने वृत्रके प्रत्येक अङ्गको काटकर धारण किया था ।

वि वृत्रं पर्वशो ययुर्वि पर्वताँ अराजिनः । चक्राणा वृष्णि पौंस्यम् ॥२३॥
अनु त्रितस्य युध्यतः शुष्ममावन्नुत क्रतुम् । अन्विन्द्रं वृत्रतूर्ये ॥२४॥
विद्युद्धस्ता अभिद्यवः शिप्राः शीर्षन् हिरण्ययीः । शुभ्रा व्यञ्जत श्रिये ॥२५॥
उशना यत् परावत उक्ष्णो रन्ध्रमयातन । द्यौर्न चक्रदद्भिया ॥२६॥
आ नो मखस्य दावनेऽश्वैर्हिरण्यपाणिभिः । देवास उप गन्तन ॥२७॥
यदेषां पृषती रथे प्रष्टिर्वहति रोहितः । यान्ति शुभ्रा रिणन्नपः ॥२८॥
सुषोमे शर्यणावत्यार्जीके पस्त्यावति । ययुर्निचक्रया नरः ॥२९॥
कदा गच्छाथ मरुत इत्था विप्रं हवमानम् । मार्डीकेभिर्नाधमानम् ॥३०॥
कद्ध नूनं कधप्रियो यदिन्द्रमजहातन । को वः सखित्व ओहते ॥३१॥
सहो षु णो वज्रहस्तैः कण्वासो अग्निं मरुद्भिः । स्तुषे हिरण्यवाशीभिः ॥३२॥

---

२३ अराजक और वीर्यके समान बल बढ़ानेवाले मरुद्गणने पर्वतकी तरह वृत्रको टुकड़े-टुकड़े कर दिया था।

२४ मरुद्गणने योद्धा त्रितके बलकी रक्षा की थी, त्रितके कर्मकी रक्षा की था और वृत्र-वधके लिये इन्द्रकी रक्षा की थी।

२५ आयुध-हस्त, दीप्तिमान और शोभन मरुत् लोग, शोभाके लिये मस्तकपर सोनेका शिर-स्त्राण (शिप्र) धारण किया था।

२६ मरुतो, स्तोताओंकी इच्छा करके अभीष्टवर्षी रथके बीच दूर देशसे तुम लोग आये थे। उस समय द्युलोकवर्त्ती जनताके समान पृथिवीके प्राणी भी वेगसे काँप गये थे।

२७ देवता लोग (मरुत् लोग) यज्ञके दानके लिये सोनेके पैरोंवाले अश्वोंपर चढ़कर आवें।

२८ इन मरुतोंके रथपर जिस समय श्वेत बिन्दुओ वाली मृगी ओर शीघ्रगामी रोहित मृग प्राप्त होते हैं, उस समय शोभन मरुद्गण जाते और जल प्रवाहित होता है।

२९ नेता मरुद्गण शोभन सोमवाले और यज्ञ-गृहसे संयुक्त हैं। वे ऋजीका देशके शर्यणा नामक सरोवर (कुरुक्षेत्रके निकटस्थ) में रथचक्रको निम्नमुख करके जाते हैं।

३० मरुतो, कब तुमलोग इस प्रकारसे आह्वान करनेवाले और याचक मेधावी (विप्र) स्तोताके पास सुख-हेतु धनके साथ आओगे ?

३१ तुमलोग स्तुतिसे प्रसन्न होते हो। तुमलोगोंने इन्द्रका कब परित्याग किया था ? तुम्हारी मित्रताके लिये किसने प्रार्थना की थी ?

३२ कण्वगण, वज्रहस्त और सोनेके तक्षण करनेवाले आयुध (काष्ठादिको चिकना करने-वाले यन्त्र) से युक्त मरुतोंके साथ अग्निकी स्तुति करो।

ओषु वृष्णः प्रयज्यूना नव्यसे सुविताय । ववृत्यां चित्रवाजान् ॥३३॥
गिरयश्चिन्नि जिहते पर्शानासो मन्यमानाः । पर्वताश्चिन्नि येमिरे ॥३४॥
आक्ष्णयावानो वहन्त्यन्तरिक्षेण पततः । धातारः स्तुवते वयः ॥३५॥
अग्निर्हि जानि पूर्व्यश्छन्दो न सूरो अर्चिषा । ते भानुभिर्वि तस्थिरे ॥३६॥

८ सूक्त

अश्विद्वय देवता । कण्वगोत्रज सध्वंसाख्य ऋषि । अनुष्टुप् छन्द ।

आ नो विश्वाभिरूतिभिरश्विना गच्छतं युवम् ।
दस्रा हिरण्यवर्तनी पिबतं सोम्यं मधु ॥१॥
आ नूनं यातमश्विना रथेन सूर्यत्वचा ।
भुजी हिरण्यपेशसा कवी गम्भीरचेतसा ॥२॥
आ यातं नहुषस्पर्यान्तरिक्षात् सुवृक्तिभिः ।
पिबाथो अश्विना मधु कण्वानां सवने सुतम् ॥३॥

---

३३ मैं वर्षक, यजनीय और विचित्र बलवाले मरुतोंको, सुख-लभ्य धनके लिये, आ... (घूर्णित वा द्रवीकृत) करता हूँ ।

३४ सारे गिरि पीड़ित वा आघात-प्राप्त और बाधा-प्राप्त होनेपर भी अपने स्थानसे... नहीं होते। पर्वत (मेघ) भी नियत ही रहते हैं ।

३५ बहुदूर-व्यापक गमन करनेवाले अश्व आकाश-मार्गसे जाते हुए मरुतोंको ले आ... वे स्तोताको अन्न देते हैं ।

३६ तेजोबलसे अग्निदेवने, स्तवनीय सूर्यकी तरह, सबके मुख्य होकर जन्म ग्रहण... है। मरुद्गण दीप्ति-बलसे नाना स्थानोंमें रहते हैं ।

---

१ अश्विद्वय, तुमलोग दर्शनीय हो। तुम्हारा रथ सोनेका है। सारे रक्षणोंके साथ आ... करो। सोममय मधुका पान करो।

२ अश्विद्वय, तुमलोग भोक्ता हो, हिरण्मय शरीरवाले हो, क्रान्त-कर्मा (कवि) हो... प्रशस्त ज्ञानवाले हो। सूर्यके समान भासमान रथपर चढ़कर अवश्य हमारे पास आओ।

३ अश्विद्वय, निर्दोष स्तुति द्वारा अन्तरीक्षसे मनुष्य-लोककी ओर आओ और कण्व... योंके यज्ञमें अभिषुत सोमका पान करो।

आ नो यातं दिवस्पर्यान्तरिक्षादधप्रिया ।
पुत्रः कण्वस्य वामिह सुषाव सोम्यं मधु ॥४॥
आ नो यातमुपश्रुत्यश्विना सोमपीतये ।
स्वाहा स्तोमस्य वर्धना प्र कवी धीतिभिर्नरा ॥५॥
यच्चिद्धि वां पुर ऋषयो जुहूरेऽवसे नरा ।
आ यातमश्विना गतमुपेमां सुष्टुतिं मम ॥६॥
दिवश्चिद्रोचनादध्या नो गन्तं स्वर्विदा ।
धीभिर्वत्सप्रचेतसा स्तोमेभिर्हवनश्रुता ॥७॥
किमन्ये पर्यासतेऽस्मत् स्तोमेभिरश्विना ।
पुत्रः कण्वस्य वामृषिर्गीर्भिर्वत्सो अवीवृधत् ॥८॥
आ वां विप्र इहावसेऽह्वत् स्तोमेभिरश्विना ।
अरिप्रा वृत्रहन्तमा ता नो भूतं मयोभुवा ॥९॥

---

४ कण्व ऋषिके पुत्र इस यज्ञमें तुम्हारे लिये सोममय मधुका अभिषव करते हैं; इसलिये हे अश्विद्वय, इस लोकके प्रति प्रसन्न होकर तुमलोग द्युलोक और अन्तरीक्षसे आओ।

५ अश्विद्वय, सोमपानके लिये हमारे स्तुतिवाले इस यज्ञमें आओ। वर्द्धक, कवि और नेता अश्विद्वय, अपनी बुद्धि और कर्मसे स्तोताको वृद्धि दो।

६ नेता अश्विद्वय, प्राचीन समयमें ऋषियोंने जब तुम्हें, रक्षाके लिये, बुलाया, तब तुम आये थे। इसलिये मेरी इस सुन्दर स्तुतिके पास आओ।

७ सूर्यके ज्ञाता अश्विद्वय, तुमलोग द्युलोक और अन्तरीक्षसे हमारे पास आओ। स्तोताके प्रति प्रकृष्ट ज्ञानवाले अश्विद्वय, बुद्धिके साथ तुम आओ। आह्वान सुननेवाले अश्विद्वय, स्तोत्रके साथ तुम आओ।

८ मुझसे अतिरिक्त दूसरा कौन स्तोत्र द्वारा अश्विद्वयकी उपासना कर सकता है? कण्वके पुत्र वत्स ऋषि स्तुति द्वारा तुम्हें वर्द्धित करते हैं।

९ अश्विद्वय, इस यज्ञमें स्तोता (विप्र) ने रक्षणके लिये स्तुति द्वारा तुम्हें बुलाया है। हे निष्पाप और शत्रु-घातकोंमें श्रेष्ठ अश्विद्वय, तुम हमारे लिये सुखदाता होओ।

आ यद्वां योषणा रथमतिष्ठद्वाजिनीवसू ।
विश्वान्यश्विना युवं प्र धीतान्यगच्छतम् ॥१०॥
अतः सहस्रनिर्णिजा रथेना यातमश्विना ।
वत्सो वां मधुमद्वचोऽशंसीत् काव्यः कविः ॥११॥
पुरुमन्द्रा पुरूवसू मनातरा रयीणाम् ।
स्तोमं मे अश्विनाविममभि वह्नी अनूषाताम् ॥१२॥
आ नो विश्वान्यश्विना धत्तं राधांस्यह्रया ।
कृतं न ऋत्वियावतो मा नो रीरधतं निदे ॥१३॥
यन्नासत्या परावति यद्वा स्थो अध्यम्बरे ।
अतः सहस्रनिर्णिजा रथेना यातमश्विना ॥१४॥
यो वां नासत्यावृषिर्गीर्भिर्वत्सो अवीवृधत् ।
तस्मै सहस्रनिर्णिजमिषं धत्तं घृतश्चुतम् ॥१५॥

---

१० धन और अन्नसे युक्त अश्विद्वय, योषित् (सूर्या) तुम्हारे रथपर चढ़ी थी। तुमलोग समस्त अभिलषित पदार्थ प्राप्त करो।

११ अश्विद्वय, तुमलोग जिन लोकोंमें हो, वहाँसे अनेक रूपोंवाले रथपर चढ़कर काव्य (कविके पुत्र) और कवि (मेधावी) वत्स ऋषिने मधुमय वाक्यका उच्चारण किया।

१२ बहु-मद-युक्त, धन-दाता और जगद्वाहक अश्विद्वय, मेरे इस स्तोत्रकी प्रशंसा

१३ अश्विद्वय, हमारे लिये अलज्जाकारक सारा धन दो। हमें प्रजोत्पादन-रूप कर्मवाले हमें निन्दकोंके वशीभूत नहीं करना।

१४ सत्यस्वभाव अश्विनीकुमारो, तुम चाहे दूर रहो अथवा पासमें रहो, चाहे जिस में रहो, सहस्र रूपोंवाले रथसे आगमन करो ।

१५ नासत्य-द्वय, जिन वत्स ऋषिने स्तुति द्वारा तुम्हें वर्द्धित किया है, उनके लिये रूपोंवाला और घी चुलानेवाला अन्न दो ।

प्रास्मा ऊर्जं घृतश्चुतमश्विना यच्छतं युवम् ।
यो वां सुम्नाय तुष्टवद्वसूयाद्दानुनस्पती ॥१६॥
आ नो गन्तं रिशादसेमं स्तोमं पुरुभुजा ।
कृतं नः सुश्रियो नरेमा दातमभिष्टये ॥१७॥
आ वां विश्वाभिरूतिभिः प्रियमेधा अहूषत ।
राजन्तावध्वराणामश्विना यामहूतिषु ॥१८॥
आ नो गन्तं मयोभुवाश्विना शम्भुवा युवम् ।
यो वां विपन्यू धीतिभिर्गीर्भिर्वत्सो अवीवृधत् ॥१९॥
याभिः कण्वं मेधातिथिं याभिर्वशं दशव्रजम् ।
याभिर्गोशर्यमावतं ताभिर्नोवतं नरा ॥२०॥
याभिर्नरा त्रसदस्युमावतं कृत्व्ये धने ।
ताभिः ष्वस्माँ अश्विना प्रावतं वाजसातये ॥२१॥

---

१६ अश्विद्वय, उन स्तोताके लिये तुम घृत-धारासे युक्त और बलिष्ठ अन्न प्रदान करो। दानाधिपतियो, इन्होंने तुमलोगोंके सुखके लिये स्तुति की थी। यह अपने लिये धनकी इच्छा करते हैं ।

१७ रिपु-भक्षक और बहुत हविके खानेवाले नेता अश्विद्वय, तुमलोग हमारी स्तुतिकी ओर आओ और हमें शोभन सम्पदासे युक्त करो तथा पार्थिव पदार्थ प्रदान करो ।

१८ प्रियमेध नामक ऋषियोंने देवोंके आह्वानके समय तुम्हें, सारे संरक्षणोंके साथ, बुलाया था। तुमलोग यज्ञमें शोभा पाओ।

१९ सुखदाता, आरोग्यप्रद और स्तुति-योग्य अश्विद्वय, जिन वत्स ऋषिने स्तुति द्वारा तुम्हें वर्द्धित किया है, उनके सामने आओ।

२० जिन संरक्षणोंसे तुमने कण्व, मेधातिथि, वश, दशव्रज और गोशर्यकी तुमने रक्षा की थी, नेता अश्विद्वय, उनके द्वारा हमारी रक्षा करो ।

२१ नेता अश्विद्वय, जिन रक्षणोंसे प्राप्तव्य धनके लिये, तुमने त्रसदस्युकी रक्षा की थी, उन्हींके द्वारा हमें, अन्न-लाभके लिये, भली भाँति बचाओ।

प्र वां स्तोमाः सुवृक्तयो गिरो वर्धन्त्वश्विना ।
पुरुत्रा वृत्रहन्तमा ता नो भूतं पुरुस्पृहा ॥२२॥
त्रीणि पदान्यश्विनोराविः सान्ति गुहा परः ।
कवी ऋतस्य पत्मभिरर्वाग्जीवेभ्यस्परि ॥२३॥



६ सूक्त

अश्विद्वय देवता । शशकर्ण ऋषि । गायत्री, बृहती, ककुप्, त्रिष्टुप्, विराट्, जगती और अनुष्टुप् छन्द ।

आ नूनमश्विना युवं वत्सस्य गन्तमवसे ।
प्रास्मै यच्छतमवृकं पृथु च्छर्दिर्युयुतं या अरातयः ॥१॥
यदन्तरिक्षे यद्दिवि यत् पञ्च मानुषाँ अनु ।
नृम्णं तद्धत्तमश्विना ॥२॥
ये वां दंसांस्यश्विना विप्रासः परिमामृशुः ।
एवेत् कण्वस्य बोधतम् ॥३॥

२२ बहु-रक्षक और शत्रु-नाशकोंमें श्रेष्ठ अश्विद्वय, दोष-शून्य स्तोत्र और वाक्य वर्द्धित करें । हमारे लिये तुम लोग बहु-विध अभिलषणीय होओ ।

२३ अश्वि-द्वयका तीन चक्रोंवाला रथ अदृश्य (गुहामें) रहकर पीछे प्रकट होता है । दर्शी अश्विद्वय, यज्ञके कारण-भूत रथके द्वारा हमारे सामने आओ ।

१ अश्विद्वय, वत्स ऋषिकी रक्षाके लिये तुमलोग अवश्य ही गये थे । इन ऋषिको शून्य और विस्तीर्ण गृह प्रदान करो । उनके शत्रुओंको दूर कर दो ।

२ अश्विद्वय, जो धन अन्तरीक्ष और स्वर्गमें वर्त्तमान है और जो पञ्चश्रेणी (चार वर्ण निषाद)में है, वही धन प्रदान करो ।

३ अश्वि-द्वय, जिन विप्र (मेधावी स्तोता)ने तुमलोगोंके कर्मों (सेवाओं)का बार-बार किया है, उन्हें जानो । फलतः कण्व-पुत्रोंके कामोंको समझो ।

अयं वां घर्मो अश्विना स्तोमेन परिषिच्यते ।
अयं सोमो मधुमान्वाजिनीवसू येन वृत्रं चिकेतथः ॥४॥
यदप्सु यद्वनस्पतौ यदोषधीषु पुरुदंससा कृतम् ।
तेन माविष्टमश्विना ॥५॥
यन्नासत्या भुरण्यथो यद्वा देव भिषज्यथः ।
अयं वां वत्सो मतिभिर्न विन्धते हविष्मन्तं हि गच्छथः ॥६॥
आ नूनमश्विनोर्ऋषिः स्तोमं चिकेत वामया ।
आ सोमं मधुमत्तमं घर्मं सिञ्चादथर्वणि ॥७॥
आ नूनं रघुवर्तनिं रथं तिष्ठाथो अश्विना ।
आ वां स्तोमा इमे मम नभो न चुच्यवीरत ।८॥
यदद्य वां नासत्योक्थैराचुच्युवीमहि ।
यद्वा वाणीभिरश्विनेवेत् काण्वस्य बोधतम् ॥९॥

---

४ अश्विद्वय, तुम्हारा घर्म (हविका याज्ञिक कड़ाहा) स्तोत्र द्वारा आर्द्र किया जाता है। अन्न और धनवाले अश्विद्वय, जिस सोमके द्वारा तुमने वृत्रको जाना था, वह मधुमान् सोम यही है।

५ विविध-कर्मा अश्विद्वय, जल, वनस्पति और ओषधियों (लतादि)में जो तुमने भेषज किया है, उसके द्वारा हमारी रक्षा करो।

६ सत्य-स्वभाव देवो, तुमलोगोंने जगत्का परिपोषण किया है और सबको नीरोग बनाया है। स्तुतिसे वत्स ऋषि तुम्हें नहीं प्राप्त करते। तुमलोग हविवालोंके पास जाते हो।

७ वत्स ऋषि (इस सूक्तके वक्ता)ने उत्तम बुद्धिके द्वारा अश्वि-द्वयके स्तोत्रको जाना था। वत्स (मैं) ने अतीव मधुर सोम और घर्म (हविर्विशेष)को, अथर्वा द्वारा मथित अग्निमें फेंका था।

८ अश्विद्वय, तुमलोग शीघ्रगामी रथपर चढ़ो। मेरे ये स्तोत्र सूर्यकी तरह तेजस्वी तुम्हारे सामने जाते हैं।

९ सत्य-स्वभाव अश्विद्वय, आज मन्त्रों द्वारा तुम्हें हम जैसे ले आते हैं और जैसे वाणी (स्तोत्र)के द्वारा तुम्हें हम ले आते हैं, वैसे ही काण्वपुत्रके (मेरे) स्तोत्रोंको जानो।

यद्वा कक्षीवाँ उत यद्व्यश्व ऋषिर्यद्वान्दीर्घतमा जुहाव ।
पृथी यद्वां वैन्यः सादनेष्वेवेदतो अश्विना चेतयेथाम् ॥१०॥
यातं छर्दिष्पा उत नः परस्पा भूतं जगत्पा उत नस्तनूपा ।
वर्तिस्तोकाय तनयाय यातम् ॥११॥
यदिन्द्रेण सरथं याथो अश्विना यद्वा वायुना भवथः समोकसा ।
यदादित्येभिर्ऋभुभिः सजोषसा यद्वा विष्णोर्विक्रमणेषु तिष्ठथः ॥१२॥
यदद्याश्विनावहं हुवेय वाजसातये ।
यत् पृत्सु तुर्वणे सहस्तच्छ्रेष्ठमश्विनोरवः ॥१३॥
आ नूनं यातमश्विनेमा हव्यानि वां हिता ।
इमे सोमासो अधि तुर्वशे यदाविमे कण्वेषु वामथ ॥१४॥
यन्नासत्या पराके अर्वाके अस्ति भेषजम् ।
तेन नूनं विमदाय प्रचेतसा छर्दिर्वत्साय यच्छतम् ॥१५॥

---

१० अश्विद्वय, कक्षीवान् ऋषिने जैसे तुम्हें बुलाया था और जैसे व्यश्व तथा दीर्घतमा ऋषि एवम् वेन राजाके पुत्र पृथीने जैसे यज्ञ-गृहमें तुम्हें बुलाया था, वैसे ही मैं स्तुति करता हूँ। स्तोत्रको जानो।

११ अश्विद्वय, तुमलोग गृह-पालक होकर आओ। तुमलोग अतीव पोषक हो। तुम और शरीरके पालक होओ। पुत्र और पौत्रके गृहमें आओ।

१२ अश्विद्वय, यदि तुमलोग इन्द्रके साथ एक रथपर जाते हो, यदि वायुके साथ स्थान-वासी हो, यदि अदितिके पुत्र ऋतु आदिके साथ प्रसन्न हो और यदि पाद-क्षेपके साथ तीनों लोकोंमें अवस्थान करते हो, तो आओ।

१३ जिस समय मैं संग्रामके लिये अश्विद्वयको बुलाता हूँ, उस समय वे आवें। मारनेमें अश्विद्वयका जो विजयी रक्षण है, वही श्रेष्ठ है।

१४ अश्विद्वय, ये हव्य तुम्हारे लिये बनाये गये हैं। तुमलोग अवश्य आओ। यह तुर्वश और यदुमें वर्त्तमान है। यह तुम्हारे लिये संस्कृत है और कण्व-पुत्रोंको दिया गया

१५ नासत्य (सत्य-स्वभाव) अश्विद्वय, दूर अथवा निकटमें जो भेषज है, उसके हे प्रकृष्ट ज्ञानवाले अश्विद्वय, विमदके समान वत्सको भी गृह प्रदान करो।

अबुत्स्यु प्र देव्या साकं वाचाहमश्विनोः ।
व्यावर्देव्या मतिं वि रातिं मर्त्येभ्यः ॥१६॥
प्र बोधयोषो अश्विना प्र देवि सूनृते महि ।
प्र यज्ञहोतरानुषक् प्र मदाय श्रवो बृहत् ॥१७॥
यदुषो यासि भानुना सं सूर्येण रोचसे ।
आ हायमश्विनो रथो वर्तिर्याति नृपाय्यम् ॥१८॥
यदापीतासो अंशवो गावो न दुह्र ऊधभिः ।
यद्वा वाणीरनूषत प्र देवयन्तो अश्विना ॥१९॥
प्र द्युम्नाय प्र शवसे प्र नृषाह्याय शर्मणे ।
प्र दक्षाय प्रचेतसा ॥२०॥
यं नूनं धीभिरश्विना पितुर्योना निषीदथः ।
यद्वा सुम्नेभिरुक्थ्या ॥२१॥

---

१६ अश्विद्वय-सम्बन्धी और प्रकाशमान स्तोत्रके साथ मैं जागा हूं । द्युतिमती उषा, मेरी स्तुतिसे अन्धकार दूर करो और मनुष्योंको धन दो ।

१७ देवी, सुन्दर-नेत्रा और महती उषा, अश्विद्वयको जगाओ और वर्द्धित करो । हे देवाह्वाता, अश्विद्वयको सतत प्रबोधित करो । उनके आनन्दके लिये बृहत् अन्न (सोम) प्रस्तुत हुआ है ।

१८ उषा, जिस समय तुम दीप्तिके साथ जाती हो, उस समय सूर्यके समान शोभा पाती हो । उस समय अश्विद्वयका यह रथ मनुष्योंके पोषणीय यज्ञ-गृहमें आता है ।

१९ जिस समय पीत-वर्ण सोमलताको गायके स्तनकी तरह दूहा जाता है और जिस समय देव-कामी लोग स्तुति करते हैं, उस समय, हे अश्विद्वय, रक्षा करो ।

२० प्रकृष्ट ज्ञानवाले अश्विद्वय, तुमलोग धनके लिये हमारी रक्षा करो । बलके लिये रक्षा करो । मनुष्योंके उपभोग्य सुखके लिये तथा समृद्धिके लिये हमारी रक्षा करो ।

२१ अश्विद्वय, यदि तुमलोग पितृ-तुल्य द्युलोककी गोदमें, कर्मके साथ, बैठे हो और यदि, पशंसनीय होकर, सुखके साथ, निवास करते हो, तो हमारे पास आओ ।

१० सूक्त

अश्विद्वय देवता। कण्व-पुत्र प्रगाथ ऋषि। बृहती, त्रिष्टुप्, अनुष्टुप्, और सतोबृहती छन्द।

यत् स्थो दीर्घप्रसद्मनि यद्वादो रोचने दिवः।
यद्वा समुद्रे अध्याकृते गृहेत आ यातमश्विना ॥१॥
यद्वा यज्ञं मनवे संमिमिक्षथुरेवेत् काण्वस्य बोधतम्।
बृहस्पतिं विश्वान्देवाँ अहं हुव इन्द्राविष्णू अश्विनावाशुहेषसा ॥२॥
त्यान्वश्विना हुवे सुदंससा गृभे कृता।
ययोरस्ति प्र णः सख्यं देवेष्वध्याप्यम् ॥३॥
ययोरधि प्र यज्ञा असूरे सन्ति सूरयः।
ता यज्ञस्याध्वरस्य प्रचेतसा स्वधाभिर्या पिबतः सोम्यं मधु।
यदद्याश्विनावपाग्यत् प्राक् स्थो वाजिनीवसू।
यद्द्रुह्यव्यनवि तुर्वशे यदौ हुवे वामथ मा गतम् ॥५॥

---

१ अश्विद्वय, जिस लोकमें प्रशस्त यज्ञ-गृह है, यदि उस लोकमें रहते हो, यदि इस द्यु दीप्तिमान् प्रदेशमें रहते हो और यदि अन्तरीक्षमें निर्मित गृहमें रहते हो, तो इन सब स्थानोंसे आ

२ अश्विद्वय, तुमलोगोंने जैसे मनु (प्रजापति यजमान)के लिये यज्ञको सिक्त किया था, कण्व-पुत्रके यज्ञको जानो। मैं बृहस्पति, समस्त देवों, इन्द्र, विष्णु और शीघ्रगामी अश्वोंवाले द्वयको बुलाता हूँ।

३ अश्विद्वय शोभन-कर्मा हैं। वे हमारे हविष्यके स्वीकारके लिये प्रकट हुए हैं। मैं उन्हें हूँ। अश्विद्वयका सख्य देवोंमें उत्कृष्ट और सहज-लभ्य है।

४ जिन अश्विनीकुमारोंके ऊपर ज्योतिष्टोम आदि यज्ञ प्रभु होते हैं और स्तोत्र-शून्य भी जिनके स्तोता हैं, वे हिंसा-रहित यज्ञके प्रकृष्ट ज्ञाता हैं। वे स्वधा (बलकारण स्तुति) सोममय मधुका पान करें।

५ अन्न और धनवाले अश्विद्वय, इस समय तुमलोग पूर्व दिशा अथवा पश्चिम दिशा अथवा द्रुह्यु, अनु, तुर्वश और यदुके पास हो, मैं तुम्हें बुलाता हूँ; मेरे पास आओ।

यद्न्तरिक्षे पतथः पुरुभुजा यद्वेमे रोद्सी अनु ।
यद्वा स्वधाभिरधितिष्ठथो रथमत आ यातमश्विना ॥६॥



११ सूक्त

अग्नि देवता। वत्स ऋषि। गायत्री और त्रिष्टुप् छन्द।

त्वमग्ने व्रतपा असि देव आ मर्त्येष्वा । त्वं यज्ञेष्वीड्यः ॥१॥
त्वमसि प्रशस्यो विद्थेषु सहन्त्य । अग्ने रथीरध्वराणाम् ॥२॥
स त्वमस्मद्प द्विषो युयोधि जातवेदः । अदेवीरग्ने अरातीः ॥३॥
अन्ति चित् सन्तमह यज्ञं मर्तस्य रिपोः । नोप वेषि जातवेदः ॥४॥
मर्ता अमर्त्यस्य ते भूरि नाम मनामहे । विप्रासो जातवेदसः ॥५॥
विप्रं विप्रासोऽवसे देवं मर्तास ऊतये । अग्निं गीर्भिर्हवामहे ॥६॥

---

६ बहुत हविका भक्षण करनेवाले अश्विद्वय, यदि अन्तरीक्षमें जा रहे हो, यदि द्यावापृथिवीके अभिमुख जा रहे हो और यदि तेजोबलसे रथपर बैठ रहे हो, तो इन सभी स्थानोंसे आओ।



१ अग्निदेव, मनुष्योंमें तुम कर्म-रक्षक हो; इसलिये यज्ञमें तुम स्तुत्य हो।

२ शत्रु-पराजय-कारी अग्नि, तुम यज्ञमें प्रशस्य हो और यज्ञोंके नेता हो।

३ उत्पन्न पदार्थोंके ज्ञाता (जात-वेदा) अग्नि, हमारे शत्रुओंको अलग करो। अग्नि, तुम देव-द्वेषी शत्रु-सैन्यको अलग करो।

४ जातवेदा अग्नि, समीपस्थ रहनेपर भी तुम शत्रुके यज्ञकी कभी कामना नहीं करते।

५ हम विप्र हैं और तुम अमर जातवेदा (उत्पन्न-वस्तु-ज्ञाता) हो। हम तुम्हारा विस्तृत स्तोत्र करगे।

६ हम विप्र और मनुष्य हैं। हम विप्र (मेधावी) अग्निदेवको, हव्यके द्वारा प्रसन्न करनेके लिये, अपनी रक्षाके निमित्त, स्तुति द्वारा बुलाते हैं।

आ ते वत्सो मनो यमत् परमाच्चित् सधस्थात् ।
अग्ने त्वां कामया गिरा ॥७॥
पुरुत्रा हि सदृङ्ङसि विशो विश्वा अनु प्रभुः । समत्सु त्वा हवामहे
समत्स्वग्निमवसे वाजयन्तो हवामहे । वाजेषु चित्रराधसम् ॥९॥
प्रत्नो हि कमीड्यो अध्वरेषु सनाच्च होता नव्यश्च सत्सि ।
स्वां चाग्ने तन्वं पिप्रयस्वास्मभ्यं च सौभगमा यजस्व ॥१०॥

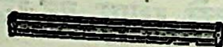


७ अग्नि, उत्तम वासस्थानसे भी वत्स ऋषि तुम्हारे मनको खींचते हैं। उनकी तुम्हारी कामना करती है।

८ तुम अनेक देशोंमें समान रूपसे द्रष्टा हो। फलतः सारी प्रजाके तुम स्वा[illegible] युद्धमें तुम्हें हम बुलाया करते हैं।

९ अन्नाभिलाषी होकर युद्धमें, रक्षाके लिये, हम अग्निको बुलाते हैं। संग्राममें विचित्र धनसे युक्त होते हैं।

१० अग्नि, तुम यज्ञमें पूज्य और प्राचीन हो। तुम चिर कालसे होता और स्तुत्य हो बैठते हो। अपने शरीरको हविसे तृप्त करो। हमें भी सौभाग्य प्रदान करो।



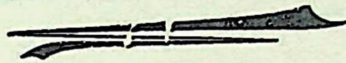
अष्टम अध्याय समाप्त

पञ्चम अष्टक समाप्त

ऋग्वेद-संहिता

[सरल-हिन्दी-टीका-सहित]

षष्ठ अष्टक (दोनों खण्ड)



टीकाकार

पण्डित रामगोविन्द त्रिवेदी वेदान्तशास्त्री

("दर्शन-परिचय," "हिन्दी-विष्णु-पुराण," "हिन्दीपुस्तक-कोष," "राजर्षि प्रह्लाद," "भक्त ध्रुव," "महासती मदालसा," "रत्नावली" आदिके लेखक, 'आर्यमहिला" (बनारस), "विश्वदूत" (रंगून), "सेनापति" (कलकत्ता), "गङ्गा" (सुलतानगंज) आदिके भूतपूर्व सम्पादक, 'गीताप्रचारक-महामण्डल" (मोरिशस) के जन्मदाता, "दक्षिण अफ्रीकन सनातनधर्म-महामण्डल" (डरबन, नेटाल) के आजीवन सभापति तथा भारतधर्ममहामण्डल (बनारस) के महोपदेशक)

—* और *—

पण्डित गौरीनाथ झा व्याकरणतीर्थ

(प्राइवेट सेक्रेटरी, बनैलीराज्याधिपति साहित्य-विभूषण कुमार कृष्णानन्द सिंह बहादुर तथा "गङ्गा" और "वैदिकपुस्तकमाला"के अन्यतम जन्मदाता एवम् अध्यक्ष)



प्रकाशक

पण्डित गौरीनाथ झा व्याकरणतीर्थ

सञ्चालक, "वैदिकपुस्तकमाला," सुलतानगंज (ई० आई० आर०)

मूल्य २)  कार्त्तिक, १९९२ विक्रमीय  प्रथम संस्करण २०००

मिथिला प्रेस,
खलीफाबाग, भागलपुरमें मुद्रित

अष्टक (दोनों खण्डों) की कुछ जानने योग्य बातें

पृष्ठ अष्टक



ऋग्वेद-संहिता

[हिन्दी-टीका-सहित]



६ अष्टक। ८ मण्डल। १ अध्याय। २ अनुवाक।

१२ सूक्त

इन्द्र देवता। कण्वगोत्रीय पर्वत ऋषि। उष्णिक् छन्द।

य इन्द्र सोमपातमो मदः शविष्ठ चेतति ।
येनाहंसि न्यत्रिणं तमीमहे ॥१॥

१ इन्द्र, तुम अत्यन्त सोमका पान करनेवाले हो। बलवानोंमें श्रेष्ठ इन्द्र, सोमपान-जनित मदसे प्रसन्न होकर तुम अपने कार्योंको भली भाँति जानते हो। तुम जैसे सोम-जन्य मदसे राक्षसोंको मारते हो, वैसे ही मदसे युक्त होनेपर तुमसे हम याचना करते हैं।

येनादशग्वमध्रिगु वेपयन्तं स्वर्णरम् ।
येनासमुद्रमाविथा तमीमहे ॥२॥
येन सिन्धु महीरपो रथाँइव प्रचोदयः ।
पन्थामृतस्य यातवे तमीमहे ॥३॥
इमं स्तोममभिष्टये घृतं न पूत मद्रिवः ।
येना नु सद्य ओजसा ववक्षिथ ॥४॥
इमं जुषस्व गिर्वणः समुद्रइव पिन्वते ।
इन्द्र विश्वाभिरूतिभिर्ववक्षिथ ॥५॥
यो नो देवः परावतः सखित्वनाय मामहे ।
दिवो न वृष्टिं प्रथयन्ववक्षिथ ॥६॥
ववक्षुरस्य केतव उतवज्रो गभस्त्योः ।
यत् सूर्यो न रोदसी अवर्धयत् ॥७॥

---

२ तुमने सोमके जिस प्रकारके मदसे युक्त होकर अङ्गिरोगोत्रीय अध्रिगुको और अ… विनाशक तथा संबके नेता सूर्यको बचाया था और जैसे मदसे युक्त होकर तुमने … अन्तरीक्ष) को बचाया था, वैसे ही मदसे सम्पन्न होनेपर हम तुमसे (धनकी) याचना कर…

३ जैसे सोमपान-जन्य मदके कारण (रथीके) रथके समान प्रचुर वृष्टि-जलको तुम … ओर भेजते हो, तुम्हारे वैसे ही मदसे युक्त होनेपर हम, यागपथकी प्राप्तिके लिये, … करते हैं।

४ वज्री इन्द्र, जिस स्तोत्रसे स्तुत होकर तुम अपने बलसे तुरत हमारा मनोरथ पूर्ण … हो; अभीष्ट-प्राप्तिके लिये घृतके समान उसी पवित्र स्तोत्रको जानो (ग्रहण करो)।

५ स्तुति द्वारा आराधनीय इन्द्र, इस स्तोत्रको ग्रहण करो। वह स्तोत्र समुद्रके समान … है। इन्द्र, उस स्तोत्रसे तुम सारी रक्षाओंके साथ हमें कल्याण देते हो।

६ दूर देशसे आकर इन्द्रने हमारी मैत्रीके लिये धन दिया है। इन्द्र, द्युलोकसे वृष्टिके … हमारे धनका विस्तार करते हुए तुम हमें श्रेय देनेकी इच्छा करते हो।

७ जब इन्द्र सबके प्रेरक आदित्यके समान द्यावापृथिवीको वृष्टि आदिसे बढ़ाते हैं, … इन्द्रकी पताकाएँ और इन्द्रके हाथोंमें अवस्थित वज्र हमें कल्याण देते हैं।

यदि प्रवृद्ध सत्पते सहस्रं महिषाँ अघः ।
आदित्त इन्द्रियं महि प्र वावृधे ॥८॥
इन्द्रः सूर्यस्य रश्मिभिर्न्यर्शसानमोषति ।
अग्निर्वनेव सासहिः प्र वावृधे ॥९॥
इयं त ऋत्वियावती धीतिरेति नवीयसी ।
सपर्यन्ती पुरुप्रिया मिमीत इत् ॥१०॥
गर्भो यज्ञस्य देवयुः क्रतुं पुनीत आनुषक् ।
स्तोमैरिन्द्रस्य वावृधे मिमीत इत् ॥११॥
सनिर्मित्रस्य पप्रथ इन्द्रः सोमस्य पीतये ।
प्राची वाशीव सुन्वते मिमीत इत् ॥१२॥
यं विप्रा उक्थवाहसोऽभिप्रमन्दुरायवः ।
घृतं न पिप्य आसन्यृतस्य यत् ॥१३॥

---

८ प्रवृद्ध और अनुष्ठाताओंके रक्षक इन्द्र, जिस समय तुमने सहस्र-सङ्ख्यक वृत्र आदि असुरोंका वध किया, उसके अनन्तर ही तुम्हारा महान् बल भली भाँति बढ़ा ।

९ जैसे आग (दावानल) वनोंको जलाती है, वैसे ही इन्द्र सूर्यकी किरणोंके द्वारा बाधक शत्रुको जलाते हैं। शत्रुओंको दबानेवाले इन्द्र भली भाँति बढ़ते हैं।

१० मेरी यह स्तुति तुम्हारे पास जाती है। वह स्तुति वसन्त आदिमें किये जाने योग्य यज्ञ-कार्य-वाली, अतीव अभिनव, पूजक और बहुत ही प्रसन्नताकारक है।

११ स्तोता इन्द्रके यज्ञका कर्त्ता है। वह इन्द्रके पानके लिये अनुषङ्गी सोमको "दशापवित्र"से पवित्र करता है। वह स्तोत्र द्वारा इन्द्रको वर्द्धित करता है और स्तोत्रोंसे इन्द्रके गुणोंकी सीमा बाँधता है।

१२ मित्र स्तोताके लिये दाता इन्द्रने गुण-गान करनेवाले अभिषव-कर्त्ताके वाक्यकी तरह धन-दानके लिये अपने शरीरको बढ़ा लिया। यह स्तुत वाक्य इन्द्रके गुणोंकी सीमा करता है।

१३ विप्र अथवा मेधावी और स्तोत्र-वाहक मनुष्य जिन इन्द्रको भली भाँति प्रमत्त करते हैं, इन इन्द्रके मुखमें घृतके समान यज्ञका हव्य सिक्त करूँगा।

उत स्वराजे अदितिः स्तोममिन्द्राय जीजनत् ।
पुरुप्रशस्तमूतय ऋतस्य यत् ॥१४॥

अभि वह्नय ऊतयेऽनूषत प्रशस्तये ।
न देव विव्रता हरी ऋतस्य यत् ॥१५॥

यत् सोममिन्द्र विष्णवि यद्वा घ त्रित आप्त्ये ।
यद्वा मरुत्सु मन्दसे समिन्दुभिः ॥१६॥

यद्वा शक्र परावति समुद्रे अधि मन्दसे ।
अस्माकमित् सुते रणा समिन्दुभिः ॥१७॥

यद्वासि सुन्वतो वृधो यजमानस्य सत्पते ।
उक्थे वा यस्य रण्यसि समिन्दुभिः ॥१८॥

देवन्देवं वोऽवस इन्द्रमिन्द्रं गृणीषणि ।
अधा यज्ञाय तुर्वणे व्यानशुः ॥१९॥

---

१४ अदितिने स्वयं शोभमान (स्वराट्) इन्द्रके लिये, रक्षाके निमित्त, अनेकोंके द्वारा सत्य-सम्बन्धी स्तोत्रको उत्पन्न किया ।

१५ यज्ञ-वाहक ऋत्विक् लोग रक्षा और प्रशंसाके लिये इन्द्रकी स्तुति करते हैं। हे इस समय विविध-कर्मा हरि नामक दोनों अश्व, यज्ञमें जो है, उसके लिये तुम्हें वहन करते हैं।

१६ हे इन्द्र, विष्णु. आप्तत्रित (राजर्षि) अथवा मरुतोंके आनेपर दूसरोंके यज्ञमें अन्य सोम पीकर प्रमत्त होते हो, तथापि हमारे सोमसे भली भाँति प्रमत्त होओ।

१७ इन्द्र, यद्यपि दूर देशमें द्रवशील सोमपानसे प्रमत्त होते हो, तथापि हमारे प्रस्तुत होनेपर उसके साथ भली भाँति रमण करो।

१८ सत्य पालक इन्द्र, तुम सोमाभिषव-कर्त्ता यजमानके वर्द्धक हो। तुम जिस यज्ञ उक्थ मन्त्रसे प्रसन्न होते हो, उसके सोमसे प्रसन्न होओ ।

१९ ऋत्विको, तुम्हारे रक्षणके लिये जिन इन्द्रकी मैं स्तुति करता हूँ, उन्हीं इन्द्रको स्तुतियाँ, शीघ्र भजन और यज्ञके लिये, व्याप्त करें ।

यज्ञेभिर्यज्ञवाहसं सोमेभिः सोमपातमम् ।
होत्राभिरिन्द्रं वावृधुर्व्यानशुः ॥२०॥
महीरस्य प्रणीतयः पूर्वीरुत प्रशस्तयः ।
विश्वा वसूनि दाशुषे व्यानशुः ॥२१॥
इन्द्रं वृत्राय हन्तवे देवासो दधिरे पुरः ।
इन्द्रं वाणीरनूषता समोजसे ॥२२॥
महान्तं महिना वयं स्तोमेभिर्हवनश्रुतम् ।
अर्कैरभि प्र णोनुमः समोजसे ॥२३॥
न यं विविक्तो रोदसी नान्तरिक्षाणि वज्रिणम् ।
अमादिदस्य तित्विषे समोजसः ॥२४॥
यदिन्द्र पृतनाज्ये देवास्त्वा दधिरे पुरः ।
आदित्ते हर्यता हरी ववक्षतुः ॥२५॥

२० हव्य, स्तुति और सोम द्वारा यज्ञमें लाने योग्य और सबसे अधिक सोम पान करनेवाले इन्द्रको स्तोता लोग वर्द्धित और व्याप्त करते हैं।

२१ इन्द्रका धन-प्रदान प्रचुर है, इन्द्रकी कीर्ति बहुत है। वह हव्य-दाता यजमानके लिये सारा धन व्याप्त करते हैं।

२२ वृत्र-वधके लिये देवोंने इन्द्रको (स्वामि-रूपसे) धारण किया था। समीचीन बलके लिये स्तुति-वचन इन्द्रका स्तव करते हैं।

२३ महिमामें महान् और आह्वान सुननेवाले इन्द्रकी, स्तोत्र द्वारा और पूजा-मन्त्र द्वारा, समीचीन बलकी प्राप्तिके लिये, बार-बार स्तुति करते हैं।

२४ जिन वज्रधर इन्द्रको द्यावापृथिवी और अन्तरीक्ष अपने पाससे अलग नहीं कर सकते, उन्हीं इन्द्रके बलसे बल लेनेके लिये संसार प्रदीप्त होता है।

२५ इन्द्र, जिस समय युद्धमें देवोंने तुम्हें सम्मुख धारण किया था, उसी समय कमनीय हरि नामक अश्वोंने तुम्हें वहन किया था।

यदा वृत्रं नदीवृतं शवसा वज्रिन्नवधीः ।
आदित्तो हर्यता हरी ववक्षतुः ॥२६॥
यदा ते विष्णुरोजसा त्रीणि पदा विचक्रमे ।
आदित्ते हर्यता हरी ववक्षतुः ॥२७॥
यदा ते हर्यता हरी वावृधाते दिवेदिवे ।
आदित्ते विश्वा भुवनानि येमिरे ॥२८॥
यदा ते मारुतीर्विशस्तुभ्यमिन्द्र नियेमिरे ।
आदित्ते विश्वा भुवनानि येमिरे ॥२९॥
यदा सूर्यममुं दिवि शुक्रं ज्योतिरधारयः ।
आदित्ते विश्व भुवनानि येमिरे ॥३०॥
इमान्त इन्द्र सुष्टुतिं विप्र इयर्ति धीतिभिः ।
जामिं पदेव पिप्रतीं प्राध्वरे ॥३१॥

---

२६ वज्रधर इन्द्र, जिस समय तुमने जलको रोकनेवाले वृत्रको बलके द्वारा मारा था, उसी
कमनीय हरि तुम्हें ले आये थे।

२७ जिस समय तुम्हारे (अनुज) विष्णुने अपने तीन पैरोंसे तीनों लोकोंको (वामनावतार
नापा था, उसी समय तुम्हें दोनों कमनीय हरि ले आये थे।

२८ इन्द्र, जब तुम्हारे दोनों कमनीय हरि प्रतिदिन बढ़े थे, उसके बाद ही तुम्हारे द्वारा
संसार नियमित होता है।

२९ इन्द्र, जिस समय तुम्हारी मरुद्रूप प्रजा सारे भूतोंको नियमित करती है, उसी समय तुम
संसारको नियमित करते हो।

३० इन्द्र, जिस समय इन निर्मल-ज्योति सूर्यको तुम द्युलोकमें स्थापित करते हो, उसी
तुम सारा संसार नियमित करते हो।

३१ इन्द्र, जैसे लोग संसारमें अपने बन्धुको उच्च स्थानमें ले जाते हैं, वैसे ही मेधावी स्तोता
प्रसन्नता-दायक सुन्दर स्तुतिको, परिचर्य्याके साथ, यज्ञमें तुम्हारे पास ले जाता है।

यदस्य धामनि प्रिये समीचीनासो अस्वरन् ।
नाभा यज्ञस्य दोहना प्राध्वरे ॥३२॥
सुवीर्यं स्वश्व्यं सुगव्यमिन्द्र दद्धि नः ।
होतेव पूर्वचित्तये प्राध्वरे ॥३३॥



३ अनुवाक । १३ सूक्त

इन्द्र देवता। कण्वगोत्रीय नारद ऋषि। उष्णिक् छन्द ।

इन्द्रः सुतेषु सोमेषु क्रतुं पुनीत उक्थ्यम् ।
विदे वृधस्य दक्षसो महान् हि षः ॥१॥
स प्रथमे व्योमनि देवानां सदने वृधः ।
सुपारः सुश्रवस्तमः समप्सुजित् ॥२॥
तमह्वे वाजसातय इन्द्रं भराय शुष्मिणम् ।
भवा नः सुम्ने अन्तमः सखा वृधे ॥३॥

३२ यज्ञमें इन्द्रके तेजके प्रीत होनेपर एकत्र स्तोता लोग जिस समय उत्तम रीतिसे स्तुति करते हैं, उस समय इन्द्र, नाभि-स्वरूप यज्ञके अभिषव-स्थान (वेदी) पर धन दो।

३३ इन्द्र, उत्तम वीर्य, उत्तम गौ और उत्तम अश्वसे युक्त धन हमें दो। मैंने प्रथम ही ज्ञान-लाभके लिये होताकी तरह यज्ञमें स्तव किया था।



१ सोमके प्रस्तुत होनेपर इन्द्र यज्ञ-कर्त्ता और स्तोताको पवित्र करते हैं। इन्द्र हीं वर्द्धक बलकी प्राप्तिके लिये महान् हुए हैं।

२ इन्द्र प्रथम विस्तीर्ण व्योम (विशेष रक्षक) देवसदन (स्वर्ग) में यजमानोंके वर्द्धक हैं। वह प्रारम्भ किये हुए कर्मके समापक हैं। अतीव यशसे युक्त जल-प्राप्तिके लिये वृत्रको जीतते हैं।

३ बलवान् इन्द्रको मैं बल-प्राप्ति-कर युद्धमें बुलाता हूँ। इन्द्र, धनके अभिलषित होनेपर तुम वर्द्धनके लिये हमारे सखा होओ।

इयन्त इन्द्र गिर्वणो रातिः क्षरति सुन्वतः ।
मन्दानो अस्य बर्हिषो विराजसि ॥४॥
नूनं तदिन्द्र दद्धि नो यत्त्वा सुन्वन्त ईमहे ।
रयिं नश्चित्रमाभरा स्वर्विदम् ॥५॥
स्तोता यत्ते विचर्षणिरतिप्रशर्धयद्गिरः ।
वया इवानु रोहते जुषन्त यत् ॥६॥
प्रत्नवज्जनया गिरः शृणुधी जरितुर्हवम् ।
मदेमदे ववक्षिथा सुकृत्वने ॥७॥
क्रीलन्त्यस्य सूनृता आपो न प्रवता यतीः ।
अया धिया य उच्यते पतिर्दिवः ॥८॥
उतो पतिर्य उच्यते कृष्टीनामेक इद्वशी ।
नमोवृधैरवस्युभिः सुते रण ॥९॥

---

४ स्तुतियों द्वारा भजनीय इन्द्र, तुम्हारे लिये सोमाभिषव-कर्त्ता यजमानकी दी हुई जाती है। मत्त होकर तुम उस यज्ञमें विराजो।

५ इन्द्र, सोमाभिषव-कर्त्ता जिस धनकी तुमसे प्रत्याशा करते हैं, वह धन तुम अवश्य दो। विचित्र और स्वर्ग-प्रापक धन भी हमारे लिये ले आओ।

६ इन्द्र, विशेषदर्शी स्तोता जिस समय तुम्हारे लिये शत्रुओंकी पराजय-समर्थ स्तुति है और जब सकल वाक्य तुमको प्रसन्न करते हैं, तब शाखाके समान सारे गुण तुमपर करते हैं।

७ इन्द्र, पहलेके समान स्तोत्र उत्पन्न करो और स्तोताका आह्वान सुनो। जिस सोमके द्वारा प्रमत्त होते हो, उसी समय शोभन कार्य करनेवाले यजमानके लिये फल दो।

८ इन्द्रके सत्य वचन निम्नगामी जलके समान विहार करते हैं। स्वर्ग-पति इन्द्र इस तिके द्वारा कीर्त्तित होते हैं।

९ वशवाले एक इन्द्र ही मनुष्योंके पालक कहे गये हैं। वही तुम इन्द्र स्तोत्र द्वारा और रक्षणेच्छुओंके साथ सोमाभिषवमें रमण करो।

स्तुहि श्रुतं विपश्चितं हरी यस्य प्रसक्षिणा ।
गन्तारा दाशुषो गृहं नमस्विनः ॥१०॥
तूतुजोनो महेमतेऽश्वेभिः प्रुषितप्सुभिः ।
आयाहि यज्ञमाशुभिः शमिद्धि ते ॥११॥
इन्द्र शविष्ठ सत्पते रयिं गृणत्सु धारय ।
श्रवः सूरिभ्यो अमृतं वसुत्वनम् ॥१२॥
हवे त्वा सूर उदिते हवे मध्यन्दिने दिवः ।
जुषाण इन्द्र सप्तिभिर्न आ गहि ॥१३॥
आ तु गहि प्र तु द्रव मत्स्वा सुतस्य गोमतः ।
तन्तुं तनुष्व पूर्व्यं यथा विदे ॥१४॥
यच्छक्रासि परावति यदर्वावति वृत्रहन् ।
यद्वा समुद्रे अन्धसोऽवितेदसि ॥१५॥

---

१० स्तोता, तुम विद्वान और विख्यात इन्द्रकी स्तुति करो । इन्द्रके शत्रु-जेता दोनों अश्व नमस्कार और हविवाले यजमानके घरमें जाते हैं ।

११ तुम्हारी बुद्धि महाफल-दायिका है। तुम स्निग्ध हो । शीघ्रगामी अश्वके साथ यज्ञमें आगमन करो; क्योंकि उस यज्ञमें ही तुम्हें सुख है ।

१२ श्रेष्ठ, बली और साधु-रक्षक इन्द्र, हम स्तुति करते हैं; हमें धन दो । स्तोताओंको अविनाशी और व्यापक अन्न वा यश दो ।

१३ इन्द्र, सूर्योदय होनेपर मैं तुम्हें बुलाता हूँ; दिनके मध्य भागमें तुम्हें बुलाता हूं । प्रसन्न होकर गतिशील अश्वोंके साथ आओ ।

१४ इन्द्र, शीघ्र आओ और सोम जहाँ है, वहाँ शीघ्र जाओ । दुग्ध-मिश्रित अभिषुत सोमसे प्रीत होओ । अनन्तर मैं जैसा जानता हूँ, वैसे ही पूर्व-कृत विस्तृत यज्ञको निष्पन्न करो ।

१५ हे शक्र और वृत्रघ्न, यदि तुम दूर देशमें हो, यदि समीपमें हो, यदि अन्तरीक्षमें हो, तथापि उन सब स्थानोंसे आकर और सोमपान करके रक्षक होओ ।

इन्द्रं वर्धन्तु नो गिर इन्द्रं सुतास इन्दवः ।
इन्द्रे हविष्मतीर्विशो अराणिषुः ॥१६॥

तमिद्विप्रा अवस्यवः प्रवत्वतीभिरूतिभिः ।
इन्द्रं क्षोणीरवर्द्धयन्वया इव ॥१७॥

त्रिकद्रुकेषु चेतनं देवासो यज्ञमत्नत ।
तमिद्वर्धन्तु नो गिरः सदावृधम् ॥१८॥

स्तोता यत्ते अनुव्रत उक्थान्यृतुथा दधे ।
शुचिः पावक उच्यते सो अद्भुतः ॥१९॥

तदिद्रुद्रस्य चेतति यह्वं प्रत्नेषु धामसु ।
मनो यत्रा वि तद्दधुर्विचेतसः ॥२०॥

यदि मे सख्यमावर इमस्य पाह्यन्धसः ।
येन विश्वा अति द्विषो अतारिम ॥२१॥

---

१६ हमारी स्तुतियाँ इन्द्रको वर्द्धित करें। अभिषोत सोम इन्द्रको वर्द्धित करें। हविष्मान् इन्द्रके प्रति रत हुए हैं।

१७ मेधावी और रक्षाभिलाषी उन इन्द्रको ही तृप्तिकर आहुतियों द्वारा वर्द्धित करते हैं। पृ समस्त प्राणी इन्द्रको वृक्ष-शाखाकी तरह वर्द्धित करते हैं।

१८ "त्रिकद्रुक" नामक यज्ञमें देवोंने चैतन्य-दाता इन्द्रका मान किया था; हमारी स्तुतियाँ सदा वर्द्धक इन्द्रको वर्द्धित करें।

१९ इन्द्र, तुम्हारे स्तोता अनुकूलकर्मा होकर समय-समयपर उक्थोंका उच्चारण करते अद्भुत, शुद्ध और पावक (दूसरोंको पवित्र करनेवाले) होनेसे स्तुत होते हो।

२० जिनके लिये विशिष्ट ज्ञानवाले व्यक्ति स्तोत्र उच्चारण करते हैं, वे ही रुद्र-पुत्र मरुद्गण प्राचीन स्थानोंमें हैं।

२१ इन्द्र, यदि तुम मुझे मैत्री प्रदान करो और इस सोम-रूप अन्नका पान करो, तो हम शत्रुओंका अतिक्रमण कर सकते हैं।

कदा त इन्द्र गिर्वणः स्तोता भवाति शन्तमः ।
कदा नो गव्ये अश्ये वसौ दधः ॥२२॥
उत ते सुष्टुता हरी वृषणा वहतो रथम् ।
अजुर्यस्य मदिन्तमं यमीमहे ॥२३॥
तमीमहे पुरुष्टुतं यह्वं प्रत्नाभिरूतिभिः ।
नि बर्हिषि प्रिये सदद्ध द्विता ॥२४॥
वर्धस्वासु पुरुष्टुत ऋषिष्टुताभिरूतिभिः ।
धुक्षस्व पिप्युषीमिषमवा च नः ॥२५॥
इन्द्र त्वमवितेदसीत्था स्तुवतो अद्रिवः ।
ऋतादियर्मि ते धियं मनोयुजम् ॥२६॥
इह त्या सधमाद्या युजानः सोमपीतये ।
हरी इन्द्र प्रतद्वसू अभि स्वर ॥२७॥

२२ स्तुति-पात्र इन्द्र, कब तुम्हारा स्तोता अत्यन्त सुखी होगा ? तुम कब हमें गौ, अश्व और निवास-योग्य धन दोगे ?

२३ अजर इन्द्र, भली भाँति स्तुत और काम-वर्षक हरि नामक दोनों अश्व तुम्हारा रथ हमारे पास ले आवें। तुम अतीव मदसे युक्त हो; हम तुम्हारे पास याचना करते हैं।

२४ महान् और अनेकों द्वारा स्तुत उन्हीं इन्द्रसे तृप्तिकर आहुतियोंके द्वारा हम याचना करते हैं। वह प्रसन्नता-दायक कुशोंपर बैठें। अनन्तर द्विविध (सोम और पुरोडाश) हव्य स्वीकार करें।

२५ बहुतों द्वारा स्तुत इन्द्र, तुम ऋषियों द्वारा स्तुत हो। अपने रक्षणोंके द्वारा हमें वर्द्धित करो और हमारे सामने प्रवृद्ध अन्न दान करो।

२६ वज्रधर इन्द्र, इस प्रकार तुम स्तोताके रक्षक हो। सत्यभूत, तुम्हारे स्तोत्रसे युक्त तुम्हारे प्रसन्नता-दायक कर्मको मैं प्राप्त करता हूँ।

२७ इन्द्र, प्रसिद्ध, प्रसन्न और विस्तीर्ण धनवाले दोनों अश्वोंको रथमें जोत करके इस यज्ञमें, सोम-पानके लिये, आओ।

अभि स्वरन्तु ये तव रुद्रासः सक्षत श्रियम् ।
उतो मरुत्वतीर्विशो अभि प्रयः ॥२८॥
इमा अस्य प्रतूर्तयः पदं जुषन्त यद्दिवि ।
नाभा यज्ञस्य सन्दधुर्यथा विदे ॥२९॥
अयं दीर्घाय चक्षसे प्राची प्रयत्यध्वरे ।
मिमीते यज्ञमानुषग्विचक्ष्य ॥३०॥
वृषायमिन्द्र ते रथ उतो ते वृषणा हरी ।
वृषा त्वं शतक्रतो वृषा हवः ॥३१॥
वृषा ग्रावा वृषा मदो वृषा सोमो अयं सुतः ।
वृषा यज्ञो यमिन्वसि वृषा हवः ॥३२॥
वृषा त्वा वृषणं हुवे वज्रिञ्चित्राभिरूतिभिः ।
वावन्थ हि प्रतिष्टुतिं वृषा हवः ॥३३॥

---

२८ तुम्हारे जो रुद्र-पुत्र मरुद्गण हैं, वे आश्रय-योग्य इस यज्ञमें आवें और मरु प्रजाएँ भी हमारे हव्यके पास आवें।

२९ इन्द्रकी ये हिंसक मरुत् आदि प्रजाएँ द्युलोकमें जिस स्थानमें हैं, उसकी सेवा करते हैं। हम लोग जैसे धन प्राप्त कर सकें, इस प्रकार यज्ञके नाभिप्रदेश (उत्तर वेदी) पर रहते

३० प्राचीन यज्ञ-गृहमें यज्ञ आरम्भ होनेपर ये इन्द्र द्रष्टव्य फलके लिये यज्ञको क्रम-बद्ध यज्ञको सम्पादित करते हैं ।

३१ इन्द्र, तुम्हारा यह रथ मनोरथ-पूरक है, तुम्हारे ये दोनों घोड़े काम-वर्षक हैं। (बहु-कर्मा) इन्द्र, तुम अभीष्ट-वर्षी हो और तुम्हारा आह्वान भी ईप्सित-फल-दाता है।

३२ अभिषव करनेवाला पत्थर अभीष्ट-वर्षी है, मत्तता मनोरथ-दायिनी है। यह अभिषुत सो काम-वर्षक है। जिस यज्ञको तुम प्राप्त करते हो, वह भी अभिलषित-वर्षक है। तुम्हारा आह्वान फल-दाता है।

३३ वज्रधर, तुम अभीष्ट-वर्षक हो। मैं हविका सेचन-कर्त्ता हूँ। मैं नानाविध स्तुतियों द्वारा बुलाता हूँ। तुम अपने लिये की गयी स्तुतिको ग्रहण करते हो; इसलिये तुम्हारा आह्वान अभीष्ट-

१४ सूक्त

इन्द्र देवता। कण्व-गोत्रीय गोसूक्ति और अश्वसूक्ति ऋषि। गायत्री छन्द।

यदिन्द्राहं यथा त्वमीशीय वस्व एक इत्। स्तोता मे गोषखा स्यात् ॥१॥
शिक्षेयमस्मै दित्सेयं शचीपते मनीषिणे। यदहं गोपतिः स्याम् ॥२॥
धेनुष्ट इन्द्र सूनृता यजमानाय सुन्वते। गामश्वं पिप्युषी दुहे ॥३॥
न ते वर्तास्ति राधस इन्द्र देवो न मर्त्यः। यद्दित्ससि स्तुतो मघम् ॥४॥
यज्ञ इन्द्रमवर्धयद्यद्भूमिं व्यवर्तयत्। चक्राण ओपशं दिवि ॥५॥
वावृधानस्य ते वयं विश्वा धनानि जिग्युषः। ऊतिमिन्द्रा वृणीमहे ॥६॥
व्यन्तरिक्षमतिरन्मदे सोमस्य रोचना। इन्द्रो यदभिनद्बलम् ॥७॥
उद्गा आजदङ्गिरोभ्य आविष्कृण्वन्गुहासतीः। अर्वाञ्चं नुनुदे बलम् ॥८॥

---

१ इन्द्र, जसे तुम्हीं केवल धनाधिपति हो, वैसे ही यदि मैं भी ऐश्वर्य-युक्त हो जाऊँ, तो मेरा स्तोता गो-युक्त हो जाय।

२ शक्तिमान् इन्द्र, यदि तुम्हारी कृपासे मैं गोपति हो जाऊँ, तो इस स्तोताको दान देनेकी इच्छा करूंगा और प्रार्थित धन दूंगा।

३ इन्द्र, तुम्हारी सत्यप्रिय और वर्द्धक स्तुति-रूप धेनु सोमाभिषव-कर्त्ताको गौ और अश्व देती है।

४ इन्द्र, तुम स्तुत होकर धन-दान करनेकी इच्छा करते हो। उस समय तुम्हारे धनका निवारक देवता वा मनुष्य नहीं है।

५ यज्ञने इन्द्रको वर्द्धित किया है। इसलिये कि, इन्द्रने द्युलोकमें मेघको सुलाते हुए पृथिवीको वृष्टि-दानसे सुस्थिर किया है।

६ इन्द्र, तुम वर्द्धन-शील और शत्रुओंके सारे धनोंके जेता हो। हम तुम्हारी रक्षा प्राप्त करेंगे।

७ सोम-जन्य मत्तताके होनेपर इन्द्रने दीप्तिमान् अन्तरीक्षको वर्द्धित किया है; क्योंकि उन्होंने बली मेघको भिन्न किया है।

इन्द्रने गुहामें छिपाई हुई गायोंको प्रकट करके अङ्गिरा लोगोंको प्रदान किया था और गायें चुरानेवाले पणियोंके नेता "बल" असुरको अधोमुख किया था।

इन्द्रेण रोचना दिवो दृह्लानि दृंहितानि च । स्थिराणि न पराणुदे ॥
अपामूर्मिर्मदन्निव स्तोम इन्द्राजिरायते । वि ते मदा अराजिषुः ॥
त्वं हि स्तोमवर्धन इन्द्रास्युक्थवर्धनः । स्तोतॄणामुत भद्रकृत् ॥
इन्द्रमित् केशिना हरी सोमपेयाय वक्षतः । उप यज्ञं सुराधसम् ॥
अपां फेनेन नमुचेः शिर इन्द्रोदवर्तयः । विश्वा यदजयः स्पृधः ॥
मायाभिरुत्सिसृप्सत इन्द्र द्यामारुरुक्षतः । अव दस्यूँरधूनुथाः ॥१४
असुन्वामिन्द्र संसदं विषूचीं व्यनाशयः । सोमपा उत्तरो भवन् ॥



१५ सूक्त

इन्द्र देवता । गोसूक्ति और अश्वसूक्ति ऋषि । उष्णिक् छन्द ।

तम्वभि प्र गायत पुरुहूतं पुरुष्टुतम् । इन्द्रं गीर्भिस्तविषमाविवासत ॥

---

९ इन्द्रने द्युलोकके नक्षत्रोंको बल-युक्त और दृढ़ किया था । नक्षत्रोंको उनके स्थानोंसे कोई नहीं सकता ।

१० इन्द्र, समुद्रकी तरङ्गोंके समान तुम्हारी स्तुतियाँ शीघ्र गमन करती हैं । तुम्हारा विशेष रूपसे दीप्ति प्राप्त करती हैं ।

११ इन्द्र, तुम स्तोत्र द्वारा वर्द्धनीय हो और उक्थ (शस्त्र नामक मन्त्र) द्वारा भी वर्द्ध तुम स्तोताओंके कल्याण-कर्ता हो ।

१२ केशवाले हरि नामके दोनों अश्व सोमपानके लिये शोभन दानवाले इन्द्रको यज्ञमें ले आ

१३ इन्द्र, जिस समय तुमने सारे शत्रुओं (असुरों) को जीता था, उस समय जलके फेनसे नमुचिके सिरको छिन्न किया था ।

१४ तुम मायाके द्वारा सर्वत्र फैलनेवाले हो । तुमने द्युलोकमें चढ़नेकी इच्छा करनेवाले (दस्युओं) को निम्नाभिमुख प्रेरित किया था ।

१५ इन्द्र, सोमपान करनेसे उत्कृष्टतर होते हुए तुम सोमाभिषवसे हीन जन-समुदायको विरोध कराकर, विनष्ट किया था ।

१ अनेकोंके द्वारा बुलाये गये और अनेकोंके द्वारा स्तव किये गये उन्हीं इन्द्रकी स्तुति वचनोंके द्वारा महान् इन्द्रकी परिचर्या करो ।

यस्य द्विवर्हसो बृहत् सहो दाधार रोदसी ।
गिरीँरज्राँ अपः स्वर्वृषत्वना ॥२॥

स राजसि पुरुष्टुतँ एको वृत्राणि जिघ्नसे ।
इन्द्र जैत्रा श्रवस्या च यन्तवे ॥३॥

तं ते मदं गृणीमसि वृषणं पृत्सु सासहिम् ।
उ लोककृत्नुमद्रिवो हरिश्रिय ॥४॥

येन ज्योतींष्यायवे मनवे च विवेदिथ ।
मन्दानो अस्य बर्हिषो वि राजसि ॥५॥

तदद्याचित्त उक्थिनोऽनु ष्टुवन्ति पूर्वथा ।
वृषपत्नीरपो जया दिवेदिवे ॥६॥

तव त्यदिन्द्रियं बृहत्तव शुष्ममुत क्रतुम् ।
वज्रं शिशाति धिषणा वरेण्यम् ॥७॥

---

२ दोनों स्थानोंमें इन्द्रका पूजनीय महाबल द्यावापृथिवीको धारण करता हैं । वह शीघ्रगामी मेघ और गमनशील जलको वीय द्वारा धारण करते हैं ।

३ अनेकोंके द्वारा स्तुत इन्द्र, तुम शोभा पाते हो । जीतने और सुनने योग्य धनको स्वाधीन करनेके लिये तुम अकेले ही वृत्र आदिका वध करते हो ।

४ वज्रधर इन्द्र, तुम्हारे हर्षकी हम प्रशंसा करते हैं । वह मनोरथ-पूरक, संग्राममें शत्रुओंके लिये अभिभव-कर्त्ता, स्थान विधाता और हरि नामक अश्वोंके द्वारा सेवनीय है ।

५ इन्द्र, जिस मद (हर्ष)के द्वारा "आयु" और "मनु"के लिये सूर्य आदि ज्योतियोंको तुमने प्रकाशित किया था, उसी हर्षसे प्रसन्न होकर तुम प्रवृद्ध यज्ञके कर्त्ता हुए हो ।

६ इन्द्र, प्राचीन समयके समान आज भी उक्थ मन्त्रोंका उच्चारण करनेवाले तुम्हारे उस बलकी प्रशंसा करते हैं । जिस जलके स्वामी पर्जन्य हैं, उसको तुम प्रतिदिन स्वाधान करो ।

७ इन्द्र, स्तुति तुम्हारे उस महान् वीर्यको और तुम्हारा बल तुम्हारे कर्म और वरणीय वज्रको तीक्ष्ण करते हैं ।

तव द्यौरिन्द्र पौंस्यं पृथिवी वर्धति श्रवः ।
त्वामापः पर्वतासश्च हिन्विरे ॥८॥
त्वां विष्णुर्बृहन् क्षयो मित्रो गृणाति वरुणः ।
त्वां शर्धो मदत्यनु मारुतम् ॥९॥
त्वं वृषा जनानां मंहिष्ठ इन्द्र जज्ञिषे ।
सत्रा विश्वास्वपत्यानि दधिषे ॥१०॥
सत्रा त्वं पुरुष्टुतँ एको वृत्राणि तोशसे ।
नान्य इन्द्रात् करणं भूय इन्वति ॥११॥
यदिन्द्र मन्मशस्त्वा नाना हवन्त ऊतये ।
अस्माकेभिर्नृभिरत्रा स्वर्जय ॥१२॥
अरं क्षयाय नो महे विश्वा रूपाण्याविशन् ।
इन्द्रं जैत्राय हर्षया शचीपतिम् ॥१३॥

८ इन्द्र, द्युलोक तुम्हारे बलको बढ़ाता है पृथिवी तुम्हारे यशको वर्द्धित करती है। ज
और मेघ तुम्हें प्रसन्न करते हैं।

९ इन्द्र महान् और निवास-कारण विष्णु, मित्र और वरुण तुम्हारी स्तुति करते हैं। म
तुम्हारी मत्तताके अनन्तर मत्त होते हैं।

१० तुम वर्षक और देवोंमें सर्वापेक्षा दाता हो। तुम सुन्दर पुत्रादिके साथ सा
धारण करते हो।

११ बहु-स्तुत इन्द्र तुम अकेले ही महान् शत्रुओंका विनाश करते हो। इन्द्रकी अपेक्षा
अधिकतर कर्म (वृत्र-वधादि) नहीं कर सकता।

१२ इन्द्र, जिस युद्धमें तुम रक्षाके लिये स्तोत्र द्वारा नाना प्रकारसे स्तुत होते हो, उसी
हमारे स्तोताओं द्वारा आहूत होकर शत्रु-बलको जीतो।

१३ स्तोता, हमारे महान् गृहके लिये पर्याप्त और परिव्याप्त रूप (इन्द्रगुण-जात) को
द्वारा व्याप्त करते हुए कर्म-पालक (शचीपति) इन्द्रकी, जीतने योग्य धनके लिये, स्तुति करो।

१६ सूक्त

इन्द्र देवता। इरिम्बिठि ऋषि। गायत्री छन्द।

प्र सम्राजं चर्षणीनामिन्द्रं स्तोता नव्यं गीर्भिः। नरं नृषाहं मंहिष्ठम् ॥१॥
यस्मिन्नुक्थानि रण्यन्ति विश्वानि च श्रवस्या। अपामवो न समुद्रे ॥२॥
तं सुष्टुत्या विवासे ज्येष्ठराजं भरे कृत्नुम्। महो वाजिनं सनिभ्यः ॥३॥
यस्यानूना गभीरा मदा उरवस्तरुत्राः। हर्षुमन्तः शूरसातौ ॥४॥
तमिद्धनेषु हितेष्वधिवाकाय हवन्ते। येषामिन्द्रस्ते जयन्ति ॥५॥
तमिच्च्यौत्नैरार्यन्ति तं कृतेभिश्चर्षणयः। एष इन्द्रो वरिवस्कृत् ॥६॥
इन्द्रो ब्रह्मेन्द्र ऋषिरिन्द्रः पुरू पुरुहूतः। महान्महीभिः शचीभिः ॥७॥
स स्तोम्यः स हव्यः सत्यः सत्वा तुविकूर्मिः। एकश्चित् सन्नभिभूतिः ॥८॥

---

१ मनुष्योंके सम्राट् इन्द्रकी स्तुति करो। इन्द्र स्तुति द्वारा स्तुत्य, नेता, शत्रुओंके अभिभव-कर्त्ता और सर्वापेक्षा दाता हैं।

२ जैसे जल-तरङ्गें समुद्रमें शोभा पाती हैं, वैसे ही उक्थ और सुनने योग्य हविष्मान् अन्न इन्द्रमें शोभा पाते हैं।

३ मैं शोभन स्तुति द्वारा, धन-प्राप्तिके लिये, उन इन्द्रकी सेवा करता हूं। इन्द्र प्रशस्ततम देवोंमें शोभा पाते हैं। संग्राममें महान् कार्य करते हैं। वह बली हैं।

४ इन्द्रका मद महान्, गभीर, विस्तीर्ण, शत्रु-तारक और शूरोंके युद्धमें प्रसन्नता-युक्त हैं।

५ धन-लाभ होनेपर उन्हीं इन्द्रको, पक्षपातके लिये, स्तोता लोग बुलाते हैं। जिनके इन्द्र हैं, वह जय प्राप्त करते हैं।

६ बलकर स्तोत्रों द्वारा उन इन्द्रको ही ईश्वर बनाया जाता है। कर्म द्वारा मनुष्य उन्हें ईश्वर बनाते हैं। इन्द्र ही धनके कर्त्ता होते हैं।

७ इन्द्र सबसे अधिक, ऋषि, बहुतों द्वारा आहूत हैं। वह महान् कार्यों (वृत्र-बधादि) के द्वारा महान् हैं।

८ वह इन्द्र स्तोत्र और आह्वानके योग्य हैं। वह साधु, शत्रुओंको अवसाद देनेवाले, बहुकर्मा और एक होनेपर भी शत्रुओंके अभिभविता हैं।

तमर्केभिस्तं सामभिस्तं गायत्रैश्चर्षणयः । इन्द्रं वर्धन्ति क्षितयः ॥९॥
प्रणेतारं वस्यो अच्छा कर्तारं ज्योतिः समत्सु । सासह्वांसं युधामित्रान् ॥१०॥
स नः पप्रिः पारयाति स्वस्ति नावा पुरुहूतः । इन्द्रो विश्वा अति द्विषः ॥११॥
स त्वं न इन्द्र वाजेभिर्दशस्या च गातुया च । अच्छा च नः सुम्नं नेषि ॥१२॥

———०———

१७ सूक्त

इन्द्र देवता । इरिम्बिठि ऋषि । गायत्री, बृहती और सतोबृहती छन्द ।

आयाहि सुषुमा हि त इन्द्र सोमं पिबा इमम् । एदं बर्हिः सदो मम ॥१॥
आ त्वा ब्रह्मयुजा हरी वहतामिन्द्र केशिना । उप ब्रह्माणि नः शृणु ॥२॥
ब्रह्माणस्त्वा वयं युजा सोमपामिन्द्र सोमिनः । सुतावन्तो हवामहे ॥३॥

९ द्रष्टा और मनुष्य इन्द्रको पूजा-साधक (यजुर्वेदीय) मन्त्रों द्वारा वर्द्धित करते हैं, (सामवेदीय) मन्त्रों द्वारा वर्द्धित करते हैं और उक्थ वा गायत्री आदि छन्दोंसे युक्त (ऋग्वेदीय) मन्त्रों द्वारा वर्द्धित करते हैं ।

१० इन्द्र प्रशंसनीय धनके प्रापक, युद्धमें ज्योतिके प्रकाशक और आयुध द्वारा शत्रुओंके अभिभवकर हैं ।

११ इन्द्र पूरयिता और बहुतों द्वारा बुलाये गये हैं । इन्द्र हमें शत्रुओंसे नौका द्वारा निर्विघ्न लगावें ।

१२ इन्द्र, तुम हमें बल द्वारा धन प्रदान करो । हमारे लिये मार्ग प्रदान करो । हमारे लिये सुख प्रदान करो ।

———

१ इन्द्र, आओ । तुम्हारे लिये सोम अभिषुत हुआ है । इस सोमको पियो । मेरे इस कुशके ऊपर बैठो ।

२ इन्द्र, मन्त्रों द्वारा योजित और केशवाले हरि नामके अश्व तुम्हें ले आवें । तुम इस यज्ञमें हमारे स्तोत्रको सुनो ।

३ इन्द्र, हम स्तोता (ब्राह्मण) हैं । तुम्हें योग्य स्तोत्र द्वारा बुलाते हैं । हम सोमके युक्त अभिषुत सोमवाले हैं । हम सोमपाता इन्द्रको बुलाते हैं ।

सुशिप्रिन्नन्धसः ॥४॥

आ नो याहि सुतावतोस्माकं सुष्टुतीरुप । पिबा सुशिप्रिन्नन्धसः ॥४॥
आ ते सिञ्चामि कुक्ष्योरनु गात्रा विधावतु । गृभाय जिह्वया मधु ॥५॥
स्वादुष्टे अस्तु संसुदे मधुमान्तन्वे तव । सोमः शमस्तु ते हृदे ॥६॥
अयमुत्वा विचर्षणे जनीरिवाभि संवृतः । प्र सोम इन्द्र सर्पतु ॥७॥
तुविग्रीवो वपोदरः सुबाहुरन्धसो मदे । इन्द्रो वृत्राणि जिघ्नते ॥८॥
इन्द्र प्रेहि पुरस्त्वं विश्वस्येशान ओजसा । वृत्राणि वृत्रहञ्जहि ॥९॥
दीर्घस्ते अस्त्वंकुशो येना वसु प्रयच्छसि । यजमानाय सुन्वते ॥१०॥
अयन्त इन्द्र सोमो निपूतो अधि बर्हिषि । एहीमस्य द्रवा पिब ॥११॥
शाचिगो शाचिपूजनायं रणाय ते सुतः । आखण्डल प्र हूयसे ॥१२॥

४ इन्द्र, हम अभिषुत सोमवाले हैं । हमारे सामने आओ । हमारी सुन्दर स्तुतियोंको जानो । शोभन शिरस्त्राणवाले इन्द्र, अन्न (सोम) भक्षण या पान करो ।

५ इन्द्र, तुम्हारे दाहिने और बायें उदरको मैं सोम पूरण करता हूँ । वह सोम तुम्हारे गात्रोंको व्याप्त करें । मधुर सोमको जीभसे ग्रहण करो ।

६ इन्द्र, सुन्दर दानवाले तुम्हारे शरीरके लिये यह माधुर्यसे युक्त सोम स्वादिष्ट हो । यह सोम तुम्हारे हृदयके लिये सुख-जनक हो ।

७ विशेष द्रष्टा (लोकपति) इन्द्र, स्त्रीके समान संवृत (ढका हुआ) होकर यह सोम तुम्हारे पास जाय ।

८ विस्तृत कन्धावाले, स्थूल उदरवाले और सुन्दर भुजावाले इन्द्र अन्न-रूप सोमकी मत्तता होनेपर वृत्र आदि शत्रुओंका विनाश करते हैं ।

९ इन्द्र, बलके कारण तुम सारे संसारके स्वामी होकर हमारे आगे गमन करो । वृत्रघ्न इन्द्र, तुम शत्रुओंका बध करो ।

१० जिससे तुम सोमका अभिषव करनेवाले यजमानको धन देते हो, वह तुम्हारा अङ्कुश (आकर्षण करनेवाला आयुध) दीर्घ हो ।

११ इन्द्र, तुम्हारे लिये यह सोम वेदीपर बिछे हुए कुश विशेष रूपसे शोधित किया हुआ है । इस समय इस सोमके सम्मुख आओ । शीघ्र पास जाओ और पियो ।

१२ शक्तिशाली गौओंवाले और प्रसिद्ध पूजावाले इन्द्र, तुम्हारे सुखके लिये सोम अभिषुत हुआ है । हे आखण्डल (शत्रु-खण्डयिता), उत्कृष्ट स्तुतियोंके द्वारा तुम आहूत होते हो ।

यस्ते शृंगवृषो नपात् प्रणपात् कुण्डपाय्यः ।
न्यस्मिन् दध्र आ मनः ॥१३॥
वास्तोष्पते ध्रुवा स्थूणांसत्रं सौम्यानाम् ।
द्रप्सो भेत्ता पुरां शश्वतीनामिन्द्रो मुनीनां सखा ॥१४॥
पृदाकुसानुर्यजतो गवेषण एकः सन्नभि भूयसः ।
भूर्णिमश्वं नयत्तुजा पुरोगृभेन्द्रं सोमस्य पीतये ॥१५॥

१८ सूक्त

अष्टमके अश्विद्वय, नवमके अग्नि, सूर्य और वायु तथा अवशिष्टके आदित्य देवता हैं।
इरिन्बिठि ऋषि । उष्णिक् छन्द ।

इदं ह नूनमेषां सुम्नं भिक्षेत मर्त्यः ।
आदित्यानामपूर्व्यं सवीमनि ॥१॥
अनर्वाणो ह्येषां पन्था आदित्यानाम् ।
अदब्धाः सन्ति पायवः सुगेवृधः ॥२॥

---

१३ हे शृङ्गवृषा नामक ऋषिके पुत्र इन्द्र, तुम्हारा जो उत्तम रक्षक कुण्डपायी यज्ञ (जिसमें कुण्डसे सोम पिया जाता है) है, उसमें ऋषियोंने मन लगाया है।

१४ गृहपति इन्द्र, गृहाधार स्तम्भ सुदृढ़ हो । हम सोम-सम्पादक हैं । हमारे कन्धोंमें रक्षार्थ बल हो । क्षरण-शील सोमवाले और अनेक पुरियोंको तोड़नेवाले इन्द्र ऋषियोंके मित्र हों।

१५ सर्पके समान उच्च शिरवाले, याग-योग्य और गो-प्रापक इन्द्र अकेले होकर भी अनेक शत्रुओंको अभिभूत करते हैं। स्तोता मरण-शील और व्यापक इन्द्रको सोमपानके लिये हमारे सामने ले आते हैं

१ इस समय आदित्योंके निकट मनुष्य अपूर्ण सुखकी याचना करे।

२ इन आदित्योंके मार्ग दूसरोंके द्वारा नहीं गमन किये गये और अहिंसित हैं। फल-पालक मार्ग सुख-वर्द्धक हैं।

तत् सु नः सविता भगो वरुणो मित्रो अर्यमा ।
शर्म यच्छन्तु सप्रथो यदीमहे ॥३॥
देवेभिर्देव्यदितेऽरिष्टभर्मन्ना गहि ।
स्मत् सूरिभिः पुरुप्रिये सुशर्मभिः ॥४॥
ते हि पुत्रासो अदितेर्विदुर्द्वेषांसि योतवे ।
अंहोश्चिदुरुचक्रयोऽनेहसः ॥५॥
अदितिर्नो दिवा पशुमदितिर्नक्तमद्वयाः ।
अदितिः पात्वंहसः सदावृधा ॥६॥
उत स्या नो दिवा मतिरदितिरूत्या गमत् ।
सा शन्ताति मयस्करदप स्त्रिधः ॥७॥
उत त्या दैव्या भिषजा शं नः करतो अश्विना ।
युयुयातामितो रपो अप स्त्रिधः ॥८॥

३ हम जिस विस्तीर्ण सुखकी याचना करते हैं, उसी सुखको सविता, भग, मित्र, वरुण और अर्यमा हमें प्रदान करो।

४ देवो, अहिंसित-पोषक और बहुतों द्वारा प्रीयमाणा अदिति, प्राज्ञ और सुखदाता देवोंके साथ सुन्दर रूपसे आगमन करो।

५ अदितिके वे मित्रादि पुत्रगण द्वेषियोंको पृथक् करना जानते हैं। विस्तीर्ण कर्म-कर्त्ता और रक्षक लोग हमें पापसे अलग करना जानते हैं।

६ दिनमें हमारे पशुओंकी रक्षा अदिति (अखण्डनीया देवमाता) करें, सदा एकसी रहनेवाली अदिति रात्रिमें भी हमारे पशुओंकी रक्षा करें। सदा वर्द्धनशील रक्षण द्वारा हमें पापसे बचावें।

७ स्तुतियोग्य वह अदिति रक्षाके साथ दिनमें हमारे पास आवें। वह शान्तिदाता सुख दें। वह बाधकोंको दूर करें।

८ प्रख्यात देव-भिषक् अश्विनीकुमार हमें सुख दें। हमसे पापको हटावें। शत्रुओंको दूर करें।

शमग्निरग्निभिः करच्छं नस्तपतु सूर्यः ।
शं वातो वात्वरपा अपस्रिधः ॥९॥

अपामीवामप स्रिधमप सेधत दुर्मतिम् ।
आदित्यासो युयोतना नो अंहसः ॥१०॥

युयोता शरुमस्मदँ आदित्यास उतामतिम् ।
ऋधग्द्वेषः कृणुत विश्ववेदसः ॥११॥

तत् सु नः शर्म यच्छतादित्या यन्मुमोचति ।
एनस्वन्तं चिदेनसः सुदानवः ॥१२॥

यो नः कश्चिद्रिरिक्षति रक्षस्त्वेन मर्त्यः ।
स्वैः ष एवै रिरिषीष्ट युर्जनः ॥१३॥

समित्तमघमश्नवद् दुःशंसं मर्त्यं रिपुम् ।
यो अस्मत्रा दुर्हणावाँ उप द्वयुः ॥१४॥

---

९ नाना गार्हपत्य आदि अग्नियोंके द्वारा अग्निदेव हमारे रोगकी शान्ति करें। सुखद सूर्य तपें। पाप-ताप-शून्य होकर वायु बहें। शत्रुओंको दूर करें।

१० आदित्यगण, हमसे रोगको दूर करो। शत्रुओंको भी दूर करो। दुर्गतिको। आदित्यगण हमें पापोंसे दूर रख।

११ आदित्यो, हमसे हिंसकको अलग करो। दुर्बुद्धिको हमसे दूर करो। सर्वज्ञ शत्रुओंको हमसे पृथक् करो।

१२ शोभन-दान आदित्यो, तुम लोगोंका जो सुख पापी स्तोताको भी पापसे मुक्त उसे ही हमें दो।

१३ जो कोई मनुष्य हमें राक्षस-भावसे मारना चाहता है, वह अपने ही कार्यों जाय। वह मनुष्य दूर हो।

१४ जो दुष्कीर्त्ति मनुष्य हमें मारनेवाला और कपटी है, उसे पाप व्याप्त करे।

पाकत्रा स्थन देवा हृत्सु जानीथ मर्त्यम् ।
उप द्वयं चाद्वयु च वसवः ॥१५॥
आ शर्म पर्वतानामोतापां वृणीमहे ।
द्यावाक्षामारे अस्मद्रपस्कृतम् ॥१६॥
ते नो भद्रेण शर्मणा युष्माकं नावा वसवः ।
अति विश्वानि दुरिता पिपर्तन ॥१७॥
तुचे तनाय तत् सुनो द्राघीय आयुर्जीवसे ।
आदित्यासः सुमहसः कृणोतन ॥१८॥
यज्ञो हीलो वो अन्तर आदित्या अस्ति मृलत ।
युष्मे इद्वो अपि ष्मसि सजात्ये ॥१९॥
बृहद्वरूथं मरुतां देवं त्रातारमश्विना ।
मित्रमीमहे वरुणं स्वस्तये ॥२०॥
अनेहो मित्रार्यमन्नृवद्वरुण शंस्यम् ।
त्रिवरूथं मरुतो यन्त नश्छर्दिः ॥२१॥

१५ निवास-दाता आदित्यो, तुम परिपक्व-ज्ञान हो; इसलिये कपटी और अकपटी—दोनों प्रकारके मनुष्योंको तुम जानते हो।

१६ हम पर्वतीय और जलीय सुखका भजन करते हैं। द्यावापृथिवी, पापको हमसे दूर देशमें प्रेरित करो।

१७ वास-दाता आदित्यो, अपनी सुन्दर और सुखद नौकामें हमें सारे पापोंसे पार कराओ।

१८ आदित्यो, तुम शोभन तेजवाले हो। हमारे पुत्र, पौत्र और जीवनके लिये दीर्घतम (खूब लम्बी) आयु दो।

१९ आदित्यो, हमारा किया हुआ यज्ञ तुम्हारे पास ही वर्त्तमान है। तुम हमें सुखी करो। तुम्हारा बन्धुत्व प्राप्त करके हम सदा तुम्हारे ही होंगे।

२० मरुतोंके पालक इन्द्र, अश्विद्वय, मित्र और वरुणदेवके निकट प्रौढ़ और शीत, आतप आदिके निवारक गृहको मङ्गलके लिये, हम माँगते हैं।

२१ मित्र, अर्यमा, वरुण और मरुद्गण, तुम लोग हिंसा-शून्य, पुत्रादि-युक्त और स्तुत्य हो। शीत, आतप और वर्षासे निवारण करनेवाला घर हमें दो।

ये चिद्धि मृत्युबन्धव आदित्या मनवः स्मसि ।
प्र सू न आयुर्जीवसे तिरेतन ॥२२॥

१६ सूक्त

२६-२७ का देवता त्रसदस्यु राजाका दान हैं; ३४-३५ के आदित्य देवता; अवशिष्टके अग्नि हैं। कण्व-गोत्रीय सोभरि ऋषि। ककुप्, सतोबृहती, द्विपदा, विराट् उष्णिक् और पङ्क्ति छन्द।

तं गूर्धया स्वर्णरं देवासो देवमरतिं दधन्विरे ।
देवत्रा हव्यमोहिरे ॥१॥
विभूतरातिं विप्र चित्रशो चिष मग्निमीलिष्व यन्तुरम् ।
अस्य मेधस्य सोम्यस्य सोभरे प्रेमध्वराय पूर्व्यम् ॥२॥
यजिष्ठं त्वा ववृमहे देवं देवत्रा होतारममर्त्यम् । अस्य यज्ञस्य सुक्रतुम् ॥३॥
ऊर्जो नपातं सुभगं सुदीदितिमग्निं श्रेष्ठशोचिषम् ।
स नो मित्रस्य वरुणस्य सो अपामा सुम्नं यक्षते दिवि ॥४॥

२२ आदित्यो, जो मनुष्य मरणासन्न अथवा मृत्युके बन्धु हैं, उनके जीनेके लिये आयुको बढ़ाओ ।



१ स्तोता, प्रख्यात अग्निकी स्तुति करो। अग्नि स्वर्गमें हवि ले जानेवाले हैं। ऋत्विक् स्वामी अग्निदेवके पास जाते हैं और देवोंको पुरोडाशादि देते हैं।

२ मेधावी सोभरि, * प्रभूत-दानी, विचित्र-तेजस्वी, सोम-साध्य, इस यज्ञके नियन्ता और पुरातन अग्निकी, यज्ञ करनेके लिये, स्तुति करो।

३ अग्नि, तुम याज्ञिकोंमें श्रेष्ठ, देवोंमें अतिशय दानादिगुण-युक्त, होता, अमर और यज्ञके सुन्दर कर्त्ता हो। हम तुम्हारा भजन करते हैं।

४ अन्नके प्रदाता, शोभन-धन, सुन्दर प्रकाशक और प्रशस्य तेजवाले अग्निकी मैं स्तुति करता हूँ। वह हमारे लिये द्योतमान देव-यज्ञमें मित्र और वरुणके सुखको लक्ष्य करके और जलके देवताके सुखके लिये यज्ञ करें।

* सोभरि ऋषि अपना ही सम्बोधन करके कहते हैं। अनेक ऋषियोंने अपने ही सूक्तोंमें अपना ही सम्बोधन करके उपदेश दिया है अथवा स्तुति आदि की है।

यः समिधा य आहुती यो वेदेन ददाश मर्तो अग्नये ।
यो नमसा स्वध्वरः ॥५॥
तस्ये दर्वन्तो रहंयन्त आशवस्तस्य द्युम्नितमं यशः ।
न तमंहो देवकृतं कुतश्चन न मर्त्यकृतं नशत् ॥६॥
स्वग्नयो वो अग्निभिः स्याम सूनो सहस ऊर्जाम्पते ।
सुवीरस्त्वमस्मयुः ॥७॥
प्रशंसमानो अतिथिर्न मित्रियोऽग्नी रथो न वेद्यः ।
त्वे क्षेमासो अपि सन्ति साधवस्त्वं राजा रयीणाम् ॥८॥
सो अद्धा दाश्वध्वरोऽग्ने मर्तः सुभग स प्रशंस्यः ।
स धीभिरस्तु सनिता ॥९॥
यस्य त्वमूर्ध्वो अध्वराय तिष्ठसि क्षयद्वीरः स साधते ।
सो अर्वद्भिः सनिता स विपन्युभिः स शूरैः सनिता कृतम् ॥१०॥

---

५ जो मनुष्य समिधा (पलाश आदि इन्धन) से अग्निकी परिचर्या करता है, जो आहुति (आज्य आदिसे) अग्निकी परिचर्या करता है, जो वेदाध्ययन (ब्रह्मयज्ञ) से परिचर्या करता है और जो ज्योतिष्टोम आदि सुन्दर यज्ञोंसे युक्त होकर नमस्कार (चरु-पुरोडाश आदि) से अग्निकी परिचर्या करता है—

६ उसके ही व्यापक अश्व वेगवान् होते हैं, उसीका यश सबसे अधिक होता है तथा उसे देव-कृत और मनुष्य-विहित पाप नहीं व्याप्त करते ।

७ हे बलके पुत्र और हवि आदि अन्नोंके पति, हम तुम्हारे गार्हपत्यादि अग्नि-समूहके द्वारा शोभन अग्निवाले होंगे। शोभन वीरोंसे युक्त होकर तुम हमारी इच्छा करो ।

८ प्रशंसक अतिथिके समान अग्नि स्तोताओंके हितैषी और रथके समान फल-दाता हैं । अग्नि, तुममें समीचीन रक्षण है । तुम धनके राजा हो ।

९ शोभन-धन अग्नि, जो मनुष्य यज्ञवाला है, वह सत्य फलवाला हो । वह श्लाघनीय हो और स्तोत्रोंके द्वारा सम्भजन-परायण हो ।

१० अग्नि, जिस यजमानके यज्ञ-निष्पादनके लिये तुम ऊपर हो रहते हो, वह निवास-शील वीरोंसे (पुत्रादिसे) युक्त होकर सारे कार्योंको सिद्ध कर डालता है । वह अश्वों द्वारा की गयी विजयको भोगता है । वह मेधावियों और शूरोंके साथ सम्भजन-शील होता है ।

यस्याग्निर्वपुर्गृहे स्तोमं चनो दधीत विश्ववार्यः ।
हव्या वा वेविषद्विषः ॥११॥
विप्रस्य वा स्तुवतः सहसो यहो मक्षूतमस्य रातिषु ।
अवोदेवमुपरिमर्त्यं कृधि वसो विविदुषो वचः ॥१२॥
यो अग्निं हव्यदातिभिर्नमोभिर्वा सुदक्षमाविवासति ।
गिरा वाजिरशोचिषम् ॥१३॥
समिधा यो निशिती दाशददितिं धामभिरस्य मर्त्यः ।
विश्वेत् स धीभिः सुभगो जनाँ अति द्युम्नैरुद्गइव तारिषत् ॥१४॥
तदग्ने द्युम्नमा भर यत् सासहत् सदने कं चिदत्रिणम् ।
मन्युं जनस्य दूढ्यः ॥१५॥
येन चष्टे वरुणो मित्रो अर्यमा येन नासत्या भगः ।
वयं तत्ते शवसा गातुवित्तमा इन्द्रत्वोता विधेमहि ॥१६॥

---

११ संसारके स्वीकरणीय और रूपवान् (दीप्तिमान्) अग्नि जिस यजमानके गृहमें स्तो[त्र]
अन्नको धारण करते हैं, उसके हव्य देवोंको प्राप्त करते हैं ।

१२ बलके पुत्र और वासद अग्नि, मेधावी स्तोताके दानमें क्षिप्तकर्त्ता अभिज्ञाताके वचनको
नीचे और मनुष्योंके ऊपर करो ।

१३ जो यजमान हव्यदान और नमस्कार द्वारा शोभन बलवाले अग्निकी परिचर्या करता है
क्षिप्रगामी तेजवाले अग्निकी परिचर्या करता है, वह समृद्ध होता है ।

१४ जो मनुष्य इन अग्निके शरीरावयवों (गार्हपत्यादि) से अखण्डनीय अग्निकी, स[मिधा]
द्वारा, परिचर्या करता है, वह कर्मोंके द्वारा सौभाग्यवान् होकर द्योतमान यशके द्वारा, जलके
सारे मनुष्योंको लाँघ जाता है ।

१५ अग्नि, जो धन गृहमें राक्षस आदिको अभिभूत करता है और पाप-बुद्धि मनुष्यके क्रो[ध]
दवाता है, वही धन ले आओ ।

१६ अग्निके जिस तेजके द्वारा वरुण, मित्र और अर्यमा ज्योति प्रदान करते हैं तथा अश्विद्वय
और भग देवता जिसके द्वारा प्रकाश प्रदान करते हैं, हम बलके द्वारा सबसे अधिक स्तोत्र
और इन्द्रके द्वारा रक्षित होकर, अग्निदेव, तुम्हारे उसी तेजकी परिचर्या करते हैं ।

ते घेदग्ने स्वाध्यो ये त्वा विप्र निदधिरे नृचक्षसम् ।
विप्रासो देव सुक्रतुम् ॥१७॥
त इद्वेदिं सुभग त आहुतिं ते सोतुं चक्रिरे दिवि ।
त इद्वाजेभिर्जिग्युर्महद्धनं ये त्वे कामं न्येरिरे ॥१८॥
भद्रो नो अग्निराहुतो भद्रा रातिः सुभग भद्रो अध्वरः ।
भद्रा उत प्रशस्तयः ॥१९॥
भद्रं मनः कृणुष्व वृत्रतूर्ये येना समत्सु सासहः ।
अव स्थिरा तनुहि भूरि शर्धतां वनेमा ते अभिष्टिभिः ॥२०॥
ईले गिरा मनुर्हितं यं देवा दूतमरतिं न्येरिरे ।
यजिष्ठं हव्यवाहनम् ॥२१॥
तिग्मजम्भाय तरुणाय राजते प्रयो गायस्यग्नये ।
यः पिंशते सूनृताभिः सुवीर्यमग्निर्घृतेभिराहुतः ॥२२॥

१७ हे मेधावी और द्युतिमान् अग्नि, जो मेधावी ऋत्विक् मनुष्योंके साक्षि-स्वरूप और सुन्दर कर्म-वाले तुम्हें धारण करते हैं, वे ही उत्तम ध्यानवाले होते हैं।

१८ शोभन-धन अग्नि, वे ही यजमान तुम्हारे लिये वेदी प्रस्तुत करते हैं, आहुति देते हैं, द्योतमान (सौत्य) दिनमें सोमाभिषव करनेके लिये उद्योग करते हैं, वे ही बलके द्वारा यथेष्ट धन प्राप्त करते हैं और वे ही तुममें अभिलाषा पाते हैं।

१९ आहुत अग्नि हमारे लिये कल्याणकर हों। शोमन-धन अग्नि, तुम्हारा दान हमारे लिये कल्याणकर हो। यज्ञ कल्याणकारी हो। स्तुतियाँ कल्याणमयी हों।

२० संग्राममें मन कल्याणवाहक बने। इस मनके द्वारा तुम संग्राममें शत्रुओंको परास्त करो। अभिभव करनेवाले शत्रुओंके स्थिर और प्रभूत बलको पराजित करो। अभिगमन-साधक स्तोत्रोंके द्वारा हम तुम्हारा भजन करेंगे।

२१ प्रजापतिके द्वारा आहित (स्थापित) अग्निकी मैं पूजा करता हूँ। वह सबसे अधिक यज्ञ करनेवाले, हव्य-वाहक तथा ईश्वर हैं और देवोंके द्वारा दूत बनाकर भेजे गये हैं।

२२ तीक्ष्ण लपटोंवाले, चिर तरुण और शोभित अग्निको लक्ष्य कर हवीरूप अन्नका गाना गाओ। प्रिय और सत्य वचनोंसे स्तुत तथा घृत द्वारा आहुत होकर स्तोताको शोभन वीर्य दान करते हैं।

यदी घृतेभिराहुतो वाशीमग्निर्भरत उच्चाव च ।
असुर इव निर्णिजम् ॥२३॥
यो हव्यान्यैरयता मनुर्हितो देव आसा सुगन्धिना ।
विवासते वार्याणि स्वध्वरो होता देवो अमर्त्यः ॥२४॥
यदग्ने मर्त्यस्त्वं स्यामहं मित्रमहो अमर्त्यः ।
सहसः सूनवाहुत ॥२५॥
न त्वा रासीयाभिशस्तये वसो न पापत्वाय सन्त्य ।
न मे स्तोतामतीवा न दुर्हितः स्यादग्ने न पापया ॥२६॥

२३ घृतके द्वारा आहुत अग्नि जिस समय ऊपर और नीचे शब्द करते हैं, उस समय अ (बली) सूर्यके समान अपने रूपको प्रकाशित करते हैं ।

२४ मनुप्रजापतिके द्वारा स्थापित और, प्रकाशक जो अग्नि सुगन्धि मुखके द्वारा पास हव्यको भेजते हैं, वे ही सुन्दर यज्ञवाले, देवोंको बुलानेवाले, दीप्तिमान् और अग्नि धनकी परिचर्या करते हैं ।

२५ बलके पुत्र, घृतहुत और अनुकूल दीप्तिवाले अग्नि, मैं मरण-धर्मा हूं ; तुम्हारी उपासना तुम्हारे समान अमर हो जाऊँ ।

२६ वासक अग्नि, मिथ्यापवाद (हिंसा) के लिये तुमको मैं तिरस्कृत नहीं करूँगा । लिये तुम्हें नहीं तिरस्कृत करूँगा । मेरा स्तोता अयुक्त वचनोंके द्वारा तुम्हारी अवहेलना करेगा । सम्भजनीय अग्नि, मेरा दुर्बुद्धि शत्रु न हो । वह पाप-बुद्धि द्वारा मुझे बाधा न दे ।

* छठे अष्टकमें आठ बार असुर शब्दका व्यवहार हुआ है—

८ मण्डल	१९ सूक्त	२३ ऋचा	सूर्यके	सम्बन्धमें
,,	२० ,,	१७ ,,	मेघ वा बलके	,,
,,	२५ ,,	४ ,,	मित्र और वरुणके	,,
,,	२७ ,,	२० ,,	देवगणके	,,
,,	४२ ,,	१ ,,	वरुणके	,,
,,	९० ,,	६ ,,	इन्द्रके	,,
,,	९६ ,,	९ ,,	बलवान् शत्रुके	,,
,,	९७ ,,	१ ,,	,,	,,

इन ९६ और ९७ सूक्तोंमें शत्रुके अर्थमें असुर शब्द आया है । शेष स्थानोंमें देवोंके सम्बन्धमें ही हुआ है ।

पिता पुत्रः सुभृतो दुरोण आ देवाँ एतु प्र णो हविः ॥२७॥

पितुर्न पुत्रः सुभृतो दुरोण आ देवाँ एतु प्र णो हविः ॥२७॥
तवाहमग्न ऊतिभिर्नेदिष्ठाभिः सचेय जोषमा वसो ।
सदा देवस्य मर्त्यः ॥२८॥
तव क्रत्वा सनेयं तव रातिभिरग्ने तव प्रशस्तिभिः ।
त्वामिदाहुः प्रमतिं वसो ममाग्ने हर्षस्व दातवे ॥२९॥
प्र सो अग्ने तवोतिभिः सुवीराभिस्तिरते वाजभर्मभिः ।
यस्य त्वं सख्यमावरः ॥३०॥
तव द्रप्सो नीलवान्वाश ऋत्विय इन्धानः सिष्णवा ददे ।
त्वं महीनामुषसामसि प्रियः क्षपो वस्तुषु राजसि ॥३१॥
तमागन्म सोभरयः सहस्रमुष्कं स्वभिष्टिमवसे ।
सम्राजं त्रासदस्यवम् ॥३२॥
यस्य ते अग्ने अन्ये अग्नय उपक्षितो वयाइव ।
विपो न द्युम्ना नियुवे जनानां तव क्षत्राणि वर्धयन् ॥३३॥

---

२७ जैसे पुत्र पिताके लिये करता है, वैसे ही पोषण-कर्त्ता अग्नि यज्ञ-गृहमें देवोंके लिये हमारा हव्य प्रेरित करते हैं।

२८ वासक इन्द्र, निकट-वर्त्ती रक्षणके द्वारा मैं मनुष्य सदा तुम्हारी प्रसन्नताकी सेवा करूँ।

२९ अग्नि, तुम्हारे परिचरणके द्वारा मैं तुम्हारा भजन करूँगा। हव्य-दानके द्वारा और प्रशंसाके द्वारा तुम्हारा भजन करूँगा। वासक अग्नि, तुम प्रकृष्ट-बुद्धि हो। लोग तुम्हें मेरा रक्षक कहते हैं। अग्नि, दानके लिये प्रसन्न होओ।

३० अग्नि, तुम जिस यजमानकी मैत्री करते हो, वह तुम्हारी वीर और अन्नपूर्ण रक्षाके द्वारा बढ़ता है।

३१ सोमसे सिञ्चित, द्रवशील, नीड़वान्, शब्दायमान, वसन्तादि ऋतुओंमें उत्पन्न और दीप्तिशाली अग्नि, तुम्हारे लिये सोम गृहीत होता है। तुम विशाल उषाओंके मित्र हो। रात्रिकालमें तुम सारी वस्तुओंको प्रकाशित करते हो।

३२ रक्षणके लिये हम सोभरि लोग अग्निको प्राप्त हुए हैं। अग्नि बहु-तेजस्वी, सुन्दर रूपसे आनेवाले सम्राट् और त्रसदस्यु द्वारा स्तुत हैं।

३३ अग्नि, अन्य अग्नि (गार्हपत्यादि) वृक्षकी शाखाके समान तुम्हारे पास रहते हैं। मनुष्योंमें मैं, तुम्हारे बल, स्तुति द्वारा बढ़ाते हुए अन्य स्तोताओंके समान यशको प्राप्त करूँगा।

यमादित्यासो अद्रुहः पारं नयथ मर्त्यम् ।
मघोनां विश्वेषां सुदानवः ॥३४॥
यूयं राजानः कञ्चिच्चर्षणीसहः क्षयन्तं मानुषाँ अनु ।
वयं ते वो वरुण मित्रार्यमन्त्स्यामेदृतस्य रथ्यः ॥३५॥
अदान्मे पौरुकुत्स्यः पञ्चाशतं त्रसदस्युर्वधूनाम् ।
मंहिष्ठो अर्यः सत्पतिः ॥३६॥
उत मे प्रयियोर्वयियोः सुवास्त्वा अधि तुग्वनि ।
तिसृणां सप्ततीनां श्यावः प्रणेता भुवद्वसुर्दियानां पतिः ॥३७॥

२० सूक्त

मरुद्गण देवता । सोभरि ऋषि । ककुप् और बृहती छन्द ।

आ गन्ता मा रिषण्यत प्रस्थावानो मापस्थाता समन्यवः ।
स्थिराचिन्नमयिष्णवः ॥१॥

३४ द्रोह-शून्य और उत्तम दानवाले आदित्यो हविवाले, सभी लोगोंके बीच जिसे ले जाते हो, वह फल प्राप्त करता है ।

३५ शोभा-संयुक्त और शत्रुओंके अभिभविता आदित्यो, मनुष्योंमें घातक शत्रुओं जित करो । वरुण, मित्र और अर्यमा, ये ही तुम्हारे यज्ञके नेता होंगे ।

३६ पुरुकुत्सके पुत्र त्रसदस्युने मुझे पचास बन्धु दिये हैं । वे बड़े दानी, आर्य (स्वा स्तोताओंके पालक हैं ।

३७ सुन्दर निवासवाली नदीके तटपर श्यामवर्ण बैलोंके नेता और पूज्य धनशाली २१० गायोंके पति त्रसदस्युने धन और वस्त्र आदि दिये थे ।

१ प्रस्थानवाले मरुद्गण, आगमन करो । हमें नहीं मारना । समान-तेजस्क होकर तोंको भी कम्पित करते हो । हमें छोड़कर अन्यत्र नहीं रहना ।

वीलुपविभिर्मरुत ऋभुक्षण आ रुद्रासः सुदीतिभिः ।
इषानो अद्या गता पुरुस्पृहो यज्ञमा सोभरीयवः ॥२॥
विद्मा हि रुद्रियाणां शुष्ममुग्रं मरुतां शिमीवताम् ।
विष्णोरेषस्य मीहूलुषाम् ॥३॥
वि द्वीपानि पापतं तिष्ठद् दुच्छुनोभे युजन्त रोदसी ।
प्र धन्वान्यैरत शुभ्रखादयो यदेजथ स्वभानवः ॥४॥
अच्युता चिद्वो अज्मन्ना नानदति पर्वतासो वनस्पतिः ।
भूमिर्यामेषु रेजते ॥५॥
अमाय वो मरुतो यातवे द्यौर्जिहीत उत्तरा बृहत् ।
यत्रा नरो देदिशते तनूष्वात् वक्षांसि बाह्वोजसः ॥६॥
स्वधामनु श्रियं नरो महि त्वेषा अमवन्तो वृषप्सवः ।
वहन्ते अह्रुतप्सवः ॥७॥

२ प्रकाशमान निवासवाले रुद्रपुत्रो (मरुतो), सुन्दर दीप्तिवाले रथ-नेमि (चक्रके डंडों) के रथसे आगमन करो। सबके अभिलषणीय मरुतो, सोभरिकी (मेरी) अभिलाषा करते हुए, अन्नके साथ, आज हमारे यज्ञमें आओ।

३ हम कर्मवान् विष्णु और अभिलषणीय जलके सेचक रुद्र-पुत्र मरुतोंके उग्र बलको जानते हैं।

४ सुन्दर आयुध और दीप्तिवाले मरुतो, तुमलोग जिस समय कम्पन करते हो, उस समय सारे द्वीप पतित हो जाते हैं, स्थावर (वृक्षादि) पदार्थ दुःख प्राप्त करते हैं, द्यावापृथिवी काँप जाते हैं, गमनशील जल बहता है।

५ मरुतो, तुम्हारे संग्राममें जाते समय न गिरनेवाले मेघ और वनस्पति आदि बार-बार शब्द करते हैं, पृथिवी काँपती है।

६ मरुतो, तुम्हारे बलके गमनके लिये द्युलोक विशाल अन्तरीक्षको छोड़कर ऊपर भाग गया है। प्रचुर बलवाले और नेता मरुद्गण अपने शरीरमें दीप्त आभरण धारण करते हैं।

७ प्रदीप्त, बलवान्, वर्षणरूप, अकुटिल और नेता मरुद्गण हवीरूप अन्नके लिये महती शोभा धारण करते हैं।

गोभिर्वाणो अज्यते सोभरीणां रथे कोशे हिरण्यये ।
गोबन्धवः सुजातास इषे भुजे महान्तो नः स्परसे नु ॥८॥
प्रति वो वृषदञ्जयो वृष्णे शर्धाय मारुताय भरध्वम् ।
हव्या वृषप्रयाव्णे ॥९॥
वृषणश्वेन मरुतो वृषप्सुना रथेन वृषनाभिना ।
आ श्येनासो न पक्षिणो वृथा नरो हव्या नो वीतये गत ॥१०॥
समानमञ्ज्येषां विभ्राजन्ते रुक्मासो अधि बाहुषु ।
दविद्युतत्यृष्टयः ॥११॥
त उग्रासो वृषण उग्रबाहवो नकिष्टनूषु येतिरे ।
स्थिरा धन्वान्यायुधा रथेषु वोऽनीकेष्वधि श्रियः ॥१२॥
येषामर्णो न सप्रथो नाम त्वेषं शश्वतामेकमिद्भुजे ।
वयो न पित्र्यं सहः ॥१३॥

---

८ सोभरि आदि ऋषियोंके शब्द द्वारा हिरणमय रथके मध्य देशमें मरुतोंकी वीणा बज रही है । गोमातृक, शोभन-जन्मा और महानुभाव मरुद्गण हमारे अन्न, भोग और प्रीति प्रवृत्त हों ।

९ सोम-वर्षके अध्वर्यु ओ, वृष्टि-दाता मरुतोंके बलके लिये हव्य ले आओ । इस वर्षक वे सेचन करनेवाले और उत्तम गमनवाले होते हैं ।

१० नेता मरुद्गण सेचन-समर्थ, अश्वसे युक्त, वृष्टिदाताके रूपसे संयुक्त और वर्षक सम्पन्न रथपर, हव्यके पास, श्येन पक्षीके समान अनायास आगमन करें ।

११ मरुतोंका अभिव्यञ्जक आभरण एक ही प्रकारका है । प्रदीप्त सुवर्णमय हार हृदय-देशमें विराज रहा है । बाहुओंमें आयुध अतीव प्रकाशित होते हैं ।

१२ उग्र, वर्षक और उग्र बाहुओंवाले मरुद्गण अपने शरीरके रक्षणके लिये यत्न नहीं (आवश्यकता ही नहीं है)। मरुतो, तुम्हारे रथपर आयुध और धनुष् सुदृढ़ हैं । इसीलिये क्षेत्रमें, सेना-मुखपर, तुम्हारी ही विजय होती हैं ।

१३ जलके समान सर्वत्र विस्तीर्ण और दीप्त बहु-सङ्ख्यक मरुतोंका नाम एक ही पतृक दीर्घस्थायी अन्नके समान, भोगके लिये, यथेष्ट होता हैं ।

तान्वन्दस्व मरुतस्ताँ उप स्तुहि तेषां हि धूनीनाम् ।
अराणां न चरमस्तदेषां दानामह्ना तदेषाम् ॥१४॥
सुभगः स व ऊतिष्वास पूर्वासु मरुतो व्युष्टिषु ।
यो वा नूनमुतासति ॥१५॥
यस्य वा यूयं प्रति वाजिनो नर आ हव्या वीतये गथ ।
अभि ष द्युम्नैरुत वाजसातिभिः सुम्ना वो धूतयो नशत् ॥१६॥
यथा रुद्रस्य सूनवो दिवो वशन्त्यसुरस्य धसः । युवानस्वेतथेदसत् ॥१७॥
ये चाहन्ति मरुतः सुदानवः स्मन्मीह्लुषश्चरन्ति ये ।
अतश्चिदा न उप वस्यसा हृदा युवान आ ववृध्वम् ॥१८॥
यून ऊ षु नविष्ठया वृष्णः पावकाँ अभि सोभरे गिरा ।
गाय गा इव चर्कृषत् ॥१९॥
साहा ये सन्ति मुष्टिहेव हव्यो विश्वासु पृत्सु होतृषु ।
वृष्णश्चन्द्रान्न सुश्रवस्तमान् गिरा वन्दस्व मरुतो अह ॥२०॥

---

१४ उन मरुतोंकी वन्दना करो। उनके लिये स्तुति करो। आर्य-स्वामीके हीन सेवकके समान हम कम्पनोत्पादक मरुतोंके हीन सेवक हैं। उनका दान महिमासे युक्त हैं।

१५ मरुतो, तुम्हारा रक्षण पाकर स्तोता बीते हुए दिनोंमें सुभग हुआ था। जो स्तोता है, वह अवश्य ही तुम्हारा है।

१६ नेता मरुतो, हव्य-भक्षणके लिये जिस हविष्मान् यजमानके हव्यके पास जाते हो, हे कम्पक मरुतो, वह तुम्हारे द्युतिमान् अन्न और अन्न-सम्भोगके द्वारा तुम्हारे सुखको चारो ओर व्याप्त करता है।

१७ रुद्र-पुत्र, असुर (वृष्टिजल अथवा बल) के कर्त्ता और नित्य तरुण मरुद्गण जिस प्रकार अन्तरीक्षसे आकर हमारी कामना करें, यह स्तोत्र वैसा ही हो।

१८ जो सुन्दर दानवाले यजमान मरुतोंकी पूजा करते हैं और जो इन सेचन-कर्त्ताओंको हव्य द्वारा पूजित करते हैं, हम इन दोनों प्रकारके लोगोंमें समान हैं। हमारे लिये अतीव धनप्रद चित्तसे आकर मिलो।

१९ सोभरि, नित्य तरुण, अतीव वृष्टि-दाता और पावक मरुद्गणका अतीव अभिनव वाक्यों द्वारा, सुन्दर रूपसे, उसी प्रकार स्तव करो, जिस प्रकार कृषक अपने बैलोंकी स्तुति करता है।

२० सारे युद्धोंमें योद्धा लोगोंके आह्वान करनेपर मरुद्गण अभिभवकर्त्ता होते हैं। आह्वानके योग्य मल्लके समान सम्प्रति आह्लादकर, वर्षक तथा अतीव यशस्वी मरुतोंकी, शोभन वाक्योंके द्वारा, स्तुति करो।

सबन्धवः ।
गावश्चिद्घा समन्यवः सजात्येन मरुतः
रिहते ककुभो मिथः ॥२१॥
मर्तश्चिद्वो नृतवो रुक्मवक्षस उप भ्रातृत्वमायति ।
अधि नो गात मरुतः सदा हि व आपित्वमस्ति निध्रुवि ॥२२॥
मरुतो मारुतस्य न आ भेषजस्य वहता सुदानवः ।
यूयं सखायः सप्तयः ॥२३॥
याभिः सिन्धुमवथ याभिस्तूर्वथ याभिर्दशस्यथा क्रिविम् ।
मयो नो भूतोतिभिर्मयोभुवः शिवाभिरसचद्विषः ॥२४॥
यत् सिन्धौ यदसिक्न्यां यत् समुद्रेषु मरुतः सुबर्हिषः ।
यत् पर्वतेषु भेषजम् ॥२५॥
विश्वं पश्यन्तो बिभृथा तनूष्वा तेना नो अधि वोचत ।
क्षमा रपो मरुत आतुरस्य न इष्कर्ता विह्रुतं पुनः ॥२६॥

---

२१ समान-तेजस्क मरुतो, एक जाति होनेके कारण समान बन्धु होकर गायें चासे ओ लेहन करती—चाटती—हैं ।

२२ हे नर्त्तक और वक्षःस्थलमें उज्ज्वल आभरण पहननेवाले मरुतो, मनुष्य भी तुम्हारे लिये जाता है; इसलिये हमारे पक्षसे बात करो । सदा धारणीय यज्ञमें तुम्हारा बन्धुत्व सर्वदा ही

२३ सुन्दर दानवाले, गमनशील और सखा मरुतो, मरुत्सम्बन्धी (अर्थात् अपना) आओ ।

२४ मरुतो, जिससे तुम समुद्रकी रक्षा करते हो, जिससे यजमानके शत्रुकी हिं हो और जिससे तृष्णज (गोतम) को कूप प्रदान किया था, हे सुखोत्पादक और शत्रु-शून्य म सब प्रकारका कल्याण करनेवाली रक्षाके द्वारा हमारे लिये सुख उत्पन्न करो ।

२५ सुन्दर यज्ञवाले मरुतो, सिन्धुनद, चिनाव, समुद्र और पर्वतमें जो औषध है—

२६ तुम वह सब औषध पहचानकर हमारी शरीरकी चिकित्साके लिये ले आओ । मरु जिस प्रकार रोगीके रोगकी शान्ति हो, उसी प्रकार बाधित अङ्गको जोड़ो (पूरा करो) ।

प्रथम अध्याय समाप्त

द्वितीय अध्याय

४ अनुवाक । २१ सूक्त

इन्द्र देवता । अन्तकी दो ऋचाओंका चित्र राजाका दान देवता । कण्व-पुत्र सोभरि ऋषि । ककुप् और बृहती छन्द ।

वयमु त्वामपूर्व्य स्थूरं न कच्चिद्भरन्तोऽवस्यवः ।
वाजे चित्रं हवामहे ॥१॥
उप त्वा कर्मन्नूतये स नो युवोग्रश्चक्राम यो धृषत् ।
त्वामिद्ध्यवितारं ववृमहे सखाय इन्द्र सानसिम् ॥२॥
आयाहीम इन्दवोऽश्वपते गोपत उर्वरापते । सोमं सोमपते पिब ॥३॥
वयं हि त्वा बन्धुमन्तमबन्धवो विप्रास इन्द्र येमिम ।
या ते धामानि वृषभ तेभिरागहि विश्वेभिः सोमपीतये ॥४॥
सीदन्तस्ते वयो यथा गोश्रीते मधौ मदिरे विवक्षणे ।
अभि त्वामिन्द्र नोनुमः ॥५॥

---

१ अपूर्व इन्द्र, हम तुम्हें गुणी मनुष्यके समान सोमसे पोषण करके रक्षा-प्राप्तिकी कामनासे संग्राममें विविध-रूप-धारी तुम्हें बुलाते हैं ।

२ इन्द्र, अग्निष्टोम आदि यज्ञोंकी रक्षाके लिये हम तुम्हारे पास जाते हैं । इन्द्र शत्रुओंके अभिभव-कर्त्ता, तरुण और उग्र हैं । वह हमारे अभिमुख आवें । हम तुम्हारे सखा हैं । इन्द्र, तुम भजनीय और रक्षक हो । हम तुम्हें वरण करते हैं ।

३ अश्वपति, गोपालक, उर्वर-भूमि-स्वामी और सोमपति इन्द्र, आओ और सोमपान करो ।

४ हम विप्र बन्धु-हीन हैं । तुम बन्धुवाले हो । हम तुमसे बन्धुता करेंगे । काम-वर्षक इन्द्र, तुम्हारे जो शारीरिक तेज हैं, उनके साथ सोमपानके लिये आओ ।

५ इन्द्र, दुग्धादि मिश्रित, मदकर और स्वर्गलाभके कारण तुम्हारे सोममें हम पक्षियोंके सदृश रहकर तुम्हारी ही स्तुति करते हैं ।

अच्छा च त्वैना नमसा वदामसि किं मुहुश्चिद्वि दीधयः ।
सन्ति कामासो हरिवो ददिष्ट्वं स्मो वयं सन्ति नो धियः ॥६॥
नूत्ना इदिन्द्र ते वयमूती अभूम नहि नु ते अद्रिवः ।
विद्मा पुरा परीणसः ॥७॥
विद्मा सखित्वमुत शूर भोज्य मा ते ता वज्रिन्नीमहे ।
उतो समस्मिन्ना शिशीहि नो वसो वाजे सुशिप्र गोमति ॥८॥
यो न इदमिदं पुरा प्र वस्य आनिनाय तमु वः स्तुषे ।
सखाय इन्द्रमूतये ॥९॥
हर्यश्वं सत्पतिं चर्षणीसहं स हि ष्मा यो अमन्दत ।
आ तु नः स वयति गव्यमश्व्यं स्तोतृभ्यो मघवा शतम् ॥१०॥
त्वया ह स्विद्युजा वयं प्रति श्वसन्तं वृषभ ब्रुवीमहि ।
संस्थे जनस्य गोमतः ॥११॥

---

६ इन्द्र, इस स्तोत्रके साथ तुम्हारे सामने तुम्हारी ही स्तुति करेंगे। तुम बार-बार क्यों करते हो ? हरि अश्वोंवाले इन्द्र, हमें पुत्र-पशु आदिकी अभिलाषा है। तुम धनादिके दाता हो कर्म तुम्हारे ही पास हैं ।

७ इन्द्र, तुम्हारे रक्षणमें हम नये ही रहेंगे। वज्रधर इन्द्र, पहले हम तुम्हें सर्वत्र व्याप्त नहीं थे। इस समय तुम्हें जानते हैं ।

८ वली इन्द्र, हम तुम्हारी मैत्री जानते हैं । तुम्हारा भोज्य भी जानते हैं। वज्री इन्द्र, हम मैत्री और भोज्य (धन) माँगते हैं। सबको निवास देनेवाले और सुन्दर शिरस्त्राणवाले आदिसे युक्त सारे धनोंमें हमें तीक्ष्ण करो।

९ मित्र ऋत्विको और यजमानो, जो इन्द्र, पूर्व समयमें, यह सारा धन हमारे लिये थे, उन्हीं इन्द्रकी, तुम्हारी रक्षाके लिये, मैं स्तुति करता हूँ ।

१० हरितवर्ण अश्ववाले, सज्जनोंके पति, शत्रुओंको दबानेवाले इन्द्रकी स्तुति वही मनु है, जो तृप्त होता है। वे धनी इन्द्र सौ गायें और सौ अश्व हम स्तोताओंके लिये लाये थे।

११ अभीप्सित फलदाता इन्द्र, तुम्हें सहायक पाकर गोयुक्त मनुष्योंके साथ संग्राम क्रुद्ध शत्रुको हम निवारित करेंगे।

जयेम कारे पुरुहूत कारिणोऽभि तिष्ठेम दूढ्यः ।
नृभिर्वृत्रं हन्याम शूशुयाम चावेरिन्द्र प्र णो धियः ॥१२॥
अभ्रातृव्यो अना त्वमनापिरिन्द्र जनुषा सनादसि ।
युधेदापित्वमिच्छसे ॥१३॥
नकी रेवन्तं सख्याय विन्दसे पीयन्ति ते सुराश्वः ।
यदा कृणोषि नदनुं समूहस्यादित् पितेव हूयसे ॥१४॥
मा ते अमाजुरो यथा मूरास इन्द्र सख्ये त्वावतः ।
नि षदाम सचा सुते ॥१५॥
मा ते गोदत्र निरराम राधस इन्द्र मा ते गृहामहि ।
दृह्ला चिदर्यः प्र मृशाभ्या भर न ते दामान आदभे ॥१६॥
इन्द्रो वा घेदियन्मघं सरस्वती वा सुभगा ददिर्वसु ।
त्वं वा चित्र दाशुषे ॥१७॥

---

१२ बहुतोंके द्वारा बुलाने योग्य इन्द्र, हम संग्राममें हिंसकोंको जीतेंगे। हम पाप-बुद्धियोंको हरावेंगे। मरुतोंकी सहायतासे हम वृत्रका वध करेंगे। हम अपने कर्म बढ़ावेंगे। इन्द्र, हमारे सारे कर्मोंक रक्षा करो।

१३ इन्द्र, जन्म-कालसे ही तुम शत्रु-शून्य हो और चिर कालसे बन्धु-हीन हो। जो मैत्री तुम चाहते हो, उसे केवल युद्ध द्वारा प्राप्त करते हो।

१४ इन्द्र, बन्धुताके लिये केवल धनी (अयाज्ञिक) मनुष्यको क्यों नहीं आश्रित करते? इसलिये कि, अयाज्ञिक मनुष्य सुरा (मद्य) पान करके प्रमत्त होते और तुम्हारी हिंसा करते हैं। जिस समय तुम स्तोताको अपना समझ कर धन आदि देते हो, उस समय वह तुम्हें पिता समझ कर बुलाता है।

१५ इन्द्र, तुम्हारे समान देवताके बन्धुत्वसे वञ्चित होकर हम सोमाभिषव-शून्य न होने पावें। सोमाभिषव होनेपर हम एकत्र उपवेशन करेंगे।

१६ गोदाता इन्द्र, हम तुम्हारे हैं। हम धन-शून्य न होने पावें। हम दूसरेके पाससे धन न ग्रहण करें। तुम स्वामी हो। हमारे पास तुम दृढ़ धन दो। तुम्हारे दानकी कोई हिंसा नहीं कर सकता।

१७ मैं हव्यदाता हूँ। क्या इन्द्रने मुझे (सोभरिको) यह दान दिया है? अथवा शोभन-धना सरस्वतीने दिया है? अथवा हे चित्र (चित्र राजा नामक यजमान), तुमने ही दिया है?

चित्र इद्राजा राजका इदन्यके यके सरस्वतीमनु ।
पर्जन्य इव ततनद्धि वृष्टया सहस्रमयुता ददत् ॥१८॥

२२ सूक्त

अश्विद्वय देवता। कण्व-पुत्र सोभरि ऋषि। ककुप्, बृहती और अनुष्टुप् छन्द ।

ओ त्यमह्व आ रथमद्या दंसिष्ठमूतये ।
यमश्विना सुहवा रुद्रवर्तनी आ सूर्यायै तस्थथुः ॥१॥
पूर्वापुषं सुहवं पुरुस्पृहं भुज्युं वाजेषु पूर्व्यम् ।
सचनावन्तं सुमतिभिः सोभरे विद्वेषसमनेहसम् ॥२॥
इह त्या पुरुभूतमा देवा नमोभिरश्विना ।
अर्वाचीना स्ववसे करामहे गन्तारा दाशुषो गृहम् ॥३॥
युवो रथस्य परि चक्रमीयत ईर्मान्यद्वामिषण्यति ।
अस्माँ अच्छा सुमतिर्वां शुभस्पती आ धेनुरिव धावतु ॥४॥

---

१८ जैसे मेघ वृष्टि द्वारा पृथिवीको प्रसन्न करता है, वैसे ही सरस्वती नदीके कि रहनेवाले अन्य राजाओंको सहस्र और अयुत (दश सहस्र) धन देकर चित्र राजा उन्हें प्र करते हैं।



१ अश्विद्वय, तुम सुन्दर आह्वानवाले और स्तूयमान मार्गवाले हो। सूर्याको वरण क लिये तुम लोग जिस रथपर चढ़े थे, आज, रक्षाके लिये, उसी दर्शनीय रथको बुलाता।

२ सोभरि, कल्याणवाहिनी स्तुतियोंके द्वारा इस रथकी स्तुति करो। यह रथ प्राचीन दे ताओंका पोषक, युद्धमें शोभन आह्वानवाला, बहुतोंके द्वारा अभिलषणीय, सबका संग्राममें अग्रगामी, सबका भजनीय, शत्रुओंका विद्वेषी और पाप-रहित है।

३ शत्रुओंके विजेता, प्रकाशमान और हव्यदाता यजमानके गृहपति अश्विद्वय, इस रक्षाके लिये नमस्कार द्वारा हम तुम्हें अपने अभिमुख करेंगे।

४ अश्विद्वय, तुम्हारे रथका एक चक्र स्वर्गलोक तक जाता है और दूसरा तुम्हारे साथ है। सारे कार्योंके-प्रेरक और जलपति अश्विनीकुमारो, तुम्हारी मङ्गलमयी बुद्धि, धेनुके समान, पास आवे।

रथो यो वाँ त्रिवन्धुरो हिरण्याभीशुरश्विना ।
परि द्यावापृथिवी भूषति श्रुतस्तेन नासत्या गतम् ॥५॥
दशस्यन्ता मनवे पूर्व्यं दिवि यवं वृकेण कर्षथः ।
ता वामद्य सुमतिभिः शुभस्पती अश्विना प्र स्तुवीमहि ॥६॥
उप नो वाजिनीवसू यातमृतस्य पथिभिः ।
येभिस्तृक्षिं वृषणा त्रासदस्यवं महे क्षत्राय जिन्वथः ॥७॥
अयं वामद्रिभिः सुतः सोमो नरा वृषण्वसू ।
आयातं सोमपीतये पिबतं दाशुषो गृहे ॥८॥
आ हि रुहतमश्विना रथे कोशे हिरण्यये वृषण्वसू ।
युञ्जाथां पीवरीरिषः ॥९॥
याभिः पक्थमवथो याभिरध्रिगुं याभिर्बभ्रुं विजोषसम् ।
ताभिर्नो मक्षू तूयमश्विना गतं भिषज्यतं यदातुरम् ॥१०॥

---

५ अश्विद्वय, तीन प्रकारके सारथि-स्थानोंवाला और सोनेका लगामवाला तुम्हारा प्रसिद्ध रथ द्यावापृथिवीको अपने प्रकाशसे अलङ्कृत करता है। नासत्यद्वय तुमलोग पूर्वोक्त रथसे आओ।

६ अश्विद्वय, द्युलोक (स्वर्ग) में स्थित प्राचीन जलको मनुके लिये देकर तुमने लाङ्गल (हल) से यव (जौ) की खेती की थी या मनुष्योंको कृषि-कार्यकी शिक्षा दी थी। जल-पालक अश्विद्वय, आज सुन्दर स्तुति द्वारा हम तुम्हारी स्तुति करते हैं।

७ अन्न और धनवाले अश्विद्वय, यज्ञ-मार्गसे हमारे पास आओ। धनको सेचन अथवा दान करनेवाले अश्विद्वय, इसी मार्गसे तुमने त्रसदस्युके पुत्र तृक्षिको प्रचुर धन देकर तृप्त किया था।

८ नेता और वर्षणशील धनवाले अश्विद्वय, तुम्हारे लिये पत्थरोंसे यह सोम अभिषुत हुआ है। सोम-पानके लिये आओ और हव्य-प्रदाताके घरमें सोम पियो।

९ वर्षणशील धनवाले अश्विद्वय, सोनका लगाम आदिसे सम्पन्न, आयुधोंके कोश और रमणशील रथपर चढ़ो।

१० जिन रक्षणोंसे तुमने पक्थ राजाकी रक्षा की थी, जिनसे अध्रिगु राजाकी रक्षा की थी और जिनसे बभ्रु राजाको सोम-पान द्वारा प्रसन्न किया था, उन्हीं रक्षणोंके साथ बहुत ही शीघ्र हमारे पास आओ और रोगीकी चिकित्सा करो।

यदध्रिगावो अध्रिगू इदा चिदह्नो अश्विना हवामहे ।
वयं गीर्भिर्विपन्यवः ॥११॥
ताभिरा यातं वृषणोप मे हवं विश्वप्सुं विश्ववार्यम् ।
इषा मंहिष्ठा पुरुभूतमा नरा याभिः क्रिविं वावृधुस्ताभिरा गतम् ॥१२॥
ताविदा चिदहानां तावश्विना वन्दमान उप ब्रुवे ।
ता ऊ नमोभिरीमहे ॥१३॥
ताविद्दोषा ता उषसि शुभस्पती ता यामन्रुद्रवर्तनी ।
मा नो मर्ताय रिपवे वाजिनीवसू परो रुद्रावति ख्यतम् ॥१४॥
आ सुग्म्याय सुग्म्यं प्राता रथेनाश्विना वा सक्षणी ।
हुवे पितेव सोभरी ॥१५॥
मनोजवसा वृषणा मदच्युता मक्षुङ्गमाभिरूतिभिः ।
आरात्ताच्चिद्भूतमस्मे अवसे पूर्वीभिः पुरुभोजसा ॥१६॥

११ हम स्वकर्ममें शीघ्रताकारी और मेधावी हैं । अश्विद्वय, तुम लोग युद्धमें शत्रु-बधके लिये कर्त्ता हो । दिनके इस प्रातः कालमें स्तुति द्वारा हम तुम्हें बुलाते हैं ।

१२ वर्षणशील अश्विद्वय, विविध-रूप, समस्त देवोंके द्वारा वरणीय मेरे इस आह्वानके मुख, उन सारी रक्षाओंके साथ आओ। तुम लोग हविके अभिलाषी, अतीव धनद और अनेक शत्रुओंके अभिभविता हो। जिन रक्षणोंसे तुमने कृपको वर्द्धित किया है, उनके साथ पधारो

१३ उन अश्विद्वयको इस प्रातःकालमें अभिवादन करता हुआ मैं उनकी स्तुति करता हूँ। दोनोंके पास स्तोत्र द्वारा धनादिकी याचना करता हूँ ।

१४ वे जल-पालक और युद्धमें स्तूयमान-मार्ग हैं। रात्रि, उषः-काल और दिनमें सदा हम अश्विद्वयको बुलाते हैं। अन्न और धन अश्विद्वय, शत्रुके हाथमें हमें नहीं देना ।

१५ अश्विद्वय, तुम सेचन-शील हो । मैं सुखके योग्य हूँ । प्रातः कालमें मेरे लिये रथसे आओ । मैं सोभरि हूँ । अपने पिताके समान ही तुम्हें बुलाता हूँ ।

१६ मनके समान शीघ्रगामी, धन-वर्षक, शत्रु-नाशक और अनेकोंके रक्षक अश्विद्वय, शीघ्र-गामी और विविधा रक्षाओंके साथ, हमारी रक्षाके लिये, पासमें आओ ।

आ नो अश्वावदश्विना वर्तिर्यासिष्टं मधुपातमा नरा ।
गोमद्दस्रा हिरण्यवत् ॥१७॥
सुप्रावर्गं सुवीर्यं सुष्ठु वार्यमनाधृष्टं रक्षस्विना ।
अस्मिन्ना वामायाने वाजिनीवसू विश्वा वामानि धीमहि ॥१८॥

२३ सूक्त

अग्नि देवता । व्यश्वके पुत्र विश्वमना ऋषि । उष्णिक् छन्द ।

ईळिष्वा हि प्रतीव्यं यजस्व जातवेदसम् ।
चरिष्णुधूममगृभीतशोचिषम् ॥१॥
दामानं विश्वचर्षणेऽग्निं विश्वमनो गिरा ।
उत स्तुषे विष्पर्धसो रथानाम् ॥२॥
येषामाबाध ऋग्मिय इषः पृक्षश्च निग्रभे ।
उपविदा वह्निर्विन्दते वसु ॥३॥

---

१७ अश्विद्वय, तुम अतीव सोमपाता, नेता और दर्शनीय हो। हमारे यज्ञ-मार्गको अश्व, गौ और सुवर्णसे युक्त करके, आओ।

१८ जिसका दान सुन्दर है, जिसका वीर्य सुन्दर है, जिसका सुन्दर रूप सबके लिये वरणीय है और जिसे बली पुरुष भी अभिभूत नहीं कर सकता, ऐसा ही धन हम धारण करते हैं। अन्न और धन (बलयुक्त धनी) अश्विद्वय, तुम्हारा आगमन होनेपर हम सारा धन प्राप्त करेंगे।

१ शत्रुओंके विरुद्ध गमन करनेवाले अग्नि हैं। उन्हींकी स्तुति करो। जिनका धूम-जाल चारो ओर फैलता है, जिनकी दीप्तिको कोई पकड़ नहीं सकता और जो जात-प्रज्ञ हैं, उन अग्निकी पूजा करो।

२ सर्वार्थ-दर्शक "विश्वमना" ऋषि, मात्सर्य-शून्य यजमानके लिये रथादिके दाता अग्निकी, वाक्य द्वारा, स्तुति करो।

३ शत्रुओंके बाधक और ऋचाओं द्वारा अर्चनीय अग्नि जिनके अन्न और सोमरसका ग्रहण करते हैं, वे धन प्राप्त करते हैं।

उदस्य शोचिरस्थाद्दीदियुषो व्यजरम् ।

तपुर्जम्भस्य सुद्युतो गणश्रियः ॥४॥

उदु तिष्ठ स्वध्वर स्तवानो देव्या कृपा ।

अभिख्या भासा बृहता शुशुक्वनिः ॥५॥

अग्ने याहि सुशस्तिभिर्हव्या जुह्वान आनुषक् ।

यथा दूतो बभूथ हव्यवाहनः ॥६॥

अग्निं वः पूर्व्यं हुवे होतारं चर्षणीनाम् ।

तमया वाचा गृणे तमु वः स्तुषे ॥७॥

यज्ञेभिरद्भुतक्रतुं यं कृपा सूदयन्त इत् ।

मित्रं न जने सुधितमृतावनि ॥८॥

ऋतावानमृतायवो यज्ञस्य साधनं गिरा ।

उपो एनं जुजुषुर्नमसस्पदे ॥९॥

---

४ अतीव दीप्तिमान्, ताप-दाता, दण्ड-सम्पन्न, शोभन दीप्तिवाले और यजमानोंके आश्रित ... राज-शून्य तथा अभिनव तेज उठ रहा है ।

५ शोभनयज्ञ अग्नि, सामने विशाल दीप्तिसे दीपनशील और स्तूयमान तुम द्योतमाना ... साथ उठो ।

६ अग्नि, तुम हव्य-वाहक दूत हो; इसलिये देवोंको हव्य देते हुए सुन्दर स्तोत्रके साथ जाओ

७ मनुष्योंके होम-सम्पादक और पुरातन अग्निको मैं बुलाता हूं । इस सूक्त-रूप वचन ... अग्निकी मैं प्रशंसा करता हूँ । तुम्हारे ही लिये उन अग्निकी मैं स्तुति करता हूँ ।

८ बहुविध प्रज्ञावाले, मित्र और तृप्त अग्निकी कृपासे यज्ञ और सामर्थ्यसे यज्ञवाले यजमानकी कामना पूर्ण होती है ।

९ यज्ञाभिलाषियो, यज्ञके साधन और यज्ञवाले अग्निकी, हव्यवाले यज्ञमें, स्तुति-वाक्य ... सेवा करो ।

अच्छा नो अङ्गिरस्तमं यज्ञासो यन्तु संयतः ।
होता यो अस्ति विक्ष्वा यशस्तमः ॥१०॥
अग्ने तव त्ये अजरेन्धानासो बृहद्भाः ।
अश्वाइव वृषणस्तविषीयवः ॥११॥
स त्वं न ऊर्जाम्पते रयिं रास्व सुवीर्यम् ।
प्राव नस्तोके तनये समत्स्वा ॥१२॥
यद्वा उ विश्पतिः शितः सुप्रीतो मनुषो विशि ।
विश्वेदग्निः प्रति रक्षांसि सेधति ॥१३॥
श्रुष्ट्यग्ने नवस्य मे स्तोमस्य वीर विश्पते ।
नि मायिनस्तपुषा रक्षसो दह ॥१४॥
न तस्य मायया चन रिपुरीशीत मर्त्यः ।
यो अग्नये ददाश हव्यदातिभिः ॥१५॥

---

१० हमारे नियत यज्ञ अङ्गिरावाले अग्निके अभिमुख जायँ । ये मनुष्योंमें होम-निष्पादक और अतीव यशस्वी हैं ।

११ अजर अग्नि, तुम्हारी दीप्यमान और महान् रश्मियाँ काम-वर्षक होकर अश्वके समान बल प्रकट करती हैं ।

१२ अन्न-पति अग्नि, हमारे लिये तुम शोभन वीर्यवाला धन दो। हमारे पुत्र और पौत्रके पास जो धन है, उसे युद्ध-कालमें बचाओ।

१३ मनुष्य-रक्षक और तीक्ष्ण अग्नि प्रसन्न होकर जभी मनुष्यके गृहमें अवस्थित होते हैं, तभी वह सारे राक्षसोंको विनष्ट करते हैं।

१४ हे वीर और मनुष्य-पालक अग्नि, हमारे नये स्तोत्रको सुनकर मायावी राक्षसोंको तापक तेजके द्वारा जलाओ।

१५ जो मनुष्य हव्यदाता ऋत्विकोंके द्वारा अग्निको हव्य प्रदान करता है, उसको मनुष्य-शत्रु माया द्वारा भी वशमें नहीं कर सकता।

व्यश्वस्त्वा वसुविदमुक्षण्युरप्रीणादृषिः ।
महो राये तमु त्वा समिधीमहि ॥१६॥
उशना काव्यस्त्वा नि होतारमसादयत् ।
आयजिं त्वा मनवे जातवेदसम् ॥१७॥
विश्वे हि त्वा सजोषसो देवासो दूतमक्रत ।
श्रुष्टी देव प्रथमो यज्ञियो भुवः ॥१८॥
इमं घा वीरो अमृतं दूतं कृण्वीत मर्त्यः। पावकं कृष्णवर्तनिं विहायसम्॥
तं हुवेम यतस्रुचः सुभासं शुक्रशोचिषम्। विशामग्निमजरं प्रत्नमीड्यम्॥
यो अस्मै हव्यदातिभिराहुतिं मर्तोऽविधत् ।
भूरि पोषं स धत्ते वीरवद्यशः ॥२१॥
प्रथमं जातवेदसमग्निं यज्ञेषु पूर्व्यम्। प्रति स्रुगेति नमसा हविष्मती॥
आभिर्विधेमाग्नये ज्येष्ठाभिर्व्यश्ववत् ।
मंहिष्ठाभिर्मतिभिः शुक्रशोचिषे ॥२३॥

---

१६ अपनेको धनका वर्धक बनानेकी इच्छासे व्यश्व नामक ऋषिने तुम्हें प्रसन्न किया; क्योंकि तुम धनद हो। हम भी महान् धनके लिये उन अग्निको जलाते हैं।

१७ यज्ञशील और जातप्रज्ञ काव्य (कविपुत्र=उशना ऋषि) ने मनुके घरमें तुम्हें होताके रूपसे बैठाया था।

१८ अग्नि, समस्त देवोंने मिलकर तुम्हें ही दूत नियुक्त किया था। देव अग्नि, तुम मुख्य हो। तुम उसी समय यज्ञ-योग्य हो गये थे।

१९ अमर, पवित्र, धूम्र-मार्ग और तेजस्वी इन अग्निको वीर वा समर्थ मनुष्यने दूत बनाया था।

२० स्रुक् ग्रहण करके हम सुन्दर दीप्तिवाले, शुभ्रवर्ण, तेजस्वी, मनुष्योंके लिये स्तवनीय, अजर अग्निको हम बुलाते हैं।

२१ जो मनुष्य हव्य-दाता ऋत्विकोंके द्वारा अग्निको आहुति देता है, वह प्रचुर धन और वीर पुत्र, पौत्र आदिसे युक्त अन्न प्राप्त करता हैं।

२२ देवोंमें मुख्य, जात-प्रज्ञ और प्राचीन अग्निके पास हव्य-युक्त स्रुक् नमस्कारके साथ अग्निके पास आता है।

२३ व्यश्वके समान स्तुति द्वारा प्रशस्यतम, पूज्यतम और शुभ्र दीप्तिसे युक्त अग्निकी हम, परिचर्या करते हैं।

ऋषे वैयश्व दम्यायाग्नये ॥२४॥
नूनमर्च विहायसे स्तोमेभिः स्थूरयूपवत् । विप्रा अग्निमवसे प्रत्नमीळते॥२५॥
अतिथिं मानुषाणां सूनुं वनस्पतीनाम् ।
महो विश्वाँ अभि षतोऽभि हव्यानि मानुषा ।
अग्ने नि षत्सि नमसा धि बर्हिषि ॥२६॥
वंस्वानो वार्या पुरुवंस्व रायः पुरुस्पृहः ।
सुवीर्यस्य प्रजावतो यशस्वतः ॥२७॥
त्वं वरो सुषाम्णेऽग्ने जनाय चोदय ।
सदा वसो रातिं यविष्ठ शश्वते ॥२८॥
त्वं हि सुप्रतूरसि त्वं नो गोमतीरिषः ।
महो रायः सातिमग्ने अपावृधि ॥२९॥
अग्ने त्वं यशा अस्या मित्रावरुणा वह ।
ऋतावाना सम्राजा पूतदक्षसा ॥३०॥



२४ व्यश्व-पुत्र "विश्वमना" ऋषि, "स्थूलयूप" नामक ऋषिके समान तुम यजमानके गृहमें उत्पन्न और विशाल अग्निकी, स्तोत्र द्वारा, पूजा करो ।

२५ मेधावी (विप्र) यजमान मनुष्योंके अतिथि और वनस्पतिके पुत्र तथा प्राचीन अग्निकी, रक्षणके लिये, स्तुति करते हैं ।

२६ अग्नि, समस्त प्रधान स्तोताओंके सामने तुम कुशके ऊपर बैठो । तुम स्तुतिके योग्य हो । मनुष्य-प्रदत्त हव्यको स्वीकार करो ।

२७ अग्नि, वरणीय प्रचुर धन हमें दो । बहुतों द्वारा अभिलषणीय तथा सुन्दर वीर्यवाले पुत्र, पौत्र आदिके साथ, कीर्त्तिसे युक्त, धन हमें दो ।

२८ तुम वरणीय, वासदाता और युवक हो । जो सुन्दर साम-गान करते हैं, उनको लक्ष्य करके सदा धन आदि भेजो ।

२९ अग्नि तुम अतिशय दाता हो । पशुसे युक्त अन्न और महाधनके बीच देने योग्य धन हमें प्रदान करो ।

३० अग्नि, तुम देवोंमें यशस्वी हो; इसलिये तुम सत्यवान्, भली भाँति विराजमान और पवित्र बलसे युक्त मित्र और वरुणको इस कर्ममें ले आओ ।



२४ सूक्त

इन्द्र देवता। अन्तिम तीन मन्त्रोंके देवता सुषाम राजाके पुत्र वरुका दान।
व्यश्व-पुत्र वैयश्व ऋषि। उष्णिक् छन्द।

सखाय आ शिषामहि ब्रह्मेन्द्राय वज्रिणे।
स्तुष ऊ षु वो नृतमाय धृष्णवे ॥१॥
शवसा ह्यसि श्रुतो वृत्रहत्येन वृत्रहा।
मघैर्मघोनो अति शूर दाशसि ॥२॥
स नः स्तवान आ भर रयिं चित्रश्रवस्तमम्।
निरेके चिद्यो हरिवो वसुर्ददिः ॥३॥
आ निरेकमुत प्रियमिन्द्र दर्षि जनानाम्।
धृषता धृष्णो स्तवमान आ भर ॥४॥
न ते सव्यं न दक्षिणं हस्तं वरन्त आमुरः।
न परिबाधो हरिवो गविष्टिषु ॥५॥

---

१ मित्र ऋत्विको, वज्रधर इन्द्रके लिये हम इस स्तोत्रको करेंगे। तुम लोगोंके लिये ह... आयुधोंके नेता और शत्रुओंके धर्षक इन्द्रके लिये मैं स्तुति करूँगा।

२ इन्द्र, तुम बलके द्वारा विख्यात हो। वृत्रासुरका बध करनेके कारण तुम वृत्र-हन्ता हो... तुम शूर हो। धन द्वारा धनवान् व्यक्तिको अधिक धन देते हो।

३ इन्द्र, तुम हमारे द्वारा स्तुत किये जानेपर नानाविध अन्नोंसे युक्त धन हमें प्रदान... अश्ववाले इन्द्र, तुम निर्गमन-समयमें ही शत्रुओंके वास दाता और दाता होते हो।

४ इन्द्र, हमारे लिये तुम धन प्रकाशित करो। शत्रु-नाशक, स्तूयमान होकर तु... मनके साथ वही धन हमें दो।

५ अश्ववाले इन्द्र, गौओंके खोजनेके समय तुम्हारे प्रति योद्धा लोग तुम्हारा बाँ... दाहिना हाथ नहीं हटा सकते। प्रतिरोधक वृत्र आदि भी तुम्हारे हाथोंको नहीं हटा सक... अबाधित हो।

आ त्वा गोभिरिव व्रजं गीर्भिर्ऋणोम्यद्रिवः ।
आ स्मा कामं जरितुरा मनः पृण ॥६॥
विश्वानि विश्वमनसो धिया नो वृहन्तम ।
उग्र प्रणेतरधि षू वसो गहि ॥७॥
वयं ते अस्य वृत्रहन्विद्याम शूर नव्यसः ।
वसोः स्पार्हस्य पुरुहूत राधसः ॥८॥
इन्द्र यथा ह्यस्ति तेऽपरितं नृतो शवः । अमृक्ता रातिः पुरुहूत दाशुषे ॥९॥
आ वृषस्व महामह महे नृतम राधसे । दृह्लश्चिद्दृह्य मघवन्मघत्तये ॥१०॥
नू अन्यत्रा चिदद्रिवस्त्वन्नो जग्मुराशसः ।
मघवञ्छग्धि तव तन्न ऊतिभिः ॥११॥
नह्य ङ्ग नृतो त्वदन्यं विन्दामि राधसे ।
राये द्युम्नाय शवसे च गिर्वणः ॥१२॥

६ वज्रधर इन्द्र, स्तुति-वचनोंके द्वारा तुम्हें मैं प्राप्त होता हूँ । इसी प्रकारसे लोग गौओंके साथ गोष्ठको प्राप्त होते हैं ।

७ इन्द्र, तुम वृत्रादिके सर्व-श्रेष्ठ विनाशक हो । हे उग्र, वासदाता और नेता इन्द्र, विश्व-मना नामक ऋषिके सारे स्तोत्रोंमें उपस्थित होना ।

८ वृत्रघ्न, शूर और अनेकोंके द्वारा बुलाये जाने योग्य इन्द्र, नवीन, स्पृहणीय और सुखादिका साधक धन हम प्राप्त करेंगे ।

९ सबको नचानेवाले इन्द्र, तुम्हारे बलको शत्रु लोग नहीं दबा सकते । बहुतोंके द्वारा बुलाये गये इन्द्र, हव्यदाताको जो तुम दान करते हो, उसे कोई नष्ट नहीं कर सकता ।

१० अत्यन्त पूजनीय और नेताओंमें श्रेष्ठ इन्द्र, महान् धनके लाभके लिये अपने उदरको सोम द्वारा सींचो । धनी इन्द्र, धन-प्राप्तिके लिये तुम सुदृढ़ शत्रु-पुरियोंको विनष्ट करो ।

११ वज्री और धनी इन्द्र, हमलोगोंने तुमसे पहले अन्य देवोंके निकट आशाएँ की थीं; (परन्तु निष्फल) । इस समय तुम हमें धन और रक्षण दो ।

१२ नचानेवाले और स्तोत्र-पात्र इन्द्र, अन्न-प्रकाशक यश और बलके लिये तुम्हारे सिवा अन्य किसीको नहीं जानता हूँ ।

एन्दुमिन्द्राय सिञ्चत पिबाति सोम्यं मधु ।
प्र राधसा चोदयाते महित्वना ॥१३॥
उपो हरीणां पतिं दक्षं पृञ्चन्तमब्रवम् ।
नूनं श्रुधि स्तुवतो अश्व्यस्य ॥१४॥
नह्यङ्ग पुरा चन जज्ञे वीरतर स्त्वत् ।
नकी राया नैवथा न भन्दना ॥१५॥
एदु मध्वो मदिन्तरं सिञ्च वाध्वर्यो अन्धसः ।
एवा हि वीरः स्तवते सदा वृधः ॥१६॥
इन्द्र स्थातर्हरीणां नकिष्टे पूर्व्यस्तुतिम् ।
उदानंश शवसा न भन्दना ॥१७॥
तं वो वाजानां पतिमहूमहि श्रवस्यवः ।
अप्रायुभिर्यज्ञेभिर्वावृधेन्यम् ॥१८॥

१३ इन्द्रके लिये ही तुम सोम-सिञ्चन करो (सोम चुआओ)। इन्द्र सोममय मधु (अकेले) वह अपने महत्त्व और अन्नके साथ धनादि भेजते हैं।

१४ अश्वोंके अधिपति इन्द्रकी मैं स्तुति करूँ। वह अपना वर्द्धक बल दूसरेको देते हैं। इन्द्र, व्यश्व ऋषिके पुत्रकी (मेरी) स्तुति सुनो।

१५ इन्द्र, प्राचीन समयमें तुमसे अधिक धनी, समर्थ, आश्रयदाता और स्तुति-यु[illegible] नहीं उत्पन्न हुआ।

१६ ऋत्विक्, तुम मदकर सोम-रूप अन्नके अतीव मदकर अंश (सोमरस) का, इन्द्र[illegible] सेचन करो। इन वीर और सदा वर्द्धनशील इन्द्रकी ही लोग स्तुति करते हैं।

१७ हरि नामक अश्वोंके स्वामी इन्द्र, तुम्हारी पहलेकी की गयी स्तुतियोंको कोई [illegible] धनके कारण नहीं लाँघ सकता।

१८ अन्नाभिलाषी होकर हम, जिन यज्ञोंमें ऋत्विक्गण प्रमत्त नहीं होते, उन्हीं यज्ञों[illegible] दर्शनीय अन्नपति इन्द्रको बुलाते हैं।

एतो न्विन्द्रं स्तवाम सखायः स्तोम्यं नरम्
कृष्टीर्यो विश्वा अभ्यस्त्येक इत् १९
अगोरुधाय गविषे द्युक्षाय दस्म्यं वचः
घृतात् स्वादीयो मधुनश्च वोचत २०
यस्यामितानि वीर्या न राधः पर्येतवे ।
ज्योतिर्न विश्वमभ्यस्ति दक्षिणा ॥२१॥
स्तुहीन्द्रं व्यश्ववदनूर्मिं वाजिनं यमम् ।
अर्यो गयं मंहमानं वि दाशुषे ॥२२॥
एवानूनमुप स्तुहि वैयश्व दशमं नवम् ।
सुविद्वांसं चर्कृत्यं चरणीनाम् ॥२३॥
वेत्था हि निर्ऋतीनां वज्रहस्त परिवृजम् ।
अहरहः शुन्ध्युः परिपदामिव ॥२४॥

१९ मित्रभूत ऋत्विको, तुम शीघ्र आओ । हम स्तुति-योग्य नेता इन्द्रकी स्तुति करेंगे । यह इन्द्र अकेले ही सारी शत्रुसेनाको अभिभूत करते हैं ।

२० ऋत्विको, जो इन्द्र स्तुतिको नहीं रोकते, स्तुतिकी अभिलाषा करते हैं, उन्हीं दीप्तिशाली इन्द्रके लिये घृत और मधुसे भी स्वादु और अत्यन्त मीठा वचन कहो ।

२१ जिन इन्द्रके वीर-कर्म असीम हैं, जिनके धनको शत्रु नहीं पा सकते और जिनका दान, ज्योति (अन्तरीक्ष) के समान, सारे स्तोताओंको व्याप्त करता है—

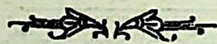
२२ उन्हीं न मारने योग्य, बली और स्तोताओंके द्वारा नियन्त्रित इन्द्रकी, व्यश्व ऋषिके समान, स्तुति करो । स्वामी इन्द्र हव्यदाताको प्रशस्त गृह देते हैं ।

२३ व्यश्वके पुत्र विश्वमना, मनुष्यके दसवें प्राण * इन्द्र हैं; इसलिये अभिनव, विद्वान् तथा सदा नमस्कारके योग्य इन्द्रकी स्तुति करो ।

२४ जैसे आदित्य प्रतिदिन पक्षियोंका उड़ना जानते हैं, वैसे ही, हे वज्रहस्त इन्द्र, तुम निर्ऋतियों (राक्षसों) का गमन समझते हो ।

* तैत्तिरीय ब्राह्मण (१।३।७) देखिये ।

तदिन्द्राव आभर येनादंसिष्ठ कृत्वने ।
द्विता कुत्साय शिश्नथो नि चोदय ॥२५॥
तमु त्वा नूनमीमहे नव्यं दंसिष्ठ संन्यसे ।
स त्वं नो विश्वा अभिमातीः सक्षणिः ॥२६॥
य ऋक्षादंहसो मुचद्यो वार्यात् सप्त सिन्धुषु ।
वधर्दासस्य तुविनृम्णा नीनमः ॥२७॥
यथा वरो सुषाम्णे सनिभ्य आवहो रयिम् ।
व्यश्वेभ्यः सुभगे वाजिनीवति ॥२८॥
आ नार्यस्य दक्षिणा व्यश्वाँ एतु सोमिनः ।
स्थूरं च राधः शतवत् सहस्रवत् ॥२९॥
य त्वा पृच्छादीजानः कुहया कुहयाकृते ।
एषो अपश्रितो बलो गोमतीमवतिष्ठति ॥३०॥



२५ अतीव दर्शनीय इन्द्र, कर्मनिष्ठ यजमानके लिये हमें अपना आश्रय दो। कु राजर्षिके लिये तुमने दो प्रकारसे शत्रुओंका बध किया है। हमें वही रक्षा दो।

२६ अतीव दर्शनीय इन्द्र, तुम स्तुति-योग्य हो। देनेके लिये तुमसे हम धनकी याचना तुम हमारी सारी शत्रु-सेनाके अभिभव-कर्त्ता हो।

२७ जो इन्द्र राक्षस-विहित पापसे मुक्त करते हैं और जो सिन्धु आदि सातो नदियों वर्त्तमान यजमानोंके पास धन भेजते हैं, वही तुम, हे बहु-धनी इन्द्र, असुर शत्रुके बधके नीचे करो।

२८ वरु राजा, अपने "पितर" सुषामा राजाके लिये प्राचीन समयमें जैसे तुमने याच दिया था, वैसे ही इस समय व्यश्वों (हमलोगों) को दो। शोभन धनवाली और उषा, तुम भी धन दो।

२९ मनुष्योंके हितैषी और सोमवाले यजमान (वरु)की दक्षिणा सोमसे युक्त व्यश्व-पुत्रों (के पास आवे। सौ और हजार स्थूल धन हमारे पास आवें।

३० उषा देवी, जो तुमसे पूछते हैं कि, "वरु कहाँ रहते हैं," वे अग्र-जिज्ञासु हैं, यदि पूछे कि, "कहाँ," तो सबके आश्रय-स्थल और शत्रु-निवारक यह वरु राजा गोमतीके तटपर ऐसा कहना।



२५ सूक्त

१०-१२ तक विश्वदेवगण देवता, अवशिष्टके मित्र और वरुण देवता। व्यश्वके पुत्र वैयश्व (विश्वमना) ऋषि। उष्णिक् और उष्णिग्गर्भा छन्द।

ता वां विश्वस्य गोपा देवा देवेषु यज्ञिया ।
ऋतावाना यजसे पूतदक्षसा ॥१॥
मित्रा तना न रथ्या वरुणो यश्च सुक्रतुः ।
सनात् सुजाता तनया धृतव्रता ॥२॥
ता माता विश्ववेदसासुर्याय प्रमहसा ।
मही जजानादितिर्ऋतावरी ॥३॥
महान्ता मित्रावरुणा सम्राजा देवावसुरा ।
ऋतावानावृतमा घोषतो बृहत् ॥४॥
नपाता शवसो महः सूनू दक्षस्य सुक्रतू ।
सृप्रदानू इषो वास्त्वधि क्षितः ॥५॥

---

१ समस्त संसारके रक्षक मित्र और वरुण, देवोंमें तुम भजनीय हो। हविः-प्रदानके लिये तुम यजमानका आश्रय करो। व्यश्व, यज्ञवान् और विशुद्ध बलवाले मित्र और वरुणका यज्ञ करो।

२ शोभन-कर्मा जो मित्र और वरुण धन और रथवाले हैं, वे बहुत समयसे सुन्दर-जन्मा और अदितिके पुत्र तथा धृत-व्रत हैं।

३ महती और सत्यव्रती अदितिने सर्वधनशाली और तेजस्वी उन्हीं मित्र तथा वरुणको असुर-हनन-बलके लिये उत्पन्न किया है।

४ महान्, सम्राट्, बली (असुर) और सत्यवान् मित्र और वरुण महान् यज्ञका प्रकाशन करते हैं।

५ महान् बलके पौत्र, वेगके पुत्र, सुकर्मा और प्रचुर धन देनेवाले मित्र और वरुण अन्नके निवास-स्थानमें रहते हैं।

सं या दानूनि येमथुर्दिव्याः पार्थिवीरिषः ।
नभस्वतीरा वां चरन्तु वृष्टयः ॥६॥
अधि या बृहतो दिवो भि यूथेव पश्यतः ।
ऋतावाना सम्राजा नमसे हिता ॥७॥
ऋतावाना नि ष दतुः साम्राज्याय सुक्रतू ।
धृतव्रता क्षत्रिया क्षत्रमाशतुः ॥८॥
अक्ष्णश्चिद्गातुवित्तरानुल्बणेन वक्षसा ।
नि चिन्मिषन्ता निचिरा नि चिक्यतुः ॥९॥
उत नो देव्यादितिरुरुष्यतां नासत्या ।
उरुष्यन्तु मरुतो वृद्धशवसः ॥१०॥
ते नो नावमुरुष्यत दिवा नक्तं सुदानवः ।
अरिष्यन्तो नि पायुभिः सचेमहि ॥११॥

---

६ मित्र और वरुण, तुमलोग धन तथा दिव्य और पृथिवीपर उत्पन्न अन्न देते हो। [...] वृष्टि तुम्हारे पास रहे।

७ मित्र और वरुण, तुम सत्यवान्, सम्राट् और हव्य-प्रिय हो। तुमलोग प्रसन्न [...] लिये देवोंको उसी प्रकार देखते हो, जिस प्रकार गो-यूथको वृषभ देखता है।

८ सत्यवान् और सुन्दर-कर्मा मित्र और वरुण साम्राज्यके लिये बैठें। धृत-व्रत और (क्षत्रिय) मित्र और वरुण बल (क्षत्र) को व्याप्त करें।

९ नेत्र होनेके प्रथम ही प्राणियोंको जाननेवाले, सबके प्रेरक और चिरन्तन मित्र तथा [...] दुःसह तेजोबलसे शोभित हुए।

१० अदिति देवी हमारी रक्षा करें। अश्विद्वय रक्षा करें। अत्यन्त वेगशाली मरुद्गण [...] करें।

११ शोभन दानवाले मरुतो, तुमलोग अहिंसित हो। तुमलोग दिन-रात हमारी नौका [...] करो। हम तुम्हारे पालनसे इकट्ठे होंगे।

अघ्नते विष्णवे वयमरिष्यन्तः सुदानवे ।
श्रुधि स्वयावन्त सिन्धो पूर्वचित्तये ॥१२॥
तद्वार्यं वृणीमहे वरिष्ठं गोपयत्यम् ।
मित्रो यत् पान्ति वरुणो यदर्यमा ॥१३॥
उत नः सिन्धुरपां तन्मरुतस्तदश्विना ।
इन्द्रो विष्णुर्मीढ्वांसः सजोषसः ॥१४॥
ते हि ष्मा वनुषो नरोऽभिमातिं कयस्य चित् ।
तिग्मं न क्षोदः प्रतिघ्नन्ति भूर्णयः ॥१५॥
अयमेक इत्था पुरूरु चष्टे वि विश्पतिः ।
तस्य व्रतान्यनु वश्चरामसि ॥१६॥
अनु पूर्वाण्योक्या साम्राज्यस्य सश्चिम ।
मित्रस्य व्रता वरुणस्य दीर्घश्रुत् ॥१७॥

---

१२ हम अहिंसित होकर हिंसा-शून्य सुदाता विष्णुकी स्तुति करेंगे। अकेले ही युद्ध-कर्त्ता विष्णु, तुम स्तोताओंको धन देनेवाले हो। जिसने यज्ञ प्रारम्भ किया है, उसकी स्तुति सुनो।

१३ हम श्रेष्ठ, सबके रक्षक और वरणीय धन आश्रित करते हैं। मित्र, वरुण और अर्यमा इस धनकी रक्षा करते हैं।

१४ हमारे धनकी रक्षा पर्जन्य (मेघ) करें; मरुद्गण और अश्विद्वय भी रक्षा करें; इन्द्र, विष्णु और समस्त अभीष्टवर्षक देवता मिलकर रक्षा करें।

१५ वे देव पूज्य और नेता हैं। जैसे वेगशाली जल वृक्षको उखाड़ फेंकता है, वैसे ही वे देव शीघ्रगामी होकर जिस किसी भी शत्रुके प्रतिकूल होकर उसका विनाश कर डालते हैं।

१६ लोकपति मित्र बहु-सङ्ख्यक प्रधान द्रव्योंको, अपने तेजसे, इसी प्रकार देखते हैं। मित्र और वरुणमेंसे हम तुम्हारे लिये मित्रके व्रतको करते हैं।

१७ हम साम्राज्य-सम्पन्न वरुणके गृहको प्राप्त करेंगे। अतीव प्रसिद्ध मित्रके व्रतको भी प्राप्त करेंगे।

परि यो रश्मिना दिवोन्तान्ममे पृथिव्याः ।
उभे आ पप्रौ रोदसी महित्वा ॥१८॥
उदु ष्य शरणे दिवो ज्योतिरयंस्त सूर्यः ।
अग्निर्न शुक्रः समिधान आहुतः ॥१९॥
वचो दीर्घप्रसद्मनीशे वाजस्य गोमतः ।
ईशे हि पित्वोऽविषस्य दावने ॥२०॥
तत् सूर्यं रोदसी उभे दोषा वस्तोरुप ब्रुवे ।
भोजेष्वस्माँ अभ्युच्चरा सदा ॥२१॥
ऋज्रमुक्षण्यायने रजतं हरयाणे । रथं युक्तमसनाम सुषामणि ॥२२॥
ता मे अश्व्याना हरीणां नितोशना । उतो नु कृत्व्यानां नृवाहसा ॥
स्मदभीशू कशावन्ता विप्रा नविष्ठया मती ।
महो वाजिनावर्वन्ता सचासनम् ॥२४॥

---

१८ जो मित्र स्वर्ग और संसारके अन्तको, अपनी रश्मिसे, प्रकाशित करते हैं, अपनी महि[illegible] दोनोंको पूर्ण भी करते हैं।

१९ सुन्दर वीर्यवाले मित्र और वरुण प्रकाशक आदित्यके स्थान (आकाश) में अपनी [illegible] विस्तृत करते हैं । पश्चात् अग्निके समान शुभ्रवर्ण और सवके द्वारा आहूत होकर [illegible] करते हैं ।

२० स्तोता, विस्तृत गृहवाले यज्ञमें मित्रावरुणकी स्तुति करो । वरुण पशु-युक्त अन्नके [illegible] और महाप्रसन्नता कारक अन्न देनेमें भी समर्थ हैं।

२१ मैं मित्र और वरुणके उस तेज और द्यावापृथिवीकी दिन-रात स्तुति करता हूं । [illegible] हमें दाता (दान) के अभिमुख करो ।

२२ उक्ष-गोत्रमें उत्पन्न और सुषामाके पुत्र वरु राजाके दानमें प्रवृत्त होनेपर [illegible] रजतके समान और अश्वोंसे युक्त रथ हमको मिला था । सुषामाके पुत्रका रथ शत्रुओंके [illegible] ऐश्वर्य आदिका हरण करता है ।

२३ हरित-वर्ण अश्वोंके सङ्घमें शत्रुओंके लिये अतीव बाधक तथा कुशल [illegible] मनुष्योंके वाहक दो अश्व, वरु राजा द्वारा, हमारे लिये शीघ्र प्रदत्त हों ।

२४ अभिनव स्तुति द्वारा स्तव करते हुए शोभन रज्जु वाले, कशा (चाबुक) वाले [illegible] षक और शीघ्र-गमन दो (सुषामाके पुत्र वरुके) अश्वोंको मैं प्राप्त करूँ ।

२६ सूक्त

अश्विद्वय देवता। २०–२४ तकके वायु देवता। अङ्गिरोगोत्रीय व्यश्वके पुत्र वैयश्व वा विश्वमना ऋषि। गायत्री, अनुष्टुप् और उष्णिक् छन्द।

युवोरु षू रथं हुवे सधस्तुत्याय सूरिषु। अतूर्तदक्षा वृषणा वृषण्वसू ॥१॥
युवं वरो सुषाम्णे महे तने नासत्या। अवोऽभिर्याथो वृषणा वृषण्वसू ॥२॥
ता वामद्य हवामहे हव्येभिर्वाजिनीवसू। पूर्वीरिष इषयन्तावति क्षपः ॥३॥
आ वां वाहिष्ठो अश्विना रथो यातु श्रुतो नरा।
उप स्तोमान्तुरस्य दर्शथः श्रिये ॥४॥
जुहुराणा चिदश्विना मन्येथां वृषण्वसू। युवं हि रुद्रा पर्षथो अति द्विषः ॥५॥
दस्रा हि विश्वमानुषङ्मक्षूभिः परिदीयथः।
धियं जिन्वा मधुवर्णा शुभस्पती ॥६॥
उप नो यातमश्विना राया विश्वपुषा सह। मघवाना सुवीरावनपच्युता ॥७॥

---

१ अहिंसित-बल, वर्षक और धनशाली अश्विद्वय, तुम्हारे बलकी कोई हिंसा नहीं कर सकता। स्तोताओंके बीच तुम्हारे एकत्र और शीघ्र-गमनके लिये रथको बुलाता हूँ।

२ सत्य-स्वरूप, अभिलाषप्रद और धनशाली अश्विद्वय, सुषामा राजाके लिये महाधन देनेके निमित्त तुमलोग जैसे आते थे, वैसे ही रक्षाके साथ आगमन करो। वरु, तुम इस बातको कहो।

३ अन्न, धन और बहुत अन्नवाले अश्विद्वय, आज प्रातःकाल होनेपर तुम्हें हम हव्य द्वारा बुलावेंगे।

४ नेता अश्विद्वय, सबसे अधिक ढोनेवाला और तुम्हारा प्रसिद्ध रथ आगमन करे। क्षिप्र-स्तोताको ऐश्वर्य प्रदान करनेके लिये उसके सारे स्तोत्रोंको जानो।

५ अभिलाषा-दाता और धनी अश्विद्वय, कुटिल कार्य-कर्त्ता शत्रुओंको सामने उपस्थित जानो। तुमलोग रुद्र हो। द्वेषी शत्रुओंको क्लेश प्रदान करो।

६ सबके दर्शनीय, कर्म-प्रीतिकर, मदकर कान्तिवाले और जल-पोषक अश्विद्वय, तुमलोग शीघ्रगामी अश्वोंके द्वारा समस्त यज्ञके प्रति आगमन करो।

७ अश्विद्वय, विश्व-पालक धनके साथ हमारे यज्ञमें आओ। तुमलोग धनी, शूर और अज़ेय हो।

आ मे अस्य प्रतीव्यमिन्द्रनासत्या गतम् ।
देवा देवेभिरद्य सचनस्तमा ॥८॥
वयं हि वां हवामह उक्षण्यन्तो व्यश्ववत् ।
सुमतिभिरुप विप्राविहा गतम् ॥९॥
अश्विना स्वृषे स्तुहि कुवित्ते श्रवतो हवम् ।
नेदीयसः कूळयातः पणीँरुत ॥१०॥
वैयश्वस्य श्रुतं नरोतो मे अस्य वेदथः ।
सजोषसा वरुणो मित्रो अर्यमा ॥११॥
युवादत्तस्य धिष्ण्या युवानीतस्य सूरिभिः ।
अहरहर्वृषणा मह्यं शिक्षतम् ॥१२॥
यो वां यज्ञेभिरावृतोऽधिवस्त्रा वधूरिव ।
सपर्यन्ता शुभे चक्राते अश्विना ॥१३॥
यो वामुरुव्यचस्तमं चिकेतति नृपाय्यम् ।
वर्तिरश्विना परि यातमस्मयू ॥१४॥

८ इन्द्र और नासत्य-द्वय (अश्विद्वय), तुमलोग अतीव सेव्यमान होकर मेरे आज, देवोंके साथ, आओ ।

९ अपने लिये धन-दानकी प्राप्तिकी इच्छासे हम व्यश्वके समान तुम्हें बुलाते हैं। मेधा कृपा करके यहाँ पधारो ।

१० ऋषि, अश्विद्वयकी स्तुति करो । अनेक बार तुहारा आह्वान सुनते हुए अश्विद्वय शत्रुओं और पणियोंको मारें ।

११ नेताओ, वैयश्वका आह्वान सुनो । मेरे आह्वानको समझो । वरुण, मित्र और सदा मिले हुए हैं ।

१२ स्तवनीय और अभिलाषप्रद अश्विद्वय, तुमलोग स्तोताओंको जो देते हो और लिये जो ले आते हो, वह प्रतिदिन मुझे दो ।

१३ जैसे बधू वस्त्रसे ढकी रहती है, वैसे ही जो मनुष्य यज्ञसे आवृत (परिवृत) उसकी परिचर्या (देख-रेख) करते हुए अश्विद्वय उसका मङ्गल करते हैं ।

१४ अश्विद्वय, अतीव व्यापक और नेताओंके पान-योग्य सोमका दान करना जो मनुष्य है, वैसे (ज्ञाता) मुझे पानेकी इच्छा करके तुम मेरे गृहमें पधारो ।

अस्मभ्यं सु वृषणवसू यातं वर्तिर्नृपाय्यम् ।
विषद्रुहेव यज्ञमूहथुर्गिरा ॥१५॥
वाहिष्ठो वां हवानां स्तोमो दूतो हुवन्नरा । युवाभ्यां भूत्वश्विना ॥१६॥
यददो दिवो अर्णव इषो वा मदथो गृहे । श्रुतमिन्मे अमर्त्या ॥१७॥
उत स्या श्वेतयावरी वाहिष्ठा वां नदीनाम् । सिन्धुर्हिरण्यवर्तनिः ॥१८॥
स्मदेतया सुकीर्त्याश्विना श्वेतया धिया । वहेथे शुभ्रयावाना ॥१९॥
युक्ष्वा हि त्वं रथासहा युवस्व पोष्या वसो ।
अन्नो वायो मधु पिबास्माकं सवना गहि ॥२०॥
तव वायवृतस्पते त्वष्टुर्जामातरद्भुत । अवांस्या वृणीमहे ॥२१॥
त्वष्टुर्जामातरं वयमीशानं राय ईमहे ।
सुतावन्तो वायुं द्युम्ना जनासः ॥२२॥

---

१५ अभिलाष-प्रद और धनी अश्विद्वय, नेताओंके पीनेके योग्य सोमके लिये हमारे घर पधारो। शत्रु-द्रोही शरके समान (व्याध शरसे मृग वाले ईप्सित प्रदेशको प्राप्त करता है) स्तुति-वाक्य द्वारा यज्ञ-समाप्ति कर दो ।

१६ सबके नेता अश्विद्वय, स्तोत्रोंमेंसे स्तोम (स्तुति-विशेष) तुम्हारे पास जाकर तुम्हें बुलावे और प्रसन्न करे ।

१७ अश्विद्वय, द्युलोकके (नीचे) इस समुद्रमें यदि तुम प्रमत्त होओ अथवा अन्न चाहनेवाले यजमानके गृहमें यदि मत्त होओ, तो, अमर द्वय, हमारा यह स्तोत्र सुनो ।

१८ नदियोंमेंसे स्पन्दन-शील और हिरण्य-मार्गा श्वेतयावरी (श्वेत-जला होकर बहनेवाली) नामकी नदी स्तुति द्वारा तुम्हारे पास जाती है अथवा तुम्हारे रथको ढोती है ।

१९ सुन्दर गमनवाले अश्विद्वय, सुन्दर कीर्त्तिवाली, श्वेतवर्णा और पुष्टि-कारिणी श्वेतयावरी नदीको प्रवाहित करो।

२० वायु, रथ ढोनेवाले दोनों अश्वोंको योजित करो । वासदाता वायु, पोषणके योग्य अश्विद्वयको संग्राममें मिलाओ । वायु, अनन्तर हमारे मदकर सोमका पान करो और तीनों सवनोंमें आओ ।

२१ यज्ञपति, त्वष्टा (ब्रह्मा)के जामाता और विचित्र-कर्मा वायु, तुम्हारा पालन हम प्राप्त कर सकें ।

२२ हम त्वष्टाके जामाता और समर्थ वायुके समीप, सोम अभिषव करके, धन माँगते हैं । धन दानसे हम धनी होंगे ।

वायो याहि शिवा दिवो वहस्वा सु स्वश्व्यम् ।
वहस्व महः पृथुपक्षसा रथे ॥२३॥
त्वां हि सुप्सरस्तमं नृषदनेषु हूमहे । ग्रावाणं नाश्वपृष्ठं मंहना ॥२४॥
स त्वं नो देव मनसा वायो मन्दानो अग्रियः ।
कृधि वाजाँ अपो धियः ॥२५॥



२७ सूक्त

विश्वदेवगण देवता । विवस्वान्‌के पुत्र मनु ऋषि । अयुज् बृहती, युज् बृहती और सतोबृहती छन्द ।

अग्निरुक्थे पुरोहितो ग्रावाणो बर्हिरध्वरे ।
ऋचा यामि मरुतो ब्रह्मणस्पतिं देवाँ अवो वरेण्यम् ॥१॥
आ पशुं गासि पृथिवीं वनस्पतीनुषासा नक्तमोषधीः ।
विश्वे च नो वसवो विश्ववेदसो धीनां भूत प्रावितारः ॥२॥

२३ वायु, द्युलोकमें कल्याण ले जाओ । अश्वसे युक्त रथ चलाओ । तुम महान् हो । मोटे वाले अश्वोंको अपने रथमें जोतो ।

२४ वायु, तुम अतीव सुन्दर रूपवाले हो । तुम्हारे सारे अङ्ग महिमासे व्याप्त हैं । सोम लिये पत्थरके समान यज्ञोंमें हम तुम्हें बुलाते हैं ।

२५ वायुदेव, देवोंमें तुम मुख्य हो । अन्तःकरणसे प्रसन्न होकर हमें अन्न, जल प्रदान करो ।

१ इस स्तोत्रात्मक यज्ञमें अग्नि, सोमाभिषवके लिये प्रस्तर और कुश अग्रभागमें स्थापित । मरुद्गण, ब्रह्मणस्पति और अन्य देवोंसे, स्तुति द्वारा, रक्षणकी प्राप्तिके लिये, मैं याचना करता

२ अग्नि, हमारे यज्ञमें पशुके निकट आते हो, इस पृथिवी (यज्ञशाला) और वनस्पतिके समीप हो और प्रातःकाल तथा रात्रिमें सोमाभिषवके लिये प्रस्तरके निकट आते हो । सर्वज्ञाता विश्वे हमारे कर्मोंके रक्षक होओ ।

प्र सू न एत्वध्वरोऽग्ना देवेषु पूर्व्यः ।
आदित्येषु प्र वरुणे धृतव्रते मरुत्सु विश्वभानुषु ॥३॥
विश्वे हि ष्मा मनवे विश्ववेदसो भुवन्वृधे रिशादसः ।
अरिष्टेभिः पायुभिर्विश्ववेदसो यन्ता नोऽवृकं च्छर्दिः ॥४॥
आ नो अद्य समनसो गन्ता विश्वे सजोषसः ।
ऋचा गिरा मरुतो देव्यदिते सदने पस्त्ये महि ॥५॥
अभि प्रिया मरुतो या वो अश्व्या हव्या मित्र प्रयाथन ।
आ बर्हिरिन्द्रो वरुणस्तुरा नर आदित्यासः सदन्तु नः ॥६॥
वयं वो वृक्तबर्हिषो हितप्रयस आनुषक् ।
सुतसोमासो वरुण हवामहे मनुष्वदिद्धाग्नयः ॥७॥
आ प्र यात मरुतो विष्णो अश्विना पूषन्माकीनया धिया ।
इन्द्र आयातु प्रथमः सनिष्युभिर्वृषा यो वृत्रहा गृणे ॥८॥

३ प्राचीन यज्ञ अग्नि और अन्य देवोंके पास, उत्तमताके साथ, गमन करे एवम् आदित्यों, धृतव्रत वरुण और तेजस्वी मरुतोंके निकट भी गमन करे।

४ बहुधनशाली और शत्रु-नाशक विश्वदेवगण मनुके वर्द्धनके लिये हों। सर्वज्ञाता देवो, अहिंसित पालनके साथ हमें बाधा-रहित गृह प्रदान करो।

५ विश्वदेवों, स्तोत्रोंमें समान-मना और परस्पर सङ्गत होकर, वचन और ऋचाके साथ, आजके यज्ञ-दिनमें हमारे निकट आओ। मरुतो और महत्त्वपूर्ण अदिति देवी, हमारे उस गृहमें विराजो।

६ मरुतो, अपने प्रिय अश्वोंको इस यज्ञमें भेजो अथवा अश्वोंसे युक्त होकर आओ। मित्र, हव्यके लिये पधारो। इन्द्र, वरुण और युद्धमें शत्रु-वधके लिये क्षिप्रकर्त्ता तथा नेता आदित्यगण हमारे कुशोंपर बैठें।

७ वरुण, मनुके समान हम (मनुवंशीय) सोमाभिषव करके और अग्निको समिद्ध करके, हविको स्थापित और कुशका छेदन करते हुए, तुम्हें बुलाते हैं।

८ मरुद्गण, विष्णु, अश्विद्वय और पूषा, मेरी स्तुतिके साथ यज्ञमें पधारो। देवोंके बीच प्रथम इन्द्र भी आवें। इन्द्राभिलाषी स्तोता लोग इन्द्रको वृत्रहा कहते हैं।

वि नो देवासो अद्रुहोच्छिद्रं शर्म यच्छत ।
न यद् राद्सवो नू चिदन्तितो वरूथमाद्धर्षति ॥९॥
अस्ति हि वः सजात्यं रिशादसो देवासो अस्त्याप्यम् ।
प्र णः पूर्वस्मै सुविताय वोचत मक्षू सुम्नाय नव्यसे ॥१०॥
इदा हि व उपस्तुतिमिदा वामस्य भक्तये ।
उप वो विश्ववेदसो नमस्युराँ असृक्ष्यन्यामिव ॥११॥
उदुष्यवः सविता सुप्रणीतयोऽस्थादूर्ध्वो वरेण्यः ।
नि द्विपादश्चतुष्पादो अर्थिनोऽविश्रन् पतयिष्णवः ॥१२॥
देवंदेवं वोऽवसे देवन्देवमभिष्टये ।
देवंदेवं हुवेम वाजसातये गृणन्तो देव्या धिया ॥१३॥
देवासो हि ष्मा मनवे समन्यवो विश्वे साकं सरातयः ।
ते नो अद्य ते अपरं तुचे तु नो भवन्तु वरिवोविदः ॥१४॥

---

९ द्रोह-शून्य देवो, हमें बाधा-शून्य गृह प्रदान करो । वाम्भदाता देवो, दूर अथवा [illegible] देशसे आकर कोई कभी वरणीय गृहकी हिंसा नहीं करता ।

१० शत्रु-भक्षक देवो, तुममें स्वजातिभाव और बन्धुभाव हैं । प्रथम अभ्युदय और धनके लिये शीघ्र और उत्तमतासे हमें कहो ।

११ सर्वधनवान् देवो, मैं अन्नकी कामना करता हू । इसो समय किसीसे न की गयी [illegible] मैं, अभी तुम्हारे रमणीय धनकी प्राप्तिके लिये, करता हूँ ।

१२ सुन्दर स्तुतिवाले मरुतो, तुम लोगोंमें ऊद्र्ध्वगामी और सबके सेवनीय सविता [illegible] कार्यमें लगानेवाले) जब उगते हैं, उस समय मनुष्य, पशु और पक्षी अपने-अपने कार्यों में लग जाते [illegible]

१३ हम प्रकाशक स्तुतिके द्वारा स्तव करते हुए तुमलोगोंमेंसे दिव्य देवताको, कार्य[illegible] लिये, बुलाते हैं । अभीप्सितकी प्राप्तिके लिये दीप्तिमान् देवताको बुलाते हैं । अन्न-लाभके लिये देवताको बुलाते हैं ।

१४ समान-क्रोधी विश्वदेवगण मनुके (मेरे) लिये धनादि दानके निमित्त एक साथ प्रवृ[illegible] आज और दूसरे दिन—सब दिनोंमें मेरे लिये और मेरे पुत्रके लिये वरणीय (सम्भजनीय) धनके [illegible]

प्र वः शंसाम्यद्रुहः संस्थ उपस्तुतीनाम् ।
न तं धूर्तिर्वरुण मित्र मर्त्यं यो वो धामभ्योऽविधत् ॥१५॥
प्र स क्षयं तिरते वि महीरिषो यो वो वराय दाशति ।
प्र प्रजाभिर्जायते धर्मणस्पर्यरिष्टः सर्व एधते ॥१६॥
ऋते स विन्दते युधः सुगेभिर्यात्यध्वनः ।
अर्यमा मित्रो वरुणः सरातयो यं त्रायन्ते सजोषसः ॥१७॥
अज्रे चिदस्मै कृणुथा न्यञ्चनं दुर्गे चिदा सुसरणम् ।
एषा चिदस्मादशनिः परो नु सास्रेधन्ती वि नश्यतु ॥१८॥
यदद्य सूर्य उद्यति प्रियक्षत्रा ऋतं दध ।
यन्निम्रुचि प्रबुधि विश्ववेदसो यद्वा मध्यन्दिने दिवः ॥१९॥
यद्वाभिपित्वे असुरा ऋतं यते छर्दिर्येम वि दाशुषे ।
वयं तद्वो वसवो विश्ववेदस उप स्थेयाम मध्य आ ॥२०॥

---

१५ अहिंसनीय देवो, स्तोत्रके आधार यज्ञमें तुम्हारी खूब स्तुति करता हूँ । वरुण और मित्र, तुम्हारे शरीरके लिये जो हवि धारण करता है, उसे शत्रुओंकी हिंसा बाधा नहीं देती।

१६ देवो, जो मनुष्य वरणीय धनके लिये तुम्हें हव्य देता है, वह अपना गृह बढ़ाता, अन्न बढ़ाता, यज्ञके द्वारा प्रजा (पुत्रादि) से सम्पन्न होता है और सबके द्वारा अहिंसित होकर समृद्ध होता है।

१७ वह युद्धके विना भी धन प्राप्त करता है, सुन्दर गमनवाले अश्वोंसे मार्गको अतिक्रम करता है तथा मित्र, वरुण और अर्यमा मिलित और समान दानसे युक्त होकर उसकी रक्षा करते हैं।

१८ देवो, अगम्य और दुर्गम्य पथको सुगम करो। यह अशनि (आयुध) किसीकी हिंसा न करके विनिष्ट हो जाय।

१९ बल-प्रिय देवो, सूर्यके उदित होनेपर आज तुम कल्याणवाहक गृहको धारण करो। सारे धनोंसे युक्त देवो, सायंकाल धारण करो, प्रातःकाल धारण करो और मध्याह्न कालमें मनुके लिये धन धारण करो।

२० प्राज्ञ (असुर) देवो, यज्ञके प्रति तुम्हारे लाभके लिये हवि देनेवाले और यज्ञगामी यजमानको यदि तुमलोग गृह प्रदान करते हो, तो हे वासदाता और सर्व-धन-संयुक्त देवो, हम तुम्हारे उसी मङ्गलकर गृहमें तुम्हारी पूजा करेंगे।

यदद्य सूर उदिते यन्मध्यन्दिन आतुचि ।
वामं धत्थ मनवे विश्ववेदसो जुहृवानाय प्रचेतसे ॥२१॥
वयं तद्वः सम्राज आ वृणीमहे पुत्रो न बहुपाय्यम् ।
अश्याम तदादित्या जुह्वते हविर्येन वस्योऽनशामहै ॥२२॥

२८ सूक्त

विश्वदेवगण देवता । मनु ऋषि । गायत्री और पुर उष्णिक् छन्द ।

ये त्रिंशति त्रयस्परो देवासो बर्हिरासदन् । विदन्नह द्वितासनन् ॥१॥
वरुणो मित्रो अर्यमा स्मद्रातिषाचो अग्नयः ।
पत्नीवन्तो वषट्कृताः ॥२॥
ते नो गोपा अपाच्यास्त उदक्त इत्था न्यक् । पुरस्तात् सर्वया विशा
यथा वशन्ति देवास्तथेदसत्तदेषां नकिरा मिनत् । अरावा चन मर्त्यः

२१ सर्व-धन-सम्पन्न देवो, आज सूर्योदय होनेपर, मध्याह्नमें और सायंकालमें ह... और प्रकृष्ट ज्ञानी मनु ऋषिके (मेरे) लिये जो रमणीय धन तुम लोग धारण करते हो—

२२ दीप्तिमान् देवो, तुम्हारे पुत्रोंके समान हम बहुत लोगोंके भोगके योग्य उसी धनको ... करेंगे। आदित्यो, यज्ञ करते हुए हम इस धनके द्वारा अतीव धनाढ्यता प्राप्त करेंगे।

१ जो तेतीस देवता कुशोंपर बैठे थे, वे हमें समझें और बार-बार हमें धन दें।

२ वरुण, मित्र और अर्यमा सुन्दर हव्य देनेवाले यजमानोंके साथ मिलकर और पत्नियोंके सहित, नानाविध वषट्कारों (हि, वौषट् आदि शब्दों)के द्वारा, बुलाये गये हैं।

३ वे वरुणादि देव, अपने सारे अनुचरोंके साथ, सम्मुख, पीछे, ऊपर और नीचे हमारे रक्षक हैं।

४ देवता लोग जैसी इच्छा करते हैं, वैसा ही होता है। देवोंकी कामनाको कोई हिंसा नहीं कर सकता। अदाता मनुष्य (यदि वह हवि देने लगे) की भी कोई हिंसा नहीं कर सकता।

सप्तो अधि श्रियो धिरे ॥५॥

सप्तानां सप्त ऋष्टयः सप्त द्युम्नान्येषाम् ।

२६ सूक्त

विश्वदेवगण देवता । मरीचिके पुत्र कश्यप वा वैवस्वत ऋषि । द्विपदा और विराट् छन्द ।

बभ्रुरेको विषुणः सूनरो युवाञ्ज्यङ्क्ते हिरण्ययम् ॥१॥

योनिमेक आ ससाद द्योतनोऽन्तर्देवेषु मेधिरः ॥२॥

वाशीमेको बिभर्ति हस्त आयसीमन्तर्देवेषु निध्रुविः ॥३॥

वज्रमेको बिभर्ति हस्त आहितं तेन वृत्राणि जिघ्नते ॥४॥

तिग्ममेको बिभर्ति हस्त आयुधं शुचिरुग्रो जलाषभेषजः ॥५॥

पथ एकः पीपाय तस्करो यथाँ एष वेद निधीनाम् ॥६॥

त्रीण्येक उरुगायो विचक्रमे यत्र देवासो मदन्ति ॥७॥

---

५ (इन्द्रके अंश-रूप) सात मरुतोंके सात प्रकारके आयुध हैं, सात प्रकारके आभरण हैं और सात प्रकारकी दीप्तियाँ हैं।

---

१ बभ्रुवर्ण (पीले रंगके), सवग, रात्रिओंके नेता, युवक और एकाकी सोमदेव हिरण्यमय आभरणको प्रकाशित करते हैं।

२ देवोंमें दीप्यमान, मेधावी और अकेले अग्नि अपना स्थान प्राप्त करते हैं।

३ देवोंके बीच निश्चल स्थानमें वर्त्तमान त्वष्टा हाथोंमें लौहमय कुठारको धारण करते हैं।

४ इन्द्र अकेले हस्त-निहित वज्र धारण करते और वृत्रादिका नाश करते हैं।

५ सुखावह भिषक्, पवित्र और उग्र रुद्र हाथोंमें तीखा आयुध रखते हैं।

६ एक (पूषा) मार्गकी रक्षा करते हैं। वे चोरके समान सारे धनोंको जानते हैं।

७ एक (विष्णु) बहुतोंकी स्तुतिके योग्य हैं। उन्होंने तीन पैरोंसे तीनों लोकोंका प्रक्रमण किया। इससे देवता लोग प्रसन्न हुए।

विभिर्द्वा चरत एकया सह प्र प्रवासेव वसतः ॥८॥
सदो द्वा चक्राते उपमा दिवि सम्राजा सपिरासुती ॥९॥
अर्चन्त एके महि साम मन्वत तेन सूर्यमरोचयन् ॥१०॥

३० सूक्त

विश्वदेवगण देवता। वैवस्वत मनु ऋषि। पुर उष्णिक् बृहती और अनुष्टुप् छन्द।

नहि वो अस्त्यर्भको देवासो न कुमारकः।
विश्वे सतोमहान्त इत् ॥१॥
इति स्तुतासो असथा रिशादसो ये स्थ त्रयश्च त्रिंशच्च।
मनोर्देवा यज्ञियासः ॥२॥
ते नस्त्राध्वं तेऽवत त उ नो अधि वोचत।
मा नः पथः पित्र्यान्मानवादधि दूरं नैष्ट परावतः ॥३॥
ये देवास इह स्थन विश्वे वैश्वानरा उत।
अस्मभ्यं शर्म सप्रथो गवेऽश्वाय यच्छत ॥४॥

---

८ दो (अश्विद्वय) एक स्त्री (सूर्या) के साथ, दो प्रवासी पुरुषोंके समान, वहां अश्व द्वारा संचरण करते हैं।

९—१० अपनी कान्तिके परस्पर उपमेय दो (मित्र और वरुण) अतीव दीप्तिशाली घृतरूप हविवाले हैं। वे द्युलोकके स्थानका निर्माण करते हैं। स्तोता लोग महान् साम-उच्चारण करके सूर्यको दीप्त करते हैं।

१ देवो, तुम लोगोंमें कोई बालक नहीं है, कोई कुमार नहीं है। तुम सब महान् हो।

२ शत्रु-भक्षक और मनुके (मेरे) यज्ञार्ह देवो, तुमलोग तेंतीस हो। इसी प्रकार तुम स्तुत हुए हो।

३ तुमलोग हमें राक्षसोंसे बचाओ और धनादि देकर हमारी रक्षा करो। हमसे तुमलोग भाँति बोलो। देवो, पिता मनुसे आये हुए मार्गसे हमें भ्रष्ट नहीं करना; दूरस्थित मार्गसे भी नहीं करना।

४ देवो और यज्ञोत्पन्न अग्नि, तुम सब लोग हो। तुम सब यहाँ ठहरो। अनन्तर सबके सुख, गौ और अश्व हमें दान करो।

८ अनुवाक । ३१ सूक्त

१-४ ऋकोंके यज्ञ देवता; अनन्तर यज्ञ-प्रशंसा देवता । वैवस्वत मनु ऋषि ।
अनुष्टुप्, पङ्क्ति और गायत्री छन्द ।

यो यजाति यजात इत् सुनवच्च पचाति च । ब्रह्मे दिन्द्रस्यचाकनत् ॥१॥
पुरोडाशं यो अस्मै सोमं ररत आशिरं । पादित्तं शक्रो अंहसः ॥२॥
तस्य द्युमाँ असद्रथो देवजूतः स शूशुवत् । विश्वा वन्वन्नमित्रिया ॥३॥
अस्य प्रजावती गृहेऽसश्चन्ती दिवेदिवे । इला धेनुमती दुहे ॥४॥
या दम्पती समनसा सुनुत आ च धावतः । देवासो नित्ययाशिरा ॥५॥
प्रति प्राशव्याँ इतः सम्यञ्चा बर्हिराशाते । न ता वाजेषु वायतः ॥६॥
न देवानामपि ह्नुतः सुमतिं न जुगुक्षतः । श्रवो बृहद्विवासतः ॥७॥
पुत्रिणा ता कुमारिणा विश्वमायुर्व्यश्नुतः । उभा हिरण्यपेशसा ॥८॥

१ जो यजमान यज्ञ करता है, जो पुनः यज्ञ करता है, वह सोमका अभिषव और पुरोडाशादिका पाक करता है और इन्द्रके स्तोत्रकी बार-बार कामना करता है।

२ जो यजमान इन्द्रको पुरोडाश और दूध-मिला सोम प्रदान करता है, निश्चय ही पापसे उसे इन्द्र बचाते हैं।

३ देव-प्रेरित और प्रकाशमान रथ उसी यजमानका हो जाता है और वह उसके द्वारा शत्रुकी बाधाओंको नष्ट करके समृद्ध होता है।

४ पुत्रादि-युक्त, विनाश-शून्य और धेनु-सहित अन्न प्रतिदिन इस यजमानके गृहमें प्राप्त किया जा सकता है।

५ देवो, जो दम्पती एक मनसे अभिषव करते हैं, दशापवित्र द्वारा सोमका शोधन करते हैं और मिश्रण द्रव्य (क्षीरादि) के द्वारा सोमको मिलाते हैं—

६ वे भोजनके योग्य अन्न आदि प्राप्त करते हैं और मिलकर यज्ञमें आते हैं। वे अन्नके लिये कहीं नहीं जाते।

७ वे दम्पती इन्द्रादि देवोंका अपलाप नहीं करते—तुम्हारी शोभन बुद्धिको नहीं ढकते। महान् अन्नके द्वारा तुम्हारी परिचर्या करते हैं।

८ वे पुत्रवाले हैं--कुमार (षोड़शवर्षीय) पुत्रवाले हैं। वे स्वर्ण-विभूषित होकर पूर्ण आयु प्राप्त करते हैं।

वीतिहोत्रा कृतद्वसू दशस्यन्तामृताय कम् ।
समूधो रोमशं हतो देवेषु कृणुतो दुवः ॥९॥
आ शर्म पर्वतानां वृणीमहे नदीनाम् । आ विष्णोः सचाभुवः ॥१०॥
ऐतु पूषा रयिर्भगः स्वस्ति सर्वधातमः । उरुरध्वा स्वस्तये ॥११॥
अरमतिरनर्वणो विश्वो देवस्य मनसा । आदित्यानामनेह इत् ॥१२॥
यथा नो मित्रो अर्यमा वरुणः सन्ति गोपाः । सुगा ऋतस्य पन्थाः ॥१३॥
अग्निं वः पूर्व्यं गिरा देवमीले वसूनाम् ।
सपर्यन्तः पुरुप्रियं मित्रं न क्षेत्रसाधसम् ॥१४॥
मक्षू देववतो रथः शूरो वा पृत्सु कासु चित् ।
देवानां य इन्मनो यजमान इयक्षत्यभीदयज्वनो भुवत् ॥१५॥

९ प्रिय यज्ञवाले इन दम्पतीकी स्तुति देवोंको कामना करती है। वे देवोंको सुखप्रद अन्न करते हैं। वे उपयुक्त धन हैं। वे अमरत्व या सन्ततिके लाभके लिये रोमश (पुरुषेन्द्रिय) ऊध (स्त्रीकी जननेन्द्रिय) का संयोग करते हैं। वे देवोंकी सेवा करते हैं।

१० हम पर्वतके सुख (स्थिरता आदि) और नदीके सुख (जप आदि) की प्रार्थना हैं। देवोंके साथ विष्णुके सुखकी भी हम प्रार्थना करते हैं।

११ धनोंके दाता, भजनीय और सबके पोषक पूषा रक्षाके साथ आवें। उनके विस्तृत मार्ग हमारे लिये मङ्गलकर हो।

१२ शत्रुओंके द्वारा न दबने योग्य और प्रकाशक पूषाके सारे स्तोता श्रद्धासे स्तुतिसे युक्त होते हैं। आदित्योंका दान पाप-शून्य होता है।

१३ मित्र, वरुण और अर्यमा जैसे हमारे रक्षक हैं, वैसे ही सारे यज्ञ-मार्ग भी सुग

१४ देवो, तुमलोगोंके मुख्य और दीप्तिमान् अग्निकी, धनकी प्राप्तिके लिये, स्तुति द्वारा, स्तुति करता हूँ। तुम्हारे परिचर्याकर्त्ता मनुष्य अनेक लोगोंके प्रिय होते हैं। वे साधक मित्रके समान अग्निकी स्तुति करते हैं।

१५ देववान् व्यक्तिका रथ उसी तरह शीघ्र दुर्गमें प्रवेश करता है, जिस तरह शूर सेनाके मध्यमें घुसता है। जो यजमान देवोंके मनकी स्तुति द्वारा पूजा करनेकी इच्छा हैं, वह यज्ञ-शून्यको हराता है।

न यजमान रिष्यसि न सुन्वान न देवयो ।
देवानां य इन्मनो यजमान इयक्षत्यभीद्यज्वनो भुवत् ॥१६॥
नकिष्टं कर्मणा नशन्न योषन्न योषति ।
देवानां य इन्मनो यजमान इयक्षत्यभीद्यज्वनो भुवत् ॥१७॥
असदत्र सुवीर्यमुत त्यदाश्वश्व्यम् ।
देवानां य इन्मनो यजमान इयक्षत्यभीद्यज्वनो भुवत् ॥१८॥

---

१६ यजमान, तुम विनष्ट नहीं होगे। सोमाभिषवकारी, तुम विनष्ट नहीं होगे। देवाभिलाषी, तुम नहीं विनष्ट होगे। जो यजमान देवोंके मनकी ही पूजा करना चाहता है, वह यज्ञ-रहितोंको हराता है।

१७ जो यजमान देवोंके मनका यज्ञ करनेकी इच्छा करता है, उसे कर्म द्वारा कोई व्याप्त नहीं कर सकता। वह कभी भी अपने स्थानसे अलग नहीं होता। वह पुत्रादिसे भी पृथक् नहीं होता। जो यजमान देवोंके मनकी, स्तुतिके द्वारा, पूजा करनेकी इच्छा करता है, वह यज्ञ-शून्योंको अभिभूत करता है।

१८ जो यजमान देवोंके मनका यज्ञ करनेकी इच्छा करता है, उसे सुन्दर वीर्यवाला पुत्र उत्पन्न होता है, अश्वोंसे युक्त धन भी उसे होता है। जो यजमान देवोंके मनकी, स्तुतिके द्वारा, पूजा करनेकी इच्छा करता है, वह यज्ञ-शून्योंको अभिभूत करता है।

द्वितीय अध्याय समाप्त

तृतीय अध्याय

३२ सूक्त

इन्द्र देवता। कण्वगोत्रीय मेधातिथि ऋषि। गायत्री छन्द।

प्र कृतान्यृजीषिणः कण्वा इन्द्रस्य गाथया। मदे सोमस्य वोचत ॥

यः सृविन्दमनर्शनिं पिप्रुं दासमहीशुवम्। वधीदुग्रो रिणन्नपः ॥

न्यर्बुदस्य विष्टपं वर्ष्माणं बृहतस्तिर। कृषे तदिन्द्र पौंस्यम् ॥

प्रति श्रुताय वो धृषत्तूर्णाशं न गिरेरधि। हुवे सुशिप्रमूतये ॥

स गोरश्वस्य व्रजं मन्दानः सोम्येभ्यः। पुरं न शूर दर्षसि ॥

यदि मे रारणः सुत उक्थे वा दधसे चनः। आरादुप स्वधा गहि ॥

वयं घा ते अपि ष्मसि स्तोतार इन्द्र गिर्वणः। त्वन्नो जिन्व सोमपाः ॥

उत नः पितुमा भर संरराणो अविक्षितम्। मघवन् भूरि ते वसु ॥

---

१ कण्वगण, इन्द्रकी गाथाके द्वारा इन्द्रके मत्त होनेपर तुम लोग "ऋजीष" सोमके द्वारा कीर्त्तित करो।

२ जल प्रेरित करते हुए उग्र इन्द्रने सृविन्द, अनर्शनि, पिप्रु, दास और अहीशुवका वध किया था।

३ इन्द्र, मेघके आवरक स्थानको छेदो। इस वीर-कर्मका सम्पादन करो।

४ स्तोताओ, जैसे मेघसे जलकी प्रार्थना की जाती है, वैसे ही शत्रुओंके दमन-कर्ता और सुन्दर जबड़ेवाले इन्द्रसे तुम्हारी स्तुति सुनने और तुम्हारी रक्षाको प्रार्थना करता हूँ।

५ शूर, तुम प्रसन्न होकर शत्रु-नगरीके समान सोमके योग्य स्तोताओंके लिये गौ और अश्वके रहनेके द्वार खोलते हो।

६ इन्द्र, यदि मेरे अभिषुत सोम अथवा स्तोत्रमें अनुरक्त हो और यदि मुझे अन्न देते हो तो दूर देशसे, अन्नके साथ, पास आओ।

७ स्तुति-योग्य इन्द्र, हम तुम्हारे स्तोता हैं। हे सोमपायी, तुम हमें प्रसन्न करते हो।

८ धनी इन्द्र, प्रसन्न होकर तुम हमें अक्षय्य अन्न दो। तुम्हारे पास प्रचुर धन है।

इलाभिः सं रभेमहि ॥९॥

उत नो गोमतस्कृधि हिरण्यवतो अश्विनः । इलाभिः सं रभेमहि ॥९॥
बृबदुक्थं हवामहे सृप्रकरस्नमूतये । साधु कृण्वन्तमवसे ॥१०॥
यः संस्थे चिच्छतक्रतुरादीं कृणोति वृत्रहा । जरितृभ्यः पुरूवसुः ॥११॥
स नः शक्रश्चिदा शकद्दानवाँ अन्तराभरः । इन्द्रो विश्वाभिरूतिभिः ॥१२॥
यो रायोऽवनिर्महान्त्सुपारः सुन्वतः सखा । तमिन्द्रमभि गायत ॥१३॥
आयन्तारं महि स्थिरं पृतनासु श्रवोजितम् । भूरेरीशानमोजसा ॥१४॥
नकिरस्य शचीनां नियन्ता सूनृतानाम् । नकिर्वक्ता न दादिति ॥१५॥
न नूनं ब्रह्मणामृणं प्राशूनामस्ति सुन्वताम् । न सोमो अप्रता पपे ॥१६॥
पन्य इदुप गायत पन्य उक्थानि शंसत । ब्रह्मा कृणोत पन्य इत् ॥१७॥
पन्य आ दर्दिरच्छता सहस्रा वाज्यवृतः । इन्द्रो यो यज्वनो वृधः ॥१८॥

९ तुम हमें गौ, अश्व और हिरण्यसे सम्पन्न करो। हम अन्न-युक्त हों।

१० संसारकी रक्षाके लिये इन्द्र भुजाओंको पसारते और पालनके लिये साधु कार्य करते हैं। वे महान् उक्थवाले हैं। हम इन्द्रको बुलाते हैं।

११ जो इन्द्र संग्राममें बहुकर्मा होते और अनन्तर शत्रु-बध करते हैं, जो इन्द्र वृत्र-हन्ता हैं और स्तोताओंके लिये बहुधनवान् होते हैं—

१२ वे ही शक्र (शक्र=इन्द्र) हमें शक्तिशाली करें। इन्द्र दानी हैं और वे सारी रक्षाओंके द्वारा हमारे छिद्रोंको परिपूर्ण करते हैं।

१३ जो इन्द्र धनके रक्षक, सर्वोत्तम, शोभन पारवाले और सोमाभिषव-कारीके सखा हैं, उन्हीं इन्द्रके लिये स्तुति करो।

१४ इन्द्र आनेवाले, युद्ध-क्षेत्रमें अविचल, अन्नके विजेता और बल-पूर्वक प्रचुर धनके ईश्वर हैं।

१५ इन्द्रके शोभन कार्योंका कोई नियामक नहीं है। इन्द्र दाता नहीं हैं, यह कोई नहीं कहता।

१६ सोमाभिषवकारी और सोमपायी ब्राह्मणों (स्तोताओं)के पास ऋण (देव-ऋण) नहीं है। प्रचुर धनवाला ही सोमपान कर सकता है।

१७ स्तुत्य इन्द्रके लिये गान करो। स्तुत्य इन्द्रके लिये स्तोत्र उच्चारण करो। स्तुत्य इन्द्रके लिये स्तोत्रोंको बनाओ।

१८ स्तुत्य और बली इन्द्रने सैकड़ों और हजारों शत्रुओंको विदारित किया है। वह शत्रुओंके द्वारा अनाच्छादित हैं। वे यज्ञकारीके वर्द्धक हैं।

वि षू चर स्वधा अनु कृष्टीनामन्वाहुवः । इन्द्र पिब सुतानाम् ।
पिब स्वधैनवानामुत यस्तुग्र्ये सचा । उतायमिन्द्र यस्तव ॥२०॥
अतीहि मन्युषाविणं सुषुवांसमुपारणे । इमं रातं सुतं पिब ॥२१॥
इहि तिस्रः परावत इहि पञ्च जनाँ अति । धेना इन्द्रावचाकशत् ।
सूर्यो रश्मिं यथा सृजा त्वा यच्छन्तु मे गिरः ।
निम्नमापो न सध्र्यक् ॥२३॥
अध्वर्यावा तु हि षिञ्च सोमं वीराय शिप्रिणे । भरा सुतस्य पीतये ।
य उद्नः फलिगं भिनन्न्यक्सिन्धूँरवासृजत् । यो गोषु पक्वं धारयत् ।
अहन्वृत्रमृचीषम और्णवाभमहीशुवम् । हिमेनाविध्यदर्बुदम् ॥२६॥
प्र व उग्राय निष्टुरेषाह्लाय प्रसक्षिणे । देवत्तं ब्रह्मगायत ॥२७॥

---

१९ आह्वानके योग्य इन्द्र, मनुष्योंके हव्यके निकट विचरण करो और अभिषुत सो

२० इन्द्र, गायके बदलेमें खरीदे गये और जलसे प्रस्तुत किये गये अपने इस सोमका पा

२१ इन्द्र, क्रोधके साथ अभिषव करनेवाले और अनुपयुक्त स्थानमें अभिषव करनेवालेको
चले आओ। हमारे द्वारा प्रदत्त इस अभिषुत सोमका पान करो।

२२ इन्द्र, हमारी स्तुतिका तुमने देखा अथवा समझा है। तुम दूर देशसे हमारे आ
और पार्श्वमें आओ। तुम गन्धर्वों, पितरों, देवों, असुरों और राक्षसों (पञ्चजनों) को लाँघकर

२३ सूर्य जैसे किरणोंको देते हैं, वैसे ही धन दो। जैसे नीची भूमिमें जल मिलता है
मेरी स्तुतियाँ तुम्हारे साथ मिलें।

२४ अध्वर्युओ, सुन्दर शिरस्त्राण अथवा जबड़ेवाले और वीर इन्द्रके लिये शीघ्र
सेचन करो। सोमपानके लिये इन्द्रको बुलाओ।

२५ जिन्होंने जलके लिये मेघको भिन्न किया है, जिन्होंने अन्तरीक्षसे जलको नीचे
और जिन्होंने गौओंको पक्व दुग्ध प्रदान किया है, वही इन्द्र हैं।

२६ दीप्ति-समान इन्द्रने वृत्र, और्णनाभ और अहीशुवका वध किया है। इन्द्रने तुषार
मेघको फोड़ा है।

२७ उद्गाताओ, उग्र, निष्ठुर, अभिभवकर्त्ता और बल-पूर्वक हरण-कर्त्ता इन्द्रके लिये
प्रसन्नतासे प्राप्त स्तोत्र गाओ।

इन्द्रो देवेषु चेतति ॥२८॥

यो विश्वान्यभि व्रता सोमस्य मदे अन्धसः । इन्द्रो देवेषु चेतति ॥२८॥
इह त्या सधमाद्या हरी हिरण्यकेश्या । वोह्लामभि प्रयो हितम् ॥२९॥
अर्वाञ्चं त्वा पुरुष्टुतः प्रियमेधस्तुता हरी । सोमपेयाय वक्षतः ॥३०॥



३३ सूक्त

इन्द्र देवता । कण्वगोत्रीय प्रियमेध ऋषि । बृहती, गायत्री और अनुष्टुप् छन्द ।

वयं घ त्वा सुतावन्त आपो न वृक्तबर्हिषः ।
पवित्रस्य प्रस्रवणेषु वृत्रहन् परि स्तोतार आसते ॥१॥
स्वरन्ति त्वा सुते नरो वसो निरेक उक्थिनः ।
कदा सुतं तृषाण ओक आ गम इन्द्र स्वब्दीव वंसगः ॥२॥
कण्वेभिर्धृष्णवा धृषद्वाजं दर्षि सहस्रिणम् ।
पिशङ्गरूपं मघवन् विचर्षणे मक्षू गोमन्तमीमहे ॥३॥

---

२८ सोमकी मत्तता उत्पन्न होनेपर इन्द्र देवोंके पास सारे कर्मोंको सूचित करते हैं ।

२९ वे एक साथ ही प्रमत्त और हिरण्य केशवाले दोनों हरि नामके अश्व इस यज्ञमें सोम-रूप अन्नके अभिमुख इन्द्रको ले आवें ।

३० अनेकोंके द्वारा स्तुत इन्द्र, प्रियमेध द्वारा स्तुत अश्वद्वय, सोमपानके लिये, तुम्हें हमारे अभि-मुख ले आवें ।

---

१ वृत्रघ्न इन्द्र, हमलोगोंने सोमाभिषव किया है । जलके समान हम तुम्हारे सामने जाते हैं । पवित्र सोमके प्रसृत होनेपर कुश-विस्तार किये हुए स्तोता लोग तुम्हारी उपासना करते हैं ।

२ निवास-दाता इन्द्र, अभिषुत सोमके निर्गत होनेपर उक्थवाले नेतालोग स्तोत्र करते हैं । सोमके पिपासु होकर, बैलके समान शब्द करते हुए, यज्ञ-स्थानमें इन्द्र कब आवेंगे ?

३ शत्रुओंके दमनकारी इन्द्र, कण्वोंके लिये सहस्र-सङ्ख्यक अन्न दो । धनी और विशेष द्रष्टा इन्द्र, हम धृष्ट, पिशंग (पीले) रूपवाले और गोमान् अन्नकी याचना करते हैं ।

पाहि गायान्धसो मद इन्द्राय मेध्यातिथे ।
यः संमिश्लो हर्योर्यः सुते सचा वज्री रथो हिरण्ययः ॥४॥
यः सुषव्यः सुदक्षिण इनो यः सुक्रतुर्गृणे ।
य आकरः सहस्रा यः शतामघ इन्द्रो यः पूर्भिदारितः ॥५॥
यो धृषितो योऽवृतो यो अस्ति श्मश्रुषु श्रितः ।
विभूतद्युम्नश्च्यवनः पुरुष्टुतः क्रत्वा गौरिव शाकिनः ॥६॥
क ईं वेद सुते सचा पिबन्तं कद्वयो दधे ।
अयं यः पुरो विभिनत्त्योजसा मन्दानः शिप्र्यन्धसः ॥७॥
दाना मृगो न वारणः पुरुत्रा चरथं दधे ।
नकिष्ट्वा नियमदा सुते गमो महाँश्चरस्योजसा ॥८॥
य उग्रः सन्ननिःष्टृतः स्थिरो रणाय संस्कृतः ।
यदि स्तोतुर्मघवा शृणवद्धवं नेन्द्रो योषत्या गमत् ॥९॥

४ मेध्यातिथि, सोमपान करो। जो हरि नामक अश्वोंको रथमें जोतते हैं, जो सोममें सहायक हैं, जो वज्रधर हैं और जिनका रथ सोनेका है, सोम-जन्य मत्तता होनेपर उन्हीं इन्द्रकी स्तुति करो।

५ जिनका बायाँ हाथ सुन्दर है, दाहिना हाथ सुन्दर है, जो ईश्वर, सुन्दर-प्रज्ञ और सहस्रोंके कर्त्ता हैं, जो बहुधनशाली हैं, जो पुरीको तोड़ते हैं और जो यज्ञमें स्थिर हैं, उन्हीं इन्द्रकी स्तुति करो।

६ जो शत्रुओंके घर्षक हैं, जो शत्रुओंके द्वारा अनच्छादित हैं, युद्धमें जिनके आश्रित हुआ जाता है, जो प्रचुर धनवाले हैं, जो सोमपायी हैं और जो बहुतोंके द्वारा स्तुत हैं वह इन्द्र सत्कर्ममें समर्थ यजमानके लिये दुग्धदायिनी गौके समान हैं। उन इन्द्रकी स्तुति करो।

७ जो इन्द्र सुन्दर जबड़ेवाले हैं, जो सोम द्वारा परितृप्त हैं और जो बलसे पुरीका भेदन करते हैं, सोमाभिषव होनेपर ऋत्विकोंके साथ सोमपायी उन इन्द्रको कौन जानता है? कौन उनके लिये अन्न धारण करता है?

८ जैसे शत्रुओंकी खोज करनेवाला हाथी मद-जल धारण करता है, वैसे ही इन्द्र यज्ञमें चरणशील मत्तता धारण करते हैं। इन्द्र, तुम्हें कोई नियमित नहीं कर सकता। सोमाभिषवकी ओर पधारो। महान् तुम बलके द्वारा सर्वत्र विचरण करते हो।

९ इन्द्रके उग्र होनेपर शत्रुलोग उन्हें आच्छादित नहीं कर सकते। वे अचल हैं। वे युद्धके लिये शस्त्रों द्वारा अलङ्कृत हैं। धनी इन्द्र यदि स्तोताका आह्वान सुनते हैं, तब अन्यत्र नहीं जाते, केवल वहीं आते हैं।

सत्यमित्था वृषेदसि वृषजूतिर्नोऽवृतः ।
वृषाह्युग्र शृण्विषे परावति वृषो अर्वावति श्रुतः ॥१०॥
वृषणस्ते अभीशवो वृषा कशा हिरण्ययी ।
वृषा रथो मघवन् वृषणा हरी वृषा त्वं शतक्रतो ॥११॥
वृषा सोता सुनोतु ते वृषन्नृजीपिन्नाभर ।
वृषा दधन्वे वृषणं नदीष्वा तुभ्यं स्थातर्हरीणाम् ॥१२॥
एन्द्र याहि पीतये मधु शविष्ठ सोम्यम् ।
नायमच्छा मघवा शृणवद्गिरो ब्रह्मोक्था च सुक्रतुः ॥१३॥
वहन्तु त्वा रथेष्ठामा हरयो रथयुजः ।
तिरश्चिदर्यं सवनानि वृत्रहन्नन्येषां या शतक्रतो ॥१४॥
अस्माकमद्यान्तमं स्तोमं धिष्व महामह ।
अस्माकं ते सवना सन्तु शन्तमा मदाय द्युक्ष सोमपाः ॥१५॥

---

१० उग्र इन्द्र तुम सचमुच ऐसे ही मनोरथ-वर्षक हो। तुम काम-वर्षकोंके द्वारा आकृष्ट हो और हमारे शत्रुओंके द्वारा अनाच्छादित हो। तुम अभीष्ट-वर्षक कहकर विख्यात हो। तुम दूर और समीपमें अभीष्टवर्षी कहकर विख्यात हो।

११ धनी इन्द्र, तुम्हारी घोड़ेकी रस्सियाँ (लगाम) अभीष्टवर्षक हैं; तुम्हारी, सोनेकी कशा (चाबुक) अभीष्टवर्षक है, तुम्हारे दोनों अश्व अभीष्ट-दाता हैं और हे शतक्रतु इन्द्र, तुम अभीष्ट-वर्षक हो।

१२ काम-वर्षक इन्द्र, तुम्हारा सोमाभिषव करनेवाला अभीष्ट-वर्षक होकर सोमका अभि-षव करे। सरल-गामी इन्द्र, धन दो। इन्द्र, अश्वोंके अभिमुख स्थित और वर्षक तुम्हारे लिये जलमें सोमका अभिषव करनेवालेने सोमको धारण किया था।

१३ श्रेष्ठबली इन्द्र, सोम-रूप मधुके पानके लिये आओ। विना आये धनी और सुकृती इन्द्र स्तुति, स्तोत्र और उक्थ नहीं सुनते।

१४ वृत्रघ्न और बहुप्रज्ञ इन्द्र, तुम रथस्थ और ईश्वर हो। रथमें जोते हुए अश्व दूसरोंके यज्ञोंका तिरस्कार करके तुम्हें हमारे यज्ञमें ले आवें।

१५ महामह (महापूज्य) इन्द्र, आज हमारे समीपके सोमको धारण करो। दीप्त सोमके पीनेवाले इन्द्र, तुम्हारी मत्तताके लिये हमारे यज्ञ कल्याणवाही हों।

नहि षस्तव नो मम शास्त्रे अन्यस्य रण्यति ।
यो अस्मान्वीर आनयत् ॥१६॥
इन्द्रश्चिद्धा तदब्रवीत् स्त्रिया अशास्यं मनः ।
उतो अह क्रतुं रघुम् ॥१७॥
सप्ती चिद्धा मदच्युता मिथुना वहतो रथम् ।
एवेद्धूर्वृष्ण उत्तरा ॥१८॥
अधः पश्यस्व मोपरि सन्तरां पादकौ हर ।
मा ते कशप्लकौ दृशन्स्त्री हि ब्रह्मा बभूविथ ॥१९॥



३४ सूक्त

इन्द्र देवता । कण्वगोत्रीय नीपातिथि ऋषि । अनुष्टुप् और गायत्री छन्द ।

एन्द्र याहि हरिभिरुप कण्वस्य सुष्टुतिम् ।
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ॥१॥

१६ वीर इन्द्र हमारे नेता हैं । वे मेरे, तुम्हारे और दूसरेके शासनमें प्रसन्न नहीं हैं।

१७ (मेध्यातिथिके धनदाता प्रायोगि जिस समय पुरुषसे स्त्री हुए थे, उस समय) इन्द्रने ही कहा था कि, "स्त्रीके मनका शासन करना असम्भव है । स्त्रीकी बुद्धि छोटी है।"

१८ सोमके अभिमुख जानेवाले दोनों अश्व इन्द्रके रथको ले जाते हैं । इसी प्रकार अभीष्ट-वर्षक इन्द्रका रथ अश्वोंकी दृष्टिसे श्रेष्ठ है ।

१९ (इन्द्रने कहा) प्रायोगि, तुम नीचे देखा करो, ऊपर नहीं । (स्त्रियोंका यही धर्म है ।) पैरोंको संकुचित रखो (मिलाये रखो) । (इस प्रकार कपड़े पहनो कि,) तुम्हारे कश (अधोवस्त्र-प्रान्त) और प्लक (नारी-कटिका निम्न भाग) को कोई देखने नहीं पावे । यह सब इसलिये करो कि, तुम स्तोता होकर भी स्त्री हुए हो ।

१ इन्द्र, अश्वोंके साथ तुम कण्वोंकी सुन्दर स्तुतिके अभिमुख आओ । इन्द्र द्युलोकमें शासन करते हैं । दीप्त हविवाले इन्द्र, तुम द्युलोकमें जाओ ।

आ त्वा ग्रावा वद्न्निह सोमी घोषेण यच्छतु ।
दि्वो अमुष्य शासतो दि्वं यय दि्वावसो ॥२॥
अत्रा वि नेमिरेषामुरां न धूनुते वृकः ।
दि्वो अमुष्य शासतो दि्वं यय दि्वावसो ॥३॥
आ त्वा कण्वा इहावसे हवन्ते वाजसातये ।
दि्वो अमुष्य शासतो दि्वं यय दि्वावसो ॥४॥
दधामि ते सुतानां वृष्णे न पूर्वपाय्यम् ।
दि्वो अमुष्य शासतो दि्वं यय दि्वावसो ॥५॥
स्मत्पुरन्धिर्न आ गहि विश्वतोधीर्न ऊतये ।
दि्वो अमुष्य शासतो दि्वं यय दि्वावसो ॥६॥
आ नो याहि महेमते सहस्रोते शतामघ ।
दि्वो अमुष्य शासतो दि्वं यय दि्वावसो ॥७॥

२ इस यज्ञमें सोमवान् अभिषव-प्रस्तर शब्द करते हुए, ध्वनिके साथ, तुम्हें दान करें। इन्द्र, द्युलोकका शासन करते हैं। दीप्त हव्यवाले इन्द्र, तुम द्युलोकमें जाओ।

३ इस यज्ञमें अभिषव-पाषाण सोमलताको उसी प्रकार कँपाता है, जिस प्रकार तेंदुआ भेड़को कँपाता है। इन्द्र द्युलोकका शासन करते हैं। दीप्त हव्यवाले इन्द्र, तुम द्युलोकमें जाओ।

४ रक्षण और अन्न-प्राप्तिके लिये कण्वलोग इन्द्रको इस यज्ञमें बुलाते हैं। इन्द्र द्युलोकका शासन करते हैं। दीप्त हव्यवाले इन्द्र, तुम द्युलोकमें जाओ।

५ कामवर्षक वायुको जैसे प्रथम सोमरस प्रदान किया जाता है, वैसे ही मैं तुम्हें अभिषुत सोम प्रदान करूँगा। इन्द्र द्युलोकका शासन करते हैं। दीप्त हव्यवाले इन्द्र, तुम द्युलोकमें जाओ।

६ स्वर्गके कुटुम्बी इन्द्र, तुम हमारे पास आओ। सारे संसारके रक्षक इन्द्र, हमारे रक्षणके लिये आओ। इन्द्र, द्युलोकका शासन करते हैं। दीप्त हव्यवाले इन्द्र, तुम द्युलोकमें जाओ।

७ महामति, सहस्र रक्षावाले और प्रचुर धनी इन्द्र, हमारे पास आओ। इन्द्र द्युलोकका शासन करते हैं। दीप्त हव्यवाले इन्द्र, तुम द्युलोकमें जाओ।

आ त्वा होता मनुर्हितो देवत्रा वक्षदीड्यः ।
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ॥८॥

आ त्वा मदच्युता हरी श्येनं पक्षेव वक्षतः ।
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ॥९॥

आ याह्यर्य आ परि स्वाहा सोमस्य पीतये ।
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ॥१०॥

आ नो याह्युपश्रुत्युक्थेषु रणया इह ।
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ॥११॥

सरूपैरा सु नो गहि संभृतैः संभृताश्वः ।
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ॥१२॥

आयाहि पर्वतेभ्यः समुद्रस्याधि विष्टपः ।
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ॥१३॥

---

८ इन्द्र, देवोंमें स्तुत्य और मनुष्योंके द्वारा गृहमें स्थापित होता अग्नि तुम्हें वहन करें। इन्द्र, द्युलोकका शासन करते हैं। दीप्त हव्यवाले इन्द्र, तुम द्युलोकमें जाओ।

९ जैसे श्येन पक्षी (बाज) अपने दोनों पंखोंको ढोता है, वैसे ही मदस्रावी अश्वद्वय तुम्हें वहन करें। इन्द्र द्युलोकका शासन करते हैं। दीप्त हव्यवाले इन्द्र, तुम द्युलोकमें जाओ।

१० स्वामी इन्द्र, तुम चारों तरफसे आओ। तुम्हें पीनेके लिये मैं सोमका स्वाहा करता हूँ। इन्द्र द्युलोकका शासन करते हैं। दीप्त हव्यवाले इन्द्र, तुम द्युलोकमें जाओ।

११ उक्थोंका पाठ होनेपर तुम इस यज्ञमें हमारे समीप आओ और हमें प्रसन्न करो। इन्द्र द्युलोकका शासन करते हैं। दीप्त हव्यवाले इन्द्र, तुम द्युलोकमें जाओ।

१२ पुष्ट अश्ववाले इन्द्र, पुष्ट और समान रूपवाले अश्वोंके साथ आओ। इन्द्र द्युलोकका शासन करते हैं। दीप्त हव्यवाले इन्द्र, तुम द्युलोकमें जाओ।

१३ तुम पर्वतसे आओ। तुम अन्तरीक्ष-प्रदेशसे आओ। इन्द्र द्युलोकका शासन करते हैं। दीप्त हव्यवाले इन्द्र, तुम द्युलोकमें जाओ।

आ नो गव्यान्यश्व्या सहस्रा शूर दर्दृहि ।
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ॥१४॥
आ नः सहस्रशो भरायुतानि शतानि च ।
दिवो अमुष्य शासतो दिवं यय दिवावसो ॥१५॥
आ यदिन्द्रश्च दद्वहे सहस्रं वसुरोचिषः । ओजिष्ठमश्व्यं पशुम् ॥१६॥
य ऋज्रा वातरंहसोऽरुषासो रघुष्यदः । भ्राजन्ते सूर्याइव ॥१७॥
पारावतस्य रातिषु द्रवच्चक्रेष्वाशुषु । तिष्ठं वनस्य मध्य आ ॥१८॥



३५ सूक्त

अश्विद्वय देवता । कण्वगोत्रीय श्यावाश्व ऋषि । ज्योति, पङ्क्ति और महाबृहती छन्द ।

अग्निनेन्द्रेण वरुणेन विष्णुनादित्यैरुद्रैर्वसुभिः सचाभुवा ।
सजोषसा उषसा सूर्येण च सोमं पिबतमश्विना ॥१॥

---

१४ शूर इन्द्र, तुम हमें सहस्र गायें और अश्व दो । इन्द्र द्युलोकका शासन करते हैं । दीप्त हव्यवाले इन्द्र, तुम द्युलोकमें जाओ ।

१५ इन्द्र, हमें सहस्र, दश सहस्र और सौ अभीष्ट दान करो । इन्द्र द्युलोकका शासन करते हैं । दीप्त हव्यवाले इन्द्र, तुम द्युलोकमें जाओ ।

१६ हम धनके द्वारा सुशोभित होते हैं । सहस्र सङ्ख्यक हम और नेता इन्द्र बलवान् अश्व-पशु ग्रहण करते हैं ।

१७ सरलगामी, वायुके समान वेगवाले, रुचिकर और अल्प-आर्द्र अश्व सूर्यके समान कान्ति पाते हैं ।

१८ जिस समय पारावतने रथचक्रोंको गतिशील बनानेवाले इन अश्वोंको प्रदान किया था, उस समय मैं वनके मध्यमें था ।

---

१ अश्विद्वय, तुम लोग अग्नि, इन्द्र, वरुण, विष्णु, आदित्यगण, रुद्रगण और वसुगणके साथ और उषा तथा सूर्यके साथ मिलकर सोम पान करो ।

विश्वाभिर्धीभिर्भुवनेन वाजिना दिवा पृथिव्याद्रिभिः सचाभुवा।
सजोषसा उषसा सूर्येण च सोमं पिबतमश्विना। २॥
विश्वैर्देवैस्त्रिभिरेकादशैरिहाद्भिर्मरुद्भिर्भृगुभिः सचाभुवा।
सजोषसा उषसा सूर्येण च सोमं पिबतमश्विना ॥३॥
जुषेथां यज्ञं बोधतं हवस्य मे विश्वेह देवौ सवनावगच्छतम्।
सजोषसा उषसा सूर्येण चेषं नो वोह्लमश्विना ॥४॥
स्तोमं जुषेथां युवशेव कन्यनां विश्वेह देवौ सवनावगच्छतम्।
सजोषसा उषसा सूर्येण चेषं नो वोह्लमश्विना ॥५॥
गिरो जुषेथामध्वरं जुषेथां विश्वेह देवौ सवनावगच्छतम्।
सजोषसा उषसा सूर्येण चेषं नो वोह्लमश्विना ॥६॥
हारिद्रवेव पतथो वनेदुप सोमं सुतं महिषेवाव गच्छथः।
सजोषसा उषसा सूर्येण च त्रिर्वर्तिर्यातमश्विना ॥७॥

---

२ बली अश्विद्वय; तुमलोग सारी प्रजा, प्राणि-समुदाय, द्युलोक, पृथिवी और ... साथ तथा उषा और सूर्यके साथ मिलकर सोमका पान करो।

३ अश्विद्वय, तुमलोग इस यज्ञमें भक्षणकर्त्ता तेंतीस देवों, मरुतों और भृगुओंके ... उषा और सूर्यसे मिलकर सोम पान करो।

४ देव अश्विद्वय, तुमलोग यज्ञका सेवन करो। मेरे आह्वानको समझो। इस ... सवनोंको प्राप्त करो। उषा और सूर्यके साथ मिलकर हमारा अन्न ग्रहण करो।

५ देव अश्विद्वय, जैसे युवक कन्याओंकी बुलाहटको सेवित करते हैं, वैसे ही तुमलोग ... स्तोमकी सेवा करो। इस यज्ञमें स्तोमकी सेवा करो। इस यज्ञमें सारे सवनोंको प्राप्त करो। ... सूर्यके साथ मिलकर हमारा सोम-रूप अन्न ग्रहण करो।

६ देव अश्विद्वय, हमारी स्तुतिका सेवन करो। यज्ञकी सेवा करो। इस यज्ञमें सारे सवनों ... करो। उषा और सूर्यके साथ मिलकर हमारा अन्न ग्रहण करो।

७ जैसे दो हारिद्रव पक्षी (शुक अथवा हारीत ?) जलपर गिरते हैं, वैसे ही तुमलोग ... सोमकी ओर गिरो। दो भैंसोंके समान सोमको जानो। उषा और सूर्यके साथ मिलकर त्रिमार्गों ...

हंसाविव पतथो अध्वगाविव सोमं सुतं महिषेवावगच्छथः ।
सजोषसा उषसा सूर्येण च त्रिर्वर्तिर्यातमश्विना ॥८॥
श्येनाविव पतथो हव्यदातये सोमं सुतं महिषेवावगच्छथः ।
सजोषसा उषसा सूर्येण च त्रिर्वर्तिर्यातमश्विना ॥९॥
पिबतं च तृष्णुतं चा च गच्छतं प्रजां च धत्तं द्रविणं च धत्तम् ।
सजोषसा उषसा सूर्येण चोर्जं नो धत्तमश्विना ॥१०॥
जयतं च प्र स्तुतं च प्र चावतं प्रजां च धत्तं द्रविणं च धत्तम् ।
सजोषसा उषसा सूर्येण चोर्जं नो धत्तमश्विना ॥११॥
हतं च शत्रून्यततं च मित्रिणः प्रजां च धत्तं द्रविणं च धत्तम् ।
सजोषसा उषसा सूर्येण चोर्जं नो धत्तमश्विना ॥१२॥
मित्रावरुणवन्ता उत धर्मवन्ता मरुत्वन्ता जरितुर्गच्छथो हवम् ।
सजोषसा उषसा सूर्येण चादित्यैर्यातमश्विना ॥१३॥

---

८ अश्विद्वय, दो हंसों और दो पथिकोंके समान अभिषुत सोमके अभिमुख आओ और दो भैंसोंके समान सोमको समझो। उषा और सूर्यके साथ मिलकर त्रिमार्गमें गमन करो।

९ अश्विद्वय. तुमलोग दो श्येन पक्षियोंके समान अभिषुत सोमकी ओर आओ और दो भैंसोंके समान सोमको जानो। उषा और सूर्यके साथ मिलकर त्रिमार्गमें गमन करो।

१० अश्विद्वय, सोमपान करो। तृप्त होओ। आओ सन्तान दो। धन दो। उषा और सूर्यके साथ मिलकर हमें बल दो।

११ अश्विद्वय, तुम शत्रुओंको जीतो। स्तोताओंकी प्रशंसा और रक्षा करो। सन्तान दो। धन दो। उषा और सूर्यके साथ मिलकर हमें बल दो।

१२ अश्विद्वय, तुमलोग शत्रुका विनाश करो। मैत्रीसे युक्त होकर गमन करो। सन्तान दो। धन दो। उषा और सूर्यके साथ मिलकर हमें बल दो।

१३ अश्विद्वय, तुमलोग मित्र, वरुण, धर्म और मरुतोंसे युक्त हो। तुमलोग स्तोताके आह्वानकी ओर जाओ और उषा, सूर्य और आदित्योंके सहित जाओ।

अङ्गिरस्वन्ता उत त्रिष्णुवन्ता मरुत्वन्ता जरितुर्गच्छथो हवम्।
सजोषसा उषसा सूर्येण चादित्यैर्यातमश्विना ॥१४॥

ऋभुमन्ता वृषणा वाजवन्ता मरुत्वन्ता जरितुर्गच्छथो हवम्।
सजोषसा उषसा सूर्येण चादित्यैर्यातमश्विना ॥१५॥

ब्रह्म जिन्वतमुत जिन्वतं धियो हतं रक्षांसि सेधतममीवाः।
सजोषसा उषसा सूर्येण च सोमं सुन्वतो अश्विना ॥१६॥

क्षत्रं जिन्वतमुत जिन्वतं न्‍नॄन् हतं रक्षांसि सेधतममीवाः।
सजोषसा उषसा सूर्येण च सोमं सुन्वतो अश्विना ॥१७॥

धेनूर्जिन्वतमुत जिन्वतं विशो हतं रक्षांसि सेधतममीवाः।
सजोषसा उषसा सूर्येण च सोमं सुन्वतो अश्विना ॥१८॥

अत्रेरिव शृणुतं पूर्व्यस्तुतिं श्यावाश्वस्य सुन्वतो मदच्युता।
सजोषसा उषसा सूर्येण चाश्विना तिरो अह्न्यम् ॥१९॥

---

१४ अश्विद्वय, तुमलोग अङ्गिरा, विष्णु और मरुतोंके साथ स्तोताके आह्वानकी ओर तथा उषा, सूर्य और आदित्योंके साथ जाओ।

१५ अश्विद्वय, तुमलोग ऋभु, काम-वर्षक वाज और मरुतोंके साथ स्तोताके आह्वानमें जाओ और उषा, सूर्य तथा आदित्योंके साथ गमन करो।

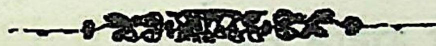
१६ अश्विद्वय, तुमलोग स्तोत्र और कर्मको जीतो। राक्षसोंका शासन और बध करो। और सूर्यके साथ अभिषव-कर्त्ताके सोमका पान करो।

१७ अश्विद्वय, तुमलोग क्षत्र (बल) और योद्धाओंको जीतो। राक्षसोंका शासन और करो। उषा और सूर्यके साथ सोमाभिषवकारीका सोमपान करो।

१८ अश्विद्वय; धेनु और विशों (वैश्यों) को जीतो, राक्षसोंका शासन और बध उषा और सूर्यके साथ सोमके अभिषव-कर्त्ताका सोमपान करो।

१९ अश्विद्वय, तुमलोग शत्रुओंका गर्व खर्व करनेवाले हो, तुमलोग जैसे स्तुतिको सुनते थे, वैसे ही श्यावाश्वकी (मेरी) मुख्य स्तुति सुनो। उषा और सूर्यके मिलकर प्रातःकालके यज्ञमें सोमपान करो।

सर्गा इव सृजतं सुष्टुतीरुप श्यावाश्वस्य सुन्वतो मदच्युता ।
सजोषसा उषसा सूर्येण चाश्विना तिरो अह्न्यम् ॥२०॥
रश्मींरिव यच्छतमध्वराँ उप श्यावाश्वस्य सुन्वतो मदच्युता ।
सजोषसा उषसा सूर्येण चाश्विना तिरो अह्न्यम् ॥२१॥
अर्वाग्रथं नि यच्छतं पिबतं सोम्यं मधु ।
आयातमश्विना गतमवस्युर्वामहं हुवे धत्तं रत्नानि दाशुषे ॥२२॥
नमोवाके प्रस्थिते अध्वरे नरा विवक्षणस्य पीतये ।
आयातमश्विना गतमवस्युर्वामहं हुवे धत्तं रत्नानि दाशुषे ॥२३॥
स्वाहाकृतस्य तृम्पतं सुतस्य देवावन्धसः ।
आयातमश्विना गतमवस्युर्वामहं हुवे धत्तं रत्नानि दाशुषे ॥२४॥



२० अश्विद्वय, श्यावाश्वकी सुन्दर स्तुतिको, आभरणके समान, ग्रहण करो । उषा और सूर्यके साथ मिलकर प्रातःकलके यज्ञमें सोमपान करो ।

२१ अश्विद्वय; अश्व-रज्जु (लगाम)के समान श्यावाश्वके यज्ञाभिमुख गमन करो । उषा और सूर्यके साथ मिलकर प्रातःकालके यज्ञमें सोमपान करो ।

२२ अश्विद्वय, अपना रथ हमारे सामने ले आओ, सोमरूप मधुका पान करो, यज्ञमें आगमन करो और सोमके अभिमुख आगमन करो । रक्षाभिलाषी होकर मैं तुम्हें बुलाता हूँ । हव्यदाताको (मुझे) रत्न दान करो ।

२३ अश्विद्वय, तुमलोग नेता हो । मुझ हवनशीलके इस किये जाते हुए नमोवाक्य-युक्त यज्ञमें सोमपानके लिये आओ । सोमके अभिमुख आओ । मैं रक्षाभिलाषी होकर तुम्हें बुलाता हूं । हव्यदताको रत्न दान करो ।

२४ देव अश्विद्वय, तुमलोग अभिषुत और स्वाहाकृत सोमसे तृप्ति प्राप्त करो । यज्ञमें आओ । सोमके अभिमुख आओ । मैं रक्षाभिलाषी होकर तुम्हें बुलाता हूँ । तुम हव्यदाताको रत्न दो ।



३६ सूक्त

इन्द्र देवता । श्यावाश्व ऋषि । शक्करी और महापङ्क्ति छन्द ।

अवितासि सुन्वतो वृक्तबर्हिषः पिबा सोमं मदाय कं शतक्रतो ।
यन्ते भागमधारयन्विश्वाः सेहानः पृतना उरु ज्रयः
समप्सुजिन्मरुत्वाँ इन्द्र सत्पते ॥१॥

प्राव: स्तोतारं मघवन्नव त्वां पिबा सोमं मदाय कं शतक्रतो ।
यन्ते भागमधारयन्विश्वाः सेहानः पृतना उरु ज्रयः
समप्सुजिन्मरुत्वाँ इन्द्र सत्पते ॥२॥

ऊर्जा देवाँ अवस्योजसा त्वां पिबा सोमं मदाय कं शतक्रतो ।
यन्ते भागमधारयन्विश्वाः सेहानः पृतना उरु ज्रयः
समप्सुजिन्मरुत्वाँ इन्द्र सत्पते ॥३॥

जनिता दिवो जनिता पृथिव्याः पिबा सोमं मदाय कं शतक्रतो ।
यन्ते भागमधारयन्विश्वाः सेहानः पृतना उरु ज्रयः
समप्सुजिन्मरुत्वाँ इन्द्र सत्पते ॥४॥

---

१ बहुकर्मा (शतक्रतु) इन्द्र, सोमका अभिषव करनेवाले और कुश-विस्तार करनेवाले के तुम रक्षक हो । सत्पति (सज्जनोंके स्वामी) और मरुतोंसे युक्त इन्द्र, देवोंने तुम्हारे लिये जो भाग निश्चित किया है, सारी शत्रु-सेना और प्रचुर वेगको अभिभूत करके और जल-मध्यमें जे मत्त होनेके लिये उस सोम-भागको पियो ।

२ धनी इन्द्र, स्तोताकी रक्षा करो । सोम-पानके द्वारा अपनी भी रक्षा करो । सत्पति मरुतोंसे युक्त बहुकर्मा इन्द्र, देवोंने तुम्हारे लिये जो सोम-भाग कल्पित किया है, सारी सेना वेगको अभिभूत करके और जल-मध्यमें विजेता होकर मत्त होनेके लिये उस सोम-भागको पियो।

३ अन्न द्वारा देवोंकी रक्षा करते हो और अपनेको बलके द्वारा बचाते हो । सत्पति और युक्त बहुकर्मा इन्द्र, देवोंने तुम्हारे लिये जो सोमभाग निश्चित किया है, सारी सेना और वेगको दबाकर और जलके बीच विजयी होकर मत्त होनेके लिये उस सोम-भागको पियो।

४ तुम द्युलोक और पृथिवीके जनक हो । सत्पति और मरुतोंसे युक्त बहुकर्मा इन्द्र, तुम्हारे देवोंने जो सोम-भाग निश्चित किया है, सारी शत्रु-सेना और बहुवेगको अभिभूत करके तथा मध्यमें विजयी होकर मत्त होनेके लिये उसी सोम-भागको पियो ।

जनिताश्वानां जनिता गवामसि पिबा सोमं मदाय कं शतक्रतो ।
यन्ते भागमधारयन्विश्वाः सेहानः पृतना उरु ज्रयः
समप्सुजिन्मरुत्वाँ इन्द्र सत्पते ॥५॥
अत्रीणां स्तोममद्रिवो महस्कृधि पिबा सोमं मदाय कं शतक्रतो ।
यन्ते भागमधारयन्विश्वाः सेहानः पृतना उरु ज्रयः
समप्सुजिन्मरुत्वां इन्द्र सत्पते ॥६॥
श्यावाश्वस्य सुन्वतस्तथा शृणु यथा शृणोरत्रेः कर्माणि कृण्वतः ।
प्र त्रसदस्युमाविथ त्वमेक इन्नृषाह्य इन्द्र ब्रह्माणि वर्धयन् ॥७॥



३७ सूक्त

इन्द्र देवता। श्यावाश्व ऋषि। अतिजगती और महापङ्क्ति छन्द।

प्रेदं ब्रह्म वृत्रतूर्येष्वाविथ प्र सुन्वतः शचीपत इन्द्र विश्वाभिरूतिभिः ।
माध्यन्दिनस्य सवनस्य वृत्रहन्ननेद्य पिबा सोमस्य वज्रिवः ॥१॥

---

५ तुम अश्वों और गौओंके जनक (पिता) हो । सत्पति और मरुतोंसे युक्त बहुकर्मा इन्द्र, तुम्हारे लिये देवोंने जो सोम-भाग परिकल्पित किया है, सारी शत्रु-सेना और बहुवेगको अभिभूत करके तथा जल-मध्यमें विजयी होकर मत्त होनेके लिये उसी सोम-भागको पियो।

६ पर्वतवाले इन्द्र, अत्रिलोगों (हमलोगों) का सोम पूजित करो। सत्पति और मरुतोंसे युक्त बहुकर्मा इन्द्र देवोंने तुम्हारे लिये जो सोमभाग परिकल्पित किया है, समस्त शत्रु-सेना और बहुवेगको दबाकर तथा जलमध्यमें विजेता बनकर मत्त होनेके लिये उसी सोम-भागको पियो।

७ इन्द्र, तुमने जैसे यज्ञ-कर्त्ता अत्रि ऋषिकी स्तुति सुनी थी, वैसे ही सोमाभिषव-कर्त्ता श्यावाश्वकी (मेरी) स्तुति सुनो। अकेले ही तुमने युद्धमें स्तोत्रोंको वर्द्धित करते हुए त्रसदस्युको बचाया था।

---

१ यज्ञपति इन्द्र, युद्धमें तुम सारे रक्षणोंसे इस स्तोत्र (ब्राह्मण) की रक्षा करो। सोमाभिषवकी भी रक्षा करना। अनिन्द्य वज्री और वृत्रघ्न इन्द्र, माध्यन्दिन सवनका सोम पियो।

सेहान उग्र पृतना अभि द्रुहः शचीपत इन्द्र विश्वाभिरूतिभिः।
माध्यन्दिनस्य सवनस्य वृत्रहन्ननेद्य पिबा सोमस्य वज्रिवः ॥२
एकराळस्य भुवनस्य राजसि शचीपत इन्द्र विश्वाभिरूतिभिः।
माध्यन्दिनस्य सवनस्य वृत्रहन्ननेद्य पिबा सोमस्य वज्रिवः ॥३॥
सस्थावाना यवयसि त्वमेक इच्छचीपत इन्द्र विश्वाभिरूतिभिः
माध्यन्दिनस्य सवनस्य वृत्रहन्ननेद्य पिबा सोमस्य वज्रिवः ॥४॥
क्षेमस्य च प्रयुजश्च त्वमीशिषे शचीपत इन्द्र विश्वाभिरूतिभिः
माध्यन्दिनस्य सवनस्य वृत्रहन्ननेद्य पिबा सोमस्य वज्रिवः ॥५
क्षत्राय त्वमवसि न त्वमाविथ शचीपत इन्द्र विश्वाभिरूतिभिः
माध्यन्दिनस्य सवनस्य वृत्रहन्ननेद्य पिबा सोमस्य वज्रिवः ॥६॥
श्यावाश्वस्य रेभतस्तथा शृणु यथाशृणोरत्रेः कर्माणि कृण्वतः।
प्र त्रसदस्युमाविथ त्वमेक इन्नृषाह्य इन्द्र क्षत्राणि वर्धयन् ॥७



२ कर्मपति (शचीपति) और उग्र इन्द्र, शत्रु-सेनाओंको अभिभूत करके सारी द्वारा स्तोत्र (ब्राह्मण) की रक्षा करो। अनिन्द्नीय (प्रशंसनीय). वज्रधर और वृत्रह माध्यन्दिन सवनका सोम पियो।

३ यज्ञपति इन्द्र, तुम इस भुवनके एकमात्र राजा होकर और सारी रक्षाओंसे यु शोभा पाते हो। अनिन्द्नीय. वज्रधर और वृत्रघ्न इन्द्र, माध्यन्दिन सवनका सोम पियो

४ यज्ञपति इन्द्र, समान रूपसे अवस्थित इस लोक-द्वयको तुम्हीं अलग करते हो न्दनीय, वज्रधर और वृत्रघ्न इन्द्र. माध्यन्दिन सवनका सोम पियो।

५ यज्ञपति (शचीपति) इन्द्र, सारी रक्षाओंसे युक्त होकर समस्त संसार, म प्रयोगके ईश्वर हो। अनिन्द्नीय, वज्रधर और वृत्रघ्न इन्द्र, माध्यन्दिन सवनका सोम पि

६ यज्ञपति इन्द्र, सारी रक्षाओंसे युक्त होकर संसारके बलके लिये होते हो—और रक्षा करते हो। तुम्हारी रक्षा कोई नहीं करता। अनिन्द्नीय, वज्री और वृत्रघ्न, माध्यन्दि नका सोम पियो।

७ इन्द्र, तुमने जैसे यज्ञ-कर्त्ता अत्रिकी स्तुति सुनी थी, वैसे ही (मुझ) स्तोता श्वकी स्तुति सुनो। तुमने अकेले ही युद्धमें स्तोत्रोंको वर्द्धित करके त्रसदस्युकी रक्षा की

३८ सूक्त

इन्द्र और अग्नि देवता। श्यावाश्व ऋषि। गायत्री छन्द।

यज्ञस्य हि स्थ ऋत्विजा सस्नी वाजेषु कर्मसु।
इन्द्राग्नी तस्य बोधतम् ॥१॥
तोशासा रथयावाना वृत्रहणाऽपराजिता।
इन्द्राग्नी तस्य बोधतम् ॥२॥
इदं वां मदिरमध्वधुक्षन्नद्रिभिर्नरः। इन्द्राग्नी तस्य बोधतम् ॥३॥
जुषेथां यज्ञमिष्टये सुतं सोमं सधस्तुती।
इन्द्राग्नी आ गतं नरा ॥४॥
इमा जुषेथां सवना येभिर्हव्यान्यूहथुः।
इन्द्राग्नी आ गतं नरा ॥५॥
इमां गायत्रवर्तनिं जुषेथां सुष्टुतिं मम।
इन्द्राग्नी आ गतं नरा ॥६॥

---

१ इन्द्र और अग्नि. तुमलोग शुद्ध और ऋत्विक् हो। युद्धों और कर्मोंमें मुझ यजमान-की स्तुतिको जानो।

२ इन्द्र और अग्नि, तुमलोग शत्रु-हिंसक, रथके द्वारा गमनशील, वृत्रघ्न और अपराजित हो। तुम मुझे जानो।

३ इन्द्र और अग्नि, यज्ञके नेताओंने तुम्हारे लिये, पाषाणके द्वारा, इस मदकर मधु (सोम) का दोहन किया है। तुम मुझे जानो।

४ एक साथ ही स्तुत्य और नेता इन्द्र तथा अग्नि, यज्ञकी सेवा करो। यज्ञके लिये अभि-षुत सोमकी ओर आओ।

५ इन्द्र और अग्नि. तुमलोग नेता हो। तुमलोग जिसके द्वारा हव्यका वहन करते हो, उसी सवनकी सेवा करो। यहाँ आओ।

६ नेता इन्द्र और अग्नि, तुमलोग इस गायत्र-मार्गको सुन्दर स्तुतिकी सेवा करो। आओ।

प्रातर्यावभिरा गतं देवेभिर्जेन्यावसू ।
इन्द्राग्नी सोमपीतये ॥७॥
श्यावाश्वस्य सुन्वतोऽत्रीणां शृणुतं हवम् ।
इन्द्राग्नी सोमपीतये ॥८॥
एवा वामह्व ऊतये यथाहुवन्त मेधिराः ।
इन्द्राग्नी सोमपीतये ॥९॥
आहं सरस्वतीवतोरिन्द्राग्न्योरवो वृणे ।
याभ्यां गायत्रमृच्यते ॥१०॥

३९ सूक्त

अग्नि देवता । कण्वगोत्रीय नाभाक ऋषि । महापङ्क्ति छन्द ।

अग्निमस्तोष्यृग्मियमग्निमीला यजध्यै ।
अग्निर्देवाँ अनक्तु न उभे हि विदथे
कविरन्तश्चरति दूत्यं नभन्तामन्यके समे ॥१॥

---

७ धन-विजयी इन्द्र और अग्नि, तुमलोग प्रातःकाल देवोंके साथ सोमपानके लिये आ

८ इन्द्र और अग्नि, सोमपानके लिये तुमलोग सोमका अभिषव करनेवाले श्याव ऋत्विकोंका आह्वान सुनो ।

९ इन्द्र और अग्नि, जैसे प्राज्ञोंने तुम्हें बुलाया है, वैसे ही मैं, रक्षा और सोमपानके तुम्हें बुलाता हूँ ।

१० जिनके लिये साम-गान किया जाता है, मैं उन्हीं स्तुतिवाले इन्द्र और अग्निके पास प्रार्थना करता हूँ ।

१ ऋक् मन्त्रोंके योग्य अग्निकी मैं स्तुति करता हूँ । यज्ञके लिये स्तुति द्वारा मैं अग्निकी करता हूँ । हमारे यज्ञमें अग्नि हव्य द्वारा देवोंकी पूजा करें । कवि अग्नि स्वर्ग और पृथिवीके दूत-कर्म करते हैं । अग्नि सारे शत्रुओंको मारें ।

न्यग्ने नव्यसा वचस्तनूषु शंसमेषाम् ।
न्यराती रराव्णां विश्वा अर्यो अरातीरितो
युच्छन्त्वामुरो नभन्तामन्यके समे ॥२॥
अग्ने मन्मानि तुभ्यं कं घृतं न जुह्व आसनि ।
स देवेषु प्र चिकिद्धि त्वं ह्यसि पूर्व्यः शिवो
दूतो विवस्वतो नभन्तामन्यके समे ॥३॥
तत्तदग्निर्वयो दधे यथायथा कृपण्यति ।
ऊर्जाहुतिर्वसूनां शं च योश्च मयो दधे
विश्वस्यै देवहूत्यै नभन्तामन्यके समे ॥४॥
स चिकेत सहीयसाग्निश्चित्रेण कर्मणा ।
स होता शश्वतीनां दक्षिणाभिरभीवृत
इनोति च प्रतीव्यं नभन्तामन्यके समे ॥५॥

२ अग्नि, नवीन स्तोत्रोंके द्वारा हमारे अङ्गोंमें जो शत्रुओंकी (भावी) हिंसा है, उसे जलाना। हव्यदाताओंके शत्रुओंको जलाओ। अभिगमनवाले सारे मूढ़ शत्रु यहाँसे चले जायँ। अग्नि सारे शत्रुओंको मारें।

३ अग्नि, तुम्हारे मुँहमें सुखकर घृतके समान स्तोत्रका होम करता हूँ। देवोंमें तुम हमारी स्तुतिको जानो। तुम प्राचीन हो, सुखकर हो और देवोंके दूत हो। अग्नि सारे शत्रुओंको मारें।

४ स्तोता लोग जो-जो अन्न माँगते हैं, अग्नि वही-वही अन्न प्रदान करते हैं। अग्नि अन्नके द्वारा बुलाये जाकर यजमानोंको शान्तिकर और विषयोपभोग-जन्य सुख देते हैं। वह सारे देवोंके आह्वानोंमें रहते हैं। अग्नि सारे शत्रुओंको मारें।

५ वह अग्नि अभिभवकारक नाना प्रकारके कर्मोंके द्वारा जाने जाते हैं। वह सारे देवोंके होता हैं। वह पशुओंसे घेरे गये हैं। वह शत्रुओंके सम्मुख गमन करते हैं। अग्नि सारे शत्रुओंको मारें।

अग्निर्जाता देवानामग्निर्वेद मर्तानामपीच्यम् ।
अग्निः स द्रविणोदा अग्निर्द्वारा व्यूर्णुते
स्वाहुतो नवीयसा नभन्तामन्यके समे ॥६॥
अग्निर्देवेषु सम्वसुः स विक्षु यज्ञियास्वा ।
स मुदा काव्या पुरु विश्वं भूमेव पुष्यति
देवो देवेषु यज्ञियो नभन्तामन्यके समे ॥७॥
यो अग्निः सप्तमानुषः श्रितो विश्वेषु सिन्धुषु ।
तमागन्म त्रिपस्त्यं मन्धातुर्दस्युहन्तममग्निं
यज्ञेषु पूर्व्यं नभन्तामन्यके समे ॥८॥
अग्निस्त्रीणि त्रिधातून्या क्षेति विदथा कविः ।
स त्रीँरेकादशाँ इह यक्षच्च पिप्रयच्च नो विप्रो दूतः
परिष्कृतो नभन्तामन्यके समे ॥९॥

---

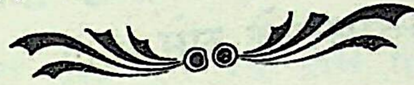
६ अग्नि देवोंका जन्म जानते हैं। अग्नि मनुष्योंके गोपनीयको जानते हैं। अग्नि धन... वह अभिनव हव्य द्वारा भली भाँति आहूत होकर धनका द्वार उद्घाटित करते हैं। अग्नि... शत्रुओंको मारें।

७ अग्नि देवोंमें रहते हैं। वह यज्ञार्ह प्रजागणमें रहते हैं जैसे भूमि सारे संसारका पोषण करती... वैसे ही वह सहर्ष सारे कार्योंका पोषण करते हैं। अग्नि देवोंमें यज्ञ-योग्य हैं। वह सारे शत्रुओंको मारें।

८ अग्नि सात मनुष्यों (सिन्धु आदि सात नदियोंके तट-वासियों) वाले और सारी नदियों... आश्रित हैं। वह तीन स्थानों (द्यौ, पृथिवी और अन्तरीक्ष) वाले हैं। अग्निने यौवनाश्वके पुत्र मान्धाताके लिये सर्वापेक्षा अधिक दस्यु-हनन किया है। वह यज्ञोंमें मुख्य हैं। अग्नि समस्त शत्रुओंको मारें।

९ कवि (क्रान्तदर्शी) अग्नि द्यौ आदि तीन प्रकारके तीन स्थानोंमें रहते हैं। अग्नि दूत... और अलङ्कृत होकर इस यज्ञमें तैंतीस देवोंका यज्ञ करें। हमारी अभिलाषा पूर्ण करें। अग्नि... शत्रुओंको मारें।

त्वं नो अग्न आयुषु त्वं देवेषु पूर्व्य वस्व एक इरज्यसि ।
त्वामापः परिस्रुतः परि यन्ति स्वसेतवो नभन्तामन्यके समे ॥१०॥



४० सूक्त

इन्द्र और अग्नि देवता । नाभाक ऋषि । शक्वरी, त्रिष्टुप् और महापङ्क्ति छन्द ।

इन्द्राग्नी युवं सुनः सहन्ता दासथो रयिम् ।
येन दृह्ला समत्स्वा वीलु चित् साहिषीमह्यग्निर्वनेव
वात इन्नभवन्तामन्यके समे ॥१॥
नहि वां वव्रयामहेऽथेन्द्रमिद्यजामहे शविष्ठं नृणां नरम् ।
स नः कदा चिदर्वता गमदा वाजसातये
गमदा मेधसातये नभन्तामन्यके समे ॥२॥
ता हि मध्यं भराणामिन्द्राग्नी अधिक्षितः ।
ता उ कवित्वना कवी पृच्छ्यमाना सखीयते
सन्धीतमश्नुतं नरा नभन्तामन्यके समे ॥३॥

---

१० प्रचीन अग्नि, तुम अकेले ही हो; परन्तु मनुष्यों और देवोंके ईश्वर हो । तुम सेतु-स्वरूप हो । तुम्हारी चारो ओर जल जाता है । अग्नि सारे शत्रुओंको मारें ।



१ इन्द्र और अग्नि, शत्रुओंको हराते हुए हमें धन दो । जैसे अग्नि वायु द्वारा वनको अभिभूत करते हैं, वैसे ही हम भी उस धनकी सहायतासे दृढ़ शत्रु-बलको दबावेंगे । इन्द्र और अग्नि सारे शत्रुओंको मारें ।

२ इन्द्र और अग्नि, हम तुमसे धनकी याचना नहीं करते । सबसे बली और नेताओंके नेता इन्द्रका ही यज्ञ करते हैं । इन्द्र अभी अश्वपर चढ़कर अन्न-प्राप्तिके लिये आते हैं और कभी यज्ञ-प्राप्तिके लिये आते हैं । इन्द्र और अग्नि सारे शत्रुओंको मारें ।

३ वे प्रसिद्ध इन्द्र और अग्नि युद्धके मध्यस्थलमें निवास करते हैं । नेताओ, कवि (क्रान्तकर्मी) द्वारा पूछे जानेपर तुम्हीं लोग मित्रता चाहनेवाले यजमानके कृत कर्मको व्याप्त करते हो । इन्द्र और अग्नि सारे शत्रुओंको हिंसा करें ।

अभ्यर्च नभाकवदिन्द्राग्नीयजसा गिरा ।
ययोर्विश्वमिदं जगदियं द्यौः पृथिवी मह्यु-
पस्थे विभृतो वसु नभन्तामन्यके समे ॥४॥

प्र ब्रह्माणि नभाकवदिन्द्राग्निभ्यामिरज्यत ।
या सप्तबुध्नमर्णवं जिह्मबारमपोर्णुत
इन्द्र ईशान ओजसा नभन्तामन्यके समे ॥५॥

अपि वृश्च पुराणवद्व्रततेरिव गुष्पितमोजो दासस्य दम्भय ।
वयं तदस्य संभृतं वस्विन्द्रेण वि भजेमहि नभन्तामन्यके समे ॥६॥

यदिन्द्राग्नी जना इमे विह्वयन्ते तना गिरा ।
अस्माकेभिर्नृभिर्वयं सासह्याम पृतन्यतो
वनुयाम वनुष्यतो नभन्तामन्यके समे ॥७॥

---

४ यज्ञ और स्तुस्तिके द्वारा नाभाकवाले इन्द्र और अग्निकी पूजा करो। इन्द्र और अग्नि... सारा संसार विद्यमान है। इन्हीं इन्द्र और अग्निकी गोदमें महती मही और द्युलोक धनको... करते हैं। इन्द्र और अग्नि सारे शत्रुओंको मारें।

५ नाभाकके समान ऋषि इन्द्र और अग्निके लिये स्तुति प्रेरित करते हैं। ये इन्द्र... अग्नि सप्त मूलवाले हैं और अवरुद्ध द्वारवाले समुद्रको तेजके द्वारा आच्छादित करते... इन्द्र बल द्वारा ईश्वर हैं। इन्द्र और अग्नि सारे शत्रुओंको मार।

६ इन्द्र, प्राचीन मनुष्य जैसे लताकी शाखाको काटता है, वैसे ही तुम सारे शत्रुओं... काटो। दास नामक शत्रुके बलका विनाश करो। हम इन्द्रकी कृपासे दासके उस संगृहीत धन... विभाग कर लेंगे। इन्द्र और अग्नि सारे शत्रुओंको मारें।

७ ये जो सब मनुष्य धन और स्तुतिके द्वारा इन्द्र और अग्निको बुलाते हैं, ... ससैन्य हम अपने मनुष्योंकी सहायतासे शत्रुओंको हरावेंगे और स्तुतिवाले शत्रुको ... करेंगे।

या नु श्वेताववो दिव उच्चरात उप द्युभिः ।
इन्द्राग्न्योरनु व्रतमुहाना यन्ति सिन्धवो
यान्त्सीं बन्धादमुञ्चतां नभन्तामन्यके समे ॥८॥
पूर्वीष्ट इन्द्रोपमातयः पूर्वीरुत प्रशस्तयः सूनो हिन्वस्य हरिवः
वस्वो वीरस्यापृचो या नु साधन्तनो धियो नभन्तामन्यके समे ॥९॥
तं शिशीता सुवृक्तिभिस्त्वषं सत्वानमृग्मियम् ।
उतो नु चिद्य ओजसा शुष्णस्याण्डानि भेदति
जेषत् स्वर्वतीरपो नभन्तामन्यके समे ॥१०॥
तं शिशीता स्वध्वरं सत्यं सत्वानमृत्वियम् ।
उतो नु चिद्य ओहत आण्डा शुष्णस्य
भेदत्यजैः स्वर्वतीरपो नभन्तामन्यके समे ॥११॥

---

८ जो श्वेतवर्ण (सात्त्विक) इन्द्र और अग्नि नीचेसे दीप्ति द्वारा द्यौके ऊपर जाते हैं, उन्हींके लिये हविका वहन करते हुए यजमान कर्मानुष्ठान करते हैं। उन्होंने ही प्रख्यात सिन्धु आदि नदियोंको बन्धनसे मुक्त किया था। इन्द्र और अग्नि सारे शत्रुको मारें।

९ हरि नामक अश्ववाले, वज्रधर और प्रेरक इन्द्र, तुम प्रीतिकर, वीर और धनी हो। तुम्हारे लिये उपमानकी अनेक वस्तुएं हैं। तुम्हारी अनेक प्राचीन प्रशस्तियाँ भी हैं। ये प्रशस्तियाँ हमारी बुद्धिको सिद्ध करें। इन्द्र और अग्नि शत्रुओंको मारें।

१० स्तोताओ, दीप्त, धन-पात्र और ऋग्-मन्त्रके योग्य इन्द्रको उत्तम स्तुति द्वारा संस्कृत करो। जो इन्द्र शुष्ण नामक असुरके अपत्योंको मारते हैं, वही स्वर्गीय जलको जीतते हैं। इन्द्र और अग्नि सारे शत्रुओंको मारें।

११ स्तोताओ, सुन्दर यज्ञवाले, अविनाशी, धनी और याग-योग्य इन्द्रको स्तुति द्वारा संस्कृत करो। जो इन्द्र यज्ञके अभिमुख जाते हैं, वह शुष्णके अण्डों (अपत्यों) को मारते और स्वर्गीय जलको जीतते हैं। इन्द्र और अग्नि सारे शत्रुओंको मारें।

एवेन्द्राग्निभ्यां पितृवन्नवीयो मन्धातृवदङ्गिरस्वदवाचि ।
त्रिधातुना शर्मणा पातमस्मान्वयं स्याम पतयो रयीणाम् ।१२॥



४१ सूक्त

वरुण देवता । नाभाक ऋषि । महापङ्क्ति छन्द ।

अस्मा ऊ षु प्रभूतये वरुणाय मरुद्भ्योऽर्चा विदुष्टरेभ्यः ।
यो धीता मानुषाणां पश्वो गा इव रक्षति नन्भतामन्यके समे ॥१॥
तमू षु समना गिरा पितॄणां च मन्मभिः ।
नाभाकस्य प्रशस्तिभिर्यः सिन्धूनामुपोदये
सप्तस्वसा स मध्यमो नभन्तामन्यके समे ॥२॥
स क्षपः परिषस्वजे न्युस्रो मायया दधे स विश्वं परिदर्शतः ।
तस्य वेनीरनु व्रतमुषस्तिस्रो अवर्धयन्नभन्तामन्नके समे ॥३॥

---

१२ मैंने पिता मान्धाता और अङ्गिराके समान इन्द्र और अग्निके लिये नवीन स्तुति पाठ किया है। वे तीन पर्वों (कोठों) वाले गृह द्वारा हमारा पालन करें। हम धनाधिपति होंगे

---

१ स्तोता, प्रचुर धनकी प्राप्तिके लिये, इन वरुण और अतिशय विद्वान् मरुतोंके लि स्तुति करो। कर्म द्वारा वरुण मनुष्योंके पशुकी, गौओंके समान् रक्षा करते हैं। वह सारे श ओंको मारें।

२ योग्य स्तुतिके द्वारा मैं उन वरुणकी स्तुति करता हूँ। स्तोत्रोंके द्वारा पि स्तुति करता हू। नाभाक ऋषिकी स्तुतियोंके द्वारा स्तुति करता हूँ। वह नदियोंके पास उ होते हैं। उनकी सात बहनें हैं। वह मध्यम हैं। वह सारे शत्रुओंको मारें।

३ वरुण रात्रियोंका आलिङ्गन करते हैं। वह दर्शनीय हैं। वह ऊपर गमन करते माया वा कर्मके द्वारा सारे संसारको धारण करते हैं। उनके कर्माभिलाषी मनुष्य तीन उ (प्रातः, माध्यन्दिन और सायम्) को वर्द्धित करते हैं। वह सारे शत्रुओंको मारें।

यः ककुभो निधारयः पृथिव्यामधि दर्शतः ।
स माता पूर्व्यं पदं तद्वरुणस्य सप्त्यं स हि
गोपाइवेर्यो नभन्तामन्यके समे ॥४॥
यो धर्ता भुवनानां य उस्राणामपीच्या वेद नामानि गुह्या ।
स कविः काव्या पुरु रूपं द्यौरिव पुष्यति नभन्तामन्यके समे ॥५॥
यस्मिन्विश्वानि काव्या चक्रे नाभिरिव श्रिता ।
त्रितं जूती सपर्यत व्रजे गावो न संयुजे युजे
अश्वाँ अयुक्षत नभन्तामन्यके समे ॥६॥
य आस्वत्क आशये विश्वा जातान्येषाम् ।
परि धामानि मर्मृशद्वरुणस्य पुरो गये
विश्वे देवा अनु व्रतं नभन्तामन्यके समे ॥७॥
स समुद्रो अपीच्यस्तुरो द्यामिव रोहति नि यदासु यजुर्दधे ।
स माया अर्चिना पदास्तृणान्नाकमारुहन्नभन्तामन्यके समे ॥८॥

४ जो वरुण पृथिवीके ऊपर दिशाओंको धारण करते हैं, वह दर्शनीय निर्माता हैं। प्राचीन स्थान (स्वर्ग) और जहाँ हम विचरण करते हैं—इन दोनों स्थानोंके स्वामी वरुण हैं। वही ईश्वर होकर हमारी गौओंकी रक्षा करते हैं। वह सारे शत्रुओंको मारें।

५ जो वरुण भुवनोंके धारक और रश्मियोंके अन्तर्हित तथा गुहामें निहित नामोंको जानते हैं, वही वरुण प्राज्ञ होकर अनेक कवि-कर्मों (काव्यों) का, द्युलोकके समान, पोषण करते हैं। वह सारे शत्रुओंको मारें।

६ सारे कवि-कर्म, चक्रकी नाभिके समान, जिन वरुणका आश्रय किये हुए हैं, उन्हीं स्थान-त्रयवाले वरुणकी शीघ्र परिचर्या करो। जैसे गोशालामें गौ जाती है, वैसे ही हमें हरानेके लिये, युद्धके निमित्त, शत्रुलोग अश्वको जोतते हैं। वह सारे शत्रुओंको मारें।

७ वरुण सारी दिशाओंको व्याप्त किये हुए हैं। वह शत्रुओंके चारो ओर फैले हुए नगरोंका विनाश करते हैं। वरुणके रथके सम्मुख सारे देवता कर्मानुष्ठान करते हैं। वह सारे शत्रुओंको मारें।

८ समुद्र-स्वरूप वह वरुण अन्तर्हित होकर शीघ्र ही आदित्यके समान स्वर्गारोहण करते और चारो दिशाओंमें प्रजाको दान देते हैं। वह द्युतिमान् पदके द्वारा मायाका विनाश करते और स्वर्ग-गमन करते हैं। वह सारे शत्रुओंको मारें।

यस्य श्वेता विचक्षणा तिस्रो भूमीरधिक्षितः ।
त्रिरुत्तराणि पप्रतुर्वरुणस्य ध्रुवं सदः स
सप्तानामिरज्यति नभन्तामन्यकेसमे ॥९॥
यः श्वेताँ अधिनिर्णिजश्चक्रे कृष्णाँ अनु व्रता ।
स धाम पूर्व्यं ममे यः स्कम्भेन वि रोदसी
अजो न द्यामधारयन्नभन्तामन्यके समे ॥१०॥



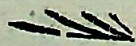
४२ सूक्त

१-३ के वरुण और शेष के अश्विद्वय देवता । अर्चनाना वा नाभाक ऋषि । त्रिष्टुप् और अनुष्टुप् छन्द ।

अस्तभ्नाद्द्यामसुरो विश्ववेदा अमिमीत वरिमाणं पृथिव्याः ।
आसीदद्विश्वा भुवनानि सम्राड्विश्वेत्तानि वरुणस्य व्रतानि ॥१॥
एवा वन्दस्व वरुणं बृहन्तं नमस्या धीरममृतस्य गोपाम् ।
स नः शर्म त्रिवरूथं वि यंसत् पातं नो द्यावापृथिवी उपस्थे ॥२॥

९ अन्तरीक्षमें रहनेवाले जिन वरुणके शुभ्रवर्ण और विलक्षण तीन तेज तीनों भुवनोंमें प्रसिद्ध हैं, उन वरुणका स्थान अविचल है। वह सातो सिन्धु आदि नदियोंके अधीश्वर हैं। वह सारे शत्रुओंको मारें ।

१० जो दिनमें अपनी किरणोंको शुभ्र-वर्ण और रातमें कृष्ण-वर्ण करते हैं, उन्हीं ने अपने कर्मके लिये द्युलोक और अन्तरीक्ष लोकका निर्माण किया है। जैसे आदित्य द्युलोक धारण करते हैं, वैसे ही वरुणने अन्तरीक्षके द्वारा द्यावापृथिवीको धारण किया है। वह शत्रुओंको मारें ।



१ सर्वज्ञ और बली (असुर) वरुणने द्युलोकको रोक रखा था, पृथिवीके विस्तारका परिमाण किया था और सारे भुवनोंके सम्राट् होकर आसीन हुए थे। वरुणके ऐसे अनेक कार्य हैं।

२ स्तोता, इस प्रकार बृहत् वरुणकी वन्दना करो । अमृतके रक्षण और प्राज्ञ (धीर) वरुणको नमस्कार करो । वरुण हमें तीन तल्लोंका मकान दें । हम उनकी गोदमें वर्त्तमान हैं। द्यावापृथिवी हमारी रक्षा करें ।

इमां धियं शिक्षमाणस्य देव क्रतुं दक्षं वरुण सं शिशाधि ।
ययाति विश्वा दुरिता तरेम सुतर्माणमधि नावं रुहेम ॥३॥
आ वां ग्रावाणो अश्विना धीभिर्विप्रा अचुच्यवुः ।
नासत्या सोमपीतये नभन्तामन्यके समे ॥४॥
यथा वामत्रिरश्विना गीर्भिर्विप्रो अजोहवीत् ।
नासत्या सोमपीतये नभन्तामन्यके समे ॥५॥
एवा वामह्व ऊतये यथाहुवन्त मेधिराः ।
नासत्या सोमपीतये नभन्तामन्यके समे ॥६॥



६ अनुवाक । ४३ सूक्त

अग्नि देवता । अङ्गिराके पुत्र विरूप ऋषि । गायत्री छन्द ।

इमे विप्रस्य वेधसोऽग्ने रस्तृतयज्वनः । गिरः स्तोमास ईरते ॥१॥

---

३ दिव्य वरुण, कर्मानुष्ठान करनेवाले मेरे कर्म, प्रज्ञान और बलको तीक्ष्ण करो। जिसके द्वारा हम सारे दुष्कर्मोंको लाँघ सकें, ऐसी सरलतासे पार जानेवाली नौकापर हम चढ़ेंगे।

४ सत्यस्वरूप अश्विद्वय, प्राज्ञ ऋत्विक् (विप्र) और अभिषवके समस्त पाषाण, सोमपानके लिये, अपने-अपने कार्यों द्वारा तुम्हारे अभिमुख जाते हैं। अश्विद्वय सारे शत्रुओंकी हिंसा करें।

५ नासत्य अश्विद्वय, प्राज्ञ अत्रिने जैसे स्तुति द्वारा, सोमपानके लिये, तुम्हें बुलाया था, वैसे ही मैं बुलाता हूँ। अश्विद्वय सारे शत्रुओंको मारें।

६ नासत्यद्वय, मेधावियोंने जैसे सोमपानके लिये तुम्हें बुलाया था, वैसे ही मैं भी, रक्षाके लिये, बुलाता हूँ। अश्विद्वय सारे शत्रुओंको मारें।

१ हमारे ये स्तोता अग्निके लिये स्तुति करते हैं। अग्नि मेधावी और विधाता हैं। वह कभी यजमानकी हिंसा नहीं करते।

अस्मै ते प्रतिहर्यते जातवेदो विचर्षणे । अग्ने जनामि सुष्टुतिम् ॥२॥

आरोकाइव घेदह तिग्मा अग्ने तव त्विषः । दद्भिर्वनानि बप्सति ॥३॥

हरयो धूमकेतवो वातजूता उप द्यवि । यतन्ते वृथगग्नयः ॥४॥

एते त्ये वृथगग्नय इद्धासः समदृक्षत । उषसामिव केतवः ॥५॥

कृष्णा रजांसि पत्सुतः प्रयाणे जातवेदसः । अग्निर्यद्रोधति क्षमि ॥६॥

धासिं कृण्वान अबधीर्बप्सदग्निर्न वायति । पुनर्यन्तरुणीरपि ॥७॥

जिह्वाभिरह नन्नमदर्चिषा जञ्जणाभवन । अग्निर्वनेषु रोचते ॥८॥

अप्स्वग्ने साधिष्ठव सौषधीरनु रुध्यसे । गर्भे सञ्जायसे पुन ॥९॥

उदग्ने तव तद्घृतादर्ची रोचत आहुतम् । निंसानं जुह्वो मुखे ॥१०॥

उक्षान्नाय वशान्नाय सोमपृष्ठाय वेधसे । स्तोमैर्विधेमाग्नये ॥११॥

---

२ जातधन और विशेष दर्शक अग्नि तुम दान देनेवाले हो; इसलिये तुम्हारे लिये स्तुति उत्पन्न करता हूँ ।

३ अग्नि तुम्हारी तीखी ज्वालाएँ आरोचमान पशुओंके समान दाँतोंके द्वारा अन्न भक्षण करती हैं ।

४ हरणशील, वायु-प्रेरित और धूम-ध्वज सारे अग्नि अन्तरीक्षमें अलग अलग जाते हैं।

५ पृथक्-पृथक् समिद्ध ये अग्नि, होताओंके द्वारा, उषाके केतुके समान दिखाई दे रहे हैं।

६ जातप्रज्ञ अग्नि जिस समय पृथिवीपर शुष्क काष्ठका आश्रय करते हैं, उस समय प्रस्थान-कालमें धूलियाँ काली हो जाती हैं ।

७ अग्नि ओषधियोंको अन्न समझकर और उन्हें खाकर शान्त नहीं होते वह तरुण ओषधियोंके प्रति जाते हैं ।

८ अग्नि जिह्वाके द्वारा वनस्पतियोंको नवाकर अथवा भक्षण कर तेजके द्वारा प्रज्वलित हो वनमें शोभा पाते हैं ।

९ अग्नि जलके बीचमें तुम्हारे प्रवेशका स्थान है। तुम ओषधियोंको रोकते और पुनः उनके गर्भमें जन्म ग्रहण करते हो ।

१० अग्नि, घृत द्वारा आहुत जुहू (स्रुक्) के मुँहको तुम चाटते हो। तुम्हारी शिखा शोभा पाती है ।

११ जो हव्य भक्षणीय है और जिनका अन्न अभिलषणीय है, उन्हीं सोम-पृष्ठ और अग्नि विधाता अग्निकी हम, स्तोत्र द्वारा, परिचर्या करते हैं ।

उत त्वा नमसा वयं होतर्वरेण्यक्रतो । अग्ने समिद्भिरीमहे ॥१२॥
उत त्वा भृगुवच्छुचे मनुष्वदग्न आहुत । अङ्गिरस्वद्धवामहे ॥१३॥
त्वं ह्यग्ने अग्निना विप्रो विप्रेण सन्त्सता ।
सखा सख्या समिध्यसे ॥१४॥
स त्वं विप्राय दाशुषे रयिं देहि सहस्रिणम् । अग्ने वीरवतीमिषम् ॥१५॥
अग्ने भ्रातः सहस्कृत रोहिदश्व शुचिव्रत । इमं स्तोमं जुषस्व मे ॥१६॥
उत त्वाग्ने मम स्तुतो वाश्राय प्रतिहर्यते । गोष्ठं गाव इवाशत ॥१७॥
तुभ्यं ता अङ्गिरस्तम विश्वाः सुक्षितयः पृथक् ।
अग्ने कामाय येमिरे ॥१८॥
अग्निं धीभिर्मनीषिणो मेधिरासो विपश्चितः । अद्मसद्याय हिन्विरे ॥१९॥
तं त्वामज्मेषु वाजिनं तन्वाना अग्ने अध्वरम् । वह्निं होतारमीळते ॥२०॥

१२ देवोंको बुलानेवाले और वरणीय-प्रज्ञ अग्नि, नमस्कार और समिधा प्रदान करके तुमसे हम याचना करते हैं ।

१३ शुद्ध और आहूत अग्नि, हम तुम्हें भृगु और मनुके समान बुलाते हैं ।

१४ अग्नि, तुम विप्र, साधु और सखा हो । तुम विप्र, साधु और सखा अग्निकी सहायतासे दीप्त होते हो ।

१५ अग्नि, तुम हव्यदाता मेधावीको सहस्र-सङ्ख्यक धन और वीर पुत्रादिसे युक्त अन्न दो ।

१६ यजमानोंके भ्रातृ-भूत, बलके द्वारा उत्पादित, रोहित नामक अश्ववाले और शुद्ध-कर्मा अग्नि, हमारे स्तोत्रका आश्रय करो ।

१७ अग्नि, हमारी स्तुतियाँ तुम्हारे पास जा रही हैं । इसी प्रकार गायें उत्सुक होकर और बोलते हुए, बछड़ोंके लिये, गोशालामें जाती हैं ।

१८ अग्नि, तुम अङ्गिरा लोगोंमें श्रेष्ठ हो । सारी प्रजाएं अभिलषित सिद्धिके लिये तुम्हारे प्रति आसक्त होती हैं ।

१९ मनीषी, प्राज्ञ और मेधावी लोग, अन्न-प्राप्तिके लिये, अग्निको प्रसन्न करते हैं ।

२० अग्नि, तुम बलवान्, हव्यवाहक, होता और प्रसिद्ध हो । जो स्तोता गृहमें यज्ञका विस्तार करते हैं, वे तुम्हारा स्तव करते हैं ।

पुरुत्रा हि सदृङ्ङसि विशो विश्वा अनु प्रभुः । समत्सु त्वा हवामहे
तर्मोलिष्व य आहुतोऽग्निर्विभ्राजते घृतैः । इमं नः शृणवद्धवम् ॥
तं त्वा वयं हवामहे शृण्वन्तं जातवेदसम् । अग्ने घ्नन्तमप द्विषः ॥
विशां राजानमद्भुतमध्यक्षं धर्मणामिमम् । अग्निमीळे स उ श्रवत्
अग्निं विश्वायुवेपसं मर्यं न वाजिनं हितम् । सप्तिं न वाजयामसि
घ्नन्मृध्राण्यप द्विषो दहन्रक्षांसि विश्वहा ।
अग्ने तिग्मेन दीदिहि ॥२६॥
यं त्वा जनास इन्धते मनुष्वदङ्गिरस्तम ।
अग्ने स बोधि मे वचः ॥२७॥
यदग्ने दिविजा अस्यप्सुजा वा सहस्कृत । तं त्वा गीर्भिर्हवामहे ॥२८॥
तुभ्यं घेत्ते जना इमे विश्वाः सुक्षितयः पृथक् । धासिं हिन्वन्त्यत्तवे ॥

२१ अग्नि, तुम प्रभु और सर्वत्र सभी प्रजाके लिये समदर्शी हो; इसलिये हम तुम्हें संग्राममें बुलाते हैं।

२२ घृत द्वारा आहूत होकर अग्नि शोभा पाते हैं। जो अग्नि हमारे आह्वानको सुनते हैं, उनकी स्तुति करो।

२३ अग्नि, तुम जातधन, शत्रु-हिंसक और हमारा आह्वान सुननेवाले हो; इसलिये तुम्हें हम बुलाते हैं।

२४ मनुष्योंके ईश्वर, महान् और कर्मोंके अध्यक्ष इन अग्निकी मैं स्तुति करता हूँ। वह सुनें।

२५ सर्वत्रगामी बलवाले, शक्तिशाली और मनुष्योंके समान हितकर अग्निकी, अश्वके समान, हम बली करेंगे।

२६ अग्नि, तुम हिंसकोंको मारकर और राक्षसोंको जलाकर तीक्ष्ण तेजके द्वारा दीप्त हो।

२७ अङ्गिरा लोगोंमें श्रेष्ठ अग्नि, मनुष्य लोग तुम्हें मनुके समान दीप्त करते हैं। तुम मेरे समान मेरी स्तुतिको समझो।

२८ अग्नि, तुम स्वर्गीय और अन्तरीक्षजन्य बलके द्वारा सहसा उत्पन्न किये गये हो। तुम्हें स्तुति द्वारा हम बुलाते हैं।

२६ ये सब लोग और सारी प्रजा तुम्हें खानेके लिये पृथक्-पृथक् हवोरूप अन्न देते हैं।

ते घेदग्ने स्वाध्योऽहा विश्वा नृचक्षसः । तरन्तः स्याम दुर्गहा ॥३०॥
अग्निं मन्द्रं पुरुप्रियं शीरं पावकशोचिषम् । हृद्भिर्मन्द्रेभिरीमहे ॥३१॥
स त्वमग्ने विभावसुः सृजन्त्सूर्यो न रश्मिभिः ।
शर्धन्तमांसि जिघ्नसे ॥३२॥
तत्ते सहस्व ईमहे दात्रं यन्नोपदस्यति । त्वदग्ने वार्यं वसु ॥३३॥

४४ सूक्त

अग्नि देवता । अङ्गिराके पुत्र विरूप ऋषि । गायत्री छन्द ।

समिधाग्निं दुवस्यत घृतैर्बोधयतातिथिम् । आस्मिन् हव्या जुहोतन ॥१॥
अग्ने स्तोमं जुषस्व मे वर्धस्वानेन मन्मना । प्रति सूक्तानि हर्य नः ॥२॥
अग्निं दूतं पुरोदधे हव्यवाहमुप ब्रुवे । देवाँ आ सादयादिह ॥३॥

---

३० अग्नि, तुम्हारे ही लिये हम सुकृती और सर्वदर्शी होकर सारे दुर्गम स्थानोंको पार करेंगे ।

३१ अग्नि प्रसन्न, बहु-प्रिय, यज्ञमें शयनशील और पवित्र दीप्तिसे युक्त हैं । हम हर्षयुक्त स्तोत्रसे उनसे याचना करते हैं ।

३२ अग्नि, तुम दीप्ति-रोचन हो । सूर्यके समान तुम किरणोंके द्वारा बलका विस्तार करते हुए अन्धकारका विनाश करते हो ।

३३ बली अग्नि, तुम्हारा जो दान-योग्य और वरणीय धन है, वह क्षीण नहीं होता उसे हम तुमसे माँगते हैं ।

---

१ ऋत्विको, अतिथिके समान अग्निकी, हव्य द्वारा, परिचर्या करो । हव्य द्वारा जगाओ, अग्निमें आहुति गिराओ ।

२ अग्नि, हमारे स्तोत्रका सेवन करो । इस मनोहर स्तोत्र द्वारा बढ़ो । हमारे सूक्तकी कामना करो ।

३ देवोंके दूत और हव्यवाहक अग्निको मैं सम्मुख स्थापित करता हूँ । उनकी स्तुति करता हूं । वह यज्ञमें देवोंको बुलावें ।

उत्ते बृहन्तो अर्चयः समिधानस्य दीदिवः । अग्ने शुक्रास ईरते ॥४॥
उप त्वा जुह्वो मम घृताचीर्यन्तु हर्यत । अग्ने हव्या जुषस्व नः ॥५॥
मन्द्रं होतारमृत्विजं चित्रभानुं विभावसुम् । अग्निमीळे स उ श्रवत् ।
प्रत्नं होतारमीड्यं जुष्टमग्निं कविक्रतुम् । अध्वराणामभिश्रियम् ॥
जुषाणो अङ्गिरस्तमेमा हव्यान्यानुषक् । अग्ने यज्ञं नय ऋतुथा ॥८॥
समिधान उ सन्त्य शुक्रशोच इहा वह । चिकित्वान् दैव्यं जनम् ॥९॥
विप्रं होतारमद्रुहं धूमकेतुं विभावसुम् । यज्ञानां केतुमीमहे ॥१०॥
अग्ने नि पाहि नस्त्वं प्रति ष्म देव रीषतः । भिन्धि द्वेषः सहस्कृत ॥
अग्निः प्रत्नेन मन्मना शुम्भानस्तन्वं स्वाम् । कविर्विप्रेण वावृधे ॥

४ दीप्त अग्नि, तुम्हारे प्रज्ज्वालित होनेपर तुम्हारी महती और उज्ज्वल ज्वालाएँ ऊपर उठ

५ अभिलाषी अग्नि, हमारी घी देनेवाली स्रुक् तुम्हारे पास जायँ । तुम हमारे ह सेवन करो ।

६ मैं प्रसन्न, होता, ऋत्विक्, विलक्षण-दीप्ति और दीप्ति-धन (विभावसु) अग्निकी करता हूँ । वह मेरी स्तुतिको सुनें ।

७ अग्नि प्राचीन, होता, स्तुतियोग्य, प्रीत, कवि, कार्यकर्त्ता और यज्ञमें आश्रित हैं । मैं स्तुति करता हूँ ।

८ अङ्गिरा लोगोंमें श्रेष्ठ अग्नि, क्रमशः इन हव्योंका सेवन करो । समय-समयपर य सुसम्पन्न करो ।

९ भजनशील और उज्ज्वल दीप्तिवाले अग्नि, तुम समिद्ध (प्रज्वलित) होते ही देव जानकर इस यज्ञमें ले आओ ।

१० अग्नि, मेधावी, होता, द्रोह शून्य, धूम-ध्वज, विभावसु और यज्ञके पताका-रूप उनसे हम अभीष्ट माँगते हैं ।

११ बलके द्वारा उत्पादित अग्निदेव, हम हिंसकोंकी रक्षा करो । शत्रुओंको फाड़ो ।

१२ क्रान्तकर्मा अग्नि प्राचीन और मनोरम स्तोत्रके द्वारा अपने शरीरको सुशोभि करके विप्रके साथ बढ़ते हैं ।

ऊर्जोनपातमा हुवेऽग्निं पावकशोचिषम् अस्मिन्यज्ञे स्वध्वरे ॥१३॥
स नोमित्रमहस्त्वमग्ने शुक्रेण शोचिषा। देवैरा सत्सि बर्हिषि ॥१४॥
यो अग्निं तन्वो दमे देवं मर्तः सपर्यति। तस्मा इद्दीदयद्वसु ॥१५॥
अग्निर्मूर्धा दिवः ककुत् पतिः पृथिव्या अयम्। अपां रेतांसि जिन्वति ॥१६॥
उदग्ने शुचयस्तव शुक्रा भ्राजन्त ईरते। तव ज्योतींष्यर्चयः ॥१७॥
ईशिषे वार्यस्य हि दात्रस्याग्ने स्वर्पतिः। स्तोता स्यां तव शर्मणि ॥१८॥
त्वामग्ने मनीषिणस्त्वां हिन्वन्ति चित्तिभिः। त्वां वर्धन्तु नो गिरः ॥१९॥
अदब्धस्य स्वधावतो दूतस्य रेभतः सदा। अग्नेः सख्यं वृणीमहे ॥२०॥
अग्निः शुचिव्रततमः शुचिर्विप्रः शुचिः कविः। शुची रोचत आहुतः ॥२१॥

---

१३ अन्नके पुत्र और पवित्र दीप्तिवाले अग्निको इस हिंसा-शून्य यज्ञमें बुलाता हूँ।

१४ मित्रोंके पूजनीय अग्नि, तुम देवोंके सङ्ग उज्ज्वल तेजके साथ, यज्ञमें बैठो।

१५ जो मनुष्य अपने गृहमें, धन-प्राप्तिके लिये, अग्निकी परिचर्या करता है, उसे अग्नि धन देते हैं।

१६ देवोंके मस्तक, द्युलोकके ककुद् (वृषस्कन्धकी खूँटी) और पृथिवीके पति थे। अग्नि जलके वीर्यस्वरूप प्राणियोंको प्रसन्न करते हैं।

१७ अग्नि, तुम्हारी निर्मल, शुभ्रवर्ण और दीप्त प्रभाएँ तुम्हारे तेजको प्रेरित करती हैं।

१८ अग्नि, तुम स्वर्गके स्वामी हो; वरणीय और दान-योग्य धनके ईश्वर हो। मैं तुम्हारा स्तोता हूँ। सुखके लिये मैं तुम्हारा स्तोता बनूँ।

१९ अग्नि, मनीषी लोग तुम्हारी स्तुति करते हैं। तुम्हें ही कर्मके द्वारा प्रसन्न करते हैं। हमारी स्तुतियाँ तुम्हें वर्द्धित करें।

२० अग्नि, तुम हिंसा-शून्य, बली, देवोंके दूत और स्तोता हो। हम सदा तुम्हारी मैत्रीके लिये प्रार्थना करते हैं।

२१ अग्नि अतीव शुद्ध-कर्मा, पवित्र, मेधावी और कवि हैं। वह पवित्र और आहुत होकर शोभा पाते हैं।

उत त्वा धीतयो मम गिरो वर्धन्तु विश्वहा ।
अग्ने सख्यस्य बोधिनः ॥२२॥
यदग्ने स्यामहं त्वं त्वं वा घा स्या अहम् । स्युष्टे सत्या इहाशिषः ॥२३॥
वसुर्वसुपतिर्हि कमस्यग्ने विभावसुः । स्याम ते सुमतावपि ॥२४॥
अग्ने धृतव्रताय ते समुद्रायेव सिन्धवः । गिरो वाश्रास ईरते ॥२५॥
युवानं विश्पतिं कविं विश्वादं पुरुवेपसम् । अग्निं शुम्भामि मन्मभिः ॥२६॥
यज्ञानां रथ्ये वयं तिग्मजंभाय वीलवे । स्तोमैरिषेमाग्नये ॥२७॥
अयमग्ने त्वे अपि जरिता भूतु सन्त्य । तस्मै पावक मृलय ॥२८॥
धीरो ह्यस्यद्मसद्विप्रो न जागृविः सदा । अग्ने दीदयसि द्यवि ॥२९॥
पुराग्ने दुरितेभ्यः पुरा मृध्रेभ्यः कवे । प्र ण आयुर्वसो तिर ॥३०॥

---

२२ अग्नि, मेरे कर्म और स्तुतियाँ सदा तुम्हें वर्द्धित करें। हमारे बन्धुत्व-कर्मको तुम समझो।

२३ अग्नि, यदि मैं बहुधन हो जाऊँ; तो भी तुम तुम ही रहोगे और मैं मैं ही रहूँ। तुम्हारे आशीर्वाद सत्य हों।

२४ अग्नि, तुम वासप्रद, धनपति और दीप्तिधन हो। हम तुम्हारा अनुग्रह पावें।

२५ अग्नि, तुम धृतकर्मा हो। मेरी शब्दवाली स्तुतियाँ उसी प्रकार तुम्हारे लिये गमन करती हैं, जिस प्रकार नदियाँ समुद्रकी ओर जाती हैं।

२६ अग्नि तरुण, लोकपति, कवि, सर्वभक्षक और बहुकर्मा हैं। उन्हें स्तोत्रके द्वारा सुशोभित करता हूँ।

२७ यज्ञके नेता, तीखी ज्वालावाले और बलवान् अग्निके लिये हम स्तोत्रके द्वारा स्तुति करनेकी इच्छा करते हैं।

२८ शोधक और भजनीय अग्नि, हमारा स्तोता तुममें आसक्त हो। अग्नि, उसे सुखी करो।

२९ अग्नि, तुम धीर हो, हव्यदानके लिये बैठे हुए मेधावीके समान तुम सदा जागरूक हो। अन्तरीक्षमें प्रदीप्त होते हो।

३० वासदाता और कवि अग्नि, पापियों और हिंसकोंके हाथोंसे हमें बचाकर हमारी आयुको बढ़ाओ।



४५ सूक्त

इन्द्र देवता। कण्वगोत्रीय त्रिशोक ऋषि। गायत्री छन्द।

आ घा ये अग्निमिन्धते स्तृणन्ति बर्हिरानुषक्। येषामिन्द्रो युवा सखा ॥१॥
बृहन्निदिध्म एषां भूरि शस्तं पृथुः स्वरुः। येषामिन्द्रो युवा सखा ॥२॥
अयुद्ध इद्युधा वृतं शूर आजति सत्वभिः। येषामिन्द्रो युवा सखा ॥३॥
आ बुन्दं वृत्रहा ददे जातः पृच्छद्वि मातरम्। क उग्राः के ह शृण्विरे ॥४॥
प्रति त्वा शवसी वदद्गिरावप्सो न योधिषत्। यस्ते शत्रुत्वमाचके ॥५॥
उत त्वं मघवञ्छृणु यस्ते वष्टि ववक्षि तत्। यद्वीलयासि वीळु तत् ॥६॥
यदाजिं यात्याजिकृदिन्द्रः स्वश्वयुरुप। रथीतमो रथीनाम् ॥७॥
वि षु विश्वा अभियुजो वज्रिन्विष्वग्यथा वृह। भवा नः सुश्रवस्तमः ॥८॥

---

१ जो ऋषि भली भाँति अग्निको प्रदीप्त करते है, जिनके मित्र तरुण इन्द्र हैं, वे परस्पर मिलकर कुश बिछाते हैं।

२ इन ऋषियोंकी समिधा महती हैं। इनका स्तोत्र प्रचुर है। इनका स्वरूप (यज्ञ) महान् है। युवा इन्द्र इनके सखा हैं।

३ कौन अयोद्धा व्यक्ति शत्रुओंके द्वारा वेष्टित होकर और अपने बलसे बलवान् होकर शत्रुओंको नीचा दिखता है?

४ उत्पन्न होकर इन्द्रने वाण धारण किया और अपनी मातासे पूछा कि, "संसारमें कौन कौन उग्र बलवाले हैं?"

५ बलवती माताने उत्तर दिया, "जो तुमसे शत्रुता करना चाहता है, वह पर्वतमें दर्शनीय गजके समान युद्ध करता है।"

६ धनी इन्द्र, तुम हमारी स्तुतिको सुनो। स्तोता तुम्हारे पास जो चाहता है, उसे वह देते हो। तुम जिसे दृढ़ करते हो, वह दृढ़ होता हैं।

७ युद्धकर्त्ता इन्द्र जिस समय सुन्दर अश्वकी इच्छासे युद्धमें जाते हैं, उस समय वह रथियोंमें प्रधान रथी होते हैं।

८ वज्रधर इन्द्र, जिससे सारी अभिकाङ्क्षिणी प्रजा वृद्धिको प्राप्त हो, इस प्रकार तुम प्रवृद्ध होओ। हमारे लिये सबसे अधिक अन्नवाले बनो।

अस्माकं सुरथं पुर इन्द्रः कृणोतु सातये । नयं धूर्वन्ति धूर्तयः ॥९॥
वृज्याम ते परि द्विषोऽरन्ते शक्र दावने । गमेमेदिन्द्र गोमतः ॥१०॥
शनैश्चिद्यन्तो अद्रिवोऽश्वावन्तः शतग्विनः । विवक्षणा अनेहसः ॥११॥
ऊर्ध्वा हि ते दिवेदिवे सहस्रा सूनृता शता । जरितृभ्यो विमंहते ॥१२॥
विद्मा हि त्वा धनञ्जयमिन्द्र दृह्ला चिदारुजम् । आदारिणं यथा गयम् ॥१३॥
ककुहं चित्त्वा कवे मन्दन्तु धृष्णविन्दवः । आ त्वा पणिं यदीमहे ॥१४॥
यस्ते रेवाँ अदाशुरिः प्रममर्ष मघत्तये । तस्य नो वेद आ भर ॥१५॥
इम उ त्वा विचक्षते सखाय इन्द्र सोमिनः । पुष्टावन्तो यथा पशुम् ॥१६॥
उत त्वाबधिरं वयं श्रुत्कर्णं सन्तमूतये । दूरादिह हवामहे ॥१७॥

९ जिन इन्द्रकी हिंसा हिंसक (धूर्त) नहीं कर सकते, वही इन्द्र हमें अभीष्ट देने... सामने सुन्दर रथ स्थापित करें।

१० इन्द्र, हम तुम्हारे शत्रुओंके निकट उपस्थित नहीं हों। जिस समय तुम प्रचुर ... होओ, उस समय अभीष्ट प्रदान करनेवाले तुम्हारे ही पास हम उपस्थित हों।

११ वज्रधर इन्द्र, धीरे-धीरे जाते हुए हम अश्ववाले, बहुत धनसे युक्त, विलक्षण... उपद्रववाले होंगे।

१२ इन्द्र, यजमान तुम्हारे स्तोताओंके लिये प्रतिदिन सौ और सहस्र, उत्तम और प्रिय वस्तु...

१३ इन्द्र, तुम्हें हम धनञ्जय, पराक्रमशाली शत्रुओंके मथनकर्त्ता, धनापहारक और ... समान उपद्रवसे रक्षक जानते हैं।

१४ कवि और धर्षक इन्द्र, तुम वणिक् हो। तुम्हारें पास जिस समय हम अ... प्रार्थना करते हैं, उस समय सोम तुम्हें मत्त करे। तुम ककुद् (वृषभस्कन्धका ऊपरी भाग) ... उत्तम हो।

१५ इन्द्र, जो मनुष्य धनी होकर दान नहीं करता और धनदाता तुमसे ईर्ष्या ... है, उसका धन हमारे लिये ले आओ।

१६ इन्द्र, जैसे लोग घास लाकर पशुको देखते हैं, वैसे ही हमारे ये सखा सोमाभि... करके तुम्हें देखते हैं।

१७ इन्द्र, तुम बहरे नहीं हो। तुम्हारा कान सुननेवाला है; इसलिये रक्षणके लिये ... इस यज्ञमें तुम्हें दूरसे बुलाते हैं।

यच्छुश्रूया इमं हवं दुर्मर्षञ्चक्रिया उत । भवेरापिर्नो अन्तमः ॥१८॥
यच्चिद्धि ते अपि व्यथिर्जगन्वांसो अमन्महि । गोदा इदिन्द्र बोधि नः ॥१९॥
आ त्वा रम्भं न जिव्रयो ररम्भा शवसस्पते । उश्मसि त्वा सधस्थ आ ॥२०॥
स्तोत्रमिन्द्राय गायत पुरुनृम्णाय सत्वने । नकिर्यं वृण्वते युधि ॥२१॥
अभि त्वा वृषभा सुते सुतं सृजामि पीतये । तृम्पा व्यश्नुही मदम् ॥२२॥
मा त्वा मूरा अविष्यवो मोपहस्वान आ दभन् ।
माकीं ब्रह्मद्विषो वनः ॥२३॥
इह त्वा गोपरीणसा महे मदन्तु राधसे । सरो गौरो यथा पिब ॥२४॥
या वृत्रहा परावति सना नवा च चुच्युवे । ता संसत्सु प्र वोचत ॥२५॥

---

१८ इन्द्र, हमारे इस आह्वानको सुनो और अपने बलको शत्रुओंके लिये दुःसह करो। तुम हमारे समीपतम बन्धु बनो।

१९ इन्द्र, जब हम दरिद्रताके द्वारा पीड़ित होकर तुम्हारे पास जायंगे और तुम्हारी स्तुति करेंगे, तब हमें गोदान करनेके लिये जागना।

२० बलपति, हम क्षीण होकर, दण्डके समान, तुम्हे प्राप्त करेंगे। यज्ञमें हम तुम्हारी कामना करेंगे।

२१ प्रचुर-धनी और दानशील इन्द्रके लिये स्तोत्र पाठ करो। युद्धमें उन्हें कोई नहीं हरा सकता।

२२ बली इन्द्र, सोमके अभिषुत होनेपर उसी अभिषुत सोमको, पानके लिये, तुम्हें देता हूँ। तृप्त होओ। मदकर सोमका पान करो।

२३ इन्द्र, मूढ़ मनुष्य, रक्षाभिलाषी होकर, तुम्हें न मारें। वे तुम्हें हँसें नहीं। ब्राह्मण-द्वेषियोंका कभी आश्रय नहीं करना।

२४ इन्द्र, इस यज्ञमें महाधनकी प्राप्तिके लिये मनुष्य दुग्धादिसे मिले सोमपानसे मत्त हों। गौरमृग जैसे सरोवरमें जल पीता है, वैसे ही तुम सोमपान करो।

२५ वृत्रघ्न इन्द्र, तुमने दूर देशमें जो नया और पुराना धन प्रेरित किया है, उसे यज्ञमें बताओ।

अपिबत् कद्रुवः सुतमिन्द्रः सहस्रबाह्वे । अत्रादेदिष्ट पौंस्यम् ॥२६॥
सत्यं तत्तुर्वशे यदौ विदानो अह्नवाय्यम् । व्यानट् तुर्वणे शमि ॥२७॥
तरणिं वो जनानां त्रदं वाजस्य गोमतः । समान मु प्र शंसिषम् ॥२८॥
ऋभुक्षणं न वर्तव उक्थेषु तुग्र्यावृधम् । इन्द्रं सोमे सचा सुते ॥२९॥
यः कृन्तदिद्वि योन्यं त्रिशोकाय गिरिं पृथुम् । गोभ्यो गातुं निरेतवे ॥३०॥
यद्दधिषे मनस्यसि मन्दानः प्रेदियक्षसि । मा तत् करिन्द्र मृलय ॥३१॥
दभ्रं चिद्धि त्वावतः कृतं शृण्वे अधि क्षमि । जिगात्विन्द्र ते मनः ॥३२॥
तवेदु ताः सुकीर्तयोऽसन्नुत प्रशस्तयः । यदिन्द्र मृलयासि नः ॥३३॥
मा न एकस्मिन्नागसि मा द्वयोरुत त्रिषु । वधीर्मा शूर भूरिषु ॥३४॥

२६ इन्द्र, तुमने रुद्र ऋषिके अभिषुत सोमका पान किया है और सहस्रबाहु ... शत्रुका नाश भी किया है । उस समय इन्द्रका वीर्य अतीव दीप्त हुआ था ।

२७ तुर्वश और यदु नामक राजाओंके प्रसिद्ध कर्मको तुमने सच्चा समझकर उनके ... युद्धमें अह्नवाय्यको व्याप्त किया था ।

२८ स्तोताओ, तुम्हारे पुत्रादिके तारक, शत्रु-विमर्दक, गोविशिष्ट, अन्नदाता और ... इन्द्रकी मैं स्तुति करता हूँ ।

२९ जल-वर्द्धक और महान् इन्द्रकी, धन देनेके लिये, सोमाभिषव होनेपर, उक्थोंके उ... कालमें, स्तुति करता हूँ ।

३० जिन इन्द्रने जल-निर्गमनके लिये द्वार-रूप और विस्तृत मेघको, त्रिशोक ऋषिके ... विच्छिन्न किया था, उन्होंने ही जल-गतिके लिये मार्ग बनाया था ।

३१ इन्द्र, प्रसन्न होकर जो तुम धारण करते हो, जो पूजते हो, जो दान करते ... सो सब हमारे लिये क्यों नहीं करते ? हमें सुखी करो ।

३२ इन्द्र, तुम्हारे समान थोड़ा भी कर्म करनेपर मनुष्य पृथिवीमें प्रसिद्ध हो जाता ... तुम्हारा मन मेरे प्रति गमन करे ।

३३ इन्द्र, तुम जिनके द्वारा हमें सुखी करते हो, वे तुम्हारी प्रसिद्धियाँ और स्तुति... तुम्हारी हों ।

३४ इन्द्र, एक अपराध करनेपर हमें नहीं मारना, दो-तीन अथवा बहुत अपराध करने... भी हमें नही मारना ।

विभया हि त्वावत उग्रादभिप्रभङ्गिणः । दस्मादहमृतीषहः ॥३५॥
मा सख्युः शूनमा विदे मा पुत्रस्य प्रभूवसो । आवृत्वद्भूतु ते मनः ॥३६॥
को नु मर्या अमिथितः सखा सखायमब्रवीत् । जहा को अस्मदीषते ॥३७॥
एवारे वृषभा सुतेऽसिन्वन् भूर्यावयः । श्वघ्नीव निवता चरन् ॥३८॥
आ त एता वचोयुजा हरी गृभ्णे सुमद्रथा । यदी ब्रह्मभ्य इद्ददः ॥३९॥
भिन्धि विश्वा अप द्विषः परि बाधो जही मृधः ।
वसु स्पार्हं तदा भर ॥४०॥
यद्वीलाविन्द्र यत् स्थिरे यत् पर्शाने पराभृतम् । वसु स्पार्हं तदा भर ॥४१॥
यस्य ते विश्वमानुषा भूरेर्दत्तस्य वेदति । वसु स्पार्हं तदा भर ॥४२॥



३५ इन्द्र, तुम्हारे समान उग्र, शत्रुओंको मारनेवाले, पापियोंके विनाशक और शत्रुओंकी हिंसाको सहनेवाले देवतासे मैं निर्भय होऊँ।

३६ प्रचुर धनवाले इन्द्र, तुम्हारे सखाकी समृद्धिकी बातको निवेदित करता हूँ, उसके पुत्रकी कथाको निवेदित करता हूँ। तुम्हारा मन मुझसे फिर न जाय।

३७ मनुष्यो, इन्द्रके अतिरिक्त कौन अद्वेष्टा सखा, प्रश्न करनेके पूर्व ही, सखाको कह सकता है कि, मैंने किसको मारा है? कौन हमसे डर कर भागेगा?

३८ अभीष्टदाता इन्द्र, अभिषुत होनेपर सोम, एवार नामक व्यक्तिको बहुधन न देकर, धूर्त्तके समान, तुम्हारे पास आता है। नीचे मुँह करके देवता लोग निकल गये।

३९ सुन्दर रथवाले और मन्त्रके द्वारा जोते जानेवाले इन दोनों हरि नामक अश्वोंको मैं आकृष्ट करता हूँ। तुम ब्राह्मणोंको ही यह धन देते हो।

४० इन्द्र, तुम सारे शत्रुओंको फाड़ो, हिंसा करो, संग्रामको बन्द करो और अभिलषणीय धन ले आओ।

४१ इन्द्र, दृढ़ स्थानपर तुमने जो धन रखा है, स्थिर स्थानमें जो धन रखा है और सन्दिग्ध स्थानमें जो धन रखा है, वह अभिलषणीय धन ले आओ।

४२ इन्द्र, लोगोंको अभिज्ञतामें तुम्हारे द्वारा दिया गया जो धन है, उस अभिलषणीय धनको ले आओ।

:o:

तृतीय अध्याय समाप्त

चतुर्थ अध्याय

४६ सूक्त

२१ - २४ तक कनीतके पुत्र पृथुश्रवाका दान देवता, २५—२८ और ३२के वायु देवता, शेषके इन्द्र देवता। अश्व-पुत्र वश ऋषि। ककुप्, गायत्री, बृहती, अनुष्टुप्, सतो-बृहती, विराट् जगती, पङ्क्ति, उष्णिक् आदि छन्द।

त्वावतः पुरूवसो वयमिन्द्र प्रणेतः। स्मसि स्थातर्हरीणाम् ॥१॥

त्वां हि सत्यमद्रिवो विद्म दातारमिषाम्। विद्म दातारं रयीणाम् ॥२॥

आ यस्य ते महिमानं शतमूते शतक्रतो। गीर्भिर्गृणन्ति कारवः ॥३॥

सुनीथो घा स मर्त्यो यं मरुतो यमर्यमा। मित्रः पान्त्यद्रुहः ॥४॥

दधानो गोमदश्ववत् सुवीर्यमादित्यजूत एधते। सदा राया पुरुस्पृहा ॥५॥

तमिन्द्रं दानमीमहे शवसानमभीर्वम्। ईशानं राय ईमहे ॥६॥

---

१ बहु-धनी और कर्म-प्रापक इन्द्र, तुम्हारे समान पुरुषके ही हम आत्मीय हैं। तुम हरि नामके अश्वोंके अधिष्ठाता हो।

२ वज्री इन्द्र, तुम्हें हम अन्नदाता जानते हैं। धनदाता भी जानते हैं।

३ असीम रक्षणों और बहु कर्मोंवाले इन्द्र, तुम्हारी महिमाको स्तोता लोग स्तुति द्वारा गाते हैं।

४ द्रोह-शून्य मरुद्गण जिसकी रक्षा करते हैं और अर्यमा तथा मित्र जिसकी रक्षा करते हैं, वही मनुष्य सुन्दर यज्ञवाला होता है।

५ आदित्य द्वारा अनुगृहीत यजमान गौ और अश्ववाला होकर तथा सुन्दर वीर्यसे युक्त होकर बढ़ता है। वह बहु-संख्यक और अभिलषणीय धनके द्वारा बढ़ता है।

६ बलका प्रयोग करनेवाले, निर्भय तथा सबके स्वामी उन प्रख्यात इन्द्रके पास हम धनकी याचना करते हैं।

तस्मिन् हि सन्त्यूतयो विश्वा अभीरवः सचा ।
तमावहन्तु सप्तयः पुरूवसुं मदाय हरयः सुतम् ।
यस्ते मदो वरेण्यो य इन्द्र वृत्रहन्तमः ।
य आददिः स्वर्नृभिर्यः पृतनासु दुष्टरः ॥८॥
यो दुष्टरो विश्ववार श्रवाय्यो वाजेष्वस्ति तरुता ।
स नः शविष्ठ सवना वसो गहि गमेम गोमति व्रजे ॥९॥
गव्यो षु णो यथा पुराश्वयोत रथया । वरिवस्य महामह ॥१०॥
नहि ते शूर राधसोऽन्तं विन्दामि सत्रा ।
दशस्या नो मघवन्नू चिदद्रिवो धियो वाजेभिराविथ ॥११॥
य ऋष्वः श्रावयत्सखा विश्वेत् स वेद जनिमा पुरुष्टुतः ।
तं विश्वे मानुषा युगेन्द्रं हवन्ते तविषं यतस्रुचः ॥१२॥
स नो वाजेष्वविता पुरूवसुः पुरःस्थाता मघवा वृत्रहा भुवत् ॥१३॥

७ सर्वत्रगामी, निर्भय और सहायक मरुद्रूप सेना इन्द्रकी ही है। गतिपरायण हरि अश्व हर्षके लिये बहुधन-दाता इन्द्रको अभिषुत सोमके निकट ले आवें।

८ इन्द्र, तुम्हारा जो मद वरणीय है, जिसके द्वारा संग्राममें तुम शत्रुओंका अतीव बध करते हो, जिसके द्वारा शत्रुके पाससे धन ग्रहण करते हो और संग्राममें जिसके द्वारा पार हुआ जाता है—

९ सर्व-वरेण्य, युद्धमें दुर्धर्ष शत्रुओंके पारगामी, सर्वत्र विख्यात, सर्वापेक्षा बली और वास-प्रदाता इन्द्र, अपने उसी मद (हर्ष) के साथ हमारे यज्ञमें आओ। हम गायुक्त गोष्ठमें जायगे।

१० महाधनी इन्द्र, गोप्राप्ति, अश्वलाभ और रथ-संप्राप्तिकी हमारी इच्छा होनेपर पहलेकी ही तरह हमें वह सब देना।

११ शूर इन्द्र, सचमुच मैं तुम्हारे धनकी सीमा नहीं जानता। धनी और वज्री इन्द्र, हमें शीघ्र धन दो। अन्न द्वारा हमारे कर्मकी रक्षा करो।

१२ जो इन्द्र दर्शनीय हैं, जिनके मित्र ऋत्विक् लोग हैं, जो बहुतोंके द्वारा स्तुत हैं, वह संसारके सारे प्राणियोंको जानते हैं, सारे मनुष्य हव्य ग्रहण करके सदा उन्हीं बलवान् इन्द्रको बुलाते हैं।

१३ वही प्रचुर धनवाले, मघवा और वृत्रहन्ता इन्द्र युद्धक्षेत्रमें हमारे रक्षक और अग्रवर्त्ती हों।

अभि वो वीरमन्धसो मदेषु गाय गिरा महा विचेतसम् ।
इन्द्रं नाम श्रुत्यं शाकिनं वचो यथा ॥१४॥
ददी रेक्णस्तन्वे ददिर्वसु ददिर्वाजेषु पुरुहूत वाजिनम् । नूनमथ ॥१५॥
विश्वेषामिरज्यन्तं वसूनां सासह्वांसं चिदस्य वर्पसः ।
कृपयतो नूनमत्यथ ॥१६॥
महः सु वो अरमिषे स्तवामहे मीळ्हुषे अरङ्गमाय जग्मये ।
यज्ञेभिर्गीर्भिर्विश्वमनुषां मरुतामियक्षसि गाये त्वा नमसा गिरा ॥१७॥
ये पातयन्ते अज्मभिर्गिरीणां स्नुभिरेषाम् ।
यज्ञं महिष्वणीनां सुम्नं तुविष्वणीनां प्राध्वरे ॥१८॥
प्रभङ्गं दुर्मतीनामिन्द्र शविष्ठा भर ।
रयिमस्मभ्यं युज्यं चोदयन्मते ज्येष्ठं चोदयन्मते ॥१९॥

---

१४ स्तोताओ, तुम लोगोंके हितके लिये सोम-जात मत्तता उत्पन्न होनेपर वीर, शत्रुके अवनति करनेवाले, विशिष्ट प्रज्ञावाले, सर्वत्र प्रसिद्ध और शक्तिशाली इन्द्रकी, तुम्हारी जैसी स्फूर्त्ति हो, उसके अनुकूल, महती स्तुति द्वारा, स्तुति करो ।

१५ इन्द्र, तुम मेरे शरीरके लिये इसी समय धनदाता बनो । संग्रामोंमें अन्नवान् धनदे बनो । बहुतों द्वारा आहूत इन्द्र, पुत्रोंको धन दो ।

१६ सारे धनोंके अधिपति और बाधक तथा युद्ध-कम्पन-कर्त्ता शत्रुओंको हरानेवाले इन्द्र स्तुति करो । वह शीघ्र धन दान करेंगे ।

१७ इन्द्र, तुम महान् हो । मैं तुम्हारे आगमनकी कामना करता हूँ । तुम गमनशील हो, गामी और सेचक हो । यज्ञ और स्तुति द्वारा हम तुम्हारा स्तव करते हैं । तुम मरुतोंके नेता सारे मनुष्योंके ईश्वर हो । नमस्कार और स्तुति द्वारा तुम्हारा गुण-गान करता हूँ ।

१८ जो मरुत् मेघोंके प्राचीन और बलकर जलके साथ जाते हैं, उन्हीं बहुत ध्वनिवाले मरुतोंके लिये हम यज्ञ करेंगे और उस यज्ञमें महाध्वनिवाले मरुद्गण जो सुख दे सकेंगे, उसे हम प्राप्त करें

१९ तुम दुष्ट बुद्धियोंके विनाशक हो । तुम्हारे समीप हम याचना करते हैं । अतीव बली इ हमारे लिये योग्य धन ले आओ । तुम्हारी बुद्धि सदा धन-प्रेरणमें तत्पर रहती है । देव, उत्त धन ले आओ ।

सनितः सुसनितरुग्र चित्र चेतिष्ठ सूनृत ।
प्रासहा सम्राट् सहुरिं सहन्तं भुज्युं वाजेषु पूर्व्यम् ॥२०॥
आ स एतु य ईवदाँ अदेवः पूर्तमाददे ।
यथा चिद्वशो अश्व्यः पृथुश्रवसि कानीते स्या व्युष्याददे ॥२१॥
षष्टिं सहस्राश्व्यस्यायुतासनमुष्ट्राणां विंशतिं शता ।
दश श्यावीनां शता दश त्र्यरुषीणां दश गवां सहस्रा ॥२२॥
दश श्यावा ऋधद्रयो वीतवारास आशवः ।
मथ्रा नेमिं नि वावृतुः ॥२३॥
दानासः पृथुश्रवसः कानीतस्य सुराधसः ।
रथं हिरण्ययं ददन्मंहिष्ठः सूरिरभूद्वर्षिष्ठमकृत श्रवः ॥२४॥
आ नो वायो महे तने याहि मखाय पाजसे ।
वयं हि ते चकृमा भूरि दावने सद्यश्चिन्महि दावने ॥२५॥

---

२० दाता, उग्र, विचित्र, प्रिय, सत्यवक्ता, शत्रु-पराभवकर्त्ता और सबके स्वामी इन्द्र, शत्रुको हरानेवाले, भोग योग्य तथा प्रवृद्ध धन संग्राममें हमें देना ।

२१ अश्वके पुत्र जिन वशने कन्याके पुत्र (कानीत) पृथुश्रवा राजासे प्रातःकाल धन प्राप्त किया था; इसलिये देव-रहित वशके पूर्ण धन ग्रहण कर लेनेके कारण, वश यहाँ आवें ।

२२ (आकर वशने कहा) "मैंने साठ सहस्र और अयुत (दश सहस्र) अश्वोंको प्राप्त किया है । बीस सौ ऊँटोंको पाया है । काले रंगकी दस सौ घोड़ियोंको पाया है । तीन स्थानोंमें शुभ्र रङ्गवाली दस सहस्र गायोंको पाया है ।"

२३ दस कृष्णवर्ण अश्व रथ-नेमि (रथ-चक्रका प्रान्त वा परिधि) वहन करते हैं । वे अतीव वेग और बलवाले तथा मन्थन-कर्त्ता हैं ।

२४ उत्कृष्ट धनवाले कन्यापुत्र पृथुश्रवाका यही दान है । उन्होंने सोनेका रथ दिया है; वह अतीव दाता और प्राज्ञ हैं । उन्होंने अत्यन्त प्रवृद्ध कीर्त्ति प्राप्त की है ।

२५ वायु, महान् धन और पूजनीय बलके लिये हमारे समीप आओ । तुम प्रचुर धन देनेवाले हो । हम तुम्हारी स्तुति करते हैं । तुम महान् धनके दाता हो । तुम्हारे आनेके साथ ही हम तुम्हारी स्तुति करते हैं ।

यो अश्वेभिर्वहते वस्त उस्रास्त्रिः सप्त सप्ततीनाम् ।

एभिः सोमेभिः सोमसुद्भिः सोमपा दानाय शुक्रपूतपाः ॥२६॥

यो म इमं चिदु त्मनामन्दच्चित्रं दावने ।

अरट्वे अक्षे नहुषे सुकृत्वनि सुकृत्तराय सुक्रतुः ॥२७॥

उचथ्ये वपुषि यः स्वराळुत वायो घृतस्नाः ।

अश्वेषितं रजेषितं शुनेषितं प्राज्म तदिदन् नु तत् ॥२८॥

अध प्रियमिषिराय षष्टिं सहस्रासनम् । अश्वानामिन्न वृष्णाम् ॥२९॥

गावो न यूथमुप यन्ति वध्रय उप मा यन्ति वध्रयः ॥३०॥

अध यच्चारथे गणे शतमुष्ट्राँ अचिक्रदत् ।

अध श्वित्नेषु विंशतिं शता ॥३१॥

शतं दासे बल्बूथे विप्रस्तरुक्ष आददे ।

ते ते वायविमे जना मदन्तीन्द्रगोपा मदन्ति देवगोपाः ॥३२॥

---

२६ सोमपाता, दीप्त और पवित्र सोमके पानकर्त्ता वायु जो पृथुश्रवा अश्वोंके साथ आते गृहमें निवास करते हैं और त्रिगुणित सप्तसप्तति गायोंके साथ जाते हैं, वही तुम्हें सोम देने सोम संयुक्त हुए है और अभिषव-कर्त्ताओंके साथ मिले हैं।

२७ जो पृथुश्रवा "मेरे लिये ये गौ, अश्व आदि देनेके लिये हैं" ऐसा विचार कर प्रसन्न हुए उन शोभनकर्मा राजा पृथुश्रवाने अपने कर्माध्यक्ष अरट्व, अक्ष, नहुष और सुकृत्वको आज्ञा दी।

२८ वायु, जो उचथ्य और वपु नामके राजाओंसे भी अधिक साम्राज्य करते हैं, उन घृतके शुद्ध राजाने घोड़ों, ऊँटों और कुत्तोंकी पीठसे जो अन्न प्रेरित किया है, वह यही है। यह तुम्हारा अनुग्रह है।

२९ इस समय धनादिका प्रेरण करनेवाले उन राजाके अनुग्रहसे सेचन करनेवाले अश्वके साठ हजार प्रिय गायोंको भी मैंने पाया।

३० जैसे गायें अपने झुण्डमें जाती हैं, वैसे ही पृथुश्रवाके दिये हुए बैल मेरे समीप आते हैं।

३१ जिस समय ऊँट वनके लिये भेजे गये थे, उस समय वह एक सौ ऊँट हमारे लिये लाये। श्वेतवर्ण गायोंके बीच बीस सौ गायें लाये।

३२ मैं विप्र हूं। मैं गो और अश्वका रक्षक हूं। बल्बूथ नामक दासके समीपसे मैंने सौ और अश्व पाये थे। वायु, ये सब लोग तुम्हारे ही हैं। ये इन्द्र और देवोंके द्वारा रक्षित होकर आनन्दित होते हैं।

अध स्या योषणा मही प्रतीची वशमश्व्यम्। अधिरुक्मा वि नीयते ॥३३॥

---

४७ सूक्त

आदित्य देवता। आप्त्यत्रित ऋषि। महापङ्क्ति छन्द।

महि वो महतामवो वरुण मित्र दाशुषे।
यमादित्या अभि द्रुहो रक्षथा नेमघं
नशदनेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥१॥
विदा देवा अघानामादित्यासो अपाकृतिम्।
पक्षा वयो यथोपरि व्यस्मे शर्म
यच्छतानेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥२॥
व्यस्मे अधि शर्म तत् पक्षा वयो न यन्तन।
विश्वानि विश्ववेदसो वरूथ्या
मनामहेऽनेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥३॥

---

३३ इस समय वह स्वर्णके आभरणोंसे विभूषित, पूजनीय और राजा पृथुश्रवाके दानके साथ दी गयी कन्याको अश्वके पुत्र वशके सामने ले आ रहे हैं।



१ मित्र और वरुण, हवि देनेवाले यजमानके लिये जो तुम्हारा रक्षण है, वह महान् है। शत्रुके हाथसे जिस यजमानको बचाते हो, उसे पाप नहीं छू सकता। तुमलोगोंकी रक्षा करनेपर उपद्रव नहीं रहता। तुम्हारा रक्षण शोभन है।

२ आदित्यो, तुमलोग दुःख-निवारणको जानते हो। जैसे चिड़ियाँ अपने बच्चोंपर पंख फैलाती हैं, वैसे ही तुम हमें सुख दो। तुमलोगोंकी रक्षा होनेपर उपद्रव नहीं रहता। तुम्हारा रक्षण शोभन है।

३ पक्षियोंके पक्षके समान तुमलोगोंके पास जो सुख है, उसे हमें प्रदान करो। सर्वधनी आदित्यो, समस्त गृहके उपयुक्त धन तुमसे हम माँगते हैं। तुम्हारे रक्षण करनेपर उपद्रव नहीं रहता। तुम्हारी रक्षा सुरक्षा है।

यस्मा अरासत क्षयं जीवातुं च प्रचेतसः ।
मनोर्विश्वस्य घेदिम आदित्या राय
ईशतेऽनेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥४॥
परि णो वृणजन्नघा दुर्गाणि रथ्यो यथा ।
स्यामेदिन्द्रस्य शर्मण्यादित्यानामुता-
वस्यनेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥५॥
परिह्वृतेदना जनो युष्मादत्तस्य वायति ।
देवा अदभ्रमाशवो यमादित्या
अहेतनानेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥६॥
न तं तिग्मं चन त्यजो न द्रासदभि तं गुरु ।
यस्मा उ शर्म सप्रथ आदित्यासो
अराध्वमनेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥७॥

४ उत्तम-चेता आदित्यगण जिसके लिये गृह और जीवनके उपयुक्त अन्न प्रदान करते हैं, इसलिये ये सारे मनुष्योंके धनके स्वामी हो जाते हैं। तुम्हारी रक्षामें उपद्रव नहीं रहता। तुम्हारी शोभन रक्षा है।

५ रथ ढोनेवाले अश्व जैसे दुर्गम प्रदेशोंका परित्याग कर देते हैं, वैसे ही हम पापका परित्याग कर देंगे। हम इन्द्रका सुख और आदित्यका रक्षण प्राप्त करेंगे। तुम्हारी रक्षा होनेपर उपद्रव नहीं रहता। तुम्हारी रक्षा सुरक्षा है।

६ क्लेशके द्वारा ही मनुष्य तुम्हारा धन प्राप्त करते हैं। देवो, तुमलोग शीघ्र गमनवाले हो। तुमलोग जिस यजमानको प्राप्त करते हो, वह अधिक धन प्राप्त करता है। तुम्हारी रक्षा होनेपर उपद्रव नहीं रहता। तुम्हारी रक्षा सुरक्षा है।

७ आदित्यो, जिसे तुम विस्तृत सुख प्रदान करते हो, वह व्यक्ति टेढ़ा होनेपर भी क्रोध निर्विघ्न रहता है। उसके पास अपरिहार्य दुःख भी नहीं जाता। तुम्हारी रक्षा होनेपर उपद्रव नहीं रहता। तुम्हारी रक्षा ही सुरक्षा है।

युष्मे देवा अपि ष्मसि युध्यन्त इव वर्मसु ।
यूयं महो न एनसो यूयमर्भा-
दुरुष्यतानेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥८॥
अदितिर्न उरुष्यत्वदितिः शर्म यच्छतु ।
माता मित्रस्य रेवतोर्यम्णो वरुणस्य
चानेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥९॥
यद्देवाः शर्म शरणं यद्भद्रं यदनातुरम्
त्रिधातु यद्वरूथ्यं तदस्मासु
वियन्तनानेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥१०॥
आदित्या अव हि ख्यताधि कूलादिव स्पशः ।
सुतीर्थमर्वतो यथानु नो नेषथा सुगमनेहसो ।
व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥११॥

---

८ आदित्यो, हम तुम्हारे आश्रयमें ही रहेंगे। इसी प्रकार योद्धा लोग कवचके आश्रयमें रहते हैं। तुम हमें महान् अनिष्ट और अल्प अनिष्टसे बचाओ। तुम्हारी रक्षा होनेपर उपद्रव नहीं रहता। तुम्हारी रक्षा ही सुरक्षा है।

९ अदिति हमारी रक्षा करें; अदिति हमें सुख प्रदान करें। वह धनवती हैं और मित्र, वरुण तथा अर्यमाकी माता हैं। तुम्हारी रक्षा करनेपर उपद्रव नहीं रहता। तुम्हारी रक्षा ह सुरक्षा है।

आदित्यो, तुमलोग हमें शरणके योग्य, सेवनके योग्य, रोगशून्य, त्रिगुण-युक्त और गृहके योग्य सुख प्रदान करो। तुम्हारी रक्षा करनेपर उपद्रव नहीं रहता। तुम्हारी रक्षा ही सुरक्षा है।

११ आदित्यो, जैसे मनुष्य तटसे नीचेके पदार्थोंको देखता है, वैसे ही तुम ऊपरसे नीचे स्थित हमें देखो। जैसे अश्वको अच्छे घाटपर ले जाया जाता है, वैसे ही हमें सन्मार्गसे ले जाओ। तुम्हारी रक्षा करनेपर उपद्रव नहीं रहता। तुम्हारी रक्षा ही सुरक्षा हैं।

नेह भद्रं रक्षस्विने नावयै नोपया उत ।
गवे च भद्रं धेनवे वीराय च श्रवस्यतेऽ
नेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥१२॥
यदाविर्यदपीच्यं देवासो अस्ति दुष्कृतं ।
त्रिते तद्विश्वमाप्त्य आरे अस्मद्दधातनानेहसो ।
व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥१३॥
यच्च गोषु दुःष्वप्न्यं यच्चास्मे दुहितर्दिवः ।
त्रिताय तद्विभावर्याप्त्याय परा वहाने-
हसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥१४॥
निष्कं वा घा कृणवते स्रजं वा दुहितर्दिवः ।
त्रिते दुःष्वप्न्यं सर्वमाप्त्ये परि
दद्मस्यनेहसो व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥१५॥

१२ आदित्यो, इस संसारमें हमारे हिंसक और बली व्यक्तिको सुख न हो। गौओं, और अन्नाभिलाषी वीरको सुख प्राप्त हो। तुम्हारी रक्षा करनेपर उपद्रव नहीं रहता। तुम्हारी रक्षा ही सुरक्षा है।

१३ आदित्यदेवो, जो पाप प्रकट हुआ है और जो पाप छिपा हुआ है, उनमेंसे मुझ आप्त्य त्रितको एक भी न हो। इन पापोंको दूर रखो। तुम्हारी रक्षा करनेपर उपद्रव नहीं रहता। तुम्हारी रक्षा ही सुरक्षा है।

१४ स्वर्गकी पुत्री उषा, हमारी गायोंमें जो दुष्ट स्वप्न (पीड़ा) है और हमारा जो दुःस्वप्न है विभावरी, वह सब आप्त्यत्रितके लिये दूर कर दो। तुम्हारी रक्षा करनेपर उपद्रव नहीं रहता। तुम्हारी रक्षा ही सुरक्षा है।

१५ स्वर्गकी पुत्री उषा, स्वर्णकार अथवा मालाकारमें जो दुःस्वप्न है, वह आप्त्यके पाससे दूर हो। तुम्हारी रक्षा करनेपर दुःस्वप्न नहीं रहता। तुम्हारी रक्षा ही सुरक्षा है।

तदन्नाय तदपसे तं भागमुपसेदुषे ।
त्रिताय च द्विताय चोषो दुःष्वप्न्यं वहानेहसो
व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥१६॥
यथा कलां यथा शफं यथ ऋणं सन्नयामसि ।
एवादुःष्वप्न्यं सर्वमाप्त्ये सं नयामस्यनेहसो
व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥१७॥
अजैष्माद्यासनाम चाभूमानागसो वयम् ।
उषो यस्माद्दुःष्वप्न्यादभैष्माप तदुच्छत्वनेहसो
व ऊतयः सुऊतयो व ऊतयः ॥१८॥

४८ सूक्त

सोम देवता । कण्वपुत्र प्रगाथ ऋषि । त्रिष्टुप् और जगती छन्द ।

स्वादोरभक्षि वयसः सुमेधाः स्वाध्यो वरिवोवित्तरस्य ।
विश्वे यं देवा उत मर्त्यासो मधु ब्रुवन्तो अभि सञ्चरन्ति ॥१॥

१६ स्वप्नमें अन्न (मधु, पायस आदि भोज्य) पानेवाले आप्त्यत्रितसे, दुःस्वप्नसे उत्पन्न कष्टको दूर करो। तुम्हारी रक्षा होनेपर उपद्रव नहीं होता। तुम्हारी रक्षा ही सुरक्षा है।

१७ जैसे यज्ञमें दानके लिये पशुके हृदय, खुर, सींग आदि सब क्रमानुसार विलुप्त अथवा दत्त होते हैं, जैसे ऋणको क्रमशः दिया जाता है, वैसे ही हम आप्त्यत्रितके सारे दुःस्वप्न क्रमशः दूर करेंगे।

१८ आज हम जीतेंगे, आज हम सुख प्राप्त करेंगे, आज हम पाप-शून्य होंगे। उषा देवी, हम दुःस्वप्नसे डर गये हैं; इसलिये वह भय दूर हो। तुम्हारी रक्षा करनेपर उपद्रव नहीं रहता। तुम्हारी रक्षा ही सुरक्षा है।

१ मैं सुन्दर प्रज्ञा, अध्ययन और कर्मसे युक्त हूँ। मैं अतीव पूजित और स्वादु अन्नका आस्वाद ग्रहण कर सकूं। विश्वदेवगण और मनुष्य इस अन्नको मनोहर कहकर इसको प्राप्त करते हैं।

अन्तश्च प्रागा अदितिर्भवास्यवयाता हरसो दैव्यस्य ।
इन्दविन्द्रस्य सख्यं जुषाणः श्रौष्टीव धुरमनु राय ऋध्याः ॥२॥
अपाम सोमममृता अभूमागन्म ज्योतिरविदाम देवान् ।
किं नूनमस्मान् कृणवदरातिः किमु धूर्तिरमृत मर्त्यस्य ॥३॥
शं नो भव हृद आ पीत इन्दो पितेव सोम सूनवे सुशेवः ।
सखेव सख्य उरुशंस धीरः प्र ण आयुर्जीवसे सोम तारीः ॥४॥
इमे मा पीता यशस उरुष्यवो रथं न गावः समनाह पर्वसु ।
ते मा रक्षन्तु विस्रसश्चरित्रादुत मा स्रामाद्यवयन्त्विन्दवः ॥५॥
अग्निं न मा मथितं सं दिदीपः प्र चक्षय कृणुहि वस्यसो नः ।
अथा हि ते मद आ सोम मन्ये रेवाँ इव प्र चरा पुष्टिमच्छ ॥६॥
इषिरेण ते मनसा सुतस्य भक्षीमहि पित्र्यस्येव रायः ।
सोम राजन् प्र ण आयूंषि तारीरहानीव सूर्यो वासराणि ॥७॥

---

२ सोम, तुम हृदय वा यज्ञागारके बीचमें गमन करते हो। तुम अदिति हो। तुम दे[वोंके] क्रोधको अलग करते हो। इन्दु (सोम), इन्द्रकी मैत्री प्राप्त करके तुम उसी प्रकार शीघ्र हमारे धनका वहन करो. जिस प्रकार अश्व भार वहन करता है।

३ अमर सोम. हम तुम्हें पीकर अमर होंगे। पश्चात् द्युतिमान् स्वर्गमें जायंगे और देवोंको जा[नेंगे।] हमरा शत्रु क्या करेगा ? मैं मनुष्य हूँ; मेरा हिंसक क्या करेगा ?

४ सोम, जैसे पिता पुत्रके लिये सुखकर होता है. वैसे ही पीनेपर तुम हृदयके लिये सु[खकर] होओ। अनेकों द्वारा प्रशंसित सोम, तुम बुद्धिमान् हो। हमलोगोंके जीवनके लिये आयुको बढ़[ाओ।]

५ पिये जानेपर, कीर्त्तिकर और रक्षणेच्छु सोम मुझे वैसे ही प्रत्येक अङ्गसे कर्ममें बांधें; [जैसे] पशु रथकी गाँठोंमें जूतते हैं। सोम मुझे चरित्र-भ्रष्टतासे बचावे। मुझे व्याधिसे अलग करें।

६ सोम, पिये जानेपर, मथित अग्निके समान, मुझे दीप्त करो, मुझे विशेष रूपसे देखो; मुझे अत्यन्त धनी करो। सोम, इस समय मैं तुम्हारे हर्षके लिये स्तुति करता हूँ; इसलिये तुम [धनी] होकर पुष्टि प्राप्त करो।

७ इच्छुक मनसे पैतृक धनके समान अभिषुत सोमका हम पान करेंगे। राजा सोम, हमारी आयु बढ़ाओ। इसी प्रकार सूर्य दिनोंको बढ़ाते हैं।

सोम राजन्मृलया नः स्वस्ति तव स्मसि व्रत्यास्तस्य विद्धि ।
अलर्ति दक्ष उत मन्युरिन्दो मा नो अर्यो अनुकामं परादाः ॥८॥
त्वं हि नस्तन्वः सोम गोपा गात्रेगात्रे निषसत्था नृचक्षाः ।
यत्ते वयं प्रमिनाम व्रतानि स नो मृल सुषखा देव वस्यः ॥९॥
ऋदूदरेण सख्या सचेय यो मा न रिष्येद्धर्यश्व पीतः ।
अयं यः सोमो न्यधाय्यस्मे तस्मा इन्द्रं प्रतिरमेम्यायुः ॥१०॥
अप त्या अस्थुरनिरा अमीवा निरत्रसन्तमिषीचोरभैषुः ।
आ सोमो अस्माँ अरुहद्विहाया अगन्म यत्र प्रतिरन्त आयुः ॥११॥
यो न इन्दुः पितरो हृत्सु पीतोऽमर्त्यो मर्त्यां आविवेश ।
तस्मै सोमाय हविषा विधेम मृलीके अस्य सुमतौ स्याम ॥१२॥
त्वं सोम पितृभिः संविदानोऽनु द्यावापृथिवी आ ततन्थ ।
तस्मै त इन्दो हविषा विधेम वयं स्याम पतयो रयीणाम् ॥१३॥

---

८ राजा सोम, अविनाशके लिये हमें सुखी करो। हम व्रतवाले हैं; हम तुम्हारे ही हैं। तुम हमें जानो। इन्द्र, हमारा शत्रु वर्द्धित होकर जा रहा है। क्रोध भी जा रहा है। इन दोनोंके दण्डसे हमारा उद्धार करो।

९ सोम, तुम हमारे शरीरके रक्षक हो। तुम कर्मके नेताओंके द्रष्टा हो। इसीलिये तुम सब अङ्गोंमें बैठते हो। यद्यपि हम तुम्हारे कर्मोंमें विघ्न करते हैं, तो भी, हे देव, तुम उत्कृष्ट अन्न-वाले और उत्तम सखा होकर हमें सुखी करो।

१० सोम, तुम उदरमें व्यथा नहीं उत्पन्न करना। तुम सखा हो। मैं तुम्हारे सङ्ग मिलूँगा। पिये जानेपर सोम मुझे नहीं मारें। हरि अश्वोंवाले इन्द्र, यह जो सोम मुझमें निहित हुआ है; उसीके लिये चिर कालतक जठरमें रहनेकी प्रार्थना करता हूँ।

११ असाध्य और सुदृढ़ पीड़ाएँ दूर हों। ये सब पीड़ाएँ बलवती होकर हमें भली भाँति कम्पित करती हैं। महान् सोम हमारे पास आया है। इसका पान करनेसे आयु बढ़ती है। हम मानव हैं। हम इसके पास जायँगे।

१२ पितरो, पिये जानेपर जो सोम अमर होकर हम मर्त्योंके हृदयमें पैठा है, हव्य द्वारा हम उसी सोमकी सेवा करेंगे। इस सोमकी सुबुद्धि और कृपामें हम रहेंगे।

१३ सोम, तुम पितरोंके साथ मिलकर द्यावापृथिवीको विस्तृत करते हो। सोम हविके द्वारा हम तुम्हारी सेवा करेंगे। हम धनपति होंगे।

त्रातारो देवा अधि वोचता नो मा नो निद्रा ईशत मोत जल्पिः ।
वयं सोमस्य विश्वह प्रियासः सुवीरासो विदथमा वदेम ॥१४॥
त्वं नः सोम विश्वतो वयो धास्त्वं स्वर्विदा विशा नृचक्षाः ।
त्वं न इन्द ऊतिभिः सजोषाः पाहि पश्चातादुत वा पुरस्तात् ॥१५॥

७ अनुवाक । ४९ सूक्त

अग्नि देवता । प्रगाथ-पुत्र भर्ग ऋषि । बृहती और सतोबृहती छन्द ।

अग्न आयाह्यग्निभिर्होतारं त्वा वृणीमहे ।
आ त्वामनक्तु प्रयता हविष्मती यजिष्ठं बर्हिरासदे ॥१॥
अच्छा हि त्वा सहसः सूनो अङ्गिरः स्रुचश्चरन्त्यध्वरे ।
ऊर्जो नपातं घृतकेशमीमहेऽग्निं यज्ञेषु पूर्व्यम् ॥२॥

---

१४ त्राता देवो, हमसे मीठे वचन बोलो। स्वप्न हमें वशीभूत नहीं करे। निन्दक हमारी निन्दा न करें। हम सदा सोमके प्रिय हों, ताकि सुन्दर स्तोत्रवाले होकर स्तोत्रका उच्चारण करें।

१५ सोम, तुम चारो ओरसे हमारे अन्नदाता हो। तुम स्वर्गदाता और सर्वदर्शी हो। प्रवेश करो। सोम, तुम प्रसन्नताके साथ, रक्षणको लेकर, पीछे और सामने हमें बचाओ।

१ अग्नि, अन्य अग्निगणके साथ आओ। तुम्हें होता जानकर हम वरण करते हैं। अध्वर्युओंके द्वारा नियता और हविवाली यजनीय-श्रेष्ठ तुम्हें कुशपर बैठाकर अलङ्कृत करें।

२ बलके पुत्र और अङ्गिरा लोगोंमें अन्यतम अग्नि, यज्ञमें तुम्हें प्राप्त करनेके लिये स्रुक् जाते है। अन्न-रक्षक बलके पुत्र, प्रदीप्त ज्वालावाले और प्राचीन अग्निकी हम यज्ञमें स्तुति करते हैं।

---

* इसके आगे ११ सूक्त "बालखिल्य" सूक्त हैं। उनपर सायणाचार्यका भाष्य नहीं है। इसलिये उन सूक्तोंको यहां नहीं दिया गया है। अष्टम मण्डलके अन्तमें उन्हें दिया गया है।

अग्ने कविर्वेधा असि होता पावक यक्ष्यः ।
मन्द्रो यजिष्ठो अध्वरेष्वीड्यो विप्रेभिः शुक्र मन्मभिः ॥३॥
अद्रोघमा वहोशतो यविष्ठय देवाँ अजस्र वीतये ।
अभि प्रयांसि सुधिता वसो गहि मन्दस्व धीतिभिर्हितः ॥४॥
त्वमित्सप्रथा अस्यग्ने त्रातर्ऋतस्कविः ।
त्वां विप्रासः समिधान दीदिव आ विवासन्ति वेधसः ॥५॥
शोचा शोचिष्ठ दीदिहि विशे रायो शस्व स्तोत्रे महाँ असि ।
देवानां शर्मन्मम सन्तु सूरयः शत्रुषाहः स्वग्नयः ॥६॥
यथा चिद्वृद्धमतसमग्ने संजूर्वसि क्षमि ।
एवा दह मित्रमहो यो अस्मध्रुगदुर्मन्मा कश्च वेनति ॥७॥
मा नो मर्ताय रिपवे रक्षस्विने माघशंसाय रीरधः ।
अस्रेधद्भिस्तरणिभिर्यविष्ठ्य शिवेभिः पाहि पायुभिः ॥८॥

३ अग्नि, तुम कवि (मेधावी), फलोंके विधाता, पावक, होता और होम-सम्पादक हो । दीप्त अग्नि, तुम आमोदनीय और सर्वोच्च यजनीय हो । यज्ञमें विप्रलोग मनन-मन्त्र द्वारा तुम्हारा, स्तोत्र करते हैं ।

४ युवतम और नित्य अग्नि, मैं द्रोह-शून्य हूँ । देवता लोग मेरी कामना करते हैं । हवि भक्षणके लिये उन्हें यहाँ ले आओ । वासदाता अग्नि, सुन्दर रीतिसे निहित अन्नके समीप जाओ । स्तुति द्वारा निहित होकर प्रसन्न होओ ।

५ अग्नि, तुम रक्षक, सत्यस्वरूप, कवि और सर्वतः विस्तृत हो । समिध्यमान और दीप्त अग्नि, विप्र स्तोतालोग तुम्हारी परिचर्या करते हैं ।

६ अतीव पवित्र अग्नि, दीप्त होओ और प्रदीप्त करो । प्रजा और स्तोताके लिये सुख प्रदान करो । तुम महान् हो । मेरे स्तोतालोग देव-प्रदत्त सुख प्राप्त करें । वे शत्रु-जेता और सुन्दर अग्निसे युक्त हों ।

७ अग्नि और मित्रोंके पूजक, पृथिवीके सूखे काठको तुम जैसे जलाते हो, वैसे ही हमारे द्रोही और हमारी दुर्बुद्धि चाहनेवालेको जलाओ ।

८ अग्नि, हमें हिंसक और बली मनुष्यके वशमें मत करना । हमारे अनिष्ट चाहनेवालेके वशमें हमें नहीं करना । युवतम अग्नि, अहिंसक, उद्धारक और सुखकर रक्षणोंसे हमारी रक्षा करो ।

पाहि नो अग्न एकया पाह्युत द्वितीयया ।
पाहि गीर्भिस्तिसृभिरूर्जाम्पते पाहि चतसृभिर्वसो ॥९॥
पाहि विश्वस्माद्रक्षसो अराव्णः प्र स्म वाजेषु नोऽव ।
त्वामिद्धि नेदिष्ठं देवतातय आपिं नक्षामहे वृधे ॥१०॥
आ नो अग्ने वयोवृधं रयिं पावक शंस्यम् ।
रास्वा च न उपमाते पुरुस्पृहं सुनीती स्वयशस्तरम् ॥११॥
येन वंसाम पृतनासु शर्द्धतस्तरन्तो अर्य आदिशः ।
स त्वं नो वर्ध प्रयसा शचीवसो जिन्वा धियो वसुविदः ॥१२॥
शिशानो वृषभो यथाग्निः शृङ्गे दविध्वत् ।
तिग्मा अस्य हनवो न प्रतिधृषे सुजम्भः सहसो यहुः ॥१३॥
नहि ते अग्ने वृषभ प्रतिधृषे जम्भासो यद्वितिष्ठसे ।
स त्वं नो होतः सुहुतं हविष्कृधि वंस्वा नो वार्या पुरु ॥१४॥

---

९ अग्नि, हमें एक ऋक्के द्वारा बचाओ। हमें द्वितीय ऋक्के द्वारा बचाओ। बली अग्नि, तीन ऋकोंके द्वारा बचाओ। वास-दाता अग्नि, हमें चार वाक्योंके द्वारा बचाओ।

१० सारे राक्षसों और अदातासे हमें बचाओ। युद्धमें हमारी रक्षा करो। तुम निकटवर्ती बन्धु हो। यज्ञ और समृद्धिके लिये हम तुम्हें प्राप्त करेंगे।

११ शोधक अग्नि, हमें अन्न-वर्द्धक और प्रशंसनीय धन प्रदान करो। समीपवर्ती और धन अग्नि, हमें सुनीतिके द्वारा अनेकों द्वारा स्पृहणीय और अतीव कीर्त्तिकर धन दो।

१२ जिस धनके द्वारा हम युद्धमें क्षिप्रकारी शत्रु और अस्त्र-क्षेपकोंके हाथोंसे उद्धार पाकर मारेंगे, उसे हमें दो। तुम प्रज्ञा द्वारा वासदाता हो। हमें वर्द्धित करो। अन्नके द्वारा वर्द्धित कर हमारे धन देनेवाले कर्मोंको सुसम्पन्न करो।

१३ वृषभके समान अपने शृङ्ग (ज्वाला)को वर्द्धित करते हुए अग्नि मस्तक कँपा रहे हैं। अग्निके हनु (ज्वाला) तीक्ष्ण हैं; कोई उनका निवारण नहीं कर सकता। अग्निके दाँत उत्तम हैं। बलके पुत्र हैं।

१४ वृष्टिदाता अग्नि, तुम बढ़ते हो; इसलिये तुम्हारे दाँत (ज्वाला)का कोई निवारण नहीं कर सकता। अग्नि, तुम होता हो। तुम हमारे हव्यका भलीभाँति हवन करो। हमें वरणीय बहुधन दान करो।

शेषे वनेषु मात्रोः सं त्वा मर्तास इन्धते ।
अतन्द्रो हव्या वहसि हविष्कृत आदिद्देवेषु राजसि ॥१५॥
सप्त होतारस्तमिदीलते त्वाग्ने सुत्यजमह्वयम् ।
भिनत्स्यद्रिं तपसा वि शोचिषा प्राग्ने तिष्ठ जनाँ अति ॥१६॥
अग्निमग्निं वो अध्रिगुं हुवेम वृक्तबर्हिषः ।
अग्निं हितप्रयसः शश्वतीष्वा होतारं चर्षणीनाम् ॥१७॥
केतेन शर्मन्त् सचते सुषामण्यग्ने तुभ्यं चिकित्वना ।
इषण्यया नः पुरुरूपमा भर वाजं नेदिष्टमूतये ॥१८॥
अग्ने जरितर्विश्पतिस्तेपानो देव रक्षसः ।
अप्रोषिवान् गृहपतिर्महाँ असि दिवस्पायुर्दुरोणयुः ॥१९॥
मानो रक्ष आ वेशीदाघृणीवसो मा यातुर्यातुमावताम् ।
परोगव्यूत्यनिरामप क्षुधमग्ने सेध रक्षस्विनः ॥२०॥

---

१५ अग्नि, मातृ रूप वनमें वर्त्तमान अरणि-द्वयमें तुम रहते हो। मनुष्य तुम्हें भली भाँति वर्द्धित करते हैं। पीछे तुम आलस्य-शून्य होकर हव्यदाताके हव्यको देवोंके निकट ले जाओ। अनन्तर देवोंके बीच शोभा पाओ।

१६ अग्नि, तुम्हारी स्तुति सात होता करते हैं। तुम अभिमतदाता और प्रवृद्ध हो। तुम तापक तेजके द्वारा मेघको फाड़ते हो। अग्नि, हमें अतिक्रम करके आगे जाओ।

१७ स्तोताओ, तुम्हारे लिये हम अग्निका ही आह्वान करते हैं। हमने कुशको छिन्न किया है और हव्यका विधान किया है। अग्नि कर्म-धारक अनेक लोकोंमें वर्तमान और सारे यजमानोंके होता हैं।

१८ अग्नि, उत्तम साम (रथन्तर आदिसे युक्त) और सुखवाले यज्ञमें यजमान, प्रज्ञासे युक्त मनुष्यके साथ, तुम्हारी स्तुति करता है। अग्नि, हमारी रक्षाके लिये, अपनी इच्छासे, निकटवर्ती और नाना-रूपधारी अन्न ले आओ।

१९ देव और स्तुत्य अग्नि, तुम प्रजाके पालक और राक्षसोंके सन्तापक हो। तुम यजमानके गृह-रक्षक हो। उसे तुम कभी नहीं छोड़ते। तुम महान् हो। तुम द्यु लोकके पाता हो। तुम यजमानके गृहमें सदा वर्तमान हो।

२० दीप्तधन अग्नि, हमारे अन्दर राक्षस आदि प्रविष्ट न हों। यातुधान लोगोंकी न प्रविष्ट हो। दरिद्रता, हिंसक और बली राक्षसोंको बहुत दूर रखना।

५० सूक्त

इन्द्र देवता। प्रगाथ-पुत्र भर्ग ऋषि। बृहती और सतोबृहती छन्द।

उभयं शृणवच्च न इन्द्रो अर्वागिदं वचः ।
सत्राच्या मघवा सोमपीतये धिया शविष्ठ आगमत् ॥१॥
तं हि स्वराजं वृषभं तमोजसे धिषणे निष्टतक्षतुः ।
उतोपमानां प्रथमो नि षीदसि सोमकामं हि ते मनः ॥२॥
आ वृषस्व पुरूवसो सुतस्येन्द्रान्धसः ।
विद्मा हि त्वा हरिवः पृत्सु सासहिमधृष्टं चिद्दधृष्वणिम् ॥३॥
अप्रामिसत्य मघवन् तथेदसदिन्द्र क्रत्वा यथा वशः ।
सनेम वाजं तव शिप्रिन्नवसा मक्षू चिद्यन्तो अद्रिवः ॥४॥
शग्ध्यू षु शचीपत इन्द्र विश्वाभिरूतिभिः ।
भगं न हि त्वा यशसं वसुविदमनु शूर चरामसि ॥५॥

---

१ इन्द्र हमारे स्तोत्र-रूप और शस्त्रात्मक वाक्योंको सुन । हमारे सहगामी कर्मसे होकर धनी और बली इन्द्र सोमपानके लिये आवें ।

२ द्यावापृथिवीने उन शोभन और वृष्टिदाता इन्द्रका संस्कार किया था। उन बलके लिये संस्कार किया था। इसीलिये, हे इन्द्र, तुम उपमान देवोंमें मुख्य होकर बैठो। तुम्हारा मन सोमाभिलाषी है।

३ प्रचुर-धनी इन्द्र, तुम जठरमें अभिषुत सोमका सिञ्चन करो। हरि अश्ववाले तुम्हें हम युद्धमें शत्रुओंका पराजेता, न दबाने योग्य और दूसरोंको दबानेवाला जानते हैं।

४ धनी इन्द्र, तुम वस्तुतः अहिंसित हो। जिस प्रकार हम कर्मके द्वारा फलको कर सकें, वैसा ही हो। शिरस्त्राणवाले वज्रधर इन्द्र, तुम्हारे रक्षणमें हम अन्नका सेवन और शीघ्र ही शत्रुओंको पराजित करेंगे।

५ यज्ञपति इन्द्र, सारी रक्षाओंके साथ अभिमत फल प्रदान करो। शूर, तुम यशस्वी और धन-प्रापक हो। भाग्यके समान हम तुम्हारी सेवा करते हैं।

पौरोऽश्वस्य पुरुकृद्गवामस्युत्सो देव हिरण्ययः ।
नकिर्हि दानं परिमर्धिषत्त्वे यद्यद्यामि तदाभर ॥६॥
त्वं ह्येहि चेरवे विदा भगं वसुत्तये ।
उद्वावृषस्व मघवन् गविष्टय उदिन्द्राश्वमिष्टये ॥७॥
त्वं पुरू सहस्राणि शतानि च यूथा दानाय मंहसे ।
आ पुरन्दरं चकृम विप्रवचस इन्द्रं गायन्तोवसे ॥८॥
अविप्रो वा यदविधद्विप्रो वेन्द्र ते वचः ।
स प्र ममन्दत्त्वाया शतक्रतो प्राचामन्यो अहंसन ॥९॥
उग्रवाहुर्म्रक्षकृत्वा पुरन्दरो यदि मे शृणवद्धवम् ।
वसूयवो वसुपतिं शतक्रतुं स्तोमैरिन्द्रं हवामहे ॥१०॥
न पापासो मनामहे नारायासो न जल्हवः ।
यदिन्न्विन्द्रं वृषणं सचा सुते सखायं कृणवामहै ॥११॥

---

६ इन्द्र, तुम अश्वोंके पोषक, गौओंकी संख्या बढ़ानेवाले, सोनेके शरीरवाले और निर्झर स्वरूप हो। हमलोगोंके लिये तुम जो दान करनेकी कामना करते हो, उसकी कोई हिंसा नहीं कर सकता। फलतः मैं जो याचना करता हूँ, उसे ले आओ।

७ इन्द्र, तुम आओ। धन-दानके लिये अपने सेवकको भजनीय धन दो। मैं गौ चाहता हूँ। मुझे गौ दो। मैं अश्व चाहता हूँ। मुझे अश्व दो।

८ इन्द्र, तुम अनेक सौ और अनेक सहस्र गौओंका समूह दाता यजमानको देते हो। नगर-भेदक इन्द्रका, रक्षणके लिये स्तव करते हुए विविध वचनोंसे युक्त होकर हम उन्हें अपनी ओर ले आवेंगे।

९ शतक्रतु, अपराजेय क्रोधवाले और संग्राममें अहङ्कारी इन्द्र, जो बुद्धि-हीन वा बुद्धिमान् तुम्हारी स्तुति करता है, तुम्हारी कृपासे वह आनन्दित होता है।

१० उग्रबाहु, बधकर्ता और पुरी-भेदक इन्द्र यदि मेरा आह्वान सुनें, तो हम धनकी अभिलाषासे धनपति और बहुकर्मा इन्द्रको, स्तोत्र द्वारा, बुलावेंगे।

११ अब्रह्मचारी हम इन्द्रको नहीं मानते। धन-शून्य और अग्निरहित हम इन्द्रको नहीं जानते। फलतः इस समय हम, सोमाभिषव होनेपर उन वर्षकके लिये इकट्ठे होकर उन्हें अपना मित्र बना लेंगे।

उग्रं युयुज्म पृतनासु सासहिमृणकातिमदाभ्यम् ।
वेदा भृमं चित् सनिता रथीतमो वाजिनं यमिदूनशत् ॥१२॥
यत इन्द्र भयामहे ततो नो अभयं कृधि ।
मघवञ्छग्धि तव तन्न ऊतिभिर्वि द्विषो वि मृधो जहि ॥१३॥
त्वं हि राधस्पते राधसो महः क्षयस्यासि विधतः ।
तं त्वा वयं मघवन्निन्द्र गिर्वणः सुतावन्तो हवामहे ॥१४॥
इन्द्रःस्पलुत वृत्रहा परस्पा नो वरेण्यः ।
स नो रक्षिषच्चरमं स मध्यमं स पश्चात् पातु नः पुरः ॥१५॥
त्वंनः पश्चादधरादुत्तरात् पुर इन्द्र नि पाहि विश्वतः ।
आरे अस्मत् कृणुहि दैव्यं भयमारे हेतोरदेवीः॥१६॥
अद्याद्या श्वश्व इन्द्र त्रास्व परे च नः ।
विश्वा च नो जरितॄन्त्सत्पते अया दिवा नक्तं च रक्षिषः ॥१७॥

---

१२ उग्र और युद्धमें शत्रुओंके विजेता इन्द्रको हम युक्त करेंगे। उनकी स्तुति ऋ[illegible] समान अवश्य फल देनेवाली है। वह अहिंसनीय, रथपति इन्द्र अनेक अश्वोंमें वेग[illegible] अश्वको पहचानते हैं। वह दाता हैं। वह अनेक यजमानोंमें हमें प्राप्त हुए हैं।

१३ जिस हिंसकसे हम भय पाते हैं, उससे हमें अभय करो, मघवन्, तुम समर्थ [illegible] हमें अभय प्रदान करनेके लिये रक्षक पुरुषोंके द्वारा शत्रुओं और हिंसकोंको विनष्ट करो।

१४ धनस्वामी तुम्हीं मघाधनके, सेवकके गृहके वर्द्धक हो। मघवा और स्तुति[illegible] इन्द्र, ऐसे तुमको हम, सोमाभिषव करके, बुलाते हैं।

१५ यह इन्द्र सबके ज्ञाता, वृत्रहन्ता पर, पालक और वरणीय हैं। वही इन्द्र हमारे पु[illegible] रक्षा करें। वह चरमपुत्रकी रक्षा करें और मध्यम पुत्रकी रक्षा करें। वह हमारे पीछे और सा[illegible] दोनों दिशाओंमें रक्षा करें।

१६ इन्द्र, तुम हमें आगे, पीछे, नीचे, ऊपर—चारों ओरसे रक्षा करो। इन्द्र हमारे [illegible] देव-भय दूर करो और असुर आयुध भी दूर करो।

१७ इन्द्र, आज, कल और परसो हमारी रक्षा करना। साधु-रक्षक इन्द्र, हम तुम्हारे स[illegible] हैं। सारा दिन हमारी रक्षा करना।

प्रभंगी शूरो मघवा तुवीमघः संमिश्लो वीर्याय कम् ।
उभा ते बाहू वृषणा शतक्रतो नि या वज्रं मिमिक्षतुः ॥१८॥

५१ सूक्त

इन्द्र देवता । कण्व-पुत्र प्रगाथ ऋषि । पङ्क्ति और बृहती छन्द ।

प्रो अस्मा उपस्तुतिं भरता यज्जुजोषति ।
उक्थैरिन्द्रस्य माहिनं वयो वर्धन्ति सोमिनो इन्द्रस्य रातयः ॥१॥
अयुजो असमो नृभिरेकः कृष्टीरयास्यः ।
पूर्वीरति प्र वावृधे विश्वा जातान्योजसा भद्रा इन्द्रस्य रातयः ॥२॥
अहितेन चिदर्वता जीरदानुः सिषासति ।
प्रवाच्यमिन्द्र तत्तव वीर्याणि करिष्यतो भद्रा इन्द्रस्य रातयः ॥३॥
आयाहि कृणवाम त इन्द्र ब्रह्माणि वर्धना ।
येभिः शविष्ठ चाकनो भद्रमिह श्रवस्यते भद्रा इन्द्रस्य रातयः ॥४॥

---

१८ ये धनी, वीर और प्रचुरधनी इन्द्र, वीरत्वके लिये, सबके साथ मिलते हैं। शतक्रतु इन्द्र, वह तुम्हारी अभिलाषप्रद दोनों भुजाएँ वज्र ग्रहण करें ।

---

१ इन्द्र सेवा करते हैं; इसलिये उनको लक्ष्यकर स्तुति करो। लोग सोम-प्रिय इन्द्रके प्रचुर अन्नको उक्थ मन्त्रोंके द्वारा वर्द्धित करते हैं। इन्द्रका दान कल्याणकारक है।

२ असहाय, असम देवोंमें मुख्य और अविनाशी इन्द्र पुरातन प्रजाको अतिक्रम करके बढ़ते हैं। इन्द्रका दान कल्याणवाहक है।

३ शीघ्रदाता इन्द्र अप्रेरित अश्वकी सहायतासे भोग करनेकी इच्छा करते हैं। इन्द्र, तुम सामथ्यदाता हो। तुम्हारा महत्त्व स्तुत्य है। इन्द्रका दान कल्याणकर है ।

४ इन्द्र, आओ। हम तुम्हारी उत्साहवर्द्धक और उत्कृष्ट स्तुति करते हैं। सबसे बली इन्द्र, इन स्तुतिके द्वारा अन्नेच्छु स्तोताका मङ्गल करनेकी इच्छा करते हो। इन्द्रका दान कल्याणकर है।

धृषतश्चिद्धृषन्मनः कृणोषीन्द्र यत्त्वम् ।
तीव्रैः सोमैः सपर्यतो नमोभिः प्रतिभूषतो भद्रा इन्द्रस्य रातयः ॥५॥
अव चष्ट ऋचीषमोऽवताँ इव मानुषः ।
जुष्ट्वी दक्षस्य सोमिनः सखायं कृणुते युजं भद्रा इन्द्रस्य रातयः ॥६॥
विश्वे त इन्द्र वीर्यं देवा अनु क्रतुं ददुः ।
भुवो विश्वस्य गोपतिः पुरुष्टुत भद्रा इन्द्रस्य रातयः ॥७॥
गृणे तदिन्द्र ते शवऽउपमं देवतातये ।
यद्धंसि वृत्रमोजसा शचीपते भद्रा इन्द्रस्य रातयः ॥८॥
समनेव वपुष्यतः कृणवन्मानुषा युगा ।
विदे तदिन्द्रश्चेतनमध श्रुतो भद्रा इन्द्रस्य रातयः ॥९॥
उज्जातमिन्द्र ते शव उत्त्वामुत्तव क्रतुम् ।
भूरिगो भूरि वावृधुर्मघवन्तव शर्मणि भद्रा इन्द्रस्य रातयः ॥१०॥

---

५ इन्द्र, तुम्हारा मन अतीव धृष्ट है। मदकर सोमके प्रदान द्वारा सेवा करनेवाले नमस्कार द्वारा विभूषित करनेवाले यजमानको असीम फल देते हो। इन्द्रका दान कल्याणकर है।

६ इन्द्र, तुम स्तुति द्वारा परिच्छिन्न होकर हमें उसी प्रकार देख रहे हैं, जिस प्रकार मनुष्य कूपका दर्शन करता है। इन्द्र प्रसन्न होकर सोमवाले यजमानके योग्य बन्धु होते हैं। इन्द्रका दान महा कल्याणकर है।

७ इन्द्र, तुम्हारे वीर्य और तुम्हारी प्रज्ञाका अनुधावन करते हुए सारे देवगण वीर्य और प्रज्ञाको धारण करते हैं। इन्द्र; प्रसिद्ध गायों अथवा वचनोंके स्वामी हो। बहुतों द्वारा स्तुत इन्द्र, तुम्हारा दान कल्याणवाहक है।

८ इन्द्र, तुम्हारे उस उपमान बलकी, यज्ञके लिये, मैं स्तुति करता हूँ। यज्ञपति, बलसे तुमने वृत्रका बध किया है। इन्द्रका दान कल्याणकर है।

९ प्रेमवाली रमणी जैसे रूपाभिलाषी पुरुषको वशीभूत करती है, वैसे ही इन्द्र मनुष्योंको वशीभूत करते हैं। मनुष्य संवत्सर आदिके कालको प्राप्त करते हैं। इन्द्र ही उसे बता देते हैं। इन्द्रका दान कल्याणकर है।

१० इन्द्र, अनेक पशुओंवाले जो यजमान तुम्हारे दिये सुखका भोग करते हैं, वे तुम्हारे उत्पन्न बलको प्रभूत रूपसे वर्द्धित करते हैं, तुम्हें वर्द्धित करते हैं, तुम्हारी प्रज्ञाको वर्द्धित करते हैं। इन्द्रका दान कल्याणकर है।

अहं च त्वं च वृत्रहन्त्सं युज्याव सनिभ्य आ ।
अरातीवा चिदद्रिवोऽनु नौ शूर मंसते भद्रा इन्द्रस्य रातयः ॥११
सत्यमिद्वा उ तं वयमिन्द्रं स्तवाम नानृतम् ।
महाँ असुन्वतो वधो भूरि ज्योतींषि सुन्वतो भद्रा इन्द्रस्य रातयः ॥१२॥

५२ सूक्त

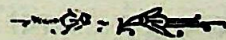
इन्द्र देवता। अन्तिम ऋचाके देवता देवगण। कण्वके पुत्र प्रगाथ ऋषि । अनुष्टुप्, त्रिष्टुप् और गायत्री छन्द

स पूर्व्यो महानां वेनः क्रतुभिरानजे ।
यस्य द्वारा मनुष्पिता देवेषु धिय आनजे ॥१॥
दिवो मानं नोत्सदन्त्सोमपृष्ठासो अद्रयः । उक्था ब्रह्म च शंस्या ॥२॥
स विद्वाँ अङ्गिरोभ्य इन्द्रो गा अवृणोदप । स्तुषे तदस्य पौंस्यम् ॥३॥
स प्रत्नथा कविवृध इन्द्रो वाकस्य वक्षणिः ।
शिवो अर्कस्य होमन्यस्मत्रा गन्त्ववसे ॥४॥

---

११ इन्द्र, जबतक धन न मिले, तबतक हम मिलित रहें। वृत्रघ्न, वज्री और शूर इन्द्र, अदाता व्यक्ति भी तुम्हारे दानकी प्रशंसा करेगा। इन्द्रका दान कल्याणकर है।

१२ हमलोग निश्चय ही इन्द्रकी सत्य स्तुति करेंगे। असत्य स्तुति नहीं करेंगे। इन्द्र यज्ञ-पराङ्मुख लोगोंका वध, बड़ी संख्यामें, करते हैं। वह अभिषव करनेवालेको प्रभूत ज्योति प्रदान करते हैं। इन्द्रका दान कल्याणकर है।



१ इन्द्र मुख्य हैं वह पूजनीयोंके कर्मोंसे कान्त हैं। वह आते हैं। देवोंके बीच पिता मनुने ही इन्द्रको पानेके उपायोंको प्राप्त किया था।

२ सोमाभिषवमें लगे हुए पत्थरोंने स्वर्गके निर्माता इन्द्रको नहीं छोड़ा था। उक्थों और स्तोत्रोंका उच्चारण करना चाहिये।

३ विद्वान् इन्द्रने अङ्गिरा लोगोंके लिये गौओंको प्रकट किया था। इन्द्रके उस पुरुषत्वकी मैं स्तुति करता हूँ।

४ पहलेकी तरह इस समय भी इन्द्र कवियोंके वर्द्धक हैं। वह होताके कार्य-निर्वाहक हैं। वह सुखकर और पूजनीय सोमके हवन-समयमें हमारी रक्षाके लिये जायँ।

आदू नु ते अनु क्रतुं स्वाहा वरस्य यज्यवः ।
श्वात्रमर्का अनूषतेन्द्र गोत्रस्य दावने ॥५॥
इन्द्रे विश्वानि वीर्या कृतानि कर्त्वानि च । यमर्का अध्वरं विदुः ॥६॥
यत् पाञ्चजन्यया विशेन्द्रे घोषा असृक्षत ।
अस्तृणाद्बर्हणा विपोऽर्यो मानस्य स क्षयः ॥७॥
इयमु ते अनुष्टुतिश्चकृषे तानि पौंस्या । प्रावश्चक्रस्य वर्तनिम् ॥८॥
अस्य वृष्णो व्योदन उरु क्रमिष्ट जीवसे । यवं न पश्व आददे ॥९॥
तद्दधाना अवस्यवो युष्माभिर्दक्षपितरः । स्याम मरुत्वतो वृधे ॥१०॥
बड़्त्वियाय धाम्न ऋक्वभिः शूर नोनुमः । जेषामेन्द्र त्वया युजा ॥११॥

---

५ इन्द्र, स्वाहा देवीके पति अग्निके लिये यज्ञ-कर्त्ता तुम्हारी ही कीर्त्तिका गान करते हैं। धन-दानके लिये स्तोतालोग इन्द्रकी स्तुति करते हैं ।

६ सारे वीर्य और सारे कर्त्तव्य-कर्म्म इन्द्रमें वर्त्तमान हैं। स्तोता लोग इन्द्रको अध्वर (अहिंसक) कहते हैं ।

७ जिस समय चारो वर्ण और निषाद इन्द्रके लिये स्तुति करते हैं, उस समय इन्द्र महिमासे शत्रुओंका बध करते हैं । स्वामी (आर्य) इन्द्र स्तोताकी पूजाके निवास-स्थान हैं।

८ इन्द्र, तुमने उन सब पुरुषत्व-पूर्ण कार्योंको किया है; इसलिये यह तुम्हारी स्तुति की जाती है। चक्रके मार्गकी रक्षा करो ।

९ वर्षक इन्द्रके दिये हुए नानाविध अन्न पा जानेपर सब लोग जीवनके लिये नाना प्रकार कर्म करते हैं । पशुओंकी ही तरह वह यव (जौ) ग्रहण करते हैं ।

१० हम स्तोता और रक्षणाभिलाषी हैं । ऋत्विको, तुम्हारे साथ हम मरुतोंसे युक्त इन्द्रके वर्द्धनके लिये अन्नके स्वामी होंगे ।

११ इन्द्र, तुम यज्ञके समयमें उत्पन्न और तेजस्वी हो । शूर इन्द्र, मन्त्रोंके द्वारा हम सब तुम्हारी स्तुति करेंगे। तुम्हारे साहाय्यसे हम जय लाभ करेंगे।

अस्मे रुद्रा मेहना पर्वतासो वृत्रहत्ये भरहूतौ सजोषाः ।
यः शंसते स्तुवते धायि पज्र इन्द्रज्येष्ठा अस्माँ अवन्तु देवाः ॥१२॥

---

५३ सूक्त

इन्द्र देवता । प्रगाथ ऋषि । गायत्री छन्द ।

उत्त्वा मन्दन्तु स्तोमाः कृणुष्व राधो अद्रिवः । अव ब्रह्मद्विषो जहि ॥१॥
पदा पणीँरराधसो नि बाधस्व महाँ असि । नहि त्वा कश्चन प्रति ॥२॥
त्वमीशिषे सुतानामिन्द्र त्वमसुतानाम् । त्वं राजा जनानाम् ॥३॥
एहि प्रेहि क्षयो दिव्या घोषन्चर्षणीनाम् । ओभे पृणासि रोदसी ॥४॥
त्यं चित् पर्वतं गिरिं शतवन्तं सहस्रिणम् । वि स्तोतृभ्यो रुरोजिथ ॥५॥
वयमु त्वा दिवा सुते वयं नक्तं हवामहे । अस्माकं काममा पृण ॥६॥
क स्य वृषभो युवा तुविग्रीवो अनानतः । ब्रह्मा कस्तं सपर्यति ॥७॥

---

१२ जल-सेचन करनेवाले और भयङ्कर मेघ अथवा मरुत् तथा युद्धके आह्वानपर आनन्दसे युक्त जो वृत्रघ्न इन्द्र स्तोता और शस्त्र-पाठक यजमानके निकट वेगसे आगमन करते हैं, वह भी हमारी रक्षा करें । देवोंमें इन्द्र ही ज्येष्ठ हैं ।

१ इन्द्र, तुम्हें स्तुतियाँ भली भाँति प्रमत्त करें । वज्री इन्द्र, धन प्रदान करो । स्तुति-विद्वेषियोंका विनाश करो ।

२ लोभी और यज्ञ-धन-शून्य लोगोंको पैरसे रगड़ डालो । तुम महान् हो । तुम्हारा कोई प्रतिद्वन्द्वी नहीं है ।

३ तुम अभिषुत सोमके ईश्वर हो— अनभिषुत सोमके भी तुम ईश्वर हो । जनताके तुम राजा हो ।

४ इन्द्र, आओ । मनुष्योंके लिये, यज्ञ-गृहको शब्दसे पूर्ण करते हुए, स्वर्गसे आओ । तुम वृष्टि द्वारा द्यावापृथिवीको परिपूर्ण करते हो ।

५ तुमने स्तोताओंके लिये पर्व (टुकड़े) वाले सौ प्रकारके जलवाले और असीम (सहस्र) जलवाले मेघको, स्तोताओंके लिये, तुमने विदीर्ण किया है ।

६ सोमके अभिषुत होनेपर हम दिन रात तुम्हारा आह्वान करते हैं । हमारी अभिलाषा पूर्ण करो

७ वह वृष्टिदाता, नित्य तरुण, विशाल कंधावाले और किसीसे नीचा न देखनेवाले इन्द्र कहाँ हैं ? कौन स्तोता उनकी स्तुति करता है ?

कस्य स्वित् सवनं वृषा जुजुष्वाँ अव गच्छति ।
इन्द्रं क उ स्विदा चके ॥८॥
कं ते दाना असक्षत वृत्रहन् कं सुवीर्या । उक्थे क उ स्विदन्तमः ॥९॥
अयं ते मानुषे जने सोमः पूरुषु सूयते । तस्येहि प्र द्रवा पिब ॥१०॥
अयं ते शर्यणावति सुषोमायामधि प्रियः । आर्जीकीये मदिन्तमः ॥११॥
तमद्य राधसे महे चारुं मदाय घृष्वये । एहीमिन्द्र द्रवा पिब ॥१२॥



५४ सूक्त

इन्द्र देवता । प्रगाथ ऋषि । गायत्री छन्द ।

यदिन्द्र प्रागपादुङ्न्यग्वा हूयसे नृभिः । आयाहि तूयमाशुभिः ॥१॥
यद्वा प्रस्रवणे दिवो मादयासे स्वर्णरे । यद्वा समुद्रे अन्धसः ॥२॥

---

८ वृष्टिदाता इन्द्र, प्रसन्न होकर, आते हैं । कौन यजमान इन्द्रकी स्तुति करना जानता है?

९ यजमानका दिया हुआ दान तुम्हारी सेवा करता है । वृत्रघ्न इन्द्र, शस्त्र-मन्त्र के समय सुन्दर वीर्यवाले स्तोत्र तुम्हारी सेवा करते हैं । तुम कैसे हो ? युद्धमें तुम्हारा कौन हितवर्त्ती होता है ?

१० मनुष्योंके बीच मैं तुम्हारे लिये सोमाभिषव करता हूँ । उसके पास आओ। शीघ्रगामी होओ और उसका पान करो ।

११ यह प्रिय सोम तट तृणवाले पुष्कर (कुरुक्षेत्रस्थ), सुषोमा (सोहान नदी) और आर्जीकीया (विपासा=व्यास नदी) के तीरमें तुम्हें अधिक प्रमत्त करता है।

१२ हमारे धन और शत्रुविनाशिनी मत्तताके लिये आज तुम उसी मनोहर सोमका पान करो। इन्द्र, शीघ्र सोमपात्रकी ओर जाओ ।

---

१ इन्द्र, तुम्हें लोग पूर्व, पश्चिम, उत्तर और निम्न दिशाओंमें बुलाते हैं; इसलिये अश्वोंकी सहायतासे शीघ्र आओ।

२ तुम द्युलोकके अमृत चुलानेवाले स्थानपर प्रमत्त होते हो । तुम भूलोकमें प्रमत्त होते हो । तुम अन्नके अपादान अन्तरीक्षमें प्रमत्त होते हो ।

आ त्वा गीर्भिर्महामुरुं हुवे गामिव भोजसे । इन्द्र सोमस्य पीतये ॥३॥
आ त इन्द्र महिमानं हरयो देव ते महः । रथे वहन्तु बिभ्रतः ॥४॥
इन्द्र गृणीष उ स्तुषे महाँ उग्र ईशानकृत् । एहि नः सुतं पिब ॥५॥
सुतावन्तस्त्वा वयं प्रयस्वन्तो हवामहे । इदं नो बर्हिरासदे ॥६॥
यच्चिद्धि शश्वतामसीन्द्र साधारणस्त्वम् । तं त्वा वयं हवामहे ॥७॥
इदं ते सोम्यं मध्वधुक्षन्नद्रिभिर्नरः । जुषाण इन्द्र तत् पिब ॥८॥
विश्वाँ अर्यो विपश्चितोऽति ख्यस्तूयमागहि । अस्मे धेहि श्रवो बृहत् ॥९॥
दाता मे वृषतीनां राजा हिरण्यवीनाम् । मा देवा मघवा रिषत् ॥१०॥
सहस्रे पृषतीनामधिश्चन्द्रं बृहत् पृथु । शुक्रं हिरण्यमा ददे ॥११॥
नपातो दुर्गहस्य मे सहस्रेण सुराधसः । श्रवो देवेष्वक्रत ॥१२॥



३ इन्द्र, तुम्हें मैं स्तुतिके द्वारा बुलाता हूँ । तुम महान् और यथेष्ट हो । सोमपान और भोगके लिये तुम्हें मैं गायकी तरह बुलाता हूँ ।

४ रथमें जोते हुए अश्व तुम्हारी महिमा और तुम्हारे तेजको ले आवें ।

५ इन्द्र, तुम वाक्य और स्तुति द्वारा स्तुत होते हो तुम महान् उग्र और ऐश्वर्यकर्त्ता हो । आकर सोम पियो ।

६ हम अभिषुत सोम और अन्नवाले होकर तुम्हें, अपने कुशपर बैठनेके लिये, बुलाते हैं ।

७ इन्द्र, तुम अनेक यजमानोंके लिये साधारण हो; इसलिये हम तुम्हें बुलाते हैं ।

८ पत्थरसे सोमीय मधुको अध्वर्यु लोग अभिषुत करते हैं । प्रसन्न होकर तुम उसे पियो ।

९ इन्द्र, तुम स्वामी हो । तुम सारे स्तोताओंको, अतिक्रम करके, देखो । शीघ्र आओ । हमें महा अन्न प्रदान करो ।

१० इन्द्र हिरण्यवर्ण गौओंके राजा हैं । वह हमारे राजा हों । देवो, इन्द्र हिंसित न हों ।

११ मैं गौओंके ऊपर धारित, विशाल, विस्तृत, आह्लादकर और निर्मल हिरण्यको स्वीकृत करता हूँ ।

१२ मैं अरक्षित और दुःखी हूँ । मेरे मनुष्य असीम धनसे धनी हों । देवोंके प्रसन्न होनेपर यशकी प्राप्ति होती है ।



५५ सूक्त

इन्द्र देवता । प्रगाथके पुत्र कलि ऋषि । बृहती, सतोबृहती और अनुष्टुप् छन्द।

तरोभिर्वो विदद्वसुमिन्द्रं सबाध ऊतये ।
बृहद्गायन्तः सुतसोमे अध्वरे हुवे भरं न कारिणम् ॥१॥
न यं दुध्रा वरन्ते न स्थिरा मुरो मदे सुशिप्रमन्धसः ।
य आदृत्या शशमानाय सुन्वते दाता जरित्र उक्थ्यम् ॥२॥
यः शक्रो मृक्षो अश्व्यो यो वा कीजो हिरण्ययः ।
स ऊर्वस्य रेजयत्यपावृतिमिन्द्रो गव्यस्य वृत्रहा ॥३॥
निखातं चिद्यः पुरुसम्भृतं वसूदिद्वपति दाशुषे ।
वज्री सुशिप्रो हर्यश्व इत् करदिन्द्रः क्रत्वा यथा वशत् ॥४॥
यद्वावन्थ पुरुष्टुत पुरा चिच्छूर नृणाम् ।
वयं तत्त इन्द्र सं भरामसि यज्ञमुक्थं तुरं वचः ॥५॥

१ ऋत्विको, वेगशाली अश्वोंको सहायतासे जो धन-दान करते हैं, उन्हीं इन्द्रके लिये साम गाके तुम लोग बाधा-युक्त होकर उनकी परिचर्या करो । जैसे लोग हितैषी और कुटुम्बी व्यक्तिको बुलाते हैं, मैं भी अभिषुत सोमवाले यज्ञमें उन इन्द्रको बुलाता हूँ ।

२ दुर्द्धर्ष शत्रुलोग सुन्दर जबड़ेवाले इन्द्रको बाधा नहीं दे सकते । स्थिर देवगण भी निवारण नहीं कर सकते । मनुष्यगण भी निवारण नहीं कर सकते । इन्द्र सोमोत्पन्न आनन्दके लिये प्रशंसक और सोमाभिषवकर्त्ताको दान देते हैं ।

३ जो इन्द्र (शक्र) परिचर्याके योग्य, अश्वविद्याकुशल, अद्भुत, हिरण्मय, आश्चर्यभूत और वृत्रघ्न इन्द्र अनेक गोसमूहोंको अपावृत करके कँपाते हैं—

४ जो भूमिपर स्थापित और संगृहीत धनोंको, यजमानके लिये, ऊपर उठाते हैं, वही सुन्दर उत्तम हनु (जबड़े)वाले और हरित वर्ण अश्ववाले इन्द्र जो इच्छा करते हैं, उसे ही कर्म द्वारा सिद्ध कर डालते हैं ।

५ बहुतोंके द्वारा स्तुत और वीर इन्द्र, पहलेके समान स्तोताओंके समीप जो तुमने कामना की थी, उसे हम तुम्हें तुरत प्रदान करते हैं । वह चाहे यज्ञ रहा हो, उक्थ रहा हो अथवा वाक्य रहा हो, उसे हम दे रहे हैं ।

सचा सोमेषु पुरुहूत वज्रिवो मदाय द्युक्ष सोमपाः ।
त्वमिद्धि ब्रह्मकृते काम्यं वसु देष्ठः सुन्वते भुवः ॥६॥
वयमेनमिदा ह्योपीपेमेह वज्रिणम् ।
तस्मा उ अद्य समना सुतं भरा नूनं भूषत श्रुते ॥७॥
वृकश्चिदस्य वारण उरामथिरा वयुनेषु भूषति ।
सेमं नः स्तोमं जुजुषाण आ गहीन्द्र प्र चित्रया धिया ॥८॥
कदू न्वस्याकृतमिन्द्रस्यास्ति पौंस्यम् ।
केनो नु कं श्रोमतेन न शुश्रुवे जनुषः परि वृत्रहा ॥९॥
कदू महीरधृष्टा अस्य तविषीः कदु वृत्रघ्नो अस्तृतम् ।
इन्द्रो विश्वान्बेकनाटाँ अहर्दृश उत क्रत्वा पणीँरभि ॥१०॥
वयं घा ते अपूर्व्येन्द्र ब्रह्माणि वृत्रहन् ।
पुरूतमासः पुरुहूत वज्रिवो भृतिं न प्र भरामसि ॥११॥

---

६ बहु-स्तुत, वज्रधर, स्वर्ग-सम्पन्न और सोमपाता इन्द्र, सोमाभिषव होनेपर मद-युक्त होओ । तुम्हीं सोमाभिषव-कर्त्ताके लिये सबसे अधिक कमनीय धनके दाता बनो ।

७ हम अभी और कल इन्द्रको सोमसे प्रसन्न करेंगे। उन्हींके लिये इस युद्धमें अभिषुत सोमको ले आओ। स्तोत्र सुननेपर वह आवें ।

८ यद्यपि चोर सबका निवारक और पथिकोंका विनाशक है, तो भी इन्द्रके कार्यमें व्याघात नहीं कर सकता। इन्द्र, तुम प्रसन्न होकर आओ । इन्द्र विचित्र कर्मके बलसे विशेष रूपसे आओ ।

९ कौनसा ऐसा पुरुषत्व है, जिसे इन्द्रने नहीं किया है ? ऐसा कौनसा इन्द्रका पौरुष है, जिसे नहीं सुना गया है ? इन्द्रका वृत्रबध तो उनके जन्म आदिसे ही सुना जा रहा है ।

१० इन्द्रका महाबल कब अधर्षक हुआ था । इन्द्रका बध्य कब अबध्य रहा ? इन्द्र सारे सूदखोरों, दिन गिननेवालों (पारलौकिक दिनोंसे शून्यों) और वणिकोंको ताड़न आदिके द्वारा दबाते हैं ।

११ वृत्रघ्न, वज्रधर और बहु-स्तुत इन्द्र भृति (वेतन) के समान तुम्हारे ही लिये हमलोग अभिनव स्तोत्र प्रदान करते हैं ।

पूर्वीश्चिद्धि त्वे तुविकूर्मिन्नाशसो हवन्त इन्द्रोतयः ।
तिरश्चिदर्यः सवनावसो गहि शविष्ठ श्रुधि मे हवम् ॥१२॥
वयं घा ते त्वे इद्विन्द्र विप्रा अपि ष्मसि ।
नहि त्वदन्यः पुरुहूत कश्चन मघवन्नस्ति मर्डिता ॥१३॥
त्वं नो अस्या अमतेरुत क्षुधो भिशस्तेरव स्पृधि ।
त्वं न ऊती तव चित्रया धिया शिक्षा शचिष्ठ गातुवित् ॥१४॥
सोम इद्वः सुतो अस्तु कलयो मा विभीतन ।
अपेदेष ध्वस्मायति स्वयं घैषो अपायति ॥१५॥



५६ सूक्त

आदित्यगण देवता। समद नामक महामीनके पुत्र मत्स्य वा मित्र और वरुणके पुत्र अथवा जाल-बद्ध अनेक मत्स्य ऋषि। गायत्री छन्द।

त्यान्नु क्षत्रियाँ अव आदित्यान्याचिषामहे। सुमृलीकाँ अभिष्टये ॥१॥

१२ बहुकर्मा इन्द्र. अनेक आशाएँ तुममें ही निहित हैं, रक्षाएँ भी तुममें ही हैं। स्तोता तुम्हें बुलाते हैं। फलतः इन्द्र, शत्रुके सारे सवनोंको लाँघकर हमारे सवनमें आओ। महा इन्द्र, हमारे आह्वानको सुनो ।

१३ इन्द्र, हम तुम्हारे ही हैं, हम तुम्हारे स्तोता हुए हैं। बहु-स्तुत इन्द्र, तुम्हारे अति और कोई सुखप्रद नहीं है।

१४ इन्द्र, तुम हमें इस दारिद्र्य इस क्षुधा और इस निन्दाके हाथसे मुक्त करो। ह लिये तुम रक्षण और विचित्र कर्मके द्वारा अभिलषित पदार्थ प्रदान करो।

१५ तुम्हारे ही लिये सोम अभिषुत हो। कलि ऋषिके पुत्रो, मत डरो। ये राक्षस आदि जा रहे हैं। ये स्वयं दूर भाग रहे हैं।

१ अभिमत फलकी प्राप्ति अथवा जालसे निकलनेके लिये सुखदाता और जातिके क्षत्रिय आदित्योंसे हम रक्षणकी याचना करते हैं।

मित्रो नो अत्यंहतिं वरुणः पर्षदर्यमा । आदित्यासो यथा विदुः ॥२॥
तेषां हि चित्रमुक्थ्यं वरूथमस्ति दाशुषे । आदित्यानामरंकृते ॥३॥
महि वो महतामवो वरुण मित्रार्यमन् । अवांस्या वृणीमहे ॥४॥
जीवान्नो अभि धेतनादित्यासः पुरा हथात् । कद्ध स्थ हवनश्रुतः ॥५॥
यद्वः श्रान्ताय सुन्वते वरूथमस्ति यच्छर्दिः । तेना नो अधि वोचत ॥६॥
अस्ति देवा अंहोरुर्वस्ति रत्नमनागसः । आदित्या अद्भुतैनसः ॥७॥
मा नः सेतुः सिषेदयं महे वृणक्तु नस्परि । इन्द्र इद्धि श्रुतो वशी ॥८॥
मा नो मृचा रिपूणां वृजिनानामविष्यवः देवा अभि प्र मृक्षत ॥९॥
उत त्वामदिते मह्यहं देव्युप ब्रुवे । मृलीकामभिष्टये ॥१०॥
पर्षि दीने गभीर आँ उग्रपुत्रे जिघांसतः । माकिस्तोकस्य नो रिषत्॥११॥

---

२ मित्र, वरुण, अर्यमा और आदित्यगण दुःसह कार्यको जानते हैं; इसलिये वह हमें पापसे (रोगसे) पार कर दें।

३ आदित्योंके पास विचित्र और स्तुति-योग्य धन है। वह धन हव्यदाता यजमानके लिये है।

४ वरुण आदि देवो, तुम महान् हो। हव्यदाताके प्रति तुम्हारी रक्षा महती है। फलतः हम तुम्हारी रक्षाकी प्रार्थना करते हैं।

५ आदित्यो, हम (मत्स्य) अभी (जाल-बद्ध होनेपर भी) जीवित हैं। इस समय हमारे सामने आओ। आह्वान सुननेवालो, मृत्युके पहले आना।

६ श्रान्त अभिषव-कर्त्ता यजमानके लिये तुम्हारे पास जो वरणीय धन है, जो गृह है, उनसे हमलोगोंको पूरुष करके हमसे अच्छी बातें कहो।

७ देवो, पापीके पास महापाप है और पाप-शून्य व्यक्तिके पास रमणीय कल्याण है। पाप-शून्य आदित्यो, हमारा अभिमत सिद्ध करो।

८ यह इन्द्र जालसे हमें न बाँधें। महान् कर्मके लिये हमें जालसे छोड़ द। इन्द्र विश्रुत और सबके वश-कर्त्ता हैं।

९ देवो, तुम हमें छोड़ो। हमें बचानेकी इच्छा करके हिंसक शत्रुओंके जालसे हमें नहीं बाधा देना।

१० देवी अदिति, तुम महती और सुखदात्री हो। अभिलषित फलकी प्राप्तिके लिये मैं तुम्हारी स्तुति करता हूँ।

अनेहो न उरुव्रज उरूची वि प्रसर्तवे । कृधि तोकाय जीवसे ॥१२॥
ये मूर्धानः क्षितीनामदब्धासः स्वयशसः । व्रता रक्षन्ते अद्रुहः ॥१३॥
ते न आस्नो वृकाणामादित्यासो मुमोचत । स्तेनं बद्धमिवादिते ॥१४॥
अपो षु ण इयं शरुरादित्या अप दुर्मतिः । अस्मदेत्वजघ्नुषी ॥१५॥
शश्वद्धि वः सुदानव आदित्या ऊतिभिर्वयम् । पुरा नूनं बुभुज्महे ॥१६॥
शश्वन्तं हि प्रचेतसः प्रतियन्तं चिदेनसः । देवाः कृणुथ जीवसे ॥१७॥
तत् सु नो नव्यं सन्यस आदित्या यन्मुमोचति । बन्धाद्बद्धमिवादिते ॥१८॥
नास्माकमस्ति तत्तर आदित्यासो अतिष्कदे । यूयमस्मभ्यं मृलत ॥१९॥

११ अदिति, चारो ओरसे हमें बचाओ। क्षीण और उग्र पुत्रवाले जलमें हिंसक हमारे पुत्रको नहीं मारे।

१२ विस्तृत गमनवाली और गुरुतर अदिति, पुत्रके जीवनके लिये तुम हम पाप-शून्य जीवित रखो।

१३ सबके शिरोमणि, मनुष्योंके लिये अहिंसक, सुन्दर कीर्त्तिवाले और द्रोह-शून्य जो हमारे कर्मकी रक्षा करते हैं—

१४ आदित्यो, वही तुम हिंसकोंके पाससे, पकड़े गये चोरके समान, हमारी रक्षा करो।

१५ आदित्यो, यह जाल हमारी हिंसा करनेमें असमर्थ होकर दूर हो। हमारी दुर्बुद्धि दूर हो।

१६ सुन्दर दानवाले आदित्यो, तुम्हारे रक्षणोंसे हम पहलेके समान इस समय भी नाना भोगोंका उपभोग करेंगे।

१७ प्रकृष्ट ज्ञानवाले देवो, जो पापी शत्रु बार-बार हमारी ओर जाता है, हमारे जीवनके उसे अलग करो।

१८ आदित्यो, बन्धन जैसे बद्ध पुरुषको छोड़ता है, वैसे ही तुम्हारे अनुग्रहसे जो जाता है छोड़ता है, वह स्तुत्य और भजनीय है।

१९ आदित्यो, तुम्हारे समान हमारा वेग नहीं है। यह वेग हमें मुक्त करनेमें समर्थ है। तुम हमें सुखी करो।

मा नो हेतिर्विवस्वत आदित्याः कृत्रिमा शरुः ।
पुरा नु जरसो वधीत् ॥२०॥
वि षु द्वेषो व्यंहतिमादित्यासो वि संहितम् । विष्वग्वि वृहता रपः ॥२१॥

२० आदित्यो, विवस्वान्के आयुधके समान यह कृत्रिम जाल पहले और इस समय हम जीर्ण व्यक्तियोंको न मारे।

२१ आदित्यो, द्वेषियोंका विनाश करो। पापियोंका विनाश करो। जालका विनाश करो। सर्वव्यापक पापका विनाश करो।

चतुर्थ अध्याय समाप्त

पञ्चम अध्याय

५७ सूक्त

इन्द्र देवता। शेष ६ ऋकोंके ऋक्ष और अश्वमेधकी दानस्तुति देवता। अङ्गिरोगोत्रोत्पन्न प्रियमेध ऋषि। अनुष्टुप् छन्द।

आ त्वा रथं यथोतये सुम्नाय वर्तयामसि।
तुविकूर्मिमृतीषहमिन्द्र शविष्ठ सत्पते ॥१॥
तुविशुष्म तुविक्रतो शचीवो विश्वया मते। आ पप्राथ महित्वना ॥२॥
यस्य ते महिना महः परि ज्मायन्तमीयतुः। हस्ता वज्रं हिरण्ययम् ॥३॥
विश्वानरस्य वस्पतिमनानतस्य शवसः।
एवैश्च चर्षणीनामूती हुवे रथानाम् ॥४॥
अभिष्टये सदावृधं स्वर्मीह्लेषु यं नरः। नाना हवन्त ऊतये ॥५॥
परोमात्रमृचीषममिन्द्रमुग्रं सुराधसम्। ईशानं चिद्वसूनाम् ॥६॥

---

१ अतीव बली और सत्पति इन्द्र, तुम बहुकर्मा और हिंसकोंके अभिभवकारी हो। रक्षण सुखके लिये, रथके समान, हम तुम्हें आवर्त्तित करते हैं।

२ प्रचुर बलवाले, अतीव प्राज्ञ, बहुकर्मा और पूजनीय इन्द्र, विश्वव्यापक महत्त्वके द्वारा तुमने जगत्को आपूरित किया है।

३ तुम महान् हो। तुम्हारी महिमाके द्वारा पृथिवीमें व्याप्त हिरण्मय वज्रको तुम्हारे दोनों हाथ ग्रहण करते हैं।

४ मैं समस्त शत्रुओंके प्रति जानेवाले और दुर्दमनीय बलके पति इन्द्रको, तुम लोगों (मरुतों) की सेनाओंके साथ और रथके गमनके साथ, बुलाता हूँ।

५ नेतालोग रक्षणके लिये, जिन्हें युद्धमें विविध प्रकारसे बुलाते हैं, उन्हीं सर्वदा वर्द्धमान इन्द्रको सहायताके निमित्त आगमनके लिये बुलाता हूँ।

६ असीम शरीरवाले, स्तुति द्वारा परिमित, सुन्दर, धनसे सम्पन्न, धन-समुदायके स्वामी और उग्र इन्द्रको मैं बुलाता हूँ।

तन्तमिद्राधसे मह इन्द्रं चोदामि पीतये ।
यः पूर्व्यामनुष्टुतिमीशे कृष्टीनां नृतुः ॥७॥
न यस्य ते शवसान सख्यमानंश मर्त्यः । नकिः शवांसि ते नशत् ॥८॥
त्वोतासस्त्वा युजाप्सु सूर्ये महद्धनम् । जयेम पृत्सु वज्रिवः ॥९॥
तं त्वा यज्ञेभिरीमहे तं गीर्भिर्गिर्वणस्तम ।
इन्द्र यथा चिदाविथ वाजेषु पुरुमाय्यम् ॥१०॥
यस्य ते स्वादु सख्यं स्वाद्वी प्रणीतिरद्रिवः । यज्ञो वितन्तसाय्यः ॥११॥
उरु णस्तन्वे तन उरु क्षयाय नस्कृधि । उरु णो यन्धि जीवसे ॥१२॥
उरुं नृभ्य उरुं गव उरुं रथाय पन्थाम् । देववीतिं मनामहे ॥१३॥
उप मा षड्द्वाद्वा नरः सोमस्य हर्ष्या । तिष्ठन्ति स्वादुरातयः ॥१४॥

७ जो नेता हैं और जो यज्ञ-मुखस्थित तथा क्रमबद्ध स्तुति सुननेमें समर्थ हैं, उन्हीं इन्द्रको मैं, महान् धनकी प्राप्तिके लिये, सोमपानके निमित्त, बुलाता हूँ ।

८ बली इन्द्र, मनुष्य तुम्हारे सख्यको नहीं व्याप्त कर सकता; वह तुम्हारे बलको भी नहीं व्याप्त कर (घेर) सकता ।

९ वज्रधर, हम तुम्हारे द्वारा रक्षित होकर जलमें स्नान करनेके लिये और सूर्यको देखनेके लिये तुम्हारी सहायतासे संग्राममें महान् धन प्राप्त करेंगे ।

१० स्तुति द्वारा अत्यन्त प्रसिद्ध इन्द्र, मैं बहुत स्तुति करनेवाला हूँ । जिस प्रकार तुम हमें युद्धमें बचाओ, उसी प्रकारके यज्ञके द्वारा हम तुमसे याचना करते हैं—स्तुति द्वारा तुम्हारी याचना करते हैं ।

११ वज्रधर इन्द्र, तुम्हारा सख्य स्वादिष्ट है, तुम्हारा धनादिका सृजन भी स्वादु है और तुम्हारा यज्ञ विस्तारके योग्य है ।

१२ हमारे पुत्रके लिये यथेष्ट धन दो, हमारे पौत्रके लिये यथेष्ट धन दो और हमारे निवासके लिये प्रचुर धन दो तथा हमारे जीवनके लिये अभिलषित पदार्थ प्रदान करो ।

१३ इन्द्र, हम तुमसे मनुष्यकी भलाईके लिये प्रार्थना करते हैं, गायकी भलाईके लिये प्रार्थना करते हैं और रथके लिये सुन्दर मार्गकी प्रार्थना करते हैं । यज्ञकी प्रार्थना करते हैं ।

१४ सोमोत्पन्न हर्षके कारण, सुन्दर उपभोगके योग्य धनसे युक्त होकर, छ नेताओंमेंसे दो-दो हमारे पास आते हैं ।

ऋज्राविन्द्रोत आ ददे हरी ऋक्षस्य सूनवि । आश्वमेधस्य रोहिता ॥१५
सुरथाँ आतिथिग्वे स्वभीशूँ राक्षें । आश्वमेधे सुपेशसः ॥१६।
षडश्वाँ आतिथिग्व इन्द्रोते वधूमतः । सचा पूतक्रतौ सनम् ॥१७
ऐषु चेतद्वृषण्वत्यन्तर्ऋज्रेष्वरुषी । स्वभीशुः कशावती ॥१८॥
न युष्मे वाजबन्धवो निनित्सुश्चन मर्त्यः । अवद्यमधि दीधरत् ॥१९॥

५८ सूक्त

वरुण देवता । ११ वीं ऋचाके आधेके विश्वदेवगण और आधेके वरुण देवता । प्रियमेध ऋषि । उष्णिक्, गायत्री पङ्क्ति और अनुष्टुप् छन्द ।

प्रप्र वस्त्रिष्टुभमिषं मन्दद्वीरायेन्दवे ।
धिया वो मेधसातये पुरन्ध्या विवासति ॥१॥

---

१५ इन्द्रोत नामक राज-पुत्रसे दो सरल-गामी अश्वोंको मैंने पाया है। ऋक्षके पुत्रसे हरित-वर्ण अश्वोंको मैंने लिया है। अश्वमेधके पुत्रसे मैंने रोहित-वर्ण दो अश्वोंको पाया है।

१६ मैंने अतिथिग्वके पुत्र (इन्द्रोत) से सुन्दर रथवाले अश्वोंको पाया है। ऋक्षके पुत्रसे मैंने सुन्दर लगामवाले अश्वोंको ग्रहण किया है। अश्वमेधके पुत्रसे मैंने सुन्दर अश्वोंको ग्रहण किया है।

१७ अतिथिग्वके पुत्र और शुद्धकर्मा इन्द्रोतसे घोड़ियोंवाले छ घोड़ोंको, ऋक्षपुत्र और अश्वमेध पुत्रोंके दिये हुए अश्वोंके साथ, मैंने ग्रहण किया है।

१८ दीप्तिवाली, वर्षक अश्वोंसे युक्त और सुन्दर लगामोंवाली घोड़ियाँ भी इन घोड़ोंमें हैं।

१९ हे अन्नदाता छ राजाओं, निन्दक मनुष्य भी तुम्हारे प्रति निन्दाका आरोप नहीं करते।



१ अध्वर्युओ, जो वीरोंके लिये हर्ष उत्पन्न करते हैं, उन्हीं इन्द्रके लिये तुमलोग तीन स्तोभों (स्तम्भनों) से युक्त अन्नका संग्रह करो। यज्ञ-भोगके लिये प्रज्ञासे युक्त कर्मके द्वारा इन्द्र तुम्हारा सत्कार करते हैं।

नदं व ओदतीनां नदं योयुवतीनाम् ।
पतिं वो अघ्न्यानां धेनूनामिषुध्यसि ॥२॥
ता अस्य सूददोहसः सोमं श्रीणन्ति पृश्नयः ।
जन्मन्देवानां विशस्त्रिष्वा रोचने दिवः ॥३॥
अभि प्र गोपतिं गिरेन्द्रमर्च यथा विदे । सूनुं सत्यस्य सत्पतिम् ॥४॥
आ हरयः ससृज्रिरेरुषीरधि बर्हिषि । यत्राभि सन्नवामहे ॥५॥
इन्द्राय गाव आशिरं दुदुह्रे वज्रिणे मधु । यत् सीमुपह्वरे विदत् ॥६॥
उप्यद्ब्रध्नस्य विष्टपं गृहमिन्द्रश्च गन्वहि ।
मध्वः पीत्वा सचेवहि त्रिः सप्त सख्युः पदे ॥७॥
अर्चत प्रार्चत प्रियमेधासो अर्चत ।
अर्चन्तु पुत्रका उत पुरं न धृष्ण्वर्चत ॥८॥

---

२ उषाओंके उत्पादक, नदियोंके शब्द-जनक और अवध्य गौओंके पति इन्द्रको बुलाओ। यजमान दुग्धदात्री गौसे उत्पन्न अन्नकी इच्छा करता है।

३ देवोंके जन्मस्थान और आदित्यके रुचिकर प्रदेश (द्युलोक) में जो जा सकती हैं और जिनके दूधसे कूप पूर्ण होता है, वे गायें तीनों सवनोंमें इन्द्रके सोमको मिश्रित करती हैं।

४ इन्द्र गौओंके स्वामी, यज्ञके पुत्र और साधुओंके पालक हैं। इन्द्र जिस प्रकार यज्ञके गन्तव्य स्थानको जानें, उस प्रकार स्तुति-बन्धनोंसे उनकी पूजा करो।

५ हरि नामके अश्व, दीप्तियुक्त होकर, कुशके ऊपर इन्द्रको छोड़ो। हम कुश-स्थित इन्द्रकी स्तुति करेंगे।

६ इन्द्र जिस समय चारो ओरसे समीपमें वर्त्तमान मधु (सोमरस) को प्राप्त करते हैं, उस समय गायें वज्री इन्द्रके लिये सोममें मिलानेके उपयुक्त मधु (दुग्ध आदि) का वितरण वा दोहन करती हैं।

७ जिस समय इन्द्र और मैं सूर्यके गृहमें जाते हैं, उस समय सखा आदित्यके इक्कीस स्थानों (द्वादश मास, पाँच ऋतुएँ, तीन लोक और एक आदित्य) में मधुर सोमरसका पान करके हम मिलें।

८ अध्वर्युओ, तुमलोग इन्द्रकी पूजा करो। विशेष रूपसे पूजा करो। प्रियमेध-वंशीयो, जैसे पुर-विदारककी पूजा पुत्रलोग करते हैं, वैसे ही इन्द्रकी पूजा करो।

अव स्वराति गर्गरो गोधा परि सनिष्वणत् ।
पिङ्गा परि चनिष्कदर्दिन्द्राय ब्रह्मोद्यतम् ॥९॥
आ यत् पतन्त्येन्यः सुदुघा अनपस्फुरः ।
अपस्फुरं गृभायत सोममिन्द्राय पातवे ॥१०॥
अपादिन्द्रो अपादग्निर्विश्वे देवा अमत्सत ।
वरुण इदिह क्षयत्तमापो अभ्यनूषत वत्सं संशिश्वरीरिव ॥११॥
सुदेवो असि वरुण यस्य ते सप्तसिन्धवः ।
अनुक्षरन्ति काकुदं सूर्म्यं सुषिरामिव ॥१२॥
यो व्यतीँरफाणयत् सुयुक्ताँ उप दाशुषे ।
तक्वो नेता तदिद्वपुरुपमा यो अमुच्यत ॥१३॥
अतीदु शक्र ओहत इन्द्रो विश्वा अति द्विषः ।
भिनत् कनीन ओदनं पच्यमानं परो गिरा ॥१४॥

---

९ जुझाऊ बाजा भयङ्कर रीतिसे घहरा रहा है । गोधा (हस्तघ्न नामका बाजा) चारो शब्द करता है । पिङ्गल वर्णकी ज्या शब्द कर रही है । इसलिये इन्द्रके उद्देश्यसे स्तुति करो।

१० जिस समय शुभ्रवर्ण और सुन्दर दोहनवाली नदियाँ अतीव प्रवृद्ध होती हैं, समय इन्द्रके पानके लिये अतीव प्रवृद्ध सोमको ले आओ ।

११ इन्द्रने सोमका पान किया, अग्निने भी पान किया । विश्वदेवगण तृप्त हुए । इस वरुण निवास कर। बछड़ेवाली गायें जैसे बछड़ेके लिये शब्द करती हैं, वैसे ही उक्थ स्तुति करते हैं।

१२ वरुण (जलाभिमानी देव), तुम सुदेव हो। जैसे किरणें सूर्यके अभिमुख धावित है, वैसे ही तुम्हारे तालुपर गङ्गा आदि सातो नदियाँ अनुक्षण क्षरित होती हैं।

१३ जो इन्द्र विविधगामी और रथमें सम्बद्ध अश्वोंको हविर्दाता यजमानके पास जाने छोड़ देते हैं, जो इन्द्र उपमाके स्थल हैं और जिनके लिये सभी मार्ग दे देते हैं, वही इन्द्र गमनके समयमें सबके नेता होते हैं।

१४ शक्र (इन्द्र) युद्धमें निरोधक शत्रुओंको लाँघकर जाते हैं। सारे द्वेषी शत्रुओंको अति क्रम करके जाते हैं। कमनीय और उत्कृष्ट इन्द्र वाक्य द्वारा ताड़न करके मेघको फाड़ते हैं।

अर्भको न कुमारकोऽधि तिष्ठन्नवं रथम् ।
स पक्षन्महिषं मृगं पित्रे मात्रे विभुक्रतुम् ॥१५॥
आ तू सुशिप्र दम्पते रथं तिष्ठा हिरण्ययम् ।
अध द्युक्षं सचेवहि सहस्रपादमरुषं स्वस्तिगामनेहसम् ॥१६॥
तं घेमित्था नमस्विन उप स्वराजमासते ।
अर्थं चिदस्य सुधितं यदेतव आवर्तयन्ति दावने ॥१७॥
अनु प्रत्नस्यौकसः प्रियमेधास एषाम् ।
पूर्वामनु प्रयतिं वृक्तबर्हिषो हितप्रयस आशत ॥१८॥

८ अनुवाक । ५६ सूक्त

इन्द्रदेव देवता । पुरुहन्मा ऋषि । उष्णिक्, अनुष्टुप्, बृहती, सतोबृहती और पुर उष्णिक् छन्द ।

यो राजा चर्षणीनां याता रथेभिरध्रिगुः ।
विश्वासां तरुता पृतनानां ज्येष्ठो यो वृत्रहा गृणे ॥१॥

१५ अल्प-शरीर कुमारके समान यह इन्द्र नये रथपर अधिष्ठान करते हैं । माता-पिताके सामने इन्द्र महान् मृगके समान हैं । बहुकर्मा इन्द्र मेघको वृष्टिकी ओर करते हैं ।

१६ सुन्दर हनुवाले और रथके स्वामी इन्द्र, स्वच्छन्द-गन्ता, दीप्त, बहुपाद, हिरण्मय और निष्पाप रथपर चढ़ो । अनन्तर हम दोनों मिलेंगे ।

१७ इस प्रकार दीप्त और विराजमान इन्द्रकी अन्नवान् लोग सेवा करते हैं । अनन्तर जिस समय गमन और हव्यदानके लिये स्तुतियाँ इन्द्रको आवर्त्तित करती हैं, उस समय सुस्थापित धन प्राप्त होता है ।

१८ प्रियमेध-वंशीयोंने इन्द्र आदिके प्राचीन स्थानोंको प्राप्त किया है । प्रियमेधोंने मुख्य प्रदानके लिये कुशक फैलाया है और हव्य-स्थापन किया है ।



१ जो मनुष्योंके राजा हैं, जो रथपर जाते हैं, जिनके गमनमें कोई बाधक नहीं हो सकता और जो सारी सेनाके उद्धारक हैं, उन्हीं ज्येष्ठ और वृत्रघ्न इन्द्रकी मैं स्तुति करता हूं ।

इन्द्रं तं शुम्भ पुरुहन्मन्नवसे यस्य द्विता विधर्तरि ।
हस्ताय वज्रः प्रति धायि दर्शतो महो दिवे न सूर्यः ॥२॥
नकिष्टं कर्मणा नशद्यश्चकार सदावृधम् ।
इन्द्रं न यज्ञैर्विश्वगूर्तमृभ्वसमधृष्टं धृष्ण्वोजसम् ॥३॥
अषाळ्हमुग्रं पृतनासु सासहिं यस्मिन्महीरुरुज्रयः ।
सं धेनवो जायमाने अनोनवुर्द्यावः क्षामो अनोनवुः ॥४॥
यद्द्याव इन्द्र ते शतं शतं भूमीरुत स्युः ।
न त्वा वज्रिन्त्सहस्रं सूर्या अनु न जातमष्ट रोदसी ॥५॥
आ पप्राथ महिना वृष्ण्या वृषन्विश्वा शविष्ठ शवसा ।
अस्माँ अव मघवन् गोमति व्रजे वज्रिन् चित्राभिरूतिभिः ॥६॥
न सीमदेव आपदिषं दीर्घायो मर्त्यः ।
एतग्वा चिद्य एतशा युयोजते हरी इन्द्रो युयोजते ॥७॥

२ पुरुहन्मा, तुम अपने रक्षणके लिये इन्द्रको अलङ्कृत करो। तुम्हारे पालक इन्द्रका स्व... दो प्रकारका है—उग्र और अनुग्र इन्द्र हाथमें दर्शनीय वज्रको धारण करते हैं। वह वज्र ... शमें दिखाई देनेवाले सूर्यके समान है ।

३ सर्वदा वृद्धिशील, सबके स्तुत्य, महान् और अन्योंके अभिभविता इन्द्रको जो ... द्वारा अनुकूल करते हैं, उनके अतिरिक्त अन्य व्यक्ति कर्मके द्वारा नहीं व्याप्त कर सकते।

४ दूसरोंके लिये असहनीय, उग्र और शत्रु-सेनाके विजेता इन्द्रकी मैं स्तुति करता हूँ। इन्द्रके जन्म लेनेपर विशाल और अत्यन्त वेगवाली गायोंने उनकी स्तुति की थी। ... द्युलोकों और पृथिवियोंने भी स्तुति की थी।

५ इन्द्र, यदि सौ द्युलोक हो जायँ, तो भी तुम्हारा परिमाण नहीं कर सकते; यदि ... पृथिवियाँ हो जायँ, तो भी तुम्हें नहीं माप सकतीं; यदि सूर्य सौ हो जायँ, तो भी तुम्हें प्रका... शित नहीं कर सकते। इस लोकमें जो कुछ जन्मा है, वह और द्यावापृथिवी तुम्हारी ... नहीं कर सकते।

६ अभिलाषदाता, अतीव बली, धनी और वज्री इन्द्र, महान् बलके द्वारा तुमने ... व्याप्त किया है। हमारी गायोंके निमित्त विविध रक्षणोंके द्वारा हमारी रक्षा करो।

७ दीर्घायु इन्द्र, जो व्यक्ति श्वेतवर्ण अश्व-द्वयको रथमें जोतता है, उसीके लिये इन्द्र हरि... द्वय जोतते हैं। देव-शून्य व्यक्ति सारा अन्न नहीं पाता।

तं वो महो महाय्यमिन्द्रं दानाय सक्षणिम् ।
यो गाधेषु य आरणेषु हव्यो वाजेष्वस्ति हव्यः ॥८॥
उदू षु णो वसो महे मृशस्व शूर राधसे ।
उदू षु मह्यै मघवन्मघत्तय उदिन्द्र श्रवसे महे ॥९॥
त्वं न इन्द्र ऋतयुस्त्वानिदो नि तृम्पसि ।
मध्ये वसिष्व तुविनृम्णोर्वोर्नि दासं शिश्नथो हथैः ॥१०॥
अन्यव्रतममानुषमयज्वानमदेवयुम् ।
अव स्वः सखा दुधुवीत पर्वतः सुघ्नाय दस्युं पर्वतः ॥११॥
त्वं न इन्द्रासां हस्ते शविष्ठ दावने ।
धानानां न सङ्गृभायास्मयुर्द्विः सङ्गृभायास्मयुः ॥१२॥
सखायः क्रतुमिच्छत कथा राधाम शरस्य ।
उपस्तुतिं भोजः सूरिर्यो अह्रयः ॥१३॥

---

८ ऋत्विको, महान् तुमलोग उन पूज्य इन्द्रकी, दानके लिये, मिलकर पूजा करो। जल-प्राप्तिके लिये इन्द्रको बुलाना चाहिये। निम्न स्थलकी प्राप्तिके लिये भी इन्द्रको बुलाना चाहिये। संग्राममें भी इन्द्रको बुलाना चाहिये।

९ वास-दाता और शूर इन्द्र, तुम हमें महान् धनकी प्राप्तिके लिये उठाओ। शूर और धनी इन्द्र, महान् धन और महती कीर्त्ति देनेके लिये उद्योग करो।

१० इन्द्र, तुम यज्ञाभिलाषी हो। जो तुम्हारी निन्दा करता है, उसका धन अपहृत करके तुम प्रसन्न होते हो। प्रचुर-धन इन्द्र, हमारी रक्षाके लिये तुम हमें दोनों जाँघोंके बीच छिपा लो। शत्रुओंको मारो। अस्त्रके द्वारा दासको मार डालो।

११ इन्द्र, तुम्हारे सखा पर्वत अन्यरूप-धारक, अमानुष, यज्ञ-शून्य और देव-द्वेषी व्यक्तिको स्वर्गसे नीचे फेंकते हैं। वह दस्युको भृत्यके हाथमें भेजते हैं।

१२ बली इन्द्र, हमें देनेके लिये भूने यव वा जौके समान गौओंको हाथसे ग्रहण करो। तुम हमारी अभिलाषा करते हो। और भी अभिलाषा करके और भी ग्रहण करो।

१३ मित्रो, इन्द्र-सम्बन्धी और कर्म करनेकी इच्छा करो। हम हिंसक इन्द्रकी कैसे स्तुति करेंगे? इन्द्र शत्रुओंके भक्षक और प्रेरक हैं। वह कभी भी अवनत नहीं होते।

भूरिभिः समह ऋषिभिर्बर्हिष्मद्भिः स्तविष्यसे ।
यदित्थमेकमेकमिच्छर वत्सान् परादद: ॥१४॥
कर्णगृह्या मघवा शौरदेव्यो वत्सं नस्त्रिभ्य आनयत् ।
अजां सूरिर्न धातवे ॥१५॥



६० सूक्त

अग्नि देवता। सुदिति और पुरुमीढ़ ऋषि। गायत्री, बृहती और सतोबृहती छन्द।

त्वं नो अग्ने महोभिः पाहि विश्वस्या अरातेः । उत द्विषो मर्त्यस्य ॥१॥
नहि मन्युः पौरुषेय ईशे हि वः प्रियजात । त्वमिदसि क्षपावान् ॥२॥
स नो विश्वेभिर्देवेभिरूर्जो नपाद्भद्रशोचे । रयिं देहि विश्ववारम् ॥३॥
न तमग्ने अरातयो मर्तं युवन्त रायः । यं त्रायसे दाश्वांसम् ॥४॥

---

१४ सबके पूजनीय इन्द्र, अनेक ऋषि और हव्यदाता तुम्हारी स्तुति करते हैं। हे इन्द्र, तुम एक-एक करके अनेक प्रकारसे, स्तोताओंको अनेक वत्स देते हो।

१५ ये ही धनी इन्द्र तीन हिंसकोंसे युद्धमें जीती हुई गायों और बछड़ोंको कान पकड़कर हमारे पास ले आवें। इसी प्रकार पीनेके लिये स्वामी बकरीको कान पकड़कर ले आता है।

---

१ दान-शून्य अनेक व्यक्तियोंसे लब्ध महाधनके द्वारा तुम हमें पालित करो। शत्रुके हाथसे भी हमें बचाओ।

२ प्रिय-जन्मा अग्नि, पुरुष-सम्बन्धी क्रोध तुम्हें नहीं बाधा दे सकता। तुम रात्रिवाले हो (रातमें अग्नि विशेष तेजस्वी होते हैं)।

३ बलके पुत्र और प्रशस्य तेजवाले अग्नि, तुम सारे देवोंके साथ सबके लिये वरणीय धन हमें दो।

४ अग्नि, जिस हविर्दाताका तुम पालन करते हो, उस व्यक्तिको अदाता और धनी व्यक्ति नहीं पृथक् करते।

यं त्वं विप्र मेधसातावग्ने हिनोषि धनाय । स तवोती गोषु गन्ता ॥५॥
त्वं रयिं पुरुवीरमग्ने दाशुषे मर्ताय । प्र णो नय वस्यो अच्छ ॥६॥
उरुष्या णो मा परादा अघायते जातवेदः । दुराध्ये मर्ताय ॥७॥
अग्ने माकिष्टे देवस्य रातिमदेवो युयोत । त्वमीशिषे वसूनाम् ॥८॥
स नो वस्व उप मास्यूर्जो नपान्माहिनस्य । सखे वसो जरितृभ्यः ॥९॥
अच्छा नः शीरशोचिषं गिरो यन्तु दर्शतम् ।
अच्छा यज्ञासो नमसा पुरूवसुं पुरुप्रशस्तमूतये ॥१०॥
अग्निं सूनुं सहसो जातवेदसं दानाय वार्याणाम ।
द्विता यो भूदमृतो मर्त्येष्वा होता मन्द्रतमो विशि ॥११॥
अग्निं वो देवयज्ययाग्निं प्रयत्यध्वरे
अग्निं धीषु प्रथममग्निमर्वत्यग्निं क्षैत्राय साधसे ॥१२॥

५ मेधावी अग्नि, तुम जिस व्यक्तिको धन-लाभके लिये यज्ञ प्रेरित करते हो, वह तुम्हारी रक्षाके कारण गो-संयुक्त होता है।

६ अग्नि तुम हव्यदाता मनुष्यके लिये बहु-वीरयुक्त धन प्रदान करो। वासयोग्य धनके अभिमुख हमें प्रेरित करो।

७ जात-धन अग्नि, हमारी रक्षा करो। अनिष्ट चाहनेवाले और हिंसा-मूर्त्ति मनुष्यके हाथमें हमें नहीं समर्पित करना।

८ अग्नि, तुम द्योतमान हो। कोई भी देव-शून्य व्यक्ति तुम्हें धन-दानसे अलग नहीं कर सकता।

९ बलके पुत्र, सखा और निवासप्रद अग्नि, हम स्तोता हैं। तुम हमें महाधन प्रदान करो।

१० हमारी स्तुतियाँ भक्षण (दहन) करनेवाली शिखाओंवाले और दर्शनीय अग्निकी ओर जायँ। सारे यज्ञ रक्षाके लिये हविर्युक्त होकर प्रचुर धनवाले और अनेकोंके द्वारा स्तुत अग्निकी ओर जायँ।

११ सारी स्तुतियाँ बलके पुत्र, जातधन और वरणीय (स्वीकरणीय) अग्निकी ओर जायँ। अग्नि अमर और मनुष्योंमें रहनेवाले हैं। अग्नि दो प्रकारके हैं--मनुष्योंमें होम-सम्पादक और मदकारी हैं।

१२ यजमानो, तुम्हारे देव-यज्ञके लिये अग्निकी मैं स्तुति करता हूँ। यज्ञके प्रारम्भ होनेपर मैं अग्निकी स्तुति करता हूँ। कर्म-कालमें अग्निकी प्रथम स्तुति करता हूँ। बन्धुत्व आनेपर अग्निकी स्तुति करता हूँ। क्षेत्र-प्राप्ति होनेपर अग्निकी स्तुति करता हूँ।

अग्निरिषां सख्ये ददातु न ईशे यो वार्याणाम् ।
अग्निं तोके तनये शश्वदीमहे वसुं सन्तं तनूपाम् ॥१३॥
अग्निमीलिष्वावसे गाथाभिः शीरशोचिषम् ।
अग्निं राये पुरुमीह्ल श्रुतं नरोऽग्निं सुदीतये च्छर्दिः ॥१४॥
अग्निं द्वेषो योतवै नो गृणीमस्यग्निं शं योश्च दातवे ।
विश्वासु विक्ष्ववितेव हव्यो भुवद्वस्तुर्ऋषूणाम् ॥१५॥

६१ सूक्त

अग्नि देवता। प्रगाथके पुत्र हर्यत ऋषि । गायत्री छन्द ।

हविष्कृणुध्वमा गमदध्वर्युर्वनते पुनः । विद्वाँ अस्य प्रशासनम् ॥१॥
नि तिग्ममभ्यंशुं सीदद्धोता मनावधि । जुषाणो अस्य सख्यम् ॥२॥
अन्तरिच्छन्ति तं जने रुद्रं परो मनीषया । गृभ्णन्ति जिह्वया ससम् ॥३॥

१३ अग्निके हम सखा हैं और अग्नि स्वीकरणीय धनके ईश्वर हैं। वह हमें अन्न दें। पुत्र और पौत्रके लिये उन निवास-दाता और अङ्ग-पालक अग्निसे हम प्रचुर धनकी याचना करते हैं।

१४ पुरुमीढ़, रक्षाके लिये तुम मन्त्र द्वारा अग्निकी स्तुति करो। उनकी ज्वाला दाहक है। धनके लिये अग्निकी स्तुति करो । अन्य यजमान भी उनकी स्तुति करते हैं। सुदितिके लिये गृहकी याचना करो।

१५ शत्रुओंको पृथक् होनेके लिये हम अग्निकी स्तुति करते हैं। सुख और अभयके लिये हम अग्निकी स्तुति करते हैं। सारी प्रजामें अग्नि राजाके समान हैं । वह ऋषियोंके लिये वास-दाता और आह्वानके योग्य हैं।

अध्वर्युओ, तुम शीघ्र हव्य प्रस्तुत करो। अग्नि आये हैं। अध्वर्यु फिर यज्ञका सेवन करते हैं। अध्वर्यु हव्य देना जानते हैं।

२ अग्निके साथ यजमानकी मैत्री है। वह संस्थापक होता और तीखी ज्वालावाले अग्निके पास बैठते हैं।

३ यजमानकी मनोरथ-सिद्धिके लिये वे अपने प्रज्ञा-बलसे उन रुद्र (दुःख-घातक) अग्निको समुद्रमें स्थापित करनेकी इच्छा करते हैं। वह जिह्वा (स्तुति) द्वारा अग्निको ग्रहण करते हैं।

जाम्यतीतपे धनुर्वयोधा अरुहद्वनम्। दृषदं जिह्वया वधीत् ॥४॥
चरन्वत्सो रुशन्निह निदातारं न विन्दते। वेति स्तोतव अम्ब्यम् ॥५॥
उतो न्वस्य यन्महदश्वावद्योजनं बृहत्। दामा रथस्य ददृशे ॥६॥
दुहन्ति सप्तैकामुप द्वा पञ्च सृजतः। तीर्थे सिन्धोरधि स्वरे ॥७॥
आ दशभिर्विवस्वत इन्द्रः कोशमचुच्यवीत्। खेदया त्रिवृता दिवः ॥८॥
परि त्रिधातुरध्वरं जूर्णिरेति नवीयसी। मध्वा होतारो अञ्जते ॥९॥
सिञ्चति नमसावतमुच्चाचक्रं परिज्मानम्। नीचीनवारमक्षितम् ॥१०॥
अभ्यारमिदद्रयो निषिक्तं पुष्करे मधु। अवतस्य विसर्जने ॥११॥
गाव उपावतावतं मही यज्ञस्य रप्सुदा। उभा कर्णा हिरण्यया ॥१२॥
आ सुते सिञ्चत श्रियं रोदस्योरभिश्रियम्। रसा दधीत वृषभम् ॥१३॥

---

४ अन्नदाता अग्नि सबको लाँघकर रहते हैं। वह अन्तरीक्षको लाँघकर रहते हैं। वह अपनी ज्वालाके द्वारा मेघका वध करते हैं। वह जलके ऊपर चढ़े हैं।

५ वत्सके समान चञ्चल और श्वेतवर्ण अग्नि इस संसारमें निरोधकको नहीं प्राप्त करते हैं। वह स्तोताकी कामना करते हैं।

६ इन अग्निका माहात्म्य-युक्त अश्व-सम्पन्न प्रकाण्ड योजन है—रथकी रस्सी है।

७ शब्दशाली सिन्धु नदके घाटपर सात ऋत्विक् जलका दोहन करते हैं। इनमें दो प्रस्थाता अध्वर्यु अन्य पाँच (यजमान, ब्रह्मा, होता, अग्निध्र और स्तोता) को प्रयुक्त करते हैं।

८ सेवक यजमानकी दस अङ्गुलियोंके द्वारा याचित होकर इन्द्रने आकाशमें मेघसे तीन प्रकारकी किरणोंके द्वारा जल-वर्षण कराया।

९ तीन वर्ण (लोहित, शुक्ल और कृष्ण) वाले तथा वेगवान् अग्नि अपनी शिखाके साथ यज्ञमें जाते हैं। होम-सम्पादक अध्वर्यु लोग मधुके द्वारा मधु (आज्य आदि) के द्वारा उनका पूजन करते हैं।

१० महावीर, ऊपर चक्रसे युक्त, दीप्ति-सम्पन्न, निम्नमुख द्वारवाले, अक्षीण और रक्षक अग्निके ऊपर, अवनत होकर, अध्वर्यु उन्हें सिक्त करते हैं।

११ आदरसे युक्त अध्वर्युगण निकटगामी होकर रक्षक अग्निके विसर्जनके समय विशाल पात्र (उपयमनीपात्र) में मधु-सिञ्चन करते हैं।

१२ गौओ, मन्त्रके द्वारा दूहने योग्य बहुत दूधकी आवश्यकता होनेपर तुमलोग रक्षक (महावीर) अग्निके पास जाओ। अग्निके दोनों कर्ण सोने और चाँदीके हैं।

१३ अध्वर्युओ, दूध दूहे जानेपर द्यावापृथिवीपर आश्रित और मिश्रणयोग्य दूधका सिञ्चन करो। अनन्तर बकरीके दूधमें अग्निको स्थापित करो।

ते जानत स्वमोक्यं सं वत्सासो न मातृभिः।
मिथो नसन्तजामिभिः ॥१४॥
उप स्रक्वेषु बप्सतः कृण्वते धरुणं दिवि। इन्द्रे अग्ना नमः स्वः ॥१५॥
अधुक्षत् पिप्युषीमिषमूर्जं सप्तपदीमरिः। सूर्यस्य सप्तरश्मिभिः ॥१६॥
सोमस्य मित्रावरुणोदिता सूर आ ददे। तदातुरस्य भेषजम् ॥१७॥
उतो न्वस्य यत् पदं हर्यतस्य निधान्यम्। परि द्यां जिह्वयातनत् ॥१८॥



६२ सूक्त

अश्विद्वय देवता। सप्तवध्रि ऋषि। गायत्री छन्द।

उदीराथामृतायते युञ्जाथामश्विना रथम्। अन्ति षद्भूतु वामवः ॥१॥
निमिषश्चिज्जवीयसा रथेना यातमश्विना। अन्ति षद्भूतु वामवः ॥२॥
उप स्तृणीतमत्रये हिमेन घर्ममश्विना। अन्ति षद्भूतु वामवः ॥३॥

---

१४ उन्होंने (गौओंने) अपने निवासदाता अग्निको जाना है। जैसे वत्स अपनी माताके साथ मिलते हैं, वैसे ही गायें अपने बन्धुओंके साथ मिलती हैं।

१५ शिखा (ज्वाला) के द्वारा भक्षक अग्निका अन्न अग्नि और इन्द्रका पोषण करता है। अन्तरीक्ष (अन्तरिक्ष) का उपकार करता है। इन्द्र और अग्निको सारा अन्न दो।

१६ गमनशील वायु और चञ्चल चरणोंसे युक्त माध्यमिकी वाक् (वचन) से सूर्यकी सात किरणों द्वारा वर्द्धित अन्न और रसको अध्वर्यु ग्रहण करता है।

१७ मित्र और वरुण, सूर्योदय होनेपर सूर्य सोमको स्वीकार करते हैं। वह (आतुरोंके) लिये हितकर भेषज हैं।

१८ हर्यंत ऋषिका जो स्थान हव्य स्थापनके लिये उपयुक्त है, वहींसे अग्नि अपनी जिह्वा द्वारा द्युलोकको व्याप्त करते हैं।

१ अश्विद्वय, मैं यज्ञाभिलाषी हूँ। मेरे लिये उदित होओ। रथको जोतो। तुम्हारी रक्षा हमारी समीपवर्त्तिनी हो।

२ अश्विद्वय, निमेषसे भी अधिक वेगवान् रथसे आओ। तुम्हारी रक्षा हमारी समीपवर्त्तिनी हो।

३ अश्विद्वय, (अग्निमें फेंके हुए) अत्रिके लिये हिम (जल) से घर्म (अग्नि-दहन) का निवारण करो। तुम्हारी रक्षा हमारी समीपवर्त्तिनी हो।

कुह स्थः कुह जग्मथुः कुह श्येनेव पेतथुः । अन्ति षद्भूतु वामवः ॥४॥
यदद्य कर्हि कर्हि चिच्छुश्रूयातमिमं हवम् । अन्ति षद्भूतु वामवः ॥५॥
अश्विना यामहूतमा नेदिष्ठं याम्याप्यम् । अन्ति षद्भूतु वामवः ॥६॥
अवन्तमत्रये गृहं कृणुतं युवमश्विना । अन्ति षद्भूतु वामवः ॥७॥
वरेथे अग्निमातपो वदते वल्ग्वत्रये । अन्ति षद्भूतु वामवः ॥८॥
प्र सप्तवध्रिराशसा धारामग्नेरशायत । अन्ति षद्भूतु वामवः ॥९॥
इहा गतं वृषण्वसू शृणुतं म इमं हवम् । अन्ति षद्भूतु वामवः ॥१०॥
किमिदं वां पुराणवज्जरतोरिव शस्यत । अन्ति षद्भूतु वामवः ॥११॥
समानं वां सजात्यं समानो बन्धुरश्विना । अन्ति षद्भूतु वामवः ॥१२॥

४ तुमलोग कहाँ हो? कहाँ जाते हो? श्येन पक्षीके समान कहाँ गिरते हो? तुम्हारी रक्षा हमारी समीपवर्त्तिनी हो।

५ तुम किस समय, किस स्थानपर, आज हमारे इस आह्वानको सुनोगे, यह हम नहीं जानते? तुम्हारा रक्षण हमारे पास आवे।

६ यथासमय अत्यन्त आह्वानके योग्य मैं अश्विद्वयके पास जाता हूँ। उनके निकटस्थित बन्धुओंके पास भी मैं जाता हूँ। तुम्हारा रक्षण हमारे पास आवे।

७ अश्विद्वय, तुम लोगोंने अत्रिके लिये (जलनेसे बचनेके लिये) रक्षक गृहका निर्माण किया था। तुम्हारा रक्षण हमारे पास आवे।

८ अश्विद्वय, मनोहर स्तोता अत्रिके लिये अग्निको जलानेसे अलग करो। तुम्हारा रक्षण हमारे पास आवे।

९ महर्षि सप्तवध्रिने तुम्हारी स्तुतिसे अग्निकी धारा (ज्वाला)को, मञ्जूषा (पेटिका= बाक्स) मेंसे स्वयं बाहर निकाल कर, उसीमें, सुला (पैठा) दिया था। तुम्हारा रक्षण हमारे पास आवे।

१० वृष्टिदाता और धनी अश्विद्वय, यहाँ आओ और हमारा आह्वान सुनो। तुम्हारा रक्षण हमारे पास आवे।

११ अश्विद्वय, अतीव वृद्धके समान तुम्हें क्यों बार-बार बुलाना पड़ता है? तुम्हारा रक्षण हमारे पास आवे।

१२ अश्विद्वय, तुम दोनोंका उत्पत्ति-स्थान एक है; तुम्हारे बन्धु भी एक समान हैं। तुम्हारा रक्षण हमारे पास आवे।

यो वां रजांस्यश्विना रथो वियाति रोदसी। अन्ति षद्भूतु वामवः ॥१
आ नो गव्येभिरश्व्यैः सहस्रै रुप गच्छतम्। अन्ति षद्भूतु वामवः ॥१
मा नो गव्येभिरश्व्यैः सहस्रेभिरति ख्यतम्। अन्ति षद्भूतु वामवः ॥
अरुणप्सुरुषा अभूदकर्ज्योतिर्ऋतावरी। अन्ति षद्भूतु वामवः ॥१६॥
अश्विना सु विचाकशद्वृक्षं परशुमाँ इव। अन्ति षद्भूतु वामवः ॥१
पुरं न धृष्णवा रुज कृष्णया बाधितो विशा। अन्ति षद्भूतु वामवः ॥१

६३ सूक्त

अग्नि देवता। शेषकी तीन ऋचाओंके देवता श्रुतर्वाकी दानस्तुति है। गोपवन ऋषि। अनुष्टुप् और गायत्री छन्द।

विशोविशो वो अतिथिं वाजयन्तः पुरुप्रियम्।
अग्निं वो दुर्यं वचः स्तुषे शूषस्य मन्मभिः ॥१॥

---

१३ अश्विद्वय, तुम्हारा रथ द्यावापृथिवी और सारे लोकोंमें घूमता है। तुम्हारा हमारी समीपवर्त्तिनी हो।

१४ अश्विद्वय, अपरिमित (सहस्र) गौओं और अश्वोंके साथ हमारे पास आओ। रक्षण हमारे पास आवे।

१५ अश्विद्वय, सहस्र गौओं और अश्वोंसे हमारा निवारण नहीं करना (अर्थात् सब देना)। तुम्हारा रक्षण हमारे पास आवे।

१६ अश्विद्वय, उषा शुक्लवर्णकी हैं। वह यज्ञवाली और ज्योतिका निर्माण करती हैं। तुम्हारा रक्षण हमारे पास आवे।

१७ जैसे फरसावाला व्यक्ति वृक्ष काटता है, वैसे ही अतीव दीप्तिमान् सूर्य अन्धकारका निवारण करते हैं। मैं अश्विद्वयको बुलाता हूँ। तुम्हारा रक्षण हमारे पास आवे।

१८ धर्षक सप्तवध्रि, तुम काले पेटक (बाक्स)में बन्द थे। पीछे उसे तुमने नगरके समान जला दिया था। तुम्हारा रक्षण हमारे पास आवे।

१ ऋत्विको और यजमानो, तुमलोग अन्नाभिलाषी हो। सारी प्रजाके अतिथि और बहुतोंके प्रिय अग्निकी, स्तुतिके द्वारा, सेवा करो। मैं तुम्हारे सुखके लिये मननीय स्तोत्रके द्वारा गूढ़ वचनका उच्चारण करता हूँ।

यं जनासो हविष्मन्तो मित्रं न सर्पिरासुतिम् ।
प्रशंसन्ति प्रशस्तिभिः ॥२॥
पन्यांसं जातवेदसं यो देवतात्युद्यता । हव्यान्यैरयद्दिवि ॥३॥
आगन्म वृत्रहन्तमं ज्येष्ठमग्निमानवम् ।
यस्य श्रुतर्वा बृहन्नार्क्षो अनीक एधते ॥४॥
अमृतं जातवेदसं तिरस्तमांसि दर्शतम् । घृताहवनमीड्यम् ॥५॥
सबाधो यं जना इमेऽग्निं हव्येभिरीळते । जुह्वानासो यतस्रुचः ॥६॥
इयं ते नव्यसी मतिरग्ने अधाय्यस्मदा ।
मन्द्र सुजात सुक्रतोऽमूर दस्मातिथे ॥७॥
सा ते अग्ने शन्तमा चनिष्ठा भवतु प्रिया । तया वर्धस्व सुष्टुतः ॥८॥
सा द्युम्नैर्द्युम्निनी बृहदुपोप श्रवसि श्रवः । दधीत वृत्रतूर्ये ॥९॥

---

२ जिन अग्निके लिये घीका होम किया जाता है और जिनको द्रव्यका दान करते हुए स्तुति द्वारा प्रशंसा की जाती है—

३ जो स्तोताके प्रशंसक और जात-धन हैं तथा जो यज्ञमें दिये हविको द्युलोकमें प्रेरित करते हैं—

४ जिनकी ज्वालाओंने ऋक्षपुत्र और महान् श्रुतर्वाको वर्द्धित किया है, उन पापियोंके नाशक और मनुष्योंके हितकर अग्निके पास मैं उपस्थित हुआ हूँ ।

५ अग्नि अमर हैं, जात-धन हैं और स्तवनीय हैं । वह अन्धकारको दूर करते हैं । उनका घृतके द्वारा हवन किया जाता है ।

६ बाधावाले लोग यज्ञ करते और स्रुक् संयत करते हुए हव्यके द्वारा उनकी स्तुति करते हैं ।

७ हृष्ट, शोभन-जन्मा, बुद्धिमान् और दर्शनीय अग्नि, हम तुम्हारी यह स्तुति करते हैं ।

८ अग्नि, वह स्तुति अतीव सुखावह, अधिक अन्नवाली और तुम्हारे लिये प्रिय हो । उसके द्वारा तुम भली भाँति स्तुत होकर बढ़ो ।

९ वह स्तुति प्रचुर अन्नवाली है । युद्धमें वह अन्नके ऊपर यथेष्ट अन्न धारण करे ।

अश्वमिद्गां रथप्रां त्वेषमिन्द्रं न सत्पतिम् ।
यस्य श्रवांसि तूर्वथ पन्यम्पन्यं च कृष्टयः ॥१०॥
यं त्वा गोपवनो गिरा चनिष्ठदग्ने अङ्गिरः । स पावक श्रुधी हवम् ॥११॥
यं त्वा जनास ईळते सबाधो वाजसातये । स बोधि वृत्रतूर्ये ॥१२॥
अहं हुवान आर्क्षे श्रुतर्वणि मदच्युति ।
शर्धांसीव स्तुकाविनां मृक्षा शीर्षा चतुर्णाम् ॥१३॥
मां चत्वार आशवः शविष्ठस्य द्रवित्नवः ।
सुरथासो अभि प्रयो वक्षन्वयो न तुग्र्यम् ॥१४॥
सत्यमित्त्वा महेनदि परुष्ण्यव देदिशम् ।
नेमापो अश्वदातरः शविष्ठादस्ति मर्त्यः ॥१५॥

---

१० जो अग्नि बलके द्वारा शत्रुके अन्न और स्तुत्य धनकी हिंसा करते हैं, उन्हीं अ... और रथादिके पूरक अग्निकी, गतिपरायण अश्वके समान तथा सत्पति इन्द्रके सदृश, मनुष्य सेवा करते हैं।

११ अग्नि, गोपवन नामक ऋषिकी स्तुतिसे तुम अन्नदाता हुए थे। तुम सर्वत्र ... वाले और शोधक हो। तुम गोपवनके आह्वानको सुनो।

१२ बाधा-संयुक्त होनेपर भी लोग, अन्न-प्राप्तिके लिये, तुम्हारी स्तुति करते हैं। ... युद्धमें जागो।

१३ मैं (ऋषि) बुलाये जानेपर, शत्रु-गर्व-ध्वंसक और ऋक्ष-पुत्र श्रुतर्वा राजाके ... हुए लोमवाले चार अश्वोंके ऊँचे और लोमवाले मस्तकोंको मैं हाथोंसे धो रहा हूँ।

१४ अतीव अन्नवाले श्रुतर्वा राजाके चार अश्व द्रुतगामी और उत्तम रथवाले होकर, उसी प्रकार अन्नको ढोते हैं, जिस प्रकार अश्विद्वयकी भेजी हुई चार नावोंने तुग्र-पुत्र भुज्युका वहन किया था।

१५ हे महानदी परुष्णी (रावी), हे जल, मैं तुमसे सच्चा कहता हूँ कि, सबसे बली ... श्रुतर्वा राजासे अधिक अश्वोंका दान कोई भी मनुष्य नहीं कर सकता।

६४ सूक्त

अग्नि देवता। आङ्गिराके पुत्र विरूप ऋषि। गायत्री छन्द।

युक्ष्वा हि देवहूतमाँ अश्वाँ अग्ने रथीरिव। नि होता पूर्व्यः सदः ॥१॥
उत नो देव देवाँ अच्छा वोचो विदुष्टरः। श्रद्विश्वा वार्या कृधि ॥२॥
त्वं ह यद्यविष्ठ्य सहसः सूनवाहुत। ऋतावा यज्ञियो भुवः ॥३॥
अयमग्निः सहस्रिणो वाजस्य शतिनस्पतिः। मूर्धा कवी रयीणाम् ॥४॥
तं नेमिमृभवो यथा नमस्व सहूतिभिः। नेदीयो यज्ञमङ्गिरः ॥५॥
तस्मै नूनमभिद्यवे वाचा विरूप नित्यया। वृष्णे चोदस्व सुष्टुतिम् ॥६॥
कमु ष्विदस्य सेनयाग्नेरपाकचक्षसः। पणिं गोषु स्तरामहे ॥७॥
मा नो देवानां विशः प्रस्नातीरिवोस्राः। कृशं न हासुरघ्न्याः ॥८॥
मा नः समस्य दूढ्यः परिद्वेषसो अंहतिः। ऊर्मिर्न नावमावधीत् ॥९॥

१ अग्नि, सारथिके समान तुम देवोंको बुलानेमें कुशल घोड़ोंको रथमें जोतो। तुम होता हो। प्रधान होकर तुम बैठो।

२ देव, तुम देवताओंके यहाँ हमें "विद्वत्श्रेष्ठ" कहकर हमारे वरणीय धनोंको देवोंके पास भेजो।

३ तरुणतम, बलके पुत्र और आहूत अग्नि, तुम सत्य वाले और यज्ञ-योग्य हो।

४ यह अग्नि सौ और हजार तरहके अन्नोंके स्वामी, शिरः-संयुक्त, कवि (मेधावी) और धनपति हैं।

५ गमनशाल अग्नि, जैसे ऋभु लोग रथ-नेमिको ले आते हैं, वैसे ही तुम भी एकत्र आहूत देवोंके साथ अतीव निकट-वर्ती यज्ञको ले आओ।

६ विशिष्ट रूपवाले ऋषि, तुम नित्य वाक्यके द्वारा तृप्त और अभीष्टवर्षी अग्निकी स्तुति करो।

७ गायोंके लिये हम विशाल चक्षुवाले अग्निकी ज्वालाके द्वारा किस पणिका बध करेंगे?

८ हम देवोंके परिचारक हैं। जैसे दूध देनेवाली गायोंको नहीं छोड़ा जाता और गायें अपने छोटे बच्चेको नहीं छोड़तीं, वैसे ही अग्नि हमें न छोड़ें।

९ जैसे समुद्रकी तरङ्ग नौकाको बाधा देती है, वैसे ही शत्रुओंको दुष्ट बुद्धि हमें बाधा न दे।

नमस्ते अग्न ओजसे गृणन्ति देव कृष्टयः । अमैरमित्रमर्दय ॥१०॥
कुवित् सु नो गविष्टयेऽग्ने संवेषिषो रयिम् । उरुकृदुरु णस्कृधि ॥११॥
मा नो अस्मिन्महाधने परावर्ग्भारभृद्यथा । संवर्गं सं रयिं जय ॥१२॥
अन्यमस्मद्भिया इयमग्ने सिषक्तु दुच्छुना । वर्धा नो अमवच्छवः ॥१३॥
यस्याजुषन्नमस्विनः शमीमदुर्मखस्य वा । तं घेदग्निर्वृधावति ॥१४॥
परस्या अधि संवतोऽवराँ अभ्यातर । यत्राहमस्मि ताँ अव ॥१५॥
विद्मा हि ते पुरा वयमग्ने पितुर्यथावसः । अधा ते सुम्नमीमहे ॥१६॥



६५ सूक्त

इन्द्र देवता । कण्वगोत्रीय कुरुसुति ऋषि । गायत्री छन्द ।

इमं नु मायिनं हुव इन्द्रमीशानमोजसा । मरुत्वन्तं न वृञ्जसे ॥१॥

---

१० अग्निदेव, मनुष्य बल-प्राप्तिके लिये तुम्हारे निमित्त नमस्कार करते हैं। तुम बलों
शत्रु-संहार करो।

११ अग्नि, हमें गायें खोजनेके लिये प्रचुर धन दो। तुम समृद्धिकर्त्ता हो। हमें समृद्ध क

१२ भारवाहक व्यक्तिके समान तुम हमें इस संग्राममें नहीं छोड़ना। शत्रुओंके द्वारा
छिन्न हो रहा है। उसे हमारे लिये जीतो।

१३ अग्नि, ये बाधाएँ स्तुति-विहीनके लिये भय उत्पन्न करें। तुम हमारे बलसे
वेगको वर्द्धित करो।

१४ नमस्कारवाले अथवा यज्ञ-युक्त जिस व्यक्तिका कर्म सेवा करता है, उसीके
विशेषतया अग्नि जाते हैं।

१५ शत्रु-सेनासे अलग हमारी सेनाओंको अभिमुखीन करो। जिनके बीच मैं हूँ, उन
रक्षा करो।

१६ अग्नि, तुम पालक हो। पहलेके समान इस समय तुम्हारे रक्षणको हम जानते हैं। अ
तुम्हारे सुखकी हम याचना करते हैं।

१ मैं शत्रु-छेदनके लिये प्राज्ञ इन्द्रको बुलाता हूँ। वह अपने बलसे सबके स्वामी और मरु
वाले हैं।

अयमिन्द्रो मरुत्सखा वि वृत्रस्याभिनच्छिरः । वज्रेण शतपर्वणा ॥२॥
वावृधानो मरुत्सखेन्द्रो वि वृत्रमैरयत् । सृजन्त्समुद्रिया अपः ॥३॥
अयं ह येन वा इदं स्वर्मरुत्वता जितम् । इन्द्रेण सोमपीतये ॥४॥
मरुत्वन्तमृजीषिणमोजस्वन्तं विरप्शिनम् । इन्द्रं गीर्भिर्हवामहे ॥५॥
इन्द्रं प्रत्नेन मन्मना मरुत्वन्तं हवामहे । अस्य सोमस्य पीतये ॥६॥
मरुत्वाँ इन्द्र मीढ्वः पिबा सोमं शतक्रतो । अस्मिन्यज्ञे पुरुष्टुत ॥७॥
तुभ्येदिन्द्र मरुत्वते सुताः सोमासो अद्रिवः । हृदा हूयन्त उक्थिनः ॥८॥
पिबेदिन्द्र मरुत्सखा सुतं सोमं दिविष्टिषु । वज्रं शिशान ओजसा ॥९॥
उत्तिष्ठन्नोजसा सह पीत्वी शिप्रे अवेपयः । सोममिन्द्र चमू सुतम् ॥१०॥
अनु त्वा रोदसी उभे क्रक्षमाणमकृपेताम् । इन्द्र यद्दस्युहाभवः ॥११॥

---

२ इन इन्द्रने, मरुतोंके साथ, सौ पर्वों (जोड़ों) वाले वज्रसे वृत्रका शिर काटा था।

३ इन्द्रने बढ़कर और मरुतोंसे मिलकर वृत्रको विदीर्ण किया था। उन्होंने अन्तरीक्षको जल बनाया था।

४ जिन्होंने मरुतोंसे युक्त होकर, सोमपानके लिये, स्वर्गको जीता था, वे ही ये इन्द्र हैं।

५ इन्द्र मरुतोंसे युक्त, ऋजीष (तृतीय सवनमें पुनः अभिषुत सोमका शेष भाग) वाले, सोम-संयुक्त ओजस्वी और महान् हैं। हम स्तुति द्वारा उन्हें बुलाते हैं।

६ मरुतोंसे युक्त इन्द्रको हम, सोमपानके लिये, प्राचीन स्तोत्रके द्वारा बुलाते हैं।

७ फल-वर्षक, अनेकों द्वारा आहूत और शतक्रतु इन्द्र, मरुतोंके साथ तुम इस यज्ञमें सोम-पान करो।

८ वज्रधर इन्द्र, तुहारे और मरुतोंके लिये सोम अभिषुत हुआ है। उक्थ मन्त्रोंका उच्चारण करनेवाले व्यक्ति भक्तिके साथ तुम्हें बुलाते हैं।

९ इन्द्र, तुम मरुतोंके मित्र हो तुम हमारे स्वर्ग देनेवाले यज्ञमें अभिषुत सोमका पान करो और बलके द्वारा वज्रको तेज करो।

१० अभिषवण-फलको (चमुओं) पर अभिषुत सोमको पीते हुए बलके साथ खड़े होकर दोनों जबड़ोंको कँपाओ।

११ तुम शत्रुओंका विनाश करनेवाले हो। उसी समय द्यावापृथिवी, दोनों ही तुम्हारी कल्पना करते हैं, जिस समय तुम दस्युओंका विनाश करते हो।

वाचमष्टापदीमहं नवस्रक्तिमृतस्पृशम् । इन्द्रात् परि तन्वं ममे ॥१२॥

६६ सूक्त

इन्द्र देवता। कुरुसुति ऋषि । गायत्री, बृहती और सतोबृहती छन्द ।

जज्ञानो नु शतक्रतुर्वि पृच्छदिति मातरम् । क उग्राः के ह शृण्विरे ॥१॥

आदीं शवस्यब्रवीदौर्णवाभमहीशुवम् । ते पुत्र सन्तु निष्टुरः ॥२॥

समित्तान्वृत्रहाखिदत् खे अराँइव खेदया । प्रवृद्धो दस्युहाभवत् ॥३॥

एकया प्रतिधापिबत् साकं सरांसि त्रिंशतम् । इन्द्रः सोमस्य काणुका ॥४॥

अभि गन्धर्वमतृणदबुध्नेषु रजःस्वा । इन्द्रो ब्रह्मभ्यः इद्वृधे ॥५॥

निराविध्यद्गिरिभ्य आ धारयत् पक्वमोदनम् । इन्द्रो बुन्दं स्वाततम् ॥६॥

शतब्रध्न इषुस्तव सहस्रपर्ण एक इत् । यमिन्द्र चकृषे युजम् ॥७॥

तेन स्तोतृभ्य आ भर नृभ्यो नारिभ्यो अत्तवे । सद्यो जात ऋभुष्ठिर ॥८॥

१२ आठ और नौ दिशाओं (चार दिशाएँ, चार कोण और आदित्य) में यज्ञ-स्पर्श करने वाली स्तुति भी इन्द्रसे कम है। मैं उसी स्तुतिको करता हूँ ।

१ जन्म लेते ही बहुकर्म-शाली होकर इन्द्रने अपनी मातासे पूछा, "उग्र कौन है? प्रसिद्ध कौन है?"

२ शवसी (बलवती माता) ने उसी समय कहा—"पुत्र, ऊर्णनाभ, अहीशुव आदि हैं। उनका निस्तार करना उपयुक्त है।"

३ वृत्रघ्न इन्द्रने रथचक्रकी लकड़ियों (अरों) के समान एक साथ ही रस्सीसे खींचा और दस्युओंका हनन करके प्रवृद्ध हुए।

४ इन्द्रने एक साथ ही सोमसे पूर्ण तीस कमनीय पात्रोंको पी डाला।

५ इन्द्रने मूल-शून्य अन्तरीक्षमें ब्राह्मणोंके बर्द्धनके लिये चारो ओरसे मेघको मारा।

६ मनुष्योंके लिये परिपक्व अन्नका निर्माण करते हुए इन्द्रने विराट् शरको लेकर मेघ छेदा था।

७ इन्द्र, तुम्हारा एक मात्र वाण सौ अग्र भागोंसे युक्त और सहस्र पात्रोंसे संयुक्त है। तुम इसी वाणको सहायक बनाते हो।

८ स्तोताओं, पुत्रों और स्त्रियोंके भक्षणके लिये उसी वाणके द्वारा यथेष्ट धन ले आओ। जन्मके साथ ही तुम प्रभुत और स्थिर हो।

एता च्यौत्नानि ते कृता वर्षिष्ठानि परीणसा । हृदा वीड्वधारयः ॥९॥

विश्वेत्ता विष्णुराभरदुरुक्रमस्त्वेषितः ।
शतं महिषान् क्षीरपाकमोदनं वराहमिन्द्र एमुषम् ॥१०॥

तुविक्षं ते सुकृतं सूमयं धनुः साधुर्बुन्दो हिरण्ययः ।
उभा ते बाहू रण्या सुसंस्कृत ऋदूपे चिदृदूवृधा ॥११॥



६७ सूक्त

इन्द्र देवता । कुरुसुति ऋषि । गायत्री और बृहती छन्द ।

पुरोलाशं नो अन्धस इन्द्र सहस्रामा भर। शता च शूर गोनाम् ॥१॥

आ नो भर व्यञ्जनं गामश्वमभ्यञ्जनम् । सचा मना हिरण्यया ॥२॥

उत नः कर्णशोभना पुरूणि धृष्णवा भर । त्वं हि शृण्विषे वसो ॥३॥

नकीं वृधीक इन्द्र ते न सुषा न सुदा उत । नान्यस्त्वच्छूर वाघतः ॥४॥

९ इन्द्र, तुमने ये सब अतीव प्रवृद्ध और चारो ओर फैले हुए पर्वतोंको बनाया है। बुद्धिमें उन्हें स्थिर भावसे धारण करो ।

१० इन्द्र, तुम्हारा जो सब जल है, उसे विष्णु (आदित्य) प्रदान करते हैं। विष्णु आकाशमें भ्रमण-करनेवाले (बहु-गति) और तुम्हारे द्वारा प्रेरित हैं। इन्द्रने सौ महिषों (पशुओं), क्षीर-पक्व अन्न और जल चुरानेवाले मेघ (वराह) को भी दिया ।

११ तुम्हारा धनुष् बहुत वाण फेंकनेवाला, सुनिर्मित और सुखावह है । तुम्हारा वाण सोनेका है। तुम्हारी दोनों भुजाएं रमणीय, मर्मभेदक, सुसंस्कृत और यज्ञवर्द्धक हैं।

---

१ शूर इन्द्र, पुरोडाश नामके अन्नको स्वीकार कर सौ और सहस्र गायें हमें दो।

२ इन्द्र, तुम हमें गाय, अश्व और तैल दो । साथ ही मनोहर और हिरण्मय अलङ्कार भी दो।

३ शत्रुओंको रगड़नेवाले और वासदाता इन्द्र, तुम्हीं सुने जाते हो। तुम हमें बहु-सङ्ख्यक कर्णाभरण प्रदान करो।

४ शूर इन्द्र, तुम्हारे सिवा अन्य वर्द्धक नहीं है। तुम्हारी अपेक्षा संग्राममें दूसरा कोई सम्भक्त नहीं है—कोई उत्तम दाता भी नहीं है। तुम्हारे सिवा ऋत्विकोंका कोई नेता भी नहीं है।

नकीमिन्द्रो निकर्तवे न शक्रः परिशक्तवे । विश्वं शृणोति पश्यति ॥५॥
स मन्युं मर्त्यानामदब्धो नि चिकीषते । पुरा निदश्चिकीषते ॥६॥
क्रत्व इत् पूर्णमुदरं तुरस्यास्ति विधतः । वृत्रघ्नः सोमपाव्नः ॥७॥
त्वे वसूनि सङ्गता विश्वा च सोम सौभगा । सुदात्वपरिह्वृता ॥८॥
त्वामिद्यवयुर्मम कामो गव्युर्हिरण्ययुः । त्वामश्वयुरेषते ॥९॥
तवेदिन्द्राहमाशसा हस्ते दात्रं चना ददे ।
दिनस्य वा मघवन्त्सम्भृतस्य वा पूर्धि यवस्य काशिना ॥१०॥

६८ सूक्त

सोम देवता । कृत्नु ऋषि । गायत्री और अनुष्टुप् छन्द ।

अयं कृत्नुरगृभीतो विश्वजिदुद्भिदित् सोमः । ऋषिर्विप्रः काव्येन ॥१॥

५ इन्द्र किसीका तिरस्कार नहीं करते । इन्द्र किसीसे हार नहीं सकते । वह संसारको देखते और सुनते हैं ।

६ इन्द्रका वध मनुष्य नहीं कर सकते । वह क्रोधको मनमें स्थान नहीं देते । निन्दाके पहले निन्दाको स्थान नहीं देते ।

७ क्षिप्रकारी, वृत्रघ्न और सोमपाता इन्द्रका उदर सेवकके कर्मद्वारा ही पूर्ण है ।

८ इन्द्र, तुममें सारे धन सङ्गत हैं । सोमपाता इन्द्र, तुममें समस्त सौभाग्य सङ्गत हैं । तुम्हारा दान सदा कुटिलतासे शून्य हुआ करता है ।

९ मेरा मन यव (जौ), गौ, सुवर्ण और अश्वका अभिलाषी होकर तुम्हारे ही पास जाता है ।

१० इन्द्र, मैं तुम्हारी आशासे ही हाथोंमें दात्र (खेत काटनेका हथियार) धारण करता हूँ । पहले काटे हुए अथवा पूर्व संगृहीत जौकी मुष्टिसे आशाको पूर्ण करो ।

१ यह सोम कर्ता हैं । कोई इनका ग्रहण नहीं कर सकता । यह विश्वजित् और उद्भिद् नामक सोम-यज्ञोंके निष्पादक हैं । यह ऋषि (ज्ञानो), मेधावी और काव्य (स्तोत्र) के द्वारा स्तुत्य हैं ।

अभ्यूर्णोति यन्नग्नं भिषक्ति विश्वं यत्तुरम् ।
प्रेमन्धः ख्यन्निः श्रोणो भूत् ॥२॥
त्वं सोम तनूकृद्भ्यो द्वेषोभ्योऽन्यकृतेभ्यः । उरु यन्तासि वरूथम् ॥३॥
त्वं चित्ती तव दक्षैर्दिव आपृथिव्या ऋजीषिन् । यावीरघस्य चिद्द्वेषः ॥४॥
अर्थिनो यन्ति चेदर्थं गच्छानिद्ददुषो रातिम् । ववृज्युस्तृष्यतः कामम् ॥५॥
विदद्यत् पूर्व्यं नष्टमुदीमृतायुमीरयत् । प्रेमायुस्तारीदतीर्णम् ॥६॥
सुशेवो नो मृळयाकुरदृप्तक्रतुरवातः । भवा नः सोम शं हृदे ॥७॥
मा नः सोम सं वीविजो मा वि बीभिषथा राजन् ।
मा नो हार्दि त्विषा वधीः ॥८॥
अव यत् स्वे सधस्थे देवानां दुर्मतीरीक्षे ।
राजन्नप द्विषः सेध मीढ्वो अप स्रिधः सेध ॥९॥



२ जो नग्न है, उसे सोम ढँकते हैं । जो रोगी है, उसे नीरोग करते हैं । यह सन्नद्ध रहनेपर भी दर्शन करते हैं, यह पङ्गु होकर भी गमन करते हैं ।

३ सोम, तुम शरीरको कृश करनेवाले अन्यकृतों (राक्षसों)के अप्रिय कार्योंसे रक्षा करते हो ।

४ हे ऋजीष (तृतीय सवनमें अभिषुत सोमका शेष भाग)वाले सोम, तुम प्रज्ञा और बलके द्वारा द्युलोक और पृथिवीके यहाँसे हमारे शत्रुके कार्यको पृथक् करो ।

५ यदि धनेच्छु लोग धनीके पास जाते हैं, तो दाताका दान मिलता और भिक्षुककी अभिलाषा भली भाँति पूर्ण होती है ।

६ जिस समय पुराना धन प्राप्त किया जाता है, उस समय यज्ञाभिलाषीको प्रेरित किया जाता है । तभी दीर्घ जीवन प्राप्त किया जाता है ।

७ सोम, तुम हमारे हृदयमें सुन्दर, सुखकर, यज्ञ-सम्पादक, निश्चल और मङ्गलकर हो ।

८ सोम, तुम हमें चञ्चलाङ्ग नहीं करना । राजन्, हमें डराना नहीं । हमारे हृदयमें प्रकाशके द्वारा वध नहीं करना ।

९ तुम्हारे गृहमें देवोंकी दुर्बुद्धि न प्रवेश करे । राजन्, शत्रुओंको दूर करो । सोमरसका सेचन करनेवाले हिंसकोंको मारो ।



६६ सूक्त

इन्द्र देवता। नोधाके पुत्र एकद्यु ऋषि। गायत्री और त्रिष्टुप् छन्द।

नह्य न्यं बलाकरं मर्डितारं शतक्रतो। त्वं न इन्द्र मृलय ॥१॥

यो नः शश्वत् पुराविथामृध्रो वाजसातये। स त्वं न इन्द्र मृलय ॥२॥

किमङ्ग रध्रचोदनः सुन्वानस्यावितेदसि। कुवित् स्विन्द्र णः शकः ॥३॥

इन्द्र प्र णो रथमव पश्चाच्चित् सन्तमद्रिवः। पुरस्तादेनं मे कृधि ॥४॥

हन्तो नु किमाससे प्रथमं नो रथं कृधि। उपमं वाजयु श्रवः ॥५॥

अवा नो वाजयुं रथं सुकरं ते किमित् परि।

अस्मान्त्सु जिग्युषस्कृधि ॥६॥

इन्द्र दृह्यस्व पूरसि भद्रा त एति निष्कृतम्। इयं धीर्ऋत्वियावती ॥७॥

मा सीमवद्य आ भागुर्वी काष्ठा हितं धनम्। अपावृक्ता अरत्नयः ॥८॥

१ इन्द्र, तुम्हारे सिवा अन्य सुखदाताको मैं बहुमान नहीं प्रदान करता हूँ। इन्द्र, हे शतक्रतो, सुख दो।

२ जिन अहिंसक इन्द्रने पहले हमें अन्न-प्राप्तिके लिये बचाया था, वह हमें सुखी करें।

३ इन्द्र, तुम आराधकको प्रवर्त्तित करो। तुम अभिषव-कर्त्ताके रक्षक हो। फलतः हमें धन दो।

४ इन्द्र, तुम हमारे पीछे खड़े रथकी रक्षा करो। वज्रधर इन्द्र, उसे सामने ले आओ।

५ शत्रु-हन्ता इन्द्र, इस समय तुम क्यों चुप हो? हमारे रथको मुख्य करो। हमारा अभिलाषी अन्न तुम्हारे पास है।

६ इन्द्र, हमारे अन्नाभिलाषी रथकी रक्षा करो। तुम्हारा क्या कर्त्तव्य है? हमें संग्राममें सब तरहसे विजयी बनाओ।

७ इन्द्र, दृढ़ होओ। तुम नगरके समान हो। मङ्गलमयी स्तुतिक्रिया यथासमय तुम्हारे पास जाती है। तुम यज्ञ-सम्पादक हो।

८ निन्दा-पात्र व्यक्ति हमारे पास उपस्थित न हो। विशाल दिशाओंमें निहित धन हमारा हो। शत्रु विनष्ट हों।

तुरीयं नाम यज्ञियं यदा करस्तदुश्मसि । अदित् पतिर्न ओहसे ॥९॥

अवीवृधद्वो अमृता अमन्दीदेकद्यूर्देवा उत याश्च देवीः ।

तस्मा उ राधः कृणुत प्रशस्तं प्रातर्मक्षू धियावसुर्जगम्यात् ॥१०॥

९ अनुवाक । ७० सूक्त

इन्द्र देवता । कण्वगोत्रीय कुसीदी ऋषि । गायत्री छन्द ।

आ तू न इन्द्र क्षुमन्तं चित्रं ग्राभं सङ्गृभाय । महाहस्ती दक्षिणेन ॥१॥

विद्मा हि त्वा तुविकूर्मिं तुविदेष्णं तुवीमघम् । तुविमात्रमवोभिः ॥२॥

नहि त्वा शूर देवा न मर्तासो दित्सन्तम् । भीमं न गां वारयन्ते ॥३॥

एतो न्विन्द्रं स्तवामेशानं वस्वः स्वराजम् । न राधसा मर्धिषन्नः ॥४॥

प्र स्तोषदुप गासिषच्छ्रवत् साम गीयमानम् । अभि राधसा जुगुरत् ॥५॥

आ नो भर दक्षिणेनाभि सव्येन प्र मृश । इन्द्र मा नो वसोर्निर्भाक् ॥६॥

---

९ इन्द्र, तुमने जिस समय यज्ञ-सम्बन्धी चतुर्थ नाम धारण किया, उसी समय हमने उसकी कामना की। तुम हमारे रक्षक हो। तुम्हीं हमारा पालन करते हो।

१० अमर देवो, एकद्यु ऋषि तुम्हें और तुम्हारी पत्नियोंको वर्द्धित और तृप्त करते हैं। हमारे लिये प्रचुर धन दो। कर्म-धन इन्द्र प्रातःकाल ही आगमन करें।

---

१ इन्द्र, तुम महान् हस्त (हाथ) वाले हो। तुम हमें देनेके लिये शब्दवान् (स्तुत्य), विचित्र और ग्रहणके योग्य धन दक्षिण हाथमें धारण करो।

२ इन्द्र, हम तुम्हें जानते हैं। तुम बहुकर्मा, बहुदाता, बहुधनी और बहुरक्षावाले हो।

३ शूर इन्द्र, तुम्हारे दानेच्छु होनेपर देव और मनुष्य, भयङ्कर वृषभके समान, तुम्हें बाधा नहीं पहुँचा सकते।

४ मनुष्यो, आओ और इन्द्रकी स्तुति करो। वह स्वयं दीप्यमान धनके स्वामी हैं। अन्य धनीके समान वह धनके द्वारा बाधा न दें।

५ इन्द्र, तुम्हारी स्तुतिकी प्रशंसा करें और तदनुरूप गान करें। वह सामवेदीय स्तोत्रका श्रवण करें। धन-युक्त होकर हमारे ऊपर अनुग्रह करें।

६ इन्द्र, हमारे लिये आगमन करो। दोनों हाथोंसे दान करो। हमें धनसे अलग नहीं करना।

उपक्रमस्वाभर धृषता धृष्णो जनानाम् । अदाशूष्टरस्य वेदः ॥७॥
इन्द्र य उ नु ते अस्ति वाजो विप्रेभिः सनित्वः ।
अस्माभिः सु तं सनुहि ॥८।
सद्योजुवस्ते वाजा अस्मभ्यं विश्वश्चन्द्राः । वशैश्च मक्षू जरन्ते ॥

७ इन्द्र, तुम धनके पास जाओ। शत्रुजेता इन्द्र, जो मनुष्योंमें अदाता (दानशून्य) है, ... धन ले आओ ।

८ इन्द्र, जो धन ब्राह्मणों (विप्रों)के द्वारा भजनीय (आश्रयणीय) है और जो धन तुम्हारा है ... माँगनेपर हमें दो ।

९ इन्द्र, तुम्हारा अन्न हमारे पास शीघ्र आवे। वह अन्न सबके लिये प्रसन्नता-दायक है। ... विध लालसाओंसे युक्त होकर हमारे स्तोतालोग शीघ्र ही तुम्हारी स्तुति करते हैं।

पञ्चम अध्याय समाप्त

षष्ठ अध्याय

७१ सूक्त

इन्द्र देवता । कण्वपुत्र कुसीदी ऋषि । गायत्री छन्द ।

आ प्र द्रव परावतोऽर्वावतश्च वृत्रहन् । मध्वः प्रति प्रभर्मणि ॥१॥
तीव्राः सोमास आ गहि सुतासो मादयिष्णवः । पिबा दधृग्यथोचिषे ॥२॥
इषा मन्दस्वादु तेऽरं वराय मन्यवे । भुवत्त इन्द्र शं हृदे ॥३॥
आ त्वशत्रवा गहि न्युक्थानि च हूयसे । उपमे रोचने दिवः ॥४॥
तुभ्यायमद्रिभिः सुतो गोभिः श्रीतो मदाय कम् । प्र सोम इन्द्र हूयते ॥५॥
इन्द्र श्रुधि सु मे हवमस्मे सुतस्य गोमतः । वि पीतिं तृप्तिमश्नुहि ॥६॥
य इन्द्र चमसेष्वा सोमश्चमूषु ते सुतः । पिबेदस्य त्वमीशिषे ॥७॥

---

१ वृत्रघ्न इन्द्र, यज्ञके मदकर सोमके लिये दूर और समीपके स्थानोंसे आओ ।

२ शीघ्र मद (नशा) करनेवाला सोम अभिषुत हुआ है । आओ, पियो और मत्त होकर उसकी सेवा करो।

३ सोम-रूप अन्नके द्वारा मत्त होओ । वह शत्रुको दूर करनेवाले क्रोधके लिये यथेष्ट हो। तुम्हारे हृदयमें सोम सुखकर हो ।

४ शत्रु-शून्य इन्द्र, शीघ्र आओ; क्योंकि तुम द्युलोकस्थ देवोंसे प्रकाशमान समीपस्थ यज्ञमें उक्थ मन्त्रोंके द्वारा बुलाये जा रहे हो ।

५ इन्द्र, यह सोम पत्थरसे प्रस्तुत किया गया है । यह क्षीरादिके द्वारा मिलाया जाकर तुम्हारे आनन्दके लिये अग्निमें हुत हो रहा है ।

६ इन्द्र, मेरा आह्वान सुनो। हमारे द्वारा अभिषुत और गव्य-मिश्रित सोम पियो और विविध प्रकारकी तृप्ति प्राप्त करो ।

७ इन्द्र, जो अभिषुत सोम चमस और चमू नामके पात्रोंमें है, उसे पियो । तुम ईश्वर हो, इसलिये पियो ।

यो अप्सु चन्द्रमाइव सोमश्चमूषु ददृशे । पिबेदस्य त्वमीशिषे ॥८॥
यं त श्येनः पदाभरत्तिरो रजांस्यस्पृतम् । पिबेदस्य त्वमीशिषे ॥९॥



७२ सूक्त

विश्वदेवगण देवता । कुसीदी ऋषि । गायत्री छन्द ।

देवानामिदवो महत्तदा वृणीमहे वयम् । वृष्णामस्मभ्यमूतये ॥१॥
ते नः सन्तु युजः सदा वरुणो मित्रो अर्यमा । वृधासश्च प्रचेतसः ॥२॥
अति नो विष्पिता पुरु नौभिरपो न पर्षथ । यूयमृतस्य रथ्यः ॥३॥
वामं नो अस्त्वर्यमन् वामं वरुण शंस्यम् । वामं ह्यावृणीमहे ॥४॥
वामस्य हि प्रचेतस ईशानासो रिशादसः । नेमादित्या अघस्य यत् ॥५॥

---

८ जलमें चन्द्रमाके समान चमूमें जो सोम दिखाई दे रहा है, तुम ईश्वर हो; इन्द्र, उसे पियो ।

९ श्येन पक्षीका रूप धारण करके गायत्री जो अन्तरीक्षस्थ सोम रक्षक गन्धर्वोंको तिरस्कृत करते हुए दोनों सवनोंमें सोम ले आयी थी, इन्द्र, तुम ईश्वर हो, उसे पियो ।



१ देवो, हम अपने पालनके लिये तुम्हारी काम-वर्षिणी महारक्षाकी प्राप्तिके लिये प्रार्थना करते हैं ।

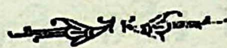
२ देवो वरुण, मित्र और अर्यमा सदा हमारे सहायक हों । वे शोभन स्तुतिवाले और हमारे वर्द्धक हों ।

३ सत्य-नेता देवो, नौकाके द्वारा जलके समान हमें विशाल और अनन्त शत्रु-सेनाके पार ले जाओ ।

४ अर्यमा हमारे पास भजनीय धन हो । वरुण, प्रशंसनीय धन हमारे यहाँ हो । हम भजनीय (व्यवहारके उपयुक्त) धनके लिये प्रार्थना करते हैं ।

५ प्रकृष्ट ज्ञानवाले और शत्रु-भक्षक देवो, तुम भजनीय धनके स्वामी हो । आदित्यो, पाप-सम्बन्धी जो है, वह हमारे पास आवे ।

वयमिन्द्र: सुदानवः क्षियन्तो यान्तो अध्वन्ना । देवा वृधाय हूमहे ॥६॥
अधि न इन्द्रैषां विष्णो सजात्यानाम् । इता मरुतो अश्विना ॥७॥
प्र भ्रातृत्वं सुदानवोऽध द्विता समान्या । मातुर्गर्भे भरामहे ॥८॥
यूयं हि ष्ठा सुदानव इन्द्रज्येष्ठा अभिद्यवः । अधा चिद्व उत ब्रुवे ॥६॥



७३ सूक्त

अग्नि देवता । कविके पुत्र उशना ऋषि । गायत्री छन्द ।

प्रेष्ठं वो अतिथिं स्तुषे मित्रमिव प्रियम् । अग्निं रथं न वेद्यम् ॥१॥
कविमिव प्रचेतसं यं देवासो अध द्विता । नि मर्त्येष्वादधुः ॥२॥
त्वं यविष्ठ दाशुषो नॄँः पाहि शृणुधी गिरः । रक्षा तोकमुत त्मना ॥३॥
कया ते अग्ने अङ्गिर ऊर्जो नपादुपस्तुतिम । वराय देव मन्यवे ॥४॥

---

६ सुन्दर दानवाले देवो, हम चाहे घरमें, चाहे मार्गमें, हव्य-वर्द्धनके लिये तुम्हें ही बुलाते हैं ।

७ इन्द्र, विष्णु, मरुतो और अश्विद्वय, समान जातिवालोंमें हमारे ही पास आओ ।

८ सुन्दर-दान-शील देवो, आनेके पश्चात्, हम पहले तुम सब लोगोंको प्रकट करेंगे और अनन्तर मातृ-गर्भसे तुमलोगोंके दो-दो करके जन्म लेनेके कारण तुममें जो बन्धुत्व है, उसे भी प्रकाशित करेंगे ।

६ तुम दानशील हो । तुममें इन्द्र श्रेष्ठ हैं । तुम दीप्तिसे युक्त हो । तुमलोग यज्ञमें रहो । अनन्तर मैं तुम्हारा स्तव करता हूँ ।

---

१ प्रियतम अतिथि और मित्रके समान प्रिय तथा रथके समान धन-वाहक अग्निकी, तुम्हारे लिये, मैं स्तुति करता हूँ ।

२ देवोंने जिन अग्निको, प्रकृष्ट ज्ञानवाले पुरुषके समान, मनुष्योंमें दो प्रकारसे (द्यावा और पृथिवीमें) स्थापित किया है, उनकी मैं स्तुति करता हूँ ।

३ तरुणतम अग्नि, हविर्दाताके मनुष्योंका पालन करो । स्तुति सुनो और स्वयं ही हमारी सन्तानकी रक्षा करो ।

४ अङ्गिरा (गतिशील) बलके पुत्र और देव अग्नि, तुम सबके वरणीय (स्वीकारके योग्य) और शत्रुओंके सामने जानेवाले हो । कैसे स्तोत्रसे मैं तुम्हारी स्तुति करूँ ?

दाशेम कस्य मनसा यज्ञस्य सहसो यहो । कदु वोच इदं नमः ॥५॥
अधा त्वं हि नस्करो विश्वा अस्मभ्यं सुक्षितीः । वाजद्रविणसो गिरः ॥६॥
कस्य नूनं परीणसो धियो जिन्वसि दम्पते । गोषाता यस्य ते गिरः ॥७॥
तं मर्जयन्त सुक्रतुं पुरोयावानमाजिषु । स्वेषु क्षयेषु वाजिनम् ॥८॥
क्षेति क्षेमेभिः साधुभिर्नकिर्यं घ्नन्ति हन्ति यः । अग्ने सुवीर एधते ॥९॥



७४ सूक्त

अश्विद्वय देवता । आङ्गिरस कृष्ण ऋषि । गायत्री छन्द ।

आ मे हवं नासत्याश्विना गच्छतं युवम् । मध्वः सोमस्य पीतये ॥१॥
इमं मे स्तोमश्विनेमं मे शृणुतं हवम् । मध्वः सोमस्य पीतये ॥२॥
अयं वां कृष्णो अश्विना हवते वाजिनीवसू । मध्वः सोमस्य पीतये ॥३॥

५ बल-पुत्र अग्नि, कैसे यजमानके मनके अनुकूल हम तुम्हें हव्य देंगे? कब इस नमस्कार मैं उच्चारण करूँगा?

६ तुम्हीं, हमारे लिये, हमारी सारी स्तुतिओंको उत्तम गृह, धन और अन्नवाली करो।

७ दम्पती-रूप (गार्हपत्य) अग्नि, तुम इस समय किसके कर्मको प्रसन्न (सफल) करते तुम्हारी स्तुतियाँ धन देनेवाली हैं।

८ अपने घरमें यजमान लोग सुन्दर बुद्धिवाले, सुकृती युद्धमें अग्रगामी और बली अ पूजा करते हैं।

९ अग्नि, जो व्यक्ति साधक रक्षणके साथ अपने गृहमें रहता है, जिसे कोई मार नहीं सकता जो शत्रुको मारता है, वही सुन्दर पुत्र-पौत्रसे युक्त होकर बढ़ता है।



१ नासत्य अश्विद्वय, तुम दोनों मेरा आह्वान सुनकर, मदकर सोमपानके लिये, मेरे पा आओ।

२ अश्विद्वय, मदकर सोमके पानके लिये मेरे स्तोत्रको सुनो। मेरा आह्वान सुनो।

३ हे अन्न और धनवाले अश्विद्वय, मदकर सोम-पानके लिये यह कृष्ण ऋषि (मैं) तुम्हें बुलाता है।

शृणुतं जरितुर्हवं कृष्णस्य स्तुवतो नरा । मध्वः सोमस्य पीतये ॥४॥
छर्दिर्यन्तमदाभ्यं विप्राय स्तुवते नरा । मध्वः सोमस्य पीतये ॥५॥
गच्छतं दाशुषो गृहमित्था स्तुवतो अश्विना । मध्वः सोमस्य पीतये ॥६॥
युञ्जाथा रासभं रथे वीड्वङ्गे वृषण्वसू । मध्वः सोमस्य पीतये ॥७॥
त्रिबन्धुरेण त्रिवृता रथेनायातमश्विना । मध्वः सोमस्य पीतये ॥८॥
नू मे गिरो नासत्याश्विना प्रावतं युवम् । मध्वः सोमस्य पीतये ॥९॥

---

७८ सूक्त

अश्विद्वय देवता । कृष्णके पुत्र विश्वक ऋषि । जगती छन्द ।

उभा हि दस्रा भिषजा मयोभुवोभा दक्षस्य वचसो बभूवथुः ।
ता वां विश्वको हवते तनूकृथे मा नो वि यौष्टं सख्या मुमोचतम् ॥१॥

---

४ नेताओ, स्तोत्र-परायण और स्तोता कृष्णका आह्वान, मदकर सोम-पानके लिये, सुनो ।

५ नेताओ, मदकर सोमपानके लिये मेधावी स्तोता कृष्णको अहिंसनीय गृह प्रदान करो ।

६ अश्विद्वय, इसी प्रकार स्तोता और हव्यदाताके गृहमें, मदकर सोम-पानके लिये, आओ ।

७ वर्षक और धनी अश्विद्वय, मदकर सोम-पानके लिये दृढ़ाङ्ग रथमें रासभ (अश्व) को जोतो ।

८ अश्विद्वय, तीन बन्धुरों (फलकों) और तीन कोनोंवाले रथपर, मदकर सोम-पानके लिये, आगमन करो ।

९ नासत्य-द्वय, मदकर सोम-पानके लिये मेरे स्तुति-वचनोंकी ओर तुम शीघ्र आओ ।

---

१ दर्शनीय और वैद्य अश्विद्वय, तुम दोनों सुखकर हो । तुम लोग दक्षके स्तुति-समयमें उपस्थित थे । सन्तानके लिये तुम्हें विश्वक (मैं) बुलाता है । हमारा (ऋषि और स्तोताओंका) बन्धुत्व अलग नहीं करना । लगामसे अश्वोंको छुड़ाओ ।

कथा नूनं वां विमना उप स्तवद्युवं धियं ददथुर्वस्यइष्टये।
ता वां विश्वको हवते तनूकृथे मा नो वि यौष्टं सख्या मुमोचतम् ॥२॥
युवं हि ष्मा पुरुभुजेममेधतुं विष्णाप्वे ददथुर्वस्यइष्टये।
ता वां विश्वको हवते तनूकृथे मा नो वि यौष्टं सख्या मुमोचतम् ॥३॥
उत त्यं वीरं धनसामृजीषिणं दूरे चित् सन्तमवसे हवामहे।
यस्य स्वादिष्ठा सुमतिः पितुर्यथा मा नो वि यौष्टं सख्या मुमोचतम् ॥४॥
ऋतेन देवः सविता शमायत ऋतस्य शृङ्गमुर्विया वि पप्रथे।
ऋतं सासाह महि चित् पृतन्यतो मा नो वि यौष्टं सख्या मुमोचतम् ॥५॥

७६ सूक्त

अश्विद्वय देवता। वसिष्ठके पुत्र द्युम्नीक, अङ्गिराके पुत्र प्रियमेध अथवा कृष्ण ऋषि।
बृहती और सतोबृहती छन्द।

द्युम्नी वां स्तोमो अश्विना क्रिविर्न सेक आ गतम्।
मध्वः सुतस्य स दिवि प्रियो नरा पातं गौराविवेरिणे ॥१॥

२ अश्विद्वय, विमना नामके ऋषिने पूर्व कालमें तुम्हारी कैसे स्तुति की थी कि, विश्वक धन-प्राप्तिके लिये तुमने अपने मनको निश्चित किया था ? वैसे तुमको विश्वक बुलाते हैं। हमारा बन्धुत्व वियुक्त न हो। लगामसे अश्वोंको छुड़ाओ।

३ अनेकोंके पालक अश्विद्वय, विष्णवापु (मेरे पुत्र)की उत्कृष्ट धनकी अभिलाषा पूर्ण करनेके लिये तुमने धन-वृद्धि प्रदान की है। वैसे तुम्हें, सन्तानके लिये, विश्वक बुलाते हैं। हमारा सखित्व अलग नहीं करना। लगामसे अश्वोंको छोड़ो।

४ अश्विद्वय, वीर, धन-भोक्ता, अभिषुत सोमसे युक्त और दूरस्थ विष्णवापुको बुलाते हैं। पिता (मेरे) समान ही विष्णवापुकी स्तुति भी अतीव सुस्वादु है। हमारे सख्यको पृथक् मत करो।

५ अश्विद्वय, सत्यके द्वारा सूर्य अपनी किरणोंको (सायंकालमें) एकत्र करते हैं। अनन्तर सत्यके शृङ्ग (किरण-समूह) को (प्रातःकाल) विशेष रूपसे विस्तारित करते हैं। वह (सूर्य=सविता) सेनावाले शत्रुको परास्त करते हैं। सत्यके द्वारा हमारा बन्धुत्व विच्छिन्न न हो। लगामसे अश्वोंको छुड़ाओ।

---

१ अश्विद्वय, द्युम्नीक ऋषि तुम्हारा स्तोता है। वर्षा ऋतुमें कुँओंकी तरह तुम आओ। नेता! यह स्तोता द्युतिमान् यज्ञमें अभिषुत और मदकर सोमका प्रेमी है। फ़लतः जैसे गौर मृग तड़ाग आदिका जल पीते हैं, वैसे ही अभिषुत सोमका पान करो।

पिबतं घर्मं मधुमन्तमश्विना बर्हिः सीदतं नरा ।
ता मन्दसाना मनुषो दुरोण आ नि पातं वेदसा वयः ॥२॥
आ वां विश्वाभिरूतिभिः प्रियमेधा अहूषत ।
ता वर्तिर्यातमुप वृक्तबर्हिषो जुष्टं यज्ञं दिविष्टिषु ॥३॥
पिबतं सोमं मधुमन्तमश्विना बर्हिः सीदतं सुमत् ।
ता वावृधाना उप सुष्टुतिं दिवो गन्तं गौराविवेरिणम् ॥४॥
आ नूनं यातमश्विनाश्वेभिः प्रुषितप्सुभिः ।
दस्रा हिरण्यवर्तनी शुभस्पती पातं सोममृतावृधा ॥५॥
वयं हि वां हवामहे विपन्यवो विप्रासो वाजसातये ।
ता वल्गू दस्रा पुरुदंससा धियाश्विना श्रुष्ट्यागतम् ॥६॥



२ अश्विद्वय, रसवान् और चूनेवाला सोम पिओ। नेताओ, यज्ञमें बैठो । मनुष्यके गृहमें प्रमत्त होकर तुमलोग, हव्यके साथ, सोमका पान करो ।

३ अश्विद्वय, यजमान तुम्हें सारी रक्षाओंके साथ, बुला रहे हैं। जिस यजमानने कुशोंको बिछाया हैं, उसीके द्वारा सदासेवित हविके लिये तुमलोग प्रातःकाल ही घरमें आओ।

४ अश्विद्वय, रसवान् सोमका पान करो। अनन्तर सुन्दर कुशोंपर बैठो। तत्पश्चात् प्रवृद्ध होकर उसी प्रकार हमारी स्तुतिकी ओर आओ, जिस प्रकार दो गौरं मृग तड़ाग आदिकी ओर जाते हैं।

५ अश्विद्वय, तुम लोग स्निग्ध रूपवाले अश्वोंके साथ इस समय आओ। दर्शनीय और सुवर्णमय रथवाले, जलके पालक और यज्ञके वर्द्धक अश्विद्वय, सोम पान करो ।

६ अश्विद्वय, हम स्तोता और ब्राह्मण हैं। हम अन्न-लाभके लिये तुम्हें बुलाते हैं। तुम सुन्दर गमनवाले और विविध-कर्मा हो। हमारी स्तुतिके द्वारा बुलाये जाकर शीघ्र आओ।



७७ सूक्त

इन्द्र देवता। गौतम नोधा ऋषि। बृहती छन्द।

तं वो दस्ममृतीषहं वसोर्मन्दानमन्धसः ।
अभि वत्सं न स्वसरेषु धेनव इन्द्रं गीर्भिर्नवामहे ॥१॥
द्युक्षं सुदानुं तविषीभिरावृतं गिरिं न पुरुभोजसम् ।
क्षुमन्तं वाजं शतिनं सहस्रिणं मक्षू गोमन्तमीमहे ॥२॥
न त्वा बृहन्तो अद्रयो वरन्त इन्द्र वीलवः ।
यद्दित्ससि स्तुवते मावते वसु नकिष्टदा मिनाति ते ॥३॥
योद्धासि क्रत्वा शवसोत दंसना विश्वा जाताभि मज्मना ।
आ त्वायमर्क ऊतये ववर्तति यं गोतमा अजीजनन् ॥४॥
प्र हि रिरिक्ष ओजसा दिवो अन्तेभ्यस्परि ।
न त्वा विव्याच रज इन्द्र पार्थिवमनु स्वधां ववक्षिथ ॥५॥

---

१ जैसे दिनमें, गोशालामें, गायें अपने बछड़ोंको बुलाती हैं, वैसे ही दर्शनीय, शत्रु-दुःख दूर करनेवाले और सोम पानके द्वारा प्रमत्त इन्द्रको, स्तुतिके द्वारा, हम बुलाते हैं।

२ इन्द्र दीप्तिके निवास स्थान, स्वर्ग-वासी, उत्तम दानवाले, पर्वतके समान बलसे ढके हुए और अनेकोंके पालक इन्द्रसे शब्दकारी पुत्रादि. सौ और सहस्र धन तथा गौसे अन्नकी हम शीघ्र याचना करते हैं।

३ इन्द्र, विराट् और सुदृढ़ पर्वत भी तुम्हें बाधा नहीं पहुँचा सकते। मेरे जैसे स्तोता जो धन देनेकी इच्छा करते हो, उसे कोई नहीं विनष्ट कर सकता।

४ इन्द्र, कर्म और बलके द्वारा तुम शत्रुओंके विनाशक हो। तुम अपने कर्म और बलके द्वारा सारी वस्तुओंको जीतते हो। देवोंका पूजक यह स्तोता, अपनी रक्षाके लिये, तुममें आसक्ति लगाता है। गौतम लोगोंने तुम्हें आविर्भूत किया है।

५ इन्द्र, द्युलोक पर्यन्त प्रदेशसे भी तुम प्रधान हो। पार्थिव लोक (रजोलोक) तुम्हें नहीं व्याप्त कर सकता। तुम हमारा अन्न ले जानेकी इच्छा करो।

नकिः परिष्टिर्मघवन्मघस्य ते यद्दाशुषे दशस्यसि ।
अस्माकं बोध्युचथस्य चोदिता मंहिष्ठो वाजसातये ॥६॥

७८ सूक्त

इन्द्र देवता । नृमेध और पुरुमेध ऋषि । अनुष्टुप् और बृहती छन्द ।

बृहदिन्द्राय गायत मरुतो वृत्रहन्तमम् ।
येन ज्योतिरजनयन्नृतावृधो देवं देवाय जागृवि ॥१॥
अपाधमदभिशस्तीरशस्तिहाथेन्द्रो द्युम्न्याभवत् ।
देवास्त इन्द्र सख्याय येमिरे बृहद्भानो मरुद्गण ॥२॥
प्र व इन्द्राय बृहते मरुतो ब्रह्मार्चत ।
वृत्रं हनति वृत्रहा शतक्रतुर्वज्रेण शतपर्वणा ॥३॥
अभि प्र भर धृषता धृषन्मनः श्रवश्चित्ते असद्बृहत् ।
अर्षन्त्वापो जवसा वि मातरो हनो वृत्रं जया स्वः ॥४॥

---

६ धनी इन्द्र, हव्य—दाताको जो धन तुम देते हो, उसमें कोई बाधक नहीं है। तुम धन-प्रेरक और अतीव दान-शील होकर धन-प्राप्तिके लिये हमारे उचथ्यके स्तोत्रको जानो ।



१ मरुतो, इन्द्रके लिये पाप-विनाशक और विशाल गान करो। यज्ञवर्द्धक विश्वदेवोंने द्युतिमान इन्द्रके लिये इस गानके द्वारा दीप्त और सदा जागरूक ज्योति (सूर्य) को उत्पन्न किया।

२ स्तोत्र-शून्य लोगोंके विनाशक इन्द्रने शत्रुकी हिंसाको दूर किया था। अनन्तर इन्द्र प्रकाशक और यशस्वी हुए थे। विशाल दीप्ति और मरुतोंसे युक्त इन्द्र, देवोंने तुम्हारी मैत्रीके लिये तुम्हें स्वीकृत किया था।

३ मरुतो, इन्द्र महान् हैं। उनके लिये स्तोत्रका उच्चारण करो। वृत्रघ्न और शतक्रतु इन्द्रने सौ सन्धियोंवाले वज्रसे वृत्रका वध किया था।

४ शत्रु-बधके लिये प्रस्तुत इन्द्र, तुम्हारे पास बहुत अन्न है। तुम सुदृढ़ चित्तसे हमें वह अन्न दो। इन्द्र, हमारे मातृ-रूप जल वगसे विविध भूमियोंकी ओर जायँ। जलको रोकनेवाले वृत्रका नाश करो। स्वर्गको (वा प्राणियोंको) जीतो।

यज्जायथा अपूर्व्य मघवन्वृत्रहत्याय ।
तत् पृथिवीमप्रथयस्तदस्तभ्ना उत द्याम् ॥५॥
तत्ते यज्ञो अजायत तदर्क उत हस्कृतिः ।
तद्विश्वमभिभूरसि यज्जातं यच्च जन्त्वम् ॥६॥
आमासु पक्वमैरय आ सूर्यं रोहयो दिवि ।
घर्मं न सामन्तपता सुवृक्तिभिर्जुष्टं गिर्वणसे बृहत् ॥७॥



७९ सूक्त

इन्द्र देवता। नृमेध और पुरुमेध ऋषि। सतोबृहती छन्द।

आ नो विश्वासु हव्य इन्द्रः समत्सु भूषतु ।
उप ब्रह्माणि सवनानि वृत्रहा परमज्या ऋचीषमः ॥१॥
त्वं दाता प्रथमो राधसामस्यसि सत्य ईशानकृत् ।
तुविद्युम्नस्य युज्या वृणीमहे पुत्रस्य शवसो महः ॥२॥

---

५ अपूर्व धनी इन्द्र, वृत्र-वधके लिये जिस समय तुम प्रकट हुए, उस समय तुमने पृथिवीको दृढ़ किया और द्युलोकको रोका।

६ उस समय तुम्हारे लिये यज्ञ उत्पन्न हुआ और प्रसन्नता-दायक मन्त्र उत्पन्न हुए। उस समय तुमने समस्त उत्पन्न और उत्पन्न होनेवाले संसारको अभिभूत किया।

७ इन्द्र, उस समय तुमने अपक्व दूधवाली गायोंमें पक्व दूध उत्पन्न किया और द्युलोकमें सूर्यको चढ़ाया। साम-मन्त्रोंके द्वारा प्रतप्त्र्य सामके समान शोभन स्तुतियोंसे इन्द्रका बड़ाई। स्तुति-भोगी इन्द्रके लिये हर्षदाता और विशाल सामका गान करो।



१ सारे युद्धोंमें बुलाने योग्य इन्द्र हमारे स्तोत्रका आश्रय करें। तीनों सवनोंकी सेवा करो। वह वृत्रघ्न हैं। उनकी ज्या (प्रत्यञ्चा) अविनाशी है। वह स्तुतिके द्वारा सामने करने योग्य हैं।

२ इन्द्र, तुम सबके मुख्य धन-प्रद हो, तुम सत्य हो। तुम स्तोताओंको ऐश्वर्य-शाली करो। तुम बहुत धनवाले और बलके पुत्र हो। तुम महान् हो। तुम्हारे योग्य धनका हम आश्रय करते हैं।

ब्रह्मा त इन्द्र गिर्वणः क्रियन्ते अनतिद्भुता ।
इमा जुषस्व हर्यश्व योजनेन्द्र या ते अमन्महि ॥३॥
त्वं हि सत्यो मघवन्ननानतो वृत्रा भूरि न्यृञ्जसे ।
स त्वं शविष्ठ वज्रहस्त दाशुषेर्वाञ्चं रयिमा कृधि ॥४॥
त्वमिन्द्र यशा अस्यृजीषी शवसस्पते ।
त्वं वृत्राणि हंस्य प्रतीन्येक इदनुत्ता चर्षणीधृता ॥५॥
तमु त्वा नूनमसुर प्रचेतसं राधो भागमिवेमहे ।
महीव कृत्तिः शरणा त इन्द्र प्र ते सुम्ना नो अश्नवन् ॥६॥

८० सूक्त

इन्द्र देवता । अपाला (अत्रिकी पुत्री) ऋषि । पङ्क्ति और अनुष्टुप् छन्द ।

कन्या वारवायती सोममपि स्रुताविदत् ।
अस्तं भरन्त्यब्रवीदिन्द्राय सुनवै त्वा शक्राय सुनवै त्वा ॥१॥

---

३ स्तुत्य इन्द्र, तुम्हारे लिये हम जो यथार्थ स्तोत्र करते हैं, हर्यश्व, उसमें तुम युक्त होओ और उसकी सेवा करो। तुम्हारे लिये हम जितने स्तोत्रोंका उच्चारण करते हैं, उनकी भी सेवा करो ।

४ धनी इन्द्र, तुम सत्य हो । तुमने किसीसे भी न दबकर अनेक राक्षसोंका नाश किया है। इन्द्र, जैसे हव्यदाताके पास धन पहुँचे, वैसा करो ।

५ बलाधिपति इन्द्र, तुम अभिषुत सोमवाले होकर यशस्वी बने हो । तुमने अकेले ही किसीके द्वारा न जाने योग्य और न जीतने योग्य राक्षसोंको, मनुष्योंके रक्षक वज्रके द्वारा मारा है ।

६ बली (असुर) इन्द्र, तुम उत्तम ज्ञानवाले हो। तुम्हारे ही समीप हम पैतृक धनके भागके समान धनकी याचना करते हैं। इन्द्र, तुम्हारी कीर्त्तिके समान तुम्हारा गृह द्युलोकमें, विशाल रूपसे, अवस्थित है। तुम्हारे सारे सुख हमें व्याप्त करें।

---

१ जलकी ओर स्नानके लिये जाते समय कन्या (अपाला = मैं) ने इन्द्रको प्रसन्न करनेके लिये (अपने चर्म-रोग-विनाशके निमित्त) मार्गमें सोमको प्राप्त किया । मैं उस सोमको घर ले आनेके समय सोमसे कहा—"इन्द्रके लिये तुम्हें मैं अभिषुत करती हूँ—समर्थ इन्द्रके लिये तुम्हें अभिषुत करती हूँ।"

असौ य एषि वीरको गृहंगृहं विचाकशत् ।
इमं जंभसुतं पिब धानावन्तं करम्भिणमपूपवन्तमुक्थिनम् ॥२॥
आ चन त्वा चिकित्सामोऽधि चन त्वा नेमसि ।
शनैरिव शनकैरिवेन्द्रायेन्दो परि स्रव ॥३॥
कुविच्छकत् कुवित् करत् कुविन्नो वस्यसस्करत् ।
कुवित् पतिद्विषो यतीरिन्द्रेण संगमामहै ॥४॥
इमानि त्रीणि विष्टपा तानीन्द्र वि रोहय ।
शिरस्ततस्योर्वरामादिदं म उपोदरे ॥५॥
असौ च या न उर्वरादिमां तन्वं मम ।
अथो ततस्य यच्छिरः सर्वा ता रोमशा कृधि ॥६॥
खे रथस्य खेनसः खे युगस्य शतक्रतो ।
अपालामिन्द्र त्रिष्पूत्व्यकृणोः सूर्यत्वचम् ॥७॥



२ इन्द्र, तुम वीर, अतीव दीप्तिमान् और प्रत्येक गृहमें जानेवाले हो। भूने हुए जौ, सत्तू पुरोडाशादि तथा उक्थ स्तुतिसे युक्त एवम् (मेरे) दाँतोंके द्वारा अभिषुत सोमका पान

३ इन्द्र, तुम्हें हम जाननेकी इच्छा करती हैं। इस समय तुम्हें हम नहीं प्राप्त होती हैं। इन्द्रके लिये पहले धीरे-धीरे, पीछे जोरसे (दाँतोंसे) बहो।

४ वह इन्द्र हमें (अपाला और स्तोता लोगोंको) अथवा पूजार्थ अपालाके लिये समर्थ बनावें। हमें बहुसङ्ख्यक करें। वह हमें अनेक बार धनी करें। हम पतिके द्वारा छोड़ी यहाँ आयी हैं। हम इन्द्रके साथ मिलेंगी।

५ इन्द्र, मेरे पिताका मस्तक (केश-रहित) और खेत तथा मेरे उदरके पासके स्थान (गुह्येन्द्रि इन तीनों स्थानोंको उत्पादक बनाओ।

६ हमारे पिताका जो ऊसर खेत है तथा मेरे शरीर (गोपनीय इन्द्रिय) और पिताका मस्त (चर्म रोगके कारण लोम-शून्य है)—इन तीनों स्थानोंको उर्वर और रोम-युक्त करो।

७ शतसङ्ख्यक यज्ञवाले इन्द्र, अपने रथके बड़े छिद्र, शकटके (कुछ छोटे छिद्र और युग (जोड़े छोटे छिद्रको निष्कर्षण (अपनयन)के द्वारा शोधन करके अपालाको सूर्यके समान, चर्म-युक्त किया था।

८१ सूक्त

इन्द्र देवता श्रुतकक्ष वा सुकक्ष ऋषि। अनुष्टुप् और गायत्री छन्द।

पान्तमा वो अन्धस इन्द्रमभि प्र गायत।

विश्वासाहं शतक्रतुं मंहिष्ठं चर्षणीनाम् ॥१॥

पुरुहूतं पुरुष्टुतं गाथान्यं सनश्रुतम्। इन्द्र इति ब्रवीतन ॥२॥

इन्द्र इन्नो महानां दाता वाजानां नृतुः। महाँ अभिज्ञ्वा यमत् ॥३॥

अपादु शिप्र्यन्धसः सुदक्षस्य प्रहोषिणः। इन्दोरिन्द्रो यवाशिरः ॥४॥

तम्वभि प्रार्चतेन्द्रं सोमस्य पीतये। तदिद्ध्यस्य वर्धनम् ॥५॥

अस्य पीत्वा मदानां देवो देवस्यौजसा। विश्वाभि भुवना भुवत् ॥६॥

त्यमु वः सत्रासाहं विश्वासु गीर्ष्वायतम्। आ च्यावयस्यूतये ॥७॥

युध्मं सन्तमनर्वाणं सोमपामनपच्युतम्। नरमवार्यक्रतुम् ॥८॥

---

१ ऋत्विको, अपने सोम-पाता इन्द्रकी, विशेष रूपसे, स्तुति करो। वह सबके पराभवकर्त्ता, शत-याज्ञिक और मनुष्योंको सर्वापेक्षा अधिक धन देनेवाले हैं।

२ तुमलोग बहुतोंके द्वारा आहूत, अनेकोंके द्वारा स्तुत, गानयोग्य और सनातन कहकर प्रसिद्ध देवको इन्द्र कहना।

३ इन्द्र ही हमारे महान् धनके दाता, महान् अन्नके प्रदाता और सबको नचानेवाले हैं। महान् इन्द्र हमारे सम्मुख आकर हमें धन दें।

४ सुन्दर शिरस्त्राणवाले इन्द्रने होता और निपुण ऋषिके जौसे मिले और चूनेवाले सोमको, भली भाँति, पिया था।

५ सोम-पानके लिये तुम लोग इन्द्रकी विशेष रूपसे पूजा करो। सोम ही इन्द्रको वर्द्धित करता है।

६ प्रकाशमान इन्द्र सोमके मदकर रसको पीकर बलके द्वारा सारे भुवनोंको दबाते हैं।

७ सबको दबानेवाले और तुम्हारे सारे स्तोत्रोंमें विस्तृत इन्द्रको ही, रक्षणके लिये, सामने बुलाओ।

८ इन्द्र शत्रुओंको मारनेवाले सत्, राक्षसोंके द्वारा अगम्य, अहिंसित, सोम-पाता और सबके नेता हैं। इनके कर्ममें कोई बाधा नहीं दे सकता।

शिक्षा ण इन्द्र राय आ पुरु विद्वाँ ऋचीषम । अवा नः पार्ये धने ॥९॥
अतश्चिन्द्रि ण उपा याहि शतवाजया । इषा सहस्रवाजया ॥१०॥
अयाम धीवतो धियोर्वद्भिः शक्र गोदरे । जयेम पृत्सु वज्रिवः ॥११॥
वयमु त्वा शतक्रतो गावो न यवसेष्वा । उक्थेषु रणयामसि ॥१२॥
विश्वा हि मर्त्यत्वनानुकामा शतक्रतो । अगन्म वज्रिन्नाशसः ॥१३॥
त्वे सु पुत्र शवसोवृत्रन् कामकातयः । न त्वामिन्द्रातिरिच्यते ॥१४॥
स नो वृषन्त्सनिष्ठया संघोरया द्रवित्न्वा धियाविड्ढि पुरन्ध्या ॥१५॥
यस्ते नूनं शतक्रतविन्द्र द्युम्नितमो मदः । तेन नूनं मदे मदेः ॥१६॥
यस्ते चित्रश्रवस्तमो य इन्द्र वृत्रहन्तमः । य ओजोदातमो मदः ॥१७॥

९ स्तुतिके द्वारा सम्बोधनके योग्य इन्द्र, तुम विद्वान् हो। शत्रुओंसे लेकर हमें बहु वार धन... शत्रु-धनके द्वारा हमारी रक्षा करो।

१० इन्द्र, इस द्युलोकसे ही सौ और सहस्र बलों तथा अन्नसे युक्त होकर हमारे समीप आ...

११ समर्थ इन्द्र, हम कर्मवाले हैं। युद्ध-विजयके लिये हम कर्म करेंगे। पर्वत-विदारक और वज्र... इन्द्र, हम युद्धमें अश्वोंके द्वारा जय लाभ करेंगे।

१२ जैसे गोपाल तृणोंके द्वारा गायोंको सन्तुष्ट करता है, वैसे ही हे बहुकर्मा इन्द्र, तुम्हें... ओरसे उक्थ स्तोत्रके द्वारा हम सन्तुष्ट करेंगे।

१३ शतक्रतु इन्द्र, सारा संसार अभिलाषी है। वज्रधर इन्द्र, हम भी धनादि अभिलाषा... प्राप्त करेंगे।

१४ बलके पुत्र इन्द्र, अभिलाषाके कारण कातर शब्दवाले मनुष्य तुमको ही आश्रित कर... इसलिये, हे इन्द्र, कोई भी देव तुम्हें नहीं लाँघ सकते।

१५ अभिलाषा-दाता इन्द्र, तुम सबकी अपेक्षा धन-दाता हो। तुम भयंकर शत्रुको दूर करने... और अनेकोंका धारण करनेमें समर्थ हो। तुम कर्मके द्वारा हमें पालन करो।

१६ बहुविध-कर्मा इन्द्र, जिस सबसे अधिक यशस्वी सोमको, पूर्वकालमें, तुम्हारे लिये, हमने अभिषुत किया था, उसके द्वारा प्रमत्त होकर इस समय हमें प्रमत्त करो।

१७ इन्द्र, तुम्हारी प्रमत्तता नाना प्रकारकी कीर्त्तियोंसे युक्त है। वह हमारे द्वारा अभिषुत हो... सबसे अधिक पापनाशक और बल-दाता है।

विद्मा हि यस्ते अद्रिवस्त्वादत्तः सत्य सोमपाः ।
विश्वासु दस्म कृष्टिषु ॥१८॥
इन्द्राय मद्वने सुतं परिष्टोभन्तु नो गिरः । अर्कमर्चं तुकारवः ॥१९॥
यस्मिन्विश्वा अधि श्रियो रणन्ति सप्त संसदः । इन्द्रं सुते हवामहे ॥२०॥
त्रिकद्रुकेषु चेतनं देवासो यज्ञमत्नत । तमिद्वर्धन्तु नो गिरः ॥२१॥
आ त्वा विशन्त्विन्दवः समुद्रमिव सिन्धवः । न त्वामिन्द्रातिरिच्यते ॥२२॥
विव्यक्थ महिना वृषन् भक्षं सोमस्य जागृवे । य इन्द्र जठरेषु ते ॥२३॥
अरं त इन्द्र कुक्षये सोमो भवतु वृत्रहन् । अरं धामभ्य इन्दवः ॥२४॥
अरमश्वाय गायति श्रुतकक्षो अरं गवे । अरमिन्द्रस्य धाम्ने ॥२५॥
अरं हि ष्मा सुतेषु णः सोमेष्विन्द्र भूषसि । अरं त शक्र दावने ॥२६॥

---

१८ वज्रधर, यथार्थकर्मा, सोमपाता और दर्शनीय इन्द्र, सारे मनुष्योंमें जो तुम्हारा दिया हुआ धन है, उसे ही हम जानते हैं।

१९ मत्त इन्द्रके लिये हमारे स्तुति-वचन अभिषुत सोमकी स्तुति करें। स्तोता लोग पूजनीय सोमकी पूजा करें।

२० जिन इन्द्रमें सारी कान्तियाँ अवस्थित हैं और जिनमें सात होत्रक, सोम-प्रदानके लिये, प्रसन्न होते हैं, उन्हीं इन्द्रको, सोमाभिषव होनेपर, हम बुलाते हैं।

२१ देवो, तुम लोगोंने त्रिकद्रुक (ज्योति, गौ और आयु) के लिये ज्ञान-साधक यज्ञका विस्तार किया था। हमारे स्तुति-वाक्य उसी यज्ञको वर्द्धित करें।

२२ जैसे नदियाँ समुद्रमें जाती हैं, सारे सोम तुममें प्रविष्ट हों। इन्द्र तुम्हें कोई नहीं लाँघ सकता।

२३ मनोरथ-पूरक और जागरणशील इन्द्र, तुम अपनी महिमासे सोम-पानमें व्याप्त हुए हो। वह सोम तुम्हारे उदरमें पैठता है।

२४ वृत्रघ्न इन्द्र, तुम्हारे उदरके लिये सोम पर्याप्त हो। चूनेवाला सोम तुम्हारे शरीरमें यथेष्ट हो।

२५ श्रुतकक्ष (मैं) अश्व-प्राप्तिके लिये, अतीव गान करता है। इन्द्रके गृहके लिये खूब गाता है।

२६ इन्द्र, सोमाभिषव होनेपर, पानके लिये, तुम पर्याप्त हो। समर्थ इन्द्र, तुम्हीं धनद हो। तुम्हारे लिये सोम पर्याप्त हो।

पराकात्ताच्चिदद्रिवस्त्वां नक्षन्त नो गिरः । अरं गमाम ते वयम् ॥२७॥

एवा ह्यसि वीरयुरेवा शूर उत स्थिरः । एवा ते राध्यं मनः ॥२८॥

एवा रातिस्तुवीमघ विश्वेभिर्धायि धातृभिः ।

अधा चिदिन्द्र मे सचा ॥२९॥

मो षु ब्रह्मेव तन्द्रयुर्भुवो वाजानां पते । मत्स्वा सुतस्य गोमतः ॥३०॥

मा न इन्द्राभ्या दिशः सूरो अक्तुष्वा यमन् । त्वा युजा वनेम तत् ॥३१॥

त्वयेदिन्द्र युजा वयं प्रति ब्रुवीमहि स्पृधः । त्वमस्माकं तव स्मसि ॥३२॥

त्वामिद्धि त्वायवोननोनुवतश्चरान् । सखाय इन्द्र कारवः ॥३३॥

---

२७ वज्रधर इन्द्र, हमारे स्तुति-वाक्य, दूर रहनेपर भी, तुम्हें व्याप्त करें। हम स्तोता। तुम्हारे पाससे हम प्रचुर धन प्राप्त करेंगे।

२८ इन्द्र, तुम वीरोंकी ही इच्छा करते हो। तुम शूर और धैर्यवाले हो। तुम्हारे मनकी आराधना सबको करनी चाहिये।

२९ बहु-धनी इन्द्र, सारे यजमान तुम्हारे दानको धारण करते हैं। इन्द्र, तुम मेरे सहायक बनो।

३० अन्नपति इन्द्र, तुम तन्द्रा-युक्त ब्राह्मण स्तोताके समान नहीं होना। अभिषुत और क्षीरादिसे युक्त सोमके पानसे हृष्ट होना।

३१ इन्द्र, आयुध फेंकनेवाले सूर (राक्षस) रात्रि-कालमें हमें नियन्त्रित न करें। तुम्हारी सहायतासे हम उनका विनाश करेंगे।

३२ इन्द्र, तुम्हारी सहायता प्राप्त करके हम शत्रुओंको दूर करेंगे। तुम हमारे हो। हम तुम्हारे हैं।

३३ इन्द्र, तुम्हारी अभिलाषा करके तथा बार-बार तुम्हारी स्तुति करके तुम्हारे बन्धु-स्वरूप स्तोतालोग तुम्हारी सेवा करते हैं।

९३ सूक्त

इन्द्र देवता। सुकक्ष ऋषि। गायत्री छन्द।

उद्घेदभि श्रुतामघं वृषभं नर्यापसम्। अस्तारमेषि सूर्य ॥१॥
नव यो नवतिं पुरो बिभेद बाह्वोजसा। अहिं च वृत्रहावधीत् ॥२॥
स न इन्द्रः शिवः सखाश्वावद्गोमद्यवमत्। उरुधारेव दोहते ॥३॥
यदद्य कच्च वृत्रहन्नुदगा अभि सूर्य। सर्वं तदिन्द्र ते वशे ॥४॥
यद्वा प्रवृद्ध सत्पते न मरा इति मन्यसे। उतो तत् सत्यमित्तव ॥५॥
ये सोमासः परावति ये अर्वावति सुन्विरे। सर्वांस्ताँ इन्द्र गच्छसि ॥६॥
तमिन्द्रं वाजयामसि महे वृत्राय हन्तवे। स वृषा वृषभो भुवत् ॥७॥
इन्द्रः स दामने कृत ओजिष्ठः स मदे हितः।
द्युम्नी श्लोकी स सोम्यः ॥८॥

---

१ सुवीर्य (सूर्यात्मक) इन्द्र, प्रसिद्ध धनवाले, मनोरथ-पूरक, मनुष्य-हितैषी कर्मवाले और उदार यजमानकी चारो ओर उदित होते हो।

२ जिन्होंने बाहु-बलसे ९९ पुरियोंको (दिवोदासके लिये) बिनष्ट किया और जिन वृत्र-हन्ता इन्द्रने मेघका बध किया था—

३ वे ही कल्याणकारी और बन्धु इन्द्र, हमारे लिये अश्व, गौ और जौसे युक्त धनको, यथेष्ट दूधवाली गायके समान, दूहें।

४ वृत्रघ्न और सूर्य इन्द्र, आज जो पदार्थ हैं, उनके सामने प्रकट हुए हो। इस प्रकार सारा संसार तुम्हारे वशमें हुआ है।

५ प्रवृद्ध और सत्पति इन्द्र, यदि तुम अपनेको अमर मानते हो, तो ठीक ही है।

६ दूर अथवा निकटवर्त्ती प्रदेशमें जो सब सोम अभिषुत होते हैं, इन्द्र, तुम उनके सामने जाते हो।

७ हम महान् वृत्रके बधके लिये उन इन्द्रको ही बली करेंगे। धन-वर्षक इन्द्र, अभिलाषा-दाता हों।

८ वह इन्द्र धनदानके लिये प्रजापतिके द्वारा सृष्ट हुए हैं। वह सबकी अपेक्षा ओजस्वी, सोम-पानके लिये स्थापित, अतीव कीर्त्तिशाली, स्तुतिवाले और सोम-योग्य हैं।

गिरा वज्रो न सम्भृतः सबलो अनपच्युतः । ववक्ष ऋष्वो अस्तृतः ॥९॥
दुर्गे चिन्नः सुगंकृधि गृणान इन्द्र गिर्वणः । त्वं च मघवन्वशः ॥१०॥
यस्य ते नू चिदादिशं न मिनन्ति स्वराज्यं । न देवो नाध्रिगुर्जनः ॥११॥
अधा ते अप्रतिष्कुतं देवी शुष्मं सपर्यतः । उभे सुशिप्र रोदसी ॥१२॥
त्वमेतदधारयः कृष्णासु रोहिणीषु च । परुष्णीषुरुशत् पयः ॥१३॥
वि यदहेरध त्विषोविश्वे देवासो अक्रमुः । विदन्मृगस्य ताँ अमः ॥१४॥
आदु मे निवरो भुवद्वृत्रहादिष्ट पौंस्यम् । अजातशत्रुरस्तृतः ॥१५॥
श्रुतं वो वृत्रहन्तमं प्र शर्धं चर्षणीनाम् । आ शुषे राधसे महे ॥१६॥
अया धिया च गव्यया पुरुणामन् पुरुष्टुत । यत् सोमेसोम आभवः ॥१७॥
बोधिन्मना इदस्तु नो वृत्रहा भूर्यासुतिः । शृणोतु शक्र आशिषम् ॥१८॥

९ स्तुति-वचनोंके द्वारा वज्रके समान तेज, बली, अपराजित, महान् और अहिंसित इन्द्र आदिका वहन करनेकी इच्छा करते हैं।

१० स्तुति-योग्य इन्द्र, धनी इन्द्र, यदि तुम हमारी इच्छा करते हो, तो तुम स्तुत होकर दुर्गम स्थानमें भी हमारे लिये सुगम पथ कर दो।

११ इन्द्र, आज भी तुम्हारे बल और तुम्हारे राज्यकी कोई हिंसा नहीं करता। देवता भी हिंसा नहीं करते और संग्राम क्षिप्रकारी वीर भी तुम्हारी हिंसा नहीं करता।

१२ शोभन जबड़ोंवाले इन्द्र, द्यावापृथिवी—दोनों देवी तुम्हारे न रोकने योग्य बलकी सेवा करती हैं।

१३ तुम काली और लाल गायोंमें प्रकाशमान दूध देते हो।

१४ जिस समय सारे देवता वृत्रासुरके तेजसे भाग गये थे और वे मृग-रूपी वृत्रसे भीत हुए थे,

१५ उस समय मेरे इन्द्रदेव वृत्रके हन्ता हुए थे। आजतशत्रु और वृत्रघ्न इन्द्रने अपने पौरुषका प्रयोग किया था।

१६ ऋत्विको, प्रख्यात, वृत्रघ्न और बली इन्द्रकी स्तुति करके मैं तुम्हारे लिये यथेष्ट दान दूँ।

१७ अनेक नामोंवाले और बहुतोंके द्वारा स्तुत इन्द्र, जब कि, तुम प्रत्येक सोम पानमें उपस्थित हुए हो। तब हम गौ चाहनेवाली बुद्धिवाले होंगे।

१८ वृत्र-हन्ता और अनेक अभिषवोंसे युक्त इन्द्र, हमारे मनोरथको समझें। शक्र (युद्धमें शत्रु-वध समर्थ इन्द्र) हमारी स्तुतिको सुनें।

कया स्तोतृभ्य आ भर ॥१९॥

कया त्वं न ऊत्याभि प्र मन्दसे वृषन् । कया स्तोतृभ्य आ भर ॥१९॥

कस्य वृषा सुते सचा नियुत्वान्वृषभो रणत् । वृत्रहा सोमपीतये ॥२०॥

अभी षु णस्त्वं रयिं मन्दसानः सहस्रिणम् । प्रयन्ता बोधि दाशुषे ॥२१॥

पत्नीवन्तः सुता इम उशन्तो यन्ति वीतये । अपां जग्मिर्निचुम्पुणः ॥२२॥

इष्टा होत्रा असृक्षतेन्द्रं वृधासो अध्वरे । अच्छावभृथमोजसा ॥२३॥

इह त्या सधमाद्या हरी हिरण्यकेश्या । वोळ्हामभि प्रयो हितम् ॥२४॥

तुभ्यं सोमाः सुता इमे स्तीर्णं बर्हिर्विभावसो । स्तोतृभ्य इन्द्रमावह ॥२५॥

आ ते दक्षं वि रोचना दधद्रत्ना वि दाशुषे । स्तोतृभ्य इन्द्रमर्चत ॥२६॥

आ ते दधामीन्द्रियमुक्था विश्वा शतक्रतो । स्तोतृभ्य इन्द्र मृळय ॥२७॥

---

१९ अभीष्ट-वर्षक इन्द्र, तुम किस आश्रय अथवा सेवाके द्वारा हमें प्रमत्त करोगे ? किस सेवाके द्वारा स्तोताओंको धन दोगे ?

२० अभीष्टवर्षक, सेचक, वृत्रघ्न और मरुतोंवाले इन्द्र किसके यज्ञमें, सोम-पानके लिये, ऋत्विकोंके साथ, विहार करते हैं ?

२१ तुम मत्त होकर हमें सहस्र-सङ्ख्यक धन दो । तुम अपनेको हव्यदाता नियन्ता समझो।

२२ यह सब जल-युक्त (ऋजीष-रूप) सोम अभिषुत हुआ है । इन्द्र पान करें—इसी इच्छासे सारा सोम इन्द्रके पास जाता है। पीनेपर सोम प्रसन्नता देता है। सोम (ऋजीष-रूप) जलके पास जाता है ।

२३ यज्ञमें वर्द्धक और यज्ञ-कर्त्ता सात होता यज्ञ और दिनके अन्तमें तेजस्वी होकर इन्द्रका विसर्जन करते हैं ।

२४ प्रख्यात इन्द्रके साथ प्रमत्त और सुवर्ण-केशवाले हरि नामक अश्व, हितकर अन्नकी ओर, इन्द्रको ले जाय ।

२५ प्रकाशमान धनवाले अग्नि, तुम्हारे लिये यह सोम अभिषुत हुआ है। तुम्हारे लिये यह सोम अभिषुत हुआ है—कुश भी बिछाया हुआ है; इसलिये स्तोताओंके सोम-पानके लिये इन्द्रको बुलाओ ।

२६ ऋत्विग्-यजमानो, इन्द्रको हवि देनेवाले तुम्हारे लिये इन्द्र दीप्यमान बल भेजें—रत्न भेजें । स्तोताओंके लिये भी इन्द्र बल-रत्नादि प्रेरित करें । तुम इन्द्रकी पूजा करो ।

२७ शतक्रतु (शतप्रज्ञ) इन्द्र, तुम्हारे लिये वीर्यवान् सोम और समस्त स्तोत्रोंका मैं सम्पादन करता हूँ । इन्द्र, स्तोताओंको सुखी करो ।

भद्रं भद्रं न आभरेषमूर्जं शतक्रतो । यदिन्द्र मृळयासि नः ॥२८॥
स नो विश्वान्याभर सुवितानि शतक्रतो । यदिन्द्र मृळयासि नः ॥२९॥
त्वामिद्वृत्रहन्तम सुतावन्तो हवामहे । यदिन्द्र मृळयासि नः ॥३०॥
उप नो हरिभिः सुतं याहि मदानां पते । उप नो हरिभिः सुतम् ॥३१॥
द्विता यो वृत्रहन्तमो विद इन्द्रः शतक्रतुः । उप नो हरिभिः सुतम् ॥३२॥
त्वं हि वृत्रहन्नेषां पाता सोमानामसि । उप नो हरिभिः सुतम् ॥३३॥
इन्द्र इषे ददातु न ऋभुक्षणमृभुं रयिम् । वाजी ददातु वाजिनम् ॥३४॥

१० अनुवाक । ८३ सूक्त

मरुद्गण देवता । बिन्दु अथवा पूतदक्ष ऋषि । गायत्री छन्द ।

गौर्धयति मरुतां श्रवस्युर्माता मघोनाम् । युक्ता वह्नी रथानाम् ॥१॥

---

२८ इन्द्र, यदि तुम हमें सुखी करना चाहो, तो हे शतक्रतु, तुम हमें कल्याण दो, अन्न दो, बल दो ।

२९ इन्द्र, यदि तुम हमें सुखी करना चाहते हो, तो हे शतक्रतु, हमारे लिये सारे मङ्गल ले आओ।

३० इन्द्र, तुम हमें सुखी करनेकी इच्छा करते हो; इसलिये, हे श्रेष्ठ असुर-घातक, अभिषुत-सोम-युक्त होकर तुम्हें बुलाते हैं ।

३१ सोमपति इन्द्र, हरि अश्वोंकी सवारीसे हमारे अभिषुत सोमके पास आओ—अभिषुत सोमके पास आओ।

३२ श्रेष्ठ, वृत्रघ्न और शतक्रतु इन्द्र दो प्रकारसे जाने जाते हैं। इसलिये, वही तुम, हरियोंकी सवारीसे हमारे अभिषुत सोमके पास आओ।

३३ वृत्रघ्न इन्द्र, तुम इस सोमके पान कर्त्ता हो; इसलिये हरियोंके साथ अभिषुत सोमके पास आओ।

३४ इन्द्र अन्नके दाता और अमर ऋभुदेवको (अन्न-प्राप्तिके लिये) हमें दें। बलवान् इन्द्र वाज नामक उनके भ्राताको भी हमें दें।

---

१ धनी मरुतोंकी माता गौ अपने पुत्र मरुतोंको सोम-पान कराती है। वह गौ अन्नाभिलाषिणी, मरुतोंको रथमें लगानेवाली और पूजनीया है।

सूर्यामासा दृशे कम् ॥२॥
यस्या देवा उपस्थे व्रता विश्वे धारयन्ते । सूर्यामासा दृशे कम् ॥२॥
तत् सु नो विश्वे अर्य आ सदागृणन्ति कारवः । मरुतः सोमपीतये ॥३॥
अस्ति सोमो अयं सुतः पिबन्त्यस्य मरुतः । उत स्वराजो अश्विना ॥४॥
पिबन्ति मित्रो अर्यमा तना पूतस्य वरुणः । त्रिषधस्थस्य जावतः ॥५॥
उतो न्वस्य जोषमाँ इन्द्रः सुतस्य गोमतः । प्रातर्होतेव मत्सति ॥६॥
कदत्विषन्त सूरयस्तिर आपइव स्रिधः । अर्षन्ति पूतदक्षसः ॥७॥
कद्वो अद्य महानां देवानामवो वृणे । त्मना च दस्मवर्चसाम् ॥८॥
आ ये विश्वा पार्थिवानि पप्रथन्रोचना दिवः । मरुतः सोमपीतये ॥९॥
त्यान्नु पूतदक्षसो दिवो वो मरुतो हुवे । अस्य सोमस्य पीतये ॥१०॥

२ सारे देवगण गौकी गोदमें वर्त्तमान रहकर अपने-अपने व्रतको धारण करते हैं । सूर्य और चन्द्रमा भी, सारे लोकोंके प्रकाशनके लिये, इसके समीप रहते हैं ।

३ हमारे सर्वत्रगामी स्तोता लोग सदा सोम-पानके लिये मरुतोंकी स्तुति करते हैं ।

४ यह सोम अभिषुत हुआ है । स्वभावतः प्रदीप्त मरुद्गण और अश्विद्वय इसके अंशका पान करें ।

५ मित्र, अर्यमा और वरुण "दशापवित्र"के द्वारा शोधित तीन स्थानों (द्रोण, कलशाधवनीय और पूतभृत्) में स्थापित तथा जनवाले सोमका पान करें ।

६ इन्द्र प्रातःकालमें, होताके समान, अभिषुत और गव्य (क्षीरादि) से युक्त सोमकी सेवाकी प्रशंसा करते हैं ।

७ प्राज्ञ मरुद्गण, सलिलके सदृश, टेढ़ी गतिवाले होकर, कब प्रदीप्त होंगे ? शत्रुहन्ता मरुद्गण, शुद्ध-बल होकर, कब हमारे यज्ञमें आवेंगे ?

८ मरुतो, तुमलोग महान् हो और दर्शनीय तेजवाले हो । तुम द्युतिमान् हो । मैं कब तुम्हारा पालन पाऊँगा ?

९ जिन मरुतोंने सारी पार्थिव वस्तुओं और द्युलोककी ज्योतियोंको सर्वत्र विस्तारित किया है, सोम-पानके लिये, उन्हींको मैं बुलाता हूँ ।

१० मरुतो, तुम्हारा बल पवित्र है । तुम अतीव द्युतिमान् हो । इस सोमके पानके लिये तुम्हें शीघ्र बुलाता हूँ ।

त्यान्नु ये वि रोदसी तस्तभुर्मरुतो हुवे । अस्य सोमस्य पीतये ॥११॥
त्यं नु मारुतं गणं गिरिष्ठां वृषणं हुवे । अस्य सोमस्य पीतये ॥१२॥



८४ सूक्त

इन्द्र देवता । आङ्गिरस तिरश्ची ऋषि । अनुष्टुप् छन्द ।

आ त्वा गिरो रथीरिवास्थुः सुतेषु गिर्वणः ।
अभि त्वा समनूषतेन्द्र वत्सं न मातरः ॥१॥
आ त्वा शुक्रा अचुच्यवुः सुतास इन्द्र गिर्वणः ।
पिबा त्वस्यान्धस इन्द्र विश्वासु ते हितम् ॥२॥
पिबा सोमं मदाय कमिन्द्र श्येनाभृतं सुतम् ।
त्वं हि शश्वतीनां पती राजा विशामसि ॥३॥
श्रुधी हवं तिरश्च्या इन्द्र यस्त्वा सपर्यति ।
सुवीर्यस्य गोमतो रायस्पूर्धि महाँ असि ॥४॥

---

११ जिन्होंने द्यावापृथिवीको स्तब्ध किया है, उन्हींको, इस सोमके पानके लिये, मैं बुलाता हूँ।

१२ चारो ओर विस्तृत, पर्वतपर स्थित और जल-वर्षक मरुतोंको, इस सोमके पानके लिये, मैं बुलाता हूँ ।



१ स्तुति-पात्र इन्द्र, सोमाभिषव होनेपर हमारे स्तुति-वचन, रथवाले वीरके समान, तुम्हारी ओर स्थित होते हैं। जैसे गायें बछड़ोंको देखकर शब्द करती हैं, वैसे ही हमारे स्तोत्र तुम्हारी स्तुति करते हैं ।

२ स्तुत्य इन्द्र, पात्रोंमें दिये जाते हुए और अभिषुत सोम तुम्हारे पास आवें । इस सोम-भागको शीघ्र पियो। इन्द्र, चारो दिशाओंमें तुम्हारे लिये चरु-पुरोडाश आदि रखे हुए हैं।

३ इन्द्र, श्येन-रूपिणी गायत्रीके द्वारा द्युलोकसे लाये गये और अभिषुत सोमका पान, हर्षके लिये, सरलतासे, करो; क्योंकि तुम सब मरुतों और देवोंके स्वामी हो ।

४ जो तिरश्ची (मैं) हविके द्वारा तुम्हारी पूजा करता है, उसका आह्वान सुनो। सुवीर्य, सुपुत्र और गौ आदिवाले धनके प्रदानसे हमें पूर्ण करो। तुम श्रेष्ठ देव हो ।

इन्द्र यस्ते नवीयसीं गिरं मन्द्रामजीजनत् ।
चिकित्विन्मनसं धियं प्रत्नामृतस्य पिप्युषीम् ॥५॥
तमु ष्टवाम यं गिर इन्द्रमुक्थानि वावृधुः ।
पुरूण्यस्य पौंस्या सिषासन्तो वनामहे ॥६॥
एतोन्विन्द्रं स्तवाम शुद्धं शुद्धेन साम्ना ।
शुद्धैरुक्थैर्वावृध्वांसं शुद्ध आशीर्वान्ममत्तु ॥७॥
इन्द्र शुद्धो न आगहि शुद्धः शुद्धाभिरूतिभिः ।
शुद्धो रयिं नि धारय शुद्धो ममद्धि सोम्यः ॥८॥
इन्द्र शुद्धो हि नो रयिं शुद्धो रत्नानि दाशुषे ।
शुद्धो वृत्राणि जिघ्नसे शुद्धो वाजं सिषाससि ॥९॥

---

८९ सूक्त

इन्द्र देवता । मरुतोंके पुत्र द्युतान अथवा तिरश्ची ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

अस्मा उषास आतिरन्त याममिन्द्राय नक्तमूर्म्याः सुवाचः ।
अस्मा आपो मातरः सप्त तस्थुर्नृभ्यस्तराय सिन्धवः सुपाराः ॥१॥

---

५ जिस यजमानने नवीन और मदकर वाक्य, तुम्हारे लिये, उत्पन्न किया है, उसके लिये तुम प्राचीन, सत्ययुक्त, प्रवृद्ध और सबके हृदयग्राही रक्षण-कार्यको करो ।

६ जिन इन्द्रने हमारी स्तुति और उक्थ (शस्त्र) को वर्द्धित किया है, उन्हींकी हम स्तुति करते हैं । हम इन इन्द्रके अनेक पौरुषोंको सम्भोग करनेकी इच्छासे उनका भजन करेंगे ।

७ ऋषियो, शीघ्र आओ । हम शुद्ध साम-गान और शुद्ध उक्थ मन्त्रोंके द्वारा (वृत्र-बध-जन्य ब्रह्महत्यासे) विशुद्ध इन्द्रकी स्तुति करेंगे । दशापवित्रके द्वारा शोधित सोम वर्द्धित इन्द्रको हृष्ट करे ।

८ इन्द्र, तुम शुद्ध हो । आओ । परिशुद्ध रक्षणों और मरुतोंके साथ आओ । तुम शुद्ध हो । हममें धन स्थापित करो । तुम शुद्ध हो; सोम-योग्य हो; मत्त होओ ।

९ इन्द्र, तुम शुद्ध हो । हमें धन दो । तुम शुद्ध हो । हव्यदाताको रत्न दो तुम शुद्ध हो । वृत्रादि शत्रुओंका वध करते हो । तुम शुद्ध हो । हमें अन्न देनेकी इच्छा करते हो ।

१ इन्द्रके डरके मारे उषाएँ अपनी गतिको चढ़ाये हुई हैं सारी रात्रियाँ, इन्द्रके लिये, आगामिनी रात्रिमें सुन्दर वाक्यवाली होती हैं । इन्द्रके लिये सर्वत्र व्याप्त और मातृ-रूप गङ्गा आदि सात नदियाँ मनुष्योंके पार जानेके लिये सरलतासे पार-योग्य होती हैं ।

अतिविद्धा विथुरेणा चिदस्त्रा त्रिः सप्त सानु संहिता गिरीणाम् ।
न तद्देवो न मर्त्यस्तुतुर्याद्यानि प्रवृद्धो वृषभश्चकार ॥२॥
इन्द्रस्य वज्र आयसो निमिश्ल इन्द्रस्य बाह्वोर्भूयिष्ठमोजः ।
शीर्षन्निन्द्रस्य क्रतवो निरेक आसन्नेषन्त श्रुत्या उपाके ॥३॥
मन्ये त्वा यज्ञियं यज्ञियानां मन्ये त्वा च्यवनमच्युतानाम् ।
मन्ये त्वा सत्वनामिन्द्र केतुं मन्ये त्वा वृषभं चर्षणीनाम् ॥४॥
आ यद्वज्रं बाह्वोरिन्द्र धत्से मदच्युतमहये हन्तवा उ ।
प्र पर्वता अनवन्त प्र गावः प्र ब्रह्माणो अभिनक्षन्त इन्द्रम् ॥५॥
तमु ष्टवाम य इमा जजान विश्वा जातान्यवराण्यस्मात् ।
इन्द्रेण मित्रं दिधिषेम गीर्भिरुपो नमोभिर्वृषभं विशेम ॥६॥
वृत्रस्य त्वा श्वसथादीषमाणा विश्वे देवा अजहुर्ये सखायः ।
मरुद्भिरिन्द्र सख्यं ते अस्त्वथेमा विश्वाः पृतना जयासि ॥७॥

२ असहाय होकर भी इन्द्रने, अस्त्रोंके द्वारा, एकत्र हुए इक्कीस पर्वत-तटोंको तोड़ा। अभिलाषा-दाता और प्रवृद्ध इन्द्रने जो कार्य किये, उन्हें मनुष्य अथवा देवता नहीं कर सकते।

३ इन्द्रका वज्र लोहेका बना हुआ है। वह वज्र उनके हाथमें संबद्ध है; इसलिये उनके हाथोंमें बल है। युद्ध-गमन-समयमें इन्द्रके मस्तकमें शिरस्त्राण आदि रहते हैं। इन्द्रकी आज्ञा सुननेके लिये उनके समीप आते हैं।

४ इन्द्र, मैं तुम्हें यज्ञार्होंमें भी यज्ञ-योग्य समझता हूँ। तुम्हें मैं पर्वतोंका भेदक समझता। तुम्हें मैं सैन्योंका पताका समझता हूँ। तुम्हें मैं मनुष्योंका अभिमत-फल-दाता समझता हूँ।

५ इन्द्र, तुम जिस समय दोनों बाहुओंसे शत्रुओंका गर्व चूर्ण करते हो, जिस समय ... बधके लिये वज्र धारण करते हो, जिस समय मेघ और जल शब्द करते हैं, उस समय ... ओरसे इन्द्रके पास जाते हुए स्तोतालोग इन्द्रकी सेवा करते हैं।

६ जिन इन्द्रने इन प्राणियोंको उत्पन्न किया और जिनके पीछे सारी वस्तुएं ... हुईं, स्तुति द्वारा उन्हीं इन्द्रको हम मित्र बनावेंगे और नमस्कारके द्वारा काम-दाता इन्द्रको ... सामने करेंगे।

७ इन्द्र, जो विश्वदेव तुम्हारे सखा हुए थे, उन्होंने वृत्रासुरके श्वाससे डरकर भागते ... तुम्हें छोड़ दिया था। मरुतोंके साथ तुम्हारी मैत्री हुई। अनन्तर तुमने सारी शत्रु-सेनाको जीत...

त्रिः षष्टिस्त्वा मरुतो वावृधाना उस्रा इव राशयो यज्ञियासः ।
उप त्वेमः कृधि नो भागधेयं शुष्मन्त एना हविषा विधेम ॥८॥
तिग्ममायुधं मरुतामनीकं कस्त इन्द्र प्रति वज्रं दधर्ष ।
अनायुधासो असुरा अदेवाश्चक्रेण ताँ अप वप ऋजीषिन् ॥६॥
मह उग्राय तवसे सुवृक्ति प्रेरय शिवतमाय पश्वः ।
गिर्वाहसे गिर इन्द्राय पूर्वीर्धेहि तन्वे कुविदङ्ग वेदत् ॥१०॥
उक्थवाहसे विभ्वे मनीषां द्रुणा न पारमीरया नदीनाम् ।
नि स्पृशा धिया तन्वि श्रुतस्य जुष्टतरस्य कुविदङ्ग वेदत् ॥११॥
तद्विविड्ढि यत्त इन्द्रो जुजोषत् स्तुहि सुष्टुतिं नमसा विवास ।
उप भूष जरितर्मा रुवण्यः श्रावया वाचं कुविदङ्ग वेदत् ॥१२॥
अव द्रप्सो अंशुमतीमतिष्ठदियानः कृष्णो दशभिः सहस्रैः ।
आवत्तमिन्द्रः शच्या धमन्तमप स्नेहितीर्नृमणा अधत्त ॥१३॥

---

८ इन्द्र, ६३ मरुतोंने, एकत्र गो-यूथके समान, तुम्हें वर्द्धित किया था। इसीलिये वे यजनीय हुए थे। हम उन्हीं इन्द्रके पास जायंगे। इन्द्र, हमें भजनीय अन्न दो। हम भी तुम्हें शत्रु-घातक बल देंगे।

९ इन्द्र, तुम्हारे हथियार तेज हैं; तुम्हारी सेना मरुत् है। तुम्हारे वज्रका विरुद्धाचरण कौन कर सकता है? हे सोमवाले इन्द्र, चक्रके द्वारा आयुध-शून्य और देव-द्रोही असुरोंको दूर कर दो।

१० स्तोता, पशु-प्राप्तिके लिये महान्, उग्र, प्रवृद्ध और कल्याणमय इन्द्रकी सुन्दर स्तुति करो। स्तुतिपात्र इन्द्रके लिये अनेक स्तुतियाँ करो। पुत्रके लिये इन्द्र प्रचुर धन भेजें।

११ मन्त्रोंके द्वारा प्राप्य और महान् इन्द्रके लिये, नदीको पार करनेवाली नौकाके समान, स्तुति करो। बहु-प्रसिद्ध और प्रसन्नता-दायक इन्द्र धन दें। पुत्रके लिये इन्द्र बहुत धन दें।

१२ इन्द्र जो चाहते हैं, वह करो। सुन्दर स्तुतिका वाचन करो। स्तोत्रके द्वारा इन्द्रकी सेवा करो। स्तोता, अलङ्कृत होओ। दरिद्रताके कारण मत रोओ। इन्द्रको अपनी स्तुति सुनाओ। इन्द्र तुम्हें बहुत धन देंगे।

१३ दस सहस्र सेनाओंके साथ शीघ्र जानेवाला कृष्ण नामका असुर अंशुमती नदीके किनारे रहता था बुद्धिके द्वारा इन्द्रने उस शब्द करनेवाले असुरको प्राप्त किया। पीछे इन्द्रने, मनुष्योंके हितके लिये, कृष्णासुरकी हिंसक सेनाका बध कर डाला।

द्रप्समपश्यं विषुणे चरन्तमुपह्वरे नद्यो अंशुमत्याः ।
नभो न कृष्णमवतस्थिवांसमिष्यामि वो वृषणो युध्यताजौ ॥१४॥
अध द्रप्सो अंशुमत्या उपस्थेऽधारयत्तन्वं तित्विषाणः ।
विशो अदेवीरभ्या चरन्तीर्बृहस्पतिना युजेन्द्रः ससाहे ॥१५॥
त्वं ह त्यत् सप्तभ्यो जायमानोऽशत्रुभ्यो अभवः शत्रुरिन्द्र ।
गूळ्हे द्यावापृथिवी अन्वविन्दो विभुमद्भ्यो भुवनेभ्यो रणन्धाः ॥१६॥
त्वं ह त्यदप्रतिमानमोजो वज्रेणवज्रिन्धृषितो जघन्थ ।
त्वं शुष्णस्यावातिरो वधत्रैस्त्वं गा इन्द्र शच्येदविन्दः ॥१७॥
त्वं ह त्यद्वृषभ चर्षणीनां घनो वृत्राणां तविषो बभूथ ।
त्वं सिन्धूँरसृजस्तस्तभानान्त्वमपो अजयो दासपत्नीः ॥१८॥
स सुक्रतू रणिता यः सुतेष्वनुत्तमन्युर्यो अहेव रेवान् ।
य एक इन्नर्यपांसि कर्ता स वृत्रहा प्रतीदन्यमाहुः ॥१९॥

---

१४ इन्द्रने कहा—"द्रुतगामी कृष्णको मैंने देखा है। वह अंशुमती नदीके तटपर, गूढ़ स्थानमें विस्तृत प्रदेशमें, विचरण करता और सूर्यके समान अवस्थान करता है। अभिलाषा-दाता मरुतो! चाहता हूं कि, तुमलोग युद्ध करो और युद्धमें उसका संहार करो।

१५ द्रुतगामी कृष्ण अंशुमती नदीके पास, दीप्तिमान् होकर, शरीर धारण करता है। इन्द्रने बृहस्पतिकी सहायतासे, देव-शून्य और आनेवाली सेनाका बध, कृष्णके साथ, कर डाला।

१६ इन्द्र, तुमने ही वह कार्य किया है। जन्मके साथ ही तुम ही शत्रु-शून्य कृष्ण, वृत्र, नमुचि, शम्बर, शुष्ण, पणि आदि सात शत्रुओंके शत्रु हुए थे। तुम अन्धकारमयी द्यावापृथिवीको प्राप्त हुए हो। तुमने मरुतोंके साथ, भुवनोंके लिये, आनन्दका धारण किया है।

१७ इन्द्र, तुमने वह कार्य किया है। वज्रधर इन्द्र, संग्राममें कुशल होकर तुमने वज्रके द्वारा शुष्णके अनुपम बलको नष्ट किया है। तुमने ही आयुधोंके द्वारा शुष्णको, कुत्स राजर्षिके लिये, निम्नमुख करके मार डाला है। अपने कर्मके द्वारा तुमने गो-प्राप्ति की है।

१८ इन्द्र, तुमने ही वह कार्य किया है। मनोरथ-प्रद इन्द्र, तुम मनुष्योंको उपद्रवके विनाशक हो। इसलिये तुम प्रवृद्ध हुए थे। तुमने रोकी गयी सिन्धु आदि नदियोंको बहनेके लिये जाने दिया था। अनन्तर दासोंके अधिकृत जलको तुमने जीत लिया था।

१९ वही इन्द्र शोभन प्रज्ञावाले हैं वह अभिषुत सोमके पानके लिये आनन्दित हैं। इन्द्रके क्रोधको कोई नहीं सह सकता। दिनके समान इन्द्र धनी हैं। वह असहाय होकर भी मनुष्योंके कार्य-कर्त्ता हैं। वह वृत्रघ्न हैं। वह सारे शत्रु-सेनाओंके ... हैं।

स वृत्रहेन्द्रश्चर्षणीधृतं सुष्टुत्या हव्यं हुवेम ।
स प्राविता मघवा नोऽधिवक्ता स वाजस्य श्रवस्यस्य दाता ॥२०॥
स वृत्रहेन्द्र ऋभुक्षाः सद्यो जज्ञानो हव्यो बभूव
कृण्वन्नपांसि नर्या पुरूणि सोमो न पीतो हव्यः सखिभ्यः ॥२१॥

८६ सूक्त

इन्द्र देवता। रेभ ऋषि। अतिजगती, बृहती, त्रिष्टुप् छन्द।

या इन्द्र भुज आभरः स्वर्वां असुरेभ्यः ।
स्तोतारमिन्मघवन्नस्य वर्धय ये च त्वे वृक्तबर्हिषः ॥१॥
यमिन्द्र दधिषे त्वमश्वं गां भागमव्ययम् ।
यजमाने सुन्वति दक्षिणावति तस्मिन्तं धेहि मा पणौ ॥२॥
य इन्द्र सस्त्यव्रतोऽनुष्वापमदेवयुः ।
स्वैः ष एवैर्मुमुरत् पोष्यं रयिं सनुतर्धेहि तं ततः ॥३॥

---

२० इन्द्र वृत्रघ्न हैं। वह मनुष्योंके पोषक हैं। वह आह्वानके योग्य हैं। हम शोभन स्तुतिसे उन्हें अपने यज्ञमें बुलाते हैं। वह हमारे विशेष रक्षक, धनवान्, आदरके साथ बोलनेवाले तथा अन्न और कीर्त्तिके दाता हैं।

२१ वृत्रघ्न इन्द्र महान् हैं। जन्मके साथ इन्द्र सबके लिये बुलाने योग्य हो गये। वह मनुष्योंके लिये अनेक हितकर कार्य करते हुए, पिये गये सोमके समान, सखाओंके आह्वानके योग्य हुए थे।

---

१ इन्द्र, तुम सुखवाले हो। तुम जो असुरोंके पाससे भोगके योग्य धन ले आये हो, धनी इन्द्र, उससे स्तोताको वर्द्धित करो। स्तोता कुश बिछाये हुए हैं।

२ इन्द्र, तुम जो गौ, अश्व और अविनाशी धनको धारण किये हुए हो, सो सब सोमाभिषव और दक्षिणावाले यजमानको दो। यज्ञ-विहीन पणिको नहीं देना।

३ देवाभिलाष-शून्य तथा व्रत-रहित जो व्यक्ति स्वप्नके वश होकर निद्रित होता है, वह अपनी गति (कर्म) के द्वारा ही अपने पोष्य धनका विनाश करे, उसे कर्म-शून्य स्थानमें रखो।

यच्छक्रासि परावति यदर्वावति वृत्रहन् ।
अतस्त्वा गीर्भिर्द्युगदिन्द्र केशिभिः सुतावाँ आविवासति ॥४॥
यद्वासि रोचने दिवः समुद्रस्याधि विष्टपि ।
यत् पार्थिवे सदने वृत्रहन्तम यदन्तरिक्ष आगहि ॥५॥
स नः सोमेषु सोमपाः सुतेषु शवसस्पते ।
मादयस्व राधसा सूनृतावतेन्द्र राया परीणसा ॥६॥
मा न इन्द्र परा वृणग्भवा नः सधमाद्यः ।
त्वं न ऊती त्वमिन्न आप्यं मा न इन्द्र परा वृणक् ॥७॥
अस्मे इन्द्र सचा सुते निषदा पीतये मधु ।
कृधी जरित्रे मघवन्नवो महदस्मे इन्द्र सचा सुते ॥८॥
न त्वा देवास आशत न मर्त्यासो अद्रिवः ।
विश्वा जातानि शवसाभिभूरसि न त्वा देवास आशत ॥९॥

४ शत्रु-हन्ता और वृत्रघ्न इन्द्र, तुम दूर देशमें रहो अथवा समीपके देशमें, इस भूलोकसे द्युलोक जाते हुए केशवाले हरि अश्वोंके समान तुम्हें, इस स्तोत्रके द्वारा, अभिषुत सोमवाला यजमान ले आता है।

५ इन्द्र; यदि तुम स्वर्गके दीप्त स्थानमें हो, यदि समुद्रके बीचमें किसी स्थानपर हो, यदि पृथिवी किसी स्थानमें हो अथवा अन्तरीक्षमें हो, (जहाँ कहीं भी हो, हमारे यज्ञमें) हे वृत्रघ्न, आओ।

६ सोमपा और बलपति इन्द्र, सोमाभिषव होनेपर बहुत धन और सुन्दर वाक्यसे युक्त बल-साधक अन्नके द्वारा हमें आनन्दित करो।

७ इन्द्र, हमें नहीं छोड़ना। तुम हमारे साथ एकत्र सोमपानसे प्रमत्त होओ। तुम हमें रक्षणमें रखो। तुम्हीं हमारे बन्धु हो। तुम हमें नहीं छोड़ना।

८ इन्द्र, हमारे साथ, मदकर सोमके पानके लिये. सोमाभिषव होनेपर बैठो। धनी इन्द्र, स्तोता महती रक्षा प्रदान करो। सोमाभिषव होनेपर हमारे साथ बैठो।

९ वज्रधर इन्द्र, देवता लोग तुम्हें नहीं व्याप्त कर सकते—मनुष्य भी नहीं व्याप्त कर सकते अपने बलके द्वारा समस्त भूतोंको तुम अभिभूत किये हुए हो। देवता तुम्हें नहीं व्याप्त कर सकते।

जजनुश्च राजसे ।
विश्वाः पृतना अभिभूतरं नरं सजूस्ततक्षु रिन्द्रं
क्रत्वा वरिष्ठं वर आमुरिमुतोग्रमोजिष्ठं तवसं तरस्विनम् ।।१०।।
समीं रेभासो अस्वरन्निन्द्रं सोमस्य पीतये ।
स्वर्पतिं यदीं वृधे धृतव्रतो ह्योजसा समूतिभिः ।।११।।
नेमिं नमन्ति चक्षसा मेषं विप्रा अभिस्वरा ।
सुदीतयो वो अद्रुहोऽपि कर्णे तरस्विनः समृक्वभिः ।।१२।।
तमिन्द्रं जोहवीमि मघवानमुग्रं सत्रा दधानमप्रतिष्कुतं शवांसि ।
मंहिष्ठो गीर्भिरा च यज्ञियो
ववर्तद्राये नो विश्वा सुपथा कृणोतु वज्री ।।१३।।
त्वं पुर इन्द्र चिकिदेना व्योजसा शविष्ठ शक्र नाशयध्यै ।
त्वद्विश्वानि भुवनानि वज्रिन्द्यावा रेजेते पृथिवी च भीषा ।।१४।।

१० सारी सेना, परस्पर मिलकर, शत्रुओंके विजेता और नेता इन्द्रको आयुध आदिके द्वारा तेज करती हैं। स्तोता लोग अपने प्रकाशनके लिये यज्ञमें सूर्यरूप इन्द्रकी सृष्टि करते हैं। कर्मके द्वारा बलिष्ठ और शत्रुओंके सामने विनाशक, उग्र, ओजस्वी, प्रवृद्ध और वेगवान् इन्द्रकी, धनके लिये, स्तोता लोग स्तुति करते हैं।

११ सोम-पानके लिये रेभ नामक ऋषियोंने इन्द्रकी भली भाँति स्तुति की थी। जब लोग स्वर्गके पालक इन्द्रकी, वर्द्धनके लिये, स्तुति करते हैं, तब व्रतधारी इन्द्र बल और पालनके द्वारा मिलित होते हैं।

१२ कश्यपगोत्रीय रेभ लोग, नेमिके समान, देखनेके साथ ही इन्द्रको नमस्कार करते हैं। मेधावी (विप्र) लोग मेष (भेड़के समान उपकारी) इन्द्रका, स्तोत्रके द्वारा, नमस्कार करते हैं। स्तोताओ, तुमलोग शोभन दीप्तिवाले और द्रोह-शून्य हो। क्षिप्रकारी तुमलोग इन्द्रके कानोंके पास पूजा-युक्त मन्त्रोंसे इन्द्रकी स्तुति करो।

१३ उस उग्र, धनी, यथार्थतः बल धारण करनेवाले और शत्रुओंके द्वारा न रोके जाने योग्य इन्द्रको मैं बुलाता हूँ। पूज्यतम और यज्ञ-योग्य इन्द्र हमारी स्तुतियोंके द्वारा यज्ञाभिमुख हों। वज्रधर इन्द्र हमारे धनके लिये सारे मार्गोंको सुपथ बनावें।

१४ बलिष्ठ और शत्रुहनन-समर्थ (शक्र) इन्द्र, शम्बरकी इन सब पुरियोंको, बलके द्वारा, विनष्ट करनेके लिये, ज्ञाता होते हो। वज्रधर इन्द्र, तुम्हारे डरसे सारे भूत और द्यावापृथिवी काँपती हैं।

तन्म ऋतमिन्द्र शूर चित्र पात्वपो न वज्रिन्दुरिताति पर्षि भूरि।
कदा न इन्द्र राय आ दशस्येर्विश्वप्स्न्यस्य स्पृहयाय्यस्य राजन् ।१५



१५ बली और विविध-रूप इन्द्र, तुम्हारा प्रशंसनीय सत्य मेरी रक्षा करे। वज्री, नाविकके द्वारा जलके समान अनेक पापोंसे हमें पार करो। राजा इन्द्र, विविध-रूप और अभिलषित धन, हमारे सामने, कब प्रदान करोगे?



षष्ठ अध्याय समाप्त

सप्तम अध्याय

८७ सूक्त

इन्द्र देवता। अङ्गिरोगोत्रीय नृमेध ऋषि। ककुप्, पुरउष्णिक् और उष्णिक् छन्द।

इन्द्राय साम गायत विप्राय बृहते बृहत्। धर्मकृते विपश्चिते पनस्यवे ॥१॥

त्वमिन्द्राभिभूरसि त्वं सूर्यमरोचयः।

विश्वकर्मा विश्वदेवो महाँ असि ॥२॥

विभ्राजञ्ज्योतिषा स्वरगच्छो रोचनं दिवः।

देवास्त इन्द्र सख्याय येमिरे ॥३॥

एन्द्र नो गधि प्रियः सत्राजिदगोह्यः। गिरिर्न विश्वतस्पृथुः पतिर्दिवः ॥४॥

अभि हि सत्य सोमपा उभे बभूथ रोदसी।

इन्द्रासि सुन्वतो वृधः पतिर्दिवः ॥५॥

---

१ उद्गाताओ, मेधावी, विशाल, कर्म-कर्त्ता, विद्वान् और स्तोत्राभिलाषी इन्द्रके लिये बृहत् स्तोत्रका गान करो।

२ इन्द्र, तुम शत्रुओंको दबानेवाले हो। तुमने आदित्यको तेजके द्वारा प्रदीप्त किया है। तुम विश्वकर्त्ता, सर्वदेव और सर्वाधिक हो।

३ इन्द्र, ज्योतिके द्वारा तुम आदित्यके प्रकाशक हो। तुम स्वर्गको प्रकाशित करते हुए गये थे। देवोंने तुम्हारी मैत्रीके लिये प्रयत्न किया था।

४ इन्द्र, तुम प्रियतम और महान् व्यक्तियोंके विजेता हो। तुम्हारा कोई गोपन नहीं कर सकता। तुम पर्वतके समान चारो ओर व्यापक और स्वर्गके स्वामी हो। हमारे पास आओ।

५ सत्य-स्वरूप और सोमपाता इन्द्र, तुमने द्यावापृथिवीको अभिभूत किया है; इसलिये तुम अभिषव करनेवालेके वर्द्धक और स्वर्गाधिपति हो।

त्वं हि शश्वतीनामिन्द्र दर्ता पुरामसि ।

हन्ता दस्योर्मनोर्वृधः पतिर्दिवः ॥६॥

अधाहीन्द्र गिर्वण उप त्वा कामान्महः ससृज्महे ।

उदेव यन्त उदभिः ॥७॥

वार्ण त्वा यव्याभिर्वर्धन्ति शूर ब्रह्माणि । वावृध्वांसं चिदद्रिवो दिवेदिवे

युञ्जन्ति हरी इषिरस्य गाथयोरौ रथ उरुयुगे । इन्द्रवाहा वचोयुजा ।

त्वं न इन्द्राभरँ ओजो नृम्णं शतक्रतो विचर्षणे ।

आ वीरं पृतनाषहम् ॥१०॥

त्वं हि नः पिता वसो त्वं माता शतक्रतो बभूविथ ।

अधा ते सुम्नमीमहे ॥११॥

त्वां शुष्मिन् पुरुहूत वाजयन्तमुप ब्रुवे शतक्रतो ।

स नो रास्व सुवीर्यम् ॥१२॥



६ इन्द्र, तुम अनेक शत्रु-पुरियोंके भेदक हो । तुम दस्यु-घातक, मनुष्यके वर्द्धक स्वर्गके पति हो ।

७ स्तुत्य इन्द्र, जैसे क्रीड़ाके लिये लोग जलमें अपने पासके व्यक्तियोंपर जल फेंका करते वैसे ही हम आज तुम्हारे लिये महान् और कमनीय स्तोम (मन्त्र) प्राप्त करते हैं ।

८ वज्रधर और शूर इन्द्र, जैसे नदियाँ जल-स्थानको बढ़ाती हैं, वैसे ही स्तोत्रोंके द्वारा तुम्हें स्तोता लोग प्रतिदिन वर्द्धित करते हैं ।

९ गतिपरायण इन्द्रके महान् युगों (जोड़ों)से युक्त विशाल रथमें इन्द्रके वाहक और कहते साथ ही जुट जानेवाले हरि नामक दोनों अश्वोंको, स्तोत्रके द्वारा स्तोता लोग जोतते हैं ।

१० बहुकर्मा, प्रवीण, वीर्यशाली और सेनाको जीतनेवाले इन्द्र, तुम हमें बल धन दो ।

११ निवास-दाता और बहुकर्मा इन्द्र, तुम हमारे पिताके सदृश पालक और माता समान धारक बनो । अनन्तर हम तुम्हारे सुखकी याचना करेंगे ।

१२ बली, अनेकोंके द्वारा आहूत और बहुकर्मा इन्द्र, बलकी अभिलाषा करनेवाले तुम्हें मैं स्तुति करता हूं । तुम हमें सुन्दर वीर्यसंयुक्त धन दो ।

९८ सूक्त

इन्द्र देवता। नृमेध ऋषि। अयुक् बृहती और युक् सतोबृहती छन्द।

त्वामिदा ह्यो नरोऽपीप्यन् वज्रिन् भूर्णयः ।
स इन्द्र स्तोमवाहसामिह श्रुध्युप स्वसरमागहि ॥१॥
मत्स्वा सुशिप्र हरिवस्तदीमहे त्वे आ भूषन्ति वेधसः ।
तवश्रवांस्युपमान्युक्थ्या सुतेष्विन्द्र गिर्वणः ॥२॥
श्रायन्तइव सूर्यं विश्वेदिन्द्रस्य भक्षत ।
वसूनि जाते जनमान ओजसा प्रति भागं न दीधिम ॥३॥
अनर्शरातिं वसुदामुपस्तुहि भद्रा इन्द्रस्य रातयः ।
सो अस्य कामं विधतो न रोषति मनो दानाय चोदयन् ॥४॥
त्व मिन्द्र प्रतूर्तिष्वभि विश्वा असि स्पृधः ।
अशस्तिहा जनिता विश्वतूरसि त्वं तूर्य तरुष्यतः ॥५॥

---

१ वज्रधर इन्द्र, हविसे भरण करनेवाले नेताओंने तुम्हें आज और कल सोमपान कराया है। तुम इस यज्ञमें हम स्तोत्र-वाहकोंका स्तोत्र सुनो और हमारे गृहमें पधारो।

२ सुन्दर चादरवाले, अश्ववाले और स्तुतिवाले इन्द्र, परिचारक लोग तुम्हारे लिये सोमाभिषव करते हैं। तुम पीकर मत्त होओ। हम तुम्हारे पास प्रार्थना करते हैं। सोमाभिषव होनेपर तुम्हारे अन्न उपमेय और प्रशस्य हों।

३ जैसे आश्रित किरणें सूर्यका भजन करती हैं, वैसे ही तुम इन्द्रके सारे धनोंका भजन करो। इन्द्र बलके द्वारा उत्पन्न और उत्पन्न होनेवाले धनोंके जनक हैं। हम उन धनोंको पैतृक भागके समान धारण करेंगे।

४ पाप-रहित व्यक्तिके लिये जो दान-शील और धनद हैं, उन्हीं इन्द्रकी स्तुति करो; क्योंकि इन्द्रका दान कल्याणवाहक है। इन्द्र अपने मनको अभीष्ट प्रदानके लिये प्रेरित करके परिचारककी इच्छाको बाधा नहीं देते।

५ इन्द्र, तुम युद्धमें सारी सेनाओंको दबाते हो। शत्रु-बाधक इन्द्र तुम दैत्योंके नाशक, उनके जनक शत्रुओंके हिंसक और बाधकोंके बाधक हो।

अनु ते शुष्मं तुरयन्तमीयतुः क्षोणी शिशुं न मातरा ।
विश्वास्ते स्पृधः श्लथयन्त मन्यवे वृत्रं यदिन्द्र तूर्वसि ॥६॥
इत ऊती वो अजरं प्रहेतारमप्रहितम् ।
आशुं जेतारं हेतारं रथीतममतूर्तं तुग्र्यावृधम् ॥७॥
इष्कर्तारमनिष्कृतं सहस्कृतं शतमूतिं शतक्रतुम् ।
समानमिन्द्रमवसे हवामहे वसवानं वसुजुवम् ॥८॥

८९ सूक्त

इन्द्र देवता । १०-११ के वाक् देवता । भृगुगोत्रीय नेम ऋषि । जगती, अनुष्टुप् और त्रिष्टुप् छन्द ।

अयं त एमि तन्वा पुरस्ताद्विश्वे देवा अभि मा यन्ति पश्चात् ।
यदा मह्यं दीधरो भागमिन्द्रादिन्मया कृणवो वीर्याणि ॥१॥
दधामि ते मधुनो भक्षमग्रे हितस्ते भागः सुतो अस्तु सोमः ।
असश्च त्वं दक्षिणतः सखा मेऽधा वृत्राणि जङ्घनाव भूरि ॥२॥

६ इन्द्र, जैसे माता शिशुका अनुगमन करती है, वैसे ही तुम्हारे बलकी हिंसा करनेवाले शत्रुका अनुगमन द्यावापृथिवी करती हैं। तुम वृत्रका बध करते हो; इसलिये सारी युद्धकारी सेना तुम्हारे क्रोधके लिये खिन्न होती है।

७ अजर, शत्रु-प्रेरक, किसीसे न भेजे गये, वेगवान्, जेता, गन्ता, रथिश्रेष्ठ, अहिंसित और जल-वर्द्धक इन्द्रको, रक्षणके लिये, आगे करो।

८ शत्रुओंके संस्कर्त्ता, दूसरोंके द्वारा असंस्कृत, बलकृत, बहुरक्षणवाले, शत-यज्ञवाले, साधारण, धनाच्छादक और धन-प्रेरक इन्द्रको, रक्षणके लिये, हम बुलाते हैं।



१ इन्द्र, पुत्रके साथ मैं शत्रुको जीतनेके लिये, तुम्हारे आगे-आगे जाता हूं। सारे देवता मेरे पीछे-पीछे जाते हैं। तुम शत्रु-धनका अङ्ग मुझे देते हो; इसलिये मेरे साथ पुरुषार्थ करो।

२ तुम्हारे लिये पहले मैं मदकर सोम-रूप अन्न (भक्षण) देता हूँ। तुम्हारे हृदयमें अभिषुत सोम निहित हो। तुम मेरे दक्षिण भागमें मित्ररूप होकर अवस्थित होओ। पश्चात् हम दोनों अनेक असुरोंका बध करेंगे।

प्र सु स्तोमं भरत वाजयन्त इन्द्राय सत्यं यदि सत्यमस्ति ।
नेन्द्रो अस्तीति नेम उ त्व आह क ईं ददर्श कमभिष्टवाम ॥३॥
अयमस्मि जरितः पश्य मेह विश्वा जातान्यभ्यस्मि मह्ना ।
ऋतस्य मा प्रदिशो वर्धयन्त्यादर्दिरो भुवना दर्दरीमि ॥४॥
आ यन्मा वेना अरुहन्नृतस्यँ एकमासीनं हर्यतस्य पृष्ठे ।
मनश्चिन्मे हृद आ प्रत्यवोचदचिक्रदञ्छिशुमन्तः सखायः ॥५॥
विश्वेत्ता ते सवनेषु प्रवाच्या या चकर्थ मघवन्निन्द्र सुन्वते ।
पारावतं यत् पुरुसम्भृतं वस्वपावृणोः शरभाय ऋषिबन्धवे ॥६॥
प्र नूनं धावता पृथङ्नेह यो वो अवावरीत् ।
नि षीं वृत्रस्य मर्मणि वज्रमिन्द्रो अपीपतत् ॥७॥
मनोजवा अयमान आयसीमतरत् पुरम् ।
दिवं सुपर्णो गत्वाय सोमं वज्रिण आभरत् ॥८॥

३ युद्धेच्छुको, यदि इन्द्रकी सत्ता सच्ची हो, तो इन्द्रके लिये सत्य-रूप सोमका उच्चारण करो। भार्गव नेम ऋषिका मत है कि, इन्द्र नामका कोई नहीं है। इन्द्रको किसीने देखा है? फलतः हम किसकी स्तुति करें?

४ स्तोता नेम, यह मैं तुम्हारे पास आ गया हूँ। मुझे देखो मैं सारे संसारको, महिमाके द्वारा, दबाता हूँ। सत्य यज्ञके द्रष्टा मुझे वर्द्धित करते हैं। मैं विदारण-परायण हूँ। मैं सारे भुवनोंको विदीर्ण करता हूँ।

५ जिस समय यज्ञाभिलाषियोंने कमनीय अन्तरीक्षकी पीठपर अकेले बैठे हुए मुझे चढ़ाया था, उस समय उन लोगोंके मनने ही मेरे हृदयमें उत्तर दिया था कि, पुत्र-युक्त प्रिय मेरे लिये रो रहे हैं।

६ धनी इन्द्र, यज्ञमें सोमाभिषव करनेवालोंके लिये तुमने जो कुछ किया है, वह सब कहने योग्य है। परावत् नामके शत्रुका जो धन है, उसे तुमने ऋषि-मित्र शरभके लिये, यथेष्ट रूपमें, प्रकट किया था।

७ जो शत्रु इस समय दौड़ रहा है—पृथक् नहीं ठहरता और जो तुम्हें नहीं ढकता, उसके मर्म-स्थानमें इन्द्रने वज्रपात किया है।

८ मनके समान वेगवान् और गमनशील सुपर्ण (गरुड़) लौहमय नगरके पार गये। अनन्तर स्वर्गमें जाकर इन्द्रके लिये सोम ले आये।

समुद्रे अन्तः शयत उद्ना वज्रो अभीवृतः ।
भरन्त्यस्मै संयतः पुरःप्रस्रवणा बलिम् ॥९॥
यद्वाग्वदन्त्यविचेतनानि राष्ट्री देवानां निषसाद मन्द्रा ।
चतस्र ऊर्जं दुदुहे पयांसि क्व स्विदस्याः परमं जगाम ॥१०॥
देवीं वाचमजनयन्त देवास्तां विश्वरूपाः पशवो वदन्ति ।
सा नो मन्द्रेषमूर्जं दुहाना धेनुर्वागस्मानुप सुष्टुतैतु ॥११॥
सखे विष्णो वितरं वि क्रमस्व द्यौर्देहि लोकं वज्राय विष्कभे ।
हनाव वृत्रं रिणचाव सिन्धूनिन्द्रस्य यन्तु प्रसवे विसृष्टाः ॥१२॥

९० सूक्त

मित्र और वरुण देवता । ५ के शेषांशके और ६ के आदित्य, ७-८ के अश्विद्वय, ९-१० के ११—१२ के सूर्य, १३ के उषा, १४ के पवमान और १५-१६ के गो देवता । भृगुगोत्रीय ऋषि । त्रिष्टुप्, गायत्री और परासतोबृहती छन्द ।

ऋधगित्था स मर्त्यः शशमे देवतातये ।
यो नूनं मित्रावरुणावभिष्टय आचक्रे हव्यदातये ॥१॥

९ जो वज्र समुद्रके बीच सोता है और जो जलमें ढका हुआ है, उसी वज्रके लिये आगे जानेवाले शत्रु (आत्म-बलि-रूप) उपहार धारण करते हैं ।

१० राष्ट्री (प्रदीपक) और देवोंको आनन्द-मग्न करनेवाला वाक्य जिस समय अज्ञानियों ज्ञान देते हुए यज्ञमें बैठता है, उस समय चारो ओरके लिये अन्न और जलका दोहन करता है (माध्यमिकी वाक्) में जो श्रेष्ठ हैं, वह कहाँ जाता है ?

११ देवता लोग जिस दीप्तिमान् वाग्देवीको उत्पन्न करते हैं, उसे ही सभी प्रकार भी बोलते हैं । वह हर्ष देनेवाली वाक्, अन्न और रस देनेवाली धेनुके समान हमसे स्तुत होकर पास आवे ।

१२ मित्र विष्णु, तुम अत्यन्त पाद-विक्षेप करो । द्युलोक, तुम वज्रके गमनके लिये प्रदान करो । तुम और मैं वृत्रका बध करूँगा और नदियोंको (समुद्रकी ओर) ले जाऊँगा । इन्द्रकी आज्ञाके अनुसार गमन करें ।

---

१ जो मनुष्य हविः-प्रदाता यजमानके लिये, अभिमतकी सिद्धिके लिये, मित्र और वरुण सम्बोधन करता है, वह सचमुच इस प्रकार यज्ञके लिये हविका संस्कार करता है ।

वर्षिष्ठक्षत्रा उरुचक्षसा नरा राजना दीर्घश्रुत्तमा ।
ता बाहुता न दंसना रथर्यतः साकं सूर्यस्य रश्मिभिः ॥२॥
प्र यो वां मित्रावरुणाजिरो दूतो अद्रवत् । अयःशीर्षा मदेरघुः ॥३॥
न यः संपृच्छे न पुनर्हवीतवे न संवादाय रमते ।
तस्मान्नो अद्य समृतेरुरुष्यतं बाहुभ्यां न उरुष्यतम् ॥४॥
प्र मित्राय प्रार्यम्णे सचथ्यमृतावसो ।
वरूथ्यं वरुणे छन्द्यं वचः स्तोत्रं राजसु गायत ॥५॥
ते हिन्विरे अरुणं जेन्यं वस्वेकं पुत्रं तिसृणाम् ।
ते धामान्यमृता मर्त्यानामदब्धा अभिचक्षते ॥६॥
आ मे वचांस्युद्यता द्युमत्तमानि कर्त्वा ।
उभा यातं नासत्या सजोषसा प्रति हव्यानि वीतये ॥७॥

---

२ अतीव वर्द्धित-बल, महादर्शन, नेता, दीप्तिमान् तथा अतीव विद्वान् वे मित्र और वरुण, दोनों बाहुओंके समान, सूर्य-किरणोंके साथ, कर्म प्राप्त करते हैं।

३ मित्र और वरुण, जो गमन-शील यजमान तुम्हारे सामने जाता है, वह देवोंका दूत होता है। उसका मस्तक सुवर्ण-मण्डित होता है और वह मदकर सोम प्राप्त करता है ।

४ जो शत्रु बार-बार पूछनेपर भी आनन्दित नहीं होता, जो बार-बार बुलानेपर भी आनन्दित नहीं होता और जो कथोपकथनपर भी आनन्दित नहीं होता, उसके युद्धसे हमें आज बचाओ, उसके बाहुओंसे हमें बचाओ ।

५ यज्ञ-धन, मित्रके लिये सेवनीय और यज्ञगृहोत्पन्न स्तोत्रका गान करो। अर्यमाके लिये गाओ। वरुणके लिये प्रसन्नता-दायक गान करो। मित्र आदि तीन राजाओंके लिये गाओ।

६ अरुणवर्ण, जयसाधन और वासप्रद पृथिवी, अन्तरीक्ष तथा आकाश (द्युलोक) आदि तीनों-के लिये देवता लोग एक पुत्र (सूर्य) को प्रेरित करते हैं। अहिंसित और अमर देवगण मनुष्योंके स्थान देखते हैं।

७ सत्य-प्रणेता अश्विद्वय, मेरे उच्चारित और दीप्त वाक्यों और कर्मोंके लिये आओ। हव्य-भक्षणके लिये जाओ।

रातिं यद्वामरक्षसं हवामहे युवाभ्यां वाजिनीवसू ।
प्राचीं होत्रां प्रतिरन्ताविवतं नरा गृणाना जमदग्निना ॥८॥
आ नो यज्ञं दिविस्पृशं वायो याहि सुमन्मभिः ।
अन्तः पवित्र उपरि श्रीणानोऽयं शुक्रो अयामि ते ॥९॥
वेत्यध्वर्युः पथिभी रजिष्ठैः प्रति हव्यानि वीतये ।
अधा नियुत्व उभयस्य नः पिब शुचिं सोमं गवाशिरम् ॥१०॥
बण्महाँ असि सूर्य बलादित्य महाँ असि ।
महस्ते सतो महिमा पनस्यतेऽद्धा देव महाँ असि ॥११॥
बट् सूर्य श्रवसा महाँ असि सत्रा देव महाँ असि ।
मह्ना देवानामसुर्यः पुरोहितो विभु ज्योतिरदाभ्यम् ॥१२॥
इयं या नीच्यर्किणी रूपा रोहिण्या कृता ।
चित्रेव प्रत्यदर्श्यायत्यन्तर्दशसु बाहुषु ॥१३॥

---

८ अन्न और धनवाले अश्विद्वय, तुम लोगोंका राक्षस-शून्य जो दान है, उसको समय हम माँगेंगे, उस समय तुम लोग जमदग्निके द्वारा स्तुत होकर तथा पूर्वमुख स्तुति-वर्द्धक नेता होकर आना।

९ वायु, तुम हमारी सुन्दर स्तुतिसे स्वर्ग-स्पर्शी यज्ञमें आना। पवित्र (घृत, वेद मन्त्र आदि)के बीच आश्रित यह शुभ्र सोम तुम्हारे लिये नियत हुआ था।

१० नियुत् अश्वोंवाले वायु, अध्वर्यु सरलतम मार्गसे जाता है। वह तुम्हारे भक्षणके हवि ले जाता है। हमारे लिये दोनों प्रकारके (शुद्ध और दुग्ध-मिश्रित) सोमका पान करो।

११ सूर्य, सचमुच तुम महान् हो। आदित्य, तुम महान् हो, यह बात सच्ची है। तुम हो, तुम्हारी महिमा स्तुत होती है। देव, तुम महान् हो, यह बात सच्ची है।

१२ तुम सुननेमें महान् हो, यह बात सच्ची है। देवोंमें, तुम महिमाके द्वारा महान् यह बात सत्य है। तुम शत्रु-विनाशक हो और तुम देवोंके हितोपदेशक हो। तुम्हारा तेज और अहिंसनीय है।

१३ यह जो निम्नमुखी, स्तुतिमती, रूपवती और प्रकाशवती उषा, सूर्य-प्रभावके उत्पादित हुई हैं, वह ब्रह्माण्डकी बहु-स्थानीय दसो दिशाओंमें आती हुई, चित्रा गायके देखी जाती हैं।

प्रजा ह तिस्रो अत्यायमीयुर्न्यन्या अर्कमभितो विविश्रे ।
बृहद्ध तस्थौ भुवनेष्वन्तः पवमानो हरित आ विवेश ॥१४॥
माता रुद्राणां दुहिता वसूनां स्वसादित्यानाममृतस्य नाभिः ।
प्र नु वोचं चिकितुषे जनाय मा गामनागामदितिं वधिष्ट ॥१५॥
वचोविदं वाचमुदीरयन्ती विश्वाभिर्धीभिरुपतिष्ठमानाम् ।
देवीं देवेभ्यः पर्येयुषीं गामा मावृक्त मर्त्यो दभ्रचेताः ॥१६॥

---

६१ सूक्त

अग्नि देवता। भार्गव प्रयोग, बृहस्पति-पुत्र अग्नि वा सहके पुत्र गृहपति यविष्ठ ऋषि। गायत्री छन्द।

त्वमग्ने बृहद्वयो दधासि देव दाशुषे । कविर्गृहपतिर्युवा ॥१॥
स न ईळानया सह देवाँ अग्ने दुवस्युवा । चिकिद्विभानवावह ॥२॥

---

१४ तीन प्रजाएँ अतिक्रमण करके चली गयी थीं। अन्य प्रजाएँ पूजनीय अग्निकी चारो ओर आश्रित हुई थीं। भुवनोंमें आदित्य महान् होकर अवस्थित हुए थे। पवमान (वायु) दिशाओंमें घुस गये।

१५ जो गौ रुद्रोंकी माता, वसुओंकी पुत्री, आदित्योंकी भगिनी और दुग्धका निवास-स्थान है, मनुष्यो, उस निरपराध और अदीन (अदिति) गो-देवीका बध नहीं करना। मैंने इस बातको बुद्धिमान् मनुष्यसे कहा था।

१६ वाक्य-दात्री, वचन उच्चारण करनेवाली, सारे वाक्योंके साथ उपस्थित, प्रकाशमाना और देवताके लिये मुझे जाननेवाली गोदेवीको छोटी बुद्धिका मनुष्य ही परिवर्जित करता है।

---

१ प्रकाशमान अग्नि, तुम कवि (क्रान्तकर्मा), गृहपालक और नित्य तरुण हो। तुम हव्य-दाता यजमानको महान् अन्न देते हो।

२ विशिष्ट दीप्तिवाले अग्नि, तुम ज्ञाता होकर हमारे वाक्यसे देवोंको ले आओ। हम स्तुति और परिचर्या करते हैं।

त्वया ह स्वद्युजा वयं चोदिष्ठेन यविष्ठ्य । अभि ष्मो वाजसातये ॥३॥
और्वभृगुवच्छुचिमप्नवानवदा हुवे । अग्निं समुद्रवाससम् ॥४॥
हुवे वातस्वनं कविं पर्जन्यक्रन्द्यं सहः । अग्निं समुद्रवाससम् ॥५॥
आ सवं सवितुर्यथा भगस्येव भुजिं हुवे । अग्निं समुद्रवाससम् ॥६॥
अग्निं वो वृधन्तमध्वराणां पुरूतमम् । अच्छा नप्त्रे सहस्वते ॥७॥
अयं यथा न आभुवत्त्वष्टा रूपेव तक्ष्या । अस्य क्रत्वा यशस्वतः ॥८॥
अयं विश्वा अभि श्रियोऽग्निर्देवेषु पत्यते । आ वाजैरुप नो गमत् ॥९॥
विश्वेषामिह स्तुहि होतॄणां यशस्तमम् । अग्निं यज्ञेषु पूर्व्यम् ॥१०॥
शीरं पावकशोचिषं ज्येष्ठो यो दमेष्वा । दीदाय दीर्घश्रुत्तमः ॥११॥

३ युवतम अग्नि, तुम अतीव धन-प्रेरक हो, तुम्हें सहायक पाकर हम, अन्न-लाभके लिए शत्रुओंको दबावेंगे।

४ मैं समुद्र-मध्यस्थित और शुद्ध अग्निको, और्व भृगु और अप्नवानके समान, बुलाता।

५ वायुके समान ध्वनिवाले, मेघके समान क्रन्दन करनेवाले, कवि, बली और समुद्र-शायी अग्निको मैं बुलाता हूँ।

६ सूर्यके प्रसवके समान और भग देवताके भोगके समान समुद्रशायी अग्निको मैं बुलाता।

७ अहिंसनीय (अध्वर) लोगोंके बन्धु, बली, वर्द्धमान और बहुतम अग्निकी ओर, ऋत्विको, तुम जाओ।

८ यही अग्नि हमारे कर्त्तव्यका बनाते हैं। हम अग्निके प्रज्ञानसे यशस्वी होंगे।

९ देवोंके बीच अग्नि ही मनुष्योंकी सारी सम्पदाएँ प्राप्त करते हैं। अग्नि, अन्नके साथ हमारे पास आवें।

१० स्तोता, सारे होताओंमें अधिक यशस्वी और यज्ञमें प्रधान अग्निकी, इस यज्ञमें स्तुति करो।

११ देवोंके बीच प्रधान और अतिशय विद्वान् अग्नि याज्ञिकोंके गृहमें प्रदीप्त होते हैं। पवित्र दीप्तिवाले और शयन करनेवाले अग्निकी स्तुति करो।

यातयज्जनम् ॥१२॥

तमर्वन्तं न सानसिं गृणीहि विप्र शुष्मिणम् । मित्रं न यातयज्जनम् ॥१२॥
उप त्वा जामयो गिरो देदिशतीर्हविष्कृतः । वायोरनीके अस्थिरन् ॥१३॥
यस्य त्रिधात्ववृतं बर्हिस्तस्थावसन्दिनम् । आपश्चिन्नि दधा पदम् ॥१४॥
पदं देवस्य मीळ्हुषोनाधृष्टाभिरूतिभिः । भद्रा सूर्यइवोपदृक् ॥१५॥
अग्ने घृतस्य धीतिभिस्तेपानो देव शोचिषा । आ देवान्वक्षि यक्षि च ॥१६॥
तं त्वाजनन्त मातरः कविं देवासो अङ्गिरः । हव्यवाहममर्त्यम् ॥१७॥
प्रचेतसं त्वा कवेऽग्ने दूतं वरेण्यम् । हव्यवाहं नि षेदिरे ॥१८॥
नहि मे अस्त्यघ्न्या न स्वधितिर्वनन्वति । अथैतादृग्भरामि ते ॥१९॥
यदग्ने कानि कानि चिदा ते दारूणि दध्मसि । ता जुषस्व यविष्ठ्य ॥२०॥

---

१२ मेधावी स्तोता, अश्वके समान भोग-योग्य, बली और मित्रके समान शत्रु-निधन-कारी अग्निकी स्तुति करो ।

१३ अग्नि, यजमानके लिये स्तुतियाँ, भगनियोंके समान, तुम्हारे गुण गाते हुए तुम्हारी सेवा करती हैं। तुम्हें वायुके समीप स्थापित भी करती हैं।

१४ जिन अग्निके तीन छिपे और न बँधे हुए कुश हैं, उन अग्निमें जल भी स्थान पाता है ।

१५ अभीष्ट-वर्षक और प्रकाशमान अग्निका स्थान सुरक्षित और भोग्य है । उनकी दृष्टि भी, सूर्यके समान, मङ्गलमयी है।

१६ अग्निदेव, दीप्ति-साधक घीके निधान (आगार) के द्वारा तृप्त होकर ज्वालाके द्वारा देवोंको बुलाओ और यज्ञ करो।

१७ अङ्गिरा अग्नि, कवि, अमर, हव्यदाता और प्रसिद्ध अग्निको, (तुमको) देवोंने, माताओंके समान; उत्पन्न किया है।

१८ कवि अग्नि, तुम प्रकृष्ट बुद्धि, वरणीय दूत और देवोंके हव्यवाहक हो। तुम्हारी चारो ओर देवता लोग बैठते हैं।

१९ अग्नि, मेरे (ऋषिके) पास गाय नहीं है, काठको काटनेवाला फरसा भी नहीं है । यह सब मैं तुमको दे चुका ।

२० युवकतम अग्नि, तुम्हारे लिये जब मैं कोई कोई कार्य करता हूँ, तब तुम अपरशु-छिन्न काष्ठोंकी ही सेवा करते हो ।

यदत्युपजिह्विका यद्वम्रो अतिसर्पति । सर्वं तदस्तु ते घृतम् ॥२१॥
अग्निमिन्धानो मनसा धियं सचेत मर्त्यः । अग्निमीधे विवस्वभिः ॥२२॥



९२ सूक्त

अग्नि और मरुद्गण देवता । सोभरि ऋषि । सतोबृहती, ककुप्, गायत्री, अनुष्टुप् और बृहती छन्द ।

अदर्शि गातुवित्तमो यस्मिन्व्रतान्यादधुः ।
उपो षु जातमार्यस्य वर्धनमग्निं नक्षन्त नो गिरः ॥१॥
प्र दैवोदासो अग्निर्देवाँ अच्छा न मज्मना ।
अनु मातरं पृथिवीं वि वावृते तस्थौ नाकस्य सानवि ॥२॥
यस्माद्रेजन्त कृष्टयश्चर्कृत्यानि कृण्वतः ।
सहस्रसां मेधसाताविव त्मनाग्निं धीभिः सपर्यत ॥३॥

---

२१ जिन काठोंको तुम्हारी ज्वाला जलाती है और जिनको तुम्हारी जीभ (ज्वाला) लाँघ कर जाती है, वह सब काठ घीके समान हों ।

२२ मनुष्य काठके द्वारा अग्निको जलाते हुए मनके द्वारा कर्मका आचरण करता है और ऋत्विकोंके द्वारा अग्निको समिद्ध करता है ।



१ जिन अग्निमें सारे कर्मोंका, यजमानोंके द्वारा, आधान होता है, अतिशय मार्गज्ञ वही अग्नि प्रकट हुए । आर्योंके वर्द्धक अग्निके सम्यक् प्रादुर्भूत होनेपर हमारी स्तुतियाँ अग्निके पास जाती हैं ।

२ दिवोदासके द्वारा आहूत अग्नि माता पृथिवीके सामने देवोंके लिये हव्य वहन करनेमें प्रवृत्त नहीं हुए; क्योंकि दिवोदासने बल-पूर्वक अग्निका आह्वान किया था; इसलिये अग्नि स्वर्गके पास ही रहे ।

३ कर्त्तव्य-परायण मनुष्योंके यहाँ अन्य मनुष्य काँपते हैं । फलतः हे मनुष्यो, तुम इस समय सहस्र धनोंके दाता अग्निकी, यज्ञमें कर्त्तव्य कर्मके द्वारा, स्वयम् सेवा करो ।

प्र यं राये निनीषसि मर्तो यस्ते वसो दाशत् ।
स वीरं धत्ते अग्न उक्थशंसिनं त्मना सहस्रपोषिणम् ॥४॥
स दृह्ले चिदभि तृणत्ति वाजमर्वता स धत्ते अक्षिति श्रवः ।
त्वे देवत्रा सदा पुरूवसो विश्वा वामानि धीमहि ॥५॥
यो विश्वा दयते वसु होता मन्द्रो जनानाम् ।
मधोर्न पात्रा प्रथमान्यस्मै प्र स्तोमा यन्त्यग्नये ॥६॥
अश्वं न गीर्भी रथ्यं सुदानवो मर्मृज्यन्ते देवयवः ।
उभे तोके तनये दस्म विश्पते पर्षि राधो मघोनाम् ॥७॥
प्र मंहिष्ठाय गायत ऋताव्ने बृहते शुक्रशोचिषे । उपस्तुतासो अग्नये ॥८॥
आ वंसते मघवा वीरवद्यशः समिद्धो द्युम्न्याहुतः ।
कुविन्नो अस्य सुमतिर्नवीयस्यच्छा वाजेभिरागमत् ॥९॥
प्रेष्ठमु प्रियाणां स्तुह्यासावातिथिम् । अग्निं रथानां यमम् ॥१०॥

४ निवास दाता अग्नि, धन-दानके लिये तुम जिसे शिक्षित करते हो और जो मनुष्य तुम्हें हव्य देता है, वह मनुष्य मन्त्र-प्रशंसक और स्वयं सहस्र-पोषक पुत्रको प्राप्त करता है।

५ बहुत धनवाले अग्नि, जो तुम्हारे लिये हव्य देता हैं, वह दृढ़ शत्रु—नगरमें स्थित अन्नको, अश्वकी सहायतासे, नष्ट करता है—वह वाद्धत अन्नको धारण करता है । हम भी देव-स्वरूप तुम्हारे लिये हव्य देते हुए तुममें स्थित सब प्रकारके धनका धारण करेंगे।

६ जो अग्निदेवोंको बुलानेवाले और आनन्दमय हैं और जो मनुष्योंको अन्न देते हैं, उन्हीं अग्नि-के लिये मदकर सोमके प्रथम पात्र जाते हैं ।

७ दर्शनीय और लोक-पालक अग्नि, सुन्दर दानवाले और देवाभिलाषी यजमान, रथ-वाहक अश्वके समान, स्तुतिके द्वारा तुम्हारी परिचर्या करते हैं, वही तुम हमारे पुत्रों और पौत्रोंके लिये धनियोंका दान दो।

८ स्तोताओ, तुम सर्व-श्रेष्ठदाता, यज्ञवाले, सत्यवाले, विशाल और प्रदीप्त तेजवाले अग्निके लिये स्तोत्र पढ़ो ।

९ धनी और अन्नवाले अग्नि सन्दीप्त, वीरके समान प्रतापसे युक्त और बुलाये जानेपर यशस्कर अन्न प्रदान करते हैं। उनकी अभिनव अनुग्रह-बुद्धि, अन्नके साथ, अनेक बार हमारे पास आवे ।

१० स्तोता, प्रियोंमें प्रियतम, अतिथि और रथोंके नियामक अग्निकी स्तुति करो।

उदिता यो निदिता वेदिता वस्वा यज्ञियो ववर्तति ।
दुष्टरा यस्य प्रवणे नोर्मयो धिया वाजं सिषासतः ॥११॥
मा नो हृणीतामतिथिर्वसुरग्निः पुरुप्रशस्त एषः । यः सुहोता स्वध्वरः ॥१२॥
मो ते रिषन्ये अच्छोक्तिभिर्वसोऽग्ने केभिश्चिदेवैः ।
कीरिश्चिद्धि त्वामीट्टे दूत्याय रातहव्यः स्वध्वरः ॥१३॥
आग्ने याहि मरुत्सखा रुद्रेभिः सोमपीतये ।
सोभर्या उपसुष्टुतिं मादयस्व स्वर्णरे ॥१४॥

---

११ ज्ञानी और यज्ञ-योग्य जो अग्नि उदित और श्रुत जिस धनको आवर्त्तित करते हैं और कर्म द्वारा युद्धेच्छुक जिन अग्निकी ज्वाला निम्नमुखगामी समुद्र-तरङ्गके समान दुस्तर है, उन्हीं अग्निकी स्तुति करो ।

१२ वासप्रद, अतिथि, बहु-स्तुत, देवोंके उत्तम आह्वानकर्त्ता और सुन्दर यज्ञवाले अग्नि हमारे लिये किसीके द्वारा रोके न जायँ।

१३ वासप्रद अग्नि, जो मनुष्य स्तुतिके द्वारा और सुखावह अनुगामितासे तुम्हारी सेवा करते हैं, वे मारे न जायँ। सुन्दर यज्ञवाले और हव्यदाता स्तोता भी, दूत-कर्मके लिये, तुम्हारी स्तुति करता है।

१४ अग्नि, तुम मरुतोंके प्रिय हो । हमारे यज्ञ-कर्ममें, सोम-पानके लिये, मरुतोंके साथ आओ । सोभरिकी (मेरी) शोभन स्तुतिके पास आओ। सोम पीकर मत्त होओ।



अष्टम मण्डल समाप्त

बालखिल्यसूक्त*

१ सूक्त

इन्द्र देवता। कण्वके पुत्र प्रस्कण्व ऋषि। अयुक् और युक् बृहती छन्द।

अभि प्र वः सुराधसमिन्द्रमर्चय थाविदे।
योजरितृभ्यो मघवा पुरूवसुः सहस्रेणेव शिक्षति ॥१॥
शतानीकेव प्रजिगाति धृष्णुया हन्ति वृत्राणि दाशुषे।
गिरेरिव प्ररसा अस्य पिन्विरे दत्राणि पुरुभोजसः ॥२॥
आ त्वा सुतास इन्दवो मदाय इन्द्र गिर्वणः।
आपो नु वज्रिन्नन्वोक्यं सरः पृणन्ति शूर राधसे ॥३॥

---

१ इस प्रकार सुन्दर धनवाले इन्द्रको सामने करके पूजो, जिससे मैं धन प्राप्त कर सकूं। इन्द्र धनी—बहुत धनवाले हैं। वह स्तोताओंको हजार-हजार धन देते हैं।

२ इन्द्र गवके साथ जाते हैं—मानों वह सौ सेनाओंके स्वामी हैं। वह हव्यदाताके लिये वृत्र-बध करते हैं। इन्द्र अनेकोंके पालक हैं। उनके लिये दिया गया सोम-रस पर्वतके सोमरसके समान प्रसन्न करता है।

३ स्तुत्य इन्द्र, जो सब सोम मदकारा है, वह सब तुम्हारे लिये अभिषुत हुआ है। वज्रधर शूर, इस समय धनके लिये जल आने वास-स्थान सरोवरको भरता है।

---

* पुराणोंके अनुसार ब्रह्माके शरीरके लोमोंसे उत्पन्न उनके मानस पुत्रोंका नाम बालखिल्य है। ये अँगूठेके जोड़के परिमाणके हैं और इनकी संख्या साठ हजार है। कहा जाता है कि, अष्टम मण्डलके ४८वें सूक्तके बादके ११ सूक्तोंके प्रथम कर्ता या स्मर्ता ये ही हैं। परन्तु सायणाचार्यने ऋग्वेद-भाष्यमें न तो इन सूक्तोंपर भाष्य किया है, न इनका उल्लेख ही। ऐतरेय ब्राह्मणकी टीकामें सायणने इनकी संख्या भी कम अर्थात् आठ ही मानी है। ऋग्वेदके सब सूक्त १०१७ हैं; किन्तु इन ११ सूक्तोंको मिलानेसे सूक्त-संख्या १०२८ हो जाती है। जो हो; परन्तु इन सूक्तोंका उल्लेख पृथक् होते हुए भी इनकी प्रसिद्धि अत्यधिक है; इसलिये इनका हिन्दी-अनुवाद कर देना आवश्यक समझा गया। ये सूक्त अनेक विद्वानोंको कण्ठस्थ हैं—इनकी प्रतिष्ठा भी यथेष्ट है।

अनेहसं प्रतरणं विवक्षणं मध्वः स्वादिष्ठमीं पिब ।
आ यथा मन्दसानः किरासिनः प्रक्षुद्रेव त्मना धृषत् ॥४॥
आ नः स्तोममुपद्रवद्धियानो अश्वो न सोतृभिः ।
यं ते स्वधावन्त्स्वदयन्ति धेनव इन्द्र कण्वेषु रातयः ॥५॥
उग्रं न वीरं नमसोपसेदिम विभूतिमक्षिता वसुम् ।
उद्रीव वज्रिन्नवतो न सिञ्चते क्षरन्तीन्द्र धीतयः ॥६॥
यद्ध नूनं यद्वा यज्ञे यद्वा पृथिव्यामधि ।
अतो नो यज्ञमाशुभिर्महेमत उग्र उग्रेभिरागहि ॥७॥
अजिरासो हरयो ये त आशवो वाता इव प्रसक्षिणः ।
येभिरपत्यं मनुषः परीयसे येभिर्विश्वं स्वर्दृशे ॥८॥
एतावतस्त ईमह इन्द्र सुम्नस्य गोमतः ।
यथा प्रावो मघवन्मेध्यातिथिं यथा नीपातिथिं धने ॥९॥

---

४ तुम सोमके निष्पाप, रक्षक, स्वर्गदाता और मधुरतम रसका पान करो; क्योंकि प्रमत्त होनेपर तुम स्वयं सगर्व होते और "क्षुद्रा" नामकी दात्रीके समान हमें अभिलषित दान करते हो।

५ अन्नवाले इन्द्र, कण्वोंके लिये तुमने जो प्रसन्नता-दायक दान दिया है, वही दान स्तोम (स्तोत्र) को मीठा करता है। अभिषव करनेवालोंके बुलानेपर अश्वके समान तुम उसी स्तोमकी ओर शीघ्र आओ।

६ इस समय हम विभूति और अक्षय्य धनसे युक्त तथा उग्र और वीर इन्द्रके पास, नमस्कारके साथ, जायँगे। वज्री इन्द्र जैसे जलवाला कुँआ जल-सिञ्चन करता है, वैसे ही सारे स्तोत्र तुम्हें सिक्त करते हैं।

७ इस समय जहाँ भी हो, यज्ञमें अथवा पृथिवीमें हो, वहींसे, हे उग्र और महामति इन्द्र, तुम उग्र और शीघ्रगामी अश्वके साथ, हमारे यज्ञमें आओ।

८ तुम्हारे हरि अश्व वायुके समान शीघ्रगामी और शत्रु-जेता हैं। उनकी सहायतासे तुम मनुष्योंके पास जाते हो और सारे पदार्थोंको देखनेके लिये संसारमें जाया करते हो।

९ इन्द्र, तुम्हारा गौसे संयुक्त इतना धन माँगता हूँ। धनी इन्द्र, तुमने मेध्यातिथि और नीपातिथिकी, धनके सम्बन्धमें, रक्षा की थी।

यथा कण्वे मघवन्त्रसदस्यवि यथा पक्थे दशव्रजे।
यथा गोशर्ये असनोर्ऋजिश्वनीन्द्र गोमद्धिरण्यवत् ॥१०॥

२ सूक्त

इन्द्र देवता। पुष्टिगु ऋषि। अयुक् बृहती और युक् सतोबृहती छन्द।

प्रसुश्रुतं सुराधसमर्चा शक्रमभिष्टये।
यः सुन्वते स्तुवते काम्यं वसु सहस्रेणेव मंहते ॥१॥
शतानीका हेतयो अस्य दुष्टरा इन्द्रस्य समिषो महीः।
गिरिर्न भुज्मा मघवत्सु पिन्वते यदीं सुता अमन्दिषुः ॥२॥
यदीसुतास इन्दवो भि प्रियममन्दिषुः।
आपो न धायि सवनं म आवसो दुघा इवोप दाशुषे ॥३॥
अनेहसं वाहवमान मूतये मध्वः क्षरन्ति धीतयः।
आ त्वा वसो हवमानास इन्दव उप स्तोत्रेषु दधिरे ॥४॥

---

१० धनी इन्द्र, तुमने कण्व, त्रसदस्यु, पक्थ, दशव्रज, गोशर्य और ऋजिश्वाको गौ और हिरण्यवाला धन दिया था।

---

१ धन-प्राप्तिके लिये विख्यात और सुन्दर धनवाले शक्र (इन्द्र) की पूजा करो। वह अभिषवकर्त्ता और स्तोताको हजार-हजार कमनीय धन देते हैं।

२ इनके अस्त्र सौ हैं। ये इन्द्रके अन्नसे उत्पन्न हैं। जिस समय अभिषुत सोम इनको प्रमत्त करता है, उस समय ये पर्वतके समान खाद्य देनेवाले होकर धनियोंको प्रसन्न करते हैं।

३ जिस समय अभिषुत सोमने प्रिय इन्द्रको प्रमत्त किया, उस समय, हे इन्द्र, हव्यदाताके लिये, गायोंकी तरह, यज्ञमें जल रखा गया।

४ ऋत्विको, तुम्हारे रक्षणके लिये सारे कर्म निष्पाप और बुलाये जानेवाले इन्द्रके लिये मधु गिराते हैं। वासदाता इन्द्र, सोम लाया जाकर, स्तोत्र-समयमें, तुम्हारे सामने रखा जाता है।

आ नः सोमे स्वध्वर इयानो अत्योनतो शते ।
यं ते स्वदावन्त्स्वदन्ति गूर्तयः पौरे छन्दयसे हवम् ॥५॥
प्रवीरमुग्रं विविचिं धनस्पृतं विभूतिं राधसो महः ।
उद्रीववज्रिन्नवतो वसु त्वना सदा पीपेथ दाशुषे ॥६॥
यद्ध नूनं परावति यद्वा पृथिव्यां दिवि ।
युजान इन्द्र हरिभिर्महे मत ऋष्व ऋष्वेभिरागहि ॥७॥
रथिरासो हरयो यं ते अस्त्रिध ओजो वातस्य पिप्रति ।
येभिर्निदस्युं मनुषो निघोष यो येभिः स्वः परीयसे ॥८॥
एतावतस्ते वसो विद्यामशूर नव्यसः ।
यथा प्राव एतशं कृत्व्ये धने यथा वशं दशव्रजे ॥९॥
यथा कण्वे मघवन्मेधे अध्वरे दीर्घनीथेदमूनसि ।
यथा गोशर्ये असिषासो अद्रिवो मयि गोत्रं हरिश्रियम् ॥१०॥



५ हमारे सुन्दर यज्ञवाले सोमसे प्रेरित होकर इन्द्र अश्वके समान जा रहे हैं। स्वाद-वाले इन्द्र, तुम्हारे स्तोता इस सोमको सुस्वादु बना रहे हैं। तुम पुरु-पुत्रके बुलावेसे प्रसन्न करो।

६ वीर, उग्र, व्याप्त, धनके द्वारा प्रसन्नता-दायक और महाधनके विभूति-रूप इन्द्रकी हम स्तुति करते हैं। वज्रधर इन्द्र, जलवाले कुएँके समान, सदा व्यापक धनके साथ, हव्यदाताके मङ्गलके लिये सोम पान करो।

७ दर्शनीय और महामति इन्द्र, तुम दूर देशमें हो, पृथ्वीपर रहो अथवा स्वर्गमें, दर्शनीय हरियोंको रथमें जोतकर आओ।

८ तुम्हारे जो रथ-वाहक अश्व हैं, वे अहिंसित और वायुवेगको पूरा करनेवाले हैं। इन्हींकी सहायतासे तुमने दस्युओंको मारा है। तुमने मनुको (मानव आर्योंको) विख्यात किया है और सारे पदार्थोंको व्याप्त किया है।

९ शूर और निवासदाता इन्द्र, तुम्हारे "इतने" और नये धनकी बात विदित है। तुमने इसी प्रकार धनके लिये एतश और दशव्रजसे युक्त वशको बचाया है।

१० धनी और वज्री इन्द्र, तुमने पवित्र यज्ञमें कवि, शत्रुनाशके अभिलाषी दीर्घनीथ और गोशर्यको जिस प्रकार बचाया था, उसी प्रकार अश्वोंकी सहायतासे हमारी भी रक्षा करो।

३ सूक्त

इन्द्र देवता। श्रुष्टिगु ऋषि। अयुक् बृहती और युक् सतोबृहती छन्द।

यथा मनौ सांवरणौ सोममिन्द्रा पिबः सुतम्।
नीपातिथौ मघवन्मेध्यातिथौ श्रुष्टिगौ सचा ॥१॥
पार्षद्वाणः प्रस्कण्वं समसादयच्छयानं जिव्रिं मुद्धितम्।
सहस्राण्यशिषासद्गवामृषिस्त्वोतो दस्यवे वृकः ॥२॥
य उक्थेभिर्न विन्धते चिकिद्य ऋषिचोदनः।
इन्द्रं तमच्छा वद नव्यस्या मत्यरिष्यन्तं न भोजसे ॥३॥
यस्मा अर्कं सप्तशीर्षाणमानृचुस्त्रिधातुमुत्तमे पदे।
स त्विमा विश्वा भुवनानि चिक्रददादिज्जनिष्ट पौंस्यम् ॥४॥
यो नो दाता वसूनामिन्द्रं तं हूमहे वयम्।
विद्मा ह्यस्य सुमतिं नवीयसीं गमेम गोमति व्रजे ॥५॥

---

१ इन्द्र, तुम जैसे सांवरणि (सावर्णि) मनुके लिये अभिषुत सोमका पान किया था, धनी इन्द्र, पुष्ट और शीघ्रगामी गौसे युक्त मेध्यातिथि और नीपातिथिके लिये जैसे सोमपान किया था वैसे ही आज भी करो।

२ पार्षद्वाण ऋषिने वृद्ध और सोये हुए प्रस्कण्वको ऊपर बैठाया था। दस्युओंके लिये वृकस्वरूप ऋषिको अपने द्वारा रक्षित करके तुमने हजार गौओंकी रक्षा की थी।

३ जिनसे उक्थोंके द्वारा प्राप्त किया जाता है, जो ऋषि द्वारा प्रेरित होकर सबके ज्ञाता हैं और जो रक्षाभिलाषी हैं, उन्हीं इन्द्रके सामने, सेवाके लिये, नयी स्तुतिका उच्चारण करो।

४ जिनके लिये उत्तम स्थानमें सात शीर्षों (सात भुवनों वा व्याहृतियों) और तीन स्थानों (लोकों) से युक्त पूजा-मन्त्र पढ़ा जाता है, उन्होंने इस व्यापक भुवनको शब्दयुक्त किया और बल उत्पन्न किया।

५ जो इन्द्र हमारे धनदाता हैं, उन्हींको हम बुलाते हैं। हम उनकी अभिनव अनुग्रह-बुद्धिको जानते हैं। हम गोयुक्त गोशालामें जा सकें।

यस्मै त्वं वसो दानाय शिक्षसि स रायस्पोषमश्नुते ।
तं त्वा वयं मघवन्निन्द्र गिर्वणः सुतावन्तो हवामहे ॥६॥
उपोपेन्नु मघवन्भूय इन्नु ते दानं देवस्य पृच्यते ॥७॥
प्र यो ननक्षे अभ्योजसा क्रिविंवधैः शुष्णं निघोषयन् ।
यदेदस्तंभीत्प्रथयन्नमूं दिवमादिज्जनिष्ट पार्थिवः ॥८॥
यस्यायं विश्व आर्यो दासः शेवधिपा अरिः ।
तिरश्चिदर्ये रुशमे पवीरवि तुभ्येत्सो अज्यते रयिः ॥९॥
तुरण्यवो मधुमन्तं घृतश्चुतं विप्रासो अर्कमानृचुः ।
अस्मे रयिः प प्रथे वृष्ण्यं शवोस्मे सुवानास इन्दवः ॥१०॥

४ सूक्त

इन्द्र देवता । आयु ऋषि । अयुक् बृहती और युक् बृहती छन्द ।

यथा मनौ विवस्वति सोमं शक्रा पिबः सुतम् ।
यथा त्रिते छन्द इन्द्र जुजोषस्यायौ मादयसे सचा ॥१॥

६ धनदाता, स्तुत्य और धनी इन्द्र, तुम जिसे, प्रतिज्ञा करके, दान देते हो, वह धनकी पुष्टिको प्राप्त करता है। तुम ऐसे हो; इसलिये हम अभिषुत सोमवाले होकर तुम्हें बुलाते हैं।

७ इन्द्र, तुम कभी सृष्टि-विहीन नहीं होते। हव्यदाताके साथ मिलो। तुम देवता हो। तुम्हारा दान बार-बार समीप आकर मिलित होता है।

८ जिन्होंने बलात् अस्त्र-प्रयोग करके शुष्णका विनाश करते हुए कुएँको पूर्ण किया था, जिन्होंने द्युलोकको प्रसिद्ध करते हुए रोका था, जिन्होंने पार्थिव रूपमें होकर सारे पदार्थोंका उत्पन्न किया था—

९ जिनके धन-रक्षक और स्तोता सारे आर्य और दास (आर्यीकृत अनार्य ?) हैं और जो आर्य तथा श्वेतवर्ण पवीरुके सम्मुख आते हैं, वे ही धनद इन्द्र तुम्हारे साथ मिलते हैं।

१० क्षिप्रकारी विप्र लोग मधु-युक्त और घृतस्रावी पूजा-मन्त्रका उच्चारण करते हैं। इनके लिये धन प्रसिद्ध होता है, पुरुषोचित बल प्रसिद्ध हुआ है और अभिषुत सोम प्रसिद्ध हो रहा है।

---

१ इन्द्र, तुमने जैसे पहले विवस्वान् मनुके सोमका पान किया था, जैसे त्रितके मनकी रक्षा की थी, आयुके (मेरे) साथ जैसे प्रमत्त हुए थे—

पृषध्रे मेध्ये मातरिश्वनीन्द्र सुवाने अमन्दथाः ।
यथा सोमं दशशिप्रे दशोण्ये स्यूमरश्मा वृजूनसि ॥२॥
य उक्था केवलादधे यः सोमं धृषिता पिबत् ।
यस्मै विष्णुः त्रीणि पदा विचक्रम उप मित्रस्य धर्मभिः ॥३॥
यस्य त्वमिन्द्र स्तोमेषु चाकनो वाजे वाजिञ्छतक्रतो ।
तं त्वा वयं सुदुघामिव गोदुहो जुहूमसि श्रवस्यवः ॥४॥
यो नो दाता स नः पिता महाँ उग्र ईशानकृत् ।
अयामन्नुग्रो मघवा पुरूवसुर्गोरश्वस्य प्रदातु नः ॥५॥
यस्मै त्वं वसो दानाय मंहसे स रायस्पोषमिन्वति ।
वसूयवो वसुपतिं शतक्रतुं स्तोमैरिन्द्र हवामहे ॥६॥
कदाचन प्रयुच्छस्युभे निपासि जन्मनी ।
तुरीयादित्य हवनं त इन्द्रियमातस्थावमृतं दिवि ॥७॥

---

२ मातरिश्वा (वायु) देवताके पृषध्र (दधि-मिश्रित घृत) के अभिषवका आरम्भ करनेपर तुम जैसे प्रमत्त होते हो और सम्बद्ध तथा दीप्तिवाले दशशिप्र एवम् दशोण्यके सोमका पान किया करते हो—

३ जो केवल उक्थका धारण करते हैं, जो ढीठ होकर सोमपान करते हैं, जिनके लिये, बन्धुत्वके कर्त्तव्यके निमित्त विष्णुने तीन वार पद-निक्षेप किया था।

४ वेग और सौ यज्ञोंवाले इन्द्र, तुम जिसके यज्ञमें स्तुतिकी इच्छा करते हो—इन सब कर्मों और गुणोंवाले तुम इन्द्रको हम अन्नाभिलाषी होकर उसी प्रकार बुलाते हैं, जिस प्रकार गाय दूहनेवाला गौओंको बुलाता है।

५ वह हमारे पिता हैं और दाता हैं। वह महान्, उग्र और ऐश्वर्यकर्ता हैं। उग्र, धनी और अत्यन्त धनी इन्द्र हमें गौ और अश्व प्रदान करें।

६ इन्द्र, तुम जिसे दान देनेकी इच्छा करते हो, वह धन पुष्टि प्राप्त करता है। धनाभिलाषी होकर धनके पति और बहु यज्ञोंके कर्त्ता इन्द्रको, स्तोत्रके द्वारा, बुलाते हैं।

७ तुम कभी-कभी भ्रममें पड़ जाते हो। तुम दोनों प्रकारके प्राणियोंकी रक्षा करते हो। क्षिप्रकर्त्ता आदित्य, तुम्हारा सुखकर आह्वान अमर द्युलोकमें अवस्थान करता है।

यस्मै त्वं मघवन्निन्द्र गिर्वणः शिक्षो शिक्षसि दाशुषे ।
अस्माकं गिर उत सुष्टुतिं वसो कण्ववच्छृणुधी हवम् ॥८॥
अस्तावि मन्म पूर्व्यं ब्रह्मेन्द्राय वोचत ।
पूर्वीर्ऋतस्य बृहतीरनूषतस्तोतुर्मेधा असृक्षत ॥९॥
समिन्द्रो रायो बृहतीरधूनुत सं क्षोणी समु सूर्यम् ।
सं शुक्रासः शुचयः सं गवाशिरः सोमा इन्द्रममन्दिषुः ॥१०॥

५ सूक्त

इन्द्र देवता । मेध्य ऋषि । अयुक् बृहती और युक् सतोबृहती छन्द ।

उपमं त्वा मघोनां ज्येष्ठं च वृषभाणाम् ।
पूर्भित्तमं मघवन्निन्द्र गोविदमीशानं राय ईमहे ॥१॥
य आयुं कुत्समतिथिग्वमर्दयो वावृधानो दिवेदिवे ।
तं त्वा वयं हर्यश्वं शतक्रतुं वाजयन्तो हवामहे ॥२॥

८ स्तुत्य, दाता और धनी इन्द्र, तुम हम दाताको दान करो। वासदाता इन्द्र, तुमने जैसे कण्व ऋषिका आह्वान सुना था, वैसे हमारे वाक्य, स्तुति और आह्वान सुनो।

९ इन्द्रके लिये प्राचीन स्तोत्रका पाठ करो और स्तोत्रका उच्चारण करो। यज्ञकी पूर्वकालीन और विशाल स्तुतिका उच्चारण करो और स्तोताकी मेधाको बढ़ाओ।

१० इन्द्र प्रभूत धनका प्रेरण करते हैं। उन्होंने द्यावापृथिवीको प्रेरित किया है, सूर्यको प्रेरित किया है और श्वेतवर्ण तथा शुद्ध पदार्थोंको प्रेरित किया है। गव्य (दुग्ध आदि) से मिले सोमने इन्द्रको भली भाँति प्रमत्त किया था।

१ तुम धनियोंके लिये उपमेय, अभीष्ट-वर्षकोंमें जेष्ठ, सबके चाहने योग्य, शत्रुपुरविदारी, धनज्ञ और स्वामी हो। धनी इन्द्र, धनके लिये मैं तुम्हारी याचना करता हूँ।

२ जिन्होंने प्रतिदिन वर्द्धमान होकर आयु, कुत्स और अतिथिकी रक्षा की थी, उन्हीं हरि नामक अश्वोंवाले और बहुकर्मा इन्द्रको अन्नाभिलाषी होकर हम बुलाते हैं।

आ नो विश्वेषां रसं मध्वः सिञ्चन्त्वद्रयः ।
ये परावति सुन्विरे जनेष्वाये अर्वावतीं द्वः ॥३॥
विश्वा द्वेषांसि जहि चावचा कृधि विश्वेसन्वन्त्वावसु ।
शीष्टेषु चित्ते मदिरासो अंशवो यत्रा सोमस्य तृम्पसि ॥४॥
इन्द्र नेदीय एदि हिमित मेधाभिरूतिभिः
आशन्तमशन्तमाभिरभिष्टिभिरास्वापे स्वापिभिः ॥५॥
आ जितुरं सत्पतिं विश्वचर्षणिं कृधि प्रजास्वा भगम् ।
प्रसूतिराशचीभिर्ये त उक्थिनः क्रतुं पुनत आनुषक् ॥६॥
यस्ते साधिष्ठो वसे ते स्याम भरेषु ते ।
वयं होत्राभिरुत देवहूतिभिः ससवांसो मनामहे ॥७॥
अहं हि ते हरिवो ब्रह्मवाजयुराजिं यामि सदोतिभिः ।
त्वामिदेवतममे समश्वयुर्गव्युरग्रे मथीनाम् ॥८॥

---

३ दूरस्थ देशमें जो सोम लोगोंमें अभिषुत होता है और जो समीपमें अभिषुत होता है, उन सब सोमोंका रस हमारा अभिषव-प्रस्तर पिसकर बाहर करे।

४ तुम जहाँ सोमपान करके तृप्त होते हो, वहाँ सारे शत्रुओंका विनाश और पराजय करते हो। सारा धन उपभोग्य हो। शिष्टोंमें सोम तुम्हारे लिये मदकर है।

५ इन्द्र, तुम अतीव कल्याणकर और अतीव बन्धु हो। तुम परिमित मेधा और कल्याणकर, अभीष्टप्रद तथा बन्धु-स्वरूप रक्षण-कार्यके साथ समीपके स्थानमें आओ।

६ युद्धमें क्षिप्रकारी, साधुओंके पालक और सारे लोकोंके अधीश्वर इन्द्रको प्रजागणमें पूजनीय करो। जो कर्मोंके द्वारा सुफल देते हैं, वे हो उक्थोंका उच्चारण करनेवाले सतत यज्ञ-सम्पादन करें।

७ तुम्हारे पास जो सर्वश्रेष्ठ है, उसे हमें दो। रक्षणके लिये हम तुम्हारे ही होंगे। युद्ध-समयमें भी तुम्हारे ही होंगे। हम स्तुति और आह्वानके द्वारा तुम्हारा भजन करते हुए स्तुति-पाठ करेंगे।

८ हरि अश्वोंवाले इन्द्र, अन्न, अश्व और गौका इच्छुक होकर मैं तुम्हारा स्तोत्र करता और तुम्हारी रक्षा प्राप्त कर युद्धमें जाता हूँ। भयके समय तुम्हें ही शत्रुओंके बीच स्थापित करता हूं।



६ सूक्त

इन्द्र देवता। ३—४ मन्त्रोंमें अन्य देवोंकी भी स्तुति है। मातरिश्वा ऋषि। अयुक् बृहती और युक् सतोबृहती छन्द।

एतत्त इन्द्र वीर्यं गीर्भिर्गृणन्ति कारवः।
तेस्तोभं त ऊर्जमावन्धृतश्चुतं मौरासो नक्षन्धीतिभिः ॥१॥
नक्षन्त इन्द्रमवसे सुकृत्यया येषां सुतेषु मन्दसे।
यथा संवर्ते अमदो यथा कृश एवास्मे इन्द्र मत्स्व ॥२॥
आ नो विश्वे सजोषसो देवासो गन्तनोपनः।
वसवो रुद्रा अवसे न आगमञ्छृण्वन्तु मरुतो हवम् ॥३॥
पूषा विष्णुर्हवनं मे सरस्वत्यवन्तु सप्तसिन्धवः।
आपो वातः पर्वतासो वनस्पतिः शृणोतु पृथिवी हवम् ॥४॥
यदिन्द्र राधो अस्ति ते माघोनं मघवत्तम।
तेन नो बोधि सधमाद्यो वृधे भगो दानाय वृत्रहन् ॥५॥

---

१ इन्द्र, स्तोता लोग स्तोत्र द्वारा तुम्हारे इस पराक्रमकी प्रशंसा करते हैं। उन्होंने स्तुति करके बल प्राप्त किया था। नागरिकोंने कर्म द्वारा घी चुआनेवाले इन्द्रको व्याप्त किया था।

२ इन्द्र, जिनके सोमाभिषवमें तुम प्रमत्त होते हो, वे उत्तम कर्मके द्वारा तुम्हें व्याप्त करते हैं। जैसे तुम संवर्त्त और कृशके ऊपर प्रसन्न हुए थे, वैसे ही हमारे ऊपर प्रसन्न होओ।

३ सारे देव, समान रूपसे प्रसन्न होकर हमारे सामने और समीप पधारें। रक्षाके लिये वसु और रुद्र लोग आवें। मरुत् लोग आह्वान सुनें।

४ पूषा, विष्णु, सरस्वती, गङ्गा आदि सात नदियाँ, जल, वायु, पर्वत और वनस्पति मेरे यज्ञकी रक्षा करें। पृथिवी आह्वान सुनें।

५ श्रेष्ठ धनी, वृत्रघ्न और भजनीय इन्द्र, तुम्हारा जो धन है, उस धनके साथ, प्रमत्त होकर समृद्धि और दानके लिये बढ़ो।

आ जिपते नृपते त्वमिद्धि नो वाज आवक्षि सुक्रतो ।
वीती होत्राभिरुत देववीतिभिः ससवांसो विशृण्विरे ॥६॥
सन्ति ह्यर्य आशिष इन्द्र आयुर्जनानाम् ।
अस्मान्नक्षस्व मघवन्नुपावसे धुक्षस्व पिप्युषीमिषम् ॥७॥
वयं त इन्द्र स्तोमेभिर्विधेम त्वमस्माकं शतक्रतो ।
महि स्थुरं शशयं राधो अह्रयं प्रस्कण्वाय नितोशय ॥८॥

७ सूक्त

इन्द्र देवता । कृश ऋषि । गायत्री और अनुष्टुप् छन्द ।

भूरीदिन्द्रस्य वीर्यं व्यख्यमभ्यायति । राधस्ते दस्यवे वृक ॥१॥
शतं श्वेतास उक्षणो दिवि तारो न रोचन्ते । मह्ना दिवं न तस्तभुः ॥२॥
शतं वेणूञ्छतं शुनः शतं चर्माणि म्लातानि ।
शतं मे बल्बजस्तुका अरुषीणां चतुःशतम् ॥३॥

---

६ युद्धपति, सुकर्ता और नरेश, तुम हमें युद्धमें ले जाओ । सुना जाता है कि, देवता लोग स्तोत्र और यज्ञके समय, भक्षणके लिये, मिलते हैं ।

७ आर्य इन्द्रके पास अनेक आशीर्वाद और मनुष्योंकी आयु हैं । धनी इन्द्र, हमें व्याप्त करो और वृद्धिकर अन्नका दान करो ।

८ इन्द्र, स्तुति द्वारा हम तुम्हारी सेवा करेंगे । बहुकर्मा इन्द्र, तुम हमारे हो । इन्द्र, प्रस्कण्वके लिये तुम प्रचुर, स्थूल और प्रवृद्ध धन देते हो ।

१ हमने इन्द्रके अनन्त कार्य जाने हैं । दस्युओंके लिये व्याघ्र-रूप इन्द्र, तुम्हारा धन हमारे सामने आ रहा है ।

२ जैसे आकाशमें तारागण शोभित हो रहे हैं, वैसे ही सौ-सौ वृष शोभित होते हैं । वे अपनी महिमासे द्युलोकको स्तब्ध करते हैं ।

३ शतवेणु, शतश्वा, शतम्लात चर्म, शतबल्बजस्तुक और चार सौ अरुषी हैं ।*

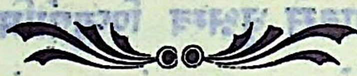
---

* इन शब्दोंका ठीक-ठीक अर्थ क्या है, पता नहीं !

सुदेवाः स्थ काण्वायना वयो वयो विचरन्तः । अश्वासो न चङ्क्रमत ॥४॥

आदित्सातस्य चर्किरन्नानूनस्य महिश्रवः ।

श्यावीरति ध्वसन्पथश्चक्षुषा च न संनशे ॥५॥



८ सूक्त

इन्द्र देवता; अन्तके अग्नि और सूर्य देवता। पृषध्र ऋषि। गायत्री और पङ्क्ति छन्द।

प्रति ते दस्यवे वृक राधो अदर्श्यह्रयम् । द्यौर्न प्रथिनाशवः ॥१॥

दशमह्यं पौतक्रतः सहस्रा दस्यवे वृकः । नित्याद्रायो अमंहत ॥२॥

शतं मे गर्दभानां शतमूर्णावतीनाम् । शतं दासाँ अतिस्रजः ॥३॥

तत्रो अपि प्राणीयत पूतक्रतायै व्यक्ता । अश्वानामिन्न यूथ्याम् ॥४॥

अचेत्यग्निश्चिकितुर्हव्यवाट् स सुमद्रथः ।

अग्निः शुक्रेण शोचिषा बृहत्सूरो अरोचत दिवि सूर्यो अरोचत ॥५॥

---

४ कण्वगोत्रीयो, तुम लोग सारे अन्नोंमें विचरण करते हुए और अश्वोंके समान बार-बार जाते हुए सुन्दर देववाले हुए हो।

५ सङ्ख्यामें सात (सप्त व्याहृतियों) वाले और दूसरेके लिये अधिक इन्द्रके लिये महान् अन्न प्रक्षित होता है। श्यामवर्ण मार्गको लाँघनेपर वह नेत्रोंके द्वारा देखा जाता है।

---

१ दस्युओंके लिये व्याघ्र इन्द्र, तुम्हारा प्रवृद्ध धन देखा गया है। तुम्हारी सेना द्युलोकके समान विस्तृत है।

२ दस्युओंके लिये तुम व्याघ्र हो। अपने नित्य धनसे मुझे दस हजार दो।

३ मुझे एक सौ गर्दभ, एक सौ भेंड़ें और एक सौ दास दो।†

४ अश्वदलके समान वह प्रकट धन, शुद्ध-बुद्धि व्यक्तियोंके लिये, उनके पास जाता है।

५ अग्नि विदित हुए हैं। वह ज्ञानो, सुन्दर रथवाले और हव्यवाहक हैं, वह शुद्ध किरणके द्वारा गतिपरायण और विराट् होकर शोभा पाते हैं। स्वर्गमें सूर्य भी शोभा पाते हैं।

† क्या उस समय दास-प्रथा थी?

९ सूक्त

अश्विद्वय देवता। मेध्य ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

युवं देवा क्रतुना पूर्व्येण युक्ता रथेन तविषं यजत्रा।
आगच्छतं नासत्या शचीभिरिदं तृतीयं सवनं पिबाथः ॥१॥
युवां देवास्त्रय एकादशासः सत्यस्य दद्दशे पुरस्तात्।
अस्माकं यज्ञं सवनं जुषाणा पातं सोममश्विना दीद्यग्नी ॥२॥
पनाय्यं तदश्विनाकृतं वां वृषभो दिवो रजसः पृथिव्या।
सहस्रं शंसा ऊतये गविष्टौ सर्वां इत्ताँ उपयाता पिबध्यै ॥३॥
अयं वां भागो निहतो यजत्रे मागिरो नासत्यो पयातम्।
पिबतं सोमं मधुमन्तमस्मे प्रदाश्वांसमवतं शचीभिः ।४॥

---

१० सूक्त

प्रथमके ऋत्विक देवता; शेषके अग्नि। त्रिष्टुप् छन्द।

यमृत्विजो बहुधा कल्पयन्तः सचेतसो यज्ञमिमं वहन्ति।
यो आनूचानो ब्राह्मणो युक्त आसीत्कास्वित्तत्र यजमानस्य संवित् ॥१॥

---

१ सत्यरूप अश्विद्वय, प्राचीन कालमें बनाये हुए रथपर चढ़कर यज्ञमें पधारो, तुमलोग यजनीय और दिव्य हो। अपने कर्म-बलसे तुमलोग तृतीय सवनका पान करते हो।

२ देवोंकी संख्या तेंतीस है। वे सत्यस्वरूप हैं। वे यज्ञके सम्मुख दिखाई देते हैं। दीप्तिमान् अग्निवाले अश्विद्वय, तुम मेरे हो। इस यज्ञमें आकर सोम पान करो।

३ अश्विद्वय, तुमलोग द्युलोक, भूलोक और अन्तरीक्ष लोकके लिये अभीष्ट-वर्षक हो। तुम्हारे लिये मैंने स्तुति की है। जो लोग हजारों स्तुतियाँ करते हैं और जो लोग गो-यज्ञमें प्रवृत्त होते हैं, सोम-पानके लिये उन सबके पास उपस्थित होओ।

४ अश्विद्वय, तुम्हारा यह भाग रखा हुआ है। तुम्हारी यही स्तुति है। तुम लोग आओ। हमारे लिये मधुर सोमका पान करो। हव्यदाताको कर्म द्वारा बचाओ।



१ सहृदय ऋत्विकोंने जिसकी तरह-तरहकी कल्पना करके इस यज्ञका सम्पादन किया है और जो स्तोत्रका उच्चारण न करनेपर भी स्तोता माना जाता है, उसके सम्बन्धमें यजमानकी क्या अभिज्ञता है?

एक एवाग्निर्बहुधा समिद्ध एकः सूर्यो विश्वमनु प्रभूतः ।
एकैवोषाः सर्वमिदं विभात्येकं वा इदं वि बभूव सर्वम् ॥२॥
ज्योतिष्मन्तं केतुमन्तं त्रिचक्रं सुखं रथं सुषदं भूरि वारम् ।
चित्रा मघायस्य योगे धिजज्ञे तं वां हुवे अतिरिक्तं पिबध्यै ॥३॥

११ सूक्त

इन्द्र और वरुण देवता। सुपर्ण ऋषि। जगती छन्द।

इमानि वां भागधेयानि सिस्रत इन्द्रा वरुणा प्रमहे सुतेषु वाम् ।
यज्ञे यज्ञे ह सवना भुरण्यथो यत्सुन्वते यजमानाय शिक्षथः ॥१॥
निः षिध्वरीरोषधीराप आस्तामिन्द्रा वरुणा महिमानमाशत ।
या सिस्रतूरजसः पारे अध्वनो ययोः शत्रुर्नकिरादेव ओहते ॥२॥
सत्यं तदिन्द्रा वरुणा कृशस्य वां मध्व ऊर्मिं दुहते सप्तवाणीः ।
ताभिर्दाश्वांसमवतं शुभस्पती यो वामदब्धो अभिपाति चित्तिभिः ॥३॥

२ एक अग्नि अनेक प्रकारसे समिद्ध हुए हैं, एक सूर्य सारे विश्वमें अनेक हुए हैं और एक उषा उन सबको प्रकाशित करती है। यह एक ही सब हुए हैं।

३ ज्योति, केतु (धूम-पताका) और चक्र-भयवाले तथा सुखकर, रथस्वरूप और बैठने योग्य अग्निको, अत्यधिक सोम पीनेके लिये, इस यज्ञमें बुलाता हूं। उनके साथ मिलन होनेपर विचित्र धनकी प्राप्ति होती है।

---

१ इन्द्र और वरुण, मैं महायज्ञके सोमाभिषवमें तुम्हें बुलाता हूं। यही तुम्हारा भाग है। इसका ग्रहण करो। प्रत्येक यज्ञमें सारे सोमोंका पोषण करो। सोमाभिषव-कर्त्ता यजमानको दान दो।

२ इन्द्र और वरुण ठहरे हुए हैं। वह अन्तरीक्षके उस पारके मार्गपर जाते हैं। कोई भी देव-शून्य व्यक्ति उनका शत्रु नहीं हो सकता। उनकी कृपासे सुखसम्पन्न ओषधि और जल महत्त्व प्राप्त करते हैं।

३ इन्द्र और वरुण, यह बात सच्ची है कि, सात वाणियाँ तुम्हारे लिये कृश ऋषिके सोम-प्रवाहको दूहती हैं। तुम लोग शुभ-कर्मोंके पालक हो। जो अहिंसित व्यक्ति तुम्हारे कर्म द्वारा पालन करता है, उसी हव्यदाताका हव्य द्वारा पालन करो।

घृतप्रुषः सौम्याजीरदानवः सप्त स्वसारः सदन ऋतस्य ।
या हवामिन्द्रा वरुणा घृतश्चुतस्ताभिर्धत्तं यजमानाय शिक्षतम् ॥४॥
अवोचाम महते सौभगाय सत्यं त्वेषाभ्यां महिमानमिन्द्रियम् ।
अस्मान्त्स्विन्द्रा वरुणा घृतश्चुतस्त्रिभिः साप्तेभिरवतं शुभस्पती ॥५॥
इन्द्रा वरुणाय दृषिभ्यो मनीषां वाचो मतिं श्रुतमदत्तमग्रे ।
यानि स्थानान्यसृजन्त धीरा यज्ञं तन्वानास्तपसाभ्यपश्यम् ॥६॥
इन्द्रावरुणा सौमनसमदृप्तं रायस्पोषं यजमानेषु धत्तम् ।
प्रजापुष्टिं भूतिमस्मासु धत्तं दीर्घायुत्वाय प्रतिरतं न आयुः ॥७॥

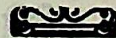
---

४ घी चुलानेवाली, यथेष्ट दान देनेवाली और कमनीय सात भगिनियाँ यज्ञ-गृहमें बहुत दानवाली हुई हैं। इन्द्र और वरुण जो तुम्हारे लिये घी चुलाती हैं, उनके लिये यज्ञ धारण करो और यजमानको दान करो।

५ दीप्तिशील इन्द्र और वरुणके पास महासौभाग्यकी प्राप्तिके लिये सच्ची महिमाका हम कीर्त्तन करेंगे। हम घीको चुलाते हैं। इन्द्र और वरुण शुभ कार्योंके पति हैं। वह २१ कार्योंके द्वारा हमारी रक्षा करें।

६ इन्द्र और वरुण, तुम लोगोंने पहले ऋषियोंको जो बुद्धि, वाक्य, स्तुति और श्रुतको प्रदान किया है, सो सब हम, धीर और यज्ञमें लगे रहकर, तपके द्वारा देखेंगे।

७ इन्द्र और वरुण, जिस धनकी वृद्धिसे मनकी तृप्ति होती है, गर्व नहीं होता, उसे ही यजमानको प्रदान करो। हमें प्रजा, पुष्टि और भूति दो। हम दीर्घायु हो सकें, इसके लिये हमारी आयुको बचाओ।



बालखिल्य-सूक्त समाप्त

नवम मण्डल*

१ अनुवाक । १ सूक्त

पवमान सोम देवता । विश्वमित्रगोत्रोत्पन्न मधुच्छन्दा ऋषि । गायत्री छन्द ।

स्वादिष्ठया मदिष्ठया पवस्व सोम धारया । इन्द्राय पातवे सुतः ॥१॥
रक्षोहा विश्वचर्षणिरभि योनिमयोहतम् । द्रुणा सधस्थमासदत् ॥२॥
वरिवोधातमो भव मंहिष्ठो वृत्रहन्तमः । पर्षि राधो मघोनाम् ॥३॥
अभ्यर्ष महानां देवानां वीतिमन्धसा । अभि वाजमुत श्रवः ॥४॥
त्वामच्छा चरामसि तदिदर्थं दिवेदिवे । इन्दो त्वे न आशसः ॥५॥
पुनाति ते परिस्रुतं सोमं सूर्यस्य दुहिता । वारेण शश्वता तना ॥६॥
तमीमण्वीः समर्य आगृभ्णन्ति योषणो दश । स्वसारः पार्ये दिवि ॥७॥

---

१ सोम, इन्द्रके पानके लिये तुम अभिषुत होकर स्वादुतम और अतीव मदकर धारामें क्षरित होओ।

२ राक्षसोंके विनाशक और सबके दर्शक सोम लोहेसे पिसे जाकर और ३२ सेरवाले कलससे युक्त होकर अभिषवण-स्थानमें बैठते हैं।

३ सोम तुम प्रचुर दान करो, सारे पदार्थोंको दान करो और विशेष रूपसे वृत्रका बध करो। धनी शत्रुओंका धन हमें दो।

४ तुम महान् हो। देवोंके यज्ञकी ओर, अन्नके साथ, जाओ। बल और अन्न दो।

५ इन्दु, हम तुम्हारी सेवा करते हैं; प्रतिदिन यही हमारा काम है।

६ सूर्यकी पुत्री श्रद्धा तुम्हारे क्षरणशील रसको विस्तृत और नित्य दशापवित्रके द्वारा पवित्र करती हैं।

७ अभिषव (सोम चुलाने)के समय यज्ञमें भगिनियोंके समान दश-अङ्गुलि-रूपिणी स्त्रियाँ उस सोमको सबसे पहले ग्रहण करती हैं।

---

* नवम मण्डलमें केवल सोमदेवकी अर्चना है। सामवेदका तृतीयांश इस नवम मण्डलका ही है। पत्थरोंसे कूटकर और दसों अंगुलियोंसे मलकर सोमरस निकाला जाता था। अनन्तर भेड़ोंके बालोंके छन्नेसे छानकर बर्तनमें उसे रखा जाता और भंगके समान, दूध आदिमें मिलाकर, पिया जाता था।

तमीं हिन्वन्त्यग्रुवो धमन्ति वाकुरं दृतिम् । त्रिधातु वारणं मधु ॥८॥
अभीममघ्न्या उत श्रीणन्ति धेनवः शिशुम् । सोममिन्द्राय पातवे ॥९॥
अस्येदिन्द्रो मदेष्वा विश्वा वृत्राणि जिघ्नते । शूरो मघा च मंहते ॥१०॥



२ सूक्त

पवमान सोम देवता । मेधातिथि ऋषि । गायत्री छन्द ।

पवस्व देववीरति पवित्रं सोम रंह्या । इन्द्रमिन्द्रो वृषा विश ॥१॥
आवच्यस्व महि प्सरो वृषेन्दो द्युम्नवत्तमः । आ योनिं धर्णसिः सदः ॥२॥
अधुक्षत प्रियं मधु धारा सुतस्य वेधसः । अपो वसिष्ट सुक्रतुः ॥३॥
महान्तं त्वा महीरन्वापो अर्षन्ति सिन्धवः । यद्गोभिर्वासयिष्यसे ॥४॥
समुद्रो अप्सु मामृजे विष्टम्भो धरुणो दिवः । सोमः पवित्रे अस्मयुः ॥५॥

---

८ अँगुलियाँ उसी सोमको प्रेरित करती हैं । यह सोमात्मक मधु तीन स्थानोंमें (द्रोण-कलस, आधवनीय और पूतभृत्में) रहता है और शत्रुओंकी प्रतिबन्धकता करता है ।

९ न मारने योग्य गायें इस बालक सोमको, इन्द्रके पानके लिये, दूधके द्वारा संस्कृत करती हैं ।

१० शूर इन्द्र, इस सोमपानसे मत्त होकर सारे शत्रुओंका विनाश करते और यजमानोंको धन देते हैं ।

---

१ सोम, तुम देवकामी होकर वेग और पवित्र भावके साथ, गिरो । अभीष्ट-वर्षक इन्द्र, तुम सोमके बीच पैठ जाओ ।

२ सोम, तुम महान्, अभीष्टवर्षक, अतीव यशस्वी और धारक हो । तुम जलको प्रेरित करो । अपने स्थानपर बैठो ।

३ अभिषुत और अभिलाषा-दाता सोमकी धारा प्रिय मधुको दूहती है । शोभनकर्मा सोम जलका आच्छादन करते हैं ।

४ जिस समय तुम गव्यके द्वारा आच्छादित होते हो, उस समय हे महान् सोम, तुम्हारे सामने क्षरणशील महान् जल जाता है ।

५ सोमसे रस उत्पन्न होता है । सोम स्वर्गका धारण करते, संसारको रोके रहते, हमारी अभिलाषा करते और जलके बीच संस्कृत होते हैं ।

अचिक्रदद्वृषा हरिर्महान्मित्रो न दर्शतः । सं सूर्येण रोचते ६
गिरस्त इन्द ओजसा मर्मृज्यन्ते अपस्युवः । याभिर्मदाय शुम्भसे ॥७॥
तं त्वा मदाय घृष्वय उ लोककृत्नुमीमहे । तव प्रशस्तयो महीः ॥८॥
अस्मभ्यमिन्दविन्द्रयुर्मध्वः पवस्य धारया । पर्जन्यो वृष्टिमाँ इव ॥९॥
गोषा इन्दो नृषा अस्यश्वसा वाजसा उत । आत्मा यज्ञस्य पूर्व्यः ॥१०॥

३ सूक्त

पवमान सोम देवता । शुनःशेफ ऋषि । गायत्री छन्द ।

एष देवो अमर्त्यः पर्णवीरिव दीयति । अभि द्रोणान्यासदम् ॥१॥
एष देवो विपा कृतोऽति ह्वरांसि धावति । पवमानो अदाभ्यः ॥२॥
एष देवो विपन्युभिः पवमान ऋतायुभिः । हरिर्वाजाय मृज्यते ॥३॥

६ अभीष्टवर्षक, हरितवर्ण, महान् और मित्रके समान दर्शनीय सोम शब्द करते और सूर्यके साथ प्रदीप्त होते हैं ।

७ इन्दु, जिन स्तुतियोंसे मत्तताके लिये तुम अलङ्कृत होते हो, वे ही कर्मेच्छा-सम्बन्धी स्तुतियाँ तुम्हारे बलके प्रतापसे संशोधित होती हैं ।

८ तुम्हारी प्रशंसाएँ महती हैं । तुमने शत्रुओंको रगड़नेवाले यजमानके लिये उत्तम लोककी सृष्टि की है । हम तुम्हारे पास मत्तताकी याचना करते हैं ।

९ इन्दु (सोम), इन्द्रके अभिलाषी होकर, वर्षक मेघके समान, मधुर धारासे हमारे सामने गिरो ।

१० इन्दु, तुम यज्ञकी पुरानी आत्मा हो । तुम गौ, पुत्र, अन्न और अश्व प्रदान करो ।



१ यह अमर सोम द्रोण- कलसके सामने बैठनेके लिये, पक्षीके समान, जाते हैं ।

२ अङ्गुलिके द्वारा अभिषुत यह सोम क्षरित और अभिषुत होकर जाते हैं ।

३ यज्ञाभिलाषी स्तोता लोग क्षरणशील इन सोमदेवको अश्वके समान युद्धके लिये अलङ्कृत करते हैं ।

एष विश्वानि वार्या शूरो यन्निव सत्वभिः । पवमानः सिषासति ॥४॥
एष देवो रथर्यति पवमानो दशस्यति । अविष्कृणोति वग्वनुम् ॥५॥
एष विप्रैरभिष्टुतोऽपो देवो वि गाहते । दधद्रत्नानि दाशुषे ॥६॥
एष दिवं वि धावति तिरो रजांसि धारया । पवमानः कनिक्रदत् ॥७॥
एष दिवं व्यासरत्तिरो रजांस्यस्पृतः । पवमानः स्वध्वरः ॥८॥
एष प्रत्नेन जन्मना देवो देवेभ्यः सुतः । हरिः पवित्रे अर्षति ॥९॥
एष उ स्य पुरुव्रतो जज्ञानो जनयन्निषः । धारया पवते सुतः ॥१०॥

४ सूक्त

पवमान सोम देवता । अङ्गिरोगोत्रीय हिरण्यस्तूप ऋषि । गायत्री छन्द ।

सना च सोम जेषि च पवमान महि श्रव । अथानो वस्यसस्कृधि ॥१॥

४ क्षरणशील यह वीर सोम अपने बलसे गमनकर्त्ताके समान सारे धनोंको बाँटनेकी इच्छा करते हैं ।

५ क्षरणशील यह सोम रथकी इच्छा करते हैं, मनोरथ पूर्ण करते हैं और शब्द करते हैं ।

६ मेधावियोंके द्वारा इस सोमके स्तुति करनेपर यह सोम हव्यदाताको रत्न-दान करते हुए जलके बीच पैठते हैं ।

७ क्षरणशील यह सोम शब्द करके और सारे लोकोंको हराकर स्वर्गको जाते हैं ।

८ क्षरणशील यह सोम सुन्दर, याज्ञिक और अहिंसित होकर सारे लोकोंको पराभूत करते हुए स्वर्गमें जाते हैं ।

९ हरितवर्ण यह सोमदेव प्राचीन जन्मसे देवोंके लिये अभिषुत होकर दशापवित्रमें रहनेके लिये जाते हैं ।

१० यह बहुकर्मा सोम ही उत्पन्न होनेके साथ ही अन्नको उत्पन्न करके और अभिषुत होकर धाराके रूपमें क्षरित होते हैं ।



१ महान् अन्न और पवमान सोम, भजन करो, जय करो और पश्चात् हमारे मङ्गलका विधान करो ।

सना ज्योतिः सना स्वर्विश्वा च सोम सौभगा । अथा नो वस्यसस्कृधि ॥२॥
सना दक्षमुत क्रतुमप सोम मृधो जहि । अथा नो वस्यसस्कृधि ॥३॥
पवीतारः पुनीतन सोममिन्द्राय पातवे । अथा नो वस्यसस्कृधि ॥४॥
त्वं सूर्ये न आ भज तव क्रत्वा तवोतिभिः । अथा नो वस्यसस्कृधि ॥५॥
तव क्रत्वा तवोतिभिर्ज्योक् पश्येम सूर्यम् । अथा नो वस्यसस्कृधि ॥६॥
अभ्यर्ष स्वायुध सोम द्विबर्हसं रयिम् । अथा नो वस्यसस्कृधि ॥७॥
अभ्यर्षानपच्युतो रयिं समत्सु सासहिः । अथा नो वस्यसस्कृधि ॥८॥
त्वां यज्ञैरवीवृधन् पवमान विधर्मणि । अथा नो वस्यसस्कृधि ॥९॥
रयिं नश्चित्रमश्विनमिन्दो विश्वायुमा भर । अथा नो वस्यसस्कृधि ॥१०॥



२ सोम ज्योति दो, स्वर्गका दान करो और सारे सौभाग्यका दान करो । अनन्तर हमारे लिये मङ्गल करो ।

३ सोम, बल और कर्मका दान करो, हिंसकोंका बध करो । अनन्तर हमारे लिये कल्याण करो ।

४ सोमका अभिषव करनेवालो तुम लोग इन्द्रके पानके लिये सोमका अभिषव करो । अनन्तर हमारा कल्याण करो ।

५ सोम, अपने कार्य और रक्षणके द्वारा हमें सूर्यकी प्राप्ति कराओ । अनन्तर हमारा कल्याण करो ।

६ तुम्हारे कर्म और रक्षणके द्वारा हम चिरकालतक सूर्यका दर्शन करेंगे । अनन्तर हमारा कल्याण करो ।

७ शोभन अस्त्रवाले सोम, तुम स्वर्ग और पृथिवीपर वर्द्धित धन दो । अनन्तर हमारा कल्याण करो ।

८ लड़ाइयोंमें तुम स्वयं आहूत नहीं होते । तुम शत्रुओंको हराते हो । धन दान करो । अनन्तर हमारा कल्याण करो ।

९ क्षरणशील सोम, यजमान लोग रक्षणके लिये तुम्हें यज्ञमें वर्द्धित करते हैं । अनन्तर हमारा कल्याण करो ।

१० इन्द्र, तुम हमें नाना प्रकारके अश्वोंवाले और सर्वगामी धन दो । अनन्तर हमारा कल्याण करो ।

५ सूक्त

आप्री देवता । कश्यपगोत्रीय असित और देवल ऋषि । अनुष्टुप् और गायत्री छन्द ।

समिद्धो विश्वतस्पतिः पवमानो वि राजति । प्रीणन्वृषा कनिक्रदत् ॥१॥

तनूनपात् पवमानः शृङ्गे शिशानो अर्षति । अन्तरिक्षेण रारजत् ॥२॥

ईळेन्यः पवमानो रयिर्वि राजति द्युमान् । मधोर्धाराभिरोजसा ॥३॥

बर्हिः प्राचीनमोजसा पवमानः स्तृणन्हरिः । देवेषु देव ईयते ॥४॥

उदातैर्जिहते बृहद्द्वारो देवीर्हिरण्ययीः । पवमानेन सुष्टुताः ॥५॥

सुशिल्पे बृहती मही पवमानो वृषण्यति । नक्तोषासा न दर्शते ॥६॥

उभा देवा नृचक्षसा होतारा दैव्या हुवे । पवमान इन्द्रो वृषा ॥७॥

भारती पवमानस्य सरस्वतीळामही ।

इमं नो यज्ञमा गमन्तिस्रो देवीः सुपेशसः ॥८॥

त्वष्टारमग्रजां गोपां पुरोयावानमा हुवे ।

इन्दुरिन्द्रो वृषा हरिः पवमानः प्रजापतिः ॥९॥

---

१ भली भाँति दीप्त, सबके पति और काम-वर्षक पवमान सोम शब्द करके और देवोंको प्रसन्न करके विराजित होते हैं ।

२ जल-पौत्र पवमान (क्षरणशील = गिरनेवाले) सोम उन्नत प्रदेशमें तीक्ष्ण होकर और अन्तरीक्षमें प्रदीप्त होकर जाते हैं ।

३ स्तुत्य, अभीष्टदाता और दीप्तिमान् पवमान सोम मधु-धाराके साथ तेजोबलसे विराजित होते हैं ।

४ हरित-वर्ण सोमदेव यज्ञमें पूर्वाग्रमें कुश-विस्तार करते हुए तेजोबलसे गमन करते हैं ।

५ हिरण्मयी द्वार-देवियाँ पवमान सोमके साथ स्तुत होकर विराट् दिशाओंमें चढ़ती हैं ।

६ इस समय पवमान सोम सुन्दर-रूपा, बृहती, महती और दर्शनीया दिवारात्रिकी कामना करते हैं ।

७ मनुष्योंके दर्शक और देवोंके होता दोनों देवोंको मैं बुलाता हूँ । पवमान सोम दीप्त (इन्द्र) और अभीष्टवर्षक हैं ।

८ भारती, सरस्वती और महती इड़ा नामकी तीन सुन्दरी देवियाँ हमारे इस सोम-यज्ञमें पधारें ।

९ अग्रजात, प्रजापालक और अग्रगामी त्वष्टाको मैं बुलाता हूँ । हरित-वर्ण पवमान सोम देवेन्द्र, काम-वर्षक और प्रजापति हैं ।

वनस्पतिं पवमान मध्वा समङ्धि धारया ।
सहस्रवल्शं हरितं भ्राजमानं हिरण्ययम् ॥१०॥
विश्वे देवाः स्वाहाकृतिं पवमानस्यागत ।
वायुर्बृहस्पतिः सूर्योऽग्निरिन्द्रः सजोषसः ॥११॥



६ सूक्त

पवमान सोम देवता । कश्यप गोत्रीय असित और देवल ऋषि । गायत्री छन्द ।

मन्द्रया सोम धारया वृषा पवस्व देवयुः । अव्यो वारेष्वस्मयुः ॥१॥
अभि त्यं मद्यं मदमिन्दविन्द्र इति क्षर । अभि वाजिनो अर्वतः ॥२॥
अभि त्यं पूर्व्यं मन्द सुवानो अर्ष पवित्र आ । अभि वाजमुत श्रवः ॥३॥
अनु द्रप्सास इन्दव आपो न प्रवतासरन् । पुनाना इन्द्रमाशत ॥४॥
यमत्यमिव वाजिनं मृजन्ति योषणो दश । वने क्रीलन्तमत्यविम् ॥५॥

---

१० पवमान सोम, हरित-वर्ण हिरण्यवर्ण, दीप्तिमान् और सहस्र शाखाओंवाले वनस्पतिको मधुर धाराके द्वारा संस्कृत करो।

११ विश्वदेवगण वायु, बृहस्पति, सूर्य, अग्नि और इन्द्र, तुम सब मिलकर सोमके स्वाहा शब्दके पास आओ।



१ सोम, तुम अभिष्टवर्षक और देवाभिलाषी हो। तुम हमारी कामना करते हो। तुम हमारी रक्षा करो और दशापवित्रमें मधुर धारासे गिरो।

२ सोम, तुम स्वामी हो; इसलिये मदकर सोमका वर्षण करो। बली अश्व प्रदान करो।

३ अभिषुत होकर उस पुरातन और मदकर रसको दशापवित्रमें प्रेरित करो। बल और अन्नका प्रेरण करो।

४ जैसे जल निम्न दिशाकी ओर जाता है, वैसे ही द्रुतगति और क्षरणशील सोम इन्द्रका अनुसरण करता और उन्हें व्याप्त करता है।

५ दश-अङ्गुलि-रूप स्त्रियाँ दशापवित्रको लाँघकर वनमें क्रीड़ा करनेवाले बलवान् अश्वके समान जिस सोमकी सेवा करती हैं—

तं गोभिर्वृषणं रसं मदाय देववीतये। सुतं भराय सं सृज ॥६॥
देवो देवाय धारयेन्द्राय पवते सुतः। पयो यदस्य पीपयत् ॥७॥
आत्मा यज्ञस्य रंह्या सुष्वाणः पवते सुतः। प्रत्नं नि पाति काव्यम् ॥८॥
एवा पुनान इन्द्रयुर्मदं मदिष्ठ वीतये। गुहा चिद्दधिषे गिरः ॥९॥

---

७ सूक्त

पवमान सोम देवता। असित अथवा देवल ऋषि। गायत्री छन्द।

असृग्रमिन्दवः पथा धर्मन्नृतस्य सुश्रियः। विदाना अस्य योजनम् ॥१॥
प्र धारा मध्वो अग्रियो महीरपो वि गाहते। हविर्हविष्षु वन्द्यः ॥२॥
प्र युजो वाचो अग्रियो वृषाव चक्रदद्वने। सद्माभि सत्यो अध्वरः ॥३॥
परि यत् काव्या कविर्नृम्णा वसानो अर्षति। स्वर्वाजी सिषासति ॥४॥

---

६ पान करनेपर देवोंके मत्त होनेके लिये अभिषुत और अभीष्टवर्षक उसी सोमके रसमें, युद्धके लिये, गव्य मिलाओ।

७ इन्द्रके लिये अभिषुत सोमदेव धाराके रूपमें क्षरित होते हैं; क्योंकि इन्द्र इनका रस आप्यायित करता है।

यज्ञकी आत्मा और अभिषुत सोम यजमानोंको अभीष्ट देते हुए वेगसे गिरते हैं और अपना पुराना कवित्व (क्रान्तदर्शित्व) की भी रक्षा करते हैं।

९ मदकर सोम, इन्द्रकी अभिलाषासे उनके पानके लिये क्षरित होकर यज्ञ-शालामें शब्द करो।

---

१ शोभन श्रीवाले और इन्द्रका सम्बन्ध जाननेवाले सोम कर्ममें, यज्ञ-मार्गमें, बनाये जाते हैं।

२ सोम हव्योंमें स्तुत्य हव्य हैं। सोम महान् जलमें निमज्जित होते हैं। उन्हीं सोमकी श्रेष्ठ धाराएँ गिरती हैं।

३ अभीष्टवर्षक, सत्य, हिंसा-शून्य और प्रधान सोम यज्ञ-गृहकी ओर जलमें युक्त शब्द करते हैं।

४ जिस समय कवि सोम धनको ग्रहण करते हुए काव्य (स्तोत्र) को जानते हैं, उस समय स्वर्गमें इन्द्र बलका प्रकाश करते हैं।

पवमानो अभि स्पृधो विशो राजेव सीदति । यदीमृण्वन्ति वेधसः ॥५॥
अव्यो वारे परि प्रियो हरिर्वनेषु सीदति । रेभो वनुष्यते मती ॥६॥
स वायुमिन्द्रमश्विना साकं मदेन गच्छति । रणा यो अस्य धर्मभिः ॥७॥
आ मित्रावरुणा भगं मध्वः पवन्त ऊर्मयः । विदाना अस्य शक्मभिः ॥८॥
अस्मभ्यं रोदसी रयिं मध्वो वाजस्य सातये । श्रवो वसूनि संजितम् ॥९॥



८ सूक्त

पवमान सोम देवता । असित अथवा देवल ऋषि । गायत्री छन्द ।

एते सोमा अभि प्रियमिन्द्रस्य काममक्षरन् । वर्द्धन्तो अस्य वीर्यम् ॥१॥
पुनानासश्चमूषदो गच्छन्तो वायुमश्विना । ते नो धान्तु सुवीर्यम् ॥२॥
इन्द्रस्य सोम राधसे पुनानो हार्दि चोदय । ऋतस्य योनिमासदम् ॥३॥

---

५ जिस समय कर्मकर्त्ता इस सोमको प्रेरित करते हैं, उस समय पवमान सोम, राजाके समान, यज्ञ-विघ्नकर्त्ता मनुष्योंकी ओर जाते हैं।

६ हरित-वर्ण और प्रिय सोम जलमें मिश्रित होकर मेषके लोमों (बालों)पर बैठते और शब्द करते हुए स्तुतिकी सेवा करते हैं।

७ जो सोमके इस कर्मसे प्रसन्न होता है, वह वायु, इन्द्र और अश्विद्वयको मदके साथ पाता है।

८ जिन यजमानोंके सोमोंकी तरङ्गें मित्र, वरुण और भगदेवकी ओर गिरती हैं, वे सोमका जानते हुए सुख प्राप्त करते हैं।

९ द्यावापृथिवी, मदकर सोम-रूप अन्नकी प्राप्तिके लिये हमें अन्न, धन और पशु आदि दो।

१ ये सोम इन इन्द्रके वीर्यको बढ़ाते हुए उनके अभिलषणीय और प्रीतिकर रसका वर्षण करते हैं।

२ वे सोम अभिषुत होते हैं, चमसमें स्थित होते हैं और वायु तथा अश्विद्वयके पास जाते हैं। वायु आदि हमें सुन्दर वीर्य दें।

३ सोम, तुम अभिषुत और मनोज्ञ होकर इन्द्रकी आराधनाके लिये यज्ञ-स्थानमें बैठो और इन्द्रको प्रेरित करो।

मृजन्ति त्वा दश क्षिपो हिन्वन्ति सप्त धीतयः । अनु विप्रा अमादिषुः ॥४॥
देवेभ्यस्त्वा मदाय कं सृजानमति मेष्यः । सं गोभिर्वासयामसि ॥५॥
पुनानः कलशेष्वा वस्त्राण्यरुषो हरिः । परि गव्यान्यव्यत ॥६॥
मघोन आ पवस्व नो जहि विश्वा अप द्विषः । इन्द्रो सखायमा विश ॥७॥
वृष्टिं दिवः परि स्रव द्युम्नं पृथिव्या अधि । सहो नः सोम पृत्सु धाः ॥८॥
नृचक्षसं त्वा वयमिन्द्रपीतं स्वर्विदम् । भक्षीमहि प्रजामिषम् ॥९॥

९ सूक्त

पवमान सोम देवता। असित अथवा देवल ऋषि। गायत्री छन्द।

परि प्रिया दिवः कविर्वयांसि नप्त्योर्हितः । सुवानो याति कविक्रतुः ॥१॥
प्रप्र क्षयाय पन्यसे जनाय जुष्टो अद्रुहे । वीत्यर्ष चनिष्ठया ॥२॥

---

४ सोम, दसो अँगुलियाँ तुम्हारी सेवा करती हैं। सात होता तुम्हें प्रसन्न करते हैं और मेधावी लोग तुम्हें प्रमत्त करते हैं।

५ तुम मेष-लोम और जलमें बनाये जाते हो। देवोंकी मत्तताके लिये हम तुम्हें दही आदिमें मिला देंगे।

६ अभिषुत, कलसमें भली भाँति सिक्त, दीप्तियुक्त और हरितवर्ण सोम, वस्त्रके समान, दही आदिको आच्छादित करता है।

७ सोम, हम धनी हैं। तुम हमारे सामने क्षरित होओ। सारे शत्रुओंका विनाश करो। मित्र इन्द्रको प्राप्त करो।

८ सोम, द्युलोकसे तुम पृथिवीके ऊपर वर्षा करो। धनको उत्पन्न करो और युद्धमें हमें बल-स्थान दो।

९ सोम, तुम नेताओंके दर्शक और सर्वज्ञ हो। इन्द्रके पान करनेपर हम तुम्हारा पान करते हैं। हम सन्तान और अन्न प्राप्त करें।

१ मेधावी और क्रान्तदर्शी सोम अभिषवण-प्रस्तरके ऊपर निहित और अभिषुत होकर द्युलोकके अतीव प्रिय पक्षियोंके पास जाते हैं।

२ तुम अपने निवास-भूत अद्रोही और स्तोता मनुष्यके लिये पर्याप्त हो। अन्नवाली धाराके साथ आओ।

स सूनुर्मातरा शुचिर्जातो जाते अरोचयत् । महान्मही ऋतावृधा ॥३॥
स सप्त धीतिभिर्हितो नद्यो अजिन्वदद्रुहः । या एकमक्षि वावृधुः ॥४॥
ता अभि सन्तमस्तृतं महे युवानमा दधुः । इन्दुमिन्द्र तव व्रते ॥५॥
अभि वह्निरमर्त्यः सप्त पश्यति वावहिः । क्रिविर्देवीरतर्पयत् ॥६॥
अवा कल्पेषु नः पुमस्तमांसि सोम योध्या । तानि पुनान जङ्घनः ॥७॥
नू नव्यसे नवीयसे सूक्ताय साधया पथः । प्रत्नवद्रोचया रुचः ॥८॥
पवमान महि श्रवो गामश्वं रासि वीरवत् । सना मेधां सना स्वः ॥९॥

---

१० सूक्त

पवमान सोम देवता । असित अथवा देवल ऋषि । गायत्री छन्द ।

प्र स्वानासो रथाइवार्वन्तो न श्रवस्यवः । सोमासो राये अक्रमुः ॥१॥

---

३ उत्पन्न, पवित्र और महान् वह सोम-रूप पुत्र महती, यज्ञ-वर्द्धयित्री, जनयित्री और माता द्यावापृथिवीको प्रदीप्त करते हैं ।

४ नदियोंने जिन अक्षीण और मुख्य सोमको वर्द्धित किया है, वही सोम अङ्गुलि द्वारा निहित होकर द्रोह-शून्य सातो नदियोंको प्रसन्न करते हैं ।

५ इन्द्र, तुम्हारे कर्ममें उन अङ्गुलियोंने अहिंसित और वर्त्तमान सोमको महान् कर्मके लिये धारण किया है ।

६ वाहक और अमर देवोंके तृप्तिदाता सोम सातो नदियोंका दर्शन करते हैं । वह कूप-रूपसे पूर्ण होकर नदियोंको तृप्त करते हैं ।

७ पुरुष सोम, कल्पनीय दिनोंमें हमारी रक्षा करो । पवमान सोम, जिन राक्षसोंके साथ युद्ध किया जाना चाहिये, उन्हें विनष्ट करो ।

८ सोम, तुम नये और स्तुत्य सूक्तके लिये शीघ्र ही यज्ञ-पथसे आओ और पहलेकी तरह दीप्ति-का प्रकाश करो ।

९ शोधनकालीन सोम, तुम पुत्रवान् महान् अन्न, गौ और अश्व हमें दान करते हो । दान करो और हमें मनोरथ दो ।

---

१ रथ और अश्वके समान शब्द करनेवाले सोम, अन्नकी इच्छा करते हुए, यजमानके धनके लिये आये हैं ।

हिन्वानासो रथा इव दधन्विरे गभस्त्योः । भरासः कारिणामिव ॥२॥

राजानो न प्रशस्तिभिः सोमासो गोभिरञ्जते ।

यज्ञो न सप्त धातृभिः ॥३॥

परि सुवानास इन्दवो मदाय बर्हणा गिरा । सुता अर्षन्ति धारया ॥४॥

आपानासो विवस्वतो जनन्त उषसो भगम् । सूरा अण्वं वितन्वते ॥५॥

अप द्वारा मतीनां प्रत्ना ऋण्वन्ति कारवः । वृष्णो हरस आयवः ॥६॥

समीचीनास आसते होतारः सप्तजामयः । पदमेकस्य पिप्रतः ॥७॥

नाभा नाभिं न आ ददे चक्षुश्चित् सूर्ये सचा । कवेरपत्यमा दुहे ॥८॥

अभि प्रिया दिवस्पदमध्वर्युभिर्गुहा हितम् । सूरः पश्यति चक्षसा ॥९॥



---

२ रथके समान सोम यज्ञकी ओर जाते हैं। जैसे भार-वाहक भुजाओंपर भारको धारण करता है, वैसे ही ऋत्विक् लोग बाहुके द्वारा उन्हें धारण करते हैं।

३ जैसे स्तुतिसे राजा सन्तुष्ट होते हैं और जैसे सात होताओंके द्वारा यज्ञ संस्कृत होता है, वैसे ही गव्यके द्वारा सोम संस्कृत होता है।

४ अभिषुत सोम महती स्तुतिके द्वारा अभिषुत होकर, मत्त करनेके लिये धारा-रूपसे जाते हैं।

५ इन्द्रके मद-गोष्ठ-रूप, उषाके भाग्यके उत्पादक तथा गिरनेवाले सोम शब्द करते हैं।

६ स्तोता, प्राचीन, अभीष्टवर्षक और सोमका भक्षण करनेवाले मनुष्य यज्ञके द्वारका उद्घाटन करते हैं।

७ उत्तम सात बन्धुओंके समान और सोमके स्थानका एक मात्र पूरण करनेवाले सात होता यज्ञमें बैठते हैं।

८ मैं यज्ञकी नाभि सोमको अपने नाभि-देशमें ग्रहण करता हूँ। चक्षु सूर्यमें सङ्गत होता है। मैं कवि सोमके प्रभावको पूर्ण करता हूँ।

९ गमन-परायण और दीप्त इन्द्र हृदयमें निहित अपने प्रिय पदार्थ सोमको नेत्रसे देख सकते हैं।



११ सूक्त

पवमान सोम देवता। असित अथवा देवल ऋषि। गायत्री छन्द।

उपास्मै गायता नरः पवमानायेन्दवे। अभि देवाँ इयक्षते ॥१॥

अभि ते मधुना पयोथर्वाणो अशिश्रयुः। देवं देवाय देवयु ॥२॥

स नः पवस्व शं गवे शं जनाय शमर्वते। शं राजन्नोषधीभ्यः ॥३॥

बभ्रवे नु स्वतवसेरुणाय दिविस्पृशे। सोमाय गाथमर्चत ॥४॥

हस्तच्युतेभिरद्रिभिः सुतं सोमं पुनीतन। मधावा धावता मधु ॥५॥

नमसेदुप सीदत दध्नेदभि श्रीणीतन। इन्दुमिन्द्रे दधातन ॥६॥

अमित्रहा विचर्षणिः पवस्व सोम शं गवे। देवेभ्यो अनुकामकृत् ॥७॥

इन्द्राय सोम पातवे मदाय परि षिच्यसे। मनश्चिन्मनसस्पतिः ॥८॥

पवमान सुवीर्यं रयिं सोम रिरीहि नः। इन्दविन्द्रेण नो युजा ॥९॥

---

१ नेताओ, यह क्षरणशील सोम देवोंका यज्ञ करना चाहता है। इसके लिये गाओ।

२ सोम, अथर्वा ऋषियोंने तुम्हारे दीप्तिवाले और देवाभिलाषी रसको इन्द्रके लिये, गोदुग्धमें संस्कृत किया है।

३ राजन्, तुम हमारी गायके लिये सरलतासे गिरो। पुत्र आदिके लिये भी सुखसे गिरो। अश्वके लिये सरलतासे गिरो। ओषधियोंके लिये सुखसे गिरो।

४ स्तोताओ, तुम लोग पिङ्गलवर्ण, स्वबलरूप, अरुणवर्ण और स्वर्गको छूनेवाले सोमके लिये शीघ्र गाथाका उच्चारण करो।

५ ऋत्विको, हाथके अभिषव-पाषाण द्वारा अभिषुत सोमको पवित्र करो। मदकर सोममें गोदुग्ध डालो।

६ नमस्कारके साथ सोमके पास जाओ। उसमें दही मिलाओ, इन्द्रके लिये सोम दो।

७ सोम, तुम शत्रुविनाशक हो। तुम विचक्षण और देवोंके मनोरथ-पूरक हो। तुम हमारी गायके लिये सरलतासे क्षरित होओ।

८ सोम, तुम मनके ज्ञाता और मनके ईश्वर हो। तुम पात्रोंमें इसलिये सींचे जाते हो कि, तुम्हें पीकर इन्द्र प्रमत्त होंगे।

९ भीँगे हुए और गिरते हुए सोम, इन्द्रके साथ तुम हमें सुन्दर वीर्यसे युक्त धन दो।

१२ सूक्त

पवमान सोम देवता। असित अथवा देवल ऋषि। गायत्री छन्द।

सोमा असृग्रमिन्दवः सुता ऋतस्य सादने। इन्द्राय मधुमत्तमाः ॥१॥

अभि विप्रा अनूषत गावो वत्सं न मातरः। इन्द्रं सोमस्य पीतये ॥२॥

मदच्युत् क्षेति सादने सिन्धोरूर्मा विपश्चित्।
सोमो गौरी अधि श्रितः ॥३॥

दिवो नाभा विचक्षणोऽव्यो वारे महीयते। सोमो यः सुक्रतुः कविः ॥४॥

यः सोमः कलशेष्वाँ अन्तः पवित्र आहितः। तमिन्दुः परि षस्वजे ॥५॥

प्र वाचमिन्दुरिष्यति समुद्रस्याधि विष्टपि। जिन्वन् कोशं मधुश्चुतम् ॥६॥

नित्यस्तोत्रो वनस्पतिर्धीनामन्तः सबर्दुघः। हिन्वानो मानुषा युगा ॥७॥

---

१ अभिषुत और अतीव मधुर सोम इन्द्रके लिये यज्ञगृहमें प्रस्तुत हो रहा है।

२ जैसे गायें बछड़ोंके सामने बोलती हैं, वैसे ही मेधावी लोग सोमपानके लिये इन्द्रके पास शब्द करते हैं।

३ मदस्रावी सोम नदी-तरङ्ग (वसतीवरी) के यहाँ रहते हैं। विद्वान् सोम माध्यमिकी वाक् (वचन) में आश्रय पाते हैं।

४ सुन्दर-प्रज्ञ, क्रान्तकर्मा और सूक्ष्मदर्शक सोम अन्तरीक्षके नाभि-स्वरूप मेषलोममें पूजित होते हैं।

५ जो सोम कुम्भमें है और दशापवित्रके बीच जो निहित है, उस अपने अंशमें सोमदेव प्रवेश करते हैं।

६ सोम मदस्रावी मेघको प्रसन्न करते हुए अन्तरीक्षके रोकनेवाले स्थान (दशापवित्र) में शब्द करते हैं।

७ सदा स्तोत्रवाले और अमृतको दूहनेवाले वनस्पति (सोम) मनुष्योंके लिये एक दिन कर्मके बीच प्रसन्नतासे रहते हैं।

अभि प्रिया दिवस्पदा सोमो हिन्वानो अर्षति । विप्रस्य धारया कविः ॥८॥

आ पवमान धारय रयिं सहस्रवर्चसम् । अस्मे इन्दो स्वाभुवम् ॥९॥



८ कवि सोम अन्तरीक्षसे भेजे जाकर मेधावियोंकी धाराके रूपसे प्रिय स्थानमें जाते हैं।

९ पवमान (क्षरणशील) सोम, तुम हमें बहुदीप्तिवाले और सुन्दर गृहवाले धन दो।



सप्तम अध्याय समाप्त

अष्टम अध्याय

१३ सूक्त

सोम देवता। असित अथवा देवल ऋषि। गायत्री छन्द।

सोमः पुनानो अर्षति सहस्रधारो अत्यविः। वायोरिन्द्रस्य निष्कृतम् ॥१॥
पवमानमवस्यवो विप्रमभि प्र गायत। सुष्वाणं देववीतये ॥२॥
पवन्ते वाजसातये सोमाः सहस्रपाजसः। गृणाना देववीतये ॥३॥
उत नो वाजसातये पवस्व बृहतीरिषः। द्युमदिन्दो सुवीर्यम् ॥४॥
ते नः सहस्रिणं रयिं पवन्तामा सुवीर्यम्। सुवाना देवास इन्दवः ॥५॥
अत्या हियाना न हेतृभिरसृग्रं वाजसातये। वि वारमव्यमाशवः ॥६॥
वाश्रा अर्षन्तीन्दवोभि वत्सं न धेनवः। दधन्विरे गभस्त्योः ॥७॥
जुष्ट इन्द्राय मत्सरः पवमान कनिक्रदत्। विश्वा अप द्विषो जहि ॥८॥

---

१ असीम धाराओंवाले और पवित्र सोम दशापवित्रको लाँघकर, वायु और इन्द्रके पानके लिये, संस्कृत पात्रमें जाते हैं।

२ रक्षाभिलाषियो, तुम लोग पवित्र विप्र और देवोंके पानके लिये अभिषुत सामके लिये गमन करो।

३ बहु-बल-दाता और स्तूयमान सोम यज्ञ-सिद्धि और अन्नलाभके लिये क्षरित होते हैं।

४ सोम, हमारे अन्न-लाभके लिये दीप्तिमती और सुन्दर वीर्यवाली तथा महती रस-धारा बरसाओ।

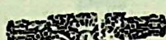
५ वह अभिषुत सोम देव हमें सहस्र-सङ्ख्यक धन और सुवीर्य दें।

६ संग्राममें भेजे गये अश्वके समान प्रेरकोंके द्वारा प्रेरित होकर शीघ्रगामी सोम, अन्न-प्राप्तिके लिये, दशापवित्रको लाँघकर, जा रहे हैं।

७ जैसे गायें बोलती हुई बछड़ोंकी तरफ जाती हैं, वैसे ही सोम भी शब्द करके पात्रकी ओर जाते हैं। ऋत्विक् लोग हाथपर सोम धारण करते है।

८ सोम इन्द्रके लिये प्रिय और मदकर है। पवमान सोम, तुम शब्द करके सारे शत्रुओंका विनाश करो।

अपघ्नन्तो अराव्णः पवमानाः स्वर्दृशः । योनावृतस्य सीदत ॥९॥



१४ सूक्त

सोम देवता । असित अथवा देवल ऋषि । गायत्री छन्द ।

परि प्रासिष्यदत् कविः सिन्धोरूर्मावधि श्रितः । कारं बिभ्रत् पुरुस्पृहम् ॥१॥

गिरा यदी सबन्धवः पञ्च व्राता अपस्यवः । परिष्कृण्वन्ति धर्णसिम्

आदस्य शुष्मिणो रसे विश्वे देवा अमत्सत । यदी गोभिर्वसायते ॥३॥

निरिणानो वि धावति जहच्छर्याणि तान्वा । अत्रा सं जिघ्नते युजा ॥४॥

नप्तीभिर्यो विवस्वतः शुभ्रो न मामृजे युवा । गाः कृण्वानो न निर्णिजम् ॥५॥

अति श्रिती तिरश्चता गव्या जिगात्यण्व्या । वग्नुमियर्ति यं विदे ॥६॥

अभि क्षिपः समग्मत मर्जयन्तीरिषस्पतिम् । पृष्ठा गृभ्णत वाजिनः ॥७॥

परि दिव्यानि मर्मृशद्विश्वानि सोम पार्थिवा । वसूनि याह्यस्मयुः ॥८॥

---

९ पवमान सोम, तुम अदाताओंके हिंसक और सर्वदर्शक हो । यज्ञ-स्थलमें बैठो ।

---

१ नदी-तरङ्ग (वसतीवरी जल-रस) में आश्रित और कवि सोम अनेकोंके लिये अभिलषणीय शब्दका उच्चारण करके गिर रहे हैं ।

२ पाँच देशोंके परस्पर मित्र मनुष्य कर्मकी अभिलाषासे जिस समय धारक सोमको स्तुति द्वारा अलङ्कृत करते हैं—

३ उस समय, सोमके गोदुग्धमें मिलाये जानेपर, सारे देवगण बलवान् सोम-रसमें प्रमत्त होते हैं ।

४ दशापवित्रके वस्त्रके द्वारको छोड़कर सोम अधोदेशमें दौड़ते हैं । इस यज्ञमें मित्र इन्द्रके लिये सङ्गत होते हैं ।

५ जैसे जवान घोड़ेको साफ किया जाता है, वैसे ही सोम, गव्यमें अपनेको मिलाते हुए परिचर्यावालेके पौत्रों (अङ्गुलियों) के द्वारा, मार्जित होते हैं ।

६ अङ्गुलि द्वारा अभिषुत सोम गव्य (दही आदि) में मिलनेके लिये उसके सामने जाते और शब्द करते हैं । मैं सोमको प्राप्त करूँगा

७ परिमार्जन करती हुई अङ्गुलियाँ अन्नपति सोमके साथ मिलती हैं । वह बली सोमकी पीठपर चढ़ गयीं ।

८ सोम, तुम सारे स्वर्गीय और पार्थिव धनोंको ग्रहण करते हुए हमारी इच्छा करके जाओ ।

१५ सूक्त

सोम देवता। असित वा देवल ऋषि। गायत्री छन्द।

एष धिया यात्यण्व्या शूरो रथेभिराशुभिः। गच्छन्निन्द्रस्य निष्कृतम् ॥१॥
एष पुरू धियायते बृहते देवतातये। यत्रामृतास आसते ॥२॥
एष हितो वि नीयतेन्तः शुभ्रावता पथा। यदी तुञ्जन्ति भूर्णयः ॥३॥
एष शृङ्गाणि दोधुवच्छिशीते यूथ्यो वृषा। नृम्णा दधान ओजसा ॥४॥
एष रुक्मिभिरीयते वाजी शुभ्रेभिरंशुभिः। पतिः सिन्धूनां भवन् ॥५॥
एष वसूनि पिब्दना परुषा ययिवाँ अति। अव शादेषु गच्छति ॥६॥
एतं मृजन्ति मर्ज्यमुप द्रोणेष्वायवः। प्रचक्राणं महीरिषः ॥७॥
एतमु त्यं दश क्षिपो मृजन्ति सप्त धीतयः। स्वायुधं मदिन्तमम् ॥८॥



१ यह विक्रान्त सोम, अङ्गुलि द्वारा अभिषुत होकर, कर्म-बलके द्वारा शीघ्रगामी रथकी सहायतासे, इन्द्रके बनाये स्वर्गमें जाते हैं।

२ जिस विशाल यज्ञमें देवता लोग रहते हैं, उसी यज्ञमें सोम बहुत कर्मोंकी इच्छा करते हैं।

३ यह सोम हविर्धानमें स्थापित और तदनन्तर नीत होकर आहवनीय देशमें जिस समय मध्यवर्ती और सोमवाले मार्गमें दिये जाते हैं, उस समय अध्वर्यु लोग भी प्राप्त होते हैं।

४ यह सोम सींग (ऊँचेके हिस्से) को कँपाते हैं। उनकी सींग दलपति साँड़के तेज है। ये बलके द्वारा हमारे लिये धनको धारण करते हैं।

५ यह वेगवान् और शुभ्र अंशोंसे युक्त सोम बहनेवाले सारे रसोंके पति होकर जाते हैं।

६ यह सोम आच्छादन करनेवाले और पीड़ित राक्षसोंको अपने पर्व (अंश) के द्वारा लाँघकर उन्हें जानते हैं।

७ मनुष्य इन मार्जनीय सोमको द्रोण-कलसमें छान रहे हैं। सोम बहुत रस देनेवाले हैं।

८ दस अँगुलियाँ और सात ऋत्विक् शोभन आयुध और मादक सोमको परिमार्जित करते हैं।

१६ सूक्त

सोम देवता । असित वा देवल ऋषि । गायत्री छन्द ।

प्र ते सोतार ओण्यो रसं मदाय घृष्वये । सर्गो न तक्त्येतशः ॥१॥
क्रत्वा दक्षस्य रथ्यमपो वसानमन्धसा । गोषामण्वेषु सश्चिम ॥२॥
अनप्तमप्सु दुष्टरं सोमं पवित्र आसृज । पुनीहीन्द्राय पातवे ॥३॥
प्र पुनानस्य चेतसा सोमः पवित्रे अर्षति । क्रत्वा सधस्थमासदत् ॥४॥
प्र त्वा नमोभिरिन्दव इन्द्र सोमा असृक्षत । महे भराय कारिणः ॥५॥
पुनानो रूपे अव्यये विश्वा अर्षन्नभि श्रियः शूरो न गोषु तिष्ठति ॥६॥
दिवो न सानु पिप्युषी धारा सुतस्य वेधसः वृथा पवित्रे अर्षति ॥७॥
त्वं सोम विपश्चितं तना पुनान आयुषु अव्यो वारं वि धावसि ॥८॥

---

१ सोम, अभिषव करनेवाले द्यावापृथिवीके बीच शत्रुको हरानेवाली मत्तताके लिये उत्पन्न किया जाकर तुम अश्वके समान जाते हो ।

२ हम बलके नेता, जलके आच्छादक, अन्नके साथ वर्त्तमान और गौओंके प्रस्रवण सोममें कर्मके द्वारा अँगुलियोंको मिलाते हैं ।

३ शत्रुओंके द्वारा अप्राप्त, अन्तरीक्षमें वर्त्तमान और दूसरोंके द्वारा अपराजेय सोमको दशापवित्रमें फेंको और इन्द्रके पानके लिये इसे शोधित करो ।

४ स्तुतिके द्वारा पवित्र पदार्थोंमेंसे (एक) सोम दशापवित्रमें जाते और अनन्तर कर्मबलसे द्रोण-कलसमें बैठते हैं ।

५ इन्द्र, नमस्कारसे युक्त स्तोताके साथ सोम बली होकर महायुद्धके लिये तुम्हारे पास जाता है ।

६ मेष-लोमवाले वस्त्रमें शोधित और सारी शोभाओंसे युक्त सोम, गो-प्राप्तिके लिये वीरके समान वर्त्तमान हैं ।

७ अन्तरीक्ष-प्रदेशमें अवस्थित जल जैसे नीचे गिरता है, वैसे ही बलकारक और अभिषत सोमकी आप्यायित करनेवाली धारा दशापवित्रमें गिरती है ।

८ सोम, मनुष्योंमें तुम स्तोताकी रक्षा करते हो । वस्त्रके द्वारा शोधित होकर तुम मेष-लोमके प्रति जाते हो ।

१७ सूक्त

सोम देवता। असित वा देवल ऋषि। गायत्री छन्द।

प्र निम्नेनेव सिन्धवो घ्नन्तो वृत्राणि भूर्णयः। सोमा असृग्रमाशवः ॥१॥
अभि सुवानास इन्दवो वृष्टयः पृथिवीमिव। इन्द्रं सोमासो अक्षरन् ॥२॥
अत्यूर्मिर्मत्सरो मदः सोमः पवित्रे अर्षति। विघ्नन्रक्षांसि देवयुः ॥३॥
आ कलशेषु धावति पवित्रे परि षिच्यते। उक्थैर्यज्ञेषु वर्धते ॥४॥
अति त्री सोम रोचना रोहन्न भ्राजसे दिवम्। इष्णन्त्सूर्यन्न चोदयः ॥५॥
अभि विप्रा अनूषत मूर्धन्यज्ञस्य कारवः। दधानाश्चक्षसि प्रियम् ॥६॥
तमु त्वा वाजिनं नरो धीभिर्विप्रा अवस्यवः। मृजन्ति देवतातये ॥७॥
मध्वोधारामनु क्षर तीव्रः सधस्थमासदः। चारुर्ऋताय पीतये ॥८॥



१ जैसे नदियाँ निम्न देशको ओर जाती हैं, वैसे ही शत्रु-विघातक, शीघ्रगामी और व्याप्त सोम द्रोण-कलसकी ओर जाते हैं।

२ जैसे वर्षा पृथिवीपर गिरती है, वैसे ही अभिषुत सोम इन्द्रकी प्राप्तिके लिये गिरते हैं।

३ अतीव प्रवृद्ध और मदकर सोम, राक्षसोंका विनाश करते हुए, देव-भिलाषी होकर दशा-पवित्रमें जाते हैं।

४ सोम कलसमें जाते हैं। वह दशापवित्रमें सिक्त होते हैं और उक्थ मन्त्रोंके द्वारा वर्द्धित होते हैं।

५ सोम, तुम तीनों लोकोंको लाँघकर और ऊपर चढ़कर स्वर्गको प्रकाशित करते हो और गतिपरायण हो। सूर्यको प्रेरित करते हो।

६ मेधावी स्तोतालोग अभिषव-दिवसमें परिचारक और सोमके प्रिय होकर सोमकी स्तुति करते हैं।

७ सोम, नेता मेधावी लोग अन्नाभिलाषी होकर कर्म द्वारा यज्ञके लिये अन्नवाले तुम्हें ही शोधित करते हैं।

८ सोम, तुम मधुर धाराकी ओर प्रवाहित होओ, तीव्र होकर अभिषव-स्थानमें बैठो और मनोहर होकर यज्ञमें पानके लिये बैठो।



१८ सूक्त

सोम देवता। असित वा देवल ऋषि। गायत्री छन्द।

परि सुवानो गिरिष्ठाः पवित्रे सोमो अक्षाः। मदेषु सर्वधा असि ॥१॥

त्वं विप्रस्त्वं कविर्मधु प्र जातमन्धसः। मदेषु सर्वधा असि ॥२॥

तव विश्वे सजोषसो देवासः पीतिमाशत। मदेषु सर्वधा असि ॥३॥

आ यो विश्वानि वार्या वसूनि हस्तयोर्दधे। मदेषु सर्वधा असि ॥४॥

य इमे रोदसी मही सं मातरेव दोहते। मदेषु सर्वधा असि ॥५॥

परि यो रोदसी उभे सद्यो वाजेभिरर्षति। मदेषु सर्वधा असि ॥६॥

स शुष्मी कलशेष्वा पुनानो अचिक्रदत्। मदेषु सर्वधा असि ॥७॥

---

१ यही सोम दशापवित्रमें गिरते हैं। यही सोम सवन-कालमें प्रस्तरपर अवस्थित हैं। सोम, तुम मादक पदार्थोंमें सबके धारक हो।

२ सोम, तुम मेधावी और कवि हो। तुम अन्नसे उत्पन्न मधुर रस दो। मादक पदार्थोंमें तुम सबके धारक हो।

३ समान प्रीतिवाले होकर सारे देवता तुम्हारा पान करते हैं। मादक पदार्थोंके बीच तुम सबके धाता हो।

४ सोम सारे वरणीय धनोंको स्तोताके हाथमें देते हैं। तुम सारे मादक पदार्थोंमें सबके धाता हो।

५ एक शिशुको दो माताओंके समान तुम महती द्यावापृथिवीका दोहन करते हो।

६ वह अन्नके द्वारा तुरत द्यावापृथिवीको व्याप्त करते हैं। तुम मादक पदार्थोंमें सबके धारक हो।

७ वह सोम बली हैं। शोधित होनेके समय वह कलसके बीच शब्द करते हैं।



१६ सूक्त

सोम देवता। असित वा देवल ऋषि, गायत्री छन्द।

यत् सोम चित्रमुक्थ्यं दिव्यं पार्थिवं वसु। तन्नः पुनान आभर ॥१॥
युवं हि स्थः स्वर्पती इन्द्रश्च सोम गोपती। ईशाना पिप्यतं धियः ॥२॥
वृषा पुनान आयुषु स्तनयन्नधि बर्हिषि। हरिः सन्योनिमासदत् ॥३॥
अवावशन्त धीतयो वृषभस्याधि रेतसि। सूनोर्वत्सस्य मातरः ॥४॥
कुविद्वृषण्यन्तीभ्यः पुनानो गर्भमादधत्। याः शुक्रं दुहते पयः ॥५॥
उप शिक्षापतस्थुषो भियसमा धेहि शत्रुषु। पवमान विदा रयिम् ॥६॥
नि शत्रोः सोम वृष्ण्य नि शुष्मं नि वयस्तिर। दूरे वा सतो अन्ति वा ॥७॥



१ जो कुछ स्तुत्य, पार्थिव और स्वर्गीय विचित्र धन है, शोधित होनेके समय तुम हमारे लिये वह ले आओ।

२ सोम, तुम और इन्द्र सबके स्वामी, गौओंके पालक और ईश्वर हो। तुम हमारे कर्मको वर्द्धित करो।

३ अभिलाषादाता सोम शोधित होकर, मनुष्योंमें शब्द करके और हरित-वर्ण होकर बिछे हुए कुशपर, अपने स्थानपर, बैठते हैं।

४ पुत्र-रूप सोमकी मातृ-रूपिणी वसतीवरी (आदि), सोम द्वारा पीत होकर, मनोरथ-दाता सोमकी सारवत्ताकी कामना करती है।

५ मिलाये जानेके समय सोम सोमाभिलाषिणी वसतीवरी (आदि)को गर्भ उत्पन्न करते हैं। सोम इन जलोंसे दीप्त दुग्धका दोहन करते हैं।

६ पवमान सोम, जो हमारा अभिमत दूरस्थ है, उसे पासमें करो। शत्रुओंमें भय उत्पन्न करो। उनके धनको जानो।

७ सोम चाहे तुम दूर हो वा समीप, शत्रुके वर्षक बलका विनाश करो। उसके शोषक तेजका विनाश करो।



२० सूक्त

सोम देवता। असित वा देवल ऋषि। गायत्री छन्द।

प्र कविर्देववीतयेऽव्यो वारेभिरर्षति। साह्वान्विश्वा अभि स्पृधः ॥१॥
स हि ष्मा जरितृभ्य आ वाजं गोमन्तमिन्वति। पवमानः सहस्रिणम् ॥२॥
परि विश्वानि चेतसा मृशसे पवसे मती। स नः सोम श्रवो विदः ॥३॥
अभ्यर्ष बृहद्यशो मघवद्भ्यो ध्रुवं रयिम्। इषं स्तोतृभ्य आभर ॥४॥
त्वं राजेव सुव्रतो गिरः सोमा विवेशिथ। पुनानो वह्ने अद्भुत ॥५॥
स वह्निरप्सु दुष्टरो मृज्यमानो गभस्त्योः। सोमश्चमूषु सीदति ॥६॥
क्रीळुर्मखो न मंहयुः पवित्रं सोम गच्छसि। दधत् स्तोत्रे सुवीर्यम् ॥७॥

---

१ कवि सोम, देवोंके पानके लिये मेष-लोमोंके द्वारा जाते हैं। शत्रुओंके अभिभव-कर्त्ता सोम सारे हिंसकोंको नष्ट करते हैं।

२ वही पवमान सोम स्तोताओंको गोयुक्त सहस्र-सङ्ख्यक अन्न प्रदान करते हैं।

३ सोम, तुम अपने मनसे सारा धन देते हो। सोम, वही तुम हमें अन्न प्रदान करो।

४ सोम, तुम महती कीर्तिको प्रेरित करो। हव्यदाताको निश्चित धन दो। स्तोताओंको अन्न दो।

५ सोम, तुम सुन्दर कर्मवाले हो। पवित्र (शोधित) होकर तुम राजाके समान हमारी स्तुतिको स्वीकार करो। तुम अद्भुद और वाहक हो।

६ वही सोम वाहक और अन्तरीक्षमें वर्त्तमान हैं। वह हाथोंके द्वारा कठिनतासे रगड़े जाकर पात्रमें स्थित होते हैं।

७ सोम, तुम क्रीड़ा-परायण और दानेच्छुक हो। स्तोताको सुन्दर वीर्य देकर, दानके समान, दशापवित्रमें जाते हो।

२१ सूक्त

सोम देवता । असित वा देवल ऋषि । गायत्री छन्द ।

एते धावन्तीन्दवः सोमा इन्द्राय घृष्वयः । मत्सरासः स्वर्विदः ॥१॥
प्रवृण्वन्तो अभियुजः सुष्वये वरिवोविदः । स्वयं स्तोत्रे वयस्कृतः ॥२॥
वृथा क्रीळन्त इन्दवः सधस्थमभ्येकमित् । सिन्धोरूर्मा व्यक्षरन् ॥३॥
एते विश्वानि वार्या पवमानास आशत । हिता न सप्तयो रथे ॥४॥
आस्मिन् पिशङ्गमिन्दवो दधाता वेनमादिशे । यो अस्मभ्यमरावा ॥५॥
ऋभुर्न रथ्यं नवं दधाता केतमादिशे । शुक्राः पवध्वमर्णसा ॥६॥
एत उ त्ये अवीवशन् काष्ठां वाजिनो अक्रत । सतः प्रासाविषुर्मतिम् ॥७॥

---

१ भिँगोनेवाले, दीप्त, अभिभव करनेवाले, मदकर और लोक-पालक सोम इन्द्रकी ओर जाते हैं ।

२ यह सोम अभिषवका विशेष आश्रय करते हैं । सबके साथ मिलते हैं । अभिभव करनेवालेको धन प्रदान करते हैं । स्तोताको अन्न देते हैं ।

३ सरलतासे क्रीड़ा करनेवाले सोम वसतीवरीमें गिरते हुए एकमात्र द्रोण-कलसमें क्षरित होते हैं ।

४ यह सोम संशोधित होकर रथमें योजित अश्वोंके समान, सारे वरणीय धनोंको व्याप्त करते हैं ।

५ सोम, इस यजमानकी नाना प्रकारकी कामनाए पूर्ण करनेके लिये उसे धन दो । यह यजमान दान देते समय हमें (ऋत्विकोंको) चुपचाप दान करता है ।

६ जैसे ऋभु रथवाहक और प्रशस्य सारथिको प्रज्ञा प्रदान करते हैं, वैसे ही तुमलोग, हे सोम, इस यजमानको प्रज्ञा दो । जलसे दीप्त होकर गिरो ।

७ यह सोम यज्ञकी इच्छा करते हैं । अन्नवान् सोमोंने निवास-स्थान बनाया । बली सोमने यजमानकी बुद्धिको प्रेरित किया ।

२२ सूक्त

सोम देवता । असित वा देवल ऋषि । गायत्री छन्द ।

एते सोमास आशवो रथा इव प्र वाजिनः । सर्गाः सृष्टा अहेषत ॥१॥
एते वाता इवोरवः पर्जन्यस्येव वृष्टयः । अग्नेरिव भ्रमा वृथा ॥२॥
एते पूता विपश्चितः सोमासो दध्याशिरः । विपा व्यानशुर्धियः ॥३॥
एते मृष्टा अमर्त्याः ससृवांसो न शश्रमुः । इयक्षन्तः पथो रजः ॥४॥
एते पृष्ठानि रोदसोर्विप्रयन्तो व्यानशुः । उतेदमुत्तमं रजः ॥५॥
तन्तुं तन्वानमुत्तममनु प्रवत आशत । उतेदमुत्तमाय्यम् ॥६॥
त्वं सोम पणिभ्य आ वसु गव्यानि धारयः । ततं तन्तुमचिक्रदः ॥७॥

---

१ सोम बनाये जाकर दशापवित्रके पास शीघ्र जाते हैं; जिस प्रकार युद्ध-प्रेरित अश्व और रथ ।

२ सोम महान् वायु, मेघ और अग्नि-शिखाके समान सब व्याप्त करते हैं ।

३ यह सोम शुद्ध, प्राज्ञ और दधि-युक्त होकर प्रज्ञा-बलसे हमें व्याप्त करते हैं ।

४ यह सब सोम शोधित और अमर हैं । यह जाते समय और मार्गमें लोकोंमें भ्रमण करते समय नहीं थकते ।

५ यह सब सोम द्यावापृथिवीकी पीठोंपर नाना प्रकारसे विचरण करके व्याप्त होते हैं । यह उत्तम द्युलोकमें भी व्याप्त होते हैं ।

६ जल यज्ञ-विस्तारक और उत्तम सोमको व्याप्त करता है । सोमके द्वारा इस कार्यको उत्तम बना लिया जाता है ।

७ सोम, तुम पणियों (असुरों) के पाससे गो-हितकर धनको धारण करते हो । जिस प्रकार यज्ञ विस्तृत हो, ऐसा शब्द करो ।



२३ सूक्त

सोम देवता । असित वा देवल ऋषि । गायत्री छन्द ।

सोमा असृग्रमाशवो मधोर्मदस्य धारया । अभि विश्वानि काव्या ॥१॥

अनु प्रत्नास आयवः पदं नवीयो अक्रमुः । रुचे जनन्त सूर्यम् ॥२॥

आ पवमान नो भरार्यो अदाशुषो गयम् । कृधि प्रजावतीरिषः ॥३॥

अभि सोमास आयवः पवन्ते मद्यं मदम् । अभि कोशं मधुश्चुतम् ॥४॥

सोमो अर्षति धर्णसिर्दधान इन्द्रियं रसम् । सुवीरो अभिशस्तिपाः ॥५॥

इन्द्राय सोम पवसे देवेभ्यः सधमाद्यः । इन्दो वाजं सिषाससि ॥६॥

अस्य पीत्वा मदानामिन्द्रो वृत्राण्यप्रति । जघान जघनच्च नु ॥७॥

---

१ मधुर मदकी धारासे शीघ्रगामी सोम स्तोत्र-समयमें सृष्ट होते हैं ।

२ कोई पुराने अश्व (सोम) नये पदका अनुसरण करते और सूर्यको दीप्त करते हैं ।

३ शोधित सोम, जो हव्यदाता नहीं है, उसका गृह हमें दे दो । हमें प्रजासे युक्त धन दो ।

४ गति-शील सोम मदकर रसको क्षरित करते और मधुस्रावीकी (अमिश्रित) रसको भी क्षरित करते हैं ।

५ संसारके धारक सोम इन्द्रिय-वर्द्धक रसको धारण करते हुए उत्तम वीरसे युक्त और हिंसासे बचानेवाले हुए हैं ।

६ सोम, तुम यज्ञके योग्य हो । तुम इन्द्र और अन्यान्य देवोंके लिये गिरते हो और हमें अन्न-दान करनेकी इच्छा करते हो ।

७ मदकर पदार्थमें अत्यन्त मदकर इस सोमका पान करके अपराजेय इन्द्रने शत्रुओंको मारा था । वह अब भी मार रहे हैं ।

२४ सूक्त

सोम देवता। असित वा देवल ऋषि। गायत्री छन्द।

प्र सोमासो अधन्विषुः पवमानास इन्दवः। श्रीणाना अप्सु मृञ्जत ॥१॥

अभि गावो अधन्विषुरापो न प्रवता यतीः। पुनाना इन्द्रमाशत ॥२॥

प्र पवमान धन्वसि सोमेन्द्राय पातवे। नृभिर्यतो वि नीयसे ॥३॥

त्वं सोम नृमादनः पवस्व चर्षणीसहे। सस्निर्यो अनुमाद्यः ॥४॥

इन्दो यदद्रिभिः सुतः पवित्रं परिधावसि। अरमिन्द्रस्य धाम्ने ॥५॥

पवस्व वृत्रहन्तमोक्थेभिरनुमाद्यः। शुचिः पावको अद्भुतः ॥६॥

शुचिः पावक उच्यते सोमः सुतस्य मध्वः। देवावीरघशंसहा ॥७॥

---

१ शोधित और दीप्त होकर सोम जाते हैं और मिश्रित होकर जल (वसतीवरी)में मार्जित होते हैं।

२ गमनशील सोम निम्नाभिमुखगामी जलके समान जाते हैं और अनन्तर इन्द्रको व्याप्त करते हैं।

३ शोधित सोम, मनुष्य तुम्हें जहाँसे ले जाते हैं, तुम वहींसे इन्द्रके पानके लिये जाते हो।

४ सोम, तुम मनुष्योंके लिये मदकर हो। शत्रुओंको दबानेवाले इन्द्रके लिये सोम, तुम क्षरित होओ।

५ सोम, तुम जिस समय प्रस्तरके द्वारा अभिषुत होकर दशापवित्रकी ओर जाते हो, उस समय इन्द्रके उदरके लिये पर्याप्त होते हो।

६ सर्वापेक्षा वृत्रघ्न इन्द्र, क्षरित होओ। तुम उक्थ मन्त्रके द्वारा स्तुत्य, शुद्ध, शोधक और अद्भुत हो।

७ अभिषुत और मदकर सोम शुद्ध और शोधक कहे जाते हैं। वह देवोंको प्रसन्न करनेवाले और शत्रुओंके विनाशक हैं।



२ अनुवाक । २५ सूक्त

पवमान सोम देवता । अगस्त्यके पुत्र दृढ़च्युत ऋषि। गायत्री छन्द।

पवस्व दक्षसाधनो देवेभ्यः पीतये हरे । मरुद्भ्यो वायवे मदः ॥१॥

पवमान धिया हितो भि योनिं कनिक्रदत् । धर्मणा वायुमा विश ॥२॥

सं देवैः शोभते वृषा कविर्योनावधि प्रियः । वृत्रहा देववीतमः ॥३॥

विश्वा रूपाण्याविशन्पुनानो याति हर्यतः । यत्रामृतास आसते ॥४॥

अरुषो जनयन् गिरः सोमः पवत आयुषक् । इन्द्रं गच्छन् कविक्रतुः ॥५॥

आ पवस्व मदिन्तम पवित्रं धारया कवे । अर्कस्य योनिमासदम् ॥६॥

२६ सूक्त

सोम देवता । दृढ़च्युत ऋषिके पुत्र इध्मवाह ऋषि । गायत्री छन्द ।

तममृक्षन्त वाजिनमुपस्थे अदितेरधि । विप्रासो अण्व्या धिया ॥१॥

---

१ पाप-हर्त्ता सोम, तुम बल-साधक और मदकर हो तुम देवों, मरुतों और वायुके पानके लिये क्षरित होओ ।

२ शोधनकालीन सोम, हमारे कर्मसे धृत होकर शब्द करते हुए अपने स्थानमें प्रवेश करो। कर्म द्वारा वायुमें प्रवेश करो ।

३ यह सोम अपने स्थानमें अधिष्ठित, काम-वर्षक, कान्त, प्रज्ञ, प्रिय, वृत्रघ्न और अतीव देवाभिलाषी होकर शोधित होते हैं ।

४ शोधित और कमनीय सोम सारे रूपोंमें प्रवेश करते हुए, जहाँ देवता रहते हैं, वहाँ जाते हैं ।

५ शोभन सोम शब्द करते हुए क्षरित होते हैं । निकटवर्त्ती इन्द्रके पास जाकर प्रज्ञासे युक्त होते हैं।

६ सर्वापेक्षा मदकर और कवि सोम, पूजनीय इन्द्रके स्थानको प्राप्त करनेके लिये दशापवित्रको लाँघकर धाराके रूपमें प्रवाहित होओ। —*—

१ पृथिवीकी गोदमें उस वेगवान् सोमको मेधावी लोग अङ्गुलि और स्तुतिके द्वारा मार्जित करते हैं ।

तं गावो अभ्यनूषत सहस्रधारमक्षितम् । इन्दुं धर्तारमा दिवः ॥२॥

तं वेधां मेधयाह्यन् पवमानमधि द्यवि । धर्णसिं भूरिधायसम् ॥३॥

तमह्यन् भुरिजोर्धिया संवसानं विवस्वतः । पतिं वाचो अदाभ्यम् ॥४॥

तं सानावधि जामयो हरिं हिन्वन्त्यद्रिभिः । हर्यतं भूरिचक्षसम् ॥५॥

तं त्वा हिन्वन्ति वेधसः पवमान गिरावृधम् । इन्दविन्द्राय मत्सरम् ॥६॥



२७ सूक्त

पवमान सोम देवता । अङ्गिराके पुत्र नृमेध ऋषि । गायत्री छन्द ।

एष कविरभिष्टुतः पवित्रे अधि तोशते । पुनानो घ्नन्नप स्रिधः ॥१॥

एष इन्द्राय वायवे स्वर्जित् परिषिच्यते । पवित्रे दक्षसाधनः ॥२॥

---

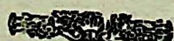
२ स्तुतियाँ बहुधाराओंवाले, अक्षीण, दीप्त और स्वर्गके धारक सोमकी स्तुति करती हैं ।

३ सबके धारक, बहु-कर्म-कारी, सबके विधाता और शुद्ध सोमको प्रज्ञाके द्वारा लोग स्वर्गके प्रति प्रेरित करते हैं ।

४ सोम पात्रमें अवस्थित, स्तुति-पति और अहिंसनीय हैं । परिचर्या-कारी ऋत्विक् दोनों हाथोंकी अँगुलियोंसे सोमको प्रेरित करते हैं ।

५ अँगुलियाँ उन हरित-वर्ण सोमको उन्नत प्रदेशमें प्रेरित करती हैं । वह कमनीय और बहु-दर्शक हैं ।

६ शोधक सोम, तुम्हें ऋत्विक् लोग इन्द्रके लिये प्रेरित करते हैं । तुम स्तुतिके द्वारा वर्द्धित, दीप्त और मदकर हो ।



१ यह सोम कवि और चारो ओरसे स्तुत हैं । यह दशापवित्रको लाँघकर जाते हैं । यह शोधित होकर शत्रु विनाश करते हैं ।

२ सोम सबके जेता और बलकारक हैं । इन्द्र और वायुके लिये इन्हें दशापवित्रमें सिक्त किया जाता है ।

एष नृभिर्विनीयते दिवो मूर्धा वृषा सुतः । सोमो वनेषु विश्ववित् ॥३॥
एष गव्युरचिक्रदत् पवमानो हिरण्ययुः । इन्दुः सत्राजिदस्तृतः ॥४॥
एष सूर्येण हासते पवमानो अधि द्यवि । पवित्रे मत्सरो मदः ॥५॥
एष शुष्म्यसिष्यददन्तरिक्षे वृषा हरिः । पुमान इन्दुरिन्द्रमा ॥६॥



२८ सूक्त

सोम देवता । प्रियमेध ऋषि । गायत्री छन्द ।

एष वाजी हितो नृभिर्विश्वविन्मनसस्पतिः । अव्यो वारं वि धावति ॥१॥
एष पवित्रे अक्षरत् सोमो देवेभ्यः सुतः । विश्वा धामान्याविशन् ॥२॥
एष देवः शुभायतेऽधि योनावमर्त्यः । वृत्रहा देववीतमः ॥३॥
एष वृषा कनिक्रदद्दशभिर्जामिभिर्यतः । अभि द्रोणानि धावति ॥४॥

---

३ यह सोम मनुष्यों (ऋत्विकों) के द्वारा नाना प्रकारोंसे रखे जाते हैं । सोम द्युलोकके सिर हैं । यह मनोहर पात्रमें अवस्थित हैं । यह अभिषुत और सर्वज्ञ हैं ।

४ यह सोम शोधित होकर शब्द करते हैं । यह हमारी गौ और हिरण्यकी इच्छा करते हैं । यह दीप्त, महाशत्रु-जेता और स्वयं अहिंसनीय हैं ।

५ यह शोधक सोम, सूर्यके द्वारा पवित्र द्युलोकमें परित्यक्त होते हैं । सोम अतीव मदकर हैं ।

६ यह बलवान् सोम अन्तरीक्ष (दशापवित्र) में जाते हैं । यह काम-वर्षक, हरित-वर्ण, पवित्र-कर्त्ता और दीप्त हैं । यह इन्द्रकी ओर जाते हैं ।

१ यह सोम गमनशील, पात्रमें स्थापित, सर्वज्ञ और सबके स्वामी हैं । यह मेषलोमपर दौड़ते हैं ।

२ यह सोम देवोंके लिये अभिषुत होकर उनके सारे शरीरोंमें प्रवेश पानेके लिये दशा-पवित्रमें जाते हैं ।

३ यह अमर वृत्रघ्न और देवाभिलाषी सोम अपने स्थानमें शोभा प्राप्त करते हैं ।

४ यह अभिलाषा-दाता, शब्दकर्त्ता और अँगुलियोंके द्वारा धृत सोम द्रोण-कलसकी ओर जाते हैं ।

एष सूर्यमरोचयत् पवमानो विचर्षणिः । विश्वा धामानि विश्ववित् ॥५॥
एष शुष्म्यदाभ्यः सोमः पुनानो अर्षति । देवावीरघशंसहा ॥६॥

---

२९ सूक्त

सोम देवता । अङ्गिराके पुत्र नृमेध ऋषि । गायत्री छन्द ।

प्रास्य धारा अक्षरन्वृष्णः सुतस्यौजसा । देवाँ अनु प्रभूषतः ॥१॥
सप्तिं मृजन्ति वेधसो गृणन्तः कारवो गिरा । ज्योतिर्जज्ञानमुक्थ्यम् ॥२॥
सुषहा सोम तानि ते पुनानाय प्रभूवसो । वर्धा समुद्रमुक्थ्यम् ॥३॥
विश्वा वसूनि सञ्जयन् पवस्व सोम धारया । इनु द्वेषांसि सध्र्यक् ॥४॥
रक्षा सु नो अररुषः स्वनात् समस्य कस्य चित् । निदो यत्र मुमुच्महे ॥५॥

---

५ शोधनकालीन. सबके द्रष्टा और सर्वज्ञ सोम सूर्य और समस्त तेजःपदार्थोंको शोधित करते हैं।

६ यह शोधनकालिक सोम बलवान् और अहिंसनीय हैं। यह देवोंके रक्षक और पापियोंके घातक हैं।



१ वर्षक, अभिषुत और देवोंके ऊपर प्रभाव डालनेकी इच्छावाले इन सोमकी धारा क्षरित होती है।

२ स्तोता, विधाता और कर्मकर्त्ता अध्वर्यु लोग दीप्तिमान्, प्रवृद्ध, स्तुत्य और सर्पण-स्वभाव सोमको मार्जित करते हैं।

३ प्रभूत धनवाले सोम, शोधन-समयमें तुम्हारे वे सब तेज शोभन होते हैं; इसलिये तुम समुद्रके समान और स्तुत्य द्रोण-कलसको पूर्ण करो।

४ सोम, सारे धनोंको जीतते हुए धारा-प्रवाहसे गिरो और सारे शत्रुओंको एक साथ दूर देशमें भेज दो।

५ सोम, जो दान नहीं करते, उनसे और अन्यान्य निन्दकोंकी निन्दासे हमारी रक्षा करो। ताकि हम मुक्त हो सकें।

एन्दो पार्थिवं रयिं दिव्यं पवस्व धारया । द्युमन्तं शुष्ममा भर ॥६॥



३० सूक्त

सोम देवता । अङ्गिराके पुत्र बिन्दु ऋषि । गायत्री छन्द ।

प्र धारा अस्य शुष्मिणो वृथा पवित्रे अक्षरन् । पुनानो वाचमिष्यति ॥१॥
इन्दुर्हियानः सोतृभिर्मृज्यमानः कनिक्रदत् । इयर्ति वग्नुमिन्द्रियम् ॥२॥
आ नः शुष्मं नृषाह्यं वीरवन्तं पुरुस्पृहम् । पवस्व सोम धारया ॥३॥
प्र सोमो अति धारया पवमानो असिष्यदत् । अभि द्रोणान्यसादम् ॥४॥
अप्सु त्वा मधुमत्तमं हरिं हिन्वन्त्यद्रिभिः । इन्दविन्द्राय पीतये ॥५॥
सुनोता मधुमत्तमं सोममिन्द्राय वज्रिणे । चारुं शर्धाय मत्सरम् ॥६॥



---

६ सोम, तुम धारा-रूपसे क्षरित होओ । पृथिवीस्थ और स्वर्गीय धन तथा दीप्तिमान् बलको ले आओ ।



१ बली इन सोमकी धारा अनायास दशापवित्रमें गिर रही है । शोधन-समयमें यह अपनी ध्वनिको प्रेरित करते हैं ।

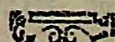
२ यह सोम, अभिषवकारियोंके द्वारा प्रेरित होकर, शोधन-समयमें शब्द करते हुए इन्द्र-सम्बन्धी शब्द प्रेरित करते हैं ।

३ सोम, तुम धारा-रूपसे क्षरित होओ । उससे मनुष्योंके अभिभवकर, वीरवान् और अनेकोंके द्वारा अभिलषणीय बल प्राप्त हो ।

४ शोधन-कालमें यह सोम धारा-रूपसे द्रोण-कलसमें जानेके लिये दशापवित्रको लाँघकर क्षरित होते हैं ।

५ सोम, तुम जल (वसतीवरी)में सबसे अधिक मधुर और हरित-वर्ण (हरे रंगके) हो । इन्द्रके पानके लिये तुम्हें पत्थरसे पीसा जाता हैं ।

६ ऋत्विको, तुम लोग अत्यन्त मधुर रसवाले, मनोहर और मदकर सोमको हमारे बलार्थ, इन्द्रके पानके लिये, अभिषुत करो ।



३१ सूक्त

सोम देवता। रहुगणके पुत्र गोतम ऋषि। गायत्री छन्द।

प्र सोमासः स्वाध्यः पवमानासो अक्रमुः। रयिं कृण्वन्ति चेतनम् ॥१॥

दिवस्पृथिव्या अधि भवेन्दो द्युम्नवर्धनः। भवा वाजानां पतिः ॥२॥

तुभ्यं वाता अभिप्रियस्तुभ्यमर्षन्ति सिन्धवः। सोम वर्धन्ति ते महः ॥३॥

आ प्यायस्व समेतु ते विश्वतः सोम वृष्ण्यम्। भवा वाजस्य सङ्गथे ॥४॥

तुभ्यं गावो घृतं पयो बभ्रो दुदुह्रे अक्षितम्। वर्षिष्ठे अधि सानवि ॥५॥

स्वायुधस्य ते सतो भुवनस्य पते वयम्। इन्दो सखित्वमुश्मसि ॥६॥

३२ सूक्त

सोम देवता। आत्रेय श्यावाश्व ऋषि गायत्री छन्द।

प्र सोमासो मदच्युतः श्रवसे नो मघोनः। सुता विदथे अक्रमुः ॥१॥

आदीं त्रितस्य योषणो हरिं हिन्वन्त्यद्रिभिः। इन्दुमिन्द्राय पीतये ॥२॥

---

१ उत्तम कर्मवाले और शोधनकालीन सोम जा रहे हैं। वह हमें प्रज्ञापक धन दे रहे हैं।

२ सोम, तुम अन्नोंके स्वामी हो। तुम द्यावापृथिवीके प्रकाशक धनके वर्द्धक होओ।

३ सारे वायु तुम्हारे लिये तृप्तिकर होते हैं; नदियाँ तुम्हारे लिये जाती हैं। वह तुम्हारी महिमाको बढ़ावें।

४ सोम, तुम वायु और जलके द्वारा प्रवृद्ध होओ। वर्षक बल तुममें चारो ओरसे मिले। तुम संग्राममें अन्नके प्रापक होओ।

५ पिङ्गलवर्ण सोम, गो-समूह तुम्हारे लिये घृत और अक्षीण दुग्ध दोहन करता है। तुम उन्नत प्रदेशमें अवस्थित हो।

६ भुवनके पति सोम, हम तुम्हारे बन्धुत्वकी कामना करते हैं। तुम उत्तम आयुधवाले हो।

१ सोम मदस्रावी और अभिषुत होकर यज्ञमें हव्यदाताके अन्नके लिये जाते हैं।

२ इन्द्रके पानके लिये इन हरित-वर्ण सोमको त्रित ऋषिकी अङ्गुलियाँ पत्थरसे प्रेरित करती हैं।

आदीं हंसो यथा गणं विश्वस्यावीवशन्मतिम्। अत्यो न गोभिरज्यते ॥३॥
उभे सोमावचाकशन्मृगो न तक्तो अर्षसि। सीदन्नृतस्य योनिमा ॥४॥
अभि गावो अनूषत योषा जारमिव प्रियम्। अगन्नाजिं यथा हितम् ॥५॥
अस्मे धेहि द्युमद्यशो मघवद्भ्यश्च मह्यं च। सनिं मेधामुत श्रवः ॥६॥



३३ सूक्त

सोम देवता। त्रित ऋषि। गायत्री छन्द।

प्र सोमासो विपश्चितोऽपां न यन्त्यूर्मयः। वनानि महिषा इव ॥१॥
अभि द्रोणानि बभ्रवः शुक्रा ऋतस्य धारया। वाजं गोमन्तमक्षरन् ॥२॥
सुता इन्द्राय वायवे वरुणाय मरुद्भ्यः। सोमाः अर्षन्ति विष्णवे ॥३॥
तिस्रो वाच उदीरते गावो मिमन्ति धेनवः। हरिरेति कनिक्रदत् ॥४॥

---

३ जैसे हंस जलमें प्रवेश करता है, वैसे ही सोम सारे स्तोताओंके मनको वशमें करते हैं। यह सोम गव्यके द्वारा स्निग्ध होते है।

४ सोम, तुम यज्ञ-स्थानको आश्रय करते हुए, मिश्रित होकर, मृगके समान, द्यावा-पृथिवीको देखते हो।

५ जैसे रमणी जारकी स्तुति करती है, वैसे ही, हे सोम, शब्द तुम्हारी स्तुति करते हैं। वह सोम, मित्रके समान, अपने हितार्थ गन्तव्य स्थानको जाते हैं।

६ सोम, हम हविवाले और मुझ स्तोताके लिये दीप्तिशाली अन्न प्रदान करो। धन मेधा और कीर्ति दो।

---

१ मेधावी सोम पात्रोंके प्रति, जल-तरङ्गके समान, जाते हैं, वृद्ध मृग जैसे वनमें जाते हैं, वैसे ही सोम जाते हैं।

२ पिङ्गल-वर्ण और दीप्त सोम, गोमान् अन्न प्रदान करते हुए, धारा-रूपसे द्रोण-कलसमें झरते हैं।

३ अभिषुत सोम इन्द्र, वायु, वरुण, मरुद्गण और विष्णुके प्रति गमन करते हैं।

४ ऋक् आदि तीन वाक्य (स्तुतियाँ) उच्चारित हो रहे हैं। दूध देनेके लिये गायें शब्द कर रही हैं। हरित-वर्ण सोम शब्द करते हुए गमन करते हैं।

अभि ब्रह्मीरनूषत यह्वीर्ऋतस्य मातरः । मर्मृज्यन्ते दिवः शिशुम् ॥५॥
रायः समुद्रांश्चतुरोऽस्मभ्यं सोम विश्वतः । आ पवस्व सहस्रिणः ॥६॥

---

३४ सूक्त

सोम देवता । मित्र ऋषि । गायत्री छन्द ।

प्र सुवानो धारया तनेन्दुर्हिन्वानो अर्षति । रुजद्दृह्ळा व्योजसा ॥१॥
सुत इन्द्राय वायवे वरुणाय मरुद्भ्यः । सोमो अर्षति विष्णवे ॥२॥
वृषाणं वृषभिर्यतं सुन्वन्ति सोममद्रिभिः । दुहन्ति शक्मना पयः ॥३॥
भुवत्त्रितस्य मर्ज्यो भुवदिन्द्राय मत्सरः । सं रूपैरज्यते हरिः ॥४॥
अभीमृतस्य विष्टपं दुहते पृश्निमातरः । चारु प्रियतमं हविः ॥५॥
समेनमह्रुता इमा गिरो अर्षन्ति सस्रुतः । धेनुर्वाश्रो अवीवशत् ॥६॥

---

५ स्तोताओं (ब्राह्मणों) के द्वारा प्रेरित, यज्ञकी मातृ-स्वरूपा और महती स्तुतियाँ उच्चारित हो रही हैं और द्युलोकके शिशु-समान सोम मार्जित हो रहे हैं।

६ सोम, धन सम्बन्धी चारो समुद्रों (अर्थात् चारो समुद्रोंसे वेष्टित निखिल भूमण्डलके स्वामित्व)को चारो दिशाओंसे हमारे पास ले आओ और असीम अभिलाषाओंको भी ले आओ।

---

१ अभिषुत सोम प्रेरित होकर धारा-रूपसे दशापवित्रमें जाते है और सुदृढ़ शत्रु-पुरियोंको भी ढीली करते हैं।

२ अभिषुत सोम इन्द्र, वायु, वरुण, मरुद्गण और विष्णुके अभिमुख जाते हैं।

३ अध्वर्यु लोग, रसके सेचक और नियत सोमको वर्षक प्रस्तरके द्वारा अभिषुत करते हैं। वे कर्म-बलसे सोम-रूप दुग्धको दूहते हैं।

४ त्रित ऋषिका मदकर सोम उनके लिये और इन्द्रके पानके लिये शुद्ध हो रहा है। वह हरित-वर्ण सोम अपने रूपसे प्राप्त हुए हैं।

५ पृश्निके पुत्र मरुद्गण, यज्ञाश्रय, होमसाधक और रमणीय सोमका दोहन करते हैं।

६ अकुटिल स्तुतियाँ उच्चारित होकर सोमके साथ मिल रही हैं। सोम भी शब्द करते हुए प्रीतिकर स्तुतियोंकी कामना करते हैं।



३८ सूक्त

सोम देवता। अङ्गिरा के पुत्र प्रभूवसु ऋषि। गायत्री छन्द।

आ नः पवस्व धारया पवमान रयिं पृथुम्। यया ज्योतिर्विदासि नः ॥१॥
इन्दो समुद्रमीङ्खय पवस्व विश्वमेजय। रायो धर्ता न ओजसा ॥२॥
त्वया वीरेण वीरवोऽभि ष्याम पृतन्यतः। क्षरा णो अभि वार्यम् ॥३॥
प्र वाज मन्दुरिष्यति सिषासन्वाजसा ऋषिः। व्रता विदान आयुधा ॥४॥
तं गीर्भिर्वाचमीङ्खयं पुनानं वासयामसि। सोमं जनस्य गोपतिम् ॥५॥
विश्वो यस्य व्रते जनो दाधार धर्मणस्पतेः। पुनानस्य प्रभूवसोः ॥६॥



३६ सूक्त

सोम देवता। प्रभूवसु ऋषि। गायत्री छन्द।

असर्जि रथ्यो यथा पवित्रे चम्वोः सुतः। कार्ष्मन्वाजी न्यक्रमीत् ॥१॥

---

१ प्रवाह-शील सोम, तुम धारा-रूपसे हमारी चारो ओर क्षरित होओ। विस्तीर्ण धन और प्रकाशमान यज्ञ हमें दो।

२ जल-प्रेरक और शत्रुओंको कँपानेवाले सोम, अपने बलसे तुम हमारे धनके धारक होओ।

३ वीर सोम, तुम्हारे बलसे हम संग्रामाभिलाषी शत्रुओंको हरावेंगे। हमारे सामने स्वीकारके योग्य धन भेजो।

४ यजमानोंका आश्रय करनेकी इच्छासे अन्नदाता, सर्वदर्शी तथा कर्म और आयुधको जाननेवाले सोम अन्न प्रेरित करते हैं।

५ मैं स्तुति-वचनोंसे उन्हीं सोमकी स्तुति करता हूँ, जो गो-पालक हैं। हम स्तुति-प्रेरक और पवित्र सोमको वासित करेंगे।

६ सारे मनुष्य कर्मपति, पवित्र और प्रभूत धनवाले सोमके कर्ममें मन लगाते हैं।

---

१ रथमें जोते गये अश्वके समान दोनों चमुओं (स्रुकों)में अभिषुत सोम दशापवित्रमें बनाये गये वेगवान सोम युद्धमें विचरण करते हैं।

स वह्निः सोम जागृविः पवस्व देववीरति । अभि कोशं मधुश्चुतम् ॥२॥
स नो ज्योतींषि पूर्व्य पवमान वि रोचय । क्रत्वे दक्षाय नो हिनु ॥३॥
शुम्भमान ऋतायुभिर्मृज्यमानो गभस्त्योः । पवते वारे अव्यये ॥४॥
स विश्वा दाशुषे वसु सोमो दिव्यानि पार्थिवा । पवतामान्तरिक्ष्या ॥५॥
आ दिवस्पृष्ठमश्वयुर्गव्ययुः सोम रोहसि । वीरयुः शवसस्पते ॥६॥

३७ सूक्त

सोम देवता । रहूगण ऋषि । गायत्री छन्द ।

स सुतः पीतये वृषा सोमः पवित्रे अर्षति । विघ्नन्रक्षांसि देवयुः ॥१॥
स पवित्रे विचक्षणो हरिरर्षति धर्णसिः । अभि योनिं कनिक्रदत् ॥२॥

---

२ सोम, तुम वाहक, जागरूक और देवाभिलाषी हो । तुम मधुस्रावी दशापवित्रको लाँघकर क्षरित होओ ।

३ प्राचीन क्षरणशील सोम, तुम हमारे दिव्य स्थानोंको प्रकाशित करो और हमें यज्ञ तथा बलके लिये प्रेरित करो ।

४ यज्ञाभिलाषी ऋत्विकोंके द्वारा अलङ्कृत और उनके हाथोंसे परिमार्जित सोम मेषलोम-मय दशापवित्रमें शोधित होते हैं ।

५ वह अभिषुत सोम हविर्दाताको द्युलोक, भूलोक और अन्तरीक्षके सारे धनोंको दें ।

६ बलाधिपति सोम, तुम स्तोताओंके लिये अश्व, गौ और वीरपुत्रके अभिलाषी होकर स्वर्गपृष्ठपर चढ़ो ।

---

१ इन्द्र आदिके पानके लिये अभिषुत सोम काम-वर्षक, राक्षसनाशक और देव-कामी होकर दशापवित्रमें जाते हैं ।

२ वह सोम सबके दर्शक, हरित-वर्ण और सबके धारक होकर दशापवित्रमें जाते हैं । अनन्तर शब्द करते हुए द्रोण-कलसमें जाते हैं ।

स वाजी रोचना दिवः पवमानो वि धावति । रक्षोहा वारमव्ययम् ॥३॥
स त्रितस्याधि सानवि पवमानो अरोचयत् । जामिभिः सूर्यं सह ॥४॥
स वृत्रहा वृषा सुतो वरिवोविद्दाभ्यः । सोमो वाजमिवासरत् ॥५॥
स देवः कविनेषितो भि द्रोणानि धावति । इन्दुरिन्द्राय मंहना ॥६॥

---

३८ सूक्त

सोम देवता । रहूगण ऋषि । गायत्री छन्द ।

एष उ स्य वृषा रथोऽव्यो वारेभिरर्षति । गच्छन्वाजं सहस्रिणम् ॥१॥
एतं त्रितस्य योषणो हरिं हिन्वन्त्यद्रिभिः । इन्दुमिन्द्राय पीतये ॥२॥
एतं त्यं हरितो दश मर्मृज्यन्ते अपस्युवः । याभिर्मदाय शुम्भते ॥३॥

---

३ वेगशाली, स्वर्गके दीप्ति-प्रद और क्षरणशील सोम राक्षस-विनाशक होकर मेषलोममय दशापवित्रको लाँघकर जा रहे हैं।

४ उन सोमने त्रित ऋषिके उन्नत यज्ञमें पवित्र होकर अपने प्रवृद्ध तेजोंसे सूर्यको प्रकाशित किया ।

५ जैसे अश्व युद्ध-भूमिमें जाता है, वैसे ही वृत्रघ्न, अभिलाषादाता अभिषुत अहिंसनीय सोम कलसमें जाते हैं ।

६ वह महान्, भींगे हुए, कविके द्वारा प्रेरित सोम, इन्द्रके लिये द्रोण-कलसमें जाते हैं ।

--***--

१ वह सोम अभिलाष-प्रद और रथस्वभाव (गति-परायण) होकर यजमानको बहुत अन्न देनेके लिये मेषलोमोंसे दशापवित्रसे होकर द्रोण-कलसमें जाते हैं ।

२ इन्द्रके पानके लिये त्रित ऋषिकी अँगुलियाँ इन क्लेदवाले और हरित-वर्ण सोमको पत्थरसे पीस रही हैं ।

३ दस हरित-वर्ण अँगुलियाँ, कर्माभिलाषिणी होकर, इन सोमको मार्जित करती हैं । इनकी सहायतासे इन्द्रके मदके लिये शोम शोधित होते हैं ।

एष स्य मानुषीष्वा श्येनो न विक्षु सीदति । गच्छञ्जारो न योषितम् ॥४॥
एष स्य मद्यो रसोऽव चष्टे दिवः शिशुः । य इन्दुर्वारमाविशत् ॥५॥
एष स्य पीतये सुतो हरिरर्षति धर्णसिः । क्रन्दन्योनिमभि प्रियम् ॥६॥



३९ सूक्त

आङ्गिरस बृहन्मति ऋषि । गायत्री छन्द ।

आशुरर्ष बृहन्मते परि प्रियेण धाम्ना । यत्र देवा इति ब्रवन् ॥१॥
परिष्कृण्वन्ननिष्कृतं जनाय यातयन्निषः । वृष्टिं दिवः परि स्रव ॥२॥
सुत एति पवित्र आ त्विषिं दधान ओजसा । विचक्षाणो विरोचयत् ॥३॥
अयं स यो दिवस्परि रघुयामा पवित्र आ । सिन्धोरूर्मा व्यक्षरत् ॥४॥

४ यह सोम मानव-प्रजाके बीच श्येन पक्षीके समान, बैठते हैं । जैसे उपपत्नीके पास जार जाता है, वैसे ही सोम जाते हैं ।

५ सोमके यह मादक रस सारे पदार्थको देखते हैं । वह सोम स्वर्गके पुत्र हैं । दिप्त सोम दशापवित्रमें प्रवेश करते हैं ।

६ पानके लिये अभिषुत, हरितवर्ण और सबके धारक सोम शब्द करते हुए अपने प्रिय स्थान (द्रोण-कलसमें) जाते हैं ।



१ महामति सोम, देवोंके प्रियतम शरीरसे युक्त होकर शीघ्र गमन करो । "देवता लोग जहाँ हैं उसी दिशाको जाता हू"—ऐसा सोम कह रहे हैं।

२ असंस्कृत स्थान वा यजमानको संस्कृत कहते हुए और याज्ञिकको अन्न देते हुए अन्तरीक्षसे, हे सोम, वृष्टि करो ।

३ अभिषुत सोम दीप्ति धारण करके और सारे पदार्थोंको देख और दीप्त करके बलसे शीघ्र दशापवित्रमें जाते हैं ।

४ यह सोम दशापवित्रमें सिञ्चित होकर जल-तरङ्गसे त्वरित होते हैं । यह स्वर्गके ऊपर शीघ्र गमन करते हैं ।

आविवासन् परावतो अथो अर्वावतः सुतः । इन्द्राय सिच्यते मधु ॥५॥
समीचीना अनूषत हरिं हिन्वन्त्यद्रिभिः । योनावृतस्य सीदत ॥६॥

४० सूक्त

सोम देवता । बृहन्मति ऋषि । गायत्री छन्द ।

पुनानो अक्रमीदभि विश्वा मृधो विचर्षणिः । शुम्भन्ति विप्रं धीतिभिः ॥१॥
आ योनिमरुणो रुहद्गमदिन्द्रं वृषा सुतः । ध्रुवे सदसि सीदति ॥२॥
नू नो रयिं महामिन्दोऽस्मभ्यं सोम विश्वतः । आ पवस्व सहस्रिणम् ॥३॥
विश्वा सोम पवमान द्युम्नानीन्दवाभर । विदाः सहस्रिणीरिषः ॥४॥
स नः पुनान आ भर रयिं स्तोत्रे सुवीर्यम् । जरितुर्वर्धया गिरः ॥५॥

---

५ दूर और पासके देवोंकी सेवाके लिये अभिषुत सोम, इन्द्रके लिये, मधुके समान सिञ्चित होते हैं।

६ भली भाँति मिले हुए स्तोता स्तुति करते हैं। वे हरित-वर्ण सोमको, पत्थरकी सहायतासे, प्रेरित करते हैं। अतएव देवो, यज्ञस्थानमें बैठो।



१ क्षरणशील और सर्वदर्शक सोम सारे हिंसकोंको लाँघ गये। उन मेधावी सोमको स्तुति द्वारा सब अलङ्कृत करते हैं।

२ अरुण-वर्ण (कृष्ण-लोहित ?) सोम द्रोण-कलसमें जा रहे हैं। अनन्तर अभिलाषा-दाता और अभिषुत होकर इन्द्रके पास जाते हैं और निश्चित स्थानमें बैठते हैं।

३ हे इन्दु (दीप्त) सोम, तुम अभिषुत होकर हमारे लिये शीघ्र महान् और बहुत धन, चारो ओरसे, दो।

४ क्षरणशील और दीप्त सोम, तुम बहुविध अन्न ले आओ और सहस्र-सङ्ख्यक अन्न प्रदान करो।

५ सोम, तुम हमारे स्तोताओंके लिये पवित्र और अभिषुत होकर सुपुत्रवाला धन ले आओ और स्तोताकी स्तुतिको वर्द्धित करो।

पुनानः इन्दवा भर सोम द्विबर्हसं रयिम् । वृषन्निन्दो न उक्थ्यम् ॥६॥



४१ सूक्त

सोम देवता । कण्वगोत्रीय मेध्यातिथि ऋषि । गायत्री छन्द ।

प्र ये गावो न भूर्णयस्त्वेषा अयासो अक्रमुः । घ्नन्तः कृष्णामप त्वचम् ॥१॥
सुवितस्य मनामहेऽति सेतुं दुराव्यम् । साह्वंसो दस्युमव्रतम् ॥२॥
शृण्वे वृष्टेरिव स्वनः पवमानस्य शुष्मिणः । चरन्ति विद्युतो दिवि ॥३॥
आ पवस्व महीमिषं गोमदिन्दो हिरण्यवत् । अश्वावद्वाजवत् सुतः ॥४॥
स पवस्व विचर्षण आ मही रोदसी पृण । उषाः सूर्यो न रश्मिभिः ॥५॥
परि णः शर्मयन्त्या धारया सोम विश्वतः । सरा रसेव विष्टपम् ॥६॥

---

६ सोम, तुम शोधन-समयमें हमारे लिये द्यावापृथिवीमें परिवृद्ध धन ले आओ। वर्षक इन्दु (सोम), हमें स्तुत्य धन दो।

१ जो अभिषुत सोम, जलके समान, शीघ्र दीप्तियुक्त और गतिशील होकर काले चमड़ेवालोंको मारकर विचरण करते हैं, उन सोमोंकी स्तुति करो।

२ व्रत-शून्य और दुष्टमतिको दबाकर हम सुन्दर सोमकी राक्षस-बन्धन और राक्षस-हननवाली इच्छाकी स्तुति करेंगे।

३ अभिषव-समयमें बली सोमकी दीप्तियाँ अन्तरीक्षमें विचरण करती हैं। वृष्टिके समान सोमका शब्द सुनाई देता है।

४ सोम, तुम अभिषुत होकर गौ, अश्व और बलसे युक्त महान्न हमारे सामने प्रेरित करो।

५ सर्वदर्शक सोम, तुम प्रवाहित होओ। जैसे सूर्य अपनी किरणोंसे दिनोंको पूर्ण करते हैं, वैसे ही तुम द्यावापृथिवीको पूर्ण करो।

६ सोम, हमारी सुखकरी धाराके द्वारा चारो ओर वैसे ही पूर्ण करो, जैसे नदियाँ भूमण्डलको पूरित करती हैं।

४२ सूक्त

सोम देवता। मेध्यातिथि ऋषि। गायत्री छन्द।

जनयन्रोचना दिवो जनयन्नप्सु सूर्यम्। वसानो गा अपो हरिः ॥१॥
एष प्रत्नेन मन्मना देवो देवेभ्यस्परि। धारया पवते सुतः ॥२॥
वावृधानाय तूर्वये पवन्ते वाजसातये। सोमाः सहस्रपाजसः ॥३॥
दुहानः प्रत्नमित् पयः पवित्रे परिषिच्यते। क्रन्दन्देवाँ अजीजनत् ॥४॥
अभि विश्वानि वार्याभि देवाँ ऋतावृधः। सोमः पुनानो अर्षति ॥५॥
गोमन्नः सोम वीरवदश्वावद्वाजवत् सुतः। पवस्व बृहतीरिषः ॥६॥



४३ सूक्त

सोम देवता। मेध्यातिथि ऋषि। गायत्री छन्द।

यो अत्य इव मृज्यते गभिर्मदाय हर्यतः। तं गीर्भिर्वासयामसि ॥१॥
तन्नो विश्वा अवस्युवो गिरः शुम्भन्ति पूर्वथा। इन्दुमिन्द्राय पीतये ॥२॥

---

१ यह हरित-वर्ण सोम द्युलोक-सम्बन्धी नक्षत्रादि और अन्तरीक्षमें सूर्यको उत्पन्न करके अधोगामी जलोंसे ढक कर जाते हैं।

२ यह सोम प्राचीन स्तोत्रसे युक्त और अभिषुत होकर देवोंके लिये धारा-रूपसे गिरते हैं

३ वर्द्धमान अन्नकी शीघ्र प्राप्तिके लिये असङ्ख्यात-वेग सोम क्षरित होते हैं।

४ पुराण रसवाले सोम दशापवित्रमें होते और शब्द करते हुए देवोंको प्रादुर्भूत करते हैं

५ यह सोम अभिषव-समयमें सारे स्वीकरणीय धनों और यज्ञ-वर्द्धक देवोंके सामने जाते हैं।

६ सोम, तुम अभिषुत होकर हमें गौ, अश्व, वीर और संग्रामसे युद्ध धन तथा बहुत अन्न दो।



१ जो सोम निरन्तर गमनवाले अश्वके समान देवोंके मदके लिये गव्य द्वारा मिश्रित होते हैं और जो कमनीय हैं, हम उन्हीं सोमको स्तुति द्वारा प्रसन्न करेंगे।

२ रक्षणाभिलाषिणी स्तुतियाँ पहलेके समान, इन्द्रके पानके लिये इन सोमको दीप्त करती हैं।

पुनानो याति हर्यतः सोमो गीर्भिः परिष्कृतः । विप्रस्य मेध्यातिथेः ॥३॥
पवमान विदा रयिमस्मभ्यं सोम सुश्रियम् । इन्दो सहस्र वर्चसम् ॥४॥
इन्दुरत्यो न वाजसृत् कनिक्रन्ति पवित्र आ । यदक्षारति देवयुः ॥५॥
पवस्व वाजसातये विप्रस्य गृणतो वृधे । सोम रास्व सुवीर्यम् ॥६॥



३ मेधावी मेध्यातिथिके लिये, शोधन-समयमें, कमनीय सोम स्तुतियोंके द्वारा अलङ्कृत होकर कलसकी ओर जाते हैं।

४ क्षरणशील (पवमान) शोधनकालीन अथवा अभिषवकालिक इन्दु (सोम), हमें उत्तम दीप्तिवाले और बहु-श्री-सम्पन्न धन दो।

५ संग्रामगामी अश्वके समान जो सोम दशापवित्रमें शब्द करते हैं, वह जब देवाभिलाषी होते हैं, तब अत्यन्त (ध्वनि) करते हैं।

६ सोम, हमें अन्न देने और स्तोता मेध्यातिथिको (मुझे) बढ़ानेके लिये प्रवाहित होओ। सोम, सुन्दर वीर्यवाला पुत्र भी दो।



अष्टम अध्याय समाप्त



षष्ठ अष्टक समाप्त



ऋग्वेद-संहिता

[सरल-हिन्दी-टीका-सहित]

सप्तम अष्टक



टीकाकार

पण्डित रामगोविन्द त्रिवेदी वेदान्तशास्त्री

("दर्शन-परिचय," "हिन्दी-विष्णु-पुराण," "हिन्दीपुस्तक-कोष," "राजर्षि प्रह्लाद," "भक्त ध्रुव," "महासती मदालसा," "रत्नावली" आदिके लेखक, "आर्यमहिला" (बनारस), "विश्वदूत" (रंगून), "सेनापति" (कलकत्ता), "गङ्गा" (सुलतानगंज) आदिके भूतपूर्व सम्पादक, "गीताप्रचारक-महामण्डल" (मोरिशस) के जन्मदाता, "दक्षिण अफ्रीकन सनातनधर्म-महामण्डल" (डरबन, नेटाल)के आजीवन सभापति तथा भारतधर्ममहामण्डल (बनारस) के महोपदेशक)

—* और *—

पण्डित गौरीनाथ झा व्याकरणतीर्थ

(प्राइवेट सेक्रेटरी, बनैलीराज्याधिपति साहित्य-विभूषण कुमार कृष्णानन्द सिंह बहादुर तथा "वैदिकपुस्तकमाला" के अन्यतम जन्मदाता एवम् अध्यक्ष)



प्रकाशक

पण्डित गौरीनाथ झा व्याकरणतीर्थ

सञ्चालक, "वैदिकपुस्तकमाला," सुलतानगंज (ई० आई० आर०)

मूल्य २) रु० } फाल्गुन, १९९२ विक्रमीय { प्रथम संस्करण: २०००

मिथिला प्रेस,
खलीफाबाग, भागलपुरमें मुद्रित

वैदिक-पुस्तकमालाकी नियमावली

(१) इस "माला"में हिन्दी-अनुवाद-सहित चारो वेद और विशेषतः वैदिक-ग्रन्थ पुष्प ही गूँथे जायँगे ।

(२) ।।) भेजकर "माला"के स्थायी ग्राहक बननेवालोंको किसी भी पुस्तकपर डाकखर्चा नहीं देना पड़ेगा ।

(३) स्थायी ग्राहकोंको "माला"में प्रकाशित सभी पुस्तकोंको खरीदना होगा ।

(४) "माला"में प्रकाशित पुस्तकें वी० पी० से भेजी जायँगी ।

संचालक, "वैदिक-पुस्तकमाला," सुलतानगंज (ई० आई० आर०)

सप्तम अष्टककी कुछ जानने योग्य बातें

वैदिकपुस्तकमाला— दशम पुष्प



ऋग्वेद-संहिता

(हिन्दी-टीका-सहित)

७ अष्टक । ६ मण्डल । १ अध्याय । २ अनुवाक ।

४४ सूक्त

पवमान सोम देवता । अयास्य ऋषि । गायत्री छन्द ।

प्र ण इन्दो महे तन ऊर्मिं न बिभ्रदर्षसि । अभि देवाँ अयास्यः ॥१॥
मती जुष्टो धिया हितः सोमो हिन्वे परावति ।
विप्रस्य धारया कविः ॥२॥

---

१ सोम, हमारे महान् धनके लिये आते हो । तुम्हारी तरङ्गको धारण करके अयास्य ऋषि देवोंकी ओर, पूजनके लिये, जाते हैं ।

२ मेधावी स्तोताने क्रान्तकर्मा सोमकी स्तुति की और उन्हें यज्ञमें नियुक्त किया । सोमकी धारा दूर देशतक विस्तृत होती है ।

अयं देवेषु जागृविः सुत एति पवित्र आ।
सोमो याति विचर्षणिः ॥३॥
स नः पवस्व वाजयुश्चक्राणश्चारुमध्वरम्।
बर्हिष्माँ आ विवासति ॥४॥
स नो भगाय वायवे विप्रवीरः सदावृधः।
सोमो देवेष्वा यमत् ॥५॥
स नो अद्य वसुत्तये क्रतुविद्गातुवित्तमः। वाजं जेषि श्रवो बृहत् ॥६॥



४५ सूक्त

सोम देवता। अयास्य ऋषि। गायत्री छन्द।

स पवस्व मदाय कं नृचक्षा देववीतये। इन्दविन्द्राय पीतये ॥१॥
स नो अर्षाभि दूत्यं त्वमिन्द्राय तोशसे। देवान्त्सखिभ्य आ वरम् ॥२॥

---

३ जागरणशील और विचक्षण सोम अभिषुत होकर देवोंके लिये चारो ओर जाते हैं। यह दशापवित्रकी ओर जाते हैं।

४ सोम, कुशवाले ऋत्विक् तुम्हारी परिचर्या करते हैं। हमारे लिये तुम अन्नकी इच्छा करते हुए और हिंसा-शून्य यज्ञको सुचारु-रूपसे करते हुए क्षरित होओ।

५ उन सोमको मेधावी लोग वायु और भग देवताके लिये प्रेरित करते हैं। सोमसदा बढ़ने वाले हैं। वह हमें देवोंके पास स्थित धनदें।

६ सोम, तुम कर्मोंके प्रापक और पुण्य लोकोंके अतीव मार्ग-ज्ञाता हो, तुम आज हमें धन-लाभ केलिये महान् अन्न और बलको जीतो।



१ सोम, तुम नेताओंके दर्शक हो। तुम देवोंके आगमन वा यज्ञके लिये इन्द्रके पान मद और सुख के लिये क्षरित होओ।

२ सोम, तुम हमारा दूत-कर्म करो। इन्द्रके लिये तुम पिये जाते हो। तुम हमारे लिये श्रेष्ठ धन, देवोंके यहाँसे, ले आओ।

उत त्वामरुणं वयं गोभिरञ्ज्मो मदाय कम् । वि नो राये दुरो वृधि ॥३॥
अत्यू पवित्रमक्रमीद्वाजी धुरं न यामनि । इन्दुर्देवेषु पत्यते ॥४॥
समी सखायो अस्वरन्वने क्रीलन्तमत्यविम् । इन्दुं नावा अनूषत ॥५॥
तया पवस्व धारया यया पीतो विचक्षसे । इन्दो स्तोत्रे सुवीर्यम् ॥६॥

---

४६ सूक्त

सोम देवता । अयास्य ऋषि । गायत्री छन्द ।

असृग्रन् देववीतयेऽत्यासः कृत्व्या इव । क्षरन्तः पर्वतावृधः ॥१॥
परिष्कृतास इन्दवो योषेव पित्र्यावती । वायुं सोमा असृक्षत ॥२॥
एते सोमास इन्दवः प्रयस्वन्तश्चमू सुताः ।
इन्द्रं वर्धन्ति कर्मभिः ॥३॥

---

३ सोम, मदके लिये रक्त-वर्ण तुम्हें हम दुग्ध आदिसे संस्कृत करते हैं। तुम धनके निमित्त, हमारे लिये, दरवाजा खोल दो।

४ जैसे अश्व गमन-समयमें रथकी धुराको लाँघ जाता है, वैसे ही सोम दशापवित्रको लाँघकर देवोंके बीच जाता है।

५ दशापवित्रको लाँघकर जिस समय सोम जलके बीच क्रीड़ा करने लगे, उस समय प्रिय बन्धु स्तोता एक स्वरसे उनकी स्तुति और वचनोंके द्वारा उनका गुण-कीर्त्तन करने लगे।

६ सोम, तुम उस धाराके साथ गिरो, जिस धाराका पान करनेपर विचक्षण स्तोताको तुम शोभन वीर्य देते हो।

---

१ अभिषव-प्रस्तरोंसे प्रवृद्ध सोम यज्ञके लिये उसी प्रकार क्षरित होते हैं, जैसे कार्य-परायण अश्व क्षरित होते हैं (अथवा पर्वतपर उत्पन्न और क्षरणशील सोम, कार्य-पटु अश्वोंके समान, यज्ञके लिये, बनाये जाते हैं)।

२ पिता द्वारा अलङ्कृता कन्या जैसे स्वामीके पास जाती है, वैसे ही सोम वायुके पास जाते हैं।

३ यह सब उज्ज्वल और अन्नवान् सोम प्रस्तर-फलक-द्वयपर अभिषुत होकर यज्ञ द्वारा इन्द्रको प्रसन्न करते हैं।

आ धावता सुहस्त्यः शुक्रा गृभ्णीत मन्थिना ।
गोभिः श्रीणीत मत्सरम् ॥४॥
स पवस्व धनञ्जय प्रयन्ता राधसो महः । अस्मभ्यं सोम गातुवित् ॥५॥
एतं मृजन्ति मर्ज्यं पवमानं दश क्षिपः । इन्द्राय मत्सरं मदम् ॥६॥

४७ सूक्त

पवमान सोम देवता । भृगु-पुत्र कवि ऋषि । गायत्री छन्द ।

अया सोमः सुकृत्यया महश्चिदभ्यवर्धत । मन्दान उद्वृषायते ॥१॥
कृतानीदस्य कर्त्वा चेतन्ते दस्युतर्हणा । ऋणा च धृष्णुश्चयते ॥२॥
आत् सोम इन्द्रियो रसो वज्रः सहस्रसा भुवत् ।
उक्थं यदस्य जायते ॥३॥

---

४ शोभन हाथोंवाले ऋत्विको (पुरोहितो), शीघ्र आओ । मथानी (मथनेवाले दण्ड)के साथ शुक्र-वर्ण सोमको ग्रहण करो। मदकर सोमको दूध आदिसे संस्कृत वा सुस्वादु करो।

५ शत्रु-धनको जीतनेवाले सोम, तुम अभीष्ट मार्गके प्रापक हो। तुम हमें महान् धन देनेवाले हो। क्षरित होओ।

६ इन्द्रके लिये दसो अँगुलियाँ शोधनीय, क्षरणशील और मदकर सोमको दशापवित्रमें शोधित करती हैं।



१ शोभन अभिषवादि क्रियासे यह सोम महान् देवोंके प्रति प्रवृद्ध हुए। यह आनन्दके मारे वृषभ (साँड़) के समान शब्द करते हैं।

२ इन सोमके असुर-नाशक कर्मोको हमने किया है। बली सोम ऋणपरिशोध भी करते हैं।

३ जब इन्द्रका मन्त्र प्रादुर्भूत होता है, तभी इन्द्रके लिये प्रियरस, बली और वज्रके समान अवध्य सोम हमारे लिये असीम धनके दाता होते हैं।

स्वयं कविर्विधर्तरि विप्राय रत्नमिच्छति ।
यदी मर्मृज्यते धियः ॥४॥
सिषासतू रयीणां वाजेष्ववर्वतामिव । भरेषु जिग्युषामसि ॥५॥



४८ सूक्त

पवमान सोम देवता । भृगु-पुत्र कवि ऋषि । गायत्री छन्द :

तं त्वा नृम्णानि बिभ्रतं सधस्थेषु महो दिवः ।
चारुं सुकृत्ययेमहे ॥१॥
संवृक्तधृष्णुमुक्थ्यं महामहिव्रतं मदम् । शतं पुरो रुरुक्षणिम् ॥२॥
अतस्त्वा रयिमभि राजानं सुक्रतो दिवः ।
सुपर्णो अव्यथिर्भरत् ॥३॥
विश्वस्मा इत् स्वर्दृशे साधारणं रजस्तुरम् । गोपामृतस्य विर्भरत् ॥४॥

---

४ यदि क्रान्तकर्मा सोम अँगुलियोंसे शोधित किये जाते हैं, तो वह स्वयं मेधावीके लिये काम धारक इन्द्रसे रमणीय धन देनेकी इच्छा करते हैं ।

५ सोम, तुम संग्रामोंमें शत्रुओंको जीतनेवालोंको उसी प्रकार धन देते हो, जिस प्रकार समर-भूमिमें जानेवाले अश्वोंको घास दिया जाता है ।

---

१ सोम, प्रकाण्ड द्युलोकके एकस्थानवासियोंमें स्थित, धनके धारक और कल्याणके धारक तुमसे शोभन अनुष्ठान करके हम धनकी याचना करते हैं ।

२ सोम, पराक्रमी शत्रुओंके विनाशक, प्रशंसाके योग्य, पूजनीय-कर्मा, आनन्ददाता और अनेक शत्रु-पुरियोंके घातक तुमसे हम धन माँगते हैं ।

३ शोभन कर्मवाले सोम, धनके लिये तुम राजा हो; इसीलिये श्येन (बाज) तुम्हें सरलतासे स्वर्गसे ले आया था ।

४ जल भेजनेवाले, यज्ञके संरक्षक और स्वर्गस्थ सभी देवोंके लिये समान सोमको स्वर्गसे श्येन ले आया था ।

अधा हिन्वान इन्द्रियं ज्यायो महित्वमानशे ।
अभि ष्टकृद्विचर्षणिः ॥५॥

४६ सूक्त

पवमान सोम देवता । भृगु-पुत्र कवि ऋषि । गायत्री छन्द ।

पवस्व वृष्टिमा सु नोऽपामूर्मिं दिवस्परि ।
अयक्ष्मा बृहतीरिषः ॥१॥
तया पवस्व धारया यया गाव इहागमन् ।
जन्यास उप नो गृहम् ॥२॥
घृतं पवस्व धारया यज्ञेषु देववीतमः । अस्मभ्यं वृष्टिमा पव ॥३॥
स न ऊर्जे व्यव्ययं पवित्रं धाव धारया ।
देवासः शृणवन् हि कम् ॥४॥
पवमानो असिष्यदद्रक्षांस्यपजङ्घनत् । प्रत्नवद्रोचयन्रुचः ॥५॥

---

५ कर्मोंके सूक्ष्म दर्शक, यजमानोंके मनोरथ-दाता और अपने बलका प्रयोग करनेवाले सोम अपने प्रशंसनीय महत्त्वको प्राप्त करते हैं ———

१ सोम, द्युलोकसे हमारे लिये चारो ओर वृष्टि करो। द्युलोकसे जल-तरङ्ग ले आओ । अक्षय अन्नका महाभाण्डार उपस्थित करो ।

२ सोम, तुम उस धारासे क्षरित होओ, जिस धारासे शत्रुदेशोत्पन्न गायें इस लोकमें हमारे गृहमें आती हैं ।

३ सोम, तुम यज्ञोंमें अतीव देवाभिलाषी हो । हमारे लिये तुम घृत-धारासे क्षरित होओ ।

४ सोम, तुम हमारे अन्नके लिये कुशमय (अथवा अव्यय) दशापवित्रको धारा-रूपसे प्राप्त करो। तुम्हारी गमन-ध्वनिको देवता लोग सुनें ।

५ राक्षसोंको मारते हुए और अपनी दीप्तिको पहलेकी तरह प्रदीप्त करते हुए यह क्षरणशील सोम प्रवाहित होते हैं ।

५० सूक्त

पवमान सोम देवता। आङ्गिरस उतथ्य ऋषि। गायत्री छन्द।

उत्ते शुष्मास ईरते सिन्धोरूर्मेरिव स्वनः। वाणस्य चोदया पविम् ॥१॥
प्रसवे त उदीरते तिस्रो वाचो मखस्युवः।
यदव्य एषि सानवि ॥२॥
अव्यो वारे परि प्रियं हरिं हिन्वन्त्यद्रिभिः। पवमानं मधुश्चुतम् ॥३॥
आ पवस्व मदिन्तम पवित्रन्धारया कवे। अर्कस्य योनिमासदम् ॥४॥
स पवस्व मदिन्तम गोभिरञ्जानो अक्तुभिः। इन्दविन्द्राय पीतये ॥५॥

---

५१ सूक्त

पवमान सोम देवता। उतथ्य ऋषि। गायत्री छन्द।

अध्वर्यो अद्रिभिः सुतं सोमं पवित्र आ सृज।
पुनीहीन्द्राय पातवे ॥१॥

---

१ सोम, समुद्र-तरङ्गके वेगके समान तुम्हारा वेग हो रहा है। जैसे धनुष्से छोड़ा हुआ वाण शब्द करता है, वैसे ही तुम शब्द करो।

२ जिस समय तुम उन्नत और कुशमय दशापवित्रमें जाते हो, उस समय तुम्हारी उत्पत्ति होनेपर यज्ञाभिलाषी यजमानके मुखसे तीन प्रकारके (ऋक्, यजु., सोमके) वाक्य निकलते हैं।

३ देवोंके प्रिय, हरित-वर्ण, पत्थरोंसे अभिषुत (निष्पीड़ित) और मधुर रस चुलानेवाले सोमको ऋत्विक् लोग मेषके लोमके ऊपर रखते हैं।

४ अतीव प्रमत्तकारी और क्रान्तकर्मा सोम, पूजनीय इन्द्रके उदरमें बैठनेके लिये दशापवित्रको लाँघ कर उनके सामने क्षरित होओ।

५ अत्यन्त प्रमत्त करनेवाले सोम, सुस्वादु करनेवाले दूध आदिसे मिश्रित होकर तुम इन्द्रके पानके लिये क्षरित होओ।

---

१ पुरोहित, पत्थरोंसे अभिषुत (पीसे गये) सोमको दशापवित्रपर ढाल दो। इन्द्रके पानके लिये इसे शोधित करो।

दिवः पीयूषमुत्तमं सोममिन्द्राय वज्रिणे । सुनोता मधुमत्तमम् ॥२॥

तव त्य इन्दो अन्धसो देवा मधोर्व्यश्नते । पवमानस्य मरुतः ॥३॥

त्वं हि सोम वर्धयन्त्सुतो मदाय भूर्णये । वृषन्त्स्तोतारमूतये ॥४॥

अभ्यर्ष विचक्षण पवित्रं धारया सुतः । अभि वाजमुत श्रवः ॥५॥



५२ सूक्त

पवमान सोम देवता । उतथ्य ऋषि । गायत्री छन्द ।

परि द्युक्षः सनद्रयिर्भरद्वाजं नो अन्धसा ।
सुवानो अर्ष पवित्र आ ॥१॥

तव प्रत्नेभिरध्वभिरव्यो वारे परि प्रियः । सहस्रधारो यात्तना ॥२॥

चरुर्न यस्तमीङ्खयेन्दो न दानमीङ्खय । वधैर्वधस्नवीङ्खय ॥३॥

---

२ पुरोहितो (अध्वर्युओ), अत्यन्त मधुर, द्युलोकके अमृत और श्रेष्ठ सोमको वज्रधर इन्द्रके लिये प्रस्तुत करो ।

३ मदकर और क्षरणशील तुम्हारे अन्न (खाद्य द्रव्य) को ये इन्द्रादि देवता और मरुद्गण व्याप्त करते हैं ।

४ सोम, अभिषुत होकर, देवोंको प्रवृद्ध कर अभिलाषाओंको बरसा कर तुम शीघ्र मद और रक्षणके लिये स्तोताके पास जाते हो ।

५ विचक्षण सोम, तुम अभिषुत होकर दशापवित्रकी ओर जाओ और हमारे अन्न तथा कीर्तिकी रक्षा करो ।

१ दीप्त और धन देनेवाले सोम अन्नके साथ हमारे बलको बढ़ावो । सोम, अभिषुत होकर दशापवित्रमें गिरो ।

२ सोम, देवोंको प्रसन्न करनेवाली तुम्हारी धाराएं विस्तृत होकर पुराने भागोंसे मेषलोमसे दशापवित्रमें जाती हैं ।

३ सोम, जो चरुके समान खाद्य है, उसे हमें दो । जो देनेकी वस्तु है, उसे हमें दो । प्रहार करनेपर तुम बहते हो; इसलिये हे सोम, पत्थरोंके प्रहारसे निकलो ।

नि शुष्ममिन्दवेषां पुरुहूत जनानाम् । यो अस्माँ आदिदेशति ॥४॥
शतं न इन्द ऊतिभिः सहस्रं वा शुचीनाम् । पवस्व मंहयद्रयिः ॥५॥

५३ सूक्त

पवमान सोम देवता । कश्यप-गोत्रीय अवत्सार ऋषि । गायत्री छन्द ।

उत्ते शुष्मासो अस्थू रक्षो भिन्दन्तो अद्रिवः ।
नुदस्व याः परिस्पृधः ॥१॥
अया निजघ्निरोजसा रथसंगे धने हिते । स्तवा अबिभ्युषा हृदा ॥२॥
अस्य व्रतानि नाधृषे पवमानस्य दूढ्या । रुज यस्त्वा पृतन्यति ॥३॥
तं हिन्वन्ति मदच्युतं हरिं नदीषु वाजिनम् । इन्दुमिन्द्राय मत्सरम् ॥४॥



४ बहुतोंके द्वारा बुलाये गये सोम, जिन शत्रुओंका बल युद्धके लिये हमें बुलाता है, उन शत्रुओंके बलको दूर करो ।

५ सोम, तुम धन देनेवाले हो । हमारी रक्षा करनेके लिये तुम अपनी निर्मल धाराओंसे प्रवाहित होओ ।

१ प्रस्तरसे उत्पन्न सोम, राक्षसोंको मारनेवाले तुम्हारे वेग वा तेज उन्नत हुए हैं । स्पर्द्धा करनेवाली जो शत्रुसेनाएँ हमें बाधा देती हैं, उन्हें रोको ।

२ तुम अपने बलसे शत्रुओंका विनाश करनेमें समर्थ हो । मैं निर्भय हृदयसे रथपर शत्रुओंके द्वारा निहित धनके लिये तुम्हारी स्तुति करता हू ।

३ सोम, क्षरणशील तुम्हारे तेजको दुर्बुद्धि राक्षस नहीं सह सकता । जो तुम्हारे साथ युद्ध करना चाहता है, उसे विनष्ट करो ।

४ मद चुलानेवाले, हरित-वर्ण, बली और मदकर सोमको ऋत्विक् लोग इन्द्रके लिये वसतीवरी नामक जलमें डालते है ।



५४ सूक्त

पवमान सोम देवता। अवत्सार ऋषि। गायत्री छन्द।

अस्य प्रत्नामनु द्युतं शुक्रं दुदुहे अह्रयः। पयः सहस्रसामृषिम् ॥१॥
अयं सूर्य इवोपदृगयं सरांसि धावति। सप्त प्रवत आ दिवम् ॥२॥
अयं विश्वानि तिष्ठति पुनानो भुवनोपरि। सोमो देवो न सूर्यः ॥३॥
परि णो देववीतये वाजाँ अर्षसि गोमतः। पुनान इन्दविन्द्रयुः ॥४॥



५५ सूक्त

पवमान सोम देवता। अवत्सार ऋषि। गायत्री छन्द।

यवयवं नो अन्धसा पुष्टंपुष्टं परिस्रव। सोम विश्वा च सौभगा ॥१॥
इन्दो यथा तव स्तवो यथा ते जातमन्धसः।
नि बर्हिषि प्रिये सदः ॥२॥
उत नो गोविदश्ववित् पवस्व सोमान्धसा। मक्षूतमेभिरहभिः ॥३॥

---

१ कवि लोग इन सोमके प्राचीन, प्रकाशमान, दीप्त, असीम, कर्म-फलदाता और स्रवणशील रसको दूहते हैं।

२ यह सोम, सूर्यके समान, सारे संसारको देखते हैं। यह तीस दिन-रातकी ओर जाते हैं यह स्वर्गसे ले कर सातो नदियोंको घेरे हुए हैं।

३ शोधित किये जाते हुए यह सोम, सूर्यदेवके समान, सारे भुवनोंके ऊपर रहते हैं।

४ सोम, इन्द्राभिलाषी और शोधित तुम हमारे यज्ञके लिये गोयुक्त अन्न चारो ओर गिराओ।



१ सोम, तुम हमारे लिये प्रचुर यव (जौ), अन्नके साथ, दो और सारे सौभाग्यशाली धन भी दो।

२ सोम, अन्नरूप तुम्हारे स्तोत्र और प्रादुर्भावको हमने कहा। अब तुम हमारे प्रसन्नता-दायक कुशपर बैठो।

३ सोम, तुम हमारे गौ और अश्वके दाता हो। तुम अल्प दिनोंमें ही अन्नके साथ क्षरित होओ।

यो जिनाति न जीयते हन्ति शत्रुमभीत्य । स पवस्व सहस्रजित् ॥४॥



५६ सूक्त

पवमान सोम देवता । अवत्सार ऋषि । गायत्री छन्द ।

परि सोम ऋतं बृहदाशुः पवित्रे अर्षति । विघ्नन्रक्षांसि देवयुः ॥१॥

यत् सोमो वाजमर्षति शतं धारा अपस्युवः ।
इन्द्रस्य सख्यमाविशन् ॥२॥

अभि त्वा योषणो दश जारं न कन्यानूषत ।
मृज्यसे सोम सातये ॥३॥

त्वमिन्द्राय विष्णवे स्वादुरिन्दो परि स्रव । नॄन्त्स्तोतॄन् पाह्यंहसः ॥४॥



---

४ सोम, तुम अपरिमित शत्रुओंके जेता हो । तुम्हें कोई जीत नहीं सकता । तुम स्वयं शत्रुओंको निहत करते हो । क्षरित होओ ।



१ क्षिप्रकारी और देवकामी सोम दशापवित्रमें जाकर और राक्षसोंको नष्ट कर हमें प्रचुर अन्न देते हैं ।

२ जब सोमकी कर्माभिलाषी सौ धाराएँ इन्द्रका बन्धुत्व प्राप्त करती हैं, तब सोम हमें अन्न प्रदान करते हैं ।

३ सोम, जैसे कन्या प्रिय (जार) को बुलाती है, वैसे ही दसो अँगुलियाँ शब्द करते हुए हमारे धन-लाभ और इन्द्रके लिये सोमको शोधित करती हैं ।

४ सोम, प्रिय-रस तुम इन्द्र और विष्णुके लिये क्षरित होओ । कर्मोंके नेताओं और स्तुति-कर्त्ताओंको पापसे छुड़ाओ ।



५७ सूक्त

पवमान सोम देवता। कश्यप-गोत्रीय अवत्सार ऋषि। गायत्री छन्द।

प्र ते धारा असश्चतो दिवो न यन्ति वृष्टयः।
अच्छा वाजं सहस्रिणम् ॥१॥
अभि प्रियाणि काव्या विश्वा चक्षाणो अर्षति।
हरिस्तुञ्जान आयुधा ॥२॥
स मर्मृजान आयुभिरिभो राजेव सुव्रतः।
श्येनो न वंसु षीदति ॥३॥
स नो विश्वा दिवो वसुतो पृथिव्या अधि। पुनान इन्दवा भर ॥४॥



५८ सूक्त

पवमान सोम देवता। अवत्सार ऋषि। गायत्री छन्द।

तरत् स मन्दी धावति धारा सुतस्यान्धसः। तरत् स मन्दी धावति ॥१॥

१ जैसे द्युलोककी वर्षा-धारा प्रजाको असीम अन्न देती है, वैसे ही सोम, तुम्हारी निःसङ्ग धारा हमें अपरिमित अन्न प्रदान करती है।

२ हरित-वर्ण सोम देवोंके सारे प्रिय कार्योंकी ओर देखते हुए अपने आयुधोंको राक्षसोंकी ओर फेंकते हुए यज्ञमें आते हैं।

३ सुकृती सोम मनुष्यों (ऋत्विकों) के द्वारा शोधित होकर और राजा तथा श्येन पक्षीके समान निर्भय होकर वसतीवरी-जलमें बैठते हैं।

४ सोम, तुम क्षरित होते-होते स्वर्ग और पृथिवीके सारे धनोंको हमारे लिये ले आओ।



१ देवोंके हर्षदाता सोम स्तोताओंका उद्धार करते हुए क्षरित होते हैं। अभिषुत और देव अन्न रूप सोमकी धारा गिरती है। हर्षदाता सोम क्षरित होते हैं।

उस्रा वेद वसूनां मर्तस्य देव्यवसः । तरत् स मन्दी धावति ॥२॥
ध्वस्रयोः पुरुषन्त्योरा सहस्राणि दद्महे । तरत् स मन्दी धावति ॥३॥
आ ययोस्त्रिंशतम् तना सहस्राणि च दद्महे । तरत् स मन्दी धावति ॥४॥



५६ सूक्त

पवमान सोम देवता । अवत्सार ऋषि । गायत्री छन्द ।

पवस्व गोजिदश्वजिद्विश्वजित् सोम रण्यजित् । प्रजावद्रत्नमाभर ॥१॥
पवस्वाद्भ्यो अदाभ्यः पवस्वौषधीभ्यः । पवस्व धिषणाभ्यः ॥२॥

---

२ सोमकी धन-प्रस्रवण करनेवाली और प्रकाशमाना धारा मनुष्यकी रक्षा करना जानती है। हर्षदाता सोम स्तोताओंको तारते हुए गिरते हैं ।

३ ध्वस्र और पुरुषन्ति नामक राजाओंसे हमने सहस्र-सहस्र धन ग्रहण किये हैं। आनन्द-कर सोम स्तोतओंको तारते हुए बहते हैं।

४ ध्वस्र और पुरुषन्ति राजाओंसे हमने तीस हजार वस्त्रोंको पाया है। स्तोताओंको तारते हुए हर्षकर सोम गिरते हैं ।



१ सोम, तुम गौ, अश्व, संसार और रमणीय धनके जता हो क्षरित होओ। पुत्रादिसे युक्त रमणीय धन, हमारे लिये, ले आओं ।

२ सोम, तुम वसतीवरी-जलसे बहो, किरणोंसे वहो, ओषधियोंसे बहो और पत्थ-रोंसे बहो ।

त्वं सोम पवमानो विश्वानि दुरिता तर ।
कविः सीद नि बर्हिषि ॥३॥
पवमान स्वर्विदो जायमानोऽभवो महान् ।
इन्दो विश्वाँ अभीदसि ॥४॥



६० सूक्त

पवमान सोम देवता। अवत्सार ऋषि। गायत्री और पुर उष्णिक छन्द ।

प्र गायत्रेण गायत पवमानं विचर्षणिम् । इन्दुं सहस्रचक्षसम् ॥१॥
तं त्वा सहस्रचक्षसमथो सहस्रभर्णसम् । अति वारमपाविषुः ॥२॥
अति वारान् पवमानो असिष्यदत् कलशाँ अभिधावति ।
इन्द्रस्य हार्द्याविशन् ॥३॥
इन्द्रस्य सोम राधसे शं पवस्व विचर्षणे । प्रजावद्रेत आ भर ॥४॥

---

३ क्षरणशील और क्रान्तकर्मा सोम, राक्षसोंके किये सारे उपद्रवोंको दूर करो । इस कुशपर बैठो ।

४ वहमान सोम, तुम यजमानको सब कुछ प्रदान करो । उत्पन्न होते ही तुम पूजनीय होते हो । तुम सारे शत्रुओंको तेजसे दबाते हो ।



१ सूक्ष्मदर्शक, सहस्र-चक्षु और संस्क्रियमाण सोमकी, गायत्री-साम-मन्त्रसे, स्तोताओ, स्तुति करो ।

२ सोम, बहुदर्शन, बहुभरण और अभिषुत तुमको ऋत्विक् लोग मेषलोमसे छानते हैं ।

३ क्षरणशील सोम मेषलोमसे होकर गिरते और द्रोण-कलसकी ओर जाते हुए इन्द्रके हृदयमें बैठते हैं ।

४ बहुदर्शी सोम, इन्द्रके आराधनके लिये तुम भलीभाँति क्षरित होओ । हमारे लिये पुत्रादिसे युक्त धन दो ।

३ अनुवाक । ६१ सूक्त

पवमान सोम देवता । आङ्गिरस अमहीयु ऋषि । गायत्री छन्द ।

अया वीती परिस्रव यस्त इन्दो मदेष्वा । अवाहन्नवतीर्नव ॥१॥
पुरः सद्य इत्थाधिये दिवोदासाय शम्बरम् । अध त्यं तुर्वशं यदुम् ॥२॥
परि णो अश्वमश्वविद्गोमदिन्दो हिरण्यवत् । क्षरा सहस्रिणीरिषः ॥३॥
पवमानस्य ते वयं पवित्रमभ्युन्दतः । सखित्वमावृणीमहे ॥४॥
ये ते पवित्रमूर्मयोऽभिक्षरन्ति धारया । तेभिर्नः सोम मृळय ॥५॥
स नः पुनान आ भर रयिं वीरवतीमिषम् ।
ईशानः सोम विश्वतः ॥६॥
एतमु त्यं दश क्षिपो मृजन्ति सिन्धुमातरम् । समादित्येभिरख्यत ॥७॥
समिन्द्रेणोत वायुना सुत एति पवित्र आ ।
सं सूर्यस्य रश्मिऽभिः ॥८॥

---

१ इन्द्रके पानके लिये उस रससे बहो, जिसने संग्राममें निन्यानवे शत्रु-पुरियोंको नष्ट किया है।

२ उस सोमरसने एक ही दिनमें शम्बर नामक शत्रुपुरियोंके स्वामीका सत्यकर्मा दिवोदास राजाके वशमें कर दिया था। अनन्तर सोमरसने दिवोदासके शत्रु तुर्वश और यदु राजाओंको भी वशमें कर दिया था।

३ सोम, तुम अश्व देनेवाले हो। तुम अश्व, गौ और हिरण्यसे-युक्त धनको वितरित करो।

४ सोम, क्षरणशील और दशापवित्रको आर्द्र करनेवाले तुमसे हम, मित्रताके लिये, प्रार्थना करते हैं।

५ सोम, तुम्हारी जो तरङ्गें दशापवित्रकी चारो ओर गिरती हैं, उनसे हमें सुख दो।

६ सोम, तुम समस्त विश्वके प्रभु हो। अभिषुत और शोधित तुम हमारे लिये धन और पुत्रादि-युक्त अन्न ले आओ।

७ सोमकी माताएँ नदियाँ हैं। उन सोमका दस अंगुलियाँ मलती हैं। वह सोम अदिति-पुत्रोंके साथ मिलते हैं।

८ अभिषुत सोम दशापवित्रमें इन्द्रके साथ और वायु तथा सूर्य-किरणोंके साथ मिलते हैं।

स नो भगाय वायवे पूष्णे पवस्व मधुमान् । चारुर्मित्रे वरुणे च ॥९॥
उच्चा ते जातमन्धसो दिवि षद्भूम्या ददे ।
उग्रं शर्म महि श्रवः ॥१०॥
एना विश्वान्यर्य आ द्युम्नानि मानुषाणाम् । सिषासन्तो वनामहे ॥११॥
स न इन्द्राय यज्यवे वरुणाय मरुद्भ्यः । वरिवोवित् परि स्रव ॥१२॥
उपो षु जातमप्तुरं गोभिर्भङ्गं परिष्कृतम् ।
इन्दुं देवा आयासिषुः ॥१३॥
तमिद्वर्धन्तु नो गिरो वत्सं संशिश्वरीरिव ।
य इन्द्रस्य हृदंसनिः ॥१४॥
अर्षा णः सोम शं गवे धुक्षस्व पिप्युषीमिषम् ।
वर्धा समुद्रमुक्थ्यम् ॥१५॥
पवमानो अजीजनद्दिवश्चित्रं न तन्यतुम् । ज्योतिर्वैश्वानरं बृहत् ॥१६

---

९ सोम, तुम मधुर-रस, कल्याणरूप और अभिषुत हो। तुम भग, वायु, पूषा, मित्र और वरुणके लिये क्षरित होओ।

१० तुम्हारे अन्नका जन्म द्युलोकमें है और तुम्हारा प्रवृद्ध सुख तथा प्रचुर अन्न भूमि-पर है।

११ इन सोमकी सहायतासे हम मनुष्योंके सारे अन्नोंको उपार्जित करते हैं और भाग करनेकी इच्छा होनेपर भाग कर लेंगे।

१२ सोम, तुम अन्न-दाता हो। अभिषुत तुम हमारे यजनीय इन्द्र, वरुण और मरुतोंके लिये क्षरित होओ।

१३ भली भाँति उत्पन्न, वसतीवरी द्वारा प्रेरित, शत्रु-भञ्जक और दूध आदिसे परिष्कृत सोमके पास इन्द्र आदि देवता जाते हैं।

१४ जो सोम इन्द्रके लिये हृदयग्राही है, उन्हें ही हमारी स्तुतियाँ संवर्द्धित करें। ये स्तुतियाँ सोमको उसी प्रकार चाहती हैं, जैसे दूधवाली माताएँ बच्चोंको चाहती हैं।

१५ सोम, हमारी गौके लिये सुख दो। प्रभूत अन्न दो। स्वच्छ जल बढ़ाओ।

१६ क्षरित होते-होते सोमने वैश्वानर नामक ज्योतिका, द्युलोकके चित्रका विस्तार करनेके लिये, वज्रके समान उत्पन्न किया।

पवमानस्य ते रसो मदो राजन्नदुच्छुनः । वि वारमव्यमर्षति ॥१७॥

पवमान रसस्तव दक्षो वि राजति द्युमान् ।
ज्योतिर्विश्वं स्वर्दृशे ॥१८॥

यस्ते मदो वरेण्यस्तेना पवस्वान्धसा । देवावीरघशंसहा ॥१९॥

जघ्निर्वृत्रममित्रियं सस्निर्वाजं दिवेदिवे ।
गोषा उ अश्वसा असि ॥२०॥

संमिश्लो अरुषो भव सूपस्थाभिर्न धेनुभिः ।
सीदञ्छ्येनो न योनिमा ॥२१॥

स पवस्व य आविथेन्द्रं वृत्राय हन्तवे । वव्रिवांसं महीरपः ॥२२॥

सुवीरासो वयं धना जयेम सोम मीढ्वः ।
पुनानो वर्ध नो गिरः ॥२३॥

---

१७ दीप्यमान सोम, क्षरणशील तुम्हारा राक्षस-शून्य और मदकर सोम-रस मेषलोमकी ओर जाता है ।

१८ पवमान सोम, तुम्हारा प्रवृद्ध और दीप्तिशाली रस क्षरित होकर और सारे ब्रह्माण्ड (ज्योतिःपुञ्ज) को, व्याप्त करके, दृष्टिगोचर करता है ।

१९ सोम, तुम्हारा जो रस देवकामी, राक्षस-हन्ता, प्रार्थनीय और मदकर है, उस रससे, अन्नके साथ, क्षरित होओ ।

२० सोम, तुमने शत्रु वृत्रका बध किया है । तुम प्रतिदिन संग्रामका आश्रय करते हो । तुम गौ और अश्व देनेवाले हो ।

२१ सोम, तुम सुस्वादु दूध आदिके साथ मिलकर, श्येन पक्षीके समान, शीघ्र जाकर अपने स्थानको ग्रहण करो और सुशोभित होओ ।

२२ जिस समय वृत्रासुरने जलभाण्डारको रोक रखा था, उस समय, वृत्र-बधमें तुमने इन्द्रकी रक्षा की थी । वही तुम इस समय क्षरित होओ ।

२३ सेचक और क्षरणशील सोम, कल्याण-पुत्र हम आङ्गिरस अमहीयु आदि शत्रुओंके धनको जीतें । हमारी स्तुतियोंको वर्द्धित करो ।

त्वोतासस्तवावसा स्याम वन्वन्त आमुरः ।
सोम व्रतेषु जागृहि ॥२४॥
अपघ्नन् पवते मृधोप सोमो अराव्णः । गच्छन्निन्द्रस्य निष्कृतम् ॥२५॥
महो नो राय आ भर पवमान जही मृधः ।
रास्वेन्दो वीरवद्यशः ॥२६॥
न त्वा शतं चन ह्रुतो राधो दित्सन्तमा मिनन् ।
यत् पुनानो मखस्यसे ॥२७॥
पवस्वेन्दो वृषा सुतः कृधी नो यशसो जने ।
विश्वा अप द्विषो जहि ॥२८॥
अस्य ते सख्ये वयं तवेन्दो द्युम्न उत्तमे ।
सासह्याम पृतन्यतः ॥२९॥
या ते भीमान्यायुधा तिग्मानि सन्ति धूर्वणे ।
रक्षा समस्य नो निदः ॥३०॥

---

२४ तुमसे क्षरित होकर हम शत्रुओंका विनाश कर डालें । हमारे कर्मोंमें तुम सजक रहना ।

२५ हिंसक शत्रुओं और अदाताओंको मारने हुए तथा इन्द्रके स्थानको प्राप्त करते हुए क्षरित होते हो ।

२६ पवमान सोम, हमारे लिये महान् धन ले आओ और शत्रुओंको मारो । पुत्रादि-युक्त कीर्त्ति भी हमें दो ।

२७ सोम, जिस समय तुम शोधित होते-होते हमें धन देनेकी इच्छा करते हो और जिस समय तुम खाद्य देनेकी इच्छा करते हो, उस समय सैकड़ों शत्रु भी तुम्हें नहीं मार सकते ।

२८ सोम, अभिषुत और सेचक तुम देशोंमें हमें यशस्वी करो और सारे शत्रुओंको मारो ।

२९ सोम, इस यज्ञमें हमें तुम्हारा बन्धुत्व प्राप्त करने पर और तुम्हारे श्रेष्ठ अन्नसे पुष्टि पा जाने पर हम युद्धेच्छु शत्रुओंको मारेंगे ।

३० सोम, तुम्हारे जो शत्रुओंके लिये भयंकर, तीखे और शत्रुवध-कारी हथियार हैं, उनको रखनेवाले शत्रुकी निन्दासे (पराजयरूप अयश) से हमारी रक्षा करो ।

६२ सूक्त

पवमान सोम देवता । भृगुगोत्रीय जमदग्नि ऋषि । गायत्री छन्द ।

एते असृग्रमिन्दवस्तिरः पवित्रमाशवः । विश्वान्यभि सौभगा ॥१॥

विघ्नन्तो दुरिता पुरु सुगा तोकाय वाजिनः ।

तना कृण्वन्तो अर्वते ॥२॥

कृण्वन्तो वरिवो गवेऽभ्यर्षन्ति सुष्टुतिम् । इळामस्मभ्यं संयतम् ॥३॥

असाव्यंशुर्मदायाप्सु दक्षो गिरिष्ठाः । श्येनो न योनिमासदत् ॥४॥

शुभ्रमन्धो देववातमप्सु धूतो नृभिः सुतः ।

स्वदन्ति गावः पयोभिः ॥५॥

आदीमश्वं न हेतारोऽशूशुभन्नमृताय । मध्वो रसं सधमादे ॥६॥

यास्ते धारा मधुश्चुतोऽसृग्रमिन्द ऊतये । ताभिः पवित्रमासदः ॥७॥

सो अर्षेन्द्राय पीतये तिरो रोमाण्यव्यया । सीदन्योना वनेष्वा ॥८॥

---

१ सोम सारे सौभाग्य हमें देंगे; इसीलिये वह दशापवित्रके पास शीघ्र-शीघ्र उत्पन्न किये जाते हैं ।

२ बली सोम अनेक पापोंको भली भाँति नष्ट करते हुए तथा हमारे पुत्र और अश्वोंको सुखी करते हुए दशापवित्रके पास उत्पन्न किये जाते हैं ।

३ हमारी गौ और हमारे लिये धन और अन्न देते हुए सोम हमारी स्तुति की ओर आते हैं ।

४ सोम, पर्वतसे उत्पन्न, मदके लिये अभिषुत और जल (वसतीवरी)में प्रवृद्ध हैं । जैसे श्येन पक्षी वेगसे आकर अपने स्थानको प्राप्त करता है, वैसे ही यह सोम भी अपने स्थानपर बैठते हैं ।

५ देवोंके द्वारा प्रार्थित और शोभन अन्नको गायें दूध आदिसे स्वादिष्ट बनाते हैं । यह सोम ऋत्विकोंके द्वारा अभिषुत और वसतीवरीमें शोधित हुए हैं ।

६ अनन्तर अनुष्ठाता ऋत्विक्, यज्ञस्थलमें इन मदकर सोमके रसको, अमरत्व पानेके लिये, अश्वके समान सुशोभित करते हैं ।

७ सोम, तुम्हारी मधुर रस और चुलानेवाली धाराएँ, रक्षणके लिये, बनायी गयी हैं; उनके साथ तुम दशापवित्रमें बैठो ।

८ सोम, अभिषुत तुम मेषलोमसे निकलकर और इन्द्रके पानके लिये पात्रोंमेंसे अपने स्थानपर जाकर क्षरित होओ ।

त्वमिन्दो परिस्रव स्वादिष्ठो अङ्गिरोभ्यः । वरिवोविद्घृतं पयः ॥९॥
अयं विचर्षणिर्हितः पवमानः स चेतति । हिन्वान आप्यं बृहत् ॥१०॥
एष वृषा वृषव्रतः पवमानो अशस्तिहा । करद्वसूनि दाशुषे ॥११॥
आ पवस्व सहस्रिणं रयिं गोमन्तमश्विनम् । पुरुश्चन्द्रं पुरुस्पृहम् ॥१२॥
एष स्य परि षिच्यते मर्मृज्यमान आयुभिः ।
उरुगायः कविक्रतुः ॥१३॥
सहस्रोतिः शतामघो विमानो रजसः कविः ।
इन्द्राय पवते मदः ॥१४॥
गिरा जात इह स्तुत इन्दुरिन्द्राय धीयते ।
विर्योना वसताविव ॥१५॥

---

९ सोम, तुम स्वादिष्ट और हमारे अभिलषित धनके प्रापक हो । तुम अङ्गिराकी सन्तानोंके लिये घृत और दुग्ध बरसो ।

१० सूक्ष्म-दर्शक, पात्रोंमें स्थित और क्षरणशील सोम, जलमें उत्पन्न महान् अन्नको प्रेरित करके सबके द्वारा जाने जाते हैं ।

११ यह जो सोम हैं, वह धन-वर्षक, वृष-कर्मा, राक्षसोंके हन्ता और क्षरणशील हैं । यह हविर्दाता यजमानको धन देते हैं ।

१२ सोम, तुम प्रचुर, गौओं और अश्वोंसे युक्त, सबके हर्षदाता और बहुतोंके द्वारा अभिलषणीय धनको बरसो ।

१३ अनेक स्तुतियोंवाले और कार्यक्षम सोम मनुष्योंके द्वारा शोधित होकर सिञ्चित होते हैं ।

१४ सोम असोम रक्षण, बहुधन, संसारके निर्माता, क्रान्तकर्मा और मदकर हैं । यह इन्द्रके लिये क्षरित होते हैं ।

१५ जैसे पक्षी अपने घोसलेमें जाता है, वैसे ही प्रादुर्भूत और स्तोमसे स्तुत सोम इस यज्ञमें अपने स्थानमें, इन्द्रके लिये, स्थित होते हैं ।

१६ ऋत्विकोंके द्वारा अभिषुत (निष्पीड़ित) और क्षरणशील सोम चमसोंमें, अपने स्थानमें, युद्धके समान बैठनेके लिये जाते हैं ।

पवमानः सुतो नृभिः सोमो वाजमिवासरत् ।
चमूषु शक्मनासदम् ॥१७॥
तं त्रिपृष्ठे त्रिवन्धुरे रथे युञ्जन्ति यातवे ।
ऋषीणां सप्त धीतिभिः ॥१८॥
तं सोतारो धनस्पृतमाशुं वाजाय यातवे ।
हरिं हिनोत वाजिनम् ॥१९॥
आविशन् कलशं सुतो विश्वा अर्षन्नभिश्रियः ।
शूरो न गोषु तिष्ठति ॥२०॥
आ त इन्दो मदाय कं पयो दुहन्त्यायवः । देवा देवेभ्यो मधु ॥२१॥
आ नः सोमं पवित्र आ सृजता मधुमत्तमम् ।
देवेभ्यो देवश्रुत्तमम् ॥२१॥
एते सोमा असृक्षत गृणानाः श्रवसे महे । मदिन्तमस्य धारया ॥२२॥
अभि गव्यानि वीतये नृम्णा पुनानो अर्षसि ।
सनद्वाजः परि स्रव ॥२३॥

---

१७ तीन पृष्ठों (अभिषवणों), तीन स्थानों (वेदों) और छन्दःस्वरूप सात रस्सियोंसे युक्त ऋषियोंके यज्ञ-रूपी रथमें सोमको ऋत्विक् लोग, देवोंके प्रति जानेके लिये, जोतते हैं।

१८ सोमका निष्पीड़न (अभिषवण) करनेवाले, धन-स्रष्टा, बली और वेगशाली सोम-रूप अश्वको यज्ञ-रूपी संग्राममें जानेके लिये सज्जित करो।

१९ अभिषुत सोम कलसकी ओर जाते हुए और सारी सम्पदाओंको हमें देते हुए गौओंमें शूरके समान, निःशङ्क होकर, रहते हैं।

२० सोम, तुम्हारे मधुर रसको, स्तोता लोग, इन्द्रादिके मदके लिये, दूहते हैं।

२१ ऋत्विको, देवताओंके लिये जिनका नाम प्रिय है और जो अतीव मधुर हैं, उन सोमको इन्द्र आदिके लिये दशापवित्रमें रखो।

२२ ऋत्विक् लोग स्तुतिवाले सोमको, महान् अन्नके लिये, अतीव मदकर रसकी धारासे, बनाते हैं।

२३ सोम, शोधित तुम भक्षणके लिये गोसम्बन्धी धनों (दूध आदिकों) को प्राप्त करते हो। अन्नदान करते हुए क्षरित होओ।

उत नो गोमतीरिषो विश्वा अर्ष परिष्टुभः ।
गृणानो जमदग्निना ॥२४॥
पवस्व वाचो अग्रियः सोम चित्राभिरूतिभिः ।
अभि विश्वानि काव्या ॥२५॥
त्वं समुद्रिया अपोऽग्रियो वाच ईरयन् । पवस्व विश्वमेजय ॥२६॥
तुभ्येमा भुवना कवे महिम्ने सोम तस्थिरे ।
तुभ्यमर्षन्ति सिन्धवः ॥२७॥
प्र ते दिवो न वृष्टयो धारा यन्त्यसश्चतः । अभि शुक्रामुपस्तिरम् ॥२८॥
इन्द्रायेन्दुं पुनीतनोग्रं दक्षाय साधनम् । ईशानं वीतिराधसम् ॥२९॥
पवमान ऋतः कविः सोमः पवित्रमासदत् । दधत्स्तोत्रे सुवीर्य्यम् ॥३०॥



---

२४ सोम, मैं जमदग्नि तुम्हारी स्तुति करता हूँ। तुम हमें गोयुक्त और सर्वत्र प्रशंसित अन्न दो।

२५ सोम, तुम मुख्य हो। पूजनीय रक्षणोंके साथ हमारी स्तुतियोंपर बरसो। सारे स्तुति-रूप वाक्योंपर भी बरसो।

२६ सोम, तुम विश्व-कम्पक हो। हमारे वचनोंको ग्रहण करते हुए तुम आकाशसे वारि-वर्षण करो।

२७ कवि सोम, तुम्हारी महिमासे ये भुवन स्थित हैं। सारी नदियाँ तुम्हारा ही आज्ञा-पालन करती हैं।

२८ सोम, आकाशकी वारि-धाराके समान तुम्हारी धारा शुक्लवर्ण और बिछाये हुए दशा-पवित्रकी ओर जाती है।

२९ ऋत्विको, उग्र, बल-करण, धनपति और धन देनेवाले सोमको इन्द्रके लिये प्रस्तुत करो।

३० सत्य, क्रान्तकर्मा और क्षरणशील सोम हमारे स्तोत्रमें शोभन वीर्य देते हुए दशा-पवित्रपर बैठते हैं।



६३ सूक्त

पवमान सोम देवता। कश्यपगोत्रीय निध्रुव ऋषि। गायत्री छन्द।

आ पवस्व सहस्रिणं रयिं सोम सुवीर्यम्। अस्मे श्रवांसि धारय ॥१॥

इषमूर्जं च पिन्वस इन्द्राय मत्सरिन्तमः। चमूष्वा नि षीदसि ॥२॥

सुत इन्द्राय विष्णवे सोमः कलशे अक्षरत्।
मधुमाँ अस्तु वायवे ॥३॥

एते असृग्रमाशवोति ह्वरांसि बभ्रवः। सोमा ऋतस्य धारया ॥४॥

इन्द्रं वर्धन्तो अप्तुरः कृण्वन्तो विश्वमार्यम्। अपघ्नन्तो अराव्णः ॥५॥

सुता अनु स्वमा रजोऽभ्यर्षन्ति बभ्रवः। इन्द्रं गच्छन्त इन्दवः ॥६॥

अया पवस्व धारया यया सूर्यमरोचयः। हिन्वानो मानुषीरपः ॥७॥

अयुक्त सूर एतशं पवमानो मनावधि। अन्तरिक्षेण यातवे ॥८॥

---

१ सोम, तुम बहु-सङ्ख्यक और शोभन-वीर्य धन क्षरित करो और हमें अन्न दो।

२ सोम, तुम अतीव मादक हो। तुम इन्द्रके लिये अन्न, बल और रस देते हो। तुम चमसोंमें बैठते हो

३ जो सोम इन्द्र, विष्णु और वायुके लिये अभिषुत होकर द्रोण-कलसमें जाते हैं, वह मधुर रसवाले हैं।

४ पिङ्गलवर्ण और क्षिप्रकारी सोम जलकी धारासे बनाये जाते हैं। सोम राक्षसोंकी ओर जाते हैं।

५ इन्द्रको बढ़ाते हुए, जल लाते हुए सब प्रकारसे अथवा सोमरसको हमारे लिये मङ्गल-जनक करते हुए और कृपणोंका विनाश करते हुए सोम जाते हैं।

६ पिङ्गल-वर्ण और अभिषुत सोम इन्द्रकी ओरसे अपने स्थानको जाते हैं।

७ सोम, मनुष्योंके उपयोगी जलको बरसाते हुए तुमने अपनी धारा (तेज) से सूर्यको प्रकाशित किया था। उसी धारासे बहो।

८ क्षरणशील सोम मनुष्यके लिये और अन्तरीक्षमें गतिके लिये सूर्यके अश्वको जोतते हैं।

उत त्या हरितो दश सूरोऽयुक्त यातवे ।
इन्दुरिन्द्र इति ब्रुवन् ॥९॥
परीतो वायवे सुतं गिर इन्द्राय मत्सरम् ।
अव्यो वारेषु सिञ्चत ॥१०॥
पवमान विदा रयिमस्मभ्यं सोम दुष्टरम् ।
यो दूणाशो वनुष्यता ॥११॥
अभ्यर्ष सहस्रिणं रयिं गोमन्तमश्विनम् । अभि वाजमुत श्रवः ॥१२॥
सोमो देवो न सूर्योऽद्रिभिः पवते सुतः । दधानः कलशे रसम् ॥१३॥
एते धामान्यार्या शुक्रा ऋतस्य धारया । वाजं गोमन्तमक्षरन् ॥१४॥
सुता इन्द्राय वज्रिणे सोमासो दध्याशिरः । पवित्रमत्यक्षरन् ॥१५॥
प्र सोम मधुमत्तमो राये अर्ष पवित्र आ ।
मदो यो देववीतमः ॥१६॥

---

९ सोम इन्द्रका नाम कहते हुए दसों दिशाओंमें जानेके लिये सूर्यके अश्वको जोतते हैं

१० स्तोताओ, तुम लोग वायु और इन्द्रके लिये अभिषुत और मदकर सोमको अभिषव-देशसे लेकर मेषलोमपर सिञ्चित करो।

११ क्षरणशील सोम, जिस धनका विनाश हिंसक शत्रु नहीं कर सकता, ऐसे शत्रुओंके लिये दुर्लभ धन हमें दो।

१२ तुम हमें बहुसङ्ख्यक और गौ तथा अश्वसे युक्त धन दो और बल तथा अन्न हमें दो ।

१३ सूर्यदेवके समान दीप्तिशाली और पत्थरोंसे अभिषुत सोम द्रोण-कलसमें रस धारण करके क्षरित होते हैं ।

१४ अभिषुत और दीप्त सोम श्रेष्ठ यजमानोंके गृहोंमें गोयुक्त अन्न, जल-धारा-रूपसे, बरसते हैं ।

१५ वज्रधर इन्द्रके लिये निष्पीड़ित सोम दधि-संस्कृत होकर और दशापवित्रमें जाकर क्षरित होते हैं ।

१६ सोम, तुम्हारा जो रस अतीव मधुर है, उस देव-काम रसको हमारे धनके लिये दशा-पवित्रमें बहाओ ।

तमीं मृजन्त्यायवो हरिं नदीषु वाजिनम् । इन्दुमिन्द्राय मत्सरम् ॥१७॥
आ पवस्व हिरण्यवदश्वावत्सोम वीरवत् । वाजं गोमन्तमा भर ॥१८॥
परि वाजे न वाजयुमव्यो वारेषु सिञ्चत । इन्द्राय मधुमत्तमम् ॥१९॥
कविं मृजन्ति मर्ज्यं धीभिर्विप्रा अवस्यवः ।
वृषा कनिक्रदर्षति ॥२०॥
वृषणं धीभिरप्तुरं सोममृतस्य धारया । मती विप्राः समस्वरन् ॥२१॥
पवस्व देवायुषगिन्द्रं गच्छतु ते मदः । वायुमा रोह धर्मणा ॥२२॥
पवमान नि तोशसे रयिं सोम श्रवाय्यम् ।
प्रियः समुद्रमा विश ॥२३॥
अपघ्नन् पवसे मृधः क्रतुवित् सोम मत्सरः ।
नुदस्वादेवयुं जनम् ॥२४॥

---

१७ हरित-वर्ण, बली, मदकर और क्षरणशील सोमको ऋत्विक् लोग इन्द्रके लिये वसती वरी-जलमें शोधित करते हैं।

१८ सोम, तुम सुवर्ण, अश्व और पुत्रादिसे युक्त धनको हमें वितरित करो। पशुओंसे युक्त अन्न ले आओ।

१९ युद्ध-समयके समान इस समय युद्ध-काम, अतीव मधुर सोमको, दशापवित्रमें, मेष-लोमके ऊपर, ऋत्विको, तुम सींचो।

२० रक्षाभिलाषी और मेधावी ऋत्विक् अँगुलियोंके द्वारा मार्जनीय और कान्त-कर्मा जिन सोमको शोधित करते हैं, वह सेचक सोम शब्द करते हुए गिरते हैं।

२१ सोमदेव, मेधावी ऋत्विक् काम-वर्षक और प्रेरक सोमको अँगुलियों और बुद्धिसे जल-धाराके द्वारा भेजते हैं।

२२ दीप्तिमान् सोम, क्षरित होओ। तुम्हारा मदकर रस आसक्त इन्द्रके पास जाय। धारक रसके साथ तुम वायुको प्राप्त करो।

२३ क्षरणशील सोम, तुम शत्रुओंके धनको सर्वांशतः नष्ट करते हो। प्रिय होकर तुम कलसमें प्रवेश करो।

२४ सोम, मदकर और शत्रुओंको मारनेवाले तुम हमें बुद्धि देते हुए गिरते हो। तुम देव-द्वेषी राक्षस-वर्गको अपदस्थ करो।

पवमाना असृक्षत सोमाः शुक्रास इन्दवः ।
अभि विश्वानि काव्या ॥२५॥
पवमानास आशवः शुभ्रा असृग्रमिन्दवः ।
घ्नन्तो विश्वा अप द्विषः ॥२६॥
पवमाना दिवस्पर्य्यन्तरिक्षादसृक्षत । पृथिव्या अधि सानवि ॥२७
पुनानः सोम धारयेन्दो विश्वा अप स्रिधः
जहि रक्षांसि सुक्रतो ॥२८॥
अपघ्नन्त्सोम रक्षसोऽभ्यर्ष कनिक्रदत् । द्युमन्तं शुष्ममुत्तमम् २९॥
अस्मे वसूनि धारय सोम दिव्यानि पार्थिवा
इन्दो विश्वानि वार्य्या ।३०॥



६४ सूक्त

पवमान सोम देवता । मरीचि-पुत्र कश्यप ऋषि । गायत्री छन्द ।

वृषा सोम द्युमाँ असि वृषा देव वृषव्रतः ।
वृषा धर्म्माणि दधिषे ॥१॥

२५ उज्ज्वल, दीप्त और क्षरणशील सोम सारे स्तुति-वचनोंको सुनते हुए ऋत्विकोंके द्वारा उत्पादित होते हैं ।

२६ क्षिप्रगामी, शोभन, पवमान, दीप्त और सारे शत्रुओंको मारनेवाले सोम उत्पादित होते हैं ।

२७ क्षरणशील सोम द्युलोक और पृथिवीके उन्नत देशमें, यज्ञ स्थानमें, उत्पन्न किये जाते हैं ।

२८ सुकर्मा सोम, धारा-रूपसे बहकर तुम सारे शत्रुओं और राक्षसोंको मारो ।

२९ सोम, राक्षसोंको मारते हुए और शब्द करते हुए हमें दीप्तिमान् और श्रेष्ठ बल दो ।

३० दीप्त सोम, आकाश और पृथिवीमें उत्पन्न सारे स्वीकरणीय धन हमें दो ।

१ सोम, तुम वर्षक और दीप्तिमान् हो । सोमदेव, तुम्हारा कार्य वर्षण करना है । सोम, तुम मनुष्यों और देवोंके उपयोगी कर्मोंको धारण करते हो ।

वृषणस्ते वृष्ण्यं शवो वृषा वनत् वृषा मदः । सत्यं वृषन्वृषेदसि ॥२॥
अश्वो न चक्रदो वृषा सं गा इन्दो समर्वतः ।
वि नो राये दुरो वृधि ॥३॥
असृक्षत प्र वाजिनो गव्या सोमासो अश्वया ।
शुक्रासो वीरयाशवः ॥४॥
शुम्भमाना ऋतायुभिर्मृज्यमाना गभस्त्योः । पवन्ते वारे अव्यये ॥५॥
ते विश्वा दाशुषे वसु सोमा दिव्यानि पार्थिवा ।
पवन्तामान्तरिक्ष्या ॥६॥
पवमानस्य विश्ववित् प्र ते सर्गा असृक्षत ।
सूर्यस्येव न रश्मयः ॥७॥
केतुं कृण्वन्दिवस्परि विश्वा रूपाभ्यर्षसि ।
समुद्रः सोम पिन्वसे ॥८॥

---

२ काम-वर्षक सोम, तुम्हारा बल वर्षणशील है, तुम्हारा विभाग भी वर्षणशील है और तुम्हारा रस भी वर्षणशील है । सचमुच तुम सब तरहसे वर्षा करनेवाले हो ।

३ सोम, तुम अश्वके समान शब्द करते हो । तुम हमें पशु और अश्व दो । धन प्राप्तिके लिये दरवाजा खोलो ।

४ बली, उज्ज्वल और वेगमान् सोमकी सृष्टि, गौओं, अश्वों और पुत्रोंकी प्राप्तिकी इच्छासे, की गयी है ।

५ याज्ञिक लोग सोमको सुशोभित और दोनों हाथोंसे परिमार्जित करते हैं । सोम मेषलोमपर बहते हैं ।

६ सोम हवि देनेवालेके लिये द्युलोक, पृथिवी और अन्तरीक्षमें उत्पन्न सारे धन बरसें ।

७ विश्वदर्शक और क्षरणशील, तुम्हारी धाराएं सूर्यकी किरणोंके समान प्रकाशमाना और इस समय निर्मित हो रही हैं ।

८ सोम, रसशाली तुम संकेत वा ध्यान करके अन्तरीक्षसे हमें सारे रूप वितरित करो और नाना धन भी हमें दो ।

हिन्वानो वाचमिष्यसि पवमान विधर्म्मणि। अक्रान्देवो न सूर्य्यः ॥९॥

इन्दुः पविष्ट चेतनः प्रियः कवीनां मती। सृजदश्वं रथीरिव ॥१०॥

ऊर्मिर्यस्ते पवित्र आ देवावीः पर्य्यक्षरत्। सीदन्नृतस्य योनिमा ॥११।

स नो अर्ष पवित्र आ मदो यो देववीतमः।

इन्दविन्द्राय पीतये ॥१२॥

इषे पवस्व धारया मृज्यमानो मनीषिभिः।

इन्दो रुचाभि गा इहि ॥१३॥

पुनानो वरिवस्कृध्यूर्ज्जं जनाय गिर्वणः। हरे सृजान आशिरम् ॥१४॥

पुनानो देववीतय इन्द्रस्य याहि निष्कृतम्।

द्युतानो वाजिभिर्यतः ॥१५॥

प्र हिन्वानास इन्दवोऽच्छा समुद्रमाशवः।

धिया जूता असृक्षत ॥१६॥

---

९ सोम, जब तुम्हारा रस, सूर्यदेवके समान, दशापवित्रपर चढ़ता है, तब तुम उसी मार्गमें प्रेरित होकर शब्द करते हो।

१० प्रज्ञापक और देवोंके प्रिय सोम कान्तकर्मा स्तोताओंकी स्तुतिसे क्षरित होते हैं। सोम उसी प्रकार तरङ्ग चलाते हैं, जिस प्रकार रथी अश्वको चलाता है।

११ सोम, तुम्हारी जो तरङ्ग देवाभिलाषी है, वह दशापवित्रपर क्षरित होती है।

१२ सोम, तुम अतीव देवाभिलाषी और मदकर हो। इन्द्रके पानके लिये हमारे दशापवित्र-पर क्षरित होओ।

१३ सोम, ऋत्विकोंके द्वारा संशोधित होकर तुम हमारे अन्नके लिये क्षरित होओ। तुम रुचिकर अन्नके साथ गौओंकी ओर जाओ।

१४ स्तुत्य और हरित-वर्ण सोम, तुम दूधके साथ बनाये जाते हो। शोधित होकर तुम यजमानको धन और अन्न दो।

१५ सोम, दीप्तिमान्, यजमानोंके द्वारा लाये गये और यज्ञके लिये संशोधित किये गये तुम इन्द्रके पास जाओ।

१६ वेगशाली सोम अन्तरीक्षके प्रति प्रेरित होकर और अँगुलिके द्वारा तौले जाकर उत्पादित किये जाते हैं।

मर्म्मृजानास आयवो वृथा समुद्रमिन्दवः । अग्मन्नृतस्य योनिमा ॥१७॥
परि णो याह्यस्मयुर्विश्वा वसून्योजसा । पाहि नः शर्म्म वीरवत् ॥१८॥
मिमाति वह्निरेतशः पदं युजान ऋक्वभिः ।
प्र यत् समुद्र आहितः ॥१९॥
आ यद्योनिं हिरण्ययमाशुर्ऋतस्य सीदति । जहात्यप्रचेतसः ॥२०॥
अभि वेना अनूषतेयक्षन्ति प्रचेतसः । मज्जन्त्यविचेतसः ॥२१॥
इन्द्रायेन्दो मरुत्वते पवस्वमधुमत्तमः । ऋतस्य योनिमासदन् ॥२२॥
तं त्वा विप्रा वचोविदः परिष्कृण्वन्ति वेधसः ।
सन्त्वा मृजन्त्यायवः ॥२३॥
रसं ते मित्रो अर्यमा पिबन्ति वरुणः कवे । पवमानस्य मरुतः ॥२४॥
त्वं सोम विपश्चितं पुनानो वाचमिष्यसि । इन्दो सहस्रभर्णसम् ॥२५॥

---

१७ शोधित और गतिपरायण सोम सरलतासे आकाशकी ओर जाते हैं । वह जल-पात्रकी ओर जाते हैं ।

१८ सोम, तुम हमारी अभिलाषा करनेवाले हो । बलके द्वारा हमारे सारे धनोंकी रक्षा करो । हमारे पुत्रके समान गृहकी रक्षा करो ।

१९ सोम, जब वहनशील अश्व शब्द करता है और स्तोताओंके द्वारा यज्ञमें स्थान (स्तोत्र-श्रवण) के लिये आता है, तब वह अश्वरूप सोम जलमें (वसतीवरीमें) स्थित होता है ।

२० जब वेगशाली सोम यज्ञके हिरण्मय स्थानपर बैठते हैं, तब स्तोत्र-शून्योंके यज्ञमें नहीं जाते ।

२१ कमनीय स्तोता सोमकी स्तुति करते हैं और सुबुद्धि मनुष्य सोमका यजन करते हैं दुर्बुद्धि मनुष्य नरकमें निमज्जित होते हैं ।

२२ सोम, तुम बहुत ही मधुर हो । यज्ञ-स्थानमें बैठनेके लिये इन्द्र और मरुतोंके लिये क्षरित होओ ।

२३ सोम, क्षरणशील तुम्हें प्राज्ञ और कर्म-कर्त्ता स्तोता लोग अलङ्कृत करते हैं । तुम्हें मनुष्य भली भाँति शोधित करते हैं ।

२४ क्रान्तकर्मा सोम, क्षरणशील तुम्हारे रसको मित्र, अर्यमा, वरुण और मित्र सभी पीते हैं ।

२५ प्रदीप्त सोम, क्षरणशील तुम ज्ञान-पूत और बहुतोंका भरण करनेवाला वचन प्रेरित करते हो ।

उतो सहस्रभर्णसं वाचं सोम मखस्युवम् । पुनान इन्दवा भर ॥२६॥

पुनान इन्दवेषां पुरुहूत जनानाम् । प्रियः समुद्रमा विश ॥२७॥

दविद्युतत्या रुचा परिष्टोभन्त्या कृपा । सोमाः शुक्रा गवाशिरः ॥२८॥

हिन्वानो हेतृभिर्यत आ वाजं वाज्यक्रमीत् ।

सीदन्तो वनुषो यथा ॥२९॥

ऋधक् सोम स्वस्तये संजग्मानो दिवः कविः ।

पवस्व सूर्यो दृशे ॥३०॥



---

२६ दीप्त सोम क्षरणशील तुम हजारोंका भरण करनेवाला और यज्ञाभिलाषी वचन, हमारे लिये, ले आओ ।

२७ बहुतोंके द्वारा बुलाये गये सोम, क्षरणशील तुम इस यज्ञमें स्तोताओंके प्रिय होकर द्रोण-कलसमें पैठो ।

२८ उज्ज्वल और प्रकाशमान दीप्ति तथा चारो ओर शब्द करनेवाली धारासे युक्त होकर सोम दूधमें मिलाये जाते हैं ।

२९ जैसे योद्धा लोग रण-भूमिमें पैठते ही आक्रमण करते हैं, वैसे ही बली, स्तोताओंके द्वारा, प्रेरित और संयत सोम यज्ञ-रूप युद्धमें आक्रमण करते हैं ।

३० सोम, क्रान्त और सुन्दर वीर्यवाले तुम संगत होते हुए दर्शनके लिये द्युलोकसे प्रवाहित होओ ।



प्रथम अध्याय समाप्त



द्वितीय अध्याय

६५ सूक्त

पवमान सोम देवता। वरुण-पुत्र भृगु अथवा भृगु-पुत्र जमदग्नि ऋषि। गायत्री छन्द।

हिन्वन्ति सूरमुस्रयः स्वसारो जामयस्पतिम्। महामिन्दुं महीयुवः ॥१॥

पवमान रुचारुचा देवो देवेभ्यस्परि। विश्वा वसून्या विश ॥२॥

आ पवमान सुष्टुतिं वृष्टिं देवेभ्यो दुवः। इषे पवस्व संयतम् ॥३॥

वृषा ह्यसि भानुना द्युमन्तं त्वा हवामहे। पवमान स्वाध्यः ॥४॥

आ पवस्व सुवीर्यं मन्दमानः स्वायुध। इतोष्विन्दवा गहि ॥५॥

यदद्भिः परिषिच्यसे मृज्यमानो गभस्त्योः। द्रुणा सधस्थमश्नुषे ॥६॥

---

१ अङ्गुलि-रूप, परस्पर बन्धु-भूत और कार्य-कुशल स्त्रियाँ तुम्हारे अभिषवकी इच्छा करके सुन्दर वीर्यवाले, सारे संसारके स्वामी, महान् और अपने पति सोमके क्षरणशील होनेकी इच्छा करती हैं।

२ दशापवित्रसे शोधित, तेजके द्वारा दीप्त सोम, देवोंके पाससे निखिल धन हमें दो।

३ पवमान सोम, देवोंकी परिचर्याके लिये शोभन स्तुतिवाली वर्षा करो। हमारे अन्नके लिये वर्षा करो।

४ सोम, तुम अभीष्ट-फल-वर्षक हो। पवमान सोम, शोभन कर्मवाले हम किरणोंके द्वारा तेजस्वी तुम्हें हम यज्ञमें बुलाते हैं।

५ तुम्हारे धनुष् आदि आयुध शोभन हैं। देवोंको प्रमत्त करते हुए तुम हमें शोभन वीर्य-वाले पुत्र दो। चमसोंमें बहनेवाले सोम, हमारे यज्ञमें आओ।

६ सोम, तुम बाहुओंके द्वारा संशोधित किये और वसतीवरी जलसे सींचे जाते हो। उस समय तुम काष्ठ-पात्रमें निहित होकर अपने स्थानमें गमन करते हो।

प्र सोमाय व्यश्ववत् पवमानाय गायत । महे सहस्रचक्षसे ॥७॥

यस्य वर्णं मधुश्चुतं हरिं हिन्वन्त्यद्रिभिः । इन्दुमिन्द्राय पीतये ॥८॥

तस्य ते वाजिनो वयं विश्वा धनानि जिग्युषः । सखित्वमा वृणीमहे ॥९॥

वृषा पवस्व धारया मरुत्वते च मत्सरः । विश्वा दधान ओजसा ॥१०॥

तं त्वा धर्त्तारमोण्योः पवमान स्वर्दृशम् । हिन्वे वाजेषु वाजिनम् ॥११॥

अया चित्तो विपानया हरिः पवस्व धारया । युजं वाजेषु चोदय ॥१२॥

आ न इन्दो महीमिषं पवस्व विश्वदर्शतः । अस्मभ्यं सोम गातुवित् ॥१३॥

आ कलशा अनूषतेन्दो धाराभिरोजसा । एन्द्रस्य पीतये विश ॥१४॥

यस्य ते मद्यं रसं तीव्रं दुहन्त्यद्रिभिः । स पवस्वाभिमातिहा ॥१५॥

---

७ स्तोताओ, व्यश्व ऋषिके समान दशापवित्रमें संस्कृत, महिमान्वित और अनेक स्तोत्रोंसे युक्त सोमके लिये लिये गाओ ।

८ अध्वर्युओ, शत्रु-निवारण-समर्थ, मधुर रस देनेवाले, हरित-वर्ण और दीप्तिमान् सोमको पत्थरोंसे, इन्द्रके पानके लिये, अभिषुत करो ।

९ सोम, बलशाली, सारे शत्रु-धनोंके नेता तुम्हारे सख्यका हम संभजन करते हैं ।

१० अभीष्ट-फल-वर्षक सोम, धारा-रूपसे द्रोण कलसमें आओ । आकर इन्द्र और मरुतोंके लिये मदकर होओ । सोम, तुम आत्म-बलसे युक्त होकर स्तोताओंको धन देते हुए मादयिता होओ ।

११ पवमान सोम, द्यावापृथिवीके धारक, स्वर्गके द्रष्टा, देवोंके दर्शनीय और बली तुम्हें मैं युद्ध-भूमिमें भेज रहा हूं ।

१२ सोम, तुम हमारी अङ्गुलियोंके द्वारा उत्पन्न (निर्गत), अभिषुत और हरित-वर्ण हो द्रोण-कलसमें आओ । अपने मित्र इन्द्रको संग्राममें भेजो ।

१३ सोम, दीपनशील तुम विश्व-प्रकाशक हो । हमें प्रचुर अन्न दो । पवमान सोम हमारे लिये स्वर्ग-मार्गके सूचक होओ ।

१४ क्षरणशील सोम, अभिषव-कालमें बलसे युक्त तुम्हारी, धाराओं-वाले द्रोण-कलसमें, स्तोताओंके द्वारा, स्तुति होती है । अनन्तर तुम इन्द्रके पानके लिये आओ और चमसोंमें पैठो ।

१५ सोम, तुम्हारे मदकर और क्षिप्र मद-दाता रसको पत्थरोंसे अध्वर्यु आदि दूहते हैं । पापियोंके घातक होकर तुम क्षरित होओ ।

राजा मेधाभिरीयते पवमानो मनावधि । अन्तरिक्षेण यातवे ॥१६॥
आ न इन्दो शतग्विनं गवां पोषं स्वश्व्यम् । वहा भगत्तिमूतये ॥१७॥
आ नः सोम सहो जुवो रूपं न वर्चसे भर । सुष्वाणो देववीतये ॥१८॥
अर्षा सोम द्युमत्तमोऽभि द्रोणानि रोरुवत् ।
सदञ्छ्येनो न योनिमा ॥१९॥
अप्सा इन्द्राय वायवे वरुणाय मरुद्भ्यः । सोमो अर्षति विष्णवे ॥२०॥
इषं तोकाय नो दधदस्मभ्यं सोम विश्वतः । आ पवस्व सहस्रिणम् ॥२१॥
ये सोमासः परावति ये अर्वावति सुन्विरे । ये वादः शर्यणावति ॥२२॥
य आर्जीकेषु कृत्वसु ये मध्ये पस्त्यानाम् । ये वा जनेषु पञ्चसु ॥२३॥

---

१६ मनुष्योंके यज्ञ करनेपर राजा सोम आकाशमार्गसे द्रोण-कलसके प्रति जानेके लिये स्तुत हो रहे हैं ।

१७ क्षरणशील सोम, हमारी रक्षाके लिये हमें सैकड़ो और सहस्रो गौओंसे युक्त, गौ आदिके लिये पुष्टिकर, शोभन अश्वोंसे सम्पन्न और स्तुत्य धनदान करो ।

१८ सोम, तुम देवोंके पानके लिये अभिषुत हो । शत्रु-हनन-समर्थ बल और सर्वत्र प्रकाशके लिये रूप भी हमें दो ।

१९ सोम, जैसे श्येन पक्षी शब्द करते हुए अपने घोसलेमें आता है, वैसे ही क्षरणशील और दीप्तिमान् सोम शब्द करते हुए दशापवित्रसे द्रोण-कलसमें जाते हैं ।

२० वसतीवरी नामक जलके संभक्ता सोम इन्द्र, वायु, वरुण, विष्णु और अन्यान्य देवोंके लिये बहते हैं ।

२१ सोम, तुम हमारे पुत्रको अन्न देते हुए सर्वत्र सहस्र-संख्यक धन हमें दो ।

२२ जो सोम दूर अथवा समीपके देशमें इन्द्रके लिये अभिषुत हुए हैं और जो कुरुक्षेत्रके निकट शर्यणावत् नामक सरोवरमें अभिषुत हुए हैं, वह हमें अभिमत फल दें ।

२३ जो सोम आर्जीक (देश वा व्यास नदी ?) में अभिषुत हुए हैं, जो कृत्व (कर्मनिष्ठ) देश, सरस्वती नदीके तटपर और पञ्चजन (पंजाब वा चार वर्ण और निषाद) में प्रस्तुत हुए हैं, वह हमें अभीष्ट प्रदान करें ।

ते नो वृष्टिं दिवस्परि पवन्तामा सुवीर्यम् ।
सुवाना देवास इन्दवः ॥२४॥
पवते हर्यतो हरिर्गृणानो जमदग्निना । हिन्वानो गोरधि त्वचि ॥२५॥
प्र शुक्रासो वयोजुवो हिन्वानासो न सप्तयः ।
श्रीणाना अप्सु मृञ्जत ॥२६॥
तं त्वा सुतेष्वाभुवो हिन्विरे देवतातये । स पवस्वानया रुचा ॥२७॥
आ ते दक्षं मयोभुवं वह्निमद्या वृणीमहे । पान्तमा पुरुस्पृहम् ॥२८॥
आ मन्द्रमा वरेण्यमा विप्रमा मनीषिणम् । पान्तमा पुरुस्पृहम् ॥२९॥
आ रयिमा सुचेतुनमा सुक्रतो तनूष्वा । पान्तमा पुरुस्पृहम् ॥३०॥

२४ वे सारे अभिषुत, दीप्त चमसोंमें क्षरणशील सोम, आकाशसे वृष्टि और शोभन-वीर्यवाले पुत्र तथा धन आदि हमें दें।

२५ देवाभिलाषी, हरितवर्ण, गोचर्मके ऊपर प्रेरित और जमदग्नि ऋषिके द्वारा स्तुत सोम पात्रमें जाते हैं।

२६ जैसे जलमें ले जाकर अश्वोंको मार्जित किया जाता है, वैसे ही दीप्त, अन्नप्रेरक और क्षीर आदिमें मिलाये जाकर सोम वसतीवरीमें पुरोहितोंके द्वारा मार्जित किये जाते हैं।

२७ सोमाभिषव हो जानेपर ऋत्विक् लोग इन्द्रादि देवोंके लिये तुम्हे पत्थरोंसे प्रेरित करते हैं। तुम अभिषुत होकर, प्रदीप्त धारासे, द्रोणकलसमें आओ।

२८ सोम, तुम्हारे सुखकर, धनादि-प्रापक, शत्रुओंसे रक्षक और बहुतोंके द्वारा अभिलषणीय बलको हम याज्ञिक, आजके यज्ञमें, भजते हैं।

२९ सोम, मदकर, स्वीकरणीय, मेधावी, बुद्धिशाली, स्तुति-युक्त, सर्व-रक्षक और अनेकोंके द्वारा स्पृहणीय तुम्हारा भजन हम करते हैं।

३० शोभन-यज्ञ सोम, हम तुम्हारे धनका आश्रय करते हैं। हमारे पुत्रोंमें तुम धन और सुन्दर ज्ञान दो। हम सर्व-रक्षक और बहुतोंके द्वारा अभिलषित तुम्हारा आश्रय करते हैं।

६६ सूक्त

अग्नि और पवमान देवता। शत वैखानस ऋषि। गायत्री और अनुष्टुप् छन्द।

पवस्व विश्वचर्षणेभि विश्वानि काव्या। सखा सखिभ्य ईड्यः ॥१॥

ताभ्यां विश्वस्य राजसि ये पवमान धामनी।
प्रतीची सोम तस्थतुः ॥२॥

परि धामानि यानि ते त्वं सोमासि विश्वतः।
पवमान ऋतुभिः कवे ॥३॥

पवस्व जनयन्निषोऽभि विश्वानि वार्या।
सखा सखिभ्य ऊतये ॥४॥

तव शुक्रासो अर्चयो दिवस्पृष्ठे वि तन्वते। पवित्रं सोम धामभिः ॥५॥

तवेमे सप्त सिन्धवः प्रशिषं सोम सिस्रते।
तुभ्यं धावन्ति धेनवः ॥६॥

---

१ सूक्ष्मदर्शक सोम, तुम सखा और स्तोतव्य हो। हम तुम्हारे सखा हैं। हमारे लिये सारे कर्मों और स्तोत्रोंको लक्ष्य कर क्षरित होओ।

२ पवमान सोम, तुम्हारे जो दो टेढ़े पत्ते (वा किरण और सोमरस) हैं, उनसे तुम सारे संसारके स्वामी होते हो।

३ शोधित और क्रान्तकर्मा सोम, तुम्हारा तेज (वा पत्र) चारो ओर है। उससे तुम वसन्त आदि ऋतुओंमें सर्वत्र सुशोभित होते हो।

४ सोम, तुम हमारे सखा हो। हमारे सारे स्तोत्रोंकी ओर ध्यान देकर, हम मित्रोंके रक्षणके लिये, अन्न देनेको आओ।

५ तेजस्वी तुम्हारी सर्वत्र ज्वलनशील और पूजनीय किरणें पृथिवीपर जलका विस्तार करती हैं।

६ ये गङ्गा आदि सात नदियाँ तुम्हारी आज्ञाका अनुगमन करती हैं। तुम्हारे लिये ही गायें, दुग्ध आदि देनेको, दौड़ती हैं।

प्र सोम याहि धारया सुत इन्द्राय मत्सरः ।
दधानो अक्षिति श्रवः ॥७॥
समु त्वा धीभिरस्वरन् हिन्वतीः सप्त जामयः ।
विप्रमाजा विवस्वतः ॥८॥
मृजन्ति त्वा समग्रुवोऽव्ये जीरावधि ष्वणि ।
रेभो यदज्यसे वने ॥९॥
पवमानस्य ते कवे वाजिन्त्सर्गा असृक्षत ।
अर्वन्तो न श्रवस्यवः ॥१०॥
अच्छा कोशं मधुश्चुतमसृग्रं वारे अव्यये ।
अवावशन्त धीतयः ॥११॥
अच्छा समुद्रमिन्दवोऽस्तं गावो न धेनवः ।
अग्मन्नृतस्य योनिमा ॥१२॥

---

७ सोम, तुम इन्द्रके लिये मदकर और हमारे द्वारा अभिषुत हो। दशापवित्रसे निकलकर द्रोण-कलसमें जाओ। हमें प्रचुर धन दो।

८ सोम, स्तुति करते हुए सात होत्रक लोगोंने देवोंके सेवक यजमानके यज्ञमें मेधावी और क्षरणशील तुम्हारी स्तुति की।

९ सोम, अँगुलियाँ शीघ्र बने, शब्दवाले और मेषलोमसे बनाये दशापवित्रपर तुम्हें तब गारतो (शोधित करती) हैं, जब तुम शब्द करते हुए वसतीवरी नामक जलसे सिञ्चित होते हो।

१० क्रान्तप्रज्ञ और अन्नवान् सोम, जैसे, अश्व अन्न लानेके लिये दौड़ते हैं, वैसे ही यजमानोंके अन्नकी कामना करनेवाली तुम्हारी धाराएँ दौड़ती हैं।

११ मधुर रस बरसानेवाले द्रोण-कलसको लक्ष्य करके मेषलोममय दशापवित्रपर पुरोहितोंके द्वारा सोम बनाये जाते हैं। हमारी अँगुलियाँ सोमोंके शोधनकी इच्छा करती हैं।

१२ जैसे दुग्ध देकर मनुष्योंको आनन्द देनेवाली धेनुएँ और नवप्रसूता गायें अपने गोष्ठ-को जाती हैं, वैसे ही क्षरणशील सोम अपने संगमन-स्थान द्रोण-कलसकी ओर जाते हैं। सोम यज्ञ-स्थानकी ओर जाते हैं।

प्र ण इन्दो महे रण आपो अर्षन्ति सिन्धवः ।
यद्गोभिर्वासयिष्यसे ॥१३॥
अस्य ते सख्ये वयमियक्षन्तस्त्वोतयः । इन्दो सखित्वमुश्मसि ॥१४॥
आ पवस्व गविष्टये महे सोम नृचक्षसे । एन्द्रस्य जठरे विश ॥१५॥
महाँ असि सोम ज्येष्ठ उग्राणामिन्द ओजिष्ठः ।
युध्वा सञ्छश्वज्जिगेथ ॥१६॥
य उग्रेभ्यश्चिदोजीयाञ्छूरेभ्यश्चिच्छूरतरः ।
भूरिदाभ्यश्चिन्मंहीयान् ॥१७॥
त्वं सोम सूर एषस्तोकस्य साता तनूनाम्
वृणीमहे सख्याय वृणीमहे युज्याय ॥१८॥
अग्न आयूंषि पवस आ सुवोर्जमिषं च नः ।
आरे बाधस्व दुच्छुनाम् ॥१९॥

---

१३ सोम, जब तुम दुग्ध आदिमें मिलाये जाते हो, तब हमारे यज्ञके लिये क्षरणशील जल (वसतीवरी) जाता है।

१४ पूजाभिलाषी और तुम्हारे बन्धु-कर्ममें स्थित हम तुम्हारे रक्षणमें हैं और तुम्हारे बन्धुत्वकी कामना करते हैं।

१५ सोम, अङ्गिरा लोगोंकी गायें खोजनेवाले, महान् और मनुष्य-दर्शक इन्द्रके लिये बहो तथा इन्द्रके उदरमें पैठो ।

१६ सोम, तुम महान् हो। तुम देवोंके आनन्ददाता और प्रशंसनीय हो। सोम, उग्र बल-वालोंमें भी तेजस्वी हो। शत्रुओंके साथ युद्ध करते हुए उनके धनको तुमने जीता ।

१७ सोम बलियोंमें बली, शूरमें शूर और दाताओंमें महान् दाता हैं।

१८ सोम, तुम सुन्दर वीर्यवाले हो। तुम यज्ञोंके प्रेरक हो। हमें अन्न दो। पुत्र दो। तुम्हारी मैत्रीके लिये हम तुम्हारा आश्रय करते हैं। शत्रु-बाधाको दूर करनेके लिये हम तुम्हारा आश्रय करते हैं।

१९ पवमान सोम, तुम हमारे जीवनकी रक्षा करते हो। हमें अन्न-रस और बल दो। राक्षसोंको हमसे दूर ही नष्ट करो।

अग्निऋषिः पवमानः पाञ्चजन्यः पुरोहितः । तमीमहे महागयम् ॥२०॥

अग्ने पवस्व स्वपा अस्मे वर्चः सुवीर्यम् ।

दधद्रयिं मयि पोषम् ॥२१॥

पवमानो अति स्त्रिधोऽभ्यर्षति सुष्टुतिम् । सूरो न विश्वदर्शतः ॥२२॥

स मर्मृजान आयुभिः प्रयस्वान् प्रयसे हितः ।

इन्दुरत्यो विचक्षणः ॥२३॥

पवमान ऋतं बृहच्छुक्रं ज्योतिरजीजनत् ।

कृष्णा तमांसि जङ्घनत् ॥२४॥

पवमानस्य जङ्घ्नतो हरेश्चन्द्रा असृक्षत । जीरा अजिरशोचिषः ॥२५॥

पवमानो रथीतमः शुभ्रेभिः शुभ्रशस्तमः । हरिश्चन्द्रो मरुद्गणः ॥२६॥

पवमानो व्यश्नवद्रश्मिभिर्वाजसातमः । दधत् स्तोत्रे सुवीर्यम् ॥२७॥

---

२० चारों वर्ण और निषादके हितैषी, ऋषि, पवित्र, पुरोहित और महायशस्वी अग्निसे हम धनादिकी याचना करते हैं ।

२१ अग्नि, शोभनकर्मा तुम हमें सुन्दर बलवाला तेज दो । पुत्र और गौ आदि भी दो ।

२२ पवमान सोम शत्रुओंका अतिक्रम करते हैं । वह स्तोताओंकी शोभन स्तुतिको प्राप्त करते हैं । वह सूर्यके समान सबके दर्शनीय भी हैं ।

२३ मनुष्योंके द्वारा बार-बार शोध्यमान सोम देवोंके पास निरन्तर जाते हैं । वह आनन्दप्रद अन्नवाले हैं । वह हविके लिये हितैषी हैं । वह सबके द्रष्टा हैं ।

२४ क्षरणशील सोमने काले अन्धकारको नष्ट करते हुए, प्रचुर, सर्वत्र व्यापक, दीप्तिमान् और श्वेतवर्ण तेज उत्पन्न किया ।

२५ बार-बार अन्धकारका विनाश करनेवाले, हरित-वर्ण, व्यापक तेजवाले और क्षरणशील सोमकी आनन्ददायिनी, शीघ्रकारिणी और वर्द्धनशील धाराएँ दशापवित्रसे निकल रही हैं ।

२६ पवमान सोम, अतीव रथवाले, निर्मलतम यशवाले, हरित-धारावान् और मरुतोंकी सहायतासे युक्त हैं । अपनी किरणोंसे सारे विश्वको व्याप्त करते हैं ।

२७ पवमान, अन्नदाता और स्तोताको सुन्दर वीर्यसे युक्त पुत्र देते हुए सोम अपनी किरणोंसे सारे संसारको व्याप्त करते हैं ।

प्र सुवान इन्दुरक्षाः पवित्रमत्यव्ययम् । पुनान इन्दुरिन्द्रमा ॥२८॥
एष सोमो अधित्वचि गवां क्रीलत्यद्रिभिः ।
इन्द्रं मदाय जोहुवत् ॥२९॥
यस्य ते द्युम्नवत् पयः पवमानाभृतं दिवः ।
तेन नो मृल जीवसे ॥३०॥



६५ सूक्त

पवमान सोम देवता । बार्हस्पत्य भरद्वाज, मारीच कश्यप, रहूगण गोतम, भौम अत्रि, गाथिन विश्वामित्र, भार्गव जमदग्नि, मैत्रावरुणि वसिष्ठ, आङ्गिरस पवित्र ऋषि । गायत्री, पुर उष्णिक् और अनुष्टुप् छन्द ।

त्वं सोमासि धारयुर्मन्द्र ओजिष्ठो अध्वरे । पवस्व मंहयद्रयिः ॥१॥

---

२८ क्षरणशील सोम मेषलोममय पवित्रको लाँघकर क्षरित हुए । पवित्रसे शुद्ध होकर सोम इन्द्रके पेटमें पैठें ।

२९ किरण-रूप सोम गोचर्मके ऊपर पत्थरोंके साथ क्रीड़ा करते हैं । मदके लिये सोमने इन्द्रको बुलाया ।

३० क्षरणशील सोम, द्युलोकसे श्येन-रूपिणी गायत्रीसे लाये गये और यशोयुक्त सोम, रस-रूप अन्न तुम्हारे पास है । उससे हमें, चिर जीवन के लिये, आनन्दित करो ।*



१ क्षरणशील सोम, तुम अतीव मदकर, अत्यन्त ओजस्वी, हिंसा-शून्य यज्ञमें अभिषव-धारकी इच्छा करनेवाले और स्तोताओंको धन देनेवाले हो । द्रोण-कलसमें धारा-रूपसे गिरो ।

---

* इस सूक्तमें सोमरस तैयार करनेकी सारी क्रिया वर्णित है । पहले सोम लता-रूप रहता है । उसमें दो टेढ़े पत्ते रहते हैं । उसे पत्थरोंसे कूटा जाता है । अनन्तर अँगुलियोंसे निचोड़कर रस निकाला जाता है । रसको जलमें मिलाकर भेंड़के बालोंसे बने छननेसे उसे छाना जाता है । छननेको कलसके मुँहपर रखकर अँगुलियोंसे ऊपरका रस चलाया जाता है और छननेसे होकर रस कलसमें गिरता जाता है । फिर उसमें दूध वा दही मिलाकर पिया जाता है । सोमरस सादा होता था । कहीं-कहीं हरे और पीले रंगका भी कहा गया है । गोचर्मके पात्रमें भी सोम-रसको रखा जाता था ।

त्वं सुतो नृमादनो दधन्वान् मत्सरिन्तमः । इन्द्राय सूरिरन्धसा ॥२॥
त्वं सुष्वाणो अद्रिभिरभ्यर्ष कनिक्रदत् । द्युमन्तं शुष्ममुत्तमम् ॥३॥
इन्दुर्हिन्वानो अर्षति तिरो वाराण्यव्यया । हरिर्वाजमचिक्रदत् ॥४॥
इन्दो व्यव्यमर्षसि वि श्रवांसि वि सौभगा ।
वि वाजान्त्सोम गोमतः ॥५॥
आ न इन्दो शतग्विनं रयिं गोमन्तमश्विनम् ।
भरा सोम सहस्रिणम् ॥६॥
पवमानास इन्दवस्तिरः पवित्रमाशवः । इन्द्रं यामेभिराशत ॥७॥
ककुहः सोम्यो रस इन्दुरिन्द्राय पूर्व्यः । आयुः पवत आयवे ॥८॥
हिन्वन्ति सूरमुस्त्रयः पवमानं मधुश्चुतम् । अभि गिरा समस्वरन् ॥९॥

२ कर्म-निष्ठ पुरुहितोंको तुम प्रमत्त करनेवाले हो । उन्हें धन देते हुए यज्ञके धारक, प्राज्ञ और अभिषुत तुम अन्नके साथ इन्द्रके लिये अतीव प्रमत्तकर बनो ।

३ पवमान सोम, पत्थरोंसे कूटे जाकर तुम शब्द करते हुए कलसकी ओर जाओ और दीप्ति-युक्त तथा शत्रुशोषक बल भी प्राप्त करो।

४ पत्थरोंसे कूटे जाकर सोम मेषलोममय पवित्रसे निकल कर जाते हैं और हरित्-वर्ण, सोम अन्नसे कहते हैं कि, "मैं तुम्हारे साथ इन्द्रको बुलाता हूं।"

५ सोम, जब तुम मेषलोममय पवित्र (दशापवित्र) से निकलते हो, तब हवीरूप अन्न, सौभाग्य (धन) और गोयुक्त बल प्राप्त करते हो।

६ पात्रोंमें गिरनेवाले सोम, हमारे लिये सौ गायें, सहस्र अश्व और धन दो।

७ मेषलोममय पवित्रसे निकलकर कलसकी ओर अनेक धाराओंसे गिरते हुए और शीघ्र मदकारी सोम चमस आदिको व्याप्त करते हुए अपनी गतिसे इन्द्रको परिव्याप्त करते हैं।

८ सोम सबसे उन्नत हैं। वह पूर्वजोंके द्वारा अभिषुत सोम सर्वग इन्द्रके लिये कलसमें जाते हैं और इन्द्रके लिये क्षरित होते हैं ।

९ कार्य करनेके लिये इधर-उधर जानेवाली अँगुलियाँ मदकर रसको गिरानेवाले, यागादि कर्मके प्रेरक और क्षरणशील सोमको प्रेरित करती हैं । स्तोता लोग स्तोत्रके द्वारा इनकी भली भाँति स्तुति करते हैं।

अविितानो अजाश्वः पूषा यामनियामनि ।
आ भक्षत् कन्यासु नः ॥१०॥
अयं सोमः कपर्दिने घृतं न पवते मधु । आ भक्षत् कन्यासु नः ॥११॥
अयं त आघृणे सुतो घृतं न पवते शुचि । आ भक्षत् कन्यासु नः ॥१२॥
वाचो जन्तुः कवीनां पवस्व सोम धारया ।
देवेषु रत्नधा असि ॥१३॥
आ कलशेषु धावति श्येनो वर्म वि गाहते ।
अभि द्रोणा कनिक्रदत् ॥१४॥
परि प्र सोम ते रसोऽसर्जि कलशे सुतः ।
श्येनो न तक्तो अर्षति ॥१५॥
पवस्व सोम मन्दयन्निन्द्राय मधुमत्तमः ॥१६॥
असृग्रन्देववीतये वाजयन्तो रथा इव ॥१७॥

---

१० पूषा देवताका वाहन अज (बकरा) अथवा अश्व है। पूषा देवता हमारी सारी यात्राओं में रक्षक रहें। वह हमें कमनीय स्त्री (कन्या) दें।

११ कपर्दी (कल्याण मुकुटवाले) पूषाके लिये हमारे सोम, मादक घृतके समान, क्षरित होते हैं। वह हमें कमनीय स्त्री (कन्या) दें।

१२ सर्वत्र दीप्तिमान् पूषन्, तुम्हारे लिये अभिषुत सोम, शुद्ध घृतके समान क्षरित होते हैं।

१३ सोम, तुम स्तोताओंके स्तोत्रके जनक हो। तुम द्रोणकलसको प्राप्त करो। देवोंके लिये तुम रत्न आदिके दाता हो।

१४ अभिषुत सोम उसी प्रकार शब्द करते हुए द्रोण-कलसकी ओर जाते हैं, जैसे श्येन पक्षी (बाज) अपने घोसलेको जाता है।

१५ सोम तुम्हारा अभिषुत रस, सर्वत्रगन्ता श्येन पक्षीके समान चमसोंमें फैलता है।

१६ सोम, तुम अतीव मधुर रसवाले और मादक हो। इन्द्रको प्रसन्न करनेके लिये आओ।

१७ अन्नवान् और अभिषुत सोमको देवोंके लिये ऋत्विक् लोग देते हैं। ये सोम रथके समान शत्रुओंकी सम्पत्तिका हरण करनेवाले हैं।

ते सुतासो मदिन्तमाः शुक्रा वायुमसृक्षत ॥१८॥

गृाव्णा तुन्नो अभिष्टुतः पवित्रं सोम गच्छसि ।
दधत्स्तोत्रे सुवीर्यम् ॥१६॥

एष तुन्नो अभिष्टुतः पवित्रमति गाहते । रक्षोहा वारमव्ययम् ॥२०॥

यदन्ति यच्च दूरके भयं विन्दति मामिह । पवमान वि तज्जहि ॥२१॥

पवमानः सो अद्य नः पवित्रेण विचर्षणिः ।
यः पोता स पुनातु नः ॥२२॥

यत्ते पवित्रमर्चिष्यग्ने विततमन्तरा । ब्रम्ह तेन पुनीहि नः ॥२३॥

यत्ते पवित्रमर्चिवदग्ने तेन पुनीहि नः । ब्रम्हसवैः पुनीहि नः ॥२४॥

उभाभ्यां देव सवितः पवित्रेण सवेन च । मां पुनीहि विश्वतः ॥२५॥

---

१८ अतीव मदकर, दीप्त और अभिषुत सोमने सोमरसके पानके लिये वायुको बनाया ।

१९ सोम, तुम पत्थरोंसे अभिषुत होकर स्तोताको शोभन शक्तिवाले धन आदि देते हुए दशापवित्रकी ओर जाते हो ।

२० पत्थरोंसे अभिषुत और सबके द्वारा स्तुत सोम राक्षसोंके बधिक हों। मेषलोममय दशापवित्रको लाँघकर वह द्रोणकलसमें जाते हैं ।

२१ क्षरणशील सोम, जो भय दूरमें है, जो पासमें है और जो यहाँ है, उसे भली भाँति विनष्ट करो।

२२ सबके द्रष्टा, क्षरणशील और दशापवित्रके द्वारा शोधित सोम हमें पवित्र करें।

२३ क्षरणशील अग्नि, तुम्हारी जो तेजके बीचमें शुद्धिकर सामर्थ्य है, उससे हमारे पुत्रादिवर्द्धक शरीरको पवित्र करो ।

२४ अग्नि, तुम्हारा जो शोधक और सूर्य आदिके तेजसे युक्त तेज हैं, उससे हमें पवित्र करो । सोमाभिषवसे हमें पवित्र करो ।

२५ सबके प्रेरक और प्रकाशमान सोम, तुम अपने पाप-शोधक तेज और अभिषवसे चारो ओरसे मुझे पवित्र करो।

त्रिभिष्ट्वं देव सवितर्वर्षिष्ठैः सोम धामभिः ।
अग्ने दक्षैः पुनीहि नः ॥२६॥
पुनन्तु मां देवजनाः पुनन्तु वसवो धिया ।
विश्वे देवाः पुनीत माजातवेदः पुनीहि मा ॥२७॥
प्र प्यायस्व प्र स्यन्दस्व सोम विश्वेभिरंशुभिः ।
देवेभ्य उत्तमं हविः ॥२८॥
उप प्रियं पनिप्नतं युवानमाहुतीवृधम् । अगन्म बिभ्रतो नमः ॥२९॥
अलाय्यस्य परशुर्ननाश तमा पवस्व देव सोम ।
आखुं चिदेव देव सोम ॥३०॥
यः पावमानीरध्येत्यृषिभिः सम्भृतं रसम् ।
सर्वं स पूतमश्नाति स्वदितं मातरिश्वना ॥३१॥
पावमानीर्यो अध्येत्यृषिभिः संभृतं रसम् ।
तस्मै सरस्वती दुहे क्षीरं सर्पिर्मधूदकम् ॥३२॥

---

२६ देव, सबके प्रेरक और क्षरणशील अग्नि, तुम वृद्धतम और सामर्थ्यवाले तीन (अग्नि, वायु और सूर्यके) शरीरोंसे शुद्ध करो।

२७ इन्द्रादिदेव मुझे पवित्र करें। वसु देवता हमें अपने कर्मोंसे पवित्र करें। सब देवता मुझे पवित्र करें। जात-बुद्धि अग्नि, मुझे पवित्र करो।

२८ सोम, हमें भली भाँति बढ़ाओ। अपनी सारी किरणोंसे देवोंको उत्तम हवीरूप सोमरस दो।

२९ सोम, सबको प्रसन्न करनेवाले, शब्द करनेवाले, तरुण, आहुतियोंके द्वारा वर्द्धनीय और क्षरणशील हैं। नमस्कार करते हुए उनके पास हम जाते हैं।

३० सबके आक्रमणकारी शत्रुका परशु नष्ट हो। दीप्यमान सोम, हमारे लिये क्षरित होओ। सबके हन्ता उस शत्रुको मारो।

३१ जो मनुष्य पवमान सोम देवताके ऋषियोंके द्वारा सम्पादित वेदरसरूप सार (सूक्त-समूह) को पढ़ता है, वह ऐसे पाप-शून्य अन्नका भक्षण करता है, जिससे वायुदेव पवित्र कर चुके हैं।

३२ जो ब्राह्मण पवमान सोम देवताके ऋषियोंके द्वारा सम्पादित वेदरसरूप सार (सूक्त-समूह) को पढ़ता है, उसके लिये सरस्वती (वाग्देवता) स्वयं क्षीर, घृत और मदकर सोमका दोहन करती हैं।

४ अनुवाक । ६८ सूक्त

पवमान सोम देवता । भलन्दन-पुत्र वत्सप्रि ऋषि । जगती और त्रिष्टुप् छन्द ।

प्र देवमच्छा मधुमन्त इन्दवोऽसिष्यदन्त गाव आ न धेनवः ।
बर्हिषदो वचनावन्त ऊधभिः परिस्रुतमुस्रिया निर्णिजं धिरे ॥१॥
स रोरुवदभि पूर्वा अचिक्रददुपारुहः श्रथयन्त्स्वादते हरिः ।
तिरः पवित्रं परियन्नुरु ज्रयो नि शर्याणि दधते देव आ वरम् ॥२॥
वि यो ममे यम्या संयती मदः साकं वृधा पयसा पिन्वदक्षिता ।
मही अपारे रजसी विवेविदद्भिव्रजन्नक्षितं पाज आददे ॥३॥
स मातरा विचरन्वाजयन्नपः प्र मेधिरः स्वधया पिन्वते पदम् ।
अंशुर्यवेन पिपिशे यतो नृभिः सञ्जामिभिर्नसते रक्षते शिरः ॥४॥
सं दक्षेण मनसा जायते कविर्ऋतस्य गर्भो निहितो यमा परः ।
यूना ह सन्ता प्रथमं वि जज्ञतुर्गुहा हितं जनिम नेममुद्यतम् ॥५॥

---

१ आनन्ददायिनी गौओंके समान मादक सोम इन्द्रके लिये क्षरित होते हैं। "हम्बा" शब्द करती हुई और कुशोंपर बैठी हुई दुग्धदात्री गायें चारो ओर बहनेवाले और शुद्ध सोमरसका, इन्द्रके लिये, धारण करती हैं।

२ शब्द करते और स्तोताओंकी मुख्य स्तुतियोंको सुनते हुए हरित-वर्ण सोम ऊपर चढ़नेवाली ओषधियों (लताओं) को फलसंयुक्त करके स्वादिष्ठ करते और मेषलोम-मय दशापवित्रसे होकर बड़े वेगसे बहते हैं। वह राक्षसोंको मारते हैं। अनन्तर सोमदेव यज-मानोंको श्रेष्ठ धन देते हैं।

३ सोमने साथ रहनेवाली द्यावापृथिवीको बनाया। उन्हें वर्द्धनशील और सामर्थ्यवाली कर-नेके लिये सोमने अपने रससे सींचा। महती और असीम द्यावापृथिवीको ज्ञात कराकर और चारो ओर जाते हुए सोमने अविनाशी बल प्राप्त किया।

४ प्राज्ञ सोम द्यावापृथिवीमें विचरण करते हुए और अन्तरीक्षके जलको भेजते हुए अन्नके साथ, अपने स्थान (उत्तर वेदी) को आप्यायित करते हैं। अनन्तर ऋत्विकोंके द्वारा सोम जौमें (जौके सत्तूमें) मिलाये जाते हैं। वह अँगुलियोंका समागम पाते और प्राणियोंकी रक्षा करते हैं।

५ प्रवृद्ध मनसे कार्य-कुशल सोम पृथिवीपर जन्म ग्रहण करते हैं। सोम यज्ञमें स्तुत्य हैं। वह देवोंके द्वारा नियमसे रखे गये हैं—सूर्य-रूपसे अवस्थित हैं। युवा सोम और सूर्य उत्पत्ति-कालमें विशेष रूपसे जन्म ग्रहण करते हैं। उनमें एक गुहामें संस्थापित हैं; दूसरे प्रकाशित होते हैं।

मन्द्रस्य रूपं विविदुर्मनीषिणः श्येनो यदन्धोऽभरत् परावतः ।
तं मर्जयन्त सुवृधं नदीष्वाँ उशन्तमंशुं परियन्तमृग्मियम् ॥६॥
त्वां मृजन्ति दश योषणः सुतं सोम ऋषिभिर्मतिभिर्धीतिभिर्हितम् ।
अव्यो वारेभिरुत देवहूतिभिर्नृभिर्यतो वाजमादर्षि सातये ॥७॥
परिप्रयन्तं वय्यं सुषंसदं सोमं मनीषा अभ्यनूषत स्तुभः ।
यो धारया मधुमाँ ऊर्मिणा दिव इयर्ति वाचं रयिषालमर्त्यः ॥८॥
अयं दिव इयर्ति विश्वमा रजः सोमः पुनानः कलशेषु सीदति ।
अद्भिर्गोभिर्मृज्यते अद्रिभिः सुतः पुनान इन्दुर्वरिवो विदत् प्रियम् ॥९॥
एवा नः सोम परिषिच्यमानो वयो दधच्चित्रतमं पवस्व ।
अद्वेषे द्यावापृथिवी हुवेम देवा धत्त रयिमस्मे सुवीरम् ॥१०॥

---

६ विद्वान् लोग मदकर सोमरसका स्वरूप जानते हैं। सोम-रूप अन्नको (प्राण-दायिनी शक्तिको) गायत्री-रूप पक्षी दूर—द्युलोकसे लाया था। वैसे भली भाँति वर्द्धमान, किरण-रूप, देवकामी, चारो ओर जानेवाले और स्तुत्य सोमको ऋत्विक् लोग वसतीवरी-जलमें परिमार्जित करते हैं।

७ सोम, दोनों हाथोंसे उत्पन्न, ऋषियोंके द्वारा पात्रमें निहित और अभिषुत तुम्हें दस अँगुलियाँ स्तुतियों और कर्मोंके द्वारा मेषलोममय पवित्र (चलनी) पर परिमार्जित करती हैं। देवोंको बुलानेवाले कर्म-निष्ठ ऋत्विकोंके द्वारा गृहमें संगृहीत तुम स्तोताओंको अन्न देते हो।

८ पात्रोंमें चारो ओर जाते हुए, देवोंके द्वारा अभिलषित और शोभन स्थानवाले सोमकी मनोगत स्तुतियाँ स्तोत्र करती हैं। मदकर रसवाले सोम, वसतीवरी-जलके साथ, आकाशसे द्रोण-कलसमें गिरते हैं। शत्रु-धनको जीतनेवाले और अमर सोम वचनको प्रेरित करते हैं।

९ सोम द्युलोकसे समस्त जल दिलाते हैं। फिर वह दशापवित्रमें शोधित होकर कलसमें जाते हैं। वह पत्थरों, वसतीवरी-जल और दुग्ध आदिसे अलङ्कृत होते हैं। अनन्तर अभिषुत और शोधित सोम प्रिय और श्रेष्ठ धन स्तोताओंको देते हैं।

१० सोम, दाता तुम परिषिक्त होकर नानाविध अन्न हमें दो। द्वेष-शून्य द्यावापृथिवीको हम पुकारते हैं। देवो, हमें वीर पुत्रसे युक्त धन दो।



६९ सूक्त

पवमान सोम देवता। आङ्गिरस हिरण्यस्तूप ऋषि। जगती और त्रिष्टुप् छन्द।

इषुर्न धन्वन् प्रति धीयते मतिर्वत्सो न मातुरुप सर्ज्यूधनि।
उरुधारेव दुहे अग्र आयत्यस्य व्रतेष्वपि सोम इष्यते ॥१॥
उपो मतिः पृच्यते सिच्यते मधु मन्द्राजनी चोदते अन्तरासनि।
पवमानः सन्तनिः प्रघ्नतामिव मधुमान्द्रप्सः परि वारमर्षति ॥२॥
अव्ये वधूयुः पवते परि त्वचि श्रथ्नीते नप्तीरदितेर्ऋतं यते।
हरिरक्रान्यजतः संयतो मदो नृम्णा शिशानो महिषो न शोभते ॥३॥
उक्षा मिमाति प्रति यन्ति धेनवो देवस्य देवीरुप यन्ति निष्कृतम्।
अत्यक्रमीदर्जुनं वारमव्ययमत्कं न निक्तं परि सोमो अव्यत ॥४॥

१ जैसे धनुष्पर वाण रखा जाता है, वैसे ही हम पवमान-रूप इन्द्रमें मननीय स्तुतिको रखते हैं। जैसे बछड़ा गोरूप माताके पयोधर स्तनके साथ सृष्ट हुआ है, वैसे ही इन्द्रके मदके लिये हम सोमको बनाते हैं। जैसे दुग्धदायिनी धेनु बछड़ेके आगे दूध देनेको जाती है, वैसे ही स्तोताओंके आगे इन्द्र आते हैं। इन्द्रके कर्मोंमें सोम दिया जाता है।

२ इन्द्रके लिये स्तोता लोग स्तुति करते हैं। इन्द्रके लिये मदकर सोमका सिञ्चन किया जाता है (सोममें जौका सत्तू मिलाया जाता है)। मदकर रसशाली सोम-धारा इन्द्रके मुखमें डाली जाती है। गृहादिमें भली भाँति विस्तृत, मदकर रसवाले, क्षरणशील और गति-परायण सोम वैसे ही मेषलोममय पवित्रमें जाते हैं, जैसे सुचतुर योद्धाओंका वाण फेंका जाकर शीघ्र ही नियत स्थानको पहुँच जाता है।

३ जिस वसतीवरी-जलमें सोम शोधित वा मिश्रित किये जाते हैं, वह उनकी स्त्रीके तुल्य है। उसी वधूसे मिलनेके लिये सोम मेषचर्मपर क्षरित होते हैं। सत्यरूप यज्ञमें जाकर सोम अदीन पृथिवीपर उत्पन्न (अपत्य-रूप) ओषधियोंको अग्रभागमें यजमानके लिये फलयुक्त करते हैं। हरित-वर्ण, सबके यजनीय और गृहोंमें संगृहीत सोम शत्रुओंको लाँघ जाते हैं। सर्वत्र व्यापकके समान सोम शत्रु-बलको न्यून करके अपने तेजसे शोभित होते हैं।

४ वर्षक सोम शब्द करते हैं। जैसे देवताके संस्कृत स्थानपर देवी जाती हैं, वैसे ही सोमके पीछे गायें जाती हैं। सोम श्वेतवर्ण और मेषलोममय पवित्रको लाँघते हैं। सोम उज्ज्वल कवचके समान दुग्ध आदिके द्वारा अपने शरीरको ढकते हैं।

अमृक्तेन रुशता वाससा हरिरमर्त्यो निर्णिजानः परि व्यत ।
दिवस्पृष्ठं बर्हणा निर्णिजे कृतोपस्तरणं चम्वोर्नभस्मयम् ॥५॥
सूर्यस्येव रश्मयो द्रावयित्नवो मत्सरासः प्रसुपः साकमीरते ।
तन्तुं ततं परि सर्गास आशवो नेन्द्रादृते पवते धाम किं चन ॥६॥
सिन्धोरिव प्रवणे निम्न आशवो वृषच्युता मदासो गातुमाशत ।
शं नो निवेशे द्विपदे चतुष्पदेऽस्मे वाजाः सोम तिष्ठन्तु कृष्टयः ॥७॥
आ नः पवस्व वसुमद्धिरण्यवदश्वावद्गोमद्यवमत् सुवीर्यम् ।
यूयं हि सोम पितरो मम स्थन दिवो मूर्धानः प्रस्थिता वयस्कृतः ॥८॥
एते सोमाः पवमानास इन्द्रं रथा इव प्र ययुः सातिमच्छ ।
सुताः पवित्रमति यन्त्यव्यं हित्वी वव्रिं हरितो वृष्टिमच्छ ॥९॥

---

५ अमर और हरित-वर्ण सोम जलसे शोधित होते समय स्वयं शुभ्र पयो-वस्त्रसे चारो ओर आच्छादित होते हैं। सोमने द्युलोककी पीठपर रहनेवाले सूर्यको, पाप-नाशक शोधनके लिये, द्युलोकमें स्थापित किया। सबके शोधनके लिये द्यावापृथिवीके ऊपर आदित्यके तेजको स्थापित किया।

६ सुवीर्य आदित्यकी सर्व-व्यापक किरणोंके समान सर्वत्र बहनेवाले, मदकर, शत्रु-घातक चमसोंमें व्याप्त और बनाये जानेवाले सोम सूतोंसे बने विस्तृत वस्त्रोंके साथ चारो ओर जाते हैं। वह इन्द्रको छोड़कर अन्य देवके लिये नहीं क्षरित होते।

७ ऋत्विकोंके द्वारा अभिषुत और मदकर सोम स्तुत्य इन्द्रको उसी तरह प्राप्त करते हैं, जिस तरह नदियाँ समुद्रको जाती हैं। सोम हमारे गृहमें पुत्रादि और गवादिको सुख दो। सोम, हमें अन्न और पुत्रादि दो।

८ सोम, हमें वसु, हिरण्य, अश्व, गौ, जौ और शोभन वीर्यसे युक्त धन दो। सोम, तुम मेरे पितरोंके भी पिता हो; इसलिये तुम मेरे द्युलोकके उन्नत प्रदेश (स्वर्गादि) पर स्थित कर्म-निष्ठ और हवीरूप अन्नके कर्त्ता पितर हो।

९ जैसे इन्द्रके रथ संग्राममें जाते हैं, वैसे ही हमारे शोधित सोम आश्रय-स्थल इन्द्रकी ओर जाते हैं। पत्थरोंसे अभिषुत सोम मेषलोममय पवित्रको लाँघते हैं और हरित-वर्ण सोम बुढ़ापेको मारकर (तरुण होकर) वृष्टिको भेजनेको (बरसनेको) जाते हैं।

इन्द्विन्द्राय बृहते पवस्व सुमृळीको अनवद्यो रिशादाः ।
भरा चन्द्राणि गृणते वसूनि देवैर्द्यावापृथिवी प्रावतन्नः ॥१०॥



७० सूक्त

पवमान सोम देवता । विश्वामित्रगोत्रज रेणु ऋषि । जगती और त्रिष्टुप् छन्द ।

त्रिरस्मै सप्तधेनवो दुदुह्रे सत्यामाशिरं पूर्व्ये व्योमनि ।
चत्वार्यन्या भुवनानि निर्णिजे चारूणि चक्रे यदृतैरवर्धत ॥१॥
स भिक्षमाणो अमृतस्य चारुण उभे द्यावा काव्येनावि शश्रथे ।
तेजिष्ठा अपो मंहना परिव्यत यदी देवस्य श्रवसा सदो विदुः ॥२॥
ते अस्य सन्तु केतवोऽमृत्यवोऽदाभ्यासो जनुषी उभे अनु ।
येभिर्नृम्णा च देव्या च पुनत आदिद्राजानं मनना अगृभ्णत ॥३॥

---

१० सोम, तुम महान् इन्द्रके लिये क्षरित होओ। तुम इन्द्रको सुख देनेवाले, अनिन्द्य और शत्रुओंको हरानेवाले हो । मुझ स्तोताको आह्लादक धन दो । द्यावापृथिवी, उत्तम धनोंसे हमारी रक्षा करो ।

---

१ प्राचीन यज्ञमें स्थित सोमके लिये इक्कीस गायें क्षीर दूहती हैं (उत्पन्न करती हैं)। जब यज्ञोंके द्वारा सोम वर्द्धित किये गये, तब उन्होंने चार सुन्दर जलों (वसतीवरी आदि) को परिशोधनके लिये बनाया ।

२ यज्ञकर्त्ता यजमानोंके द्वारा सुन्दर जल माँगनेपर सोमने द्यावापृथिवीको जलसे पूर्ण किया। सोम अपनी महिमासे अतीव दीप्त जलको ढकते हैं । हविर्युक्त होकर ऋत्विक् लोग प्रकाशमान सोमके स्थानको जानते हैं ।

३ सोमकी प्रज्ञापक, अमर और अहिंसनीय किरणें स्थावर-जङ्गमकी रक्षा करें । उन्हीं किरणोंके द्वारा सोम बल और देव-योग्य अन्न देते हैं। अभिषवके अनन्तर ही राजा सोमको मननीय स्तुतियाँ प्राप्त करती हैं ।

स मृज्यमानो दशभिः सुकर्मभिः प्र मध्यमासु मातृषु प्रमे सचा ।
व्रतानि पानो अमृतस्य चारुण उभे नृचक्षा अनु पश्यते विशौ ॥४॥
स मर्मृजान इन्द्रियाय धायस ओभे अन्ता रोदसी हर्षते हितः ।
वृषा शुष्मेण बाधते वि दुर्मतीरादेदिशानः शर्यहेव शुरुधः ॥५॥
स मातरा न ददृशान उस्रियो नानददेति मरुतामिव स्वनः ।
जानन्नृतं प्रथमं यत् स्वर्णरं प्रशस्तये कमवृणी सुक्रतुः ॥६॥
रुवति भीमो वृषभस्तविष्यया शृङ्गे शिशानो हरिणी विचक्षणः ।
आ योनिं सोमः सुकृतन्नि षीदति गव्ययी त्वग्भवति निर्णिगव्ययी ॥७॥
शुचिः पुनानस्तन्वमरेपसमव्ये हरिर्न्यधाविष्ट सानवि ।
जुष्टो मित्राय वरुणाय वायवे त्रिधातु मधु क्रियते सुकर्मभिः ॥८॥

---

४ शोभन कर्मवाली दस अँगुलियोंसे शोधित होकर सोम लोकोंके निरीक्षणके लिये अन्तरीक्षस्थ मध्यमा वाग्में रहते हैं। मनुष्यदर्शक और क्षरणशील सोम सुन्दर जलके बरसनेके लिये, यज्ञादिकी रक्षा करते हुए, अन्तरीक्षसे मनुष्यों और देवोंको देखते हैं ।

५ इन्द्रके बलके लिये पवित्र द्वारा शोधित और द्यावापृथिवीके बीचमें वर्त्तमान सोम चारो ओर जाते हैं। जैसे वीर शत्रुओंको वाणोंसे मारता है, वैसे ही सोम दुःखद असुरोंको बार बार ललकारते हुए शोषक बलसे दुर्बुद्धि असुरोंको मारते हैं।

६ मातृ-भूत द्यावापृथिवीको बार-बार देखते हुए और शब्द करते हुए सोम उसी प्रकार सर्वत्र जाते हैं, जिस प्रकार बछड़ा गायको देखकर शब्द करते हुए जाता है और मरुद्गण शब्द करते हुए जाते हैं। जो जल मनुष्योंका कल्याणकारक है, उस मुख्य जलको जानते हुए शोभनकर्मा और क्षरणशील सोम, अपने स्तोत्रके लिये, मुझे छोड़कर, किस मनुष्यका वरण करेंगे ?

७ शत्रुओंके लिये भयङ्कर, जल-वर्षक, सबके दर्शक और क्षरणशील सोम अपने बलकी इच्छासे दो हरितवर्णकी सींगों (धाराओं) को तेज करते हुए शब्द करते हैं। अनन्तर सोम अपने स्थान द्रोण-कलसमें बैठते हैं । सोमके शोधक मेषचर्म और गोचर्म हैं ।

८ पात्रमें स्थित, अपने शरीरका शोधन करते हुए, पवित्र और हरितवर्ण सोम उन्नत होकर मेषलोममय दशापवित्रमें रखे जाते हैं । अनन्तर मित्र, वरुण और वायुके लिये पर्याप्त जल, दधि तथा दुग्धसे मिश्रित और मदकर सोम शोभनकर्मा ऋत्विकोंके द्वारा प्रदत्त होते हैं।

पवस्व सोम देववीतये वृषेन्द्रस्य हार्दि सोमधानमा विश।
पुरा नो बाधाद्दुरितातिपारय क्षेत्रविद्धि दिश आहा विपृच्छते ॥९॥
हितो न सप्तिरभि वाजमर्षेन्द्रस्येन्दो जठरमा पवस्व
नावा न सिन्धुमति पर्षि विद्वाञ्छूरो न युध्यन्नव नो निदस्पः ॥१०॥



७१ सूक्त

पवमान सोम देवता। विश्वामित्रगोत्रीय ऋषभ ऋषि। जगती और त्रिष्टुप् छन्द।

आ दक्षिणा सृज्यते शुष्म्यासदं वेति द्रुहो रक्षसः पाति जागृविः।
हरिरोपशं कृणुते नभस्पय उपस्तिरे चम्वोर्ब्रह्म निर्णिजे ॥१॥
प्र कृष्टिहेव शूष एति रोरुवदसुर्यं वर्णं नि रिणीते अस्य तम्।
जहाति वव्रिं पितुरेति निष्कृतमुपप्रुतं कृणुते निर्णिजं तना ॥२॥

९ सोम, तुम जलवर्षक हो। देवोंके पानके लिये क्षरित होओ। सोम, तुम इन्द्रके प्रियकर पात्रमें पैठो। हमें पीड़ा देनेके पहले ही दुर्गम राक्षसोंके हाथोंसे हमें बचाओ। मार्गज्ञाता पुरुष मार्ग-जिज्ञासुको जैसे मार्ग बता देता है, वैसे ही यज्ञमार्गज्ञाता तुम हमें यज्ञ-पथ बता कर रक्षा करो।

१० जैसे भेजा गया घोड़ा युद्ध-भूमिको जाता है, वैसे ही ऋत्विकोंके द्वारा प्रेरित होकर तुम द्रोण-कलसमें जाओ। अनन्तर, हे साम, इन्द्रके जठरको सींचो। जैसे नाविक नौकाओंसे मनुष्योंको नदी पार कराते हैं, वैसे ही सब जाननेवाले तुम हमें पापोंके पार ले जाओ। शूरके समान शत्रुओंको मारते हुए निन्दक शत्रुसे हमें बचाओ।

१ यज्ञमें ऋत्विकोंको दक्षिणा दी जाती है। बलवान् सोम द्रोणकलसमें पैठ रहे हैं। जागरणशील सोम द्रोही राक्षसोंसे स्तोताओंको बचाते हैं। सोम आकाशको जल-धारक बनाते हैं। द्यावापृथिवीके अन्धकार-विनाशके लिये सोम सूर्यको द्युलोकमें सुदृढ़ किये हुए हैं।

२ शत्रुहन्ता योद्धाके समान बलवान् सोम शब्द करते हुए जाते हैं। सोम अपने असुर-बाधक बलको प्रकट करते हैं। सोम बुढ़ापा छोड़ रहे हैं। पीनेका द्रव्य होकर सोम संस्कृत द्रोण-कलसमें जा रहे हैं। मेषलोममय पवित्रमें अपने गतिपरायण रूपको स्थापित कर रहे हैं।

अद्रिभिः सुतः पवते गभस्त्योर्वृषायते नभसा वेपते मती ।
स मोदते नसते साधते गिरा नेनिक्ते अप्सु यजते परीमणि ॥३॥
परि द्युक्षं सहसः पर्वतावृधं मध्वः सिञ्चन्ति हर्म्यस्य सक्षणिम् ।
आ यस्मिन् गावः सुहुताद ऊधनि मूर्धञ्छ्रीणन्त्यग्रियं वरीमभिः ॥४॥
समी रथं न भुरिजोरहेषत दश स्वसारो अदितेरुपस्थ आ ।
जिगादुप ज्रयति गोरपीच्यं पदं यदस्य मतुथा अजीजनन् ॥५॥
श्येनो न योनिं सदनं धियाकृतं हिरण्ययमासदं देव एषति ।
एरिणन्ति बर्हिषि प्रियं गिराश्वो न देवाँ अप्येति यज्ञियः ॥६॥
परा व्यक्तो अरुषो दिवः कविर्वृषा त्रिपृष्ठो अनविष्ट गा अभि ।
सहस्रणीतिर्यतिः परायती रेभो न पूर्वीरुषसो वि राजति ॥७॥

३ पत्थरों और बाहुओंसे अभिषुत सोम पात्रोंमें जाते हैं। सोम वृषके समान आचरण करते हैं। स्तोत्रसे स्तुत होकर अन्तरीक्षमें सर्वत्र जाते हुए सोम प्रसन्न होते हैं। वह पात्रोंमें जाते हैं। स्तुत होकर वह स्तोताओंको धन देते हैं। जलसे शोधित होते हैं। देवोंको जिस यज्ञमें हवि दिया जाता है, उसमें पूजित होते हैं।

४ मदकर सोम दीप्त द्युलोकमें रहनेवाले, मेघोंके वर्द्धक और शत्रुपुरके नाशक इन्द्रको सींचते हैं। हविको भक्षण करनेवाली गायें अपने उन्नत स्तनमें स्थित दुग्धको, अपनी महिमाके द्वारा, इन्द्रको देती हैं।

५ बाहुओंकी दस अङ्गुलियाँ यज्ञ-देशमें सोमको वैसे ही भेज रही हैं, जैसे रथको भेजा जाता है। गायका दूध भी उस समय जाता है, जिस समय मननीय स्तोत्रवाले इन सोमके स्थानको बनाते हैं।

६ जैसे श्येन पक्षी अपने घोसलेको जाता है, वैसे ही प्रकाशमान और पवमान सोम अपने कर्म द्वारा निर्मित और सुवर्णमय गृहको जाते हैं। स्तोता लोग यज्ञमें प्रिय सोमकी स्तुति करते हैं। यजनीय सोम, अश्वके समान, देवोंके पास जाते हैं।

७ शोभन, क्रान्तप्रज्ञ और जलसे विशेष रूपसे सिक्त सोम पवित्रसे कलसमें जाते हैं। सोम वृषभ (मनोरथपूरक) हैं। वह तीनों सवनोंमें रहनेवाले (त्रिपृष्ठ) हैं। वह स्तुतिको लक्ष्य करके शब्द करते हैं। वह नाना पात्रोंमें आते-जाते हैं। वह अनेक उषाओंमें शब्द करते हुए सुशोभित होते हैं।

त्वेषं रूपं कृणुते वर्णो अस्य स यत्राशयत् समृता सेधति स्रिधः ।
अप्सा याति स्वधया दैव्यं जनं सं सुष्टुती नसते सं गो अग्रया ॥८॥
उक्षेव यूथा परियन्नरावीदधि त्विषीरधित सूर्यस्य ।
दिव्यः सुपर्णोऽव चक्षत क्षां सोमः परि क्रतुना पश्यते जाः ॥९॥

---

७२ सूक्त

पवमान सोम देवता । आङ्गिरस हरिमन्त ऋषि । जगती छन्द ।

हरि मृजन्त्यरुषो न युज्यते सं धेनुभिः कलशे सोमो अज्यते ।
उद्वाचमीरयति हिन्वते मती पुरुष्टुतस्य कतिचित् परिप्रियः ॥१॥
साकं वदन्ति बहवो मनीषिण इन्द्रस्य सोमं जठरे यज्ञादुहुः ।
यदी मृजन्ति सुगभस्तयो नरः सनीलाभिर्दशभिः काम्य मधु ॥२॥

---

८ शत्रु-निवारक सोम-किरण अपने रूपको प्रदीप्त करती है । वह युद्ध-भूमिमें रहती है । वह युद्धमें शत्रुओंको मारती है । वह जलदाता है । वह हवीरूप अन्नके साथ देव-भक्तके पास जाती है । वह स्तुतिसे मिलती है । जिन वाक्योंसे स्तोता पशुओंसे प्रार्थना करते हैं, उनसे सोम मिलित होता है ।

९ जैसे साँड़ गायोंको देखकर बोलता है, वैसे ही स्तुतियाँ सुनकर सोम शब्द करते हैं । वह सूर्य-रूपसे द्युलोकमें रहते हैं । सोम द्युलोकोत्पन्न और शोभनगमन हैं । वह पृथिवीको देखते हैं । सोम परिज्ञानसे प्रजागणको देखते हैं ।

---

१ ऋत्विक् लोग हरितवर्ण सोमका शोधन करते हैं । घोड़ेके समान सोमकी योजना की जाती है । कलशमें अवस्थित सोम दूधमें मिलाये जाते हैं । जब सोम शब्द करते हैं, तब स्तोता लोग स्तुति करते हैं । अनन्तर बहु-स्तोत्रयुक्त स्तोताके प्रिय सोम धन देते हैं ।

२ विद्वान् स्तोता लोग उस समय एक साथ ही मन्त्र पढ़ते हैं, जिस समय इन्द्रके जठरमें ऋत्विक् लोग सोमका दोहन करते हैं और जिस समय शोभन बाहुओंवाले कर्मनेता अभिलषणीय और मदकर सोमका, दस अङ्गुलियोंसे, अभिषव करते हैं ।

अरममाणो अत्येति गा अभि सूर्यस्य प्रियं दुहितुस्तिरो रवम् ।
अन्वस्मै जोषमभरद्विनङ्गृसः सं द्वयीभिः स्वसृभिः क्षेति जामिभिः ॥३॥
नृधूतो अद्रिषुतो बर्हिषि प्रियः पतिर्गवां प्रदिव इन्दुर्ऋत्वियः ।
पुरन्धिवान्मनुषो यज्ञसाधनः शुचिर्धिया पवते सोम इन्द्र ते ॥४॥
नृबाहुभ्यां चोदितो धारया सुतोऽनुष्वधं पवते सोम इन्द्र ते ।
आप्राः क्रतून्त्समजैरध्वरे मतीर्वेर्न द्रुषच्चम्वोरासदद्धरिः ॥५॥
अंशुं दुहन्ति स्तनयन्तमक्षितं कविं कवयोऽपसो मनीषिणः ।
समी गावो मतयो यन्ति संयत ऋतस्य योना सदने पुनर्भुवः ॥६॥
नाभा पृथिव्या धरुणो महो दिवोऽपामूर्मौ सिन्धुष्वन्तरुक्षितः ।
इन्द्रस्य वज्रो वृषभो विभूवसुः सोमो हृदे पवते चारु मत्सरः ॥७॥

---

३ देवोंको प्रसन्न करनेके लिये कलस आदिमें जानेवाले सोम दूध आदिको लक्ष्य कर जाते हैं। उस समय सोम सूर्य-पुत्री उषाके श्रेष्ठ शब्दका तिरस्कार करते हैं। स्तोता सोमके लिये पर्याप्त स्तोत्र करता है। सोम दोनों बाहुओंसे उत्पन्न, परस्पर मिलित और इधर-उधर जानेवाली अङ्गुलियोंसे मिलते हैं।

४ पवमान गुणवाले इन्द्र, कर्मनेताओंके द्वारा शोधित, पत्थरोंसे अभिषुत, देवोंके प्रसन्नकर्त्ता, गोपति, प्राचीन, पात्रोंमें बहनेवाले, बहुकर्मवान्, मनुष्योंके यज्ञ-साधक और दशापवित्रसे शुद्ध सोम अपनी धारासे, यज्ञमें, पात्रोंमें, तुम्हारे लिये, गिरते हैं।

५ इन्द्र, कर्मकर्त्ताओंकी भुजाओंसे प्रेरित और अभिषुत सोम तुम्हारे बलके लिये आते हैं। अनन्तर, तुम सोमपान करके, कर्मोंको पूर्ण करते हो। तुम यज्ञमें शत्रुओंको भली भाँति विजित करते हो। जैसे पक्षी वृक्षपर बैठता है, वैसे ही हरितवर्ण सोम अभिषवण-फलकपर बैठते हैं।

६ क्रान्तकर्मा और मनीषी ऋत्विक् शब्द करनेवाले और क्रान्तदर्शी सोमका अभिषव करते हैं। अनन्तर पुनः उत्पत्तिशील गायें और मननीय स्तुतियाँ, एक साथ होकर, सत्यरूप यज्ञके सदन उत्तर वेदी पर इन सोमसे मिलती हैं।

७ महान् द्युलोकके धारक, पृथिवीकी नाभि—उन्नत स्थान—उत्तर वेदी-पर ऋत्विकोंके द्वारा निहित, बढ़नेवाले जलसङ्घके बीच सिक्त, इन्द्रके वज्रस्वरूप, कामवर्षक और व्यापक धनवाले सोम, मङ्गलके साथ, इन्द्रके मादयिता होकर मनसे, सुखके लिये, क्षरित होते हैं।

स तू पवस्व परि पार्थिवं रजः स्तोत्रे शिक्षन्नाधून्वते च सुक्रतो ।
मा नो निर्भाग्वसुनः सादनस्पृशो रयिं पिशङ्गं बहुलं वसीमहि ॥८॥
आ तू न इन्दो शतदात्वश्व्यं सहस्रदातु पशुमद्धिरण्यवत् ।
उप मास्व बृहती रेवतीरिषोऽधि स्तोत्रस्य पवमान नो गहि ॥९॥

७३ सूक्त

पवमान सोम देवता । आङ्गिरस पवित्र ऋषि । जगती छन्द ।

स्रक्के द्रप्सस्य धमतः समस्वरन्नृतस्य योना समरन्त नाभयः ।
त्रीन्त्स मूर्ध्नो असुरश्चक्र आरभे सत्यस्य नावः सुकृतमपीपरन् ॥१॥
सम्यक् सम्यञ्चो महिषा अहेषत सिन्धोरूर्मावधि वेना अवीविपन् ।
मधोर्धाराभिर्जनयन्तो अर्कमित् प्रियामिन्द्रस्य तन्वमवीवृधन् ॥२॥

८ सुन्दर कर्मवाले सोम, पार्थिव शरीरधारी मनुष्योंके लिये, शीघ्र गिरो । तुम्हारे तीनों सवन करनेवाले स्तोताको धन आदि दो । हमारे गृहके पुत्रों और धनोंको हमसे अलग नहीं करो । हम नानाविध सुवर्ण आदि सम्पदाको प्राप्त करें ।

९ क्षरणशील सोम, हमें अनेकानेक, अश्व-सहित, हजार दानोंसे युक्त, पशु आदिसे समन्वित और सुवर्णसे संवलित धन दो । सोम हमें बहुत दूध देनेवाली गायोंसे युक्त धन दो । क्षरणशील सोम, हमारे स्तोत्रको सुननेके लिये, आओ ।

१ यज्ञके ओष्ठप्रान्त अभिषववाले सोमकी किरणें ऊपर उठती हैं । यज्ञके उत्पत्ति-स्थानमें सोमरस ऊपर उठते हैं । बलवान् सोम तीनों लोकोंको मनुष्य आदिके संचरणके योग्य बनाते हैं । सत्यभूत सोमकी, नौकाके समान, चार स्थालियाँ (आदित्य, आग्रयण, ध्रुव्य और ध्रुव आदि चार याज्ञिक हाँड़ियाँ वा थालियाँ) सुकृती यजमानकी, अभिमत-फलदान द्वारा, पूजा करती हैं । *

२ प्रधान ऋत्विक् आपसमें मिलकर, सोमको भली भाँति अभिषुत कहते हैं । स्वर्गादि फलकी कामना करनेवाले ऋत्विक् लोग बहनेवाले जलमें सोमको भेजते हैं । पूजनीय स्तोत्र करते हुए स्तोताओंने इन्द्रके प्रिय धामको, मदकर सोमकी धाराओंसे, वर्द्धित किया ।

* सातवें अष्टकमें "असुर" शब्दका प्रयोग छ बार हुआ है—

९ मण्डल	७३ सूक्त	१ ऋचामें	असुर शब्द	सोमके लिये
,, ,,	७४ ,,	७ ,,	,,	,,
,, ,,	९९ ,,	१ ,,	,,	,,
१० ,,	१० ,,	२ ,,	,,	,,
,, ,,	११ ,,	६ ,,	,,	स्वर्गधारक देवके लिये
,, ,,	३१ ,,	६ ,,	,,	पुरोहितके लिये
			,,	यज्ञके लिये

पवित्रवन्तः परि वाचमासते पितैषां प्रत्नो अभि रक्षति व्रतम् ।
महः समुद्रं वरुणस्तिरो दधे धीरा इच्छेकुर्धरुणेष्वारभम् ॥३॥
सहस्रधारेव ते समस्वरन्दिवो नाके मधुजिह्वा असश्चतः ।
अस्य स्पशो न नि मिषन्ति भूर्णयः पदेपदे पाशिनः सन्ति सेतवः ॥४॥
पितुर्मातुरध्या ये समस्वरन्नृचा शोचन्तः सन्दहन्तो अव्रतान् ।
इन्द्रद्विष्टामप धमन्ति मायया त्वचमसिक्नीं भूमनो दिवस्परि ॥५॥
प्रत्नान्मानादध्या ये समस्वरञ्छ्लोकयन्त्रासो रभसस्य मन्तवः ।
अपानक्षासो बधिरा अहासत ऋतस्य पन्थां न तरन्ति दुष्कृतः ॥६॥
सहस्रधारे वितते पवित्र आ वाचं पुनन्ति कवयो मनीषिणः ।
रुद्रास एषामिषिरासो अद्रुहः स्पशः स्वञ्चः सुदृशो नृचक्षसः ॥७॥

३ शोधक शक्तिसे युक्त सोमकी किरणें माध्यमिकी वाक्के पास बैठती हैं अर्थात् अन्तरीक्षमें रहती हैं। उनके पिता सोम प्रकाशन-कर्मकी रक्षा करते हैं। अपने तेजसे आच्छादक सोम अपनी रश्मियोंसे महान् अन्तरीक्षको व्याप्त करते हैं। ऋत्विक्लोग सबके धारक जलमें सोमका प्रारम्भ कर सकते हैं।

४ सहस्र धाराओंवाले अन्तरीक्षमें वर्तमान सोमकिरणें नीचे स्थित पृथिवीको वृष्टिसे युक्त करती हैं। द्युलोकके उन्नत देशमें वर्तमान, मधु जीभवाली, परस्पर सङ्गरहित कल्याणकर किरणें शीघ्रगामी रहती हैं—कभी पलक भी नहीं गिरातीं (दुष्ट-नाशके लिये सदा जागी रहती हैं)। इस प्रकार स्थान-स्थानपर रहकर किरणें पापियोंको बाधा देती हैं।

५ सोमकी जो किरणें द्यावापृथिवीसे अधिक प्रादुर्भूत हुई हैं, वे ऋत्विकोंके द्वारा की जाती स्तुतिसे प्रदीप्त होकर और कर्म-शून्योंको भली भाँति नष्ट कर इन्द्रके लिये काले चमड़ेवाले राक्षसको, ज्ञान द्वारा, विस्तृत भूलोक और द्युलोकसे दूर हटाती हैं।

६ स्तुति-नियत और क्षिप्रकारी सोमरश्मियाँ प्राचीन अन्तरीक्षसे एक साथ प्रादुर्भूत हुईं। नेत्रशून्य, असाधुदर्शी, देवस्तुति-विवर्जित और पापी नर उन रश्मियों (किरणों) का त्याग कर देते हैं। पापी मनुष्य सत्यमार्गसे नहीं तरते।

७ क्रान्तकर्मा और मनीषी ऋत्विक् लोग अनेक धाराओंवाले तथा विस्तृत पवित्रमें वर्त्तमान सोमकी माध्यमिकी वाक्की स्तुति करते हैं, जो मरुतोंकी माता (वाक्) की स्तुति करते हैं, उनके वचनका आश्रयण रुद्रपुत्र मरुत् करते हैं। वे आगमनशील, द्रोह-शून्य दूसरोंके द्वारा अहिंसनीय, शोभन-गति सुदर्शन और कर्मनेता हैं।

ऋतस्य गोपा न दभाय सुक्रतुस्त्री ष पवित्रा हृद्यन्तरा दधे ।
विद्वान्त्स विश्वा भुवनाभि पश्यत्यवाजुष्टान्विध्यति कर्ते अव्रतान् ॥८॥
ऋतस्य तन्तुर्विततः पवित्र आ जिह्वाया अग्रे वरुणस्य मायया ।
धीराश्चित्तत् समिनक्षन्त आशताऽत्रा कर्तमव पदात्यप्रभुः ॥९॥

---

७४ सूक्त

पवमान सोम देवता । दीर्घतमाके पुत्र कक्षीवान् ऋषि । जगती और त्रिष्टुप् छन्द

शिशुर्न जातोऽव चक्रदद्वने स्वर्यद्वाज्यरुषः सिषासति ।
दिवो रेतसा सचते पयोवृधा तमीमहे सुमती शर्म सप्रथः ॥१॥
दिवो यः स्कम्भो धरुणः स्वातत आपूर्णो अंशुः पर्येति विश्वतः ।
सेमे मही रोदसी यक्षदावृता समीचीने दाधार समिषः कविः ॥२॥

---

८ सत्यरूप यज्ञके रक्षक और शोभनकर्मा सोमसे कोई दम्भ नहीं कर सकता । सोम अग्नि, वायु और सूर्य आदिके रूप तीन पवित्रोंको अपनेमें धारण करते हैं । विद्वान् सोम सारे भुवनोंको देखते हुए कर्म्म-भ्रष्टोंको नीचे मुंह करके मारते हैं ।

९ सत्यभूत यज्ञके विस्तारक और मेषलोममय पवित्रमें विस्तृत सोम वरुणकी जीभके आगे (वसतीवरीमें) रहते हैं । कर्म-निष्ठ लोग ही उन सोमको प्राप्त करते हैं । कर्मशून्यके लिये यह बात असम्भव है । कर्मशून्य नरकमें जाता है ।

---

१ वसतीवरी-जलमें उत्पन्न होकर सोम, शिशुके समान, नीचे मुंह करके रोते हैं । बली अश्वके समान गमनशील सोम स्वर्गलोकका आश्रय लेना चाहते हैं । गौओं और औषधियोंके रसके साथ सोम द्युलोकसे पृथिवी लोकपर आना चाहते हैं । वैसे सोमसे हम धनादि-युक्त गृह, शोभन स्तुतिके साथ, माँगते हैं ।

२ द्युलोकके स्तम्भ, धारक, सर्वत्र विस्तृत और पात्रोंमें पूर्ण सोमकी किरणें चारो ओर जाती हैं । सोम महती द्यावापृथिवीको अपनी क्षमताके द्वारा योजित करें । सोमने परस्पर मिलित द्यावापृथिवीको धारण किया । कान्तदर्शी सोम स्तोताओंका अन्न दे ।

महि प्सरः सुकृतं सोम्यं मधूर्वी गव्यूतिरदितेर्ऋतं यते।
ईशे यो वृष्टेरित उस्रियो वृषापां नेता य इत ऊतिर्ऋग्मियः ॥३॥
आत्मन्वन्नभो दुह्यते घृतं पय ऋतस्य नाभिरमृतं वि जायते।
समीचीनाः सुदानवः प्रीणन्ति तं नरो हितमव मेहन्ति पेरवः ॥४॥
अरावीदंशुः सचमान ऊर्मिणा देवाव्यं मनुषे पिन्वति त्वचम्।
दधाति गर्भमदितेरुपस्थ आ येन तोकं च तनयं च धामहे ॥५॥
सहस्रधारेव ता असश्चतस्तृतीये सन्तु रजसि प्रजावतीः।
चतस्रो नाभो निहिता अवो दिवो हविर्भरन्त्यमृतं घृतश्चुतः ॥६॥
श्वेतं रूपं कृणुते यत् सिषासति सोमो मीढ्वाँ असुरो वेद भूमनः।
धिया शमी सचते सेमभि प्रवद्दिवस्कवन्धमवदर्षदुद्रिणम् ॥७॥

---

३ यज्ञमें आनेवाले इन्द्रके लिये संस्कृत सोमरस यथेष्ट मधुर रसवाला खाद्य होता है। इन्द्रादिका पृथिवी-मार्ग भी विस्तीर्ण है। इन्द्र इस पृथिवीपर बरसनेवाली वर्षाके ईश्वर हैं। गौओंके हितैषी जल-वर्षक और यज्ञ-नेता इन्द्र इस यज्ञमें जाते हुए स्तुत्य होते हैं।

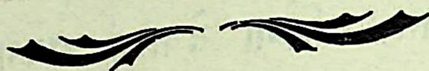
४ सोम आकाशरूप आदित्यसे घृत और दुग्ध को दूहते हैं। सोम यज्ञकी नाभि हैं। उनसे ही अमृत और जल उत्पन्न होते हैं। सुन्दर दाता यजमान सोम परस्पर मिलकर इन सोमको प्रसन्न करते हैं। सर्व-रक्षक सोम-किरणें पृथिवीपर उपयोगी वर्षण करती हैं।

५ जलमें ऋत्विकोंके द्वारा मिलाये जानेपर सोम शब्द करते हैं। सोम अपने देव-पालक शरीरको पात्रोंमें प्रवाहित करते हैं। पृथिवीकी ओषधियोंमें सोम, अपनी किरणोंसे, गर्भ धारण करते हैं। उस गर्भसे हम दुःखविदारक पुत्र और पौत्रका धारण करते हैं।

६ अनेक धाराओंवाले, स्वर्गमें वर्त्तमान, परस्पर मिलित और प्रजावाली सोमकिरणें पृथिवीपर गिरती हैं। वे चार सोम-किरणें द्युलोकके नीचे सोमके द्वारा स्थापित हैं। वे जल-वर्षक होकर देवोंको हवि देती हैं और ओषधियोंमें अमृत देती हैं।

७ सोम पात्रोंका रूप शुभ्र कर देते हैं। काम-सेचक और बली (असुर) सोम स्तोताओंको बहुत धन देते हैं। सोम अपनी प्रज्ञाके द्वारा प्रकृष्ट कर्मको प्राप्त करते हैं। अन्तरीक्षके जलवान् मेघको वे, जल-वर्षणके लिये, फाड़ते हैं।

अध श्वेतं कलशं गोभिरक्तं कार्ष्मन्ना वाज्यक्रमीत् ससवान् ।
आ हिन्विरे मनसा देवयन्तः कक्षीवते शतहिमाय गोनाम् ॥८॥
अद्भिः सोम पपृचानस्य ते रसोऽव्यो वारं वि पवमान धावति ।
स मृज्यमानः कविभिर्मदिन्तमः स्वदस्वेन्द्राय पवमान पीतये ॥९॥



७५ सूक्त

पवमान सोम देवता । भार्गव कवि ऋषि । जगती छन्द ।

अभि प्रियाणि पवते चनोहितो नामानि यह्वो अधि येषु वर्धते ।
आ सूर्यस्य बृहतो बृहन्नधि रथं विष्वञ्चमरुहद्विचक्षणः ॥१॥
ऋतस्य जिह्वा पवते मधु प्रियं वक्ता पतिर्धियो अस्या अदाभ्यः ।
दधाति पुत्रः पित्रोरपीच्यं नाम तृतीयमधि रोचने दिवः ॥२॥

---

८ सोम श्वेत और गोरससे युक्त द्रोणकलसको, अश्वके समान, लाँघते हैं । देवाभिलाषी ऋत्विक् लोग सोमके लिये स्तुति प्रेरित करते हैं । सोम बहुत चलनेवाले कक्षीवान् ऋषिके लिये पशु देते हैं ।

९ शोधित सोम, जलमें मिश्रित होकर तुम्हारा रस मेषलोममय दशापवित्रकी ओर जाता है। मादकश्रेष्ठ सोम, क्रान्तकर्मा ऋत्विकोंके द्वारा शोधित होकर इन्द्रके पानके लिये प्रिय रसवाले बनो ।



१ अन्नके लिये सोम उपयोगी हैं । संसारके प्रिय और नमनशील जलकी चारो ओर सोम क्षरित होते हैं । जलमें महान् सोम बढ़ते हैं । महान् सोम महान् सूर्यके रथके ऊपर चढ़ गये । सोम सबके द्रष्टा हैं ।

२ सत्यरूप यज्ञके प्रधान सोम प्रियकर और मदकर रस गिराते हैं । सोम शब्द करनेवाले, कर्मपालक और अबध्य हैं । द्युलोकके दीपक सोमका अभिषव होनेपर पुत्र (यजमान) एक ऐसा नाम धारण करता है, जिसे उसके माता-पिता नहीं जानते ।

अव द्युतानः कलशाँ अचिक्रदन्नृभिर्येमानः कोश आ हिरण्यये ।
अभीमृतस्य दोहना अनूषताधि त्रिपृष्ठ उषसो वि राजति ॥३॥
अद्रिभिः सुतो मतिभिश्चनोहितः प्ररोचयन्रोदसी मातरा शुचिः ।
रोमाण्यव्या समया वि धावति मधोर्धारा पिन्वमाना दिवेदिवे ॥४॥
परि सोम प्र धन्वा स्वस्तये नृभिः पुनानो अभि वासयाशिरम् ।
ये ते मदा आहनसो विहायसस्तेभिरिन्द्रं चोदय दातवे मघम् ॥५॥



---

३ दीप्तिमान् और ऋत्विकोंके द्वारा सुवर्णमय अभिषवण-चर्मपर रखे गये सोमका, यज्ञका दोहन करनेवाले ऋत्विक् लोग, अभिषव करते हैं। सोम कलसमें शब्द करते हैं। तीन सवनोंवाले सोम यज्ञ-दिनमें प्रातःकाल शोभा पाते हैं।

४ पत्थरोंसे अभिषुत, अन्नके हितैषी और शुद्ध सोम द्यावा-पृथिवीको प्रकाशित करके मेषलोममय पवित्रकी ओर जाते हैं। जलमिश्रित और मदकर सोमकी धारा अनुदिन पवित्रपर प्रवाहित होती है।

५ सोम, कल्याणके लिये तुम चारो ओर जाओ। कर्म-निष्ठाके द्वारा शोधित होकर तुम क्षीर आदिमें मिलो। वचनवाले, शत्रु-हन्ता, अभिषुत और महान् सोम प्रशस्य धन देनेवाले इन्द्रको हमारे पास भेजें।

द्वितीय अध्याय समाप्त



तृतीय अध्याय

७६ सूक्त

पवमान सोम देवता। भृगुगोत्रीय कवि ऋषि। जगती छन्द।

धर्ता दिवः पवते कृत्व्यो रसो दक्षो देवानामनुमाद्यो नृभिः।
हरिः सृजानो अत्यो न सत्वभिर्वृथा पाजांसि कृणुते नदीष्वा ॥१॥
शूरो न धत्त आयुधा गभस्त्योः स्वः सिषासन्रथिरो गविष्टिषु।
इन्द्रस्य शुष्ममीरयन्नपस्युभिरिन्दुर्हिन्वानो अज्यते मनीषिभिः ॥२॥
इन्द्रस्य सोम पवमान ऊर्मिणा तविष्यमाणो जठरेष्वा विश।
प्र णः पिन्व विद्युदभ्रेव रोदसी धिया न वाजाँ उप मासि शश्वतः ॥३॥
विश्वस्य राजा पवते स्वर्दृश ऋतस्य धीतिमृषिषाळवीवशत्।
यः सूर्यस्यासिरेण मृज्यते पिता मतीनामसमष्टकाव्यः ॥४॥

---

१ सोम सबके धारक हैं। वह अन्तरीक्ष (अन्तरीक्षस्थ दशापवित्र) से क्षरित होते हैं। सोम शोधनीय, रस-रूप देवोंके बल, वर्द्धक-ऋत्विकोंके द्वारा स्तुत्य, हरितवर्ण और प्राणियोंके द्वारा बनाये जानेवाले हैं। वसतीवरीमें घोड़ेके समान वह अपने वेगको करते हैं।

२ वीर पुरुषके समान सोम दोनों हाथोंमें अस्त्र धारण करते हैं। गायोंके खोजनेके समय स्वर्गकी इच्छा करनेवाले सोम, यजमानोंके लिये, रथवाले हुए थे। इन्द्रके बलका प्रेरण करनेवाले सोम कर्मेच्छु मेधावियोंके द्वारा भेजे जाकर दूध आदिमें मिलाये जाते हैं।

३ क्षरणशील सोम, वर्द्धिष्णु होकर इन्द्रके पेटमें प्रचुर धारासे पैठो। जैसे बिजली मेघका दोहन करती है, वैसे ही तुम अपने कर्मोंके द्वारा द्यावापृथिवीका दोहन करके हमें बहुत अन्न देते हो।

४ विश्वके राजा सोम क्षरित होते हैं। सर्वदर्शक और सत्यभूत सोम वा इन्द्रका कर्म-ऋषियोंसे भी श्रेष्ठ है। सोमने इन्द्रके कर्मकी इच्छा की। सोम सूर्यकी क्षेपक किरणोंसे शोधित होते हैं। सोमके कर्मको कवि लोग नहीं व्याप्त कर सकते। सोम हमारी स्तुतियोंके पालक हैं।

वृषेव यूथा परि कोशमर्षस्यपामुपस्थे वृषभः कनिक्रदत् ।
स इन्द्राय पवसे मत्सरिन्तमो यथा जेषामा समिथे त्वोतयः ॥५॥



७७ सूक्त

पवमान सोम देवता । कवि ऋषि । जगती छन्द ।

एष प्र कोशे मधुमाँ अचिक्रददिन्द्रस्य वज्रो वपुषो वपुष्टरः ।
अभीमृतस्य सुदुघा घृतश्चुतो वाश्रा अर्षन्ति पयसेव धेनवः ॥१॥
स पूर्व्यः पवते यं दिवस्परि श्येनो मथायदिषितस्तिरो रजः ।
स मध्व आ युवते वेविजान इत् कृशानो रस्तुर्मनसाह बिभ्युषा ॥२॥
ते नः पूर्वास उपरास इन्दवो महे वाजाय धन्वन्तु गोमते ।
ईक्षेण्यासो अह्यो न चारवो ब्रह्मब्रह्म ये जुजुषुर्हविर्हविः ॥३॥

५ सोम, जैसे गोसमूहमें साँड़ जाता है, वैसे ही तुम वर्षक शब्दकर्त्ता होकर और अन्तरीक्षमें अवस्थित रहकर द्रोण-कलसमें जाते हो । मादकतम होकर तुम इन्द्रके लिये क्षरित होते हो । तुमसे रक्षित होकर हम युद्धमें विजयी होंगे ।

१ इन्द्रके वज्र, वीजोंके बोनेवाले और मधुर रसवाले सोम द्रोण-कलसमें शब्द करते हैं । उनकी धाराएँ फलोंको दूहनेवाली, जल वा रसको बरसानेवाली, और शब्द करनेवाली हैं । दूधवाली गायोंके समान वे जा रही हैं ।

२ प्राचीन सोम क्षरित होते हैं । अपनी माताके द्वारा भेजा जाकर श्येन पक्षी द्युलोकसे उन सोमको ले आया था । वे ही मधुर रसवाले सोम तीसरे लोकको अलग करते हैं । कृशानु नामक धनुर्धारीके बाण-पातसे डरकर सोम, उद्विग्न भावसे, मधुर रसके साथ मिश्रित होते हैं ।

३ दर्शनीय स्त्रियोंके समान रमणीय, हविका सेवन करनेवाले, प्राचीन तथा आधुनिक सोम महान् गौवाले मुझे, अन्न-लाभके लिये, प्राप्त करें ।

अयं नो विद्वान्वनवद्वनुष्यत इन्दुः सत्राचा मनसा पुरुष्टुतः ।
इनस्य यः सदने गर्भमादधे गवामुरुब्जमभ्यर्षति व्रजम् ॥४॥
चक्रिर्दिवः पवते कृत्व्यो रसो महाँ अदब्धो वरुणो हुरुग्यते ।
असावि मित्रो वृजनेषु यज्ञियोऽत्यो न यूथे वृषयुः कनिक्रदत् ॥५॥



७८ सूक्त

पवमान सोम देवता । कवि ऋषि । जगती छन्द ।

प्र राजा वाचं जनयन्नसिष्यददपो वसानो अभि गा इयक्षति ।
गृभ्णाति रिप्रमविरस्य तान्वा शुद्धो देवानामुप याति निष्कृतम् ॥१॥
इन्द्राय सोम परिषिच्यसे नृभिर्नृचक्षा ऊर्मिः कविरज्यसे वने ।
पूर्वीर्हि ते स्रुतयः सन्ति यातवे सहस्रमश्वा हरयश्चमूषदः ॥२॥

४ बहुतोंके द्वारा स्तुत, उत्तर वेदोमें वर्त्तमान और क्षरणशील सोम मनोयोगपूर्वक हमारे मारनेवाले शत्रुओंको समझकर मारें। वह ओषधियोंमें गर्भ धारण करते हैं। वे बहुत दूध देनेवाली गायोंकी ओर जाते हैं।

५ सबके कर्त्ता, कर्मठ, रसात्मक, अहिंसनीय और वरुणके समान महान् सोम इधर-उधर विचरण करते हैं। विपत्ति आनेपर सबके मित्र और भजनीय सोम क्षरित किये जाते हैं। जैसे अश्व घोड़ियोंके झुंडमें जाता है, वैसे ही वर्षक सोम शब्द करते हुए क्षरित होते हैं।



१ शोभायमान सोम शब्द करते हुए और जलको आच्छादित करते हुए स्तुतिकी ओर जाते हैं। सोमका जो असार भाग है, उसे मेषलोममय दशापवित्र रख लेता है। शुद्ध होकर सोम देवोंके संस्कृत स्थानको जाते हैं।

२ सोम, तुम्हें, इन्द्रके लिये, ऋत्विक् लोग ढालते हैं। यजमानोंके द्वारा वर्द्धित होकर मेधावी तुम जलमें मिलाये जाते हो। तुम्हें गिरनेके लिये अनेक मार्ग (छिद्र) हैं। प्रस्तर-फलकोंपर अवस्थित तुम्हारी असङ्ख्य और हरित-वर्ण किरणें हैं।

समुद्रिया अप्सरसो मनीषिणमासीना अन्तरभि सोममक्षरन् ।
ता ईं हिन्वन्ति हर्म्यस्य सक्षणिं याचन्ते सुम्नं पवमानमक्षितम् ॥३॥
गोजिन्नः सोमो रथजिद्धिरण्यजित् स्वर्जिदब्जित् पवते सहस्रजित् ।
यं देवासश्चक्रिरे पीतये मदं स्वादिष्ठं द्रप्समरुणं मयोभुवम् ॥४॥
एतानि सोम पवमानो अस्मयुः सत्यानि कृण्वन्द्रविणान्यर्षसि ।
जहि शत्रुमन्तिके दूरके च य उर्वीं गव्यूतिमभयं च नस्कृधि ॥५॥



७८ सूक्त

पवमान सोम देवता। कवि ऋषि। जगती छन्द।

अचोदसो नो धन्वन्त्विन्दवः प्र सुवानासो बृहद्दिवेषु हरयः
वि च नशन्न इषो अरातयोऽर्यो नशन्त सनिषन्त नो धियः ॥१॥
प्र णो धन्वन्त्विन्दवो मदच्युतो धना वा येभिरर्वतो जुनीमसि ।
तिरो मर्त्तस्य कस्यचित् परिह्वृतिं वयं धनानि विश्वधा भरेमहि ॥२॥

३ अन्तरीक्ष-स्थित अप्सराएँ यज्ञके बीचमें बैठकर पात्रोंमें स्थित मेधावी सोमको क्षरित करती हैं। इन क्षरणशील और कोठेके समान सुखकर यज्ञ-गृहको चेतनशील करनेवाले सोमको अप्सराएँ बढ़ाती हैं। स्तोता लोग सोमसे ह्रासहीन सुख माँगते हैं।

४ क्षरणशील सोम गायों, रथ, सुवर्ण, सुख, जल और अपरिमित धनके जेता हैं। मदकर, स्वादुतम, रसात्मक, अरुणवर्ण और सुखकर्त्ता सोमको, पानके लिये, देवोंने बनाया है।

५ सोम, तुम पूर्वोक्त समस्त वस्तुओंको हमारे लिये यथार्थ करते हो। शोधित होकर क्षरित होते हो। जो शत्रु दूर वा समीप है, उसे मारो और विस्तीर्ण मार्गको हमारे लिये अभय करो।

१ प्रभूतदीप्ति यज्ञमें सोम स्वयं हमारे पास आवें। सोम क्षरणशील और हरित-वर्ण हैं। हमारे अन्नके नाशक नष्ट हो जायँ। शत्रु भी नष्ट हो जायँ। हमारे कर्मोंको देवता लोग ग्रहण करें।

२ मद-स्रावी सोम हमारे पास आवें। धन भी आवे। सोमकी कृपासे हम बलवान् शत्रुओंका भी सामना कर सकें। किसी भी प्रबल मनुष्यकी बाधाको तिरस्कार करके हम सदा धन प्राप्त करें।

उत स्वस्या अरात्या अरिर्हि ष उतान्यस्या अरात्या वृको हि षः ।
धन्वन्न तृष्णा समरीत ताँ अभि सोम जहि पवमान दुराध्यः ॥३॥
दिवि ते नाभा परमो य आददे पृथिव्यास्ते रुरुहुः सानवि क्षिपः ।
अद्रयस्त्वा बप्सति गोरधित्वच्यप्सु त्वा हस्तैर्दुदुहुर्मनीषिणः ॥४॥
एवा त इन्दो सुभ्वं सुपेशसं रसं तुञ्जन्ति प्रथमा अभिश्रियः ।
निदंनिदं पवमान नि तारिष आविस्ते शुष्मो भवतु प्रियो मदः ॥५॥



८० सूक्त

पवमान सोम देवता । भरद्वाजगोत्रीय वसुनामा ऋषि । जगती छन्द ।

सोमस्य धारा पवते नृचक्षस ऋतेन देवान् हवते दिवस्परि ।
बृहस्पते रवथेना वि दिद्युते समुद्रासो न सवनानि विव्यचुः ॥१॥

---

३ सोम अपने और हमारे शत्रुओंके हिंसक हैं । जैसे मरुभूमिमें पिपासा लगी रहती है, वैसे ही तुम भी उक्त दोनों प्रकारके शत्रुओंके पीछे लगे रहते हो । क्षरणशील सोम, उन्हें नष्ट करो ।

४ सोम, तुम्हारा परम अंश द्युलोकमें है । वहाँसे तुम्हारे अंश पृथिवीके उन्नत प्रदेश (पर्वत) पर गिरे और वहाँ वृक्ष हो गये । पत्थरोंसे कूटे जाकर तुम्हें मेधावी लोग हाथोंसे गोचर्मपर, जलमें, दूहते हैं ।

५ सोम, प्रधान-प्रधान पुरोहित लोग तुम्हारे सुन्दर और सुरूप रसको चलाते हैं । सोम, हमारे निन्दक शत्रुको नष्ट करो । अपना बलकर, प्रियकर और मदकर रस प्रकट करो ।

---

१ यजमानोंके दर्शक और अभिषुत सोमकी धारा क्षरित होती है । सोम यज्ञके द्वारा देवोंका पूजन करते हैं । आकाशवासी बृहस्पति अथवा स्तोताके शब्द वा मन्त्रसे वह चमकते हैं । समुद्रके समान पृथिवीको सवन व्याप्त करते हैं ।

---

* सायणचार्यका मत है कि, इस समय काले हरिणके चमड़ेपर ही अभिषव होता है, गोचर्मपर नहीं । परन्तु खरीदते समय गोचर्मपर भी सोमको तौला जाता है । इसलिये लोग गोचर्मको ही अभिषवण-चर्म कहा करते हैं । फलतः गोचर्मका ही अभिषवण-चर्म बनाना आवश्यक नहीं ।

यं त्वा वाजिन्नघ्न्या अभ्यनूषतायोहतं योनिमा रोहसि द्युमान् ।
मघोनामायुः प्रतिरन्महि श्रव इन्द्राय सोम पवसे वृषा मदः ॥२॥
एन्द्रस्य कुक्षा पवते मदिन्तम ऊर्जं वसानः श्रवसे सुमङ्गलः ।
प्रत्यङ् स विश्वा भुवनाभि पप्रथे क्रीलन् हरिरत्यः स्यन्दते वृषा ॥३॥
तं त्वा देवेभ्यो मधुमत्तमं नरः सहस्रधारं दुहते दशक्षिपः ।
नृभिः सोम प्रच्युतो ग्रावभिः सुतो विश्वान्देवाँ आ पवस्वा सहस्रजित् ॥४॥
तं त्वा हस्तिनो मधुमन्तमद्रिभिर्दुहन्त्यप्सु वृषभं दशक्षिपः ।
इन्द्रं सोम मादयन्दैव्यं जनं सिन्धोरिवोर्मिः पवमानो अर्षसि ॥५॥



८१ सूक्त

पवमान सोम देवता । भरद्वाज वसुनामा ऋषि । जगती और त्रिष्टुप् छन्द ।

प्र सोमस्य पवमानस्योर्मय इन्द्रस्य यन्ति जठरं सुपेशसः ।
दध्ना यदीमुन्नीता यशसा गवां दानाय शूरमुदमन्दिषुः सुताः ॥१॥

---

२ अन्नवाले सोम, न मारने योग्य स्तुति वाक्य तुम्हारी स्तुति करते हैं। सोनेकी भुजासे संस्कृत स्थानको दीप्त होकर तुम जाते हो। सोम, हविवाले यजमानोंकी आयु और महती कीर्त्तिको तुम बढ़ाते हुए, इन्द्रके लिये, क्षरित होते हो। तुम वर्षक और मदकर हो।

३ यजमानकी अन्न-प्राप्तिके लिये सोम इन्द्रके पेटमें गिरते हैं। अत्यन्त मदकर, बलकर रसवाले और सुमङ्गल सोम सारे भूतोंको विस्तारित करते हैं। यज्ञवेदीपर क्रीड़ा करनेवाले, हरितवर्ण, गतिशील और वर्षक सोम गिर रहे हैं।

४ मनुष्य और उनकी दसो अँगुलियाँ इन्द्रादिके लिये अतिशय मधुर और बहुधाराओंवाले सोमको दूहती हैं। सोम, मनुष्योंके द्वारा निचोड़े गये और पत्थरोंसे अभिषुत तुम अपरिमित धनके जेता होकर देवोंके लिये प्रवाहित होओ।

५ सुन्दर हाथोंवाले व्यक्तिकी दसो अँगुलियाँ पत्थरोंसे जलमें मधुर रसवाले और कामनाओंके वर्षक सोमको दूहती हैं। सोम, इन्द्रको मत्त करके समुद्र-तरङ्गके समान क्षरित होकर अन्य देव-संघको जाते हो।

---

१ शोधित सोमकी सुरूप तरङ्गें उस समय इन्द्रके पेटमें जाती हैं, जिस समय अभिषुत सोम गायके दधिमें मिलाये जाकर यजमानका मनोरथ पूर्ण करनेके लिये शूर इन्द्रको प्रमत्त करते हैं।

अच्छा हि सोमः कलशाँ असिष्यदद्त्यो न वोह्ला रघुवर्तनिर्वृषा ।
अथा देवानामुभयस्य जन्मनो विद्वाँ अश्नोत्यमुत इतश्च यत् ॥२॥
आ नः सोम पवमानः किरा वस्विन्दो भव मघवा राधसो महः ।
शिक्षा वयोधो वसवे सु चेतुना मा नो गयमारे अस्मत् परासिचः ॥३॥
आ नः पूषा पवमानः सुरातयो मित्रो गच्छन्तु वरुणः सजोषसः ।
बृहस्पतिर्मरुतो वायुरश्विना त्वष्टा सविता सुयमा सरस्वती ॥४॥
उभे द्यावापृथिवी विश्वमिन्वे अर्यमा देवो अदितिर्विधाता ।
भगो नृशंस उर्वन्तरिक्षं विश्वेदेवाः पवमानं जुषन्त ॥५॥

८२ सूक्त

पवमान सोम देवता । वसुनामा ऋषि । जगती और त्रिष्टुप् छन्द ।

असावि सोमो अरुषो वृषा हरी राजेव दस्मो अभि गा अचिक्रदत् ।
पुनानो वारं पर्येत्यव्ययं श्येनो न योनिं घृतवन्तमासदम् ॥१॥

---

२ जैसे रथवाहक अश्व वेगसे जाता है, वैसे ही सोम कलसमें जाते हैं । काम—वर्षक और द्युलोक तथा पृथिवीमें उत्पन्न लोगोंको जाननेवाले सोम देवोंके प्रसन्नता-कारक हैं ।

३ सोम, शोधित सोम, तुम हमें गवादिरूप धन दो । दीप्त सोम, तुम धनी हो । महान् धनके दाता होओ । अन्न-धारक सोम, मैं तुम्हारा सेवक हूँ । कष्ट करके मेरे लिये कल्याण दो । हमें दिये जानेवाले धनको हमसे दूर मत करो ।

४ सुन्दर दाता पूषा, पवमान सोम, मित्र, वरुण, बृहस्पति, मरुत्, वायु, अश्विद्वय, त्वष्टा, सविता और सुरूपिणी सरस्वती आदि देवता, एक साथ, हमारे यज्ञमें पधारें ।

५ सर्व-व्यापिनी द्यावापृथिवी, अर्यमा, अदिति, विधाता, मनुष्योंके प्रशस्य भग, विशाल अन्तरीक्ष और विश्वदेव आदि क्षरणशील सोमका आश्रय करें ।

---

१ शोभन, वर्षक और हरित-वर्ण सोमका अभिषव किया गया । वह राजाके समान दर्शनीय होकर और जलको लक्ष्यकर, रस निचोड़नेके समय, शब्द करते हैं । अनन्तर शोधित होकर सोम उसी प्रकार (मेषलोममय) दशापवित्रकी ओर जाते हैं, जिस प्रकार अपने स्थानको बाज पक्षी जाता है । सोम जलीय स्थानके लिये क्षरित होते हैं ।

कविर्वेधस्या पर्येषि माहिनमत्यो न मृष्टो अभि वाजमर्षसि ।
अपसेधन्दुरिता सोम मृलय घृतं वसानः परियासि निर्णिजम् ॥२॥
पर्जन्यः पिता महिषस्य पर्णिनो नाभा पृथिव्या गिरिषु क्षयं दधे ।
स्वसार आपो अभि गा उतासरन्त्सं ग्रावभिर्नसते वीते अध्वरे ॥३॥
जायेव पत्यावधि शेव मंहसे पज्राया गर्भ शृणुहि ब्रवीमि ते ।
अन्तर्वाणीषु स प्र चरा सु जीवसेऽनिन्द्यो वृजने सोम जागृहि ॥४॥
यथा पूर्वेभ्यः शतसा अमृध्रः सहस्रसा पर्यया वाजमिन्दो ।
एवा पवस्व सुविताय नव्यसे तव व्रतमन्वापः सचन्ते ॥५॥



---

२ सोम, तुम क्रान्तकर्मा हो । यज्ञ करनेकी इच्छासे तुम पूजनीय पवित्रको प्राप्त होते हो। प्रक्षालित होकर, अश्वके समान, तुम युद्धकी ओर जाते हो । सोम, हमारे पापोंका विनाश करके हमें सुखी करो। जलमें मिश्रित होकर तुम पवित्रकी ओर जाते हो ।

३ विशाल पत्तोंवाले जिन सोमके पिता मेघ हैं, वे सोम पृथिवीकी नाभि (यज्ञ) में, पत्थरपर, निवास करते हैं। अङ्गुलियाँ, जलके पास, दुग्ध आदि ले जाती हैं। रमणीय यज्ञमें सोम पत्थरसे मिलते हैं।

४ पृथिवीके पुत्र सोम, तुम्हारी जो स्तुति मैं करता हूँ, उसे सुनो। जैसे स्त्री पुरुषको सुख प्रदान करती है, वैसे ही तुम भी यजमानको सुख देते हो। हमारी स्तुतिमें विचरण करो। हमारे जीवनके लिये तुम जी रहे हो। सोम, तुम स्तुत्य हो। हमारे शत्रु-बलके लिये बराबर सावधान रहना।

५ सोम, जैसे तुम प्राचीन स्तोताओंके लिये शत-सहस्र-सङ्ख्यक धनके दाता हुए थे, वैसे ही इस समय भी अभिनव अभ्युदयके लिये क्षरित होओ। तुम्हारे कर्मको करनेके लिये तुमसे जल मिलता है।



८३ सूक्त

पवमान सोम देवता। अङ्गिरोगोत्रीय पवित्र ऋषि। जगती छन्द।

पवित्रं ते विततं ब्रह्मणस्पते प्रभुर्गात्राणि पर्येषि विश्वतः ।

अतप्ततनूर्न तदामो अश्नुते शृतास इद्वहन्तस्तत् समाशत ॥१॥

तपोष्पवित्रं विततं दिवस्पदे शोचन्तो अस्य तन्तवो व्यस्थिरन् ।

अवन्त्यस्य पवीतारमाशवो दिवस्पृष्ठमधितिष्ठन्ति चेतसा ॥२॥

अरूरुचदुषसः पृश्निरग्रिय उक्षा बिभर्ति भुवनानि वाजयुः ।

मायाविनो ममिरे अस्य मायया नृचक्षसः पितरो गर्भमादधुः ॥३॥

गन्धर्व इत्था पदमस्य रक्षति पाति देवानां जनिमान्यद्भुतः ।

गृभ्णाति रिपुं निधया निधापतिः सुकृत्तमा मधुनो भक्षमाशत ॥४॥

---

१ मन्त्रोंके स्वामी सोम, तुम्हारा शोधक अङ्ग (वा तेज) सर्वत्र विस्तृत हुआ है। तुम्हारा जो पान करता है, उसके सारे अङ्गोंमें, प्रभु होकर, तुम विस्तृत हो जाते हो । व्रत आदिसे जिसका शरीर तपाया हुआ और परिपक्व नहीं है, वह तुम्हारे सर्वत्र विस्तृत शोधक अङ्गको नहीं ग्रहण वा धारण कर सकता। जिनका शरीर परिपक्व है और जो यज्ञ-कर्त्ता हैं, वही तुम्हारे शोधक अङ्गको धारण कर सकते हैं।

२ शत्रु-तापक सोमका शोधक अङ्ग (वा तेज) द्युलोकके उन्नत स्थानमें विस्तृत है। सोमकी प्रदीप्त किरणें नाना प्रकारसे रहती हैं। पृथिवीपर सोमका शीघ्रगामी रस पवित्र यजमानकी रक्षा करता है । अनन्तर वह स्वर्गके उन्नत प्रदेशमें, देव-गमनेच्छावाली बुद्धिसे, आश्रित होता है।

३ मुख्य और सूर्यात्मक सोम दीप्ति पाते हैं। सोम अभिषेक करनेवाले हैं। सोम जलके द्वारा प्राणियोंको अन्न देते हैं। ज्ञानी सोमकी प्रज्ञासे अग्नि आदि संसारको बनाते हैं। सोमकी प्रज्ञासे मनुष्य-दर्शक देवोंने ओषधियोंमें गर्भ धारण किया।

४ जलधारक आदित्य सोमके स्थानकी रक्षा करते हैं। सोम देवोंके जन्मोंकी रक्षा करते हैं। महान् सोम हमारे शत्रुको पासमें बाँधते हैं। सोम पशुओंके स्वामी हैं। पुण्यकर्त्ता ही इनके मधुर रसको ग्रहण कर सकते हैं।

हविर्हविष्मो महि सद्म दैव्यं नभो वसानः परियास्यध्वरम् ।
राजा पवित्ररथो वाजमारुहः सहस्रभृष्टिर्जयसि श्रवो बृहत् ॥५॥

६४ सूक्त

पवमान सोम देवता। वाक्पुत्र प्रजापति ऋषि । जगती छन्द।

पवस्व देवमादनो विचर्षणिरप्सा इन्द्राय वरुणाय वायवे ।
कृधी नो अद्य वरिवः स्वस्तिमदुरुक्षितौ गृणीहि दैव्यं जनम् ॥१॥
आ यस्तस्थौ भुवनान्यमर्त्यो विश्वानि सोमः परि तान्यर्षति ।
कृण्वन्त्सञ्चृतं विचृतमभिष्टय इन्दुः सिषक्त्युषसं न सूर्यः ॥२॥
आ यो गोभिः सृज्यत ओषधीष्वा देवानां सुम्न इषयन्नुपावसुः ।
आ विद्युता पवते धारया सुत इन्द्रं सोमो मादयन्दैव्यं जनम् ॥३॥
एष स्य सोमः पवते सहस्रजिद्धिन्वानो वाचमिषिरामुषर्बुधम् ।
इन्दुः समुद्रमुदियर्ति वायुभिरेन्द्रस्य हार्दि कलशेषु सीदति ॥४॥

---

५ जलवान् सोम, जलमें मिलकर महान् और दिव्य यज्ञगृहकी रक्षा करते हो। सोम, तुम राजा हो। पवित्र रथवाले होकर तुम युद्धमें जाते हो। असीम-गमन, तुम महान् अन्नको जीतते हो।

१ सोम, तुम देवोंके मदकर, सूक्ष्मदर्शक और जलदाता हो। इन्द्र, वरुण और वायुके लिये क्षरित होओ। हमें अविनाशी धन दो। विस्तृत पृथिवीपर मुझे देवोंका भक्त कहो।

२ जो सोम सारे भुवनोंमें व्याप्त हैं, वे उन लोकोंकी चारो ओरसे रक्षा करते हैं। सोम यज्ञको फल-समन्वित और असुरोंसे मुक्त करके यज्ञका वैसे ही आश्रय करते हैं, जैसे सूर्य संसारको प्रकाशवान् और तमोमुक्त करके उसीका सेवन करते हैं।

३ देवोंके सुखके लिये रश्मियोंसे ओषधियोंमें सोमको स्थापित किया जाता है। सोम देवाभिलाषी, शत्रु-धन-जेता और देव-संघ तथा इन्द्रको प्रमत्त करनेवाले हैं। अभिषुत होकर सोम प्रदीप्त धारासे बहते हैं।

४ गमनशील, प्रतिगामी और प्रातःकाल-कृत स्तोत्रको प्रेरित करते हुए सहस्रजित् सोम क्षरित होते हैं। वायु-प्रेरित सोम क्षरणशील रसको ऊपर उठाते हैं।

अभि त्यं गावः पयसा पयोवृधं सोमं श्रीणन्ति मतिभिः स्वर्विदम् ।
धनञ्जयः पवते कृत्व्यो रसो विप्रः कविः काव्येना स्वर्चनाः ॥५॥

८५ सूक्त

पवमान सोम देवता। भार्गव वेन ऋषि । जगती और त्रिष्टुप् छन्द ।

इन्द्राय सोम सुषुतः परिस्रवापामीवा भवतु रक्षसा सह ।
मा ते रसस्य मत्सत द्वयाविनो द्रविणस्वन्त इह सन्त्विन्दवः ॥१॥
अस्मान्त्समर्ये पवमान चोदय दक्षो देवानामसि हि प्रियो मदः ।
जहि शत्रूँरभ्या भन्दनायतः पिबेन्द्र सोममव नो मृधो जहि ॥२॥
अदब्ध इन्दो पवसे मदिन्तम आत्मेन्द्रस्य भवसि धासिरुत्तमः ।
अभिस्वरन्ति बहवो मनीषिणो राजानमस्य भुवनस्य निंसते ॥३॥

---

५ दुग्ध-वर्द्धक सोमको गायें अपने दूधसे सिक्त करनेको खड़ी हैं। सोम, स्तुतियोंके द्वारा सब कुछ देते हैं। कर्मठ, रसरूप, मेधावी, क्रान्तप्रज्ञ, अन्नवाले और शत्रु-धन-जेता सोम कर्मके द्वारा क्षरित होते हैं।

---

१ सोम, भली भाँति अभिषुत होकर तुम इन्द्रके लिये चारो ओर जाओ और रस गिराओ। राक्षसके साथ रोग दूर हो। तुम्हारे रसको पीकर पापी लोग प्रमत्त वा आनन्दित न होने पावें। इस यज्ञमें तुम्हारा रस धनसे युक्त हो।

२ क्षरणशील सोम, हमें समरभूमिमें भेजो । तुम निपुण हो । तुम देवोंके प्रियकर मादक हो। हम तुम्हारी स्तुति करते हैं । शत्रुओंको मारो। हमारे लिये आओ । इन्द्र, हमारे शत्रुओंका विनष्ट करो।

३ क्षरणशील सोम, अहिंसित और मादकतम होकर तुम क्षरित होते हो । तुम स्वयं उत्तम होकर इन्द्रके अन्न हो । इस विश्वके राजा सोमका स्तोता लोग स्तोत्र करते और सोमके पास जाते हैं।

सहस्रणीथः शतधारो अद्भुत इन्द्रायेन्दुः पवते काम्यं मधु ।
जयन् क्षेत्रमभ्यर्षा जयन्नप उरुं नो गातुं कृणु सोम मीढ्वः ॥४॥
कनिक्रदत् कलशे गोभिरज्यसे व्यव्ययं समया वारमर्षसि ।
मर्मृज्यमानो अत्यो न सानसिरिन्द्रस्य सोम जठरे समक्षरः ॥५॥
स्वादुः पवस्व दिव्याय जन्मने स्वादुरिन्द्राय सुहवीतुनाम्ने ।
स्वादुर्मित्राय वरुणाय वायवे बृहस्पतये मधुमाँ अदाभ्यः ॥६॥
अत्यं मृजन्ति कलशे दशक्षिपः प्र विप्राणां मतयो वाच ईरते ।
पवमाना अभ्यर्षन्ति सुष्टुतिमेन्द्रं विशन्ति मदिरास इन्दवः ॥७॥
पवमानो अभ्यर्षा सुवीर्यमुर्वीं गव्यूतिं महि शर्म सप्रथः ।
माकिर्नो अस्य परिषूतिरीशतेन्दो जयेम त्वया धनन्धनम् ॥८॥
अधि द्यामस्थाद्वृषभो विचक्षणोऽरूरुचद्वि दिवो रोचना कविः ।
राजा पवित्रमत्येति रोरुवद्दिवः पीयूषं दुहते नृचक्षसः ॥९॥

---

४ सहस्र-विध-नेत्र, असीम धाराओंसे युक्त, आश्चर्यकर और महान् सोम इन्द्रके लिये अभिलषित मधुको क्षरित करते हैं। सोम, तुम हमारे लिये क्षेत्र और जलको जीतकर पवित्रकी ओर जाओ। सोम, तुम सेचक हो। हमारा मार्ग विस्तृत करो।

५ सोम, शब्द करते हुए और कलसमें वर्त्तमान तुम गोदुग्धमें मिश्रित किये जाते हो। मेष-लोममय दशापवित्रके पास जाते हो। सोम, तुम शोधित और अश्वके समान भजनीय होकर इन्द्रके उदरमें भली भाँति क्षरित होते हो।

६ सोम, तुम स्वादु हो। दिव्यजन्मा देवोंके लिये और शोभननामा इन्द्रके लिये क्षरित होओ। मधुमान् और अन्योंके द्वारा अहिंसनीय होकर तुम मित्र, वरुण, वायु और बृहस्पतिके लिये क्षरित होओ।

७ अध्वर्युओंकी दस अँगुलियाँ अश्वके समान गतिशील सोमको कलसमें शोधित करती हैं। विप्रोंके बीच स्तोतालोग स्तुतियाँ भेजते हैं। क्षरणशील सोम जाते हैं। शोभन स्तुतिवाले इन्द्रमें मदकर सोम प्रविष्ट होते हैं।

८ सोम, क्षरणशील तुम सुन्दर वीर्य, दो कोश, भूमिखण्ड और विशाल गृह हमें दो। हमारे कर्मोंके द्वेषियोंको स्वामी मत बनाओ। तुम्हारी कृपासे हम महान् धनको जीतें।

९ दूरदर्शी और वर्षक सोम द्युलोकमें थे। उन्होंने द्युलोकके नक्षत्र आदिको सुशोभित किया। क्रान्तप्रज्ञ और राजा सोम दशापवित्रको लाँघकर जाते हैं। शब्द करते हुए नर-दर्शक सोम द्युलोकके अमृतको गिराते हैं।

दिवो नाके मधुजिह्वा असश्चतो वेना दुहन्त्युक्षणं गिरिष्ठाम् ।
अप्सु द्रप्सं वावृधानं समुद्र आ सिन्धोरूर्मा मधुमन्तं पवित्र आ ॥१०॥
नाके सुपर्णमुपपप्तिवांसं गिरो वेनानामकृपन्त पूर्वीः ।
शिशुं रिहन्ति मतयः पनिप्नतं हिरण्ययं शकुनं क्षामणि स्थाम् ॥११॥
ऊर्ध्वो गन्धर्वो अधि नाके अस्थाद्विश्वा रूपा प्रतिचक्षाणो अस्य ।
भानुः शुक्रेण शोचिषा व्यद्यौत् प्रारूरुचद्रोदसी मातरा शुचिः ॥१२॥



८ अनुवाक । ८६ सूक्त

पवमान सोमन देवता । १—१० तक आकृष्ट और माष, ११—२० तक सिकता और निवावरी, २१—३० तक पृश्नि और अज, ३१—४० तक आकृष्ट और माष, ४१—४५ तक अत्रि और ४६—४८ तक गृत्समद ऋषि । जगती छन्द ।

प्र त आशवः पवमान धीजवो मदा अर्षन्ति रघुजाइव त्मना ।
दिव्याः सुपर्णा मधुमन्त इन्दवो मदिन्तमासः परि कोशमासते ॥१॥

---

१० मधुर वचनवाले वेन लोग, अलग-अलग, यज्ञके दुःखहीन स्थानमें सोमाभिषव करते हैं। वे लोग सेक्ता, उन्नत स्थानमें वर्त्तमान, जलमें वर्द्धमान और रसरूप सोमको समुद्रके समान प्रवृद्ध द्रोण-कलसमें, जल तरङ्गसे, सींचते हैं। वे मधुरस सोमको दशापवित्रमें सींचते हैं।

११ द्युलोकमें स्थित, शोभन पत्तोंवाले और गिरनेवाले सोमको, हमारी स्तुतियाँ, स्तोत्र करती हैं। शिशुके समान संस्कारके योग्य, शब्दकर्त्ता, सुवर्णमय, पक्षिवत् और हविर्द्धानमें स्थित सोमको स्तुतियाँ प्राप्त करती हैं।

१२ किरण-धारक (गन्धर्व-सूर्य) सोम सूर्यके सारे रूपोंको देखते हुए द्युलोकमें रहते हैं। सोम-स्थित सूर्य शुभ्र तेजके द्वारा चमकते हैं। प्रदीप्त सूर्य द्यावापृथिवीको शोभित करते हैं।



१ क्षरणशील सोम, मनोवेगके समान तुम्हारा व्यापक और मदकर रस घोड़ियोंके बछड़ोंकी तरह दौड़ रहा है। रस द्युलोकोत्पन्न है। सुन्दर पत्तोंवाला, मधुरता-युक्त, अतीव मदकर और दीप्त रस द्रोण-कलसमें जा रहा हैं।

प्र ते मदासो मदिरास आशवोऽसृक्षत रथ्यासो यथा पृथक्।
धेनुर्न वत्सं पयसाभि वज्रिणमिन्द्रमिन्दवो मधुमन्त ऊर्मयः ॥२॥
अत्यो न हियानो अभि वाजमर्ष स्वर्वित् कोशं दिवो अद्रिमातरम्।
वृषा पवित्रे अधिसानो अव्यये सोमः पुनान इन्द्रियाय धायसे ॥३॥
प्र त आश्विनीः पवमान धीजुवो दिव्या असृग्रन् पयसा धरीमणि।
प्रान्तऋषयः स्थाविरीरसृक्षत ये त्वा मृजन्त्यृषिषाण वेधसः ॥४॥
विश्वा धामानि विश्वचक्ष ऋभ्वसः प्रभोस्ते सतः परियन्ति केतवः।
व्यानशिः पवसे सोम धर्मभिः पतिर्विश्वस्य भुवनस्य राजसि ॥५॥
उभयतः पवमानस्य रश्मयो ध्रुवस्य सतः परि यन्ति केतवः।
यदी पवित्रे अधि मृज्यते हरिः सत्ता नि योना कलशेषु सीदति ॥६॥

२ सोम, तुम्हारा मदकर और व्याप्त रस अश्वके समान बनाया जाता है। मधुर, प्रवृद्ध और क्षरणशील सोम वज्री इन्द्रकी ओर उसी प्रकार जा रहे हैं, जिस प्रकार दूधवाली गाय बछड़ेके पास जाती है।

३ सोम, तुम अश्वके समान भेजे गये संग्राममें जाओ। सर्ववेत्ता सोम, द्युलोकसे मेघ-निर्माताके पास जाओ। वर्षक सोम धारक इन्द्रके लिये मेषलोममय दशापवित्रमें शोधित होते हैं।

४ सोम, व्याप्त, मनोवेगवान्, दिव्य, शून्य पथसे गिरनेवाली और दुग्धसे युक्त तुम्हारी धाराएँ धारक द्रोण-कलसमें जाती हैं। तुम्हें बनानेवाले ऋषि लोग तुम्हें अभिषुत करते हैं। तुम्हारी धाराको कलसके बीच, ऋषि लोग, कर देते हैं।

५ सर्वद्रष्टा सोम, तुम प्रभु हो। तुम्हारी महान् किरणें सारे देव-शरीरोंको प्रकाशित करती हैं। सोम, तुम व्यापक हो। तुम धारक रसका प्रस्रवण करते हो। तुम विश्वके स्वामी होकर शोभित होते हो।

६ क्षरणशील, अविचलित और विद्यमान सोमकी प्रज्ञापक किरणें इधर-उधर जाती हैं। जब दशापवित्रमें हरितवर्ण सोम शोधित होते हैं, तब निवासशील सोम अपने स्थान (द्रोण-कलस) में बैठते हैं।

यज्ञस्य केतुः पवते स्वध्वरः सोमो देवानामुप याति निष्कृतम् ।
सहस्रधारः परि कोशमर्षति वृषा पवित्रमत्येति रोरुवत् ॥७॥
राजा समुद्रं नद्यो वि गाहतेऽपामूर्मिं सचते सिन्धुषु श्रितः ।
अध्यस्थात् सानु पवमानो अव्ययं नाभा पृथिव्या धरुणो महो दिवः ॥८॥
दिवो न सानु स्तनयन्नचिक्रदद्द्यौश्च यस्य पृथिवी च धर्मभिः ।
इन्द्रस्य सख्यं पवते विवेविदत् सोमः पुनानः कलशेषु सीदति ॥९॥
ज्योतिर्यज्ञस्य पवते मधु प्रियं पिता देवानां जनिता विभूवसुः ।
दधाति रत्नं स्वधयोरपीच्यं मदिन्तमो मत्सर इन्द्रियो रसः ॥१०॥
अभिक्रन्दन् कलशं वाज्यर्षति पतिर्दिवः शतधारो विचक्षणः ।
हरिर्मित्रस्य सदनेषु सीदति मर्मृजानोऽविभिः सिन्धुभिर्वृषा ॥११॥
अग्रे सिन्धुनां पवमानो अर्षत्यग्रे वाचो अग्रियो गोषु गच्छति ।
अग्रे वाजस्य भजते महाधनं स्वायुधः सोतृभिः पूयते वृषा ॥१२॥

७ यज्ञके प्रज्ञापक और शोभन-यज्ञ सोम क्षरित होते हैं। सोम देवोंके संस्कृत स्थानके पास जाते हैं। अमितधार होकर वह द्रोण-कलसमें जाते हैं। सेक्ता सोम शब्द करते हुए पवित्रको लाँघकर नीचे जाते हैं।

८ जैसे नदियाँ समुद्रमें जाती हैं। वैसे ही राजा सोम जलमें मिलते हैं। जलमें आश्रित होकर पवित्रमें जाते और उन्नत दशापवित्रमें रहते हैं। वह पृथिवीकी नाभि (यज्ञ) में रहते हैं। वह महान् द्युलोकके धारक हैं।

९ सोम द्युलोकके उन्नत स्थानको शब्दायमान कर रहे हैं। सोम अपनी धारक शक्तिसे द्यौ और पृथिवीका धारण करते हैं। सोम इन्द्रकी मैत्रीके लिये दशापवित्रमें शोधित होते और कलसमें बैठते हैं।

१० यज्ञ-प्रकाशक सोम देवोंके प्रिय और मधुर रसको प्रवाहित करते हैं। देवोंके रक्षक, सबके उत्पादक और प्रचुर धनी सोम द्यावापृथिवीके बीचमें रखे रमणीय धनको स्तोताओंको देते हैं। मादकतम सोम इन्द्रके वर्द्धक और रस-रूप हैं।

११ गतिशील, द्युलोकके स्वामी, शतधार, दूरदर्शी, हरितवर्ण और रसरूप सोम देवोंके मित्र यज्ञमें, शब्द करते हुए, कलसमें जाते हैं। सोम स्रवणशील दशापवित्रके छिद्रोंमें शोधित और वर्षक हैं।

१२ सोम स्पन्दनशील जलके आगे जाते हैं। श्रेष्ठ सोम माध्यिमकी वाक्के आगे जाते हैं। वह किरणोंमें जाते हैं। वह बल लाभके लिये युद्धका सेवन करते हैं। सुन्दर आयुधवाले और वर्षक सोम अभिषवकर्त्ताओंके द्वारा शोधित होते हैं।

अयं मतवाञ्छकुनो यथा हितोऽव्ये ससार पवमान ऊर्मिणा।
तव क्रत्वा रोदसी अन्तरा कवे शुचिर्धिया पवते सोम इन्द्र ते ॥१३॥
द्रापिं वसानो यजतो दिविस्पृशमन्तरिक्षप्रा भुवनेष्वर्पितः।
स्वर्जज्ञानो नभसाभ्यक्रमीत् प्रत्नमस्य पितरमाविवासति ॥१४॥
सो अस्य विशे महि शर्म यच्छति यो अस्य धाम प्रथमं व्यानशे।
पदं यदस्य परमे व्योमन्यतो विश्वा अभि सं याति संयतः ॥१५॥
प्रो अयासीदिन्दुरिन्द्रस्य निष्कृतं सखा सख्युर्न प्र मिनाति सङ्गिरम्।
मर्यऽइव युवतिभिः समर्षति सोमः कलशे शतयाम्ना पथा ॥१६॥
प्र वो धियो मन्द्रयुवो विपन्युवः पनस्युवः संवसनेष्वक्रमुः।
सोमं मनीषा अभ्यनूषत स्तुभोऽभि धेनवः पयसेमशिश्रयुः ॥१७॥

---

१३ स्तोत्रवान्, शोधयवान् और प्रेरित सोम, पक्षीके समान, रसके साथ दशापवित्रमें शीघ्र ही जाते हैं। क्रान्तप्रज्ञ इन्द्र, तुम्हारे कर्म और बुद्धिसे द्यावापृथिवीके बीचमें पूत सोम प्रवाहित होते हैं।

१४ स्वर्गस्पर्शी और तेजोरूप कवचको पहननेवाले सोम यज्ञनीय और अन्तरीक्षके पूरक हैं। सोम जलमिश्रत होकर और नये स्वर्गको उत्पन्न करके जलके द्वारा बहते हैं। वह जलके पिता और प्राचीन इन्द्रकी परिचर्या करते हैं।

१५ सोम इन्द्रके प्रवेशके लिये महान् सुख देते हैं। सोमने इन्द्रके तेजस्वी शरीरको पहले ही प्राप्त किया था। सोमका स्थान उत्तम वेदीपर है। सोमसे तृप्त होकर इन्द्र सारे संग्रामोंमें जाते हैं।

१६ सोम इन्द्रके पेटमें जाते हैं। इन्द्र-मित्र सोम इन्द्रके आधारभूत हृदयको नहीं कष्ट देते। जैसे युवतियाँ पुरुषोंसे मिलती हैं, वैसे ही सोम जलमें मिलते हैं। सोम सौ छिद्रोंवाले मार्गसे कलसमें जाते हैं।

१७ सोम, तुम्हारा ध्यान धरनेवाले, मदकर सोम और स्तुतिकी इच्छा करनेवाले स्तोता लोग निवास-योग्य यज्ञ-गृहोंमें घूमते हैं। वशीकृतमना स्तोता लोग सोमकी स्तुति करते और गायें सोमको दूधसे सींचती हैं।

आ नः सोम संयतं पिप्युषीमिषमिन्दो पवस्व पवमानो अस्रिधम् ।
या नो दोहते त्रिरहन्नसश्चुषी क्षुमद्वाजवन्मधुमत् सुवीर्यम् ॥१८॥
वृषा मतीनां पवते विचक्षणः सोमो अह्नः प्रतरीतोषसो दिवः ।
क्राणा सिन्धूनां कलशाँ अवीवशदिन्द्रस्य हार्द्याविशन्मनीषिभिः ॥१९॥
मनीषिभिः पवते पूर्व्यः कविर्नृभिर्यतः परि कोशाँ अचिक्रदत् ।
त्रितस्य नाम जनयन्मधु क्षरदिन्द्रस्य वायोः सख्याय कर्तवे ॥२०॥
अयं पुनान उषसो विरोचयदयं सिन्धुभ्यो अभवदु लोककृत् ।
अयं त्रिः सप्त दुदुहान आशिरं सोमो हृदे पवते चारु मत्सरः ॥२१॥
पवस्व सोम दिव्येषु धामसु सृजान इन्दो कलशे पवित्र आ ।
सीदन्निन्द्रस्य जठरेकनिक्रदन्नृभिर्यतः सूर्यमारोहयो दिवि ॥२२॥
अद्रिभिः सुतः पवसे पवित्र आँ इन्दविन्द्रस्य जठरेष्वाविशन् ।
त्वं नृचक्षा अभवो विचक्षण सोम गोत्रमङ्गिरोभ्योऽवृणोरप ॥२३॥

१८ दीप्त सोम, हमें संगृहीत, प्रवृद्ध और ह्रास-शून्य अन्न दो । वह अन्न बेरोक-टोक तीन पवनोंमें शब्दवान्, आश्रयमाण, मधुरता-युक्त और शोभन सामर्थ्यवाला पुत्र देता है ।

१९ स्तोताओंके काम-वर्षक, दूरदर्शी, सूर्यके वर्द्धक और जल-कर्त्ता सोम कलसमें घुसनेकी इच्छा करते हैं । सोम इन्द्रके हृदयमें पैठते हैं ।

२० प्राचीन, मेधावी और पुरोहितोंके द्वारा नियमित सोम, अध्वर्युओंके द्वारा शोधित होकर कलसमें जानके लिये लिये शब्द करते हैं । इन्द्र और वायुकी मित्रताके लिये और तीनों स्थानोंमें विस्तृत यजमानके लिये जल उत्पन्न करनेवाले सोम मधुर रस चुला रहे हैं ।

२१ सोम प्रातःकालको नाना प्रकारसे शोभित करते हैं । वह वसतीवरी-जलमें समृद्ध होते हैं । सोम लोक-कर्त्ता हैं । वह इक्कीस (गायों वा ऋत्विकों द्वारा) दुहे जाते हैं । मदकर सोम, हृदयमें जानेके लिये भली भाँति क्षरित होते हैं ।

२२ सोम, देवोंके उदरमें गिरो । दीप्त सोम, तुम कलसमें बनाये जाते हो । सोम इन्द्रके पेटमें जाकर शब्द करते हैं । वह ऋत्विकोंके द्वारा हुत हैं । सोमने सूर्यको प्रादुर्भूत किया ।

२३ इन्द्रके उदरमें पैठनेके लिये पत्थरोंसे अभिषुत होकर तुम दशापवित्रमें क्षरित होते हो । दूरदर्शी सोम, तुम मनुष्योंके अनुग्रहसे दर्शक होते हो । सोम, अङ्गिरा लोगोंके लिये तुमने गौओंको छिपानेवाले पर्वतको अलग किया था ।

त्वां सोम पवमानं स्वाध्योऽनु विप्रासो अमदन्नवस्यवः ।
त्वां सुपर्ण आभरद्दिवस्परीन्दो विश्वाभिर्मतिभिः परिष्कृतम् ॥२४॥
अव्ये पुनानं परि वार ऊर्मिणा हरिं नवन्ते अभि सप्त धेनवः ।
अपामुपस्थे अध्यायवः कविमृतस्य योना महिषा अहेषत ॥२५॥
इन्दुः पुनानो अतिगाहते मृधो विश्वानि कृण्वन्त्सुपथानि यज्यवे ।
गाः कृण्वानो निर्णिजं हर्यतः कविरत्यो न क्रीलन् परि वारमर्षति ॥२६॥
असश्चतः शतधारा अभिश्रियो हरिं नवन्तेऽव ता उदन्युवः ।
क्षिपो मृजन्ति परि गोभिरावृतं तृतीये पृष्ठे अधि रोचने दिवः ॥२७॥
तवेमाः प्रजा दिव्यस्य रेतसस्त्वं विश्वस्य भुवनस्य राजसि ।
अथेदं विश्वं पवमान ते वशे त्वमिन्दो प्रथमो धामधा असि ॥२८॥
त्वं समुद्रो असि विश्ववित् कवे तवेमाः पञ्च प्रदिशो विधर्मणि ।
त्वं द्यां च पृथिवीं चाति जभ्रिषे तव ज्योतींषि पवमान सूर्यः ॥२९॥

---

२४ सोम, क्षरणशील तुम्हारा, सुकर्मा और मेधावी स्तोता लोग, रक्षाभिलाषी होकर, स्तोत्र करते हैं। सभी स्तुतियोंसे अलङ्कृत तुम्हें द्युलोकसे सुन्दर पङ्खोंवाला श्येन पक्षी ले आया।

२५ प्रीतिकर सप्त गायत्री आदि छन्द मेषलोममय दशापवित्रपर तुम हरितवर्णको क्षरितकर प्राप्त करते हैं। क्रान्तकर्मा, तुम्हें अन्तरीक्षके जलमें महान् आयु लोग प्रेरित करते हैं।

२६ दीप्त सोम याज्ञिक यजमानके लिये शत्रुओंको दूरकर और सुन्दर मार्ग बनाकर कलसमें जाते हैं। सुन्दर और क्रान्तकर्मा सोम, अश्वके समान क्रीड़ा करते हुए और अपने रूपको रसमय करते हुए मेषलोममय दशापवित्रमें जाते हैं।

२७ परस्पर सङ्गत, शतधार और सोमका आश्रय करनेवाली सूर्यकी किरणें हरि (इन्द्र वा सोम) के पास जाती हैं। अङ्गुलियाँ किरणोंमें ढके और द्युलोकमें स्थित सोमका शोधन करती हैं।

२८ सोम, तुम्हारे दिव्य तेजसे सब प्राणी उत्पन्न हुए हैं। तुम सारे संसारके स्वामी हो। यह संसार तुम्हारे अधीन है। तुम मुख्य हो। तुम सबके धारक हो।

२९ सोम, तुम द्रवात्मक और संसारके ज्ञाता हो। तुम्हीं इन पांचों दिशाओं (आकाश और चार दिशाओं) के धारक हो। तुम द्युलोक और पृथिवीको धारण किये हुए हो। तुम्हारी किरणोंको सूर्य प्रफुल्ल करते हैं।

त्वं पवित्रे रजसो विधर्मणि देवेभ्यः सोम पवमान पूयसे ।
त्वामुशिजः प्रथमा अगृभ्णत तुभ्येमा विश्वा भुवनानि येमिरे ॥३०॥
प्र रेभ एत्यति वारमव्ययं वृषा वनेष्वव चक्रदद्धरिः ।
सं धीतयो वावशाना अनूषत शिशुं रिहन्ति मतयः पनिप्नतम् ॥३१॥
स सूर्यस्य रश्मिभिः परि व्यत तन्तुं तन्वानस्त्रिवृतं यथा विदे ।
नयन्नृतस्य प्रशिषो नवीयसीः पतिर्जनीनामुप याति निष्कृतम् ॥३२॥
राजा सिन्धूनां पवते पतिर्दिव ऋतस्य याति पथिभिः कनिक्रदत् ।
सहस्रधारः परि षिच्यते हरिः पुनानो वाचं जनयन्नुपावसुः ॥३३॥
पवमान मह्यर्णो वि धावसि सूरो न चित्रो अव्ययानि पव्यया ।
गभस्तिपूतो नृभिरद्रिभिः सुतो महे वजाय धन्याय धन्वसि ॥३४॥
इषमूर्जं पवमानाभ्यर्षसि श्येनो न वंसु कलशेषु सीदसि ।
इन्द्राय मद्वा मद्यो मदः सुतो दिवो विष्टम्भ उपमो विचक्षणः ॥३५॥

---

३० सोम, तुम देवोंके लिये संसार वा रसके धारक दशापवित्रमें शोधित किये जाते हो। अभिलाषी और मुख्य पुरोहित तुम्हारा ग्रहण करते हैं। तुम्हारे लिये सारे प्राणी अपनेको अर्पित करते हैं।

३१ सोम मेषलोममय दशापवित्रमें जाते हैं। हरितवर्ण और सेचक सोम जलमें बोलते हैं। ध्यान करनेवाले और सोमकी अभिलाषा करनेवाली स्तुतियाँ शिशुके समान और शब्दवान् सोमका गुण-गान करती हैं।

३२ सूर्य-किरणोंसे सोम, तीनों सवनोंसे यज्ञ-विस्तार करते हुए, अपनेको परिवेष्टित करते हैं। सबके ज्ञाता और प्राणियोंके पति सोम संस्कृत पात्रमें जाते हैं।

३३ जल-पति और स्वर्ग-स्वामी सोम संस्कृत किये जाते हैं। वह यज्ञ-पथसे शब्द करते हुए जाते हैं। असीम धाराओंवाले सोम नेताओंके द्वारा पात्रोंमें सिञ्चित होते हैं। सोम शोधित, शब्दकर्त्ता और पास जानेवाले हैं।

३४ सोम, तुम बहुत रस भेजते हो। सूर्यके समान ही तुम पूज्य हो। मेषलोममय पात्रमें जाते हो। अनेकोंके द्वारा शोधित और ऋत्विकों तथा पत्थरोंके द्वारा अभिषुत होकर तुम विराट् संग्राम और धनके हितके लिये जाते हो।

३५ क्षरणशील सोम, तुम अन्न और बलवाले हो। जैसे श्येन (बाज) पक्षी घोसलेमें जाता है, वैसे ही तुम कलसमें जाते हो। इन्द्रके लिये मदकर और मद-कारण रस अभिषुत हुआ है। तुम, द्युलोकके स्तम्भ और दूरदर्शी हो।

सप्त स्वसारो अभि मातरः शिशुं नवं जज्ञानं जेन्यं विपश्चितम् ।
अपां गन्धर्वं दिव्यं नृचक्षसं सोमं विश्वस्य भुवनस्य राजसे ॥३६॥
ईशान इमा भुवनानि वीयसे युजान इन्दो हरितः सुपर्ण्यः ।
तास्ते क्षरन्तु मधुमद्घृतं पयस्तव व्रते सोम तिष्ठन्तु कृष्टयः ॥३७॥
त्वं नृचक्षा असि सोम विश्वतः पवमान वृषभ ता वि धावसि
स नः पवस्व वसुमद्धिरण्यवद्वयं स्याम भुवनेषु जीवसे ॥३८॥
गोवित् पवस्व वसुविद्धिरण्यविद्रेतो इन्दो भुवनेष्वर्पितः ।
त्वं सुवीरो असि सोम विश्ववित्तं त्वा विप्रा उप गिरेम आसते ॥३९॥
उन्मध्व ऊर्मिर्वननां अतिष्ठिपदपो वसानो महिषो वि गाहते ।
राजा पवित्ररथो वाजमारुहत् सहस्रभृष्टिर्जयति श्रवो बृहत् ॥४०॥
स भन्दना उदियर्ति प्रजावतीर्विश्वाः सुभरा अहर्दिवि ।
ब्रह्म प्रजावद्रयिमश्वपस्त्यं पीत इन्दविन्द्रमस्मभ्यं याचतात् ॥४१॥

---

३६ नवीन उत्पन्न, जेता, विद्वान्, जलके पिता, जलके धारक, स्वर्गोत्पन्न और नर-दर्शक सोमके पास, शिशुके समान, गङ्गा आदि सात मातृ-स्थानीया नदियाँ जाती हैं ।

३७ सोम, हरितवर्ण, सबके स्वामी और घोड़ियोंको रथमें जोतनेवाले तुम इन सारे भुवनोंमें गति-विधि करते हो। घोड़ियाँ मधुर घृत, दीप्त दुग्ध और जल ले आवें। तुम्हारे कर्ममें मनुष्य रहें।

३८ सोम, तुम सारे भुवनोंमें मनुष्योंके दर्शक हो। जलवर्षक, तुम विविध गतियोंवाले हो। गौ आदिसे युक्त, सुवर्णमय धन हमें दो। हम सब द्रव्योंसे युक्त होकर संसारमें जी सकें।

३९ सोम, तुम गौ, धन और सुवर्णको लानेवाले और जलके धारक हो। सोम, क्षरित होओ। तुम सुन्दर वीर्यवाले हो। तुम सर्वज्ञ हो। स्तोता लोग स्तोत्र द्वारा तुम्हारी उपासना करते हैं।

४० मधुर सोम-रस, अभिषव-कालमें, मननोय स्तोत्रका उत्थापन करते हैं। महान् सोम, जलमें मिलकर कलसमें जाते हैं। सोमका रथ दशापवित्र है। सोम युद्धमें जाते हैं। असीम-गति सोम हमारे लिये महान अन्नको जीतते हैं।

४१ सबके गन्ता सोम दिन-रात प्रजा और सुन्दर भरणवाली सारी स्तुतियोंको प्रेरित करते हैं। दीप्त सोम, तुम इन्द्रसे हमारे लिये प्रजासे युक्त अन्न और घर भरनेवाला धन, इन्द्र द्वारा पिये जाकर, माँगो।

सो अग्रे अह्नां हरिर्हर्यतो मदः प्र चेतयते अनुद्युभिः ।
द्वा जना यातयन्नन्तरीयते नराशंसं दैव्यं च धर्तरि ॥४२॥
अञ्जते व्यञ्जते समञ्जते क्रतुं रिहन्ति मधुनाभ्यञ्जते ।
सिन्धोरुच्छ्वासे पतयन्तमुक्षणं हिरण्यपावाः पशुमासु गृभ्णते ॥४३॥
विपश्चिते पवमानाय गायत मही न धारात्यन्धो अर्षति ॥
अहिर्न जूर्णामति सर्पति त्वचमत्यो न क्रीलन्नसरद्वृषा हरिः ॥४४॥
अग्रेगो राजाप्यस्तविष्यते विमानो अह्नां भुवनेष्वर्पितः ।
हरिर्घृतस्नुः सुदृशीको अर्णवो ज्योतीरथः पवते राय ओक्यः ॥४५॥
असर्जि स्कम्भो दिव उद्यतो मदः परि त्रिधातुर्भुवनान्यर्षति ।
अंशुं रिहन्ति मतयः पनिप्नतं गिरा यदि निर्णिजमृग्मिणो ययुः ॥४६॥

---

४२ हरित-वर्ण, रमणीय और मदकर सोम प्रातःकाल स्तोताओंके ज्ञान और स्तुतियोंसे जाने जाते हैं। मनुष्य और देवताके द्वारा प्रशंसित धन यजमानको देनेवाले और मर्त्य तथा स्वर्गके जीवोंको अपने कर्ममें प्रेरित करनेवाले सोम द्यावापृथिवीके बीच जाते हैं।

४३ ऋत्विक् लोग गोदुग्धमें सोमको मिलाते हैं, विविध प्रकारसे मिलाते हैं, भली भाँति मिलाते हैं। देवलोग बलकर्ता सोमका आस्वाद लेते हैं और सोमको मधुर गव्यमें मिलाते हैं। जिस समय रस ऊपर उठता है, उस समय सोम नीचे गिरते हैं। सोम सेचक हैं। जैसे लोग पशुको स्नानके लिये जलमें ले जाते हैं, वैसे ही सुवर्ण-भरणधारी पुरोहित लोग सोमको जलमें ले जाते हैं।

४४ ऋत्विको, मेधावी और क्षरणशील सोमके लिये गाओ। महती वर्षा धाराके समान रस-रूप अन्नको लाँघकर सोम जाते हैं। वह सर्पके समान सोम अभिषवादि कर्मके द्वारा अपने चमड़ेको छोड़ते हैं। वर्षक और हरितवर्ण सोम क्रीड़ापरायण अश्वके समान दशापवित्रसे कलसमें जाते हैं।

४५ अग्रगन्ता, शोभन और जलमें संस्कृत सोमकी स्तुति की जाती है। सोम दिनोंको मापने वाले हैं। सोम हरित-वर्ण, जलमिश्रित, शोभन-दर्शन, जलवान और धनप्रापक हैं। उनका रथ ज्योतिर्मय है। वह प्रवाहित होते हैं।

४६ सोम द्युलोकके धारक और स्तम्भ हैं। मादक सोम अभिषुत किये जाते हैं। वह तीन धातुओं (द्रोण-कलस, आधवनीय और पूतभृत्) वाले हैं। सोम सारे भुवनोंमें विहार करते हैं। जिस समय ऋत्विक्लोग रूपवान् सोमकी स्तुति करते हैं, उस समय शब्दायमान सोमको पुरोहित लोग चाहते हैं।

प्र ते धारा अत्यण्वानि मेष्यः पुनानस्य संयतो यन्ति रंहयः ।
यद्गोभिरिन्दो चम्वोः समज्यस आ सुवानः सोम कलशेषु सीदसि ॥४७॥
पवस्व सोम क्रतुविन्न उक्थ्योऽव्यो वारे परि धाव मधु प्रियम् ।
जहि विश्वान्रक्षस इन्दो अत्रिणो बृहद्वदेम विदथे सुवीराः ॥४८॥



८७ सूक्त

पवमान सोम देवता । काव्यके पुत्र उशना ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

प्र तु द्रव परि कोशं निषीद नृभिः पुनानो अभि वाजमर्ष ।
अश्वं न त्वा वाजिनं मर्जयन्तोऽच्छा बर्ही रशनाभिर्नयन्ति ॥१॥
स्वायुधः पवते देव इन्दुरशस्तिहा वृजनं रक्षमाणः ।
पिता देवानां जनिता सुदक्षो विष्टम्भो दिवो धरुणः पृथिव्याः ॥२॥
ऋषिर्विप्रः पुरएता जनानामृभुर्धीर उशना काव्येन ।
स चिद्विवेद निहितं यदासामपीच्यं गुह्यं नाम गोनाम् ॥३॥

४७ शोधन-कालमें तुम्हारी चञ्चल धाराएं सूक्ष्म मेषलोमोंको लाँघकर जाती हैं। सोम, जिस समय तुम दो अभिषव-फलकोंपर जलमें मिलाये जाते हो, उस समय चुलाये जाकर तुम कलसमें बैठते हो।

४८ सोम, तुम हमारी स्तुतिको जानते हो। हमारे यज्ञके लिये क्षरित होओ। मेषलोममय दशापवित्रमें प्रिय मधु (रस) गिराओ। दीप्त सोम, सारे भक्षक राक्षसोंको विनष्ट करो। यज्ञमें सुपुत्र-वाले हम महान् धनकी याचना करेंगे और प्रचुर स्तोत्रका पाठ करेंगे।

१ सोम, शीघ्र जाओ और द्रोणकलसमें बैठो। नेताओं (मनुष्यों) के द्वारा शोधित होकर यजमानके लिये अन्न दो। अध्वर्यु लोग यज्ञके लिये बली सोमका उसी प्रकार मार्जन करते हैं, जिस प्रकार बली अश्वका मार्जन किया जाता है।

२ शोभन आयुधवाले, क्षरणशील, दिव्य, राक्षस-नाशक, उपद्रव-रक्षक, देवोंके पालक, उत्पादक, सुबल, स्वर्ग-स्तम्भ और पृथिवीके धारक सोम क्षरित हो रहे हैं।

३ अतीन्द्रिय-द्रष्टा, मेधावी, अग्रगन्ता, मनुष्योंके प्रकाशक और धीर उशना ऋषि गायोंके गुह्य और दुग्ध-मिश्रित जलको प्राप्त करते हैं।

एष स्य ते मधुमाँ इन्द्र सोमो वृषा वृष्णे परि पवित्रे अक्षाः ।
सहस्राः शतसा भूरिदावा शश्वत्तमं बर्हिरा वाज्यस्थात् ॥४॥
एते सोमा अभि गव्या सहस्रा महे वाजायामृताय श्रवांसि ।
पवित्रेभिः पवमाना असृग्रञ्छ्रवस्यवो न पृतनाजो अत्याः ॥५॥
परि हि ष्मा पुरुहूतो जनानां विश्वासरद्भोजना पूयमानः ।
अथा भर श्येनभृत प्रयांसि रयिं तुञ्जानो अभि वाजमर्ष ॥६॥
एष सुवानः परि सोमः पवित्रे सर्गो न सृष्टो अदधावदर्वा ।
तिग्मे शिशानो महिषो न शृङ्गे गा गव्यन्नभि शूरो न सत्वा ॥७॥
एषा ययौ परमादन्तरद्रेः कूचित् सतीरूर्वे गा विवेद ।
दिवो न विद्युत् स्तनयन्त्यभ्रैः सोमस्य ते पवत इन्द्र धारा ॥८॥
उत स्म राशिं परि यासि गोनामिन्द्रेण सोम सरथं पुनानः ।
पूर्वीरिषो बृहतीर्जीरदानो शिक्षा शचीवस्तव ता उपष्टुत् ॥९॥

---

४ वर्षक इन्द्र, तुम्हारे लिये मधुर और वर्षक सोम पवित्रमें क्षरित होते हैं। वही सौ और असीम धनोंके दाता, अगणित दान-दाता, नित्य और बली हैं। वह यज्ञमें रहते हैं।

५ अन्नाभिलाषी और सेना-विजयी अश्वके समान सोम गो-मिश्रित अन्नोंको लक्ष्य करके महान् और अमर बलके लिये, मेषलोमके छननेसे शोधित होकर, बनाये जाते हैं।

६ बहुतोंके द्वारा आहूत और शोध्यमान सोम मनुष्योंके लिये सारे भोज्य धनोंको देते हैं। श्येन द्वारा लाये गये सोम अन्न दो, धन दो और अन्न-रसकी ओर जाओ।

७ गतिशील और अभिषुत सोम छोड़े हुए घोड़के समान पवित्रकी ओर दौड़ते हैं। अपनी सींगोंको तेज करके महिष और गवाभिलाषी शूरके समान वह दौड़ते हैं।

८ सोम-धारा ऊँचे स्थानसे पात्रकी ओर जाती है। पणियोंके निवासस्थान पर्वतके गूढ़ स्थानमें वर्त्तमान गायोंको इसी सोम-धाराने प्राप्त किया था। आकाशसे शब्द करनेवाली, बिजलीके समान यह सोम-धारा, इन्द्र, तुम्हारे लिये क्षरित होती है।

९ सोम, शोधित तुम खोये हुए गोसमूहको प्राप्त करते हो। इन्द्रके साथ ही रथपर जाते हो। शीघ्रदाता सोम, तुम्हारी स्तुति की जाती है। हमें महान् धन दो। अन्नवाले सोम, सब अन्न तुम्हारा है।



८८ सूक्त

पवमान सोम देवता। उशना ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

अयं सोम इन्द्र तुभ्यं सुन्वे तुभ्यं पवते त्वमस्य पाहि।
त्वं ह यं चकृषे त्वं ववृष इन्दुं मदाय युज्याय सोमम् ॥१॥
स ईं रथो न भुरिषाळयोजि महः पुरूणि सातये वसूनि।
आदीं विश्वा नहुष्याणि जाता स्वर्षाता वन ऊर्ध्वा नवन्त ॥२॥
वायुर्न यो नियुत्वाँ इष्टयामा नासत्येव हव आ शम्भविष्ठः।
विश्ववारो द्रविणोदाऽइव त्मन् पूषेव धीजवनोऽसि सोम ॥३॥
इन्द्रो न यो महा कर्माणि चक्रिर्हन्ता वृत्राणामसि सोम पूर्भित्।
पैद्वो न हि त्वमहिनाम्नां हन्ता विश्वस्यासि सोम दस्योः ॥४॥
अग्निर्न यो वन आसृज्यमानो वृथा पाजांसि कृणुते नदीषु।
जनो न युध्वा महत उपब्दिरियर्ति सोमः पवमान ऊर्मिम् ॥५॥

---

१ इन्द्र, तुम्हारे लिये यह सोम अभिषुत होते हैं। यह तुम्हारे लिये क्षरित होते हैं। इन्हें पियो। तुम जिन सोमको बनाते हो, जिनको स्वीकार करते हो, मद और सहायताके लिये उन्हें तुम पियो।

२ सोम, रथके समान, प्रचुर भारके वहन करनेवाले हैं। सोम महान् हैं। रथके समान ही लोग उनको योजित करते हैं। सोम प्रभूत धनके दाता हैं। युद्धार्थी सोमको संग्राममें ले जाते हैं।

३ सोम वायुके नियुत् नामक अश्वोंके स्वामी हैं और वायुके समान ही इष्ट-गमन है। वह अश्विद्वयके समान आह्वान सुनते ही आते हैं। सोम धनोंके समान सबके प्रार्थनीय हैं। वह सूर्यके समान वेगवाले हैं।

४ इन्द्रके समान तुमने महान् कार्योंको किया है। सोम, तुम शत्रुओंके हन्ता और पुरियोंके भेदन-कर्ता हो। अश्वके समान अहियोंके हन्ता हो। तुम सारे शत्रुओंके हन्ता हो।

५ जैसे अग्नि वनमें उत्पन्न होकर अपने बलको प्रकट करते हैं, वैसे ही सोम जलमें [illegible] होकर वीर्यका प्रकाश करते हैं। युद्ध-कर्ता, वीरके समान, शत्रुके पास भयंकर शब्द करके [illegible] सोम प्रवृद्ध रस देते हैं।

एते सोमा अति वाराण्यव्या दिव्या न कोशासो अभ्रवर्षाः ।
वृथा समुद्रं सिन्धवो न नीचीः सुतासो अभि कलशाँ असृग्रन् ॥६॥
शुष्मी शर्धो न मारुतं पवस्वानभिशस्ता दिव्या यथा विट् ।
आपो न मक्षू सुमतिर्भवा नः सहस्राप्साः पृतनाषाण्न यज्ञः ॥७॥
राज्ञो नु ते वरुणस्य व्रतानि बृहद्गभीरं तव सोम धाम ।
शुचिष्ट्वमसि प्रियो न मित्रो दक्षाय्यो अर्यमेवासि सोम ॥८॥

८६ सूक्त

पवमान सोम देवता । उशना ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

प्रो स्य वह्निः पथ्याभिरस्यान्दिवो न वृष्टिः पवमानो अक्षाः ।
सहस्रधारो असदन्न्यस्मे मातुरुपस्थे वन आ च सोमः ॥१॥
राजा सिन्धूनामवसिष्ट वास ऋतस्य नावमारुहद्रजिष्ठाम् ।
अप्सु द्रप्सो वावृधे श्येनजूतो दुह ईं पिता दुह ईं पितुर्जाम् ॥२॥

६ जैसे आकाशके मेघसे वर्षा होती है और जैसे नदियाँ नीचे समुद्रकी ओर जाती हैं; वैसे ही अभिषुत सोम मेषलोमका अतिक्रम करके कलसमें जाते हैं।

७ सोम, तुम बली हो । मरुतोंके बलके समान क्षरित होओ । स्वर्गकी सुन्दर प्रजाके समान (वायुके समान) बहो । जलके सामान हमारे लिये सुमतिदाता होओ । तुम बहुरूप हो । सेना-जेता इन्द्रके समान तुम यजनीय हो ।

८ सोम, तुम वारक राजा हो । तुम्हारे कामोंको मैं शीघ्र करता हूँ । सोम, तुम्हारा तेज महान् और गम्भीर है। तुम प्रिय मित्रके समान शुद्ध हो । तुम अर्यमा देवताके समान पूजनीय हो ।

१ जैसे आकाशसे वृष्टि होती है, वैसे ही यज्ञ-मार्गोंसे वोढ़ा सोम प्रवाहित हो रहे हैं। असीम धाराओंवाले सोम हमारे पास अथवा द्युलोकके पास बैठते हैं ।

२ दुग्ध देनेवाली गायोंके राजा सोम हैं। वह क्षीरमें मिल रहे हैं । वह यज्ञकी सरल नौकामें चढ़ते हैं। श्येन द्वारा लगाये गये सोम जलमें बढ़ते हैं । द्युलोकके पुत्र सोमको पालक लोग दूहते हैं। अध्वर्यु भी दूहते हैं ।

सिंहं नसन्त मध्वो अयासं हरिमरुषं दिवो अस्य पतिम् ।
शूरो युत्सु प्रथमः पृच्छते गा अस्य चक्षसा परि पात्युक्षा ॥३
मधुपृष्ठं घोरमयासमश्वं रथे युञ्जन्त्युरुचक्र ऋष्वम् ।
स्वसार ईं जामयो मर्जयन्ति सनाभयो वाजिनमूर्जयन्ति ॥४॥
चतस्र ईं घृतदुहः सचन्ते समाने अन्तर्धरुणे निषत्ताः ।
ता ईमर्षन्ति नमसा पुनानास्ता ईं विश्वतः परिषन्ति पूर्वीः ॥५
विष्टम्भो दिवो धरुणः पृथिव्या विश्वा उत क्षितयो हस्ते अस्य ।
असत्त उत्सो गृणते नियुत्वान्मध्वो अंशुः पवत इन्द्रियाय ।
वन्वन्नवातो अभि देववीतिमिन्द्राय सोम वृत्रहा पवस्व ।
शग्धि महः पुरुश्चन्द्रस्य रायः सुवीर्यस्य पतयः स्याम ॥७॥



३ शत्रु-हिंसक, जल-प्रेरक, हरित-वर्ण, रूपवान् और द्युलोकके स्वामी सोमको यजमान लोग व्याप्त करते हैं। संग्राममें शूर और देवोंमें मुख्य सोम पणियोंके द्वारा अपहृत गायोंको खोजनेके लिये मार्ग पूछ रहे हैं। सोमकी ही सहायतासे सेचक इन्द्र संसारकी रक्षा करते हैं।

४ मधुर पृष्ठवाले, भयानक, गन्ता और दर्शनीय सोमको अनेक चक्रोंवाले रथमें (यज्ञमें), अश्वके समान, जोता जाता है। परस्पर भगिनियों और वन्धुओंके समान अङ्गुलियाँ सोमका शोधन करती हैं। समान बन्धनवाले अध्वर्यु आदि सोमको बली करते हैं।

५ घी देनेवाली चार गायें सोमकी सेवा करती हैं। गायें सबके धारक अन्तरीक्ष (एक ही स्थान) में बैठी हुई हैं। अन्नसे शोधित करनेवाली वे अनेक और बड़ी गायें चारो ओरसे सोमको घेर कर रहती हैं।

६ सोम द्युलोकके स्तम्भ और पृथिवीके धारक हैं। सारी प्रजा उनके हाथमें है। वह स्तुति करते हैं। तुम्हारे लिये वह अश्ववाले हों। सोम मधुर रस वाले हैं। वह इन्द्रके लिये अभिषुत होते हैं।

७ सोम, तुम बली और महान् हो। देवों और इन्द्रके पानके लिये वृत्रघ्न तुम, क्षरित होओ। तुम्हारी कृपासे हम अतीव आह्लादक और शोभन-वीर्य धनके स्वामी बन जाय।

९० सूक्त

पवमान सोम देवता। वसिष्ठ ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

प्र हिन्वानो जनिता रोदस्यो रथो न वाजं सनिष्यन्नयासीत् ।
इन्द्रं गच्छन्नायुधा संशिशानो विश्वा वसु हस्तयोरादधानः ॥१॥
अभि त्रिपृष्ठं वृषणं वयोधामाङ्गूषाणामवावशन्त वाणीः ।
वना वसानो वरुणो न सिन्धून्वि रत्नधा दयते वार्याणि ॥२॥
शूरग्रामः सर्ववीरः सहावाञ्जेता पवस्व सनिता धनानि ।
तिग्मायुधः क्षिप्रधन्वा समत्स्वषाह्ळः साह्वान् पृतनासु शत्रून् ॥३॥
उरुगव्यूतिरभयानि कृण्वन्त्समीचीने आ पवस्वा पुरन्धी ।
अपः सिषासन्नुषसः स्वर्गाः सं चिक्रदो महो अस्मभ्यं वाजान् ॥४॥
मत्सि सोम वरुणं मत्सि मित्रं मत्सीन्द्रमिन्दो पवमान विष्णुम् ।
मत्सि शर्धो मारुतं मत्सि देवान्मत्सि महामिन्द्रमिन्दो मदाय ॥५॥

१ अध्वर्युओंके द्वारा प्रेरित और द्यावापृथिवीके उत्पादक सोम रथके समान अन्न प्रदान करनेवाले हैं। इन्द्रको पाकर, आयुधोंको तेज कर और सारे धनोंको हाथोंमें धारण कर सोम हमें देनेको प्रस्तुत हैं।

२ तीन सवनोंवाले, वर्षक और अन्नदाता सोमको स्तोताओंकी वाणी शब्दायमान कर रही है। जलमिश्रित सोम, वरुणके समान, जलके आच्छादक हैं और वह रत्न-दाता होकर स्तोताओंको धन देते हैं।

३ सोम, तुम शूरोंके समुदायक और वीरोंवाले हो। सोम सामर्थ्यवान्, विजेता, संभक्ता, तीक्ष्ण आयुधवाले, क्षिप्र और धनुर्द्धारी हाथवाले, युद्धमें अजेय और शत्रुओंको हरानेवाले हैं।

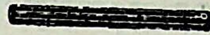
४ सोम, तुम विस्तृत मार्गवाले हो। स्तोताओंके लिये अभय देते हुए और द्यावापृथिवीको सङ्गत करते हुए क्षरित होओ। हमें प्रचुर अन्न देनेके लिये तुम उषा, आदित्य और किरणोंको प्राप्त करनेकी इच्छासे शब्द करते हो।

५ क्षरणशील सोम, तुम वरुण, मित्र, विष्णु, बली मरुत्, इन्द्र और अन्य देवोंके मदके लिये उन्हें तृप्त करो।

एवा राजेव क्रतुमाँ अमेन विश्वा घनिघ्नद् रिता पवस्व ।
इन्दो सूक्ताय वचसे वयोधा यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥६॥



६ सोम, तुम यज्ञवाले हो। राजाके समान बलके द्वारा सारे पापोंको नष्ट करके क्षरित होओ। दीप्त सोम, हमारे सुन्दर स्तोत्रके लिये हमें अन्न दो। कल्याणके द्वारा सदा हमारा पालन करो।



तृतीय अध्याय समाप्त

चतुर्थ अध्याय

९१ सूक्त

पवमान सोम देवता मारीच कश्यप ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

असर्जि वक्वा रथ्ये यथाजौ धिया मनोता प्रथमो मनीषी।
दश स्वसारो अधि सानौ अव्येऽजन्ति वह्निं सदनान्यच्छ ॥१॥
वीती जनस्य दिव्यस्य कव्यैरधि सुवानो नहुष्येभिरिन्दुः।
प्र यो नृभिरमृतो मर्त्येभिर्मर्मृजानोऽविभिर्गोभिरद्भिः ॥२॥
वृषा वृष्णे रोरुवदंशुरस्मै पवमानो रुशदीर्ते पयो गोः।
सहस्रमृक्वा पथिभिर्वचोविदध्वस्मभिः सूरो अण्वं वि याति ॥३॥
रुजा दृळ्हा चिद्रक्षसः सदांसि पुनान इन्द ऊर्णुहि वि वाजान्।
वृश्चोपरिष्टात्तुजता वधेन ये अन्ति दूरादुपनायमेषाम् ॥४॥

---

१ जैसे युद्धभूमिमें अश्वका अङ्गुलिसे परिमार्जन किया जाता है, वैसे ही शब्दायमान और क्षरणशील सोमका, कर्मके द्वारा यज्ञमें सृजन होता है। सोम देवोंके मनके अनुकूल, देवोंमें श्रेष्ठ और स्तुति वा मनके अधिपति हैं। भगिनी-स्वरूप दस अंगुलियाँ, यज्ञ-गृहके सम्मुख, ढोनेवाले सोमको उन्नत देश— मेषलोममय दशापवित्रपर प्रेरित करती हैं।

२ कवि (स्तोता) नहुष-वंशीयोंके द्वारा अभिषुत, क्षरणशील और देवोंके समीपवर्ती सोम यज्ञमें जाते हैं। अमर सोम, कर्मनिष्ठ मनुष्योंके द्वारा, पवित्र अभिषवचर्म, गोरस और जलके द्वारा बार बार शोधित होकर यज्ञमें जाते हैं।

३ काम-वर्षक, बार बार शब्दायमान और क्षरणशील सोम वर्षक इन्द्रके लिये शोभन और श्वेत गोरसके पास जाते हैं। स्तोत्रवान्, स्तोत्रज्ञ और सुवीर्य सोम हिंसा-शून्य अनेक मार्गोंसे सूक्ष्म-च्छिद्र पवित्रको लाँघकर द्रोणकलसमें जाते हैं।

४ सोम, सुदृढ़ राक्षस-पुरियोंका विनष्ट करो। इन्दु (सोम), पवित्रमें शोध्यमान (शोधन किये जाते हुए) तुम अन्न ले आओ। जो राक्षस दूर वा समीपसे आते हैं, उनके स्वामीको तुम घातक हथियारसे काट डालो।

सं मातृभिर्न शिशुर्वावशानो वृषा दधन्वे पुरुवारो अद्भिः ।
मर्यो न योषामभि निष्कृतं यन्त्संगच्छते कलश उस्रियाभिः ॥२॥
उत प्र पिप्य ऊधरघ्न्याया इन्दुर्धाराभिः सचते सुमेधाः ।
मूर्धानं गावः पयसा चमूष्वभिश्रीणन्ति वसुभिर्न निक्तैः ॥३॥
स नो देवेभिः पवमान रदेन्दो रयिमश्विनं वावशानः ।
रथिरायतामुशती पुरन्धिरस्मद्र्यगा दावने वसूनाम् ॥४॥
नू नो रयिमुप मास्व नृवन्तं पुनानो वाताप्यं विश्वश्चन्द्रम् ।
प्र वन्दितुरिन्दो तार्यायुः प्रातर्मक्षू धियावसुर्जगम्यात् ॥५॥

९४ सूक्त ।

पवमान सोम देवता । आङ्गिरस कण्व ऋषि । त्रिष्टुप्छन्द ।

अधि यदस्मिन्वाजिनीव शुभः स्पर्धन्ते धियः सूर्ये न विशः ।
अपो वृणानः पवते कवीयन्व्रजं न पशुवर्धनाय मन्म ॥१॥

---

२ देवकामी, कामवर्षक और वरणीय सोम जलके द्वारा उसी प्रकार धृत किये जाते हैं, जिस प्रकार माताएँ शिशुका धारण करती हैं। जैसे पुरुष अपनी स्त्रीके पास जाता है, वैसे ही सोम अपने संस्कृत स्थानको प्राप्त करते हुए, दूध आदिके साथ, द्रोणकलसमें जाते हैं।

३ सोम गायके स्तनको आप्यायित करते हैं। शोभनप्रज्ञ सोम धाराओंके रूपमें क्षरित होते हैं। चमसोंमें स्थित उन्नत सोमको गायें श्वेत दुग्धसे उसी प्रकार आच्छादित करती हैं, जिस प्रकार धौत वस्त्रसे कोई पदार्थ आच्छादित किया जाता है।

४ पवमान सोम, पात्रोंमें गिरते-गिरते देवोंके साथ कामयमान तुम अश्वसे युक्त धन दो। रथियोंकी इच्छा करनेवाले सोमकी अभिलाषिणी और बहुविध बुद्धि धन-दानके लिये हमारे सामने आवे।

५ सोम, हमारे लिये शीघ्र ही पुत्रादि-युक्त धन दो। जलको सबके लिये आह्लादक बनाओ। सोम, स्तोताकी आयुको बढ़ाओ। सोम अपने कर्मसे सवनमें, हमारे यज्ञके प्रति, शीघ्र आवें।

---

१ जिस समय घोड़ेके समान सोम अलङ्कृत होते हैं और जिस समय सूर्यके समान सोम-की किरणें उदित होती हैं, उस समय अङ्गुलियाँ स्पर्द्धा करके सोमका शोधन करती हैं। अनन्तर कवि सोम जलमें मिलकर उसी प्रकार कलसमें क्षरित होते हैं, जिस प्रकार पशुपोषणके लिये गोपाल गोष्ठमें जाता है।

द्विता व्यूर्ण्वन्नमृतस्य धाम स्वर्विदे भुवनानि प्रथन्त ।
धियः पिन्वानाः स्वसरे न गाव ऋतायन्तीरभि वावश्र इन्दुम् ॥२॥
परि यत् कविः काव्या भरते शूरो न रथो भुवनानि विश्वा ।
देवेषु यशो मर्ताय भूषन्दक्षाय रायः पुरुभूषु नव्यः ॥३॥
श्रिये जातः श्रिय आ निरियाय श्रियं वयो जरितृभ्यो दधाति ।
श्रियं वसाना अमृतत्वमायन् भवन्ति सत्या समिथा मितद्रौ ॥४॥
इषमूर्जमभ्यर्षाश्वं गामुरु ज्योतिः कृणुहि मत्सि देवान् ।
विश्वानि हि सुषहा तानि तुभ्यं पवमान बाधसे सोम शत्रून् ॥५॥



२ जल-धारक अन्तरीक्षको सोम अपने तेजसे दोनों ओरसे आच्छादित करते हैं। सवज्ञ सोमके लिये सारे भुवन विस्तृत हों। प्रसन्नता-कारिणी और यज्ञ-विधायिनी स्तुतियाँ सोमको लक्ष्य करके यज्ञ-दिनोंमें वैसे ही शब्द करती हैं, जैसे दुग्धदायिनी गायें गोष्ठमें शब्द करती हैं।

३ बुद्धिमान् सोम जिस समय स्तोत्रोंकी ओर जाते हैं, उस समय वीर पुरुषके रथके समान वह सर्वत्र गात-विधि करते हैं। सोम देवोंका धन मनुष्यको देते हैं। प्रदत्त धनकी वृद्धिके लिये सोमकी स्तुति की जाती है।

४ सम्पत्तिके लिये सोम अंशुओं (लता-प्रतान) से निकलते हैं। स्तोताओंको सोम अन्न और आयु प्रदान करते हैं। सोमसे सम्पत्ति प्राप्त करके स्तोता लोगोंने अमरत्व प्राप्त किया। सोमसे युद्ध यथार्थ होते हैं।

५ सोम, सम्पत्ति, बल, अश्व, गौ आदि दो। महान् ज्योतिका विस्तार करो। इन्द्रादि देवोंको तृप्त करो। सोम, तुम्हारे लिये सारे राक्षस पराजेय हैं। क्षरणशील सोम, सारे शत्रुओंको मारो।



स प्रत्नवन्नव्यसे विश्ववार सूक्ताय पथः कृणुहि प्राचः ।
ये दुःषहासो वनुषा बृहन्तस्तांस्ते अश्याम पुरुकृत् पुरुक्षो ॥५॥
एवा पुनानो अपः स्वर्गा अस्मभ्यं तोका तनयानि भूरि ।
शं नः क्षेत्रमुरु ज्योतींषि सोम ज्योङ्नः सूर्यं दृशये रिरीहि ॥६॥

९२ सूक्त

पवमान सोम देवता। मरीचि-पुत्र कश्यप ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

परि सुवानो हरिरंशुः पवित्रे रथो न सर्जि सनये हियानः ।
आपच्छ्लोकमिन्द्रियं पूयमानः प्रति देवाँ अजुषत प्रयोभिः ॥१॥
अच्छा नृचक्षा असरत् पवित्रे नाम दधानः कविरस्य योनौ ।
सीदन् होतेव सदने चमूषूपेमग्मन्नृषयः सप्त विप्राः ॥२॥

---

५ सबके प्रार्थनीय सोम, प्राचीन कालके समान स्थित तुम नवीन सूक्त और शोभन स्तोत्रवाले मेरे मार्गोंको पुराने करो अर्थात् मेरे लिये कोई मार्ग नया न रहे। बहुकर्मा और शब्दायमान सोम, राक्षसोंके लिये असह्य, हिंसक और महान् जो तुम्हारे अंश हैं, उन्हें हम यज्ञमें प्राप्त करें।

६ क्षरणशील (पवमान) सोम, हमें जल, स्वर्ग, गोधन और अनेक पुत्र-पौत्र दो। हमारे खेतका मङ्गल करो। सोम, अन्तरीक्षमें नक्षत्रोंको विस्तृत करो। हम चिर काल तक सूर्यको देख सकें।

---

१ शोध्यमान, पुरोहितोंके द्वारा भेजे जाते और हरित-वर्ण सोम वैसे ही मेषलामके पवित्र (चलनी वा छनने) में, देवोंके उपासनके लिये, संचालित किये जाते हैं, जैसे युद्धमें, शत्रु-बधके लिये, रथ-संचालित किया जाता है। शोध्यमान सोम इन्द्रका स्तोत्र प्राप्त करते हैं। सोम प्रसन्नकर अन्नसे देवोंकी सेवा करते हैं।

२ मनुष्योंके दर्शक और क्रान्तप्रज्ञ सोम जलमें मिलकर तथा अपने स्थान पवित्रमें फैल कर यज्ञमें उसी प्रकार जाते हैं, जिस प्रकार स्तोत्रके लिये होता देवोंके पास जाता है। अनन्तर सोम चमस आदि पात्रोंमें जाते हैं। सात मेधावी (भरद्वाज, कश्यप, गोतम, अत्रि, विश्वामित्र, जमदग्नि और वसिष्ठ) ऋषि सोमके पास जाते हैं।

प्र सुमेधा गातुविद्विश्वदेवः सोमः पुनानः सद एति नित्यम् ।
भुवद्विश्वेषु काव्ये रन्तानु जनान्यतते पञ्च धीरः ॥३॥

तव त्ये स सोम पवमान निण्ये विश्वे देवास्त्रय एकादशासः ।
दश स्वधाभिरधि सानौ अव्ये मृजन्ति त्वा नद्यः सप्त यह्वीः ॥४॥

तन्नु सत्यं पवमानस्यास्तु यत्र विश्वे कारवः सन्नसन्त ।
ज्योतिर्यदह्ने अकृणोदु लोकं प्रावन्मनुं दस्यवे करभीकम् ॥५॥

परि सद्मेव पशुमान्ति होता राजा न सत्यः समितीरियानः ।
सोमः पुनानः कलशाँ अयासीत् सीदन्मृगो न महिषो वनेषु ॥६॥

६३ सूक्त

पवमान सोम देवता । गोतम-वंशोय नोधा ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

साकमुक्षो मर्जयन्त स्वसारो दश धीरस्य धीतयो धनुत्रीः ।
हरिः पर्यद्रवज्जाः सूर्यस्य द्रोणं ननक्षे अत्यो न वाजी ॥१॥

---

३ शोभन-प्रज्ञ, मार्गज्ञ, सब देवोंके समीपी और पवमान (शोध्यमान) सोम अविनश्वर द्रोण-कलसमें जाते हैं। सारे कार्यों में रमणीय और प्राज्ञ सोम निषाद आदि पाँच वर्णोंका अनुगमन करते हैं।

४ पवमान (शोध्यमान) सोम, तुम्हारे ये प्रसिद्ध ३३ देवता अन्तर्हित स्थान (स्वर्ग = द्युलोक) में रहते हैं। दस अँगुलियाँ उन्नत और मेषलोमके पवित्रमें जलके द्वारा तुम्हें शोधित करती हैं।

५ पवमान सोमके जिस प्रसिद्ध स्थानपर स्तोता लोग, स्तुतिके लिये, एकत्र होते हैं, उस सत्य स्थानको हम प्राप्त करें। सोमकी जो ज्योति दिनके लिये प्रकाश प्रदान करती है, उसने मनु नामक राजर्षिकी उत्तम रूपसे रक्षा की है। सोमने अपने तेजको सर्वनाशक असुरके लिये अभिगमनशील किया है।

६ जैसे देवोंको बुलानेवाले ऋत्विक् पशुवालेके सदन (यज्ञगृह) में जाते हैं और जैसे सत्यकर्मा राजा युद्ध-क्षेत्रमें जाता है, वैसे ही पवमान सोम, गमनशील जलमें महिषके सदृश रहकर, द्रोणकलसमें जाते हैं।

१ एक साथ सिञ्चन करनेवाली भगिनी-स्वरूप जो दस अङ्गुलियाँ सोमका शोधन करती हैं, वे ही प्राज्ञ और देवोंके द्वारा काम्यमान सोमकी प्रेरिका हैं। हरितवर्ण सोम सूर्यकी पत्नियों (दिशाओं) की ओर जाते हैं। गतिशील अश्वके समान स्थित सोम कलसमें जाते हैं।

ब्रह्मा देवानां पदवीः कवीनामृषिर्विप्राणां महिषो मृगाणाम् ।
श्येनो गृध्राणां स्वधितिर्वनानां सोमः पवित्रमत्येति रेभन् ॥६॥
प्रावीविपद्वाच ऊर्मिं न सिन्धुर्गिरः सोमः पवमानो मनीषाः ।
अन्तः पश्यन्वृजनेमावराण्या तिष्ठति वृषभो गोषु जानन् ॥७॥
स मत्सरः पृत्सु वन्वन्नवातः सहस्ररेता अभि वाजमर्ष ।
इन्द्रायेन्दो पवमानो मनीष्यंशोरूर्मिमीरय गा इषण्यन् ॥८॥
परि प्रियः कलशे देववात इन्द्राय सोमो रण्यो मदाय ।
सहस्रधारः शतवाज इन्दुर्वाजी न सप्तिः समना जिगाति ॥९॥
स पूर्व्यो वसुविज्जायमानो मृजानो अप्सु दुदुहानो अद्रौ ।
अभिशस्तिपा भुवनस्य राजा विदद्गातुं ब्रह्मणे पूयमानः ॥१०॥

६ सोम देव-स्तोता पुरोहितोंके ब्रह्मा, कवियोंके शब्दविन्यास-कर्त्ता, मेधावियोंके ऋषि, वन्य प्राणियोंके महिष, पक्षियोंके राजा और अस्त्रोंके स्वधिति नामक अस्त्र हैं। शब्द करते हुए सोम पवित्रका अतिक्रम करते हैं।

७ पवमान सोम तरङ्गायित नदीके समान हृदयङ्गम स्तुतिवाक्यके प्रेरक हैं। काम-वर्षक और गोज्ञाता सोम अन्तर्हित वस्तुओंको देखते हुए दुर्बलोंके न रोकने योग्य बलपर अधिष्ठित रहते हैं।

८ सोम, तुम मदकर, युद्धमें शत्रुहन्ता, अगम्य और असीम जल-युक्त हो। शत्रुओंके बलको अधिकृत करो। सोम, तुम प्राज्ञ हो। तुम गायोंको प्रेरित करते हुए अपनी अंशु-तरङ्ग इन्द्रके प्रति भेजो।

९ सोम प्रसन्नता-दायक हैं; रमणीय हैं। उनके पास देव लोग जाते हैं। अनेक धाराओं-वाले, बहुबल और पात्रोंमें क्षरणशील सोम इन्द्रके मदके लिये द्रोणकलसमें उसी प्रकार जाते हैं, जिस प्रकार युद्धमें बली अश्व जाता है।

१० प्राचीन, धनाधिपति, जन्मके साथ जलमें शोधित, अभिषव-प्रस्तरपर निष्पीड़ित, शत्रु-ओंसे रक्षक, प्राणियोंके राजा और कर्मके लिये क्षरणशील सोम यजमानको समीचीन मार्ग बताते हैं।

त्वया हि नः पितरः सोम पूर्वे कर्माणि चक्रुः पवमान धीराः ।
वन्वन्नवातः परिधीँरपोर्णु वीरेभिरश्वैर्मघवा भवा नः ॥११॥
यथा पवथा मनवे वयोधा अमित्रहा वरिवोविद्धविष्मान् ।
एवा पवस्व द्रविणं दधान इन्द्रे सं तिष्ठ जनयायुधानि ॥१२॥
पवस्व सोम मधुमाँ ऋतावापो वसानो अधि सानो अव्ये ।
अव द्रोणानि घृतवन्ति सीद मदिन्तमो मत्सर इन्द्रपानः ॥१३॥
वृष्टिं दिवः शतधारः पवस्व सहस्रसा वाजयुर्देववीतौ ।
सं सिन्धुभिः कलशे वावशानः समुस्रियाभिः प्रतिरन्न आयुः ॥१४॥
एष स्य सोमो मतिभिः पुनानोऽत्यो न वाजी तरतीदरातीः ।
पयो न दुग्धमदितेरिषिरमुर्विव गातुः सुयमो न वोळ्हा ॥१६॥

११ पवमान सोम, हमारे कर्मकुशल पूर्वजोंने, तुम्हारी सहायतासे ही अग्निष्टोमादि कर्म किये थे। वेगवान् अश्वोंकी सहायताके द्वारा तुम शत्रुओंको मारते हो। राक्षसोंको हटाओ। तुम हमारे इन्द्र बनो—धन दो।

१२ प्राचीन कालमें जैसे तुम राजा मनुके लिये अन्न-धारक हुए थे, शत्रुओंका संहार किया था और धन, पुरोडाश आदिसे युक्त होकर उनको धन-प्रदान करनेके लिये आये थे, वैसे हमें भी धन देनेके लिये पधारो, इन्द्रका आश्रय करो और उन्हें अस्त्र दो।

१३ सोम, तुम मदकर रसवाले और याज्ञिक हो। जलमें मिश्रित होकर उन्नत मेषलोम-मय पवित्रमें क्षरित होओ। अतीव मदकर इन्द्रके पीने योग्य और मादक सोम, जलवाले द्रोण-कलसमें ठहरो।

१४ सोम, तुम यज्ञमें यजमानोंको त्रिविध प्रकारके धन देनेवाले, अन्नकामी और अनेक धाराओंवाले हो। आकाशसे वृष्टि बरसाओ और जल तथा दुग्धके साथ, हमारे जीवनको बढ़ाते हुए, द्रोणकलसमें क्षरित होओ।

१५ ऐसे सोम स्तोत्रोंसे शोधित होते हैं। सोम गमनशील अश्वके समान शत्रुओंके पार जाते हैं। वे अदीन गौके दूधके समान परिशुद्ध हैं। वे विस्तीर्ण मार्गके समान सबके आश्रयणीय हैं। वाहक अश्वके समान सोम स्तोत्रोंके द्वारा नियन्त्रणमें आते हैं।

१६ शोभन आयुधवाले और ऋत्विकोंके द्वारा शोधित सोम अपनी गुह्य और रमणीय मूर्त्तिको धारण करो। अश्वके समान वर्त्तमान तुम हमारी अन्नाभिलाषाके लिये हमें अन्न दो। देव सोम, हमें आयु और पशु दो।

९५ सूक्त

पवमान सोम देवता । कवि-पुत्र प्रस्कण्व ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

कनिक्रन्ति हरिरा सृज्यमानः सीदन्वनस्य जठरे पुनानः ।
नृभिर्यतः कृणुते निर्णिजं गा अतो मतीर्जनयत स्वधाभिः ॥१॥
हरिः सृजानः पथ्यामृतस्येयर्ति वाचमरितेव नावम् ।
देवो देवानां गुह्यानि नामाविष्कृणोति बर्हिषि प्रवाचे ॥२॥
अपामिवेदूर्मयस्तर्तुराणाः प्र मनीषा ईरते सोममच्छ ।
नमस्यन्तीरुप च यन्ति सञ्चा च विशन्त्युशतीरुशन्तम् ॥३॥
तं मर्मृजानं महिषं न सानावंशुं दुहन्त्युक्षणं गिरिष्ठाम् ।
तं वावशानं मतयः सचन्ते त्रितो बिभर्ति वरुणं समुद्रे ॥४॥
इष्यन्वाचमुपवक्तेव होतुः पुनान इन्दो विष्या मनीषाम् ।
इन्द्रश्च यत् क्षयथः सौभगाय सुवीर्यस्य पतयः स्याम ॥५॥



१ चारो ओर अभिषुत होनेवाले और हरित-वर्ण सोम शब्द करते है तथा शोधित होते-होते कलसके पेटमें बैठते हैं। मनुष्योंके द्वारा संयत सोम दुग्धमें मिश्रित होकर अपने रूपको प्रकट करते हैं। इन सोमके लिये, स्तोताओ, हविके साथ मननीय स्तुति उत्पन्न करो।

२ जैसे नाविक नौकाको चलाता है, वैसे ही बनाये जानेवाले और हरितवर्ण सोम सत्यरूप यज्ञके उपयोगी वचनको प्रेरित करते हैं। दीप्यमान सोम इन्द्रादि देवोंके अन्तर्हित शरीरोंको यज्ञमें उत्तम वक्ताके लिये आविष्कृत करते हैं।

३ स्तुतिके लिये शीघ्रता करनेवाले ऋत्विक् लोग, जल-तरङ्गके समान, मनकी स्वामिनी स्तुतिओंको सोमके लिये प्रेरित करते हैं। सोमकी पूजा करनेवाली स्तुतियाँ सोमके पास जाती हैं। अभिलाषिणी स्तुतियाँ अभिलाषी सोममें प्रविष्ट होती हैं।

४ ऋत्विक् लोग सोमका शोधन करते हुए, महिषके समान, उन्नत देशमें स्थित काम-वर्षक और अभिषवके लिये पत्थरोंमें स्थित उन प्रसिद्ध सोमको दूहते हैं। कामयमान सोमको मननीय स्तुतियाँ सेवित करती हैं। तीन स्थानोंमें वर्त्तमान इन्द्र शत्रु-निवारक सोमको अन्तरीक्षमें धारण करते हैं।

५ सोम, जैसे स्तोत्र-प्रेरक उपवक्ता नामक पुरोहित होताको उत्साहित करता है, वैसे ही स्तोताओंके प्रशंसनके लिये क्षरणशील तुम बुद्धिको धन-प्रदानाभिमुखी करो। जब तुम इन्द्रके साथ यज्ञमें रहते हो, तब हम स्तोता सौभाग्यशाली हों और शोभन वीर्यवाले धनके अधिपति हों।

९६ सूक्त

पवमान सोम देवता। दिवोदासके पुत्र प्रतर्दन ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

प्र सेनानीः शूरो अग्रे रथानां गव्यन्नेति हर्षते अस्य सेना।
भद्रान् कृण्वन्निन्द्रहवान्त्सखिभ्य आ सोमो वस्त्रा रभसानि दत्ते ॥१॥
समस्य हरिं हरयो मृजन्त्यश्वहयैरनिशितं नमोभिः।
आ तिष्ठति रथमिन्द्रस्य सखा विद्वाँ एना सुमतिं यात्यच्छ ॥२॥
स नो देव देवताते पवस्व महे सोम प्सरस इन्द्रपानः।
कृण्वन्नपो वर्षयन्द्यामुतेमामुरोरा नो वरिवस्या पुनानः ॥३॥
अजीतयेऽहतये पवस्व स्वस्तये सर्वतातये बृहते।
तदुशन्ति विश्व इमे सखायस्तदहं वश्मि पवमान सोम ॥४॥
सोमः पवते जनिता मतीनां जनिता दिवो जनिता पृथिव्याः।
जनिताग्नेर्जनिता सूर्यस्य जनितेन्द्रस्य जनितोत विष्णोः ॥५॥

---

१ सेनापति और शत्रु-बाधक सोम शत्रुओंकी गायें पानेकी इच्छासे रथोंके आगे युद्धमें जाते हैं। सोमकी सेना प्रसन्न होती है। मित्र यजमानोंके लिये इन्द्रके आह्वानको कल्याण-कर बनाते हुए सोम उन दुग्ध आदिको ग्रहण करते हैं, जिनके लिये इन्द्र शीघ्र आते हैं।

२ अँगुलियां सोमकी हरित-वर्ण किरणका अभिषव करती हैं। व्याप्त रहनेपर भी सोम अननुगत-रथ रूप दशापवित्रमें ठहरते हैं। इन्द्रके मित्र और प्राज्ञ सोम पवित्रसे शोभन स्तुतिवाले स्तोताके पास जाते हैं।

३ द्योतमान सोम, तुम इन्द्रके पीनेकी वस्तु हो। हमारे देव-व्याप्त यज्ञमें इन्द्रके महान् पानके लिये क्षरित होओ। तुम जल-कर्त्ता और द्यावापृथिवीके अभिषेक्ता हो। विस्तृत अन्तरीक्षसे आगत और शोधित तुम हमें धनादि प्रदान करो।

४ सोम, हमारे अपराजय, अविनाश और यज्ञके लिये सामने आओ। मेरे सारे मित्र स्तोता तुम्हारा रक्षण चाहते हैं। पवमान सोम, मैं भी तुम्हारा रक्षण चाहता हूँ।

५ सोम क्षरित होते हैं। सोम स्तुति, द्युलोक, पृथिवी, अग्नि, प्रेरक सूर्य, इन्द्र और विष्णुके जनक हैं।

ऋत्वायुधः सोतृभिः पूयमानोऽभ्यर्ष गुह्यं चारु नाम ।
अभि वाजं सप्तिरिव श्रवस्याभि वायुमभि गा देव सोम ॥१६॥
शिशुं जज्ञानं हर्यतं मृजन्ति शुम्भन्ति वह्निं मरुतो गणेन ।
कविर्गीर्भिः काव्येना कविः सन्त्सोमः पवित्रमत्येति रेभन् ॥१७॥
ऋषिमना य ऋषिकृत् स्वर्षाः सहस्रणीथः पदवीः कवीनाम् ।
तृतीयं धाम महिषः सिषासन्त्सोमो विराजमनुराजति ष्टुप् ॥१८॥
चमूषच्छ्येनः शकुनो विभृत्वा गोविन्दुर्द्रप्स आयुधानि बिभ्रत् ।
अपामूर्मिं सचमानः समुद्रं तुरीयं धाम महिषो विवक्ति ॥१६॥
मर्यो न शुभ्रस्तन्वं मृजानोऽत्यो न सृत्वा सनये धनानाम् ।
वृषेव यूथा परि कोशमर्षन् कनिक्रदच्चम्वो रा विवेश ॥२०॥

---

१७ मरुत् लोग, शिशुके समान, प्रकट और सबके अभिलषणीय सोमको शोधित करते हैं। वे वाहक सोमको सप्तसंख्यक गणके द्वारा अलङ्कृत करते हैं। क्रान्तकर्मा और कवि-कार्यके द्वारा कविशब्द-वाच्य सोम, शब्द करते हुए, स्तुतिके साथ पवित्रको लाँघकर जाते हैं।

१८ ऋषियोंके समान मनवाले, सबको देखनेवाले, सूर्यके संभक्त, अनेक स्तुतियोंवाले, कवियोंमें शब्द-विन्यास-कर्त्ता और पूज्य सोम द्युलोकमें रहनेकी इच्छा करते हुए, स्तुत होते हुए और विराजमान इन्द्रको प्रकाशित करते हैं।

१६ अभिषवण-फलकोंपर वर्त्तमान, प्रशंसनीय, समर्थ, पात्रोंमें विहरण करनेवाले, आयुधोंका धारण करनेवाले, जलप्रेरक, अन्तरीक्षका सेवन करनेवाले और महान् सोम चतुर्थचन्द्र-धामका सेवन करते हैं।

२० अलङ्कृत मनुष्यके समान, अपने शरीरके शोधक, धनदानके लिये वेगवान् अश्वके समान चलनेवाले, वृषभके समान शब्द करनेवाले और पात्रमें जानेवाले सोम, शब्द करते हुए, अभिषवण-फलकोंपर बैठते हैं।

पवस्वेन्दो पवमानो महोभिः कनिक्रदत् परि वाराण्यर्ष ।
क्रीळञ्चम्वो३रा विश पूयमान इन्द्रं ते रसो मदिरो ममत्तु ॥२१॥
प्रास्य धारा बृहतीरसृग्रन्नक्तो गोभिः कलशाँ आ विवेश ।
साम कृण्वन्त्सामन्यो विपश्चित् क्रन्दन्नेत्यभि सख्युर्न जामिम् ॥२२॥
अपघ्नन्नेषि पवमान शत्रून् प्रियां न जारो अभिगीत इन्दुः ।
सीदन्वनेषु शकुनो न पत्वा सोमः पुनानः कलशेषु सत्ता ॥२३॥
आ ते रुचः पवमानस्य सोम योषेव यन्ति सुदुघाः सुधाराः ।
हरिरानीतः पुरुवारो अप्स्वचिक्रदत् कलशे देवयूनाम् ॥२४॥



२१ सोम, ऋत्विकोंके द्वारा शोधित होकर तुम क्षरित होओ । बार-बार शब्द करते हुए मेषलोममय पात्रमें जाओ । अभिषवण-फलकोंपर क्रीड़ा करते हुए पात्रोंमें पैठो । तुम्हारा मदकर रस इन्द्रको प्रमत्त करे ।

२२ सोमकी महती धाराएँ बनायी जा रही हैं । गोरससे मिश्रित होकर सोम द्रोणकलसमें गये । सोम गान करनेमें कुशल हैं; इसलिये गाते हुए विद्वान् सोम वैसे ही पात्रोंमें जाते हैं, जैसे लम्पट मनुष्य अपने मित्रकी स्त्रीके पास जाता है ।

२३ शोध्यमान सोम, जैसे जार व्यभिचारिणी स्त्रीके पास जाता है, वैसे ही स्तोताओंके द्वारा अभिषुत और पात्रोंमें क्षरणशील सोम, तुम शत्रुओंका विनाश करते हुए आते हो । जैसे उड़ने वाला पक्षी वृक्षोंपर बैठा करता है, वैसे ही शोधित सोम कलसमें बैठते हैं ।

२४ सोम, बच्चोंके लिये दूधका दोहन करनेवाली स्त्रीके समान तुम्हारी यजमानोंका धन दोहन करनेवाली और शोभन धाराओंवाली दीप्तियाँ पात्रोंमें जाती हैं । हरित-वर्ण, लाये गये और ऋत्विकोंके द्वारा बहुधा वरणीय सोम वसतीवरी-जलमें और देवकामी यजमानोंके कलसमें बार-बार शब्द करते हैं ।



६ अनुवाक । ९७ सूक्त

पवमान सोम देवता। १—३ तक मैत्रावरुण वसिष्ठ, ४—६ तक इन्द्रपुत्र प्रभृति, ७-९ तक वृषगण, १०-१२ तक मन्यु, १३—१५ तक उपमन्यु, १६—१८ तक व्याघ्रपाद्, १९—२१ तक शक्ति, २२—२४ तक कर्णश्रुत, २५-२७ तक मृळीक, २८—३० तक वसुश्रु (ये सब ऋषि वसिष्ठ गोत्रज हैं), ३१—३३ तक शक्ति-पुत्र पराशर और शेषके आङ्गिरस कुत्स ऋषि हैं। त्रिष्टुप् छन्द।

अस्य प्रेषा हेमना पूयमानो देवो देवेभिः समपृक्त रसम्।
सुतः पवित्रं पर्येति रेभन्मितेव सद्म पशुमान्ति होता ॥१॥
भद्रा वस्त्रा समन्या वसानो महान् कविर्निवचनानि शंसन्।
आ वच्यस्व चम्वोः पूयमानो विचक्षणो जागृविर्देववीतौ ॥२॥
समु प्रियो मृज्यते सानौ अव्ये यशस्तरो यशसां क्षैतो अस्मे।
अभि स्वर धन्वा पूयमानो यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥३॥
प्र गायताभ्यर्चाम देवान्त्सोमं हिनोत महते धनाय।
स्वादुः पवाते अति वारमव्यमा सीदाति कलशं देवयुर्नः ॥४॥

१ प्रेरक सुवर्णके द्वारा शोधित और प्रदीप्त-किरण सोम अपने रसको देवोंके पास भेजते हैं। अभिषुत सोम शब्दायमान होकर पवित्रकी ओर उसी प्रकार जाते हैं, जिस प्रकार ऋत्विक् यजमानके पशुवाले और सुनिर्मित यज्ञ-गृहमें जाते हैं।

२ संग्रामके योग्य, आच्छादक और कल्याणकर तेजको धारण करनेवाले, पूज्य, कवि, ऋत्विकोंके वक्तव्योंके प्रशंसक, सर्व-द्रष्टा और जागरणशील सोम, तुम यज्ञमें अभिषवण-फलकोंपर बैठो।

३ यशस्वियोंमें भी यशस्वी, पृथिवीपर उत्पन्न और प्रसन्नतादायक सोम उच्च और मेषलोम-मय पवित्रमें शोधित होते हैं। सोम शोधित होकर तुम अन्तरीक्षमें शब्द करो। मङ्गलमय रक्षणोंसे हमारी रक्षा करो।

४ स्तोताओ, भली भाँति स्तुति करो और देवोंकी पूजा करो। प्रचुर धनकी प्राप्तिके लिये सोमको प्रेरित करो। स्वादुकर सोम मेषलोममय पवित्रमें शोधित होते हैं। देवाभिलाषी सोम कलसमें बैठते हैं।

इन्दुर्देवानामुप सख्यमायन्त्सहस्रधारः पवते मदाय ।
नृभिः स्तवानो अनु धाम पूर्वमगन्निन्द्रं महते सौभगाय ॥५॥
स्तोत्रे राये हरिरर्षा पुनान इन्द्रं मदो गच्छतु ते भराय ।
देवैर्याहि सरथं राधो अच्छा यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥६॥
प्र काव्यमुशनेव ब्रुवाणो देवो देवानां जनिमा विवक्ति ।
महिव्रतः शुचिबन्धुः पावकः पदा वराहो अभ्येति रेभन् ॥७॥
प्र हंसासस्तृपलं मन्युमच्छामादस्तं वृषगणा अयासुः ।
आङ्गूष्यं पवमानं सखायो दुर्मर्षं साकं प्र वदन्ति वाणम् ॥८॥
स रंहत उरुगायस्य जूतिं वृथा क्रीळन्तं मिमते न गावः ।
परीणसं कृणुते तिग्मशृङ्गो दिवा हरिर्ददृशे नक्तमृज्रः ॥९॥

५ देवोंकी मैत्रीकी प्राप्तिकी इच्छासे अनेक धाराओंवाले सोम कलसमें क्षरित होते हैं। कर्म-निष्ठोंके द्वारा स्तुत होकर सोम प्राचीन धाम (द्युलोक) में जाते हैं। महान् सौभाग्यके लिये वह इन्द्रके पास जाते हैं।

६ हरित-वर्ण और शोधित सोम, स्तोत्र करनेपर तुम धनके लिये पधारो। तुम्हारा मदकर रस, युद्धके लिये, इन्द्रके पास जाय। देवोंके साथ रथपर बैठकर आओ। तुम हमें कल्याण-वचनोंसे हमारी रक्षा करो।

७ उशना नामक कविके समान काव्य (स्तोत्र) करते हुए इस मन्त्रके कर्त्ता ऋषि इन्द्रादि देवोंका जन्म भली भाँति जानते हैं। प्रचुरकर्मा, साधुमित्र, पवित्रताके उत्पादक और राज-दिनवाले सोम, शब्द करते हुए, पात्रोंमें जाते हैं।

८ हंसोंके समान विचारण करनेवाले वृषगण नामके ऋषि लोग शत्रु-बल-भीत होकर क्षिप्र-घातक और शत्रुहन्ता सोमको लक्ष्य कर यज्ञ-गृहमें जाते हैं। मित्र-रूप स्तोता लोग स्तोत्र-योग्य, दुर्द्धर्ष और क्षरणशील सोमको लक्ष्य करके वाद्यके साथ गान करते हैं।

९ सोम शीघ्रगामी हैं। बहुतोंके द्वारा स्तुत्य और अनायास क्रीड़ा करनेवाले सोमका अनुगमन दूसरे लोग नहीं कर सकते। तीक्ष्ण-तेजस्वी सोम अनेक प्रकारके तेज प्रकट करते हैं। अन्तरीक्षमें वर्त्तमान सोम दिनमें हरित-वर्णके दिखाई देते हैं और रातमें सरलगामी और प्रकाशयुक्त दिखाई देते हैं।

इन्दुर्वाजी पवते गोन्योघा इन्द्रे सोमः सह इन्वन्मदाय ।
हन्ति रक्षो बाधते पर्यरातीर्वरिवः कृण्वन्वृजनस्य राजा ॥१०॥
अध धारया मध्वा पृचानस्तिरो रोम पवते अद्रिदुग्धः ।
इन्दुरिन्द्रस्य सख्यं जुषाणो देवो देवस्य मत्सरो मदाय ॥११॥
अभि प्रियाणि पवते पुनानो देवो देवान्त्स्वेन रसेन पृञ्चन् ।
इन्दुर्धर्माण्यृतुथा वसानो दश क्षिपो अव्यत सानौ ये ॥१२॥
वृषा शोणो अभिकनिक्रदद्गा नदयन्नेति पृथिवीमुत द्याम् ।
इन्द्रस्येव वग्नु रा शृण्व आजौ प्रचेतयन्नर्षति वाचमेमाम् ॥१३॥
रसाय्यः पयसा पिन्वमान ईरयन्नेषि मधुमन्तमंशुम् ।
पवमानः सन्तनिमेषि कृण्वन्निन्द्राय सोम परिषिच्यमानः ॥१४॥

१० क्षरणशील, बलवान् और गमनशील सोम इन्द्रके लिये बलकर रसको भेजते हुए उनके मदके लिये क्षरित होते हैं। वह राक्षस-कुलको मारते हैं। वरणीय धन देनेवाले और बलके राजा सोम चारो ओरसे शत्रुओंका संहार करते हैं।

११ पत्थरोंसे अभिषुत और मदकारिणी धाराओंसे देवोंकी पूजा करनेवाले सोम मेष-लोममय पवित्रका व्यवधान करके क्षरित होते हैं। इन्द्रकी मैत्रीको आश्रय करते हुए द्योतमान और मदकर सोम इन्द्रके मदके लिये क्षरित होते हैं।

१२ यथाकाल प्रिय कर्मोंके करनेवाले, शोधित, क्रीड़ाशील, और अपने रससे इन्द्रादि देवोंका पूजन करनेवाले दिव्य सोम क्षरित होते हैं। उन्हें उच्च और मेषलोममय पवित्रपर दस अङ्गुलियाँ भेजती हैं।

१३ जैसे गायोंको देखकर लोहित-वर्ण वृषभ शब्द करता है, वैसे ही शब्द करते हुए सोम द्यावापृथिवीको जाते हैं। युद्धमें, इन्द्रके समान ही, सोमका शब्द सब सुनते हैं। सोम अपना परिचय सबको देते हुए जोरसे बोलते हैं।

१४ सोम, तुम दुग्ध-युक्त, क्षरणशील और शब्द-कर्त्ता हो। तुम मधुर रसको प्राप्त करते हो। सोम, जलसे परिषिक्त और शोधित तुम, अपनी धाराको विस्तृत करके, इन्द्रके लिये जाते हो।

एवा पवस्व मदिरो मदायोदग्राभस्य नमयन् वधस्नैः ।
परि वर्णं भरमाणो रुशन्तं गव्युर्नोऽर्ष परि सोम सिक्तः ॥१५॥
जुष्टवी न इन्दो सुपथा सुगान्युरौ पवस्व वरिवांसि कृण्वन् ।
घनेव विष्वग्दुरितानि विघ्नन्नधि ष्णुना धन्व सानौ अव्ये ॥१६॥
वृष्टिं नो अर्ष दिव्यां जिगत्नुमिलावतीं शंगयीं जीरदानुम् ।
स्तुकेव वीता धन्वा विचिन्वन् बन्धूँरिमाँ अवराँ इन्दो वायन् ॥१७॥
ग्रन्थिं न वि ष्य ग्रथितं पुनान ऋजुं च गातुं वृजिनं च सोम ।
अत्यो न क्रदो हरिरा सृजानो नर्यो देव धन्व पस्त्यावान् ॥१८॥
जुष्टो मदाय देवतात परि ष्णुना धन्व सानौ अव्ये ।
सहस्रधारः सुरभिरदब्धः परि स्रव वाजसातौ नृषह्ये ॥१९॥

---

१५ मदकर सोम, तुम जलग्राही मेघको, वृष्टिके लिये, घातक आयुधोंसे निम्नगामी बनाते हुए, मदके लिये क्षरित होओ। शोभन, श्वेतवर्ण, पवित्रमें अभिषिक्त और हमारी गायकी अभिलाषा करनेवाले सोम, क्षरित होओ।

१६ दीप्त सोम, तुम स्तोत्रसे प्रसन्न होकर और हमारे लिये वैदिक मार्गोंको सुगम कर विस्तृत द्रोणकलसमें क्षरित होओ। घने लोहेके हथियारसे दुष्ट राक्षसोंको मारते हुए उन्नत और मेषलोममय पवित्रमें धाराओंके साथ जाओ।

१७ सोम, द्युलोकोत्पन्न, गमनशील, अन्नवाली, सुखदात्री और दान करनेवाली वृष्टिको बरसाओ। सोम पृथिवी-स्थित वायु प्रेमपात्र पुत्रके समान हैं। इन्हें खोजते-खोजते आओ।

१८ जैसे गाँठको सुलझा कर अलग किया जाता है, वैसे ही मुझे पापोंसे अलग करो। सोम, तुम मुझे सरल मार्ग और बल दो। हरित-वर्ण और पात्रोंमें निर्मित होकर वेगशाली अश्वके समान शब्द करते हो। देव, शत्रु-हिंसक तुम गृहवाले हो। मेरे पास आओ।

१९ तुम पर्याप्त मदवाले हो। देवोंके यज्ञमें और मेषलोममय पवित्रमें, धाराओंके साथ, आओ। अनेक धाराओंसे युक्त और सुन्दर गन्धसे सम्पन्न होकर मनुष्योंके द्वारा क्रियमाण युद्धमें, अन्न-लाभके लिये, चारो ओर जाओ।

अरश्मानो ये रथा अयुक्ता अत्यासो न ससृजानास आजौ ।
एते शुक्रासो धन्वन्ति सोमा देवासस्ताँउप याता पिबध्यै ॥२०॥
एवा न इन्दो अभि देववीतिं परि स्रव नभो अर्णश्चमूषु ।
सोमो अस्मभ्यं काम्यं बृहन्तं रयिं ददातु वीरवन्तमुग्रम् ॥२१॥
तक्षद्यदी मनसो वेनतो वाग्ज्येष्ठस्य वा धर्मणिक्षोरनीके ।
आदीमायन् वरमा वावशाना जुष्टं पतिं कलशे गाव इन्दुम् ॥२२॥
प्र दानुदो दिव्यो दानुपिन्व ऋतमृताय पवते सुमेधाः ।
धर्मा भुवद्वृजन्यस्य राजा प्र रश्मिभिर्दशभिर्भारि भूम ॥२३॥
पवित्रेभिः पवमानो नृचक्षा राजा देवानामुत मर्त्यानाम् ।
द्विता भुवद्रयिपती रयीणामृतं भरत् सुभृतं चार्विन्दुः ॥२४॥

---

२० जैसे रज्जु-रहित, रथ-शून्य और अबद्ध अश्व, युद्धमें सज्जित करके, शीघ्रताके साथ अपने लक्ष्यको जाते हैं, वैसे ही यज्ञमें निर्मित और दीप्त सोम शीघ्र ही कलसकी ओर जाते हैं। देवो, आनेवाले सोमका पान करनेके लिये पास जाओ।

२१ सोम, हमारे यज्ञको लक्ष्य करके द्युलोकसे रसको चमसोंमें गिराओ। सोम अभिलषित, प्रवृद्ध और वीर पुत्र तथा बलिष्ठ धन हमें दें।

२२ ज्यों ही अभिलषित स्तोताका वचन अन्तःकरणसे निकलता है और ज्यों ही अतीव चमत्कृत याज्ञिक द्रव्य, अनुष्ठान-कालमें, लाया जाता है; त्यों ही गौका दूध अभिलाषाके साथ सोमकी ओर जाता है और उस समय सोम कलशमें अवस्थित करते हैं। सोम सबके प्रेमपात्र स्वामीके समान हैं।

२३ द्युलोकोत्पन्न, धन-दाताओंके मनोरथ-रक्षक और शोभन-बुद्धि सोम सत्य-रूप इन्द्रके लिये अपने रसको गिराते हैं। राजा सोम साधु-बलके धारक हैं। दस अँगुलियाँ प्रचुर परिमाणमें सोम प्रस्तुत करती हैं।

२४ पवित्रमें शोधित, मनुष्योंके दर्शक, देवों और मनुष्योंके राजा और धन-पति—असीम धनके स्वामी सोम देवों और मनुष्योंमें सुन्दर और कल्याणकारी जलको धारण करते हैं।

अँर्वा इव श्रवसे सातिमच्छेन्द्रस्य वायोरभि वीतिमर्ष ।
स नः सहस्रा बृहतीरिषो दा भवा सोम द्रविणोवित् पुनानः ॥२५॥
देवाव्यो नः परिषिच्यमानाः क्षयं सुवीरं धन्वन्तु सोमाः ।
आयज्यवः सुमतिं विश्ववारा होतारो न दिवियजो मन्द्रतमाः ॥२६॥
एवा देव देवताते पवस्व महे सोम प्सरसे देवपानः ।
महश्चिद्धि ष्मसि हिताः समर्ये कृधि सुष्ठाने रोदसी पुनानः ॥२७॥
अश्वो न क्रदो वृषभिर्युजानः सिंहो न भीमो मनसो जवीयान् ।
अर्वाचीनैः पथिभिर्ये रजिष्ठा आ पवस्व सौमनसं न इन्दो ॥२८॥
शतं धारा देवजाता असृग्रन्त्सहस्रमेनाः कवयो मृजन्ति ।
इन्दो सनित्रं दिव आ पवस्व पुर एतासि महतो धनस्य ॥२९॥

---

२५ सोम, जैसे अश्व युद्धमें जाता है, वैसे ही यजमानोंके अन्नके लिये और इन्द्र-वायुके पानके लिये जाओ। तुम बहुविध और प्रवृद्ध अन्न हमें दो। सोम, शोधित तुम हमारे लिये धन-प्रापक हो।

२६ देवोंके तर्पक, पात्रोंमें सिक्त, शोभन-बुद्धि यजमानके यज्ञ-कर्त्ता, सबके स्वीकार्य, होताओंके समान द्युलोक-स्थित इन्द्रादिकी स्तुति करनेवाले और अतीव मदकर सोम हमें वीर पुत्र और गृह प्रदान करें।

२७ स्तुत्य सोम, तुम्हें देवता लोग पीते हैं। देवोंके द्वारा विस्तृत यज्ञमें, महान् भक्षणके लिये, देवोंके पानके लिये क्षरित होओ। तुम्हारे द्वारा भेजे जाकर हम अमर संग्राममें महाबली शत्रुओंको हरावें। शोधित होकर तुम हमारे लिये द्यावापृथिवीको शोभन निवासवाली करो।

२८ सोम, सिंहके समान शत्रुओंके लिये भयङ्कर, मनसे भी अधिक वेगवाले और सोमाभिषव करनेवाले ऋत्विकोंके द्वारा योजित तुम अश्वके समान शब्द करते हो। दीप्त सोम, जो मार्ग अतीव सरल हैं, उन्हींसे हमारे लिये मनकी प्रसन्नता उत्पन्न करो।

२९ सोम, देवोंके लिये उत्पन्न होकर सोमकी सौ धाराएँ बनायी जा रही हैं। क्रान्तदर्शी लोग सोमकी बहुविध धाराओंको शोधित करते हैं। सोम, हमारे पुत्रोंके लिये द्युलोकसे गुप्त धन भेजो। तुम महान् धनके अग्रगामी हो।

दीवो न सर्गा अससृग्रमह्नां राजा न मित्रं प्र मिनाति धीरः ।
पितुर्न पुत्रः क्रतुभिर्यतान आ पवस्व विशे अस्या अजीतिम् ॥३०॥
प्र ते धारा मधुमतीरसृग्रन् वारान् यत् पूतो अत्येष्यव्यान् ।
पवमान पवसे धाम गोनां जज्ञानः सूर्यमपिन्वो अर्कैः ॥३१॥
कनिक्रददनु पन्थामृतस्य शुक्रो वि भास्यमृतस्य धाम ।
स इन्द्राय पवसे मत्सरवान् हिन्वानो वाचं मतिभिः कवीनाम् ॥३२॥
दिव्यः सुपर्णोऽव चक्षि सोम पिन्वन् धाराः कर्मणा देववीतौ ।
एन्दो विश कलशं सोमधानं क्रन्दन्निहि सूर्यस्योप रश्मिम् ॥३३॥
तिस्रो वाच ईरयति प्र वह्निर्ऋतस्य धीतिं ब्रह्मणो मनीषाम् ।
गावो यन्ति गोपतिं पृच्छमानाः सोमं यन्ति मतयो वावशानाः ॥३४॥

---

३० जसे दीप्त सूर्यकी दिन करनेवाली किरणें बनायी जाती हैं, वैसे ही सोमकी धाराएँ बनायी जाती हैं। सोम धीर राजा और मित्र हैं। कर्मकर्त्ता पुत्र जैसे पिताको नहीं हराता, वैसे ही सोम, तुम प्रजाको पराजित मत करो।

३१ सोम, जिस समय तुम जलसे मेषलोममय पवित्रको लाँघ कर जाते हो, उस समय तुम्हारी मधुर धाराएँ बनायी जाती हैं। शोध्यमान सोम, गोदुग्धको लक्ष्य करके तुम क्षरित होते हो। उत्पन्न होकर तुम अपने पूजनीय तेजके द्वारा आदित्यको भरपूर करते हो।

३२ अभिषुत सोम सत्यरूप यज्ञके मार्गपर बार-बार शब्द करते हैं। अमर और शुक्लवर्ण सोम, तुम विशेष रूपसे शोभित हो रहे हो। स्तोताओंकी बुद्धिके साथ शब्दका प्रेरण करनेवाले सोम, तुम मदकर होकर इन्द्रके लिये क्षरित होते हो।

३३ सोम, देवोंके यज्ञमें कर्मके द्वारा धाराओंको गिराते हुए तुम द्युलोकोत्पन्न और सुन्दर पतनवाले हो। नीचे देखो। सोम, कलसकी ओर जाओ। शब्द करते हुए तुम प्रेरक सूर्यकी कान्तिको प्राप्त करो।

३४ वहनकर्त्ता यजमान तीनों वेदोंकी स्तुतियाँ करता है। वह यज्ञ-धारक और दृढ़ सोमकी कल्याणकर स्तुतिको प्रेरित करता है। जैसे साँढ़ गायोंकी ओर जाता है, वैसे ही अपने पति सोमको दूधमें मिलानेके लिये गायें सोमके पास जाती हैं। अभिलाषी स्तोता लोग स्तुतिके लिये सोमके पास जाते हैं।

सोमं गावो धेनवो वावशानाः सोमं विप्रा मतिभिः पृच्छमानाः ।
सोमः सुतः पूयते अज्यमानः सोमे अर्कास्त्रिष्टुभः सं नवन्ते ॥३५॥
एवा नः सोम परिषिच्यमान आ पवस्व पूयमानः स्वस्ति ।
इन्द्रमा विश बृहता रवेण वर्धया वाचं जनया पुरन्धिम् ॥३६॥
आ जागृविर्विप्र ऋता मतीनां सोमः पुनानो असदच्चमूषु ।
सपन्ति यं मिथुनासो निकामा अध्वर्यवो रथिरासः सुहस्ताः ॥३७॥
स पुनान उप सूरे न धातोभे अप्रा रोदसी वि ष आवः ।
प्रिया चिद्यस्य प्रियसास ऊती स तू धनं कारिणे न प्र यंसत् ॥३८॥
स वर्धिता वर्धनः पूयमानः सोमो मीढ्वाँ अभि नो ज्योतिषावीत् ।
येना नः पूर्वे पितरः पदज्ञाः स्वर्विदो अभि गा अद्रिमुष्णन् ॥३९॥

---

३५ प्रसन्नता देनेवाली गायें सोमकी अभिलाषा करती हैं। मेधावी स्तोता लोग स्तुतिके द्वारा सोमको पूछते हैं। गोरसके द्वारा सिक्त और अभिषुत सोम ऋत्विकोंके द्वारा परिपूरित किये जाते हैं। त्रिष्टुप् छन्दवाले मन्त्र सोमसे मिलते हैं।

३६ सोम, पात्रोंमें परिषिक्त और शोधित होकर हमारे लिये कल्याण-पूर्वक क्षरित होओ। महान् शब्द करते हुए इन्द्रके पेटमें पैठो। स्तुति-रूप वचनको वर्द्धित करो। हमारे लिये अनेक-स्तवोंको विस्तृत करो।

३७ जागरणशील, सत्य स्तोत्रोंके ज्ञाता और शोधित सोम चमसोंमें बैठते हैं। परस्पर मिले हुए, अतीव अभिलाषी, यज्ञके नेता और कल्याण-पाणि पुरोहित लोग जिन सोमको पवित्रमें छूते हैं—

३८ वह शोधित सोम इन्द्रके पास वैसे हो जाते हैं, जैसे वर्ष जाता है। वह द्यावापृथिवीको अपनी महिमासे पूरित करते हैं। सोम स्वतेजसे अन्धकारको दूर करते हैं। जिन प्रिय सोमकी प्रियतम धाराएँ रक्षा करती हैं, वह कर्मचारीके वेतनके समान हमें शीघ्र धन दें।

३९ देवोंके वर्द्धक स्वयं वर्द्धमान, पवित्रमें शोधित और मनोरथोंके सेचक सोम अपने तेजसे हमारी रक्षा करें। सोमपानके द्वारा पणियोंके द्वारा अपहृत गायोंके पद-चिन्होंको जानते हुए, सर्वज्ञ, सूर्य-ज्ञाता (हमारे) पितर (अङ्गिरा लोग) पशुओंको लक्ष्य करके अन्धकारावृत शिला-समूहोंको सोमके तेजसे देखकर पशुओंको ले आये।

अक्रान्त्समुद्रः प्रथमे विधर्मन् जनयन् प्रजा भुवनस्य राजा ।
वृषा पवित्रे अधि सानो अव्ये बृहत् सोमो वावृधे सुवान इन्दुः ॥४०॥
महत्तत् सोमो महिषश्चकारापां यद्गर्भोऽवृणीत देवान् ।
अदधादिन्द्रे पवमान ओजो जनयत् सूर्ये ज्योतिरिन्दुः ॥४१॥
मत्सि वायुमिष्टये राधसे च मत्सि मित्रावरुणा पूयमानः ।
मत्सि शर्धो मारुतं मत्सि देवान्मत्सि द्यावापृथिवी देव सोम ॥४२॥
ऋजुः पवस्व वृजिनस्य हन्तापामीवां बाधमानो मृधश्च ।
अभिश्रीणन् पयः पयसाभि गोनामिन्द्रस्य त्वं तव वयं सखायः ॥४३॥
मध्वः सूदं पवस्व वस्व उत्सं वीरं च न आ पवस्वा भगं च ।
स्वदस्वेन्द्राय पवमान इन्दो रयिं च न आ पवस्वा समुद्रात् ॥४४॥
सोमः सुतो धारयात्यो न हित्वा सिन्धुर्न निम्नमभि वाज्यक्षाः ।
आ योनिं वन्यमसदत् पुनानः समिन्दुर्गोभिरसरत् समद्भिः ॥४५॥

---

४० जल-वर्षक और राजा सोम विस्तृत और भुवनके जलके धारक अन्तरीक्षमें प्रजाका उत्पादन करते हुए सबको लाँघ जाते हैं। काम-वर्षक, अभिषुत और दीप्त सोम उच्च और मेषलोममय पवित्रमें यथेष्ट बढ़ते हैं ।

४१ पूज्य सोमने प्रचुर कार्य किये हैं। जलके गर्भ सोमने देवोंका आश्रय किया। शोधित सोमने इन्द्रके लिये बल धारण किया। सोमने सूर्यमें तेज उत्पन्न किया।

४२ सोम, हमारे धन और अन्नके लिये वायुको प्रमत्त करो। शोधित होकर तुम मित्र और वरुणको तृप्त करते हो। मरुतोंके बल और इन्द्रादिको हृष्ट करते हो। स्तुत्य सोम, द्यावा-पृथिवीको प्रमत्त करो। हमें धन दो।

४३ उपद्रवोंके घातक, वेगशाली राक्षस और हिंसकोंके बाधक सोम, क्षरित होओ। अपने रसको दूधमें मिलाते हुए पात्रोंमें जाते हो। तुम इन्द्रके मित्र हो। सोम, हम तुम्हारे मित्र हों।

४४ सोम, मधुर भाण्डारको क्षरित करो। धनके वर्षक रसको क्षरित करो। हमें वीर पुत्र दो। भजनीय अन्न भी दो। सोम शोधित होकर तुम इन्द्रके लिये रुचिकर होओ। हमारे लिये अन्तरीक्षसे धन दो।

४५ अभिषुत सोम अपनी धारासे, वेगशाली अश्वके समान, जानेवाले हैं। जैसे प्रस्रवणशील नदी नीचे जाती है, वैसे ही सोम कलसको जाते हैं। शोधित सोम वृक्षोत्पन्न कलसमें बैठते हैं। सोम जल और दूधमें मिलाये जाते हैं।

एष स्य ते पवत इन्द्र सोमश्चमूषु धीर उशते तवस्वान् ।
स्वर्चक्षा रथिरः सत्यशुष्मः कामो नयो देवयतामसर्जि ॥४६॥
एष प्रत्नेन वयसा पुनानस्तिरो वर्पांसि दुहितुर्दधानः ।
वसानः शर्म त्रिवरूथमप्सु होतेव याति समनेषु रेभन् ॥४७॥
नू नस्त्वं रथिरो देव सोम परि स्रव चम्वोः पूयमानः ।
अप्सु स्वादिष्ठो मधुमाँ ऋतावा देवो न यः सविता सत्यमन्मा ॥४८॥
अभि वायुं वीत्यर्षा गृणानोऽभि मित्रावरुणा पूयमानः ।
अभी नरं धीजवनं रथेष्टामभीन्द्रं वृषणं वज्रबाहुम् ॥४९॥
अभि वस्त्रा सुवसनान्यर्षाभि धेनूः सुदुघाः पूयमानः ।
अभि चन्द्रा भर्तवे नो हिरण्याभ्यश्वान्रथिनो देव सोम ॥५०॥
अभी नोऽर्ष दिव्या वसून्यभि विश्वा पार्थिवा पूयमानः ।
अभि येन द्रविणमश्नवामाभ्यार्षेयं जमदग्निवन्नः ॥५१॥

४६ इन्द्र, अभिलाषी तुम्हारे लिये प्राज्ञ और वेगशाली सोम चमसोंमें क्षरित होते हैं। सर्वदर्शी, रथवाले और यथार्थ वली सोम देवकामी यजमानोंके लिये कामदाताके समान वनाये गये हैं।

४७ पूर्वकालीन और अन्नरूप धारासे गिरते हुए, सबका दोहन करनेवाली पृथिवीके रूपोंको अपने तेजसे ढकते हुए, शीत, आतप और वर्षाके निवारक यज्ञ-गृहको वनाते हुए तथा जलमें अवस्थिति करते हुए सोम, स्तोत्र-ध्वनि करनेवाले होताके समान, शब्द करते हुए यज्ञोंमें जाया करते हैं।

४८ अभिलषणीय देव, तुम रथवाले हो। हमारे यज्ञमें अभिषवण-फलकोंपर क्षरित होकर वसतीवरी-जलमें शीघ्र और चारो ओर क्षरित होओ। स्वादिष्ट, मधुर, याज्ञिक और सबके प्रेरक तुम, देवताके समान, सत्य स्तोत्रवाले हो।

४९ स्तुत होते हुए तुम पानके लिये वायुके पास जाओ। पवित्रमें शोधित होकर तुम पानके लिये मित्र और वरुणके पास जाओ। सबके नेता, वेगशाली और रथपर रहनेवाले अश्विद्वयके पास जाओ। काम-वर्षक और वज्रबाहु इन्द्रके पास भी जाओ।

५० सोम, हमारे लिये तुम सुन्दर-सुन्दर वस्त्र ले आओ। शोधित होकर तुम हमें मधुर दूध देनेवाली और नवप्रसूता गाय दो। हमारे भरणके लिये आह्लादक सोना हमें दो। स्तुत्य सोम, रथवाले अश्व भी हमें दो।

५१ सोम, पवित्र द्वारा शोधित होकर तुम द्युलोकोत्पन्न धन हमें दो। पृथिवीपर उत्पन्न धन भी हमें दो। हमें द्रव्य प्राप्त करनेकी शक्ति दो। जमदग्नि ऋषिके समान ऋषि-पुत्रोंका योग्य धन हमें दो।

अया पवा पवस्वैना वसूनि माँश्चत्व इन्दो सरसि प्र धन्व

ब्रध्नश्चिदत्र वातो न जूतः पुरुमेधश्चित्तकवे नरं दात् ॥५२॥

उत न एना पवया पवस्वाधि श्रुते श्रवाय्यस्य तीर्थे ।

षष्टिं सहस्रा नैगुतो वसूनि वृक्षं न पक्वं धूनवद्रणाय ॥५३॥

महीमे अस्य वृषनाम शूषे माँश्चत्वे वा पृशने वा वधत्रे ।

अस्वापयन्निगुतः स्नेहयच्चापामित्राँ अपाचितोऽचेतः ॥५४॥

सं त्री पवित्रा विततान्येष्यन्वेकं धावसि पूयमानः ।

असि भगोऽसि दात्रस्य दातासि मघवा मघवद्भ्य इन्दो ॥५५॥

एष विश्ववित् पवते मनीषी सोमो विश्वस्य भुवनस्य राजा ।

द्रप्साँ ईरयन्विदथेष्विन्दुर्वि वारमव्यं समयाति याति ॥५६॥

५२ सोम, शोधित धाराके द्वारा ये सारे धन क्षरित करो। सोम, माननेवाले यजमानोंके वसतीवरी-जलमें जाओ। सबके ज्ञापक और वायुके समान वेगशाली सूर्य और अनेक यज्ञोंवाले इन्द्र भी सोमके पास जाते हैं। सोम मुझे कर्मनिष्ठ पुत्र दें। सोम, तुम्हारे द्वारा तृप्त किये गये इन्द्र और सूर्य भी पुत्र दें।

५३ सोम, सबके द्वारा तुम आश्रयणीय हो। हमारे शब्दतीर्थ (यज्ञ) में इस धाराके द्वारा भली भाँती क्षरित होओ। जैसे फल पानेकी इच्छा करनेवाला वृक्षको कँपाता है, वैसे ही शत्रु-घातक सोमने साठ हजार धनोंको, शत्रु-जयके लिये, हमें दिया।

५४ वाण बरसाना और शत्रुओंको नीचे करना—सोमके ये दो कर्म सुखावह हैं। ये दोनों कर्म अश्व-युद्ध और द्वन्द्व-युद्धमें शत्रु-संहारक होते हैं। इन दनों कर्मोंसे सोमने शब्द करनेवाले शत्रुओंका वध किया। सोमने शत्रुओंको युद्धसे दूर किया। सोम, शत्रुओंको दूर करो। अग्निहोत्र न करनेवालोंको भी दूर करो।

५५ सोम, अग्नि, वायु और सूर्य नामके तीन विस्तृत पवित्रोंको तुम भली भाँति प्राप्त करते हो। शोधित होते हुए तुम मेषलोममय पवित्रमें जाते हो। तुम भजनीय हो। दातव्य धनके दाता हो। सोम, सारे धनियोंसे तुम धनी हो।

५६ सर्वज्ञ, मेधावी और सारे संसारके स्वामी सोम क्षरित होते हैं। यज्ञोंमें रस-कणोंको भेजते हुए सोम मेषलोममय पवित्रमें दोनों ओरसे जाते हैं।

इन्दुं रिहन्ति महिषा अदब्धाः पदे रेभन्ति कवयो न गृध्राः ।
हिन्वन्ति धीरा दशभिः क्षिपाभिः समञ्जते रूपमपां रसेन ॥५७॥
त्वया वयं पवमानेन सोम भरे कृतं वि चिनुयाम शश्वत् ।
तन्नो मित्रो वरुणो मामहन्तामदितिः सिन्धुः पृथिवी उत द्यौः ॥५८॥

९८ सूक्त

पवमान सोम देवता । वृषागिर राजाके पुत्र अम्बरीष और भरद्वाज-पुत्र ऋजिश्वा ऋषि ।
अनुष्टुप् और बृहती छन्द ।

अभि नो वाजसातमं रयिमर्ष पुरुस्पृहम् ।
इन्दो सहस्रभर्णसं तुविद्युम्नं विभ्वासहम् ॥१॥
परि ष्य सुवानो अव्ययं रथे न वर्माव्यत ।
इन्दुरभि द्रुणा हितो हियानो धाराभिरक्षाः ॥२॥

---

५७ पूज्य और अहिंसित देव लोग सोमका आस्वादन करते हैं । सोमास्वादन करनेवाले देवता सोमकी धाराके पास शब्द करते हैं । जैसे धनाभिलाषी स्तोता लोग शब्द करते हैं, वैसे ही कर्म-कुशल पुरोहित लोग दस अँगुलियोंसे सोमको प्रेरित करते हैं और जलके द्वारा सोम-रूपको मिश्रित करते हैं ।

५८ पवित्रमें संशोधित तुम्हारी सहायतासे हम युद्धमें अनेक कर्त्तव्य कर्मोंको करें । मित्र, वरुण, अदिति, सिन्धु, पृथिवी और द्युलोक, धनके द्वारा, हमारा मान करें ।

१ सोम, बहुतोंके द्वारा अभिलषणीय, अनेक पोषणोंसे युक्त, अनेक यशवाला, महान्को भी पराजित करनेवाला और बलप्रद पुत्र हमें दो ।

२ रथपर स्थित पुरुष जैसे कवचको धारण करता है, वैसे ही निष्पीड़ित सोम मेषलोममय पवित्रपर क्षरित होते हैं । स्तुत सोम काष्ठमय कलससे चालित होकर धारा द्वारा क्षरित होते हैं ।

परि ष्य सुवानो अक्षा इन्दुरव्ये मदच्युतः ।
धारा य ऊर्ध्वो अध्वरे भ्राजा नैति गव्ययुः ॥३॥
स हि त्वं देव शश्वते वसु मर्ताय दाशुषे ।
इन्दो सहस्रिणं रयिं शतात्मानं विवाससि ॥४॥
वयं ते अस्य वृत्रहन् वसो वस्वः पुरुस्पृहः ।
नि नेदिष्ठतमा इषः स्याम सुम्नस्याध्रिगो ॥५॥
द्विर्यं पञ्च स्वयशसं स्वसारो अद्रिसंहतम् ।
प्रियमिन्द्रस्य काम्यं प्रस्नापयन्त्यूर्मिणम् ॥६॥
परि त्यं हर्यतं हरिं बभ्रुं पुनन्ति वारेण ।
यो देवान्विश्वाँ इत् परि मदेन सह गच्छति ॥७॥
अस्य वो ह्यवसा पान्तो दक्षसाधनम् ।
यः सूरिषु श्रवो बृहद्दधे स्वर्ण हर्यतः ॥८॥

३ निष्पीड़ित सोम, मदके लिये देवोंके द्वारा प्रेरित होकर; मेषलोमके पवित्रमें क्षरित होते हैं। जैसे शोभन दीप्तिसे सोम अन्तरीक्षमें जाते हैं, वैसे ही सबके मुख्य सोम दुग्ध आदिकी इच्छा करके धाराके साथ जाते हैं।

४ सोम, तुम अनेक मनुष्यों और हविर्दाता यजमानके लिये धन देते हो। सोम, तुम अनेक पुत्र-पौत्रोंसे युक्त अनेक-सङ्ख्यक धन मुझे देते हो।

५ शत्रुघातक सोम, हम तुम्हारे हों। वासक सोम, अनेकों द्वारा अभिलषणीय और तुम्हारे द्वारा प्रदत्त धन और अन्नके हम अत्यन्त समीपतम हों। धन-स्वरूप सोम, हम सुखके अत्यन्त समीप हों।

६ कर्म करनेके लिये इधर-उधर जानेवाली भगिनी-स्वरूपा दस अंगुलियाँ यशस्वी, पत्थरोंपर अभिषुत, इन्द्रप्रिय, सबके द्वारा अभिलषित और धारावाले जिन सोमकी वसतीवरीके द्वारा सेवा करती हैं, उनको यजमान शोधित करते हैं।

७ सबके काम्य, हरित-वर्ण और बभ्रु-वर्ण (पिङ्गल-वर्ण) सोमको मेषलोमके द्वारा संशोधित किया जाता है। सोम, अपने मदकर रसके साथ, सारे देवोंके पास जाते हैं।

८ तुम लोग सोमके द्वारा रक्षित होकर बल-साधन रसका पान करो। सूर्यके समान सबके अभिलषणीय सोम स्तोताओंको प्रचुर अन्न देते हैं।

स वां यज्ञेषु मानवी इन्दुर्जनिष्ट रोदसी ।
देवो देवी गिरिष्ठा अस्रेधन्तं तुविष्वणि ॥९॥
इन्द्राय सोम पातवे वृत्रघ्ने परि षिच्यसे ।
नरे च दक्षिणावते देवाय सदनासदे ॥१०॥
ते प्रत्नासो व्युष्टिषु सोमाः पवित्रे अक्षरन् ।
अपप्रोथन्तः सनुतर्हुरश्चितः प्रातस्ताँ अप्रचेतसः ॥११॥
तं सखायः पुरोरुचं यूयं वयं च सूरयः ।
अश्याम वाजगन्ध्यं सनेम वाजपस्त्यम् ॥१२॥

९९ सूक्त

पवमान सोम देवता। काश्यप रेभ और सूनु ऋषि । बृहती और अनुष्टुप् छन्द ।

आ हर्यताय धृष्णवे धनुस्तन्वं तिपौंस्यम् ।
शुक्रां वयन्त्यसुराय निर्णिजं विपामग्रे महीयुवः ॥१॥

९ मनुसे उत्पन्न द्यावापृथिवी, पर्वतवासी सोमने यज्ञमें तुम दोनोंको बनाया । उच्च शब्दवाले यज्ञमें ऋत्विकोंने सोमका अभिषव किया ।

१० सोम, वृत्रघ्न इन्द्रके पानके लिये पात्रोंमें सिञ्चित किये जाते हो । ऋत्विकोंको दक्षिणा देनेवाले और देवोंके लिये हवि देनेकी इच्छासे यज्ञ-गृहमें बैठे हुए यजमानको फल देनेके लिये तुम सींचे जाते हो ।

११ प्रतिदिन प्रातःकाल प्राचीन सोम पवित्रके ऊपर क्षरित होते हैं । मूर्ख "हुरश्चित्" नामके दस्यु लोग प्रातःकाल सोमको देखकर अन्तर्धान और द्रवीभूत हो गये ।

१२ मित्रो, प्राज्ञ तुम और हम शोभित और बलकर तथा सुन्दर गन्धसे युक्त सोमको पियें । हम बलिष्ठ सोमका आश्रय करें ।

१ सबके काम्य और शत्रुओंको रगड़नेवाले सोमके लिये पौरुष प्रकट करनेवाले धनुष्पर ज्या (गुण) को चढ़ाया जाता है । पूजार्थी ऋत्विक् लोग मेधावी देवोंके आगे असुर (बली) सोमके लिये शुक्रवर्ण दशापवित्र (छनना) फैलाते हैं ।

अध क्षपा परिष्कृतो वाजाँ अभि प्र गाहते ।
यदी विवस्वतो धियो हरिं हिन्वन्ति यातवे ॥२॥
तमस्य मर्जयामसि मदो य इन्द्रपातमः ।
यं गाव आसभिर्दधुः पुरा नूनं च सूरयः ॥३॥
तं गाथया पुराण्या पुनानमभ्यनूषत ।
उतो कृपन्त धीतयो देवानां नाम बिभ्रतीः ॥४॥
तमुक्षमाणमव्यये वारे पुनन्ति धर्णसिम् ।
दूतं न पूर्वचित्तय आ शासते मनीषिणः ॥५॥
स पुनानो मदिन्तमः सोमश्चमूषु सीदति ।
पशौ न रेत आदधत् पतिर्वचस्यते धियः ॥६॥
स मृज्यते सुकर्मभिर्देवो देवेभ्यः सुतः ।
विदे यदासु सन्ददिर्महीरपो वि गाहते ॥७॥

---

२ रात्रिके अनन्तर जलके द्वारा अलङ्कृत होकर सोम अन्नोंको लक्ष्य करके जा रहे हैं। सेवक यजमानकी कर्मसाधिका अँगुलियाँ हरितवर्ण सोमको पात्रमें जानेके लिये प्रेरित करती हैं। तभी सोम सवनोंके लिये जाते हैं।

३ जिस रसका इन्द्र पान करते हैं, सोमके उसी रसको हम सुशोभित करते हैं। गमनशील स्तोता लोग पहले और इस समय सोमरसको पीते हैं।

४ उन शोधित सोमको प्राचीन गाथाओंके द्वारा स्तोता लोग स्तुत करते हैं। इधर-उधर जानेवाली अंगुलियाँ देवोंको सोम-रूप हवि देनेमें समर्थ हैं।

५ जलसे सिक्त और सर्वधारक सोमको यजमान मेषलोममय पवित्रपर शोधित करते हैं। मेधावी यजमान सोमकी, दूतके समान, देवोंकी सूचनाके लिये, प्रार्थना करते हैं।

६ अतीव मदकर सोम, शोधित होकर, चमसोंपर बैठते हैं। जैसे साँड़ गायमें रेत देता है, वैसे ही सोम चमसोंपर रस देते हैं। सोम कर्मके स्वामी हैं। वह अभिषुत होते हैं।

७ देवोंके लिये अभिषुत और प्रकाशमान सोमको ऋत्विक् लोग शोधित करते हैं। जब सोम प्रजामें धनदाता जाने जाते हैं, तब महान् जलमें स्नान करते हैं।

सुत इन्दो पवित्र आ नृभिर्यतो वि नीयसे ।
इन्द्राय मत्सरिन्तमश्चमूष्वा नि षीदसि ॥८॥

१०० सूक्त

पवमान सोम देवता । रेभ और सूनु ऋषि । अनुष्टुप् छन्द ।

अभी नवन्ते अद्रुहः प्रियमिन्द्रस्य काम्यम् ।
वत्सं न पूर्व आयुनि जातं रिहन्ति मातरः ॥१॥
पुनान इन्दवा भर सोम द्विबर्हसं रयिम् ।
त्वं वसूनि पुष्यसि विश्वानि दाशुषो गृहे ॥२॥
त्वं धियं मनोऽयुजं सृजा वृष्टिं न तन्यतुः ।
त्वं वसूनि पार्थिवा दिव्या च सोम पुष्यसि ॥३॥
परि ते जिग्युषो यथा धारा सुतस्य धावति ।
रंहमाणा व्यव्ययं वारं वाजीव सानसिः ॥४॥

८ सोम, अभिषुत और सर्वत्र विस्तृत होकर तुम ऋत्विकोंके द्वारा छनने (पवित्र) में भली भाँति लाये जाते हो । अतीव मदकर तुम इन्द्रके लिये चमसोंपर बैठते हो ।



१ जैसे गायें प्रथम आयुमें उत्पन्न बछड़ेको चाटती हैं, वैसे ही द्रोह-शून्य जल इन्द्रके प्रिय और सबके अभिलषणीय सोमके पास जाता है ।

२ दीप्यमान सोम, शोधित होकर तुम दोनों लोकोंमें बढ़नेवाले धनको हमारे लिये ले आओ । तुम यजमानके घरमें रहकर, हविर्दाता यजमानके सारे धनोंकी रक्षा करते हो ।

३ सोम, तुम मनोवेगके समान धाराको उसी प्रकार बनाओ, जिस प्रकार मेघ वृष्टिको बनाता है । सोम, तुम पार्थिव और द्युलोकोत्पन्न धन देते हो ।

४ शत्रुजेता शूरका अश्व जैसे युद्धमें दौड़ता है, वैसे ही तुम्हारी भजनीय और वेग-वाली धारा मेषलोममय पवित्रपर दौड़ती है ।

कृत्वे दक्षाय नः कवे पवस्व सोम धारया।
इन्द्राय पातवे सुतो मित्राय वरुणाय च ॥५॥
पवस्व वाजसातमः पवित्रे धारया सुतः।
इन्द्राय सोम विष्णवे देवेभ्यो मधुमत्तमः ॥६॥
त्वां रिहन्ति मातरो हरिं पवित्रे अद्रुहः।
वत्सं जातं न धेनवः पवमान विधर्मणि ॥७॥
पवमान महि श्रवश्चित्रेभिर्यासि रश्मिभिः।
शर्धन्तमांसि जिघ्नसे विश्वानि दाशुषो गृहे ॥८॥
त्वं द्यां च महिव्रत पृथिवीं चाति जभ्रिषे।
प्रति द्रापिममुञ्चथाः पवमान महित्वना ॥९॥



५ क्रान्तदर्शी सोम, इन्द्र, मित्र और वरुणके पानके लिये अभिषुत तुम हमारे ज्ञान और बलके लिये धारासे बहो।

६ सोम, अत्यन्त अन्नदाता और अभिष्रुत तुम पवित्रमें धारासे गिरो। सोम, तुम इन्द्र, विष्णु और अन्य देवोंके लिये मधुर बनो।

७ सोम, जैसे बछड़ोंको गायें चाटती हैं, वैसे ही हविर्धारक यज्ञमें द्रोह-शून्य और मातरूप जल हरितवर्ण तुम्हें चाटता है।

८ सोम, तुम महान् और श्रवणीय अन्तरीक्षको नानाविध किरणोंके साथ जाते हो। वेगवान् तुम हविर्दाता यजमानके गृहमें रहकर सारे अन्धकारोंको नष्ट करते हो।

९ महान् कर्मवाले सोम, तुम द्यावापृथिवीको धारण करते हो। क्षरणशील सोम, महिमासे युक्त होकर तुम कवचको धारण करते हो।

चतुर्थ अध्याय समाप्त

पञ्चम अध्याय

१०१ सूक्त

पवमान सोम देवता । १—३ तकके श्यावाश्वके पुत्र अंध्रिगु, ४—६ तकके नहुष-पुत्र ययाति, ७—९ तकके मनु-पुत्र नहुष, १०—१२ तकके सांवरणके पुत्र मनु और १३—१६ तकके वाक्पुत्र विश्वामित्र वा प्रजापति ऋषि हैं । गायत्री और अनुष्टुप् छन्द ।

पुरोजिती वो अन्धसः सुताय मादयित्नवे ।
अप श्वानं श्नथिष्टन सखायो दीर्घजिह्व्यम् ॥१॥
यो धारया पावकया परिप्रस्यन्दते सुतः ।
इन्दुरश्वो न कृत्व्यः ॥२॥
तं दुरोषमभी नरः सोमं विश्वाच्या धिया ।
यज्ञं हिन्वन्त्यद्रिभिः ॥३॥
सुतासो मधुमत्तमाः सोमा इन्द्राय मन्दिनः ।
पवित्रवन्तो अक्षरन्देवान् गच्छन्तु वो मदाः ॥४॥

---

१ मित्रो, अग्रे स्थित भक्षणीय (अन्न) सोमके अभिषुत और अत्यन्त मदकर रसके लिये लम्बी जीभवाले कुत्ते वा राक्षसको अलग करो—वह चाटने न पावे ।

२ अभिषुत और कर्मनिष्ठ सोम पाप-शोधक धारासे चारों ओर वैसे ही क्षरित होते हैं, जैसे वेगसे घोड़ा जाता है ।

३ ऋत्विक् लोग दुर्द्धर्ष और भजनीय सोमको, सारी लालसाओंकी इच्छासे, पत्थरोंसे अभिषुत करते हैं ।

४ अतीव मधुर, मदकर और अभिषुत सोम पवित्रमें रहकर इन्द्रके लिये पात्रोंमें क्षरित होते हैं । सोम, तुम्हारा मदकर रस इन्द्रादिके पास जाय ।

इन्दुरिन्द्राय पवत इति देवासो अब्रुवन् ।
वाचस्पतिर्मखस्यते विश्वस्येशान ओजसा ॥५॥
सहस्रधारः पवते समुद्रो वाचमीङ्खयः ।
सोमः पती रयीणां सखेन्द्रस्य दिवेदिवे ॥६॥
अयं पूषा रयिर्भगः सोमः पुनानो अर्षति ।
पतिर्विश्वस्य भूमनो व्यख्यद्रोदसी उभे ॥७॥
समु प्रिया अनूषत गावो मदाय घृष्वयः ।
सोमासः कृण्वते पथः पवमानास इन्दवः॥ ८॥
य ओजिष्ठस्तमा भर पवमान श्रवाय्यम् ।
यः पञ्च चर्षणीरभि रयिं येन वनामहे ॥९॥
सोमाः पवन्त इन्दवोऽस्मभ्यं गातुवित्तमाः ।
मित्राः सुवाना अरेपसः स्वाध्यः स्वर्विदः ॥१०॥
सुष्वाणासो व्यद्रिभिश्चिताना गोरधि त्वचि ।
इषमस्मभ्यमभितः समस्वरन् वसुविदः ॥११॥

---

५ सोम इन्द्रके लिये क्षरित होते हैं—देवता लोग ऐसा स्तोत्र करते हैं। स्तुतियोंके पालक, शब्द-कारी और अपने बलके द्वारा संसारके प्रभु सोम अतिथियोंके द्वारा पूजाकी अभिलाषा करते हैं।

६ अनेक धाराओंवाले सोम क्षरित होते हैं। सोमसे रस बहता है। सोम स्तुतियोंके प्रेरक हैं, धनके प्रभु हैं और इन्द्रके सखा हैं।

७ पोषक, भजनीय और धन-कारण सोम, शोधित होकर गिरते हैं। सारे प्राणियोंके स्वामी सोम अपने तेजसे द्यावापृथवीको प्रकाशित करते हैं।

८ सोमके मदके लिये प्रिय गायें शब्द करती हैं। शोधित सोम रक्षणके लिये मार्ग बना रहे हैं।

९ सोम, तुम्हारा जो ओजस्वी और चमत्कार-पूर्ण रस है, उसे क्षरित करो। रस पाँचो वर्णोंके पास रहता है। उस रससे हम धन प्राप्त करें।

१० पथ-प्रदर्शक, देवोंके मित्र, अभिषुत, पाप-शून्य, दीप्त, शोभन-ध्यान और सर्वज्ञ सोम हमारे लिये आ रहे हैं।

११ गोचर्मपर उत्पन्न, पत्थरोंसे भली भाँति अभिषुत और धनके प्रापक सोम चारो ओर शब्द करते हैं।

एते पूता विपश्चितः सोमासो दध्याशिरः ।
सूर्यासो न दर्शतासो जिगत्नवो ध्रुवा घृते ॥१२॥
प्र सुन्वानस्यान्धसो मर्तो न वृत तद्वचः ।
अप श्वानमराधसं हता मखं न भृगवः ॥१३॥
आ जामिरत्के अव्यत भुजे न पुत्र ओण्योः ।
सरज्जारो न योषणां वरो न योनिमासदम् ॥१४॥
स वीरो दक्षसाधनो वि यस्तस्तम्भ रोदसी ।
हरिः पवित्रे अव्यत वेधा न योनिमासदम् ॥१५॥
अव्यो वारेभिः पवते सोमो गव्ये अधि त्वचि ।
कनिक्रदद्वृषा हरिरिन्द्रस्याभ्येति निष्कृतम् ॥१६॥

---

१२ पवित्रमें शोधित, मेधावी, दधि-मिश्रित, जलमें गमनशील और स्थिरतासे वर्त्तमान सोम, सूर्यके समान, पात्रोंमें दर्शनीय होते हैं।

१३ अभिषुत और पीने योग्य सोमका प्रसिद्ध घोष कर्मविघ्नकर्त्ता कुत्तेका विनाश करे। स्तोताओ, नम्रता-शून्य उस कुत्तेको उसी प्रकार मारो, जिस प्रकार भृगुओंने प्राचीन कालमें मख नामक व्यक्तिका वध किया था।

१४ जैसे रक्षक माता-पिताकी बाँहोंमें पुत्र कूद पड़ता है, वैसे ही देवोंके मित्र सोम आच्छादक पवित्रमें ढल पड़ते हैं। जैसे जार व्यभिचारिणी स्त्रीकी प्राप्तिके लिये जाता है, वैसे ही सोम अपने स्थान कलसमें जाते हैं।

१५ बलसाधन वह सोम शक्तिमान् हैं। सोम अपने तेजसे द्यावापृथिवीको आच्छादित करते हैं। जैसे विधाता यजमान अपने गृहमें जाता है, वैसे ही हरित-वर्ण सोम अपने कलसमें सम्बद्ध होते हैं।

१६ सोम मेषलोममय पवित्रसे कलशमें जाते हैं। गोचर्मपर शब्दायमान, काम-वर्षक और हरितवर्ण साम इन्द्रके संस्कृत स्थानको जाते हैं।

१०२ सूक्त

पवमान सोम देवता। आप्त्यके पुत्र त्रित ऋषि। उष्णिक् छन्द।

क्राणा शिशुर्महीनां हिन्वन्नृतस्य दीधितिम्।
विश्वा परि प्रिया भुवदध द्विता ॥१॥
उप त्रितस्य पाष्योरभक्त यद्गुहा पदम्।
यज्ञस्य सप्त धामभिरध प्रियम् ॥२॥
त्रीणि त्रितस्य धारया पृष्ठेष्वेरया रयिम्।
मिमीते अस्य योजना वि सुक्रतुः ॥३॥
जज्ञानं सप्त मातरो वेधामशासत श्रिये।
अयं ध्रुवो रयीणां चिकेत यत् ॥४॥
अस्य व्रते सजोषसो विश्वे देवासो अद्रुहः ॥
स्पार्हा भवन्ति रन्तयो जुषन्त यत् ॥५॥
यमी गर्भमृतावृधो दृशे चारुमजीजनन्।
कविं मंहिष्ठमध्वरे पुरुस्पृहम् ॥६॥

---

१ यज्ञ-कर्त्ता और पूजनीय जलके पुत्र सोम यज्ञ-धारक रसको प्रेरित करते हुए समस्त प्रिय हविको व्याप्त करते हैं। सोम द्यावापृथिवीमें रहते हैं।

२ त्रितके यज्ञमें, हविर्द्धानमें, वर्त्तमान और पाषणके समान सुदृढ़ अभिषवण-फलकपर सोम गये। ऋत्विक् लोग यज्ञ-धारक सात गायत्री आदि छन्दोंमें प्रिय सोमकी स्तुति करते हैं।

३ सोम, त्रितके यज्ञके तीनों सवनोंमें प्रवाहित होओ। सामगानके समय दाता इन्द्रको ले आओ। बुद्धिमान् स्तोता इन्द्रका योजक स्तोत्र करता है।

४ प्रादुर्भूत और कर्मधारक सोमको, यजमानोंके ऐश्वर्यके लिये, मातृरूप गंगा आदि सात नदियाँ वा सात छन्द प्रशंसित करते हैं। सोम धनके निश्चित ज्ञाता हैं।

५ समस्त द्रोह-शून्य देवता सोमके कर्ममें मिलकर अभिलाषी होते हैं। रमणशील देवता आमप्लुत सोमकी सेवा करते हैं।

६ यज्ञ-वर्द्धक वसतीवरी-जलने गर्भ-रूप सोमको यज्ञमें, दर्शनार्थ, उत्पन्न किया। सोम सबके कल्याणदाता, क्रान्तप्रज्ञ, पूज्य और बहुतोंके अभिलषणीय हैं।

समीचीने अभि त्मना यह्वी ऋतस्य मातरा ।
तन्वाना यज्ञमानुषग्यदञ्जते ॥७॥
क्रत्वा शुक्रेभिरक्षभिर्ऋणोरप व्रजं दिवः ।
हिन्वन्नृतस्य दीधितिं प्राध्वरे ॥८॥

—०—

१०३ सूक्त

पवमान सोम देवता । आप्त्य त्रित ऋषि । उष्णिक् छन्द ।

प्र पुनानाय वेधसे सोमाय वच उद्यतम् ।
भृतिं न भरा मतिभिर्जुजोषते ॥१॥
परिवाराण्यव्यया गोभिरञ्जानो अर्षति ।
त्री षधस्था पुनानः कृणुते हरिः ॥२॥
परि कोशं मधुश्चुतमव्यये वारे अर्षति ।
अभि वाणीर्ऋषीणां सप्त नूषत ॥३॥

---

७ परस्पर संगत, महान् और सत्य-यज्ञकी मातृ-रूप द्यावापृथिवीके पास सोम स्वयं आगमन करते हैं। याज्ञिक पुरोहित लोग सोमको जलमें मिलाते हैं ।

८ सोम, ज्ञान, दीप्त इन्द्रियों और अपने तेजसे द्युलोकसे अन्धकार-समूहको नष्ट करो । तुम हिंसा-शून्य यज्ञमें, अपने सत्य-धारक रसको प्रेरित करते हो ।

---

१ त्रित, तुम पवित्रसे शोधित, कर्म-विधाता और स्तोताओंके साथ प्रसन्नता-दायक सोम-के लिये वैसे ही उद्यत वचन कहो, जैसे नौकर वेतन पाता है ।

२ गोदुग्धमें मिश्रित सोम मेषलोममय पवित्रमें जाते हैं । हरितवर्ण सोम, शोधित होकर द्रोणकलश, आधवनीय और पूतभृत् आदि तीन स्थानोंको बनाते हैं ।

३ सोम मेषलोममय पवित्रसे मधुर रसको चुलानेवाले द्रोणकलसमें अपना रस भेजते हैं। सातो छन्द सोमकी स्तुति करते हैं ।

परि णेता मतीनां विश्वदेवो अदाभ्यः ।
सोमः पुनानश्चम्वोर्विशद्धरिः ॥४॥
परि दैवीरनु स्वधा इन्द्रेण याहि सरथम् ।
पुनानो वाघद्वाघद्भिरमर्त्यः ॥५॥
परि सप्तिर्न वाजयुर्देवो देवेभ्यः सुतः ।
व्यानशिः पवमानो विधावति ॥६॥

७ अनुवाक । १०४ सूक्त

पवमान सोम देवता । कश्यप-पुत्र पर्वत और नारद ऋषि । उष्णिक् छन्द ।

सखाय आ निषीदत पुनानाय प्रगायत । शिशुं न यज्ञैः परिभूषत श्रिये ॥१॥
समी वत्सं न मातृभिः सृजता गयसा धनम् ।
देवाव्यं मदमभि द्विशवसम् ॥२॥

४ स्तुतियोंके नेता, सबके देव, हरित-वर्ण और शोधित सोम अभिषवण-फलकोंपर बैठते हैं । अभिषव हो जानेपर इन्द्रादि सब देवता अहिंसनीय सोमके पास जाते हैं ।

५ सोम, तुम इन्द्रके समान रथपर चढ़कर देव-सेनाके पास जाओ । ऋत्विकोंके द्वारा शोधित और अमर सोम स्तोताओंको धन आदि देते हैं ।

६ अश्वके समान युद्धाभिलाषी दीप्यमान, देवोंके लिये अभिषुत, पात्रोंमें व्यापक और पवित्रसे शोधित सोम चारों ओर दौड़ते हैं ।

१ मित्र पुरोहितो, बैठो और शोधित सोमके लिये गाओ । अभिषुत सोमका यज्ञीय हवि आदिसे, शोभाके लिये, वैसे ही अलङ्कृत करो, जैसे बच्चोंको गहनोंसे माँ-बाप विभूषित करते हैं ।

२ ऋत्विको, गृह-साधन, देवोंके रक्षक, मद-कारण और अतीव बली सोमको मातृ-रूप जलमें वैसे ही मिलाओ, जैसे बछड़ेको गायसे मिलाया जाता है ।

पुनाता दक्षसाधनं यथा शर्धाय वीतये
यथा मित्राय वरुणाय शन्तमः ॥३॥
अस्मभ्यं त्वा वसुविदमभि वाणीरनूषत ।
गोभिष्टे वर्णमभि वासयामसि ॥४॥
स नो मदानां पत इन्दो देवप्सरा असि ।
सखेव सख्ये गातुवित्तमो भव ॥५॥
सनेमि कृध्यस्मदा रक्षसं कं चिदत्रिणम
अपादेवं द्वयुमंहो युयोधिनः ॥६॥



१०५ सूक्त

पवमान सोम देवता। ऋषि और छन्द पूर्ववत्।

तं वः सखायो मदाय पुनानमभिगायत ।
शिशुं न यज्ञैः स्वदयन्त गूर्तिभिः ॥१॥

३ बल-साधन सोमको पवित्रमें शोधित करो। सोम वेग, देवोंके पान तथा मित्र और वरुणके पानके लिये अतीव सुख देते हैं।

४ सोम, हमें दान दिलानेके लिये धनदाता तुम्हें हमारी वाणी स्तुत करती है। हम तुम्हारे आवरक रसको गोदुग्धमें मिलाते हैं।

५ मदके स्वामी सोम, तुम्हारा रूप दीप्त है। जैसे मित्र मित्रको सच्चा मार्ग बताता है, वैसे ही तुम हमारे मार्ग-ज्ञापक बनो।

६ सोम, हमारे साथ पुरानी मैत्री करो। उद्दण्ड, बाहर और भीतर मायावाले तथा पेटू राक्षसको मारो और हमारे पापको काटो।

---

१ मित्र पुरोहितो, देवोंके मदके लिये सोमको स्तुति करो। जैसे शिशुको अलङ्कृत किया जाता है, वैसे ही गोदुग्ध और स्तुति आदिसे सोमको विभूषित किया जाता है।

सं वत्सइव मातृभिरिन्दुर्हिन्वानो अज्यते।
देवावीर्मदो मतिभिः परिष्कृतः ॥२॥

अयं दक्षाय साधनोऽयं शर्धाय वीतये। अयं देवेभ्यो मधुमत्तमः सुतः ॥३॥

गोमन्न इन्दो अश्ववत् सुतः सुदक्ष धन्व।
शुचिं ते वर्णमधि गोषु दीधरम् ॥४॥

स नो हरीणां पत इन्दो देवप्सरस्तमः।
सखेव सख्ये नर्यो रुचे भव ॥५॥

सनेमि त्वमस्मदाँ अदेवं कंचिदत्रिणम्।
साह्वाँ इन्दो परि बाधो अप द्वयुम् ॥६॥

१०६ सूक्त

पवमान सोम देवता। १—३ तकके चक्षुः पुत्र अग्नि, ४—६ तकके मनु-पुत्र चक्षु, ७—९ तकके अप्सु-पुत्र मनु और शेषके अग्नि ऋषि उष्णिक् छन्द।

इन्द्रमच्छ सुता इमे वृषणं यन्तु हरयः।
श्रुष्टी जातास इन्दवः स्वर्विदः ॥१॥

---

२ सेना-रक्षक, मदकर, स्तुतियोंके द्वारा अलङ्कृत और प्रेरित सोम जलके द्वारा वैसे ही मिश्रित किये जाते हैं, जैसे माता गौके द्वारा बछड़ा मिलाया जाता है।

३ सोम बलके साधक हैं। वेग और देवोंके भक्षणके लिये अभिषुत सोम अत्यन्त मधुर होते हैं।

४ सुन्दर बलवाले सोम, अभिषुत होकर तुम यज्ञ-साधक तथा गौ और अश्वसे युक्त धन ले आओ। मैं तुम्हारे रसको दुग्ध आदिमें मिलाता हूँ।

५ हमारे हरित-वर्ण पशुओंके स्वामी सोम, अत्यन्त दीप्त रूपसे युक्त और ऋत्विकोंके द्वारा नियुक्त तुम हमारे लिये दीप्त किरणोंवाले बनो।

६ सोम, तुम हमसे पुरानी मैत्री करो। देव-शून्य और पेटू राक्षसको हमसे अलग करो। सोम, शत्रुओंको हराते हुए बाधकोंको ताड़ित करो। बाह्य और आभ्यन्तरकी मायाओंसे युक्त राक्षसको हमसे दूर करो।

---

१ शीघ्रज्ञाता, पात्रोंमें क्षरणशील, सर्वज्ञ हरितवर्ण, अभिषुत और काम-सेचक सोम इन्द्रके पास जायँ।

अयं भराय सानसिरिन्द्राय पवते सुतः ।
सोमो जैत्रस्य चेतति यथा विदे ॥२॥
अस्येदिन्द्रो मदेष्वा ग्राभं गृभ्णीत सानसिम् ।
वज्रं च वृषणं भरत् समप्सुजित् ॥३॥
प्र धन्वा सोम जागृविरिन्द्रायेन्दो परि स्रव ।
द्युमन्तं शुष्ममा भरा स्वर्विदम् ॥४॥
इन्द्राय वृषणं मदं पवस्व विश्वदर्शतः ।
सहस्रयामा पथिकृद्विचक्षणः ॥५॥
अस्मभ्यं गातुवित्तमो देवेभ्यो मधुमत्तमः ।
सहस्रं याहि पथिभिः कनिक्रदत् ॥६॥
पवस्व देववीतय इन्दो धाराभिरोजसा ।
आ कलशं मधुमान्त्सोम नः सदः ॥७॥

२ संग्रामके लिये आश्रयणीय और अभिषुत सोम इन्द्रके लिये क्षरित होते हैं। जैसे संसार इन्द्रको जानता है, वैसे ही जयशील इन्द्रको सोम जानते हैं।

३ सोमका मद उत्पन्न होनेपर इन्द्र सबके भजनीय और ग्रहणीय धनुष्को धारण करते हैं। अन्तरीक्षमें "अहि" के जेता इन्द्र वर्षक वज्रको धारण करते हैं।

४ सोम, तुम जागरणशील हो। क्षरित होओ। सोम, इन्द्रके किये पात्रोंमें क्षरित होओ। दीप्ति-युक्त, सर्वज्ञ और शत्रु-शोधक बलको ले आओ।

५ तुम सबके दर्शनीय, बहुमार्ग, यजमानोंके सन्मार्गकर्त्ता और सबके द्रष्टा सोम, तुम वर्षक और मद-कारण रस, इन्द्रके लिये क्षरित होओ

६ सोम, अतीव मार्गप्रदर्शक, देवोंके लिये मधुर और शब्दायमान तुम अनेक मार्गोंसे कलसमें जाओ।

७ सोम, देवोंके भक्षणके लिये बल-पूर्वक धाराओंके द्वारा क्षरित होओ। सोम, तुम मदकर रसवाले हो। कलसपर बैठो।

तव द्रप्सा उदप्रुत इन्द्र मदाय वावृधुः ।
त्वां देवासो अमृताय कं पपुः ॥८॥
आ नः सुतास इन्दवः पुना धावत रयिम् ।
वृष्टिद्यावो रीत्यापः स्वर्विदः ॥९॥
सोमः पुनान ऊर्मिणाव्यो वारं वि धावति ।
अग्रे वाचः पवमानः कनिक्रदत् ॥१०॥
धीभिर्हिन्वन्ति वाजिनं वने क्रीलन्तमत्यविम् ।
अभि त्रिपृष्ठं मतयः समस्वरन् ॥११॥
असर्जि कलशाँ अभि मीह्ले सप्तिर्न वाजयुः ।
पुनानो वाचं जनयन्नसिष्यदत् ॥१२॥
पवते हर्यतो हरिरति ह्वरांसि रंह्या । अभ्यर्षन्स्तोतृभ्यो वीरवद्यशः ॥१३॥
अया पवस्व देवयुर्मधोर्धारा असृक्षत ।
रेभन् पवित्रं पर्येषि विश्वतः ॥१४॥

---

८ तुम्हारा जलसे बहनेवाला रस इन्द्रको वर्द्धित करता है। इन्द्रादि देवता अमर होनेके लिये सुखकर तुम्हें पीते हैं।

९ अभिषव किये जाते हुए और पृथिवीपर जल बरसानेवाले सोम, वृष्टिसे युक्त द्युलोकवाले और सर्वज्ञ सोम, तुम हमारे लिये धन ले आओ।

१० पवित्र, स्तोत्रके आगे शब्द करनेवाले और शोधित सोम अपनी धारासे मेषलोममय पवित्रमें जाते हैं।

११ बली, जलमें क्रीड़ा करनेवाले और पवित्रको लाँघनेवाले सोमको स्तोता लोग, स्तुतिके द्वारा, वर्द्धित करते हैं। तीन सवनोंवाले सोमकी स्तुतियाँ स्तुति करती हैं।

१२ जैसे अश्व युद्धमें प्रस्तुत किया जाता है, वैसे ही अन्नाभिलाषी सोमको कलसमें बनाया जाता है। शोधित सोम शब्द करते हुए पात्रोंमें चूते हैं।

१३ श्लाघनीय और हरितवर्ण सोम साधु वेगसे कुटिल पवित्रको लाँघकर जाते हैं। सोम स्तोताओंको पुत्र-युक्त यश दे रहे हैं।

१४ सोम, देवाभिलाषी होकर तुम धारासे क्षरित होओ। तुम्हारी मदकरी धाराएँ बनायी जाती हैं। शब्दायमान सोम पवित्रकी चारो ओर जाते हैं।

—:०:—

१०७ सूक्त

पवमान सोम देवता। भरद्वाज, कश्यप आदि सात ऋषि। बृहती, सतोबृहती, विराट्, द्विपदा आदि छन्द।

परीतो षिंचता सुतं सोमो य उत्तमं हविः।
दधन्वाँ यो नर्यो अप्स्वन्तरा सुषाव सोममद्रिभिः ॥१॥

नूनं पुनानोऽविभिः परि स्रवादब्धः सुरभिन्तरः।
सुते चित्त्वाप्सु मदामो अन्धसा श्रीणन्तो गोभिरुत्तरम् ॥२॥

परि सुवानश्चक्षसे देवमादनः क्रतुरिन्दुर्विचक्षणः ॥३॥

पुनानः सोम धारयापो वसानो अर्षसि।
आ रत्नधा योनिमृतस्य सीदस्युत्सो देव हिरण्ययः ॥४॥

दुहान ऊधर्दिव्यं मधु प्रियं प्रत्नं सधस्थमासदत्।
आ पृच्छ्यं धरुणं वाज्यर्षति नृभिर्धूतो विचक्षणः ॥५॥

---

१ जो सोम देवोंकी उत्तम हवि, मनुष्योंके हितैषी और अन्तरीक्षमें जानेवाले हैं, उन्हें पुरोहितोंने पत्थरोंसे अभिषुत किया। उन अभिषुत सोमको, ऋत्विको, तुम कर्मके अनन्तर जलसे सींचो।

२ सोम, अहिंसनीय सुगन्धि और शोधित सोम, तुम मेषलोममय पवित्रसे क्षरित होओ। अभिषव हो जानेपर दूध आदि और सत्तूमें सोमको मिलाते हुए हम जलमें स्थित तुम्हें भजते हैं।

३ अभिषुत देवोंके तर्पक, कर्त्ता, पात्रोंमें क्षरणशील और सबके द्रष्टा सोम, सबके दर्शनके लिये, क्षरित होते हैं।

४ सोम, शोधित होकर तुम वसती-वरी जलमें मिलाकर धारासे क्षरित होते हो। रत्नदाता तुम सत्य-यज्ञके स्थानमें बैठते हो। दीप्त सोम, तुम स्पन्दनशील और हिरणमय हो।

५ मदकर, प्रसन्नता-कारक और दिव्य गोस्तनको दूहनेवा ; सोम प्राचीन स्थान अन्तरीक्षमें बैठते हैं। कर्मनिष्ठ ऋत्विकोंके द्वारा गृहीत, शोधित और सबके द्रष्टा सोम द्रुतवेगसे यज्ञके अवलम्बन तथा यज्ञकर्त्ता यजमानको अन्न देनेके लिये जाते हैं।

पुनानः सोम जागृविरव्यो वारे परि प्रियः ।
त्वं विप्रो अभवोऽङ्गिरस्तमो मध्वा यज्ञं मिमिक्ष नः ॥६
सोमो मीढ्वान् पवते गातुवित्तम ऋषिर्विप्रो विचक्षणः ।
त्वं कविरभवो देववीतम आ सूर्यं रोहयो दिवि ॥७॥
सोम उ षुवाणः सोतृभिरधि ष्णुभिरवीनाम् ।
अश्वयेव हरिता याति धारया मन्द्रया याति धारया ॥८॥
अनूपे गोमान् गोभिरक्षाः सोमो दुग्धाभिरक्षाः ।
समुद्रं न संवरणान्यग्मन्मन्दी मदाय तोशते ॥९॥
आ सोम सुवानो अद्रिभिस्तिरो वाराण्यव्यया ।
जनो न पुरि चम्वोर्विशद्धरिः सदो वनेषु दधिषे ॥१०॥
स मामृजे तिरो अण्वानि मेष्यो मीह्ळे सप्तिर्न वाजयुः ।
अनुमाद्यः पवमानो मनीषिभिः सोमो विप्रेभिर्ऋक्वभिः ॥११॥

६ सोम, जागरणशील, प्रिय और शोधित तुम मेषलोममय पवित्रमें क्षरित होते हो। तुम मेधावी और पितरोंके नेता हो। हमारे यज्ञको तुम अपने मधुर रससे सींचो।

७ मार्गदर्शक, काम-सेचक, सबके प्रदर्शक, मेधावी और सूक्ष्म दर्शक सोम क्षरित होते हैं। तुम क्रान्तप्रज्ञ और अतीव देवकामी हो। द्युलोकमें सूर्यको प्रकट करते हो।

८ ऋत्विकोंके द्वारा अभिषुत होकर सोम उच्च और मेषलोममय पवित्रमें जाते हैं। अपनी हरितवर्ण और मदकारिणी धारासे सोम द्रोण-कलसमें जाते हैं।

९ गोदुग्धके साथ सोम निम्नस्थ कलसमें क्षरित होते हैं। अपने भिक्षणके लिये सोम दुग्धादिके साथ प्रवाहित होते हैं। जैसे जल समुद्रमें जाता है, वैसे ही संभजनीय और रस-रूप अन्न द्रोण-कलसमें जाता है। मदकर सोम, मदके लिये, अभिषुत किये जाते हैं।

१० पत्थरोंसे अभिषुत होकर तुम मेषलोममय पवित्रका व्यवधान करके क्षरित होते हो। हरित-वर्ण सोम अभिषवण फलकोंके ऊपर स्थित कलसमें वैसे ही पैठते हैं, जैसे मनुष्य नगरमें पैठता है। काष्ठ-निर्मित पात्रोंमें तुम स्थान बनाते हो।

११ अन्नाभिलाषी सोम सूक्ष्म मेषलोममय पवित्रका व्यवधान करके क्षरित होते हैं। अनु-मोदनके योग्य, पुरोहितोंके द्वारा शोधित, मेधावीके द्वारा अभिषुत और हरितवर्ण सोम वैसे ही शोधित किये जाते हैं, जैसे लोग जयाभिलाषी अश्वको युद्धमें विभूषित करते हैं।

प्र सोम देववीतये सिन्धुर्न पिप्ये अर्णसा ।
अंशोः पयसा मदिरो न जागृविरच्छा कोशं मधुश्चुतम् ॥१२॥
आ हर्यतो अर्जुने अत्के अव्यत प्रियः सूनुर्न मर्ज्यः ।
तमीं हिन्वन्त्यपसो यथा रथं नदीष्वा गभस्त्योः ॥१३॥
अभि सोमास आयवः पवन्ते मद्यं मदम् ।
समुद्रस्याधि विष्टपि मनीषिणो मत्सरासः स्वर्विदः ॥१४॥
तरत्समुद्रं पवमान ऊर्मिणा राजा देव ऋतं बृहत् ।
अर्षन्मित्रस्य वरुणस्य धर्मणा प्र हिन्वान ऋतं बृहत् ॥१५॥
नृभिर्येमानो हर्यतो विचक्षणो राजा देवः समुद्रियः ॥१६॥
इन्द्राय पवते मदः सोमो मरुत्वते सुतः ।
सहस्रधारो अत्यव्यमर्षति तमी मृजन्त्यायवः ॥१७॥

---

१२ सोम, देवोंके पानके लिये तुम वैसे ही जलसे पूरित किये जाते हो, जैसे जलसे समुद्र पूर्ण किया जाता है। मदकर और जागरणशील तुम लताके रससे रस चुलानेवाले द्रोणकलसमें जाते हो।

१३ स्पृहणीय, प्रसन्नता-कारक और पुत्रके समान शोधनीय सोम शुक्लवर्ण पवित्रको ढकते हैं। जैसे वेगशाली मनुष्य युद्धमें रथको प्रेरित करते हैं, वैसे ही जलमें दोनों हाथोंकी अँगुलियाँ सोमको प्रेरित करती हैं।

१४ गमनशील सोम अपना मदकर रस चारों ओर प्रवाहित करते हैं। अन्तरीक्षके अत्युच्च पवित्रमें विद्वान्, मदकर और सबके प्रापक सोम रस प्रवाहित करते हैं।

१५ शोधित, दिव्य और अतीव सत्य-राजा सोम कलसमें, धारासे क्षरित होते हैं। प्रेरित और अत्यन्त सत्य सोम मित्र और वरुणके रक्षणके लिये जाते हैं।

१६ कर्मनिष्ठोंके द्वारा नियत, स्पृहणीय, सूक्ष्म दर्शक, दिव्य, अन्तरीक्षमें उत्पन्न और राजा सोम इन्द्रके लिये क्षरित होते हैं।

१७ मदकर और अभिषुत सोम इन्द्रके लिये क्षरित होते हैं। अनेक धाराओंवाले सोम मेषलोममय पवित्रको लाँघते हैं। पुरोहित लोग सोमका शोधन कर रहे हैं।

पुनानश्चमू जनयन्मतिं कविः सोमो देवेषु रण्यति ।
अपो वसानः परि गोभिरुत्तरः सीदन्वनेष्वव्यत ॥१८॥
तवाहं सोम रारण सख्य इन्दो दिवेदिवे ।
पुरूणि बभ्रो नि चरन्ति मामव परिधीँ रति इहि ॥१९॥
उताहं नक्तमुत सोम ते दिवा सख्याय बभ्र ऊधनि ।
घृणा तपन्तमति सूर्यं परः शकुनाइव पप्तिम ॥२०॥
मृज्यमानः सुहस्त्य समुद्रे वाचमिन्वसि ।
रयिं पिशङ्गं बहुलं पुरुस्पृहं पवमानाभ्यर्षसि ॥२१
मृजानो वारे पवमानो अव्यये वृषाव चक्रदो वने ।
देवानां सोम पवमान निष्कृतं गोभिरञ्जानो अर्षसि ॥२२॥
पवस्व वाजसातयेऽभि विश्वानि काव्या ।
त्वं समुद्रं प्रथमो वि धारयो देवेभ्यः सोम मत्सरः ॥२३॥

---

१८ अभिषवण-फलकोंपर शोध्यमान, स्तुतिके उत्पादक और क्रान्तप्रज्ञ सोम इन्द्रादिके पास जाते हैं। जलमें मिलकर और काष्ठ-पात्रोंमें बैठकर उत्कृष्टतर सोम दुग्ध आदिमें मिलाये जाते हैं।

१९ सोम, तुम्हारी मैत्रीमें मैं अनुदिन रमण करता हूं। पिङ्गलवर्ण सोम, तुम्हारे मित्र मुझे अनेक राक्षस बाधा देते हैं। उन्हें मारो।

२० पिङ्गलवर्ण सोम, तुम्हारी मैत्रीके लिये मैं दिन-रात रमण करता हूं। प्रदीप्त हम उज्ज्वल और परम स्थानमें स्थित सूर्यरूप तुम्हें प्राप्त करनेकी चेष्टा करते हैं। जैसे चिड़ियाँ सूर्यका अतिक्रम करती हैं, वैसे ही हम तुम्हारे निकट जानेमें व्यस्त हैं।

२१ शोभन अङ्गुलिवाले सोम, शोध्यमान तुम अन्तरीक्षमें (कलसमें) शब्द भेजते हो। पवमान सोम, स्तोताओंको तुम पिङ्गलवर्ण और बहुतोंके द्वारा स्पृहणीय धन दो।

२२ सोम, वर्षक और जलमें विभूषित तथा मेषलोमके पवित्रमें शोधित सोम जलमें वा कलसमें शब्द करते हैं। सोम, दुग्धमें मिश्रित होकर तुम संस्कृत स्थानमें जाते हो।

२३ सोम, सारे स्तोत्रोंको लक्ष्य करके अन्नलाभके लिये क्षरित होओ। सोम, देवोंके मदकर और उनमें मुख्य तुम कलसको धारण करते हो।

स तू पवस्व परि पार्थिवं रजो दिव्या च सोम धर्मभिः ।
त्वां विप्रासो मतिभिर्विचक्षण शुभ्रं हिन्वन्ति धीतिभिः ॥२४॥
पवमाना असृक्षत पवित्रमति धारया ।
मरुत्वन्तो मत्सरा इन्द्रिया मेधामभि प्रयांसि च ॥२५॥
अपो वसानः परि कोशमर्षतीन्दुर्हियानः सोतृभिः ।
जनयञ्ज्योतिर्मन्दना अवीवशद्गाः कृण्वानो न निर्णिजम् ॥२६॥

१०८ सूक्त

पवमान सोम देवता।। गौरवीति, शक्ति, उरु, ऋजिश्वा, ऊर्द्ध्वसद्मा, कृतयशा, ऋणञ्चय आदि ऋषि। ककुप्, अयुक् सतोबृहती, गायत्री आदि छन्द ।

पवस्व मधुमत्तम इन्द्राय सोम क्रतुवित्तमो मदः ।
महि द्युक्षतमो मदः ॥१॥
यस्य ते पीत्वा वृषभो वृषायतेऽस्य पीता स्वर्विदः ।
स सुप्रकेतो अभ्यक्रमीदिषोऽच्छा वाजं नैतशः ॥२॥

२४ सोम, तुम मर्त्यलोक और दिव्यलोकके प्रति धारक पदार्थोंके साथ क्षरित होओ। सूक्ष्मदर्शक सोम, मेधावी लोग स्तुतियों और अङ्गुलियोंके द्वारा श्वेतवर्ण तुम्हें प्रेरित करते हैं।

२५ शोधित, मरुतोंसे युक्त, गमनशील, मदकर और इन्द्रिय-सेवित सोम स्तुति और अन्नको लक्ष्य करके तथा अपनी धारासे पवित्रको लाँघकर बनाये जाते हैं।

२६ जलमें मिलकर और अभिषवकर्त्ताओंके द्वारा प्रेरित सोम कलसमें जाते हैं। दीप्तिका प्रकाश कर और क्षीर आदिको अपना रूप बनाकर सोम इस समय स्तुतिकी इच्छा करते हैं।

१ सोम, तुम अतीव मधुर और मदकर होकर इन्द्रके लिये क्षरित होओ। तुम अतीव पुत्रदाता, महान्, दीप्त और मदकारण हो।

२ काम-वर्षक इन्द्र तुम्हें पीकर वृषभके समान आचरण करते हैं। सबके दर्शक तुम्हारे पानसे सुन्दर ज्ञानी होकर इन्द्र शत्रुओंके अन्नका उसी भाँति अतिक्रमण करते हैं, जिस भाँति अश्व युद्धमें जाता है।

त्वं ह्यङ्ग दैव्या पवमान जनिमानि द्युमत्तमः ।
अमृतत्वाय घोषयः ॥३॥
येना नवग्वो दध्यङ्ङपोर्णुते येन विप्रास आपिरे ।
देवानां सुम्ने अमृतस्य चारुणो येन श्रवांस्यानशुः ॥४॥
एष स्य धारया सुतोऽव्यो वारेभिः पवते मदिन्तमः ।
क्रीळन्नूर्मिरपामिव ॥५॥
य उस्रिया अप्या अन्तरश्मनो निर्गा अकृन्तदोजसा ।
अभि व्रजं तत्निषे गव्यमश्व्यं वर्मीव धृष्णवा रुज ॥६॥
आ सोता परि षिञ्चताश्वं न स्तोममप्तुरं रजस्तुरम् ।
वनक्रक्षमुदप्रुतम् ॥७॥
सहस्रधारं वृषभं पयोवृधं प्रियं देवाय जन्मने ।
ऋतेन य ऋतजातो विवावृधे राजा देव ऋतं बृहत् ॥८॥

३ सोम, अतीव दीप्त देवोंको लक्ष्य करके उनके अमर होनेके लिये शीघ्र शब्द करते हो।

४ अभिनव मार्गसे यज्ञानुष्ठाता अङ्गिराने जिन सोमके द्वारा पणियोंके द्वारा अपहृत गौओंका द्वार खोला था, जिन सोमके द्वारा सारे मेधावियोंने अपहृत गायोंको प्राप्त किया था और जिन सोमके द्वारा इन्द्रादिके सुखमें यज्ञारम्भ होनेपर मङ्गलजनक अमृत-जलके अन्नोंको यजमानोंने प्राप्त किया था, वही सोम देवोंके अमर होनेके लिये शब्द करते हैं।

५ मादकतम जल-सङ्घातके समान क्रीड़ा करनेवाले और अभिषुत सोम मेषलोमके पवित्रसे कलशमें, अपनी धारासे, गिरते हैं।

६ जिन सोमने गमनशील अन्तरीक्षमें स्थित मेघके भीतरसे बलपूर्वक वृष्टि करायी थी, वही सोम गौओं और अश्वोंके समूहको व्याप्त करते हैं। शत्रु-धर्षक सोम, कवचधारी शूरके समान असुरोंको मारो।

७ अश्वके समान वेगशाली, स्तुत्य, अन्तरीक्षके जल प्रेरक, तेजके प्रेरक और जल-वर्षक सोमको ऋत्विको, अभिषुत करो और सींचो।

८ अनेक धाराओंवाले, काम-वर्षक, जलवर्द्धक और प्रिय सोमको, देवोंके लिये, अभिषुत करो। जलसे उत्पन्न, राजा, दिव्य, स्तुत्य और महान् सोम जलसे बढ़ते हैं।

अभि द्युम्नं बृहद्यश इषस्पते दिदीहि देव देवयुः ।
वि कोशं मध्यमं युव ॥९॥
आ वच्यस्व सुदक्ष चम्वोः सुतो विशां वह्निर्न विश्पतिः ।
वृष्टिं दिवः पवस्व रीतिमपां जिन्वा गविष्टये धियः ॥१०॥
एतमुत्यं मदच्युतं सहस्रधारं वृषभं दिवो दुहुः ।
विश्वा वसूनि बिभ्रतम् ॥११॥
वृषा वि जज्ञे जनयन्नमर्त्यः प्रतपञ्ज्योतिषा तमः ।
स सुष्टुतः कविभिर्निर्णिजं दधे त्रिधात्वस्य दंससा ॥१२॥
स सुन्वे यो वसूनां यो रायामानेता य इलानाम् ।
सोमो यः सुक्षितीनाम् ॥१३॥
यस्य न इन्द्रः पिबाद्यस्य मरुतो यस्य वार्यमणा भगः ।
आ येन मित्रावरुणा करामह एन्द्रमवसे महे ॥१४॥

९ अन्नपति और स्तुत्य सोम, देवाभिलाषी होकर तुम दिव्य और प्रचुर अन्न हमें दो। अन्तरीक्षस्थ मेघको, वर्षाके लिये, फाड़ो ।

१० सुन्दर बलवाले सोम, अभिषवण-फलकोंपर अभिषुत होकर तुम राजाके समान सारी प्रजाके वाहक हो। पधारो। द्युलोकसे जलका गमन करो। गवाभिलाषी यजमानके कर्मोंको पूरण करो।

११ मदकर, बहुधार, काम-वर्षक और सारे धनोंके धारक सोमको देवाभिलाषी ऋत्विक् लोग दूहते हैं।

१२ शब्दको उत्पन्न करनेवाले, अपने तेजसे अन्धकारको दूर करनेवाले, काम-वर्षक और अमर सोमको जाना जाता है। मेधावियोंके द्वारा स्तुत सोम मिलाये जाते हैं। तीनों सवनोंमें याज्ञिक कर्म सोमके द्वारा ही धृत होते हैं।

१३ धनों, गायों, अन्नों और सुमनुष्ययुक्त गृहोंके लानेवाले सोम ऋत्विकों द्वारा अभिषुत होते हैं।

१४ उन्हीं सोमका अभिषव किया जाता है, जिन्हें इन्द्र, मरुत्, अर्यमा और भग पीते हैं तथा जिनके द्वारा हम मित्र, वरुण और इन्द्रको अभिमुखीन करते हैं।

इन्द्राय सोम पातवे नृभिर्यतः स्वायुधो मदिन्तमः । पवस्व मधुमत्तमः ॥१५॥
इन्द्रस्य हार्दि सोमधानमा विश समुद्रमिव सिन्धवः ।
जुष्टो मित्राय वरुणाय वायवे दिवो विष्टम्भ उत्तमः ॥१६॥

---

०६ सूक्त

पवमान सोम देवता। ईश्वर-पुत्र अग्नि ऋषि। द्विपदा विराट् छन्द।

परि प्र धन्वेन्द्राय सोम स्वादुर्मित्राय पूष्णे भगाय ॥१॥
इन्द्रस्ते सोम सुतस्य पेयाः क्रत्वे दक्षाय विश्वे च देवाः ॥२॥
एवामृताय महे क्षयाय स शुक्रो अर्ष दिव्यः पीयूषः ॥३॥
पवस्व सोम महान्त्समुद्रः पिता देवानां विश्वाभि धाम ॥४॥
शुक्रः पवस्व देवेभ्यः सोम दिवे पृथिव्यैशं च प्रजायै ॥५॥
दिवो धर्तासि शुक्रः पीयूषः सत्ये विधर्मन्वाजी पवस्व ॥६॥

---

१५ सोम, ऋत्विकोंके द्वारा संयत, सुन्दर आयुधसे युक्त, अतीव मधुर और मदकर होकर तुम इन्द्रके पानके लिये बहो।

१६ सोम, जैसे समुद्रमें नदियाँ पैठती हैं, वैसे ही मित्र, वरुण और वायुके लिये सेवित, द्युलोकके स्तम्भ, सर्वोत्तम और इन्द्रके हृदय-रूप तुम कलसमें पैठो।

१ सोम ७ तुम स्वादु हो। इन्द्र, मित्र, पूषा और भगके लिये क्षरित होओ।

२ प्रज्ञान और बलके लिये अभिषुत तुम्हारे भागका पान इन्द्र करें। सारे देव तुम्हारा पान करें।

३ सोम, तुम प्रदीप्त, दिव्य और देवोंके पानके योग्य हो। अमरण और महान् निवासके लिये क्षरित होओ।

४ सोम, तुम महान् रसोंके प्रवाहक और सबके पालक हो। देवोंके शरीरोंका लक्ष्य करके क्षरित होओ।

५ सोम, दीप्त होकर देवोंके लिये क्षरित होओ और द्यावापृथिवी तथा प्रजाको सुख दो।

६ सोम, तुम दीप्त, पीनेके योग्य (पातव्य) और द्युलोकके धारक हो। बली होकर सत्यभूत यज्ञमें क्षरित हो।

पवस्व सोम द्युम्नी सुधारो महावीनामनु पूर्व्यः ॥७॥
नृभिर्येमानो जज्ञानः पूतः क्षरद्विश्वानि मन्द्रः स्वर्वित् ॥८॥
इन्दुः पुनानः प्रजामुराणः करद्विश्वानि द्रविणानि नः ॥९॥
पवस्व सोम क्रत्वे दक्षायाश्वो न निक्तो वाजी धनाय ॥१०॥
तं ते सोतारो रसं मदाय पुनन्ति सोमं महे द्युम्नाय ॥११॥
शिशुं जज्ञानं हरिं मृजन्ति पवित्रे सोमं देवेभ्य इन्दुम् ॥१२॥
इन्दुः पविष्ट चारुर्मदायापामुपस्थे कविर्भगाय ॥१३॥
बिभर्ति चार्विन्द्रस्य नाम येन विश्वानि वृत्रा जघान ॥१४॥
पिबन्त्यस्य विश्वे देवासो गोभिः श्रीतस्य नृभिः सुतस्य ॥१५॥
प्र सुवानो अक्षाः सहस्रधारस्तिरः पवित्रं वि वारमव्यम् ॥१६॥

---

७ सोम, तुम यशस्वी, शोभन धारावाले और प्राचीन हो। मेषलोमोंसे होकर बहो।

८ कर्मनिष्ठोंके द्वारा नियत, जायमान, पूत पवित्रसे, शोधित प्रसन्न और सर्वज्ञ सोम हमें सारे धन दें।

९ देवोंके वृद्धि-कर्त्ता सोम हमें प्रजा और सारे धन दें।

१० सोम घोड़ोंके समान तुम्हारा मार्जन किया जाता है। वेगशाली तुम ज्ञान, बल और धनके लिये क्षरित होओ।

११ अभिषवकर्त्ता लोग, मदके लिये, तुम्हारे रसको शोधित करते हैं। वे महान् अन्नके लिये सोमका शोधन करते हैं।

१२ जलके पुत्र, जायमान, हरितवर्ण और दीप्त सोमको, देवोंके लिये, ऋत्विक् लोग शोधित करते हैं।

१३ कल्याणरूप और कान्तप्रज्ञ सोम जलके स्थान अन्तरीक्षमें, मद और भजनीय धनके लिये, क्षरित होते हैं।

१४ सोम इन्द्रके कल्याणकर शरीरका धारण करते हैं। उसी शरीरसे इन्द्रने सारे पापी राक्षसोंको मारा।

१५ गोदुग्धमें मिश्रित और पुरोहितोंके द्वारा अभिषुत सोमका पान सारे देवता करते हैं।

१६ अभिषुत और बहुधारासे युक्त सोम मेषलोमके लिये पवित्रका व्यवधान करके चारों ओर क्षरित होते हैं।

स वाज्यक्षाः सहस्ररेता अद्भिर्मृजानो गोभिः श्रीणानः ॥१७॥
प्र सोम याहीन्द्रस्य कुक्षा नृभिर्येमानो अद्रिभिः सुतः ॥१८॥
असर्जि वाजी तिरः पवित्रमिन्द्राय सोमः सहस्रधारः ॥१९॥
अञ्जन्त्येनं मध्वो रसेनेन्द्राय वृष्ण इन्दुं मदाय ॥२०॥
देवेभ्यस्त्वा वृथा पाजसेऽपो वसानं हरिं मृजन्ति ॥२१॥
इन्दुरिन्द्राय तोशते नि तोशते श्रीणन्नुग्रो रिणन्नपः ॥२२॥



११० सूक्त

पवमान सोम देवता। त्र्यरुण और त्रसदस्यु ऋषि। अनुष्टुप् बृहती और विराट् छन्द।

पर्यू षु प्र धन्व वाजसातये परि वृत्राणि सक्षणिः।
द्विषस्तरध्या ऋणया न ईयसे ॥१॥

---

१७ अनेक तेजोंसे युक्त, बली, जलसे शोधित और गोदुग्धमें मिश्रित सोम चारो ओर क्षरित होते हैं।

१८ ऋत्विकोंके द्वारा -नियत और पात्रोंके द्वारा अभिषुत सोम, तुम कलसमें जाओ।

१९ पवित्रका व्यवधान करके बली और अनेक धाराओंसे युक्त सोम इन्द्रके लिये बनाये जाते हैं।

२० कामवर्षक इन्द्रकी मत्तताके लिये ऋत्विक् लोग सोमको मधुर रस (गोरस) के साथ मिलाते हैं।

२१ सोम, जलमें मिले और हरितवर्ण तुम्हें, देवोंके पान और बलके लिये, ऋत्विक् लोग शोधित कर रहे हैं।

२२ इन्द्रके लिये यह प्रथम सोमरस प्रस्तुत (अभिषुत) किया जाता है। यह जलको हिलाते और उसके साथ मिलते हैं।



१ सोम, अन्न-लाभके लिये युद्धमें जाओ। तुम सहनशील हो। शत्रुओंके पास जाओ। तुम हमारे ऋणोंके परिशोधक हो। तुम शत्रुओंको मारनेके लिये जाते हो।

अनु हि त्वा सुतं सोम मदामसि महे समर्यराज्ये ।
वाजाँ अभि पवमान प्र गाहसे ॥२॥
अजीजनो हि पवमान सूर्यं विधारे शक्मना पयः ।
गोजीरया रंहमाणः पुरन्ध्या ॥३॥
अजीजनो अमृत मर्त्येष्वाँ ऋतस्य धर्मन्नमृतस्य चारुणः ।
सदासरो वाजमच्छा सनिष्यदत् ॥४॥
अभ्यभि हि श्रवसा ततर्दिथोत्सं न कञ्चिज्जनपानमक्षितम् ।
शर्याभिर्न भरमाणो गभस्त्योः ॥५॥
आदीं के चित् पश्यमानास आप्यं वसुरुचो दिव्या अभ्यनूषत ।
वारं न देवः सविता व्यूर्णुते ॥६॥
त्वे सोम प्रथमा वृक्तबर्हिषो महे वाजाय श्रवसे धियं दधुः ।
स त्वं नो वीर वीर्याय चोदय ॥७॥

---

२ सोम, तुम अभिषुत हो। सोम, महान् मनुष्य-समूहवाले राज्यमें हम क्रमशः तुम्हारा स्तोत्र करते हैं। अपने राज्यकी रक्षाके लिये तुम शत्रुओंको लक्ष्य करके जाते हो।

३ सोम, तुमने जल-धारक अन्तरीक्षमें, समर्थ बलसे, सूर्यको उत्पन्न किया है। तुम स्तोताओंको पशु देनेवाले हो। तुम्हारे पास अनेक प्रकारके ज्ञान हैं। तुम वेगशाली हो।

४ अमर सोम, तुमने सत्य और कल्याणभूत जलके धारक अन्तरीक्षमें सूर्यको, मनुष्योंके सामने करनेको, उत्पन्न किया है। भजनशील तुम संग्रामका लक्ष्य करके सदा जाया करते हो।

सोम, जैसे कोई लोगोंके जल पीनेके लिये अक्षय्य जलसे पूर्ण तड़ाग खोदता है अथवा कोई दोनों हाथोंकी अञ्जलि से जल भरता है, वैसे ही तुम अन्न देनेके लिये पवित्रको छेद कर जाते हो।

६ दिव्य और सबके प्रेरक सूर्यने अभी अन्धकार भी नहीं हटाया, तभी देखनेवाले और दिव्य-लोकोत्पन्न "वसुरुच्" नामके व्यक्तियोंने अपने बन्धु सोमकी स्तुति करो।

७ सोम, मुख्य और कुश तोड़नेवाले यजमानोंने महान् बल और अन्नके लिये तुममें अपनी बुद्धिको रखा। समर्थ सोम, हमें भी, वीर्य-प्राप्तिके लिये, युद्धमें भेजो।

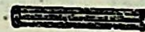
दिवः पीयूषं पूर्व्यं यदुक्थ्यं महो गाहाद्दिव आ निरधुक्षत ।
इन्द्रमभि जायमानं समस्वरन् ॥८॥

अध यदिमे पवमान रोदसी इमा च विश्वा भुवनाभि मज्मना ।
यूथे न निःष्ठा वृषभो वि तिष्ठसे ॥९॥

सोमः पुनानो अव्यये वारे शिशुर्न क्रीलन् पवमानो अक्षाः ।
सहस्रधारः शतवाज इन्दुः ॥१०॥

एष पुनानो मधुमाँ ऋतावेन्द्रायेन्दुः पवते स्वादुरूर्मिः ।
वाजसनिर्वरिवोविद्वयोधाः ॥११॥

स पवस्व सहमानः पृतन्यून्त्सेधन्रक्षांस्यप दुर्गहाणि ।
स्वायुधः सासह्वान्त्सोम शत्रून् ॥१२॥



८ द्युलोकस्थित देवोंके पीने योग्य, प्राचीन, प्रशस्य और महान् द्युलोकसे सोमको अपने सम्मुख लोग दूहते हैं। इन्द्रको लक्ष्य करके उत्पन्न सोमकी, स्तोता लोग, स्तुति करते हैं।

९ सोम, जैसे वृषभ गोसमूहमें आधिपत्य करता है, वैसे ही तुम अपने बलसे द्युलोक, भूलोक और सारे प्राणियोंपर राज्य करते हो।

१० अनेक धाराओंवाले, असीम सामर्थ्यवाले दीप्त और क्षरणशील सोम मेषलोममय पवित्रपर, शिशुके समान, क्रीड़ा करते-करते क्षरित होते हैं।

११ शोधित, मधुरता-युक्त, यज्ञवान्, क्षरणशील, स्वादुकर, रसधारा-सङ्कु, अन्नदाता, धनप्रापक और आयुर्दाता सोम बहते हैं।

१२ सोम, युद्धकामी शत्रुओंको हराते हुए, दुर्गम राक्षसोंको मारते हुए और शोभन आयुधवाले होकर रिपुविनाश करते हुए बहो।

१११ सूक्त

पवमान सोम देवता। परुच्छेप-पुत्र अनानत ऋषि। अत्यष्टि छन्द।

अया रुचा हरिण्या पुनानो विश्वा द्वेषांसि तरति
स्वयुग्वभिः सूरो न स्वयुग्वभिः।
धारा सुतस्य रोचते पुनानो अरुषो हरिः।
विश्वा यद्रूपा परियात्यृक्वभिः सप्तास्येभि ऋक्वभिः ॥१॥
त्वं त्यत् पणीनां विदो वसु सं मातृभिर्मर्जयसि
स्व आ दम ऋतस्य धीतिभिर्दमे।
परावतो न साम तद्यत्रा रणन्ति धीतयः।
त्रिधातुभिररुषीभिर्वयोदधे रोचमानो वयो दधे ॥२॥
पूर्वामनु प्रदिशं याति चेकितत् सं रश्मिभिर्यतते दर्शतो रथः।
अग्मन्नुक्थानि पौंस्येन्द्र जैत्राय हर्षयन्।
वज्रश्च यद्भवथो अनपच्युता समत्स्वनपच्युता ॥३॥

---

१ जैसे सूर्य अपनी किरणमालासे अन्धकारको नष्ट करते हैं, वैसे ही शोधित सोम हरितवर्ण और शोभन धारासे सारे राक्षसोंको नष्ट करते हैं। अभिषुत सोमकी धारा दीप्त होती है। शोधित और हरितवर्ण सोम रुचिकर होते हैं। सातों छन्दोंवाली तथा रस हरणशील स्तुतियों और तेजोंसे सोम सारे नक्षत्रोंको व्याप्त करते हैं।

२ सोम, तुमने पणियोंके द्वारा अपहृत गोधनको प्राप्त किया था। यज्ञके धारक जलसे यज्ञ-गृहमें भली भाँति शोधित होते हो। जैसे दूर देशसे साम-ध्वनि सुनायी देती है, वैसे ही तुम्हारा शब्द सुना जाता है। सोमके शब्दमें कर्मनिष्ठ यजमान रमण करते हैं। शोभन सोम तीनों लोकोंके धारक जल और रुचिकर दीप्तिके साथ स्तोताओंको अन्न प्रदान करते हैं।

३ ज्ञाता सोम पूर्व दिशाको जाते हैं। सोम, तुम्हारा सबके लिये दर्शनीय और दिव्य रथ सूर्य-किरणोंमें मिलता है। पुरुषोंके उच्चारित स्तोत्र इन्द्रके पास जाते हैं। वे स्तोत्र विजयके लिये इन्द्रको प्रसन्न करते हैं। वज्र भी इन्द्रके पास जाता है। जिस समय युद्ध-क्षेत्रमें सोम और इन्द्र शत्रुओंके द्वारा अजेय होते हैं, उस समय उनकी स्तुति की जाती है।

११२ सूक्त

पवमान सोम देवता । आङ्गिरस शिशु ऋषि । पङ्क्ति छन्द ।

नानानं वा उ नो धियो वि व्रतानि जनानाम् ।
तक्षा रिष्टं रुतं भिषग्ब्रह्मा सुन्वन्तमिच्छतीन्द्रायेन्दो परि स्रव ॥१॥
जरतीभिरोषधीभिः पर्णेभिः शकुनानाम् ।
कार्मारो अश्मभिर्द्युभिर्हिरण्यवन्तमिच्छतीन्द्रायेन्दो परि स्रव ॥२॥
कारुरहं ततो भिषगुपलप्रक्षिणी नना ।
नानाधियो वसूयवोऽनु गाइव तस्थिमेन्द्रायेन्दो परि स्रव ॥३॥
अश्वो वोह्ला सुखं रथं हसनामुपमन्त्रिणः ।
शेपो रोमण्वन्तौ भेदौ वारिन्मण्डूक इच्छतीन्द्रायेन्दो परि स्रव ॥४॥

१ हमारे कर्म अनेक प्रकारके हैं। दूसरोंके कर्म भी अनेक प्रकारके हैं । शिल्पी काष्ठ-कार्य चाहता है, वैद्य रोगको चाहता है और ब्राह्मण सोमाभिषवकर्त्ता यजमानको चाहता है। मैं सोमका प्रवाह चाहता हूँ। सोम, इन्द्रके लिये क्षरित होओ।

२ पुराने काठों, पक्षियोंके पक्ष और (शान चढ़ानेके लिये) उज्ज्वल शिलाओंसे वाण बनाये जाते हैं। शिल्पी, वाण बेचनेके लिये, स्वर्णवाले धनी पुरुषको खोजते हैं । मैं सोमका क्षरण खोजता हूं । फलतः, सोम, इन्द्रके लिये क्षरित होओ ।

२ मैं स्तोता हूं, पुत्र भिषक् (वा ब्रह्मा) है और कन्या यव-भर्जनकारिणी है । हम सब भिन्न-भिन्न कर्म करते हैं। जैसे गायें गोष्ठमें विचरण करती हैं, वैसे ही हम भी, धनकामी होकर, तुम्हारी (सोमकी) सेवा करते हैं । सोम, इन्द्रके लिये क्षरित होओ ।

४ सुन्दर वहन करनेवाले और कल्याणकर रथकी इच्छा घोड़ा करता है, मर्म-सचिव (दरबारी) हास-परिहासकी इच्छा करता है और पुरुषेन्द्रिय रोमोंवाला भेद (द्विधाभित्) की कामना करता है। मैं सोम-क्षरण चाहता हूँ । सोम, इन्द्रके लिये क्षरित होओ।

११३ सूक्त

पवमान सोम देवता। मारीच कश्यप ऋषि। पङ्क्ति छन्द।

शर्यणावति सोममिन्द्रः पिबतु वृत्रहा।
बलं दधान आत्मनि करिष्यन्वीर्यं महदिन्द्रायेन्दो परि स्रव ॥१॥
आ पवस्व दिशां पत आर्जीकात् सोम मीढ्वः।
ऋतवाकेन सत्येन श्रद्धया तपसा सुत इन्द्रायेन्दो परि स्रव ॥२॥
पर्जन्यवृद्धं महिषं तं सूर्यस्य दुहिताभरत्।
तं गन्धर्वाः प्रत्यगृभ्णन्तं सोमे रसमादधुरिन्द्रायेन्दो परि स्रव ॥३॥
ऋतं वदन्नृतद्युम्न सत्यं वदन्त्सत्यकर्मन्।
श्रद्धां वदन्त्सोम राजन्धात्रा सोम परिष्कृत इन्द्रायेन्दो परि स्रव ॥४॥
सत्यमुग्रस्य बृहतः सं स्रवन्ति संस्रवाः।
सं यन्ति रसिनो रसाः पुनानो ब्रह्मणा हर इन्द्रायेन्दो परि स्रव ॥५॥
यत्र ब्रह्मा पवमान छन्दस्यांवाचं वदन्।
ग्राव्णा सोमे महीयते सोमेनानन्दं जनयन्निन्द्रायेन्दो परि स्रव ॥६॥

---

१ कुरुक्षेत्रके पासवाले शर्यणावत् ताड़ागमें स्थित सोमको इन्द्र पियें, जिससे इन्द्र आत्म-बली और महान् वीर्यवान् हों। इन्द्रके लिये, सोम, क्षरित होओ।

२ काम-सेचक और दिशाओंके स्वामी सोम, आर्जीक देश (व्यास नदीके पासके प्रदेश)-से आकर क्षरित होओ। पवित्र और सत्य स्तुति-वाक्यों तथा श्रद्धा और पुण्य कर्मके साथ तुम्हें अभिषुत किया गया है। इन्द्रके लिये क्षरित होओ।

३ सूर्य-पुत्री (श्रद्धा) मेघके जलसे प्रवृद्ध और महान् सोमको स्वर्गसे ले आयी। गन्धर्वों (वसु आदि) ने सोमको ग्रहण किया और सोममें रस दिया। सोम, इन्द्रके लिये क्षरित होओ।

४ सत्यकर्मा सोम, अभिषूयमाण राजन्, यज्ञस्वामी, इन्दु, यज्ञ, सत्य और श्रद्धाका उच्चारण करते हुए और कर्मधारक यजमानसे अलङ्कृत होकर तुम सोम, इन्द्रके लिये क्षरित होओ।

५ यथार्थ बली और महान् सोमकी क्षरणशील धारा क्षरित हो रही है। रसवान् सोमका रस बह रहा है। हरितवर्ण सोम, ब्राह्मणके द्वारा शोधित होकर तुम इन्द्रके लिये क्षरित होओ।

६ शोध्यमान सोम, तुम्हारे लिये सातो छन्दोंमें बनायी स्तुतिका उच्चारण करते हुए, पत्थरसे तुम्हारा अभिषव करते हुए और उस अभिषवसे देवोंका आनन्द उत्पन्न करते हुए ब्राह्मण जहाँ पूजित होता है, वहाँ क्षरित होओ।

यत्र ज्योतिरजस्रं यस्मिन्ल्लोके स्वर्हितम् ।
तस्मिन् मां धेहि पवमानामृते लोके अक्षित इन्द्रायेन्दो परि स्रव ॥७॥
यत्र राजा वैवस्वतो यत्रावरोधनं दिवः ।
यत्रामूर्यह्वतीरापस्तत्र माममृतं कृधीन्द्रायेन्दो परि स्रव ॥८॥
यत्रानुकामं चरणं त्रिनाके त्रिदिवे दिवः ।
लोका यत्र ज्योतिष्मन्तस्तत्र माममृतं कृधीन्द्रायेन्दो परि स्रव ॥९॥
यत्र कामा निकामाश्च यत्र ब्रध्नस्य विष्टपम् ।
स्वधा च यत्र तृप्तिश्च तत्र माममृतं कृधीन्द्रायेन्दो परि स्रव ॥१०॥
यत्रानन्दाश्च मोदाश्च मुदः प्रमुद आसते ।
कामस्य यत्राप्ताः कामास्तत्र माममृतं कृधीन्द्रायेन्दो परि स्रव ॥११॥

---

७ सोम, जिस लोकमें अखण्ड तेज है और जहाँ स्वर्ग लोक है, उसी अमर और ह्रास-शून्य लोकमें मुझे ले चलो। इन्द्रके लिये क्षरित होओ।

८ जिस लोकमें वैवस्वत राजा हैं, जहाँ स्वर्गका द्वार है और जहाँ मन्दाकिनी आदि नदियाँ बहती हैं, उस लोकमें मुझे अमर करो। इन्द्रके लिये क्षरित होओ।

९ जिस उत्तम लोकमें (तीसरे लोकमें) सूर्यकी अभिलाषाके अनुरूप किरणें हैं और जहाँ ज्योतिवाले मनुष्य रहते हैं, उस लोकमें मुझे अमर करो। इन्द्रके लिये क्षरित होओ।

१० जिस लोकमें काम्यमान देवता और अवश्य प्रार्थनीय इन्द्रादि रहते हैं, जहाँ सारे कर्मोंके मूल सूर्यका स्थान है और जहाँ "स्वधा" के साथ दिया गया अन्न तथा तृप्ति है, वहाँ मुझे अमर करो। इन्द्रके लिये क्षरित होओ।

११ जिस लोकमें आनन्द, आमोद, आह्लाद आदि हैं और जहाँ सारी कामनाएँ पूर्ण होती हैं, वहाँ मुझे अमर करो। इन्द्रके लिये क्षरित होओ।

---

११४ सूक्त

पवमान सोम देवता । मारीच कश्यप ऋषि । पङ्क्ति छन्द ।

य इन्दोः पवमानस्यानु धामान्यक्रमीत् ।
तमाहुः सुप्रजा इति यस्ते सोमाविधन्मन इन्द्रायेन्दो परि स्रव ॥१॥
ऋषे मन्त्रकृतां स्तोमैः कश्यपोद्वर्धयन् गिरः ।
सोमं नमस्य राजानं यो जज्ञे वीरुधां पतिरिन्द्रायेन्दो परि स्रव ॥२
सप्त दिशो नानासूर्याः सप्त होतार ऋत्विजः ।
देवा आदित्या ये सप्त तेभिः सोमाभि रक्ष न इन्द्रायेन्दो परि स्रव ॥३।
यत्ते राजञ्छृतं हविस्तेन सोमाभि रक्ष नः ।
अरातीवा मा नस्तारीन्मो च नः किं चनाममदिन्द्रायेन्दो परि स्रव ॥४॥

---

१ जिन शोध्यमान सोमके तेजका जो ब्राह्मण अनुगमन करता है, उस अमर व्यक्तिको कल्याणकर पुत्र आदिसे युक्त कहा जाता है और जो सोमके मनके अनुकूल परिचर्या करता है, वह भी ऐसा ही सौभाग्यशाली कहा जाता है । इन्द्रके लिये क्षरित होओ ।

२ ऋषि (कश्यप), मन्त्र-रचयिताओंने जिन स्तुति-वचनोंकी रचना की है, उनका आश्रय करके अपने वाक्यकी वृद्धि करो और सोम राजाको प्रणाम करो। सोम वनस्पतियोंके पालक हैं। इन्द्रके लिये क्षरित होओ।

३ सूर्यके आश्रय-स्थल जो सात दिशाएँ हैं (सोमवाली दिशाको छोड़कर), जो होमकर्त्ता सात पुरोहित हैं और जो सात सूर्य हैं (मार्त्तण्डको छोड़कर), उनके साथ हमारी रक्षा करो। इन्द्रके लिये क्षरित होओ।

४ राजा सोम, तुम्हारे लिये जिस हवनीय द्रव्यका पाक किया हुआ है, उससे हमारी रक्षा करो। शत्रु हमें न मारे और हमारे वस्त्रका अपहरण न करे। इन्द्रके लिये क्षरित होओ ।

नवम मण्डल समाप्त

दशम मण्डल

१ अनुवाक । १ सूक्त

अग्नि देवता । आप्त्य त्रित ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द । *

अग्रे बृहन्नुषसामूर्ध्वो अस्थानिर्जगन्वान् तमसो ज्योतिषागात् ।
अग्निर्भानुना रुशता स्वङ्ग आ जातो विश्वा सद्मान्यप्राः ॥१॥
स जातो गर्भो असि रोदस्योरग्ने चारुर्विभृत ओषधीषु ।
चित्रः शिशुः परि तमांस्यक्तून् प्र मातृभ्यो अधि कनिक्रदद्गाः ॥२॥
विष्णुरित्था परममस्य विद्वाञ्जातो बृहन्नभि पाति तृतीयम् ।
आसा यदस्य पयो अक्रत स्वं सचेतसो अभ्यर्चन्त्यत्र ॥३॥

---

१ महान् अग्नि उषःकालमें प्रज्वलित होकर ज्वाला-रूपसे रहते हैं । अग्नि अन्धकारसे निकलकर अपने तेजसे आहवनीय रूपमें आते हैं । शोभन ज्वालावाले और कर्मके लिये उत्पन्न अग्नि अपने हिंसक तेजसे सारे यज्ञ-गृहोंको पूर्ण करते हैं ।

२ अग्नि, प्रादुर्भूत, कल्याणरूप, अरणियोंसे भली भाँति मथित और ओषधियोंमें वर्त्तमान तुम द्यावापृथिवीके गर्भ हो । चित्रवर्ण और ओषधियोंके शिशु अग्नि, तुम अपने तेजसे काले शत्रुओंको पराजित करते हो । मातृ-रूप वनस्पतियोंके लिये शब्द करते हुए तुम उत्पन्न होते हो ।

३ उत्कृष्ट, विद्वान्, प्रादुर्भूत, महान् और व्यापक अग्नि मुझ त्रित (ऋषि)का रक्षण करें । अग्निका जल मुखसे करके अर्थात् अग्निसे जलकी याचना करते-करते यज्ञकर्त्ता, समानमना होकर, अग्निपूजा करते हैं ।

---

* जैसे ऋग्वेदके नवम मण्डलके साथ सामवेदका विशेष सम्पर्क है, वैसे ही दशम मण्डलके साथ अथर्ववेदका सम्पर्क है । इसके अनेक सूक्त अथर्वमें हैं । प्रथम मण्डलके समान ही इस मण्डलके कर्त्ता भी नाना ऋषियोंके विविध वंश हैं ।

अत उ त्वा पितुभृतो जनित्रीरन्नावृधं प्रति चरन्त्यन्नैः ।
ता ईं प्रत्येषि पुनरन्यरूपा असि त्वं विक्षु मानुषीषु होता ॥४॥

होतारं चित्ररथमध्वरस्य यज्ञस्ययज्ञस्य केतुं रुशन्तम् ।
प्रत्यर्धिं देवस्यदेवस्य मह्ना श्रिया त्वग्निमतिथिं जनानाम् ॥५॥

स तु वस्त्राण्यध पेशनानि वसानो अग्निर्नाभा पृथिव्याः ।
अरुषो जातः पद इलायाः पुरोहितो राजन्यक्षीह देवान् ॥६॥

आ हि द्यावापृथिवी अग्न उभे सदा पुत्रो न मातरा ततन्थ
प्र याह्यच्छोशतो यविष्ठाथा वह सहस्येह देवान् ॥७॥

२ सूक्त

देवता, ऋषि और छन्द आदि पूर्ववत् ।

पिप्रीहि देवाँ उशतो यविष्ठ विद्वाँ ऋतूँ ऋतुपते यजेह ।
ये दैव्या ऋत्विजस्तेभिरग्ने त्वं होतॄणामस्यायजिष्ठः ॥१॥

---

४ अग्नि, सारे संसारके धारक और उत्पादक वनस्पति अन्न-वर्धक तुम्हें, अन्नके लिये, सेवित करते हैं। तुम ओषधियों (वनस्पतियों)के प्रति—शुष्क वनस्पतियोंके प्रति, दाव-रूप होकर जाते हो। तुम मनुष्यों और प्रजाओंमें होम-निष्पादक हो ।

५ देवोंके आह्वाता, विविध रथवाले, सारे यज्ञोंकी पताका, श्वेत-वर्ण सारे देवोंके अधिपति, इन्द्रके पास जानेवाले और यजमानोंके पूज्य अग्निका, सम्पत्ति-प्राप्तिके लिये, तुरत हम स्तोत्र करते हैं ।

६ दीप्यमान अग्नि, हिरण्यसदृश तेजों और उनके शुक्र आदि रूपोंको धारण करके, पृथिवीकी नाभि (उत्तर वेदी) पर उत्पन्न होकर शोभा धारण करके और आहवनीय स्थान (पूर्व दिशा) में स्थापित होकर इस यज्ञमें इन्द्रादिकी पूजा करो ।

७ अग्नि, तुम सदा वैसे ही द्यावापृथिवीका विस्तार करते हो, जैसे पुत्र माता-पिताका विस्तार करता है। तरुणतम अग्नि, तुम अभिलाषी व्यक्तियोंको लक्ष्य करके जाओ। बल-पुत्र अग्नि, हमारे यज्ञमें इन्द्रादिको ले आओ ।

---

१ युवतम अग्नि, स्तोत्राभिलाषी देवोंको प्रसन्न करो । देव-यज्ञ-कालोंके स्वामी अग्नि, यज्ञ-समयोंको जान करके तुम इस यज्ञमें उनकी पूजा करो । अग्नि, देवोंके पुरोहितोंके साथ पूजन करो । तुम होताओंमें श्रेष्ठ हो ।

वेषिहोत्रमुतपोत्रं जनानां मन्धातासि द्रविणोदा ऋतावा ।
स्वाहा वयं कृणवामा हवींषि देवो देवान्यजत्वग्निरर्हन् ॥२॥
आ देवानामपि पन्थामगन्म यच्छक्नवाम तदनु प्रवोळ्हुम् ।
अग्निर्विद्वान्त्स यजात् सेदु होता सो अध्वरान्त्स ऋतून् कल्पयाति ॥३॥
यद्वो वयं प्रमिनाम व्रतानि विदुषां देवा अविदुष्टरासः ।
अग्निष्टद्विश्वमा पृणाति विद्वान्येभिर्देवाँ ऋतुभिः कल्पयाति ॥४॥
यत् पाकत्रा मनसा दीनदक्षा न यज्ञस्य मन्वते मर्त्यासः ।
अग्निष्टद्धोता क्रतुविद्विजानन्यजिष्ठो देवाँ ऋतुशो यजाति ॥५॥
विश्वेषां ह्यध्वराणामनीकं चित्रं केतुं जनिता त्वा जजान ।
स आ यजस्व नृवतीरनु क्षाः स्पार्हा इषः क्षुमतीर्विश्वजन्याः ॥६॥
यं त्वा द्यावापृथिवी यं त्वापस्त्वष्टा यं त्वा सुजनिमा जजान ।
पन्थामनु प्रविद्वान् पितृयाणं द्युमदग्ने समिधानो विभाहि ॥७॥

—:०:—

२ अग्नि, तुम होता, पोता, मेधावी, सत्यनिष्ठ और धनद हो । हम देवोंको हवि दो । दीप्यमान और प्रशस्य अग्नि देव-पूजन करें ।

३ हम देवोंके वैदिक मार्गपर जायँ । हम जो कर्म कर सकें, उसकी भली भाँति समाप्ति कर सकें । ज्ञानी अग्नि देव-पूजा करें । मनुष्योंके होम-सम्पादक अग्नि यज्ञों और उनके कालोंको करें ।

४ देवो, हम अज्ञानी हैं । ज्ञानवान् आपके कर्मोंको जानते हुए भी हमने विलुप्त कर दिया । यह सब जाननेवाले अग्नि सारे कर्मोंको पूर्ण करें । यागयोग्य कालोंसे अग्नि देवोंको कल्पित करते हैं ।

५ मनुष्य दुर्बल हैं—उनका मन विशिष्ट ज्ञानसे शून्य है । वे जिस यज्ञ-कर्मको नहीं जानते, उसको जाननेवाले, होम-निष्पादक और अतिशय याज्ञिक अग्नि उस कर्मसे यज्ञकालोंमें देव-यजन करें ।

६ अग्नि सारे यज्ञोंके प्रधान चित्र और पताका-स्वरूप तुम्हें ब्रह्माने उत्पन्न किया । तुम दासादिसे युक्त भूमि दो । स्पृहणीय, स्तुति मन्त्रादिसे युक्त और सर्वहितैषी अन्न देवोंको दो ।

७ अग्नि द्यावापृथिवी, अन्तरीक्ष—इन तीन लोकोंने तुम्हें पैदा किया—शोभनजन्मा प्रजापतिने तुम्हें पैदा किया । अग्नि, तुम पितृमार्गके जानकार और समिध्यमान हो । दीप्तियुक्त होकर विराजते हो ।

३ सूक्त

देवता, ऋषि और छन्द पूर्ववत् ।

इनो राजन्नरतिः समिद्धो रौद्रो दक्षाय सुषुमाँ अदर्शि ।
चिकिद्विभाति भासा बृहतासिक्नीमेति रुशतीमपाजन् ॥१॥
कृष्णां यदेनीमभि वर्पसा भूज्जनयन्योषां बृहतः पितुर्जाम् ।
ऊर्ध्वं भानुं सूर्यस्य स्तभायन्दिवो वसुभिररतिर्वि भाति ॥२॥
भद्रो भद्रया सचमान आगात् स्वसारं जारो अभ्येति पश्चात् ।
सुप्रकेतैर्द्युभिरग्निर्वितिष्ठन् रुशद्भिर्वर्णैरभि राममस्थात् ॥३॥
अस्य यामासो बृहतो न वग्नूनिन्धाना अग्नेः सख्युः शिवस्य ।
ईड्यस्य वृष्णो बृहतः स्वासो भामासो यामन्नक्तवश्चिकित्रे ॥४॥
स्वना न यस्य भामासः पवन्ते रोचमानस्य बृहतः सुदिवः ।
ज्येष्ठेभिर्यस्तेजिष्ठैः क्रीळुमद्भिर्वर्षिष्ठेभिर्भानुभिर्नक्षति द्याम् ॥५॥

१ दीप्त अग्नि, तुम सबके स्वामी हो । हवि लेकर देवोंके पास जानेवाले, संदीप्त, शत्रुओंके लिये भयंकर, वनस्पतियोंमें स्थित और शोभन प्रसववाले अग्नि, यजमानोंकी धन-वृद्धिके लिये सबके द्वारा देखे जाते हैं । सर्वज्ञ अग्नि विभासित होते हैं । महान् तेजके द्वारा सायंकाल, श्वेतवर्ण दीप्तिसे अन्धकार दूर करके, जाते हैं ।

२ पितृरूप आदित्यसे उत्पन्न उषाको प्रकट करते हुए अग्नि कृष्णवर्ण रात्रिको अपने तेजसे अभिभूत करते हैं । गमनशील अग्नि द्युलोकके निवासदाता अपने तेजसे सूर्यकी दीप्तिको ऊपर रोककर शोभा पाते हैं ।

३ कल्याणरूप और भजनीय उषाके द्वारा सेव्यमान अग्नि आये । शत्रुओंके घातक अग्नि अपनी भगिनी उषाके पास जाते हैं । सुन्दर ज्ञान और दीप्त तेजके साथ वर्त्तमान अग्नि श्वेतवर्णके अपने निवारक तेजके द्वारा कृष्णवर्ण अन्धकारको दूर कर रहते हैं ।

४ महान् अग्निकी दीप्त किरणें जा रही हैं । ये किरणें स्तोताओंको नहीं बाधा देतीं । मित्र, कल्याणरूप, भक्तोंके सुखकर, स्तुत्य, काम-वर्षक, महान् और शोभनमुख अग्निकी किरणें अन्धकारको नष्ट करके और तीक्ष्ण होकर, तर्पणके लिये देवोंके पास जाती और प्रसिद्ध होती हैं ।

५ दीप्यमान, महान् और शोभन-दीप्ति अग्निकी किरणें, शब्द करते हुए जाती हैं । अग्नि अतीव प्रशस्त, तेजस्वितम, क्रीड़ाकारी और वृद्धतम अपने तेजसे द्युलोकको व्याप्त करते हैं ।

अस्य शुष्मासो ददृशानपवेर्जेहमानस्य स्वनयन्नियुद्भिः ।
प्रत्नेभिर्यो रुशद्भिर्देवतमो वि रेभद्भिररतिर्भाति विभ्वा ॥६॥
स आ वक्षि महि न आ च सत्सि दिवस्पृथिव्योररतिर्युवत्योः ।
अग्निः सुतुकः सुतुकेभिरश्वै रभस्वद्भी रभस्वाँ एह गम्याः ॥७॥



४ सूक्त

देवता, ऋषि, छन्द आदि पूर्ववत् ।

प्र ते यक्षि प्र त इयर्मि मन्म भुवो यथा वन्द्यो नो हवेषु ।
धन्वन्निव प्रपा असि त्वमग्न इयक्षवे पूरवे प्रत्न राजन् ॥१॥
यं त्वा जनासो अभि संचरन्ति गाव उष्णमिव व्रजं यविष्ठ ।
दूतो देवानामसि मर्त्यानामन्तर्महाँश्चरसि रोचनेन ॥२॥

---

६ दृश्यमान आयुधवाले और देवोंके प्रति गमन करनेवाले अग्निकी शोषक और वायुयुक्त किरणें शब्द कर रही हैं । देवोंमें मुख्य, गन्ता, व्यापक और महान् अग्नि प्राचीन, श्वेतवर्ण और शब्दायमान तेजके द्वारा प्रदीप्त होते हैं ।

७ अग्नि, हमारे यज्ञमें महान् देवोंको ले आओ । परस्परमिलित द्यावापृथिवीके बीचमें सूर्यरूपसे आनेवाले अग्नि, हमारे यज्ञमें बैठो । स्तोताओंके द्वारा सरलतासे पाने योग्य और वेगवान् अग्नि, शब्दायमान और वेगवान् घोड़ोंके साथ हमारे यज्ञमें पधारो ।

---

१ अग्नि, तुम्हारे लिये मैं हवि देता हूँ । तुम्हारे लिये मननीय स्तुति उच्चारित करता हूँ । तुम सबके वन्दनीय हो । हमारे देवाह्वानमें तुम आते हो; इसलिये तुम्हें मैं हवि देता हूँ और स्तुति करता हूँ । प्राचीन राजा अग्नि, सारे संसारके स्वामी अग्नि, तुम यज्ञाभिलाषी मनुष्यके लिये वैसे ही धनदान करके सुखदाता हो, जैसे मरुस्थलमें जलदाता तलैया सुखद है ।

२ तरुणतम अग्नि, जैसे शीतसे आर्त्त गायें उष्ण गोष्ठको जाती हैं, वैसे ही फलप्राप्तिके लिये यजमान तुम्हारी सेवा करते हैं । तुम देवों और मानवोंके दूत हो । महान् तुम द्यावापृथिवीके बीचमें हवि लेकर अन्तरीक्षलोकमें संचरण करते हो ।

शिशुं न त्वा जेन्यं वर्धयन्ती माता बिभर्ति सचनस्यमाना ।
धनोरधि प्रवता यासि हर्यञ्जिगीषसे पशुरिवावसृष्टः ॥३॥
मूरा अमूर न वयं चिकित्वो महित्वमग्ने त्वमङ्ग वित्से ।
शये वव्रिश्चरति जिह्वयादन्रेरिह्यते युवतिं विश्पतिः सन् ॥४॥
कूचिज्जायते सनयासु नव्यो वने तस्थौ पलितो धूमकेतुः ।
अस्नातापो वृषभो न प्र वेति सचेतसो यं प्रणयन्त मर्ताः ॥५॥
तनूत्यजेव तस्करा वनर्गू रशनाभिर्दशभिरभ्यधीताम् ।
इयं ते अग्ने नव्यसी मनीषा युक्ष्वा रथं न शुचयद्भिरङ्गैः ॥६॥
ब्रह्म च ते जातवेदो नमश्चेयं च गीः सदमिद्वर्धनी भूत् ।
रक्षा णो अग्ने तनयानि तोका रक्षोत नस्तन्वो अप्रयुच्छन् ॥७॥

३ अग्नि, पुत्रके समान जयशील तुम्हें माता पृथिवी, पोषण करके और सम्पर्ककी इच्छा करके, धारण करती है। अभिलाषी तुम अन्तरीक्षके प्रशस्त मार्गसे यज्ञमें जाते हो। याज्ञिकोंसे हवि लेकर तुम देवोंके पास जानेकी इच्छा वैसे ही करते हो, जैसे विमुक्त पशु गोष्ठमें जानेकी इच्छा करता है।

४ मूढ़ताशून्य और चेतनावान् अग्नि, हम मूर्ख हैं; इसलिये तुम्हारी महिमाको नहीं जानते। अग्नि, अपनी महिमा तुम्हीं जानते हो। अग्नि वनस्पतिके साथ रहते हैं। अपनी जिह्वाके द्वारा हविर्भक्षण करते हुए अग्नि चरते हैं। अग्नि प्रजावर्णके अधिपति होकर आहुतिका आस्वादन करते हैं।

५ नवीन अग्नि कहीं उत्पन्न होते हैं—वह पुराने वनस्पतियोंके ऊपर रहते हैं। पालक; धूमकेतु और श्वेतवर्ण अग्नि विपिनमें निवास करते हैं। स्नानके बिना शुद्ध अग्नि, प्यासे वृषभके समान, अरण्यके जलके पास जाते हैं। मनुष्य लोग, समान-मना होकर, अग्निको प्रसन्न करते हैं।

६ अग्नि, जैसे वनगामी और धृष्ट दो चोर वनमें पथिकको रज्जुसे बाँधकर खींचते हैं, वैसे ही, हमारे दोनों हाथ, दसो अँगुलियोंसे, यज्ञ-काष्ठसे अग्निको मथते हैं। तुम्हारे लिये मैं यह नयी स्तुति करता हूं। इसे जानकर सबका प्रकाश करनेवाले अपने तेजसे अपनेको यज्ञमें वैसे ही योजित करो, जैसे अश्वोंसे रथको योजित किया जाता है।

७ ज्ञानी अग्नि, तुम्हारे लिये हमने यह यज्ञीय द्रव्य दिया और नमस्कार भी किया। यह स्तुति सदा वर्द्धमाना हो। अग्नि, हमारे पुत्र-पौत्रोंकी रक्षा करो। सावधान होकर हमारे अङ्गोंकी रक्षा करो।

५ सूक्त

देवता, ऋषि और छन्द पूर्ववत्।

एकः समुद्रो धरुणो रयीणामस्मद्धृदो भूरिजन्मा वचष्टे ।
सिषक्त्यूधर्निण्योरुपस्थ उत्सस्य मध्ये निहितं पदं वेः ॥१॥
समानं नीळं वृषणो वसानाः सञ्जग्मिरे महिषा अर्वतीभिः ।
ऋतस्य पदं कवयो निपान्ति गुहा नामानि दधिरे पराणि ॥२॥
ऋतायिनी मायिनी सन्दधाते मित्वा शिशुं जज्ञतुर्वर्धयन्ती ।
विश्वस्य नाभिं चरतो ध्रुवस्य कवेश्चित्तन्तुं मनसा वियन्तः ॥३॥
ऋतस्य हि वर्तनयः सुजातमिषो वाजाय प्रदिवः सचन्ते ।
अधीवासं रोदसी वावसाने घृतैरन्नैर्वावृधाते मधूनाम् ॥४॥
सप्त स्वसृररुषीर्वावशानो विद्वान्मध्व उज्जभारा दृशे कम् ।
अन्तर्येमे अन्तरिक्षे पुराजा इच्छन्वव्रिमविदत् पूषणस्य ॥५॥

१ अद्वितीय, समुद्रवत् आधार-स्वरूप, धनोंके धारक और अनेक प्रकारके जन्मवाले अग्नि हमारे अभिलषित हृदयोंको जानते हैं। अग्नि अन्तरीक्षके पास वर्त्तमान होकर मेघका सेवन करते हैं। अग्नि, मेघमें वर्त्तमान विद्युत्के पास जाओ।

२ आहुतियोंके सेचक यजमान समान रूपसे नील अग्निको मन्त्रसे आच्छादित करते हुए वड़वाओं (घोड़ियों) वाले हुए। मेधावी लोग जलके वासस्थान अग्निकी रक्षा करते हैं—स्तुतियोंसे आराधना करते हैं। वे गूढ़ हृदयमें अग्निके प्रधान नामोंकी स्तुति करते हैं।

३ सत्य और कर्मसे युक्त द्यावापृथिवी अग्निको धारण करते हैं। द्यावापृथिवी काल-परिमाण करके प्रशस्य अग्निको वैसे ही उत्पन्न करते हैं, जैसे माता-पिता पुत्रको उत्पन्न करते हैं। सारे स्थावर जङ्गमके नाभिरूप, प्रधान और मेधावी अग्निके विस्तारक वैश्वानर नामक अग्निको मनसे प्राप्त करते हुए हम यजन करते हैं।

४ यज्ञके प्रवर्त्तक, कामनाभिलाषी और प्राचीन यजमान भली भाँति उत्पन्न अग्निकी, बलके लिये, सेवा करते हैं। सारे संसारके आच्छादक द्यावापृथिवीने तीनों लोकोंमें, अग्नि, विद्युत् और सूर्यके रूपसे स्थित अग्निको, मधु, घी, पुरोडाश आदिसे, वर्द्धित किया।

५ स्तोताओंके द्वारा स्तुति किये जाते हुए और सबके जानकार अग्निने शोभन सात भगिनीरूप शिखाओंको, मदकर यज्ञसे सरलतापूर्वक सारे पदार्थोंको देखनेके लिये, ऊपर उठाया। प्राचीन समयमें उत्पन्न अग्निने द्यावापृथिवीके बीचमें उन शिखाओंको नियमित किया। यजमानोंकी इच्छा करनेवाले अग्निने पृथिवीको वृष्टि-स्वरूप रूप प्रदान किया।

सप्त मर्यादाः कवयस्ततक्षुस्तासामेकामिदभ्यंहुरो गात् ।
आयोर्ह स्कम्भ उपमस्य नीळे पथां विसर्गे धरुणेषु तस्थौ ॥६॥
असच्च सच्च परमे व्योमन्दक्षस्य जन्मन्नदितेरुपस्थे ।
अग्निर्ह नः प्रथमजा ऋतस्य पूर्व आयुनि वृषभश्च धेनुः ॥७॥

---

६ मेधावी लोगोंने सात मर्यादाओं (ब्रह्महत्या, सुरापन, चौर्य, गुरुपत्नीगमन, पुनः पुनः पापाचरण, पाप करके न कहना आदि) को छोड़ दिया है । इनमेंसे एकका करनेवाला भी पापी है । पापसे मनुष्यको रोकनेवाले अग्नि हैं । अग्नि समीपवर्ती मनुष्यके स्थानमें आदित्य-किरणोंके विचरण मार्गमें और जलके बीचमें रहते हैं ।

७ अग्नि सृष्टिके पहले असत् (अव्यक्त) और सृष्टि होनेपर सत् हैं, वह परम धाम(कारणात्मा) में हैं । वह आकाशपर सूर्यरूपसे जनमे हैं । अग्नि हमसे पहले उत्पन्न हुए हैं । वह यज्ञके पहले अवस्थित थे । वह वृषभ भी हैं और गाय भी—स्त्री-पुरुष—दोनों हैं ।



पञ्चम अध्याय समाप्त

षष्ठ अध्याय

६ सूक्त

अग्नि देवता। आप्त्य त्रित ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

अयं स यस्य शर्मन्नवोभिरग्नेरेधते जरिताभिष्टौ।
ज्येष्ठेभिर्यो भानुभिर्ऋषूणां पर्येति परिवीतो विभावा ॥१॥
यो भानुभिर्विभावा विभात्यग्निर्देवेभिर्ऋतावाजस्रः।
आ यो विवाय सख्या सखिभ्योऽपरिह्वृतो अत्यो न सप्तिः ॥२॥
ईशे यो विश्वस्या देववीतेरीशे विश्वायुरुषसो व्युष्टौ।
आ यस्मिन्मना हवींष्यग्नावरिष्टरथः स्कभ्नाति शूषैः ॥३॥
शूषेभिर्वृधो जुषाणो अर्कैर्देवाँ अच्छा रघुपत्वा जिगाति।
मन्द्रो होता जुह्वा यजिष्ठः संमिश्लो अग्निरा जिघर्ति देवान् ॥४॥

---

१ यह वही अग्नि हैं, यज्ञके समय जिनके रक्षणोंसे स्तोता अपने गृहमें बढ़ता है। दीप्तिमान् अग्नि सूर्य-किरणोंसे प्रशस्त तेजसे युक्त होकर सर्वत्र जाते हैं।

२ जो दीप्त अग्नि देवोंके तेजसे दीप्त होते हैं, वह सत्यवान् और अहिंसित हैं। अग्नि मित्र यजमानके लिये मित्रजनोचित कार्य करनेके लिये गमनशील घोड़ेके समान अथक होकर यजमानके पास जाते हैं।

३ अग्नि सारे यज्ञके प्रभु हैं। वह सर्वत्र जानेवाले हैं। उषाके उदय-कालसे ही हवनके लिये यजमानोंके प्रभु हैं। यजमान अग्निमें मनके अनुकूल हवि फकते हैं; इसलिये उनका रथ शत्रु-बलसे अवध्य होता है।

४ अग्नि बलसे वर्द्धित और स्तुतिसे सेवित होकर शीघ्रताके साथ देवोंके पास जाते हैं। अग्नि स्तुत्य, देवोंको बुलानेवाले, प्रधान यज्ञकर्त्ता और देवोंके द्वारा नियुक्त हैं। वह देवोंको हवि देते हैं।

तमुस्रामिन्द्रं न रेजमानमग्निं गीर्भिर्नमोभिरा कृणुध्वम् ।
आ यं विप्रासो मतिभिर्गृणन्ति जातवेदसं जुह्वं सहानाम् ॥५॥
सं यस्मिन्विश्वा वसूनि जग्मुर्वाजे नाश्वाः सप्तीवन्त एवैः ।
अस्मे ऊतीरिन्द्रवाततमा अर्वाचीना अग्न आकृणुष्व ॥६॥
अधा ह्यग्ने मह्ना निषद्या सद्यो जज्ञानो हव्यो बभूथ ।
तं ते देवासो अनु केतमायन्नधा वर्धन्त प्रथमास ऊमाः ॥७॥

७ सूक्त

अग्नि देवता । आप्त्य त्रित ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

स्वस्ति नो दिवो अग्ने पृथिव्या विश्वायुर्धेहि यजथाय देव ।
सचेमहि तव दस्म प्रकेतैरुरुष्या ण उरुभिर्देव शंसैः ॥१॥
इमा अग्ने मतयस्तुभ्यं जाता गोभिरश्वैरभिगृणन्ति राधः ।
यदा ते मर्तो अनु भोगमानड्वसो दधानो मतिभिः सुजात ॥२॥

५ ऋत्विको, तुम भोगोंके दाता और कम्पनशील उन अग्निको, इन्द्रके समान, स्तुतियों और हवियोंसे, हमारे सम्मुख करो, जो देवोंके बुलानेवाले और ज्ञानी हैं और जिनका स्तोत्र मेधावी स्तोता लोग आदरके साथ करते हैं ।

६ अग्नि, जैसे युद्धमें शीघ्र गमनकारी अश्व जाते हैं, वैसे ही तुममें संसारके सारे धन मिलते हैं । अग्नि, इन्द्रकी रक्षा हमारे अभिमुख करो ।

७ अग्नि, तुमने जन्मके साथ ही महत्त्व लाभ किया और स्थान ग्रहण करनेके साथ ही आहुतिके योग्य हो गये । इसलिये तुम्हें देखनेके साथ देवता लोग तुम्हारे पास गये वा तुम्हारे प्रदीप्त होनेके साथ यजमान तुममें हवन करने लगे । उत्तम ऋत्विक् लोग तुमसे रक्षित होकर बढ़ने लगे ।

१ दिव्य अग्नि, तुम द्यावापृथिवीसे हमारे लिये सब तरहका अन्न और कल्याण दो । दर्शनीय अग्नि, हम याज्ञिक हों । अपने अनेक प्रशंसनीय रक्षणोंसे हमारी रक्षा करो ।

२ अग्नि, तुम्हारे लिये ये स्तुतियाँ हमारे द्वारा कही गयी हैं । गौओं और अश्वोंके साथ तुमने हमारे लिये धन दिया है; इसलिये तुम्हारी प्रशंसा की जाती है । जब मनुष्य तुम्हारा दिया भोग्य धन प्राप्त करता है, तब अपने तेजके द्वारा सबका आच्छादन करनेवाले, शोभन कर्मोंके लिये उत्पन्न होनेवाले और हमें धन देनेवाले अग्नि, तुम्हारी स्तुति की जाती है ।

अग्निं मन्ये पितरमग्निमापिमग्निं भ्रातरं सदमित् सखायम् ।
अग्नेरनीकं बृहतः सपर्यन्दिवि शुक्रं यजतं सूर्यस्य ॥३॥
सिध्रा अग्ने धियो अस्मे सनुत्रीर्यन्त्रायसे दम आ नित्यहोता ।
ऋतावा स रोहिदश्वः पुरुक्षुर्द्युभिरस्मा अहभिर्वाममस्तु ॥४॥
द्युभिर्हितं मित्रमिव प्रयोगं प्रत्नमृत्विजमध्वरस्य जारम् ।
बाहुभ्यामग्निमायवोऽजनन्त विक्षु होतारं न्यसादयन्त ॥५॥
स्वयं यजस्व दिवि देव देवान् किन्ते पाकः कृणवदप्रचेताः ।
यथा यज ऋतुभिर्देव देवानेवा यजस्व तन्वं सुजात ॥६॥
भवा नो अग्नेऽवितोत गोपा भवा वयस्कृदुत नो वयोधाः ।
रास्वा च नः सुमहो हव्यदातिं त्रास्वोत नस्तन्वो अप्रयुच्छन् ॥७॥

---

३ मैं अग्निको ही पिता, बन्धु, भ्राता और चिर मित्र मानता हूँ। मैं महान् अग्निके मुखका सेवन वैसे ही करता हूं, जैसे द्युलोक-स्थित पूजनीय और प्रदीप्त सूर्यमण्डलका कोई सेवन करता है।

४ अग्नि, हमारी की हुई ये स्तुतियाँ निष्पन्न हुई हैं। नित्य होता, देवोंके आह्वाता और हमारे यज्ञगृहमें अवस्थित होकर तुम जिसकी (मेरी) रक्षा करते हो, वह (मैं) तुम्हारा सानिध्य प्राप्त करके याज्ञिक बने। मैं लोहितवर्ण अश्व और बहुत अन्न प्राप्त करूँ, ताकि प्रदीप्त दिनोंमें तुम्हें होमीय द्रव्य (हवि) प्राप्त हो सके ।

५ दीप्ति-युक्त मित्रके समान योजनीय; प्राचीन ऋत्विक् और यज्ञ-समापक अग्निको यजमानोंने बाहुओंसे उत्पन्न किया है। मनुष्योंने देवोंके आह्वान और यज्ञके लिये अग्निको ही निरूपित किया है ।

६ दिव्य अग्नि, द्युलोकमें स्थित देवोंका स्वयं यज्ञ करो। अपक्व और निर्बोध मनुष्य तुम्हारे बिना क्या करेंगे ? सुजन्मा देव, जैसे तुमने समय-समयपर देवोंका यजन किया है, वैसे ही अपना भी करो ।

७ अग्नि, तुम हमें दृष्ट और अदृष्ट भयोंसे बचाओ। अन्नके कर्त्ता और दाता भी बनो। सुन्दर पूजनीय अग्नि, हवन करनेकी सामग्री हमें दो। हमारे शरीरकी रक्षा करो ।

८ सूक्त

अग्नि और इन्द्र देवता। त्वष्टृ-पुत्र त्रिशिरा ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

प्र केतुना बृहता यात्यग्निरा रोदसी वृषभो रोरवीति।
दिवश्चिदन्ताँ उपमाँ उदानळपामुपस्थे महिषो ववर्ध ॥१॥
मुमोद गर्भो वृषभः ककुद्मानस्रेमा वत्सः शिमीवाँ अरावीत्।
स देवतात्युद्यतानि कृण्वन्त्स्वेषु प्रथमो जिगाति ॥२॥
आ यो मूर्धानं पित्रोररब्ध न्यध्वरे दधिरे सूरो अर्णः।
अस्य पत्मन्नरुषीरश्वबुध्ना ऋतस्य योनौ तन्वो जुषन्त ॥३॥
उषउषो हि वसो अग्रमेषि त्वं यमयोरभवो विभावा।
ऋताय सप्त दधिषे पदानि जनयन्मित्रं तन्वे स्वायै ॥४॥
भुवश्चक्षुर्मह ऋतस्य गोपा भुवो वरुणो यदृताय वेषि।
भुवो अपां नपाज्जातवेदो भुवो दूतो यस्य हव्यं जुजोषः ॥५॥

१ इस समय अग्नि बड़ी पताका लेकर द्यावापृथिवीमें जाते हैं। देवोंके बुलानेके समय अग्नि वृषभके समान शब्द करते हैं। द्युलोकके अन्त वा समीपके प्रदेशमें रहकर अग्नि व्याप्त करते हैं। जल भण्डार अन्तरीक्षमें महान् विद्युत् होकर अग्नि बढ़ते हैं।

२ द्यावापृथिवीके बीच कामोंके वर्षक और उन्नत तेजवाले अग्नि प्रसन्न होते हैं। रात्रि और उषः—कालके वत्स और याज्ञिक कर्मवाले अग्नि शब्द करते हैं। अग्नि यज्ञमें उत्साह-कर्म करते हुए आहवनीय आदि स्थानोंमें रहकर तथा देवोंमें मुख्य होकर जाते हैं।

३ अग्नि मातृ-पितृ-रूप द्यावापृथिवीके मस्तकपर अपना तेज विस्तृत करते हैं। सुवीर्यवाले अग्निके गतिपरायण तेजको याज्ञिक लोग यज्ञमें धारण करते हैं। अग्निके पतनपर शोभायमान, यज्ञके स्थानमें व्याप्त और हवि आदिसे युक्त तुम्हारे शरीरकी सेवा कवि लोग करते हैं।

४ प्रशंसनीय अग्नि, तुम उषःकालके पहले ही आ जाते हो। परस्पर मिले दिन और रात्रिके दीप्तिकर्त्ता हो। अपने शरीरसे आदित्यको उत्पन्न करते हुए, यज्ञके लिये, सात स्थानोंमें बैठते हो।

५ अग्नि रक्षक तुम, चक्षुके समान, प्रकाशक हो। तुम यज्ञके रक्षक हो। जिस समय तुम यज्ञके लिये वरुण वा आदित्य होकर जाते हो, उस समय तुम्हीं रक्षक होते हो। ज्ञानी अग्नि, तुम जलके पौत्र हो। (जलसे मेघ और मेघसे विद्युत् वा अग्नि उत्पन्न होते हैं) तुम जिस यजमान की हवि ग्रहण करते हो, उसके दूत होते हो।

भुव यज्ञस्य रजसश्च नेता यत्रा नियुद्भिः सचसे शिवाभिः ।
दिवि मूर्धानं दधिषे स्वर्षां जिह्वामग्ने चकृषे हव्यवाहम् ॥६॥
अस्य त्रितः क्रतुना वव्रे अन्तरिच्छन् धीतिं पितुरेवैः परस्य ।
सचस्यमानः पित्रोरुपस्थे जामि ब्रुवाण आयुधानि वेति ॥७॥
स पित्र्याण्यायुधानि विद्वानिन्द्रेषित आप्त्यो अभ्ययुध्यत् ।
त्रिशीर्षाणं सप्तरश्मिं जघन्वान्त्वाष्ट्रस्य चिन्निः ससृजे त्रितो गाः ॥८॥
भूरीदिन्द्र उदिनक्षन्तमोजोऽवाभिनत् सत्पतिर्मन्यमानम् ।
त्वाष्ट्रस्य चिद्विश्वरूपस्य गोनामाचक्राणस्त्रीणि शीर्षा परावर्क् ॥९॥

९ सूक्त

जल देवता । अम्बरीषके पुत्र सिन्धुद्वीप वा त्वष्टाके पुत्र त्रिशिरा ऋषि । अनुष्टुप् और गायत्री छन्द ।

आपो हि ष्ठा मयोभुवस्ता न ऊर्जे दधातन । महे रणाय चक्षसे ॥१॥

६ अग्नि, तुम जिस अन्तरीक्षमें कल्याणकर अश्वोंवाले वायुके साथ मिलते हो, उसमें तुम यज्ञ और जलके नेता होते हो। तुम द्युलोकमें प्रधान और सबके भक्ता सूर्यको धारण करते हो। अग्नि, तुम अपनी जिह्वाको हव्यवाहिका बनाते हो।

७ यज्ञ करके त्रित ऋषिने प्रार्थना की कि, मेरी इच्छा है कि, यज्ञमें पिताका ध्यान करके नाना विपत्तियोंसे रक्षा पाऊँ। प्रार्थनाके कारण पिता-माताके पास सुन्दर वाक्य बोलकर त्रित युद्धका अस्त्र ले गये।

८ आप्त्यके पुत्र त्रितने इन्द्रके द्वारा प्रेरित होकर और अपने पिताके युद्धास्त्रोंको लेकर युद्ध किया। सात रस्सियोंवाले "त्रिशिरा"का उन्होंने बध किया और त्वष्टाके पुत्र (विश्वरुप) की गायोंका भी हरण कर लिया।

९ साधुओंके स्वामी इन्द्रने अभिमानी और व्यापक तेजवाले त्वष्टाके पुत्रको विदीर्ण किया। उन्होंने गायोंको बुलाते हुए त्वष्टाके पुत्र विश्वरूपके तीन सिरोंको काट डाला।

---

१ जल, तुम सुखके आधार हो। अन्न-संचयकर दो। हमें भली भाँति ज्ञान दो।

यो वः शिवतमो रसस्तस्य भाजयतेह नः । उशतीरिव मातरः ॥२॥
तस्मा अरङ्गमाम वो यस्य क्षयाय जिन्वथ । अपो जनयथा च नः ॥३॥
शं नो देवीरभिष्टय आपो भवन्तु पीतये । शं योरभि स्रवन्तु नः ॥४॥
ईशाना वार्याणां क्षयन्तीश्चर्षणीनाम् । अपो याचामि भेषजम् ॥५॥
अप्सु मे सोमो अब्रवीदन्तर्विश्वानि भेषजा । अग्निं च विश्वशम्भुवम् ॥६
आपः पृणीत भेषजं वरूथं तन्वे मम । ज्योक् च सूर्यं दृशे ॥७॥
इदमापः प्र वहत यत् किञ्च दुरितं मयि ।
यद्वाहमभिदुद्रोह यद्वा शेप उतानृतम् ॥८॥
आपो अद्यान्वचारिषं रसेन समगस्महि ।
पयस्वानग्न आ गहि तं मा संसृज वर्चसा ॥९॥

---

२ जल, जसे माताएँ बच्चोंको दूध देती हैं, वैसे ही तुम अपना सुखकर रस हमें दो।

३ जल, तुम जिस पापके विनाशके लिये हमें प्रसन्न करते हो, उसके विनाशकी इच्छासे हम तुम्हें मस्तकपर चढ़ाते हैं। जल, हमारी वंश-वृद्धि करो।

४ दिव्य जल हमारे यज्ञके लिये सुख-विधान करें। वह पानोपयोगी हुए। वह उत्पन्न रोगोंकी शान्ति और अनुत्पन्न रोगोंको अलग करें। हमारे मस्तकके ऊपर क्षरित हों।

५ अभिलषित वस्तुओंके ईश्वर जल हैं। वही मनुष्योंको निवास देते हैं। हम जलसे, भेषजके लिये, प्रार्थना करते हैं।

६ सोम बोले हैं कि, जलमें औषध और संसार-सुखकर अग्नि भी हैं।

७ जल, हमारी देहकी रक्षा करनेवाले औषधको पुष्ट करो, ताकि हम बहुत दिनोंतक सूर्यको देख सकें।

८ जल, मेरा जो कुछ दुष्कृत्य है अथवा जो कुछ मैंने हिंसाका कार्य किया है वा अभिसंपात किया है वा झूठ बोला हूँ, वह सब, दूर करो।

९ मैं आज जलमें पैठा हूँ—इसके रसका पान किया है; अग्नि, तुम जल-युक्त होकर आओ। मुझे तेजस्वी बनाओ।

१० सूक्त

यम और यमी देवता और ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द

ओचित् सखायं सख्या ववृत्यां तिरः पुरू चिदर्णवं जगन्वान्।
पितुर्नपातमा दधीत वेधा अधिक्षमि प्रतरं दीध्यानः ॥१॥
न ते सखा सख्यं वष्ट्येतत् सलक्ष्मा यद्विषुरूपा भवाति।
महस्पुत्रासो असुरस्य वीरा दिवो धर्तार उर्विया परि ख्यन् ॥२॥
उशन्ति घा ते अमृतास एतदेकस्य चित्त्यजसं मर्त्यस्य।
नि ते मनो मनसि धाय्यस्मे जन्युः पतिस्तन्वमा विविश्याः ॥३॥
न यत् पुरा चकृमा कद्ध नूनमृता वदन्तो अनृतं रपेम।
गन्धर्वो अप्स्वप्या च योषा सा नो नाभिः परमं जामि तन्नौ ॥४॥

---

१ (यम और यमी वा दिन वा रात्रि सहोदर हैं। यमी यमसे कहती है—) विस्तृत समुद्रके मध्यद्वीपमें आकर, इस निर्जन प्रदेशमें, मैं तुम्हरा सहवास वा मिलन चाहती हूँ; क्योंकि (माताकी) गर्भावस्थासे ही तुम मेरे साथी हो। विधाताने मन-ही-मन समझा है कि, तुम्हारे द्वारा मेरे गर्भसे जो पुत्र उत्पन्न होगा, वह हमारे पिताका एक श्रेष्ठ नाती होगा।

२ (यमका उत्तर—) यमी, तुम्हारा साथी यम तुम्हारे साथ ऐसा सम्पर्क नहीं चाहता; क्योंकि तुम सहोदरा भगिनी हो, अगन्तव्या हो। यह निर्जन प्रदेश नहीं है; क्योंकि महान् बली प्रजापतिके द्युलोकका धारण करनेवाले वीर पुत्र (देवोंके चर) सब देखते हैं।

३ (यमीका वचन—) यद्यपि मनुष्यके लिये ऐसा संसर्ग निषिद्ध है; तो भी देवता लोग इच्छा-पूर्वक ऐसा संसर्ग करते हैं। इसलिये मेरी जैसी इच्छा होती है, वैसी ही तुम भी करो। पुत्रजन्मदाता पतिके समान मेरे शरीरमें पैठो—मेरा संभोग करो।

४ (यमका उत्तर— हमने ऐसा कर्म कभी नहीं किया। हम सत्यवक्ता हैं। कभी मिथ्या कथन नहीं किया है। अन्तरीक्षमें स्थित गन्धर्व वा जलके धारक आदित्य और अन्तरीक्षमें हो रहनेवाली योषा (सूर्यकी स्त्री सरण्यू) हमारे माता-पिता हैं। इसलिये हम सहोदर बन्धु हैं। ऐसा सम्बन्ध उचित नहीं।

गर्भे नु नौ जनिता दम्पती कर्देवस्त्वष्टा सविता विश्वरूपः ।
नकिरस्य प्र मिनन्ति व्रतानि वेद नावस्य पृथिवी उत द्यौः ॥५॥
को अस्य वेद प्रथमस्याह्नः क ईं ददर्श क इह प्र वोचत् ।
बृहन्मित्रस्य वरुणस्य धाम कदु ब्रव आहनो वीच्या नॄन् ॥६॥
यमस्य मा यम्यं काम आगन्त्समाने योनौ सहशेय्याय ।
जायेव पत्ये तन्वं रिरिच्यां वि चिद्वृहेव रथ्येव चक्रा ॥७॥
न तिष्ठन्ति न निमिषन्त्येते देवानां स्पश इह ये चरन्ति ।
अन्येन मदाहनो याहि तूयं तेन वि वृह रथ्येव चक्रा ॥८॥
रात्रीभिरस्मा अहभिर्दशस्येत् सूर्यस्य चक्षुर्मुहुरुन्मिमीयात् ।
दिवा पृथिव्या मिथुना सबन्धू यमीर्यमस्य बिभृयादजामि ॥९॥

---

५ (यमीकी उक्ति—) रूपकर्त्ता, शुभाशुभ-प्रेरक, सर्वात्मक, दिव्य और जनक प्रजापतिने तो हमें गर्भावस्थामें ही दम्पती बना दिया है। प्रजापतिका कर्म कोई लुप्त नहीं कर सकता। हमारे इस सम्बन्धको द्यावापृथिवी भी जानते हैं।

६ (यमीकी उक्ति—) प्रथम दिनकी (संगमनकी) बात कौन जानता है? किसने उसे देखा है? किसने उसका प्रकाश किया है? मित्र और वरुणका यह जो महान् धाम (अहोरात्र) है, उसके बारेमें, हे मोक्षबन्धन-कर्त्ता यम, तुम क्या कहते हो ?

७ जैसे एक शय्यापर पत्नी पतिके पास अपनी देहका उद्घाटन करती है, वैसे ही तुम्हारे पास, यम, मैं अपने शरीरको प्रकाशित कर देती हूँ। तुम मेरी अभिलाषा करो। आओ, एक स्थानपर दोनों शयन करें। रथके दोनों चक्रोंके समान हम एक कार्यमें प्रवृत्त हों।

८ (यमकी उक्ति—) देवोंके जो गुप्तचर हैं, वे दिनरात विचरण करते हैं—उनकी आँखें कभी बन्द नहीं होतीं। दुःखदायिनी यमी, शीघ्र दूसरेके पास जाओ और रथके चक्रोंके समान उसके साथ एक कार्य करो।

९ दिन-रातमें यमके लिये जो कल्पित भाग है, उसे यजमान दें, सूर्यका तेज यमके लिये उदित हो। परस्पर संबद्ध दिन द्युलोक और भूलोक यमके बन्धु हैं। यमी यम, भ्राताके अतिरिक्त, अन्य पुरुषको धारण करे।

आ घा ता गच्छानुत्तरा युगानि यत्र जामयः कृणवन्नजामि ।
उप बर्बृहि वृषभाय बाहुमन्यमिच्छस्व सुभगे पतिं मत् ॥१०॥
किं भ्रातासद्यदनाथं भवाति किमु स्वसा यन्निर्ऋतिर्निगच्छात् ।
कामभूता बह्वे३तद्रपामि तन्वा मे तन्वं सं पिपृग्धि ॥११॥
न वा उ ते तन्वा तन्वं संपपृच्यां पापमाहुर्यः स्वसारं निगच्छात् ।
अन्येन मत् प्रमुदः कल्पयस्व न ते भ्राता सुभगे वष्ट्येतत् ॥१२
बतो बतासि यम नैव ते मनो हृदयं चाविदाम ।
अन्या किल त्वां कक्ष्येव युक्तं परिष्वजाते लिबुजेव वृक्षम् ॥१३॥
अन्यमू षु त्वं यम्यन्य उ त्वां परिष्वजाते लिबुजेव वृक्षम् ।
तस्य वा त्वं मन इच्छा स वा तवाधा कृणुष्व संविदं सुभद्राम् ॥१४॥

---

१० भविष्यमें ऐसा युग आयगा, जिसमें भगिनियाँ अपने बन्धुत्व-विहीन भ्राताको पति बनावेंगी। सुन्दरी, मुझे छोड़कर दूसरेको पति बनाओ । वह जिस समय वीर्य-सिञ्चन करेगा, उस समय उसे बाहुओंमें अलिङ्गित करना।

११ (यमीकी उक्ति—) वह कैसा भ्राता है, जिसके रहते भगिनी अनाथा हो जाय और वह भगिनी ही क्या है, जिसके रहते भ्राताका दुःख दूर न हो ? मैं काम-मूर्च्छिता होकर नाना प्रकारसे बोल रही हूं, यह विचार करके मुझे भली भाँति भोगो।

१२ (यमकी उक्ति-) यमी, मैं तुम्हारे शरीरसे अपने शरीरको मिलाना नहीं चाहता जो भ्राता भगिनीका संभोग करता है, उसे लोग पापी कहते हैं। सुन्दरि, मुझे छोड़कर अन्य पुरुषके साथ आमोद-आह्लाद करो। तुम्हारा भ्राता तुम्हारे साथ मैथुन करना नहीं चाहता।

१३ (यमीका कथन—) हाय यम, तुम दुर्बल हो। तुम्हारे मन और हृदयको मैं कुछ नहीं समझ सकती। जैसे रस्सी घोड़ेको बाँधती है और जैसे लता वृक्षका आलिङ्गन करती है, वैसे ही अन्य स्त्री तुम्हें अनायास आलिङ्गित करती है; परन्तु मुझे तुम नहीं चाहते हो।

१४ (यमका वचन–) यमी, तुम भी अन्य पुरुषका ही भली भाँति आलिङ्गन करो। जैसे लता वृक्षको वेष्टन करती है, वैसे ही अन्य पुरुष तुम्हें आलिङ्गित करें। उसीका मन तुम हरण करो; वह भी तुम्हारे मनका हरण करे। अपने सहवासका प्रबन्ध उसीके साथ करो—इसीमें मङ्गल होगा।

११ सूक्त

अग्नि देवता। अङ्गि-पुत्र हविर्द्धान ऋषि। त्रिष्टुप् और जगती छन्द।

वृषा वृष्णे दुदुहे दोहसा दिवः पयांसि यह्वो अदितेरदाभ्यः।
विश्वं स वेद वरुणो यथा धिया स यज्ञियो यजतु यज्ञियाँ ऋतून् ॥१॥
रपद्गन्धर्वीरप्या च योषणा नदस्य नादे परि पातु मे मनः।
इष्टस्य मध्ये अदितिर्नि धातु नो भ्राता नो ज्येष्ठः प्रथमो वि वोचति ॥२॥
सो चिन्नु भद्रा क्षुमती यशस्वत्युषा उवास मनवे स्वर्वती।
यदीमुशन्तमुशतामनु क्रतुमग्निं होतारं विदथाय जीजनन् ॥३॥
अध त्यं द्रप्सं विभ्वं विचक्षणं विराभरदिषितः श्येनो अध्वरे।
यदी विशो वृणते दस्ममार्या अग्निं होतारमध धीरजायत ॥४॥
सदासि रण्वो यवसेव पुष्यते होत्राभिरग्ने मनुषः स्वध्वरः।
विप्रस्य वा यच्छशमान उक्थ्यं वाजं ससवाँ उपयासि भूरिभिः ॥५॥

१ वर्षक, महान् और अहिंसनीय अग्निने वर्षक यजमानके लिये महान् दोहनके द्वारा आकाशसे जलको दूहा। आदित्य अपनी बुद्धिसे सारे संसारको जानते हैं। यज्ञीय अग्नि यज्ञ-योग्य ऋतुओं (कालों) का पूजन करें।

२ अग्निके गुणोंको कहनेवाली गन्धर्वकी स्त्री और जलसे संस्कृत आहुतिरूपिणी स्त्रीने अग्निको तृप्त किया। मैं ध्यानावस्थित होकर भली भाँति स्तुति करता हूं। अखण्डनीय अग्नि हमें यज्ञके बीच बैठावे। सारे यजमानोंमें मुख्य हमारे ज्येष्ठ भ्राता स्तुति करते हैं।

३ भजनीय, शब्दवाली और कीर्त्तिवाली उषा यजमानके लिये, आदित्यवाली होकर, तुरत निकलीं। उसी समय, यज्ञके लिये, अग्निको उत्पन्न किया गया। जो यज्ञाभिलाषी हैं, उन्हींके प्रति अग्नि प्रसन्न होते हैं। अग्नि देवोंको बुलाते है।

४ श्येनपक्षी अग्नि-प्रेरित होकर महान्, सूक्ष्मदर्शक, न अधिक कम, न अधिक अधिक सोमको ले आया। जिस समय आर्यलोग सामने जानेयोग्य, दर्शनीय और देवाह्वान-कर्त्ता अग्निकी प्रार्थना करते हैं, उस समय यज्ञ-क्रिया उत्पन्न होती है।

५ पशुओंके लिये जैसे घास रुचिकर होती है, वैसे ही तुम सदा रमणीय हो। अग्नि, मनुष्योंके हवनसे तुम भली भाँति यज्ञ सम्पन्न करो। स्तोताका स्तोत्र सुनकर और हवीरूप अन्नको प्राप्त करके तुम अनेक देवोंके साथ जाते हो।

उदीरय पितरा जार आ भगमियक्षति हर्यतो हृत्त इष्यति ।
विवक्ति वह्निः स्वपस्यते मखस्तविष्यते असुरो वेपते मती ॥६॥
यस्ते अग्ने सुमतिं मर्तो अक्षत् सहसः सूनो अति स प्र शृण्वे ।
इषं दधानो वहमानो अश्वैरा स द्युमाँ अमवान् भूषति द्यून् ॥७॥
यदग्न एषा समितिर्भवाति देवी देवेषु यजता यजत्र ।
रत्ना च यद्विभजासि स्वधावो भागं नो अत्र वसुमन्तं वीतात् ॥८॥
श्रुधी नो अग्ने सदने सधस्थे युक्ष्वा रथममृतस्य द्रवित्नुम् ।
आ नो वह रोदसी देवपुत्रे माकिर्देवानामप भूरिह स्याः ॥९॥



६ अग्नि, अपनी ज्वालाको मातृ-पितृ-रूप द्यावापृथिवीकी ओर वैसे हो प्रेरित करो, जैसे नक्षत्र आदिको जीर्ण करनेवाले आदित्य अपना तेज द्युलोक और भूलोककी ओर प्रेरित करते हैं। यज्ञाभिलाषी देवोंके लिये यज्ञकर्त्ता यजमान यज्ञ करनेको तैयार है। वह हृदयसे व्यग्र है। अग्नि स्तुतिको वर्द्धित करनेकी इच्छा करते हैं। प्रधान पुरोहित (ब्रह्मा) भली भाँति कर्म सम्पन्न करनेके लिये उत्सुक हैं। वह स्तोत्रको बढ़ाते हैं। ब्रह्मा नामक प्रधान पुरोहित मन ही मन आशङ्का करते हैं कि, कदाचित् कोई दोष घट जाय।

७ बलके पुत्र अग्नि, अनुग्रहशील तुम्हें यजमान स्तोत्रों और हवियोंसे सेवित करता है। वह यजमान प्रसिद्ध होता है। वह अन्न देता है, घोड़े उसका वहन करते हैं। वह दीप्तिशाली और बली है। वह अनुदिन सुखी होता है।

८ यजनीय अग्नि, जिस समय हम ढेरकी ढेर स्तुतियाँ यजनीय देवोंके लिये करते हैं, उस समय रमणीय वस्तुएँ हमें दो। यज्ञीय द्रव्यको ग्रहण करनेवाले अग्नि, हम इससे धनका भाग प्राप्त करें।

९ अग्नि, सारे देवोंके यज्ञगृहमें रह कर तुम हमारे वचनको सुनो। अमर बरसानेवाले रथको योजित करो। देवोंके माता-पिता द्यावापृथिविको हमारे पास ले आओ। तुम यहीं रहो। देवोंके पाससे नहीं जाना।

१२ सूक्त

अग्नि देवता। हविर्द्धान ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

द्यावा ह क्षामा प्रथमे ऋतेनाभिश्रावे भवतः सत्यवाचा।
देवो यन्मर्तान् यजथाय कृण्वन्त्सीदद्धोता प्रत्यङ् स्वमसुं यन् ॥१॥
देवो देवान् परिभूर्ऋतेन वहा नो हव्यं प्रथमश्चिकित्वान्।
धूमकेतुः समिधा भाऋजीको मन्द्रो होता नित्यो वाचा यजीयान् ॥२॥
स्वावृग्देवस्यामृतं यदी गोरतो जातासो धारयन्त उर्वी।
विश्वे देवा अनु तत्ते यजुर्गुर्दुहे यदेनी दिव्यं घृतं वाः ॥३॥
अर्चामि वां वर्धायापो घृतस्नु द्यावाभूमी शृणुतं रोदसी मे।
अहा यद्द्यावोऽसुनीतिमयन्मध्वा नो अत्र पितरा शिशीताम् ॥४॥
किं स्विन्नो राजा जगृहे कदस्याति व्रतं चकृमा को विवेद।
मित्रश्चिद्धि ष्मा जुहुराणो देवाञ्छ्लोको न यातामपि वाजो अस्ति ॥५॥

---

१ प्रधान भूत द्यावापृथिवी, यज्ञके समय, सबके पहले, अग्निका आह्वान करें। अग्नि, यज्ञके लिये, मनुष्योंको प्रेरित करके और अपनी ज्वालाको धारण करके, देवोंको बुलानेके लिये बैठें।

२ अग्नि दिव्य हैं। वह इन्द्रादि देवोंके पास जाते हुए यज्ञके साथ हविको ले आवें। अग्नि, देवोंमें मुख्य, सर्वज्ञ, धूमध्वज, समिधाके द्वारा ऊर्द्ध्वज्वलन, स्तुत्य, आह्वाता, नित्य और यजमानोंके यज्ञ-कर्त्ता हैं।

३ अग्निदेव स्वयं जो जल उत्पन्न करते हैं, उससे उद्भिज्ज उत्पन्न होकर पृथिवीका रक्षण करते हैं। सारे देवता तुम्हारे जल-दानकी प्रशंसा करते हैं। तुम्हारी श्वेत ज्वाला स्वर्गके घृतरूप वृष्टि-वारिका दोहन करते हैं।

४ अग्नि, हमारे यज्ञ रूप कर्मको बढ़ाओ। वृष्टिजलका वर्षण करनेवाले द्यावापृथिवी, मैं तुम्हारी पूजा और स्तुति करता हूँ। द्यावापृथिवी, मेरा स्तोत्र सुनो। जिस समय स्तोता लोग, यज्ञके समय, स्तुति करते हैं, उस समय वृष्टि-जलका वर्षण करके हमारी मलिनताको दूर करो।

५ प्रदीप्त अग्निने क्या हमारी स्तुति और हविको ग्रहण किया है? क्या हमने उपयुक्त पूजन किया है? कौन जानता है? जैसे मित्रको बुलानेपर वह आता है, वैसे ही अग्नि भी आ सकते हैं। हमारी यह स्तुति देवोंके पास जाय। जो कुछ खाद्य है, वह भी देवताके पास जाय।

दुर्मन्त्वत्रामृतस्य नाम सलक्ष्मा यद्विषुरूपा भवाति ।
यमस्य यो मनवते सुमन्त्वग्ने तमृष्व पाह्यप्रयुच्छन् ॥६॥
यस्मिन्देवा विदथे मादयन्ते विवस्वतः सदने धारयन्ते ।
सूर्ये ज्योतिरदधुर्मास्यक्तून् परि द्योतनिं चरतो अजस्रा ॥७॥
यस्मिन्देवा मन्मनि सञ्चरन्त्यपीच्ये न वयमस्य विद्म ।
मित्रो नो अत्रादितिरनागान्त्सविता देवो वरुणाय वोचत् ॥८॥
श्रुधी नो अग्ने सदने सधस्थे युक्ष्वा रथममृतस्य द्रवित्नुम् ।
आ नो वह रोदसी देवपुत्रे माकिर्देवानामप भूरिह स्याः ॥९॥

१३ सूक्त

हविर्द्धान नामक शकटद्वय देवता। विवस्वान् ऋषि। जगती और त्रिष्टुप् छन्द ।

युजे वां ब्रम्ह पूर्व्यं नमोभिर्वि श्लोक एतु पथ्येव सूरेः ।
शृण्वन्तु विश्वे अमृतस्य पुत्रा आ ये धामानि दिव्यानि तस्थुः ॥१॥

६ अमर सूर्यका अपराधशून्य और मधुर रसवाला जल पृथिवीपर नाना रूपका होता है। सूर्य यमके अपराधको क्षमा करते हैं। महान् अग्नि, क्षमाशील सूर्यकी रक्षा करो।

७ अग्निके उपस्थित रहनेपर यज्ञमें देवता लोग प्रसन्न होते और यजमानके वेदीरूप स्थानमें अपनेको स्थापित करते हैं। देवोंने सूर्यमें तेज (दिनोंको) स्थापित किया और चन्द्रमामें रातोंको स्थापित किया। वर्द्धमान सूर्य और चन्द्र दीप्ति प्राप्त करते हैं।

८ जिन ज्ञानरूप अग्निके उपस्थित रहनेपर देवता लोग अपना कार्य सम्पादित करते हैं, उनका स्वरूप हम नहीं समझते । इस यज्ञमें मित्र, अदिति और सूर्य पाप-नाशक अग्निके पास हमें पाप-शून्य कहें।

९ अग्नि, सारे देवोंके यज्ञ-गृहमें रहकर तुम हमारे वचनको सुनो । अमृत बरसानेवाले रथको योजित करो। देवोंके माता-पिता द्यावापृथिवीको हमारे पास ले आओ। तुम यहीं रहो। देवोंके पाससे नहीं जाना।

—:o:—

१ शकटद्वय, प्राचीन समयमें उत्पन्न मन्त्रका उच्चारण करके और सोमादिको लाद कर पत्नीशालाके अन्तमें तुम दोनोंको ले जाता हूँ। स्तोताकी आहुतिके समान मेरा स्तोत्र-वाक्य देवोंके पास जाय। जो देवता वा अमर पुत्र दिव्य धाममें रहते हैं, वे सब सुन।

यमेइव यतमाने यदैतं प्र वां भरन्मानुषा देवयन्तः ।
आ सीदतं स्वमु लोकं विदाने स्वासस्थे भवतमिन्दवे नः ॥२॥
पञ्च पदानि रूपो अन्वरोहञ्चतुष्पदीमन्वेमि व्रतेन ।
अक्षरेण प्रति मिम एतामृतस्य नाभावधि सं पुनामि ॥३॥
देवेभ्यः कमवृणीत मृत्युं प्रजायै कममृतं नावृणीत ।
बृहस्पतिं यज्ञमकृण्वत ऋषिं प्रियां यमस्तन्वं प्रारिरेचीत् ॥४॥
सप्त क्षरन्ति शिशवे मरुत्वते पित्रे पुत्रासो अप्यवीवतन्नृतम् ।
उभे इदस्योभयस्य राजत उभे यतेते उभयस्य पुष्यतः ॥५॥

१४ सूक्त

पितृलोक, यम आदि देवता। वैवस्वत यम ऋषि। अनुष्टुप्, बृहती और त्रिष्टुप् छन्द।

परेयिवांसं प्रवतो महीरनु बहुभ्यः पन्थामनु पस्पशानम् ।
वैवस्वतं सङ्गमनं जनानां यमं राजानं हविषा दुवस्य ॥१॥

२ जब तुम जुड़वेंके समान जाते हो, तब देव-पूजक मनुष्य तुम्हारे ऊपर भरपूर होम-द्रव्य लादते हैं। तुम लोग अपने स्थानपर जाकर रहो। हमारे सोमके लिये शोभन स्थान ग्रहण करो।

३ यज्ञके जो पाँच (धाना, सोम, पशु, पुरोडाश और घृत) उपकरण हैं, यथायोग्य उनको मैं रखता हूँ। यथानियम चार त्रिष्टुबादि छन्दोंका प्रयोग करता हूँ। ओङ्कारका उच्चारण करके वर्त्तमान कार्यको सम्पन्न करता हूँ। यज्ञकी नाभि-स्वरूप वेदीपर मैं सोमका संशोधन करता हूँ।

४ देवोंमेंसे किसे मृत्यु-भवनमें भेजा जाय? प्रजामेंसे किसे अमर किया जाय? यज्ञकर्त्ता लोग मन्त्र-पूत यज्ञका अनुष्ठान करते हैं, जिससे यम हमारे (यजमानोंके) शरीरको मृत्यु-मुखमें नहीं भेजते।

५ स्तोता लोग पितृ-स्वरूप और प्रशंसनीय सोमके लिये सातो छन्दोंका उच्चारण करते हैं। पुत्र-स्वरूप पुरोहित लोग स्तुति करते हैं। दोनों शकट, देव और मनुष्य, दोनोंके लिये दीप्ति पाते हैं, कार्य करते हैं और देवों तथा मनुष्योंका पोषण करते हैं।



१ अन्तःकरण वा यजमान, तुम पितरोंके स्वामी यमकी, पुरोडाश आदिके द्वारा, परिचर्या करो। यम सत्कर्मानुष्ठाताओंको सुखके देशमें ले जाते हैं, वह अनेकोंका मार्ग परिष्कृत करते हैं और उनके पास ही सारा मानव-समुदाय जाता है।

यमो नो गातुं प्रथमो विवेद नैषा गव्यूतिरपभर्तवा उ ।
यत्रा नः पूर्वे पितरः परेयुरेना जज्ञानाः पथ्या अनु स्वाः ॥२॥
मातली कव्यैर्यमो अङ्गिरोभिर्बृहस्पतिर्ऋक्वभिर्वावृधानः ।
याँश्च देवा वावृधुर्ये च देवान्त्स्वाहान्ये स्वधयान्ये मदन्ति ॥३॥
इमं यम प्रस्तरमा हि सीदाङ्गिरोभिः पितृभिः संविदानः ।
आ त्वा मन्त्राः कविशस्ता वहन्त्वेना राजन् हविषा मादयस्व ॥४॥
अङ्गिरोभिरागहि यज्ञियेभिर्यम वैरूपैरिह मादयस्व ।
विवस्वन्तं हुवे यः पिता तेऽस्मिन्यज्ञे बर्हिष्या निषद्य ॥५॥
अङ्गिरसो नः पितरो नवग्वा अथर्वाणो भृगवः सोम्यासः ।
तेषां वयं सुमतौ यज्ञियानामपि भद्रे सौमनसे स्याम ॥६॥

---

२ सबमें मुख्य यम हमारे शुभाशुभको जानते हैं। यमके मार्गका कोई विनाश नहीं कर सकता। जिस पथसे हमारे पूर्वज गये हैं, उसी मार्गसे अपने-अपने कर्मानुसार सारे जीव जायंगे।

३ अपने सारथि (मातली) के प्रभु इन्द्र कव्यवाले पितरोंकी सहायतासे बढ़ते हैं। यम अङ्गिरा नामक पितरोंकी सहायतासे बढ़ते हैं और बृहस्पति ऋक नामक पितरोंकी सहायतासे बढ़ते हैं। जो देवोंकी संवर्द्धना करते हैं और जिनकी संवर्द्धना देवता करते हैं, सो सब बढ़ते हैं। कोई स्वाहाके द्वारा और कोई स्वधाके द्वारा प्रसन्न होते हैं।

४ यम, अङ्गिरा नामक पितरोंके साथ इस विस्तृत यज्ञविशेषमें आकर बैठो। ऋत्विकोंके मन्त्र तुम्हें बुलावे। राजन्, इस हविसे संतुष्ट होकर यजमानको प्रसन्न करो।

५ यम, नाना रूपोंवाले याज्ञिक अङ्गिरा लोगोंके साथ पधारो और इस यज्ञमें यजमानको प्रसन्न करो। तुम्हारे विवस्वान् नामक पिताको मैं इस यज्ञमें बुलाता हूँ। वह कुशोंपर बैठकर यजमानको प्रसन्न करें।

६ अङ्गिरा, अथर्वा और भृगु नामक पितृगण अभी-अभी पधारे हैं। वे सोमके अधिकारी हैं। यज्ञ-योग्य उन पितरोंकी अनुग्रह-बुद्धिमें हम रहें। हम उनकी प्रसन्नता प्राप्त कर कल्याण-मार्गी बनें।

प्रेहि प्रेहि पथिभिः पूर्व्येभिर्यत्रा नः पूर्वे पितरः परेयुः ।
उभा राजाना स्वधया मदन्ता यमं पश्यासि वरुणं च देवम् ॥७॥
संगच्छस्व पितृभिः सं यमेनेष्टापूर्तेन परमे व्योमन् ।
हित्वायावद्यं पुनरस्तमेहि संगच्छस्व तन्वा सुवर्चाः ॥८॥
अपेत वीत वि च सर्पतातोऽस्मा एतं पितरो लोकमक्रन् ।
अहोभिरद्भिरक्तुभिर्व्यक्तं यमो ददात्यवसानमस्मै ॥९॥
अति द्रव सारमेयौ श्वानौ चतुरक्षौ शबलौ साधुना पथा ।
अथा पितॄन्त्सुविदत्राँ उपेहि यमेन ये सधमादं मदन्ति ॥१०॥
यौ ते श्वानौ यम रक्षितारौ चतुरक्षौ पथिरक्षी नृचक्षसौ ।
ताभ्यामेनं परि देहि राजन्त्स्वस्ति चास्मा अनमीवं च धेहि ॥११॥

---

७ जहां हमारे प्राचीन पितामह आदि गये हैं, उसी प्राचीन मार्गसे, हे (मृत) पितः, जाओ। स्वधा (अमृतान्न) से प्रहृष्ट-मना राजा यम तथा वरुणदेवको देखो ।

८ पितः, उत्कृष्ट स्वर्गमें अपने पितरोंके साथ मिलो। साथ ही अपने धर्मानुष्ठानके फलसे भी मिलो । पापको छोड़कर अस्त (म्रियमान) नामक ग्रहमें पैठो और उज्ज्वल शरीरसे मिलो ।

९ श्मशानघाटपर स्थित पिशाचादिको, इस स्थानसे चले जाओ, हट जाओ, दूर होओ। पितरोंने इस मृत यजमानके लिये इस स्थानको बनाया है। यह स्थान दिवसों, जल द्वारा और रात्रिके द्वारा शोभित है। यमने इस स्थानको मृत व्यक्तिको दिया है ।

१० मृत पितः, चार आखों और विचित्र वर्णवाले ये जो दो कूकुर हैं, इनके पाससे शीघ्र चले जाओ। जो सुविज्ञ पितर यमके साथ सदा आमोदके साथ रहते हैं, उत्तम मार्गसे उन्हींके पास जाओ ।

११ यम, तुम्हारे गृहके रक्षक, चार आँखोंवाले, मार्गके रक्षक और मनुष्योंके द्वारा प्रशंसनीय जो दो कुक्कुर हैं, उनसे इस मृत व्यक्तिकी रक्षा करो । राजन्, इसे कल्याणभागी और नीरोगी करो ।

उरुणसावसुतृपा उदुम्बलौ यमस्य दूतौ चरतो जनाँ अनु ।
तावस्मभ्यं दृशये सूर्याय पुनर्दातामसुमद्येह भद्रम् ॥१२॥
यमाय सोमं सुनुत यमाय जुहुता हविः ।
यमं ह यज्ञो गच्छत्यग्निदूतो अरङ्कृतः ॥१३॥
यमाय घृतवद्धविर्जुहोत प्र च तिष्ठत ।
स नो देवेष्वा यमद्दीर्घमायुः प्र जीवसे ॥१४॥
यमाय मधुमत्तमं राज्ञे हव्यं जुहोतन ।
इदं नम ऋषिभ्यः पूर्वजेभ्यः पूर्वेभ्यः पथिकृद्भ्यः ॥१५॥
त्रिकद्रुकेभिः पतति षळुर्वीरेकमिद्बृहत् ।
त्रिष्टुब्गायत्री छन्दांसि सर्वा ता यम आहिता ॥१६॥



१२ लम्बी नाकोंवाले, दूसरोंका प्राण-भक्षण करके तृप्त होनेवाले मनुष्योंको लक्ष्य करके विचरण करनेवाले और विस्तृत बलवाले जो दो यम-दूत (कुक्कुर) हैं, वे आज यहाँ हमें, सूर्यके दर्शनके लिये, समीचीन प्राण दें।

१३ ऋत्विको, यमके लिये सोम प्रस्तुत करो। यमके लिये हविका हवन करो। जिस यज्ञके दूत अग्नि हैं और जिसे नाना द्रव्योंसे समन्वित किया गया है, वह यज्ञ यमकी ओर जाता है।

१४ ऋत्विको, तुम यमके लिये घृतसे युक्त हविका हवन करो और यमकी सेवा करो। देवोंके बीच यम, हमारे दीर्घ जीवनके लिये, लम्बी आयु दें।

१५ ऋत्विको, राजा यमके लिये अत्यन्त मिष्ट हविका हवन करो। हमसे पहले शोभन मार्ग बनानेवाले ऋत्विकोंके लिये यह नमस्कार है।

१६ यमराज त्रिकद्रुक (ज्योति, गौ और आयु) नामक यज्ञके अधिकारी हैं। यम छ स्थानों (द्युलोक, भूलोक, जल, उद्भिज्ज, उर्क और सूनृत) में रहते हैं। वह विराट् संसारमें विचरण करते हैं। त्रिष्टप्, गायत्री आदि छन्दोंमें यमकी स्तुति की जाती है।

१५ सूक्त

पितृलोक देवता । यमपुत्र शङ्ख ऋषि । त्रिष्टुप् और जगती छन्द ।

उदीरतामवर उत्परास उन्मध्यमाः पितरः सोम्यासः ।
असुं य ईयुरवृका ऋतज्ञास्ते नोऽवन्तु पितरो हवेषु ॥१॥
इदं पितृभ्यो नमो अस्त्वद्य ये पूर्वासो य उपरास ईयुः ।
ये पार्थिवे रजस्या निषत्ता ये वा नूनं सुवृजनासु विक्षु ॥२॥
आहं पितॄन्त्सुविदत्राँ अवित्सि नपातं च विक्रमणं च विष्णोः ।
बर्हिषदो ये स्वधया सुतस्य भजन्त पित्वस्त इहागमिष्ठाः ॥३॥
बर्हिषदः पितर उत्यर्वागिमा वो हव्या चकृमा जुषध्वम् ।
त आ गतावसा शन्तमेनाथा नः शं योररपो दधात ॥४॥
उपहूताः पितरः सोम्यासो बर्हिष्येषु निधिषु प्रियेषु ।
त आगमन्तु त इह श्रुवन्त्वधि ब्रुवन्तु तेऽवन्त्वस्मान् ॥५॥

---

१ उत्तम, मध्यम और अधम आदि तीन श्रेणियोंके पितर लोग हमारे प्रति अनुग्रह-युक्त होकर होमीय द्रव्यका ग्रहण करें। जो पितर अहिंसक होकर और हमारे धर्मानुष्ठानके प्रति दृष्टि रखकर हमारी प्राण रक्षा करनेके लिये आये हैं, वे, यज्ञ-कालमें, हमारी रक्षा करें।

२ जो पितर (पितामहादि) आगे और जो (कनिष्ठ भ्राता आदि) पीछे मरे हैं, जो पृथिवीपर आये हैं अथवा जो भाग्यशाली लोगोंके बीच हैं, उन सबको आज यह नमस्कार है।

३ पितर लोग भली भाँति परिचित हैं, मैंने उनको पाया है, इस यज्ञके सम्पादनका उपाय भी मैंने पाया है। जो पितर कुशोंपर बैठ कर हव्यके साथ सोम रसका ग्रहण करते हैं, वे सब पधारे हैं।

४ कुशोंपर बैठनेवाले पितरो, इस समय हमें आश्रय दो। तुम लोगोंके लिये ये सारे द्रव्य प्रस्तुत हैं, इनका भोग करो। इस समय आओ। हमारी रक्षा करो और हमारा उत्तम मङ्गल करो। हमें कल्याणभागी करो। हमें अकल्याण और पापसे दूर करो।

५ कुशोंके ऊपर ये सारे मनोहर द्रव्य रखे हुए हैं। इनका और सोमरसका भोग करनेके लिये पितर लोग बुलाये गये हैं। वे पधारें, हमारी स्तुतिको ग्रहण करें, आह्लाद प्रकट करें और हमारी रक्षा करें।

आच्या जानु दक्षिणतो निषद्येमं यज्ञमभि गृणीत विश्वे ।

मा हिंसिष्ट पितरः केन चिन्नो यद्व आगः पुरुषता कराम ॥६॥

आसीनासो अरुणीनामुपस्थे रयिं धत्त दाशुषे मर्त्याय ।

पुत्रेभ्यः पितरस्तस्य वस्वः प्र यच्छत त इहोर्जं दधात ॥७॥

ये नः सपूर्वे पितरः सोम्यासोऽनूहिरे सोमपीथं वसिष्ठाः ।

तेभिर्यमः संरराणो हवींष्युशन्नुशद्भिः प्रतिकाममत्तु ॥८॥

ये तातृषुर्देवत्रा जेहमाना होत्राविदः स्तोमतष्टासो अर्कैः ।

आग्ने याहि सुविदत्रेभिरर्वाङ् सत्यैः कव्यैः पितृभिर्घर्मसद्भिः ॥९॥

ये सत्यासो हविरदो हविष्पा इन्द्रेण देवैः सरथं दधानाः ।

आग्ने याहि सहस्रं देववन्दैः परैः पूर्वैः पितृभिर्घर्मसद्भिः ॥१०॥

---

६ पितरो, तुमलोग दक्षिण तरफ घुटने टेककर पृथिवीपर बैठते हुए इस यज्ञकी प्रशंसा करो। हम मनुष्य हैं; इसलिये हमसे अपराध होना सम्भव है । परन्तु उसके लिये हमारी हिंसा नहीं करना ।

७ लोहित शिखाके पास बैठनेवाले इन दाताओंको धन दो । पितरो, उनके पितरोंका धन दो—उन्हें इस यज्ञमें उत्साहित करो।

८ जिन सोमपायी प्राचीन पितरोंने उत्तम परिच्छदका धारण करके, यथानियम, सोमपान किया था, वे भी हविकी अभिलाषा करते हैं—यम भी कामना करते हैं । उनके साथ यम सुखी होकर इन होमीय द्रव्योंका यथेच्छ भोजन करते हैं ।

९ अग्नि, जो पितर, हवन करना जानते थे और अनेक ऋचाओंकी रचना करके स्तोत्र प्रस्तुत करते थे और जो, अपने कर्मके प्रभावसे, इस समय, देवत्वकी प्राप्ति कर चुके हैं, यदि वे क्षुधा-तृष्णावाले हों, तो उन्हें लेकर हमारे पास आओ । वे विशेष परिचित हैं । वे यज्ञमें बैठते हैं । उन पितरोंके लिये यह उत्कृष्ट हवि है ।

१० जो साधुस्वभाव पितर लोग देवोंके साथ, एकत्र होकर, हविका भक्षण और पान करते हैं और इन्द्रके साथ एक रथपर चढ़ते हैं, उन सब देवाराधक, यज्ञके अनुष्ठाता, प्राचीन तथा आधुनिक पितरोंके साथ आओ, हे अग्नि !

अग्निष्वात्ताः पितर एह ग छत सदःसदः सदत सुप्रणीतयः ।
अत्ता हवींषि प्रयतानि बर्हिष्यथा रयिं सर्ववीरं दधातन ॥११॥
त्वमग्न ईलितो जातवेदोऽवाड्ढव्यानि सुरभीणि कृत्वी ।
प्रादाः पितृभ्यः स्वधया ते अक्षन्नद्धि त्वं देव प्रयता हवींषि ॥१२॥
ये चेह पितरो ये च नेह याँश्च विद्म याँ उ च न प्रविद्म ।
त्वं वेत्थ यति ते जातवेदः स्वधाभिर्यज्ञं सुकृतं जुषस्व ॥१३॥
ये अग्निदग्धा ये अनग्निदग्धा मध्ये दिवः स्वधया मादयन्ते ।
तेभिः स्वराळसुनीतिमेतां यथावशं तन्वं कल्पयस्व ॥१४॥

१६ सूक्त

अग्नि देवता। यमके पुत्र दमन ऋषि। त्रिष्टुप् और अनुष्टुप् छन्द।

मैनमग्ने विदहो माभिशोच मास्य त्वचं चिक्षिपो मा शरीरम् ।
यदा शृतं कृणवो जातवेदोऽथेमेनं प्र हिणुतात् पितृभ्यः ॥१॥

११ अग्निके द्वारा स्वादित (अग्निष्वात्त नामक) पितरों, यहाँ आओ और एक-एक कर सब लोग अपने-अपने आसनपर बैठो। अभिपूजित पितरो, कुशोंपर परसे हुए शुद्ध हविका भक्षण करो। अनन्तर पुत्र-पौत्र आदिसे युक्त धन हमें दो।

१२ समस्त संसारके ज्ञाता अग्नि, हमने तुम्हारी स्तुति की है। तुमने हविको सुगन्धि करके पितरोंको दे दिया है। पितर लोग "स्वधा"के साथ दिये गये हविका भक्षण करें। देव, तुम भी परिश्रमसे प्रस्तुत किये गये हविका भक्षण करो।

१३ ज्ञानी अग्नि, यहाँ जो पितर आये हैं और जो नहीं आये हैं, जिन पितरोंको हम जानते हैं और जिन्हें हम नहीं जानते हैं, उन सबको तुम जानते हो। पितरो, स्वधाके साथ इस सुसम्पन्न यज्ञका भोग करो।

१४ स्वयंप्रकाश अग्नि, जो पितर अग्निसे जलाये गये हैं और जो नहीं जलाये गये हैं, वे सब स्वर्गमें स्वधा (हवीरूप अन्न) के साथ आनन्द करते हैं। उनके साथ एकत्र होकर तुम हमारे पितरोंके प्राणधार शरीरको, यथाभिलाष, देव-शरीर बनाओ।

१ अग्नि, मृतको सर्वांशतः नहीं भस्म करना। इसे क्लेश नहीं देना। इसके शरीर (वा चर्म) का छिन्न-भिन्न नहीं करना। ज्ञानी अग्नि, जिस समय तुम्हारी ज्वालासे इसका शरीर, भली भाँति, पकता है, उसी समय इसे पितरोंके पास भेज देना।

शृतं यदा करसि जातवेदोऽथेमेनं परिदत्तात् पितृभ्यः ।
यदा गच्छात्यसुनीतिमेतामथा देवानां वशनीर्भवाति ॥२॥
सूर्यं चक्षुर्गच्छतु वातमात्मा द्यां च गच्छ पृथिवीं च धर्मणा ।
अपो वा गच्छ यदि तत्र ते हितमोषधीषु प्रति तिष्ठा शरीरैः ॥३॥
अजो भागस्तपसा तं तपस्व तं ते शोचिस्तपतु तं ते अर्चिः ।
यास्ते शिवास्तन्वो जातवेदस्ताभिर्वहैनं सुकृतामु लोकम् ॥४॥
अवसृज पुनरग्ने पितृभ्यो यस्त आहुतश्चरति स्वधाभिः ।
आयुर्वसान उपवेतु शेषः सङ्गच्छतां तन्वा जातवेदः ॥५॥
यत्ते कृष्णः शकुन आतुतोद पिपीलः सर्प उत वा श्वापदः ।
अग्निष्टद्विश्वादगदं कृणोतु सोमश्च यो ब्राह्मणाँ आविवेश ॥६॥

२ अग्नि, जिस समय इसके शरीरको भली भाँति जलाना, उसी समय पितरोंके पास इसे भेजना। यह जब दोबारा सजीवता प्राप्त करेगा, तब देवोंके वशमें रहेगा।

३ मृत व्यक्ति, तुम्हारा नेत्र सूर्यके पास जाय और श्वास वायुमें। तुम अपने पुण्य-फलसे आकाश और पृथिवीपर जाओ। यदि जलमें जाना चाहते हो, तो जलमें ही जाओ। तुम्हारे शरीरके अवयव वनस्पतियोंमें रहें।

४ इस व्यक्तिका जो अंश जन्म-रहित है, सदा रहनेवाला है, अग्नि, तुम उसी अंशको अपने तापसे उत्तप्त करो। तुम्हारी उज्ज्वलता, तुम्हारी ज्वाला, उसे उत्तप्त करे। ज्ञानी अग्नि, तुम्हारी जो मङ्गलमयी मूर्त्तियाँ हैं, उनके द्वारा इस व्यक्तिको पुण्यवान् लोगोंके देशमें ले आओ।

५ अग्नि, जो तुम्हारा आहुति-स्वरूप होकर यज्ञीय द्रव्यका भोजन करता है, उसे पितरोंके पास भेजो। इसका जो भाग अवशिष्ट है, वह जीवन पाकर उठ जाय। ज्ञानी अग्नि, वह फिर शरीर प्राप्त करे।

६ मृत व्यक्ति, तुम्हारे शरीरके जिस अंशको काक (कौवे)ने पीड़ा पहुँचायी है अथवा चींटी, साँप वा हिंस्र जीवने जिस अंशको व्यथा दी है, उसे सर्वभुक् अग्नि नीरोग (व्यथाशून्य) करें। तुम्हारे शरीरमें पैठ जानेवाले सोम भी उसे नीरोग करें।

अग्नेर्वर्म परि गोभिर्व्ययस्व सं प्रोर्णुष्व पीवसा मेदसा च ।
नेत्त्वा धृष्णुर्हरसा जर्हृषाणो दधृग्विधक्ष्यन् पर्यङ्खयाते ॥७॥
इममग्ने चमसं मा वि जिह्वरः प्रियो देवानामुत सोम्यानाम् ।
एष यश्चमसो देवपानस्तस्मिन्देवा अमृता मादयन्ते ॥८॥
क्रव्यादमग्निं प्र हिणोमि दूरं यमराज्ञो गच्छतु रिप्रवाहः ।
इहैवायमितरो जातवेदा देवेभ्यो हव्यं वहतु प्रजानन् ॥९॥
यो अग्निः क्रव्यात् प्रविवेश वो गृहमिमं पश्यन्नितरं जातवेदसम् ।
तं हरामि पितृयज्ञाय देवं स घर्ममिन्वात् परमे सधस्थे ॥१०॥
यो अग्निः क्रव्यवाहनः पितॄन्यक्षदृतावृधः ।
प्रेदु हव्यानि वोचति देवेभ्यश्च पितृभ्य आ ॥११॥
उशन्तस्त्वा निधीमह्युशन्तः समिधीमहि ।
उशन्नुशत आवह पितॄन् हविषे अत्तवे ॥१२॥

---

७ मृत, तुम गोचर्मके साथ अग्नि-शिखा-स्वरूप कवचको धारण करो। तुम अपने मेद और मांससे आच्छादित होओ। ऐसा होनेपर बल-पूर्वक और अहंकारके साथ तुम्हें जलानेको तैयार हुए दुर्द्धर्ष अग्नि तुम्हारे सर्वांशमें नहीं व्याप्त हो सकते।

८ अग्नि, इस चमसको विचलित नहीं करना। यह सोमपायी देवोंको प्रसन्न करता है। देवोंके पान करनेके लिये जो चमस है, उसे देखकर अमर देवता हृष्ट होते ह।

९ मांसभोजनकर्त्ता (तीव्र) अग्निको मैं दूर करता हूं। यह अश्रद्धेय वस्तुका वहन करने-वाले हैं। जिन लोगोंके राजा यम हैं, उन्हींके पास अग्नि जायँ। यहाँ भी एक अग्नि हैं। यही विचारके साथ देवोंके पास हवि ले जायँ।

१० मांसभोजनकर्त्ता और चितावाले अग्नि तुम्हारे घरमें पैठे हैं, उन्हें मैं दूर करता हूं। दूसरे ज्ञानी अग्निको मैं, पितरोंको यज्ञ देनेके लिये, ग्रहण करता हूं। यही यज्ञको लेकर परम धाममें गमन करें।

११ जो अग्नि श्राद्धके द्रव्यका वहन करते और यज्ञकी उन्नति करते हैं, वह देवों और पितरोंकी आराधना करते और उनके पास होमीय द्रव्य ले जाते हैं।

१२ अग्नि, मैं तुम्हें यत्न-पूर्वक स्थापित करता हूं और यत्न-पूर्वक ही तुम्हें प्रज्वलित करता हूं। यज्ञाभिलाषी देवों और पितरोंके पास तुम यत्न-पूर्वक, भक्षणके लिये, होमीय द्रव्य ले जाते हो।

यं त्वमग्ने समदहस्तमु निर्वापया पुनः ।
कियाम्ब्वत्र रोहतु पाकदूर्वा व्यल्कशा ॥१३॥
शीतिके शीतिकावति ह्लादिके ह्लादिकावति ।
मण्डूक्या सु सङ्गम इमं स्वग्निं हर्षय ॥१४॥

---

२ अनुवाक । १७ सूक्त

सरण्यू, पूषा, सरस्वती, सोम आदि देवता । यमपुत्र देवश्रवा ऋषि । त्रिष्टुप्, अनुष्टुप्, बृहती आदि छन्द ।

त्वष्टा दुहित्रे वहतुं कृणोतीतीदं विश्वं भुवनं समेति ।
यमस्य माता पर्युह्यमाना महो जाया विवस्वतो ननाश ।१॥
अपागूहन्नमृतां मर्त्येभ्यः कृत्वी सवर्णामदद्दुर्विवस्वते ।
उताश्विनावभरद्यत्तदासीदजहादु द्वा मिथुना सरण्यूः ॥२॥
पूषा त्वेतश्च्यावयतु प्र विद्वाननष्टपशुर्भुवनस्य गोपाः ।
स त्वैतेभ्यः परिददत् पितृभ्योऽग्निर्देवेभ्यः सुविदत्रियेभ्यः ।।३॥

---

१३ अग्नि, तुमने जिसे जलाया है, उसे बुझाओ । यहाँ कुछ जल हो और शाखा-प्रशाखाओंवाली दूब उत्पन्न हो ।

१४ पृथिवी, तुम शीतल हो । तुमपर कितने ही शीतल वनस्पति हैं । तुम आह्लादिका हो । तुमपर अनेक आह्लादक वनस्पति हैं । भेकी (मेढ़ककी स्त्री) जिससे सन्तुष्ट हो—ऐसी वर्षा ले आओ । अग्निको सन्तुष्ट करो ।

---

१ त्वष्टा नामके देव अपनी कन्या सरण्यूका विवाह करनेवाले हैं; इस उपलक्षमें सारा संसार आ गया है । जिस समय यमकी माताका विवाह हुआ, उस समय महान् विवस्वान्‌की स्त्री अदृष्ट हुई ।

२ अमर सरण्यूको मनुष्योंके पास छिपाया गया । सरण्यूके सदृश एक स्त्रीका निर्माण करके विवस्वान्‌को उसे दिया गया । उस समय अश्वरूपिणी सरण्यूने अश्विद्वयको गर्भमें धारण किया और यमज सन्तानको उत्पन्न किया ।

३ ज्ञानी, संसारके रक्षक और अविनष्ट-पशु पूषा तुम्हें यहाँसे उत्तम लोकमें ले जायँ । अग्निदेव तुम्हें धनद देवों और पितरोंके पास ले जायँ ।

आयुर्विश्वायुः परिपासति त्वा पूषा त्वा पातु प्रपथे पुरस्तात् ।
यत्रासते सुकृतो यत्र ते ययुस्तत्र त्वा देवः सविता दधातु ॥४॥
पूषेमा आशा अनु वेद सर्वाः सो अस्माँ अभयतमेन नेषत् ।
स्वस्तिदा आघृणिः सर्ववीरोऽप्रयुच्छन् पुर एतु प्रजानन् ॥५॥
प्रपथे पथामजनिष्ट पूषा प्रपथे दिवः प्रपथे पृथिव्याः ।
उभे अभि प्रियतमे सधस्थे आ च परा च चरति प्रजानन् ॥६॥
सरस्वतीं देवयन्तो हवन्ते सरस्वतीमध्वरे तायमाने ।
सरस्वतीं सुकृतो अह्वयन्त सरस्वती शुषेदा वार्यं दात् ॥७॥
सरस्वति या सरथं ययाथ स्वधाभिर्देवि पितृभिर्मदन्ती ।
आसद्यास्मिन्बर्हिषि मादयस्वानमीवा इष आ धेह्यस्मे ॥८॥
सरस्वतीं यां पितरो हवन्ते दक्षिणा यज्ञमभिनक्षमाणाः ।
सहस्रार्घमिळो अत्र भागं रायस्पोषं यजमानेषु धेहि ॥९॥

---

४ सारे संसारके जीवन पूषा तुम्हारे जीवनकी रक्षा करें। वह तुम्हारे गन्तव्य स्थानके अग्र भागमें हैं। वह तुम्हारी रक्षा करें। जहाँ पुण्यवान् हैं, जहाँ वह गये हैं, उसी स्थानपर सविता (पूषा) तुम्हें ले जायँ ।

५ पूषा सारी दिशाएं जानते हैं। वह हमें उसी मार्गसे ले जायँ, जिसमें कोई भय नहीं है। वह कल्याणदाता हैं। उनकी मूर्त्ति आलोक-वेष्टित है। उनके साथ सारे वीर पुरुष हैं। वह हमें जानते हैं। सावधान होकर वह हमारे सामने आवें ।

६ सारे मार्गोंसे श्रेष्ठ मार्गमें पूषाने दर्शन दिया है। उन्होंने स्वर्ग और मर्त्यके श्रेष्ठ पथमें दर्शन दिया है। पूषाकी जो दो प्रेयसी (द्यावापृथिवी) हैं और जो एक साथ रहती हैं, उनको पूषा देव, विशेष समझ करके, मनोरञ्जन करते हैं ।

७ जो देवोंके उद्देश्यसे यज्ञ करते हैं, वे सरस्वतीकी पूजाके लिये आह्वान करते हैं। जिस समय देवताका, विस्तारके साथ, यज्ञ प्रारम्भ हुआ, उस समय पुण्यात्माओंने सरस्वतीको बुलाया। सरस्वती दाताकी अभिलाषा पूरी करें ।

८ सरस्वती, तुम पितरोंके साथ एक रथपर जाओ। तुम उनके साथ, आह्लाद-पूर्वक, सारे यज्ञीय द्रव्यका भोग करो। आओ, इस यज्ञमें आनन्द करो। हमें नीरोग और अन्न-दान करो।

९ सरस्वती, पितर लोग दक्षिण पार्श्वमें आकर और यज्ञस्थानमें विस्तीर्ण होकर तुम्हें बुलाते हैं। तुम यज्ञकर्त्ताके लिये बहुमूल्य और विलक्षण अन्नराशि तथा प्रचुर अन्न उत्पन्न कर दो ।

आपो अस्मान्मातरः शुन्धयन्तु घृतेन नो घृतप्वः पुनन्तु ।
विश्वं हि रिप्रं प्रवहन्ति देवीरुदिदाभ्यः शुचिरा पूत एमि ॥१०॥
द्रप्सश्चस्कन्द प्रथमाँ अनु द्यून्इमं च योनिमनु यश्च पूर्वः ।
समानं योनिमनु सञ्चरन्तं द्रप्सं जुहोम्यनु सप्त होत्राः ॥११॥
यस्ते द्रप्सः स्कन्दति यस्ते अंशुर्बाहुच्युतो धिषणाया उपस्थात् ।
अध्वर्योर्वा परि वा यः पवित्रात्तं ते जुहोमि मनसा वषट्कृतम् ॥१२॥
यस्ते द्रप्सः स्कन्नो यस्ते अंशुरवश्च यः परः स्रुचा ।
अयं देवो बृहस्पतिः सं तं सिञ्चतु राधसे ॥१३॥
पयस्वतीरोषधयः पयस्वन्मामकं वचः ।
अपां पयस्वदित् पयस्तेन मा सह शुन्धत ॥१४॥



१० जल मातृ-स्वरूप है। वह हमारा शोधन करे। जल घृत-प्रवाहसे प्रवाहित हो रहा है। उसी घृतके द्वारा वह हमारे मलको दूर करे। जल-रूपी देवी सारे पापोंको अपने स्रोतमें बहा ले जायँ। जलमेंसे हम स्वच्छ और पवित्र होकर आते हैं।

११ द्रव्य-रूप सोमरस अतीव सुन्दर और दीप्ति-शील अंशुसे क्षरित होते हैं। इस स्थान-पर और इसके पूर्वतन स्थानपर अर्थात् आधारपर सोम क्षरित होते हैं। हम सात हवन-कर्त्ता समान-रूपसे आधारके बीचमें विहार करनेवाले उन द्रव्य-रूप सोमका हवन करते हैं।

१२ सोम, तुम्हारा जो द्रव्यात्मक रस क्षरित होता है अथवा तुम्हारा जो अंशु (खाल) पुरोहितके हाथसे प्रस्तर-फलकके पास गिरता है अथवा जो पवित्रके ऊपर स्थापित हुआ है, उन सबका मन ही मन नमस्कार करते हुए हम हवन करते हैं।

१३ तुम्हारा जो रस बाहर हुआ है और जो तुम्हारा अंशु स्रुक् नामक पात्रके नीचे गिरा है, दोनोंका बृहस्पतिदेव सेचन करें। इससे हमें धन मिलेगा।

१४ वनस्पति दुग्धके समान रससे परिपूर्ण हैं। हमारा स्तोत्र—वचन रसमय दुग्धके सार रससे पूर्ण है। इन सारे पदार्थोंसे हमारा संस्कार करो।

१८ सूक्त

मृत्यु, धाता, त्वष्टा, अग्निसंस्कार आदि देवता । यम-पुत्र संकुसुक ऋषि । जगती, गायत्री, पङ्क्ति, अनुष्टुप् और त्रिष्टुप् छन्द ।

परं मृत्यो अनु परेहि पन्थां यस्ते स्वइतरो देवयानात् ।
चक्षुष्मते शृण्वते ते ब्रवीमि मा नः प्रजां रीरिषो मोत वीरान् ॥१॥
मृत्योः पदं योपयन्तो यदैत द्राघीय आयुः प्रतरं दधानाः ।
आप्यायमानाः प्रजया धनेन शुद्धाः पूता भवत यज्ञियासः ॥२॥
इमे जीवा वि मृतैरावव्रत्रन्नभूद्भद्रा देवहूतिर्नो अद्य ।
प्राञ्चो अगाम नृतये हसाय द्राघीय आयुः प्रतरं दधानाः ॥३॥
इमं जीवेभ्यः परिधिं दधामि मैषां नु गादपरो अर्थमेतम् ।
शतं जीवन्तु शरदः पुरूचीरन्तर्मृत्युं दधतां पर्वतेन ॥४॥
यथाहान्यनुपूर्वं भवन्ति यथ ऋतव ऋतुभिर्यन्ति साधु ।
यथा न पूर्वमपरो जहात्येवा धातरायूंषि कल्पयैषाम् ॥५॥

१ मृत्युदेव, तुम उस मार्गसे जाओ, जो देवयान-मार्गसे दूसरा है । तुम नेत्रवाले हो और सब कुछ जानते हो । मैं तुम्हारे लिये कहता हूँ । हमारे पुत्र, पौत्र आदिको नहीं मारना । वीरोंको भी नहीं मारना ।

२ मृत व्यक्तिके सम्बन्धियो, पितृयान (मृत्यु-मार्ग) को छोड़ो । इससे दीर्घ जीवन प्राप्त होगा । यज्ञानुष्ठाता यजमानो, तुम पुत्र, पौत्र, गौ आदिसे युक्त होकर इस जन्म और पूर्व जन्मके पापोंसे शून्य होकर पवित्र बनो ।

३ जीवित मनुष्य मृत व्यक्तियोंके पास लौट आवें । आज हमारा पितृमेध-यज्ञ कल्याणकर हो । हम उत्तम रीतिसे नर्तन और क्रीड़नके लिये समर्थ हों । हम दीर्घ आयु पावें ।

४ पुत्र, पौत्र आदिकी रक्षाके लिये, मृत्युके सामने, रोकनेके लिये, पाषाणका मैं व्यवधान करता हूँ, ताकि मरणमार्ग शीघ्र न आने पावे । ये सैकड़ों वर्ष जीवित रहें । शिला-खण्डसे मृत्युको दूर करो ।

५ जैसे दिनपर दिन बीतते हैं, ऋतुके पश्चात् ऋतु बीतती है और पूर्वकालीन पितरोंके रहते आधुनिक पुत्र आदि नहीं मरते, वैसे ही हे धाता, हमारे वंशजोंकी आयु स्थिर रखो—अकाल मृत्यु न होने पावे ।

आ रोहतायुर्जरसं वृणाना अनुपूर्वं यतमाना यतिष्ठ ।
इह त्वष्टा सुजनिमा सजोषा दीर्घमायुः करति जीवसे वः ॥६॥
इमा नारीरविधवाः सुपत्नीराञ्जनेन सर्पिषा सं विशन्तु ।
अनश्रवोऽनमीवाः सुरत्ना आ रोहन्तु जनयो योनिमग्रे ॥७॥
उदीर्ष्व नार्यभि जीवलोकं गतासुमेतमुप शेष एहि ।
हस्तग्राभस्य दिधिषोस्तवेदं पत्युर्जनित्वमभि सं बभूथ ॥८॥
धनुर्हस्तादाददानो मृतस्यास्मे क्षत्राय वर्चसे बलाय ।
अत्रैव त्वमिह वयं सुवीरा विश्वाः स्पृधो अभिमातीर्जयेम ॥९॥
उप सर्प मातरं भूमिमेतामुरुव्यचसं पृथ्वीं सुशेवाम् ।
ऊर्णम्रदा युवतिर्दक्षिणावत एषा त्वा पातु निर्ऋतेरुपस्थात् ॥१०॥

६ मृत व्यक्तिके पुत्रादिको, वार्द्धक्य प्राप्त करते हुए, आयुमें अधिष्ठित रहो। ज्येष्ठके पश्चात् कनिष्ठके क्रमसे तुमलोग कार्यमें अवस्थित रहो। शोभन-जन्मा त्वष्टा देव, तुम लोगोंके साथ, इस कर्ममें प्रवृत्त हुए तुम लोगोंकी आयु लम्बी करें।

७ ये सधवा और शोभन पतिवाली स्त्रियाँ घृताञ्जनके साथ अपने घरोंको जायँ। अश्रु-शून्य, मानस-रोग-रहित और शोभन धनवाली होकर ये स्त्रियाँ सबसे आगे घरोंमें जायँ।

८ मृत व्यक्तिकी पत्नी, पुत्रादिके गृहका विचार करके, यहाँसे उठो। यह तुम्हारा पति मरा हुआ है। इसके पास तुम (व्यर्थ) सोयी हुई हो। चलो; क्योंकि पणिग्रहण और गर्भ धारण करानेवाले पतिके साथ तुम स्त्री-कर्त्तव्य कर चुकी हो। तुमने इसके प्राण-गमनका निश्चय कर लिया है; इसलिये घर लौट चलो।

९ अपनी प्रजाके रक्षण, तेज और बलके लिये मैं मृत व्यक्तिके हाथसे धनु ले कर बोलता हूँ। मृत, तुम यहीं रहो। हम वीर पुत्रोंवाले हों। हम सारे अभिमानी शत्रुओंको जीतें।

१० मृत, मातृ-स्वरूपिणी, विस्तीर्ण, सर्वव्यापिनी और सुखदात्री पृथिवीके पास जाओ। यह यौवनसे युक्त स्त्रीके समान तुम्हारे लिये राशीकृत मेषलोमके सदृश कोमल-स्पर्शा हैं। तुमने दक्षिणा दी है वा यज्ञ किया है। यह पृथिवी मृत्युके पाससे अस्थि-रूप तुम्हारी रक्षा करें।

उच्छ्वञ्चस्व पृथिवि मा निबाधथाः सूपायनास्मै भव सूपवञ्चना ।
माता पुत्रं यथा सिचाभ्येनं भूम ऊर्णुहि ॥११॥
उच्छ्वञ्चमाना पृथिवी सु तिष्ठतु सहस्रं मित उप हि श्रयन्ताम् ।
ते गृहासो घृतश्चुतो भवन्तु विश्वाहास्मै शरणाः सन्त्वत्र ॥१२॥
उत्ते स्तभ्नामि पृथिवीं त्वत् परीमं लोगं निदधन्मो अहं रिषम् ।
एतां स्थूणां पितरो धारयन्तु तेऽत्रा यमः सादना ते मिनोतु ॥१३॥
प्रतीचीने मामहनीष्वाः पर्णमिवादधुः ।
प्रतीचीं जग्रभा वाचमश्वं रशनया यथा ॥१४॥

---

११ पृथिवी, तुम इस मृतको उन्नत करके रखो। इसे पीड़ा नहीं देना। इसके लिये सुपरिचारिका और सुप्रतिष्ठा होओ। जैसे माता पुत्रको अञ्चलसे ढकती है, वैसे ही, हे भूमि, इस अस्थिरूप मृतको आच्छादित करो।

१२ इसके ऊपर स्तूपाकार होकर पृथिवी भली भाँति अवस्थित हों। सहस्र धूलियाँ इसके ऊपर अवस्थिति करें। वे इसके लिये घृतपूर्ण गृहके समान हों। प्रतिदिन वे इसके आश्रय हों।

१३ अस्थित-कुम्भ, तुम्हारे ऊपर पृथिवीको उत्तम्भित करके रखता हूं। तुम्हारे ऊपर मैं लोष्ट्र अर्पण करता हूं, ताकि तुम्हारे ऊपर मिट्टी जाकर तुम्हें नष्ट न कर सके। इस स्थूणा (खूँटी) को पितर लोग धारण करें। पितृपति यम यहाँ तुम्हारा वासस्थान कर दें।

१४ प्रजापति, जैसे वाणके मूलमें पर्ण (पक्ष) लगाते हैं, वैसे ही प्रतिपूज्य संवत्सर-रूप दिनमें मुझ संकुसुक ऋषिको सारे देवोंने रखा है। जैसे शीघ्रगामी अश्वको रस्सीसे रोका जाता है, वैसे ही मेरी पूज्य स्तुतिको रखो।

षष्ठ अध्याय समाप्त

सप्तम अध्याय

१९ सूक्त

गौ देवता। यम पुत्र मथित ऋषि। गायत्री और अनुष्टुप् छन्द।

निवर्तध्वं मानु गातास्मान्त्सिषक्त रेवतीः।
अग्नीषोमा पुनर्वसू अस्मे धारयतं रयिम् ॥१॥
पुनरेना निवर्तय पुमरेना न्या कुरु।
इन्द्र एणा नियच्छत्वग्निरेना उपाजतु ॥२॥
पुनरेता निवर्तन्तामस्मिन् पुष्यन्तु गोपतौ।
इहैवाग्ने निधारयेह तिष्ठतु या रयिः ॥३॥
यन्नियानं न्ययनं संज्ञानं यत परायणम्।
आवर्तनं निवर्तनं यो गोपा अपि तं हुवे ॥४॥

---

१ गायो, तुमलोग हमारे पास आओ। हमारे सिवा दूसरेके पास मत जाओ। धनवती गायो, हमें दुग्ध दान करके सेवित करो। बार-बार धन देनेवाले अग्नि और सोम, तुम लोग हमें धन दो।

२ इन गायोंको बार-बार हमारे सामने करो। इन्हें अपने वशमें करो। इन्द्र भी इन्हें तुम्हारे वशमें करें। अग्नि इन्हें उपयोगिनी करें।

३ ये गायें बार-बार मेरे पास आवें। ये मेरे वशमें होकर पुष्ट हों। अग्नि, इन्हें मेरे पास रखो। यह गोधन मेरे पास रहें।

४ मैं गोसहित गोष्ठकी प्रार्थना करता हूं। गौओंके गृह आनेकी प्रार्थना करता हूं। गोसम्मेलन की भी प्रार्थना करता हूं। गोचरणकी भी प्रार्थना करता हूं। चरकर उनके घर आनेकी भी प्रार्थना करता हूं। गोपालकी भी प्रार्थना करता हूं।

य उदानड्व्ययनं य उदानट् परायणम् ।
आवर्तनं निवर्तनमपि गोपा निवर्तताम् ॥५॥
आ निवर्त निवर्तय पुनर्न इन्द्र गा देहि । जीवाभिर्भुनजामहै ॥६॥
परि वो विश्वतो दध ऊर्जा घृतेन पयसा ।
ये देवाः के च यज्ञियास्ते रय्या संसृजन्तु नः ॥७॥
आ निवर्तन वर्तय नि निवर्तन वर्तय ।
भूम्याश्चतस्रः प्रदिशस्ताभ्य एना निवर्तय ॥८॥

२० सूक्त

अग्नि देवता । प्रजापति-पुत्र विमद ऋषि । विराट्, अनुष्टुप्, त्रिष्टुप् आदि छन्द ।

भद्रं नो अपिवातय मनः ।
भद्रं नो अपिवातय मनः ॥१॥
अग्निमीळे भुजां यविष्ठं शासा मित्रं दुर्धरीतुम् ।
यस्य धर्मन्त्स्वरेनीः सपर्यन्ति मातुरूधः ॥२॥

५ जो गोपाल (गायें चरानेवाला) चारो ओर गायोंकी खोज करता है, जो गायोंको घरपर ले आता है और जो गायें चराता है, वह कुशल-पूर्वक घरपर लौट आवे ।

६ इन्द्र, तुम हमारी ओर होओ । गायोंको हमारी ओर करो । हमें गायें दो । हम चिरञ्जीविनी गायोंका दुग्ध भोगें ।

७ देवो, मैं तुम लोगोंका प्रचुर अन्न, घृत और दुग्ध आदि निवेदित कर देता हूं । फलतः जो यज्ञ—योग्य देवता हैं, वे हमें गोधन दें ।

८ चरवाहा, गायोंको मेरे पास ले आओ । गायो, तुम भी आओ । चरवाहा, गायोंको लौटाओ । गायो, लौट आओ । सूक्तकर्त्ता ऋषि, मैं कहाँसे लौटाऊँ ? हम कहाँसे लौटें ? (उत्तर—) चारों दिशाओंसे गायोंको लौटाओ । गायो, तुम भी इन दिशाओंसे लौट आओ ।

१ अग्नि, हमारे मनको शुभ करो—अपने स्तोत्रके योग्य करो ।

२ हविका भोग करनेवाले देवोंमें कनिष्ठ, अतीव युवक, सबके मित्र और दुर्द्धर्ष अग्निकी मैं स्तुति न करता हूं । बछड़े गोस्तन का आश्रय करके प्राण धारण करते हैं ।

यमासा कृपनीळं भासाकेतुं वर्धयन्ति । भ्राजते श्रेणिदन् ॥३॥

अर्यो विशां गातुरेति प्र यदानड् दिवो अन्तान् । कविरभ्रं दीद्यानः ॥४॥

जुषद्धव्या मनुषस्योर्ध्वस्तस्थावृभ्वा यज्ञे । मिन्वन्त्सद्म पुर एति ॥५॥

स हि क्षेमो हविर्यज्ञः श्रुष्टीदस्य गातुरेति । अग्निं देवा वाशीमन्तम् ॥६॥

यज्ञासाहं दुवस इषेऽग्निं पूर्वस्य शेवस्य । अद्रेः सूनुमायुमाहुः ॥७॥

नरो ये के चास्मदा विश्वेत्ते वाम आ स्युः । अग्निं हविषा वर्धन्तः ॥८॥

कृष्णः श्वेतोऽरुषो यामो अस्य ब्रध्न ऋज्र उत शोणो यशस्वान् ।
हिरण्यरूपं जनिता जजान ॥९॥

एवा ते अग्ने विमदो मनीषामूर्जो नपादमृतेभिः सजोषाः ।
गिर आ वक्षत् सुमतीरियान इषमूर्जं सुक्षितिं विश्वमाभाः ॥१०॥

३ कर्माधार और ज्वाला-रूप अग्निको स्तोतालोग वर्द्धित करते हैं। अग्नि स्तोताओंको अभीष्ट फल देनेवाले हैं।

४ अग्नि यजमानोंके लिये आश्रयणीय हैं। जिस समय अग्नि दीप्त होकर ऊपर उठते हैं, उस समय मेधावी अग्नि द्युलोकतक व्याप्त कर लेते हैं—मेघको भी व्याप्त कर लेते हैं।

५ यजमानके यज्ञमें हविका सेवन करनेवाले अग्नि, अनेक ज्वालाओंसे युक्त होकर ऊपर उठते हैं। अग्नि उत्तर वेदीको मापते हुए सामने आते हैं।

६ वही अग्नि सबके पालनके कारण हैं, यज्ञ भी वही हैं, पुरोडाश आदि भी हैं। अग्नि देवोंको बुलानेके लिये जाते हैं।

७ जो अग्नि देवोंको बुलानेवाले हैं, जिन्हें लोग पत्थरका पुत्र कहते हैं और जो यज्ञके धारक हैं, उत्कृष्ट सुखकी प्राप्तिके लिये उन्हीं अग्निकी सेवा करनेकी मैं अभिलाषा करता हूँ।

८ पुरोडाश आदिके द्वारा अग्निका संवर्द्धन करनेवाले जो हमारे पुत्र, पौत्रादि हैं, वे संभोग-योग्य पशु आदि धनमें बैठेंगे, ऐसी हम आशा करते हैं।

९ अग्निके जानेके लिये जो बृहत् रथ है, वह कृष्ण-वर्ण, शुभ्रवर्ण, सरल-गन्ता, रक्तवर्ण और बहुमूल्य वा कीर्त्तिशाली है। सुवर्णके सदृश उज्ज्वल करके विधाताने उसे बनाया है।

१० अग्नि, बल वा वनस्पतिके पुत्र हो। तुम अमर धनसे युक्त हो। अपनी प्रकृष्ट बुद्धिकी इच्छा करनेवाले विमद नामके ऋषिने तुम्हारे लिये ये स्तोत्र कहे हैं। तुम इन उत्कृष्ट स्तुतियोंको प्राप्त करके विमदको अन्न, बल, शोभन निवास और जो कुछ देने योग्य है, सो सब धन दो।

२१ सूक्त

देवता और ऋषि पूर्ववत्। आस्तार-ङ्क्ति छन्द—प्रत्येक मन्त्रमें पहलेके दो चरण गायत्री और अन्तके दो चरण जगती छन्द।

आग्निं न स्ववृक्तिभिर्होतारं त्वा वृणीमहे ।
यज्ञाय स्तीर्णबर्हिषे वि वो मदे शीरं पावकशोचिषं विवक्षसे ॥१॥

त्वामु ते स्वाभुवः शुम्भन्त्यश्वराधसः ।
वेति त्वामुपसेचनी वि वो मद ऋजीतिरग्न आहुतिर्विवक्षसे ॥२॥

त्वे धर्माण आसते जुहूभिः सिञ्चतीरिव ।
कृष्णा रूपाण्यर्जुना वि वो मदे विश्वा अधि श्रियो धिषे विवक्षसे ॥३॥

यमग्ने मन्यसे रयिं सहसावन्नमर्त्य ।
तमा नो वाजसातये वि वो मदे यज्ञेषु चित्रमा भरा विवक्षसे ॥४॥

अग्निर्जातो अथर्वणा विदद्विश्वानि काव्या ।
भुवद्दूतो विवस्वतो वि वो मदे प्रियो यमस्य काम्यो विवक्षसे ॥५॥

---

१ अपनी बनायी स्तुतियोंसे देवाह्वाता अग्निको, विस्तृत कुशवाले यज्ञके लिये, हम वरण करते हैं। अग्नि, तुम महान् हो। वनस्पतियोंमें रहनेवाले और शोधक-दीप्ति ज्वालाको विमदके लिये प्रेरित करो।

२ अग्नि, दीप्त और व्याप्त-धन यजमान तुम्हें सुशोभित करते हैं। क्षरणशील और सरल-गति आहुति, अग्निदेव, तुम्हारे पास तृप्तिके लिये जाती है। तुम महान् हो।

३ यज्ञके धारक ऋत्विक् लोग होम-पात्रोंसे वैसे ही तुम्हारी सेवा करते हैं, जैसे जल पृथिवीको सींचता है। अग्नि, देवोंके मदके लिये तुम कृष्णवर्ण ज्वालारूपों और सारी शोभाको धारण करते हो। तुम महान् हो।

४ अमर और बली अग्नि, तुम जिस धनको श्रेष्ठ समझते हो, उस विचित्र धनको, अन्न-लाभके लिये, हमारे निमित्त ले आओ। तुम समस्त देवोंकी तृप्तिके लिये धन ले आओ। तुम महान् हो।

५ अथर्वा ऋषिने अग्निको उत्पन्न किया था। अग्नि सब प्रकारके स्तोत्रोंको जानते हैं। अग्नि, तुम देवाह्वानके लिये यजमानके दूत हो। अग्नि यजमानके प्रिय हैं। अग्नि, तुम कमनीय और महान् हो।

त्वां यज्ञेष्वीळतेऽग्ने प्रयत्यध्वरे ।
त्वं वसूनि काम्या वि वो मदे विश्वा दधासि दाशुषे विवक्षसे ॥६॥
त्वां यज्ञेष्वृत्विजं चारुमग्ने निषेदिरे ।
घृतप्रतीकं मनुषो वि वो मदे शुक्रं चेतिष्ठमक्षभिर्विवक्षसे ॥७॥
अग्ने शुक्रेण शोचिषोरु प्रथयसे बृहत् ।
अभिक्रन्दन्वृषायसे वि वो मदे गर्भं दधासि जामिषु विवक्षसे ॥८॥

२२ सूक्त

इन्द्र देवता । विमद ऋषि । बृहती, त्रिष्टुप् और अनुष्टुप् छन्द ।

कुह श्रुत इन्द्रः कस्मिन्नद्य जने मित्रो न श्रूयते ।
ऋषीणां वा यः क्षये गुहा वा चर्कृषे गिरा ॥१॥
इह श्रुत इन्द्रो अस्मे अद्य स्तवे वज्र्यृचीषमः ।
मित्रो न यो जनेष्वायशश्चक्रे असाम्या ॥२॥

---

६ अग्नि, यज्ञका आरम्भ होनेपर ऋत्विक् और यजमान तुम्हारी स्तुति करते हैं। अग्नि, तुम हविर्दाता विमदके लिये सब प्रकारके धन देते हो। इसलिये तुम महान् हो।

७ अग्नि, तृप्तिके लिये होता, रमणीय, आहुतसे पूर्ण मुख वाले, जाज्वल्यमान और व्यापक तेजके कारण ज्ञानी तुम्हें यजमान लोग यज्ञमें नियमतः स्थापित करते हैं। तुम महान् हो।

८ अग्नि, तुम महान् हो। प्रदीप्त तेजसे तुम प्रसिद्ध होते हो। तुम समर-समयमें दर्पित वृषके समान शब्द करते हो। तुम भगिनी-सदृश ओषधियोंमें बीज धारण करते हो। सोमादिका मद उत्पन्न होनेपर तुम महान् होते हो।

---

१ इन्द्र आज कहाँ प्रख्यात हैं? आज वह, मित्रके समान, किस व्यक्तिके पास हैं? इन्द्र क्या ऋषियोंके आश्रम वा किसी गुहामें स्तुत किये जाते हैं?

२ आज इस यज्ञमें इन्द्र प्रख्यात हैं। आज हम उनकी स्तुति करते हैं। इन्द्र वज्रधर और स्तुत्य हैं। इन्द्र स्तोताओंमें मित्रके समान, असाधारण रूपसे, कीर्ति करनेवाले हैं।

महो यस्पतिः शवसो असाम्या महो नृम्णस्य तूतुजिः ।
भर्ता वज्रस्य धृष्णोः पिता पुत्रमिव प्रियम् ॥३॥
युजानो अश्वा वातस्य धुनी देवो देवस्य वज्रिवः ।
स्यन्ता पथा विरुक्मता सृजानः स्तोष्यध्वनः ॥४॥
त्वन्त्या चिद्वातस्याश्वागा ऋज्रा त्मना वहध्यै ।
ययोर्देवो न मर्त्यो यन्ता नकिर्विदाय्यः ॥५॥
अध ग्मन्तोशना पृच्छते वां कदर्था न आगृहम् ।
आ जग्मथुः पराकाद्दिवश्च ग्मश्च मर्त्यम् ॥६॥
आ न इन्द्र पृक्षसेऽस्माकं ब्रह्मोद्यतम् ।
तत्त्वा याचामहेऽवः शुष्णं यद्धन्नमानुषम् ॥७॥

३ जो इन्द्र बल-पति, अनन्तगुण और स्तोताओंके लिये महान् अन्नके दाता हैं, वह शत्रुओंको रगड़नेवाले वज्रके धारक हैं। जैसे पिता प्रिय पुत्रकी रक्षा करता है, वैसे ही इन्द्र हमारी रक्षा करें।

४ वज्रधर इन्द्र, तुम द्योतमान हो वायुदेवसे भी शीघ्र जानेवाले और उचित मार्गसे जानेवाले अपने हरि नामक अश्वोंको रथमें जोतकर और युद्ध-पथको उत्पन्न करके सदा स्तुत होते हो।

५ इन्द्र, तुम स्वयं उन वायु-वेग-तुल्य और सरल-गामी अश्वोंको चलाकर हमारे अभिमुख जाते हो। देवोंमेंसे कोई भी ऐसा नहीं है, जो तुम्हारे इन दोनों घोड़ोंका सञ्चालन कर सके और इनके बलको जान सके।

६ इन्द्र और अग्नि, जिस समय तुम अपने स्थानोंको जाने लगे, उस समय भार्गव उशनाने तुमसे सम्भाषण किया—तुमलोग किस प्रयोजनसे, इतनी दूरसे हमारे यहाँ आये हो? (मेरे विचारसे) तुम लोग द्युलोक और भूलोकसे जो मेरे यहाँ आये हो, वह केवल तुम लोगोंका अनुग्रह है।

७ इन्द्र हमने इस यज्ञकी सामग्री प्रस्तुत की है। तुम जबतक तृप्त नहीं होओ, तबतक उसका भक्षण करो। हम तुमसे अन्न और उसका रक्षण चाहते हैं। तुमसे हम वैसा बल भी चाहते हैं, जिससे राक्षसोंका विनाश हो सके।

अकर्मा दस्युरभि नो अमन्तुरन्यव्रतो अमानुषः ।
त्वं तस्यामित्रहन् वधर्दासस्य दम्भय ॥८॥
त्वं न इन्द्र शूर शूरैरुत त्वोतासो बर्हणा ।
पुरुत्रा ते वि पूर्तयो नवन्त क्षोणयो यथा ॥९॥
त्वं तान्वृत्रहत्ये चोदयो नॄन् कार्पाणे शूर वज्रिवः ।
गुहा यदी कवीनां विशां नक्षत्रशवसाम् ॥१०॥
मक्षू ता त इन्द्र दानाप्नस आक्षाणे शूर वज्रिवः ।
यद्ध शुष्णस्य दम्भयो जातं विश्वं सयावभिः ॥११॥
माकुध्र्यगिन्द्र शूर वस्वीरस्मे भूवन्नभिष्टयः ।
वयं वयन्त आसां सुम्ने स्याम वज्रिवः ॥१२॥
अस्मे ता त इन्द्र सन्तु सत्याहिंसन्तीरुपस्पृशः ।
विद्याम यासां भुजो धेनूनां न वज्रिवः ॥१३॥

---

८ हमारी चारो ओर यज्ञ-शून्य दस्युदल है। वह कुछ नहीं मानता, श्रुत्यादि कर्मोंसे शून्य है और उसकी प्रकृति आसुरी है। शत्रु-नाशक इन्द्र, इस दस्यु-जातिका विनाश करो ।

९ विक्रान्त इन्द्र, तुम शूर मरुतोंके साथ हमारी रक्षा करो। तुमसे रक्षित होकर हम शत्रु-विनाशमें समर्थ हों। जैसे मनुष्य अपने स्वामीकी सेवाके लिये उसे वेष्टित करते हैं, वैसे ही तुम्हारे दिये प्रचुर पदार्थ स्तोताओंको वेष्टित करते हैं ।

१० वज्रधर इन्द्र, वृत्र-वधके लिये तुम प्रसिद्ध मरुतोंको उस समय प्रेरित करते हो, जिस समय तुम स्तोता कवियोंका, नक्षत्रवासी देवोंके प्रति, सुन्दर स्तोत्र सुनते हो ।

११ शूर और वज्रधर इन्द्र, दान करना ही तुम्हारा कर्म है। युद्ध-क्षेत्रमें बहुत शीघ्र तुम्हारा कर्म होता है। तुमने मरुतोंके साथ शुष्णके सारे वंशका विनाश कर डाला है।

१२ शूर इन्द्र, हमारी ये महती वासनाएँ वृथा न होने पावें। वज्रधर इन्द्र, हमारी सारी लालसाएँ फलवती होकर सुखकरी हों।

१३ हमारे लिये तुम्हारा अनुग्रह हो, ताकि हमारी हिंसा नहीं हो। जैसे लोग गायके दूध आदिका भोग करते हैं, वैसे ही हम तुम्हारे प्रसादका फल भोगें।

अहस्ता यदपदी वर्धत क्षाः शचीभिर्वेद्यानाम् ।
शुष्णं परि प्रदक्षिणिद्विश्वायवे नि शिश्नथः ॥१४॥
पिबापिबेदिन्द्र शूर सोमं मा रिषण्यो वसवान वसुः सन् ।
उत त्रायस्व गृणतो मघोनो महश्च रायो रेवतस्कृधी नः ॥१५॥

२३ सूक्त

देवता और ऋषि पूर्ववत् । त्रिष्टुप्, अभिसारिणी (दो चरण दस-दस अक्षरोंके और अन्तके दो बारह-बारह चरणोंके) तथा जगती छन्द ।

यजामह इन्द्रं वज्रदक्षिणं हरीणां रथ्यं विव्रतानाम् ।
प्र श्मश्रु दोधुवदूर्ध्वथा भूद्वि सेनाभिर्दयमानो वि राधसा ॥१॥
हरी न्वस्य या वने विदे वस्विन्द्रो मघैर्मघवा वृत्रहा भुवत् ।
ऋभुर्वाज ऋभुक्षाः पत्यते शवोऽव क्ष्णौमि दासस्य नाम चित् ॥२॥

---

१४ देवोंकी क्रियाके द्वारा यह पृथिवी हस्त-पाद-शून्या होकर चारो ओर बढ़ी है। पृथिवीकी प्रदक्षिणा करके और चारो ओर गमन करके तुमने शुष्ण नामक असुरकी हिंसा की है ।

१५ शूर इन्द्र, सोमका शीघ्र पान करो। इन्द्र, तुम धनी हो। प्रशस्त होकर तुम हमारी हिंसा नहीं करना। तुम स्तोता यजमानकी रक्षा करना। हमें प्रचुर धनसे धनी बनाओ।



१ जो इन्द्र विविध कर्म-कुशल और हरितवर्ण अश्वोंको रथमें जोतते हैं और जिनके दाहिने हाथमें वज्र है, हम उनकी पूजा करते हैं। सोमपानके अनन्तर इन्द्र अपने श्मश्रु (मूँछ, दाढ़ी) को हिला कर और विस्तृत सेना तथा अन्न लेकर विपक्षियोंका संहार करनेके लिये ऊपर गये वा प्रकट हुए। *

२ इन्द्रके हरितवर्ण दो अश्वोंने वनमें बढ़िया घास खायी है । इन दोनोंको लेकर और प्रचुर धनसे धनी होकर इन्द्रने वृत्रको नष्ट किया। इन्द्र विराट्-मूर्त्ति, बली, दीप्तिशाली और धनके अधिपति हैं। मैं दस्यु-जातिका नाम तक नष्ट कर देना चाहता हूं।

* क्या उन दिनों सभी दाढ़ी-मूँछ रखते थे ?

यदा वज्रं हिरण्यमिदथा रथं हरी यमस्य वहतो वि सूरिभिः ।
आ तिष्ठति मघवा सनश्रुत इन्द्रो वाजस्य दीर्घश्रवसस्पतिः ॥३॥
सो चिन्नु वृष्टिर्यूथ्या स्वा सचाँ इन्द्रः श्मश्रूणि हरिताभि प्रुष्णुते ।
अव वेति सुक्षयं सुते मधूदिद्धूनोति वातो यथा वनम् ॥४॥
यो वाचा विवाचो मृध्रवाचः पुरू सहस्राशिवा जघान ।
तत्तदिदस्य पौंस्यं गृणीमसि पितेव यस्तविषीं वावृधे शवः ॥५॥
स्तोमं त इन्द्र विमदा अजीजनन्नपूर्व्यं पुरुतमं सुदानवे ।
विद्मा ह्यस्य भोजनमिनस्य यदा पशुं न गोपाः करामहे ॥६॥
माकिर्न एना सख्या वि यौषुस्तव चेन्द्र विमदस्य च ऋषेः ।
विद्मा हि ते प्रमतिं देव जामिवदस्मे ते सन्तु सख्या शिवानि ॥७॥

---

३ जिस समय इन्द्र सुवर्णमय वज्रका धारण करते हैं, उस समय वह उसी रथपर, विद्वानोंके साथ, चढ़ते हैं, जो रथ हरितवर्णवाले दो अश्वोंके साथ जाता है। इन्द्र चिरप्रसिद्ध धनी और सर्वजन-विदित अन्नराशिके स्वामी हैं।

४ जैसे वृष्टि पशु-समूहको भिंगोती है, वैसे ही इन्द्र हरितवर्ण सोमरसके द्वारा अपनी मूँछ-दाढ़ीको भिगोते हैं। अनन्तर वह शोभन यज्ञ-गृहमें जाते हैं और वहाँ जो मधुर सोमरस प्रस्तुत रहता है, उसे पीकर अपनी मूँछ-दाढ़ीको उसी प्रकार हिलाते हैं, जिस प्रकार वायु वनको हिलाती है।

५ शत्रु लोग नाना प्रकारके वचन बोल रहे थे। इन्द्रने अपने वचनसे उन्हें चुप करके शत-सहस्र शत्रुओंका संहार कर डाला। जैसे पिता, अन्न देकर, पुत्रको बलिष्ठ करता है, वैसे ही वह मनुष्योंको बलिष्ठ करते हैं। हम इन्द्रकी इन शक्तियोंका बखान करते हैं।

६ इन्द्र, विमदवंशीयोंने तुम्हें अतीव प्रतिष्ठित जानकर तुम्हारे लिये अतीव विलक्षण और अतीव विस्तृत स्तुति बनायी है। हम जानते हैं कि, राजा इन्द्रकी तृप्तिका साधन क्या है। जैसे चरवाहा गौको खानेका लोभ दिखाकर उसे अपने पास बुलाता है, वैसे ही हम भी इन्द्रको बुलाते हैं।

७ इन्द्र, तुम्हारे और विमद ऋषिके साथ जो सब मैत्रीका बन्धन है, वह शिथिल न होने पावे। देव, जैसे भ्राता और भगिनीमें मनकी एकता है, वैसे ही तुम्हारे मनका ऐक्य हम जानते हैं। हमारे साथ तुम्हारा कल्याणकर बन्धुत्व स्थिर रहे।

२४ सूक्त

इन्द्र और अश्विद्वय देवता। विमद ऋषि। अनुष्टुप् और आस्तारपङ्क्ति छन्द।

इन्द्र सोममिमं पिब मधुमन्तं चमू सुतम्।
अस्मे रयिं नि धारय वि वो मदे सहस्रिणं पुरूवसो विवक्षसे ॥१॥
त्वां यज्ञेभिरुक्थैरुप हव्येभिरीमहे।
शचीपते शचीनां वि वो मदे श्रेष्ठं नो धेहि वार्यं विवक्षसे ॥२॥
यस्पतिर्वार्याणामसि रध्रस्य चोदिता।
इन्द्र स्तोतॄणामविता वि वो मदे द्विषो नः पाह्यंहसो विवक्षसे ॥३॥
युवं शक्रा मायाविना समीची निरमन्थतम्।
विमदेन यदीलिता नासत्या निरमन्थतम् ॥४॥
विश्वे देवा अकृपन्त समीच्योर्निष्पतन्त्योः।
नासत्यावब्रुवन्देवाः पुनरावहतादिति ॥५॥

---

१ इन्द्र, प्रस्तर-फलकोंके ऊपर रगड़ा जाकर यह मधुर सोमरस, तुम्हारे लिये, तयार है। पियो। प्रचुर धनवाले इन्द्र, हमें सहस्र-सङ्ख्यक प्रचुर धन दो। विमदके लिये तुम महान् हो।

२ इन्द्र, यज्ञीय सामग्री, स्तुति और होमीय वस्तुके द्वारा हम तुम्हारी आराधना करते हैं। तुम सारे कर्मोंके प्रभु हो। सारे कर्म सफल करते हो। अतीव उत्तम और अभिलषित वस्तु हमें दो। विमदके लिये तुम महान् हो।

३ तुम विविध अभिलषित वस्तुओंके स्वामी हो। तुम उपासकको उपासना-कार्यमें प्रेरित करते हो। तुम स्तोताओंके रक्षक हो। तुम हमें शत्रुके हाथोंसे और पापसे बचाओ।

४ कर्म-निष्ठ अश्विद्वय, तुम्हारा कार्य अद्भुत है। तुम सत्यरूप हो। जिस समय विमदने तुम्हारी स्तुति की थी, उस समय काठोंमें घर्षण करके और दोनोंने एकत्र होकर अग्नि-मन्थन किया था—पृथक्-पृथक् नहीं।

५ अश्विद्वय, जिस समय दोनों अरणि (अग्नि-मन्थन-काष्ठ), तुम्हारे हाथोंसे संचालित होकर, इकट्ठे हुए और अग्नि स्फुलिङ्ग बाहर करने लगे, उस समय सारे देवता तुम्हारी प्रशंसा करने लगे। देवता लोग अश्विद्वयको बोलने लगे, "फिर ऐसा करना।"

मधुमन्मे परायणं मधुमत् पुनरायनम् ।
तां नो देवा देवतया युवं मधुमतस्कृतम् ॥६॥

२५ सूक्त

सोम देवता। विमद ऋषि। आस्तार-पङ्क्ति छन्द।

भद्रं नो अपि वातय मनो दक्षमुत क्रतुम् ।
अधा ते सख्ये अन्धसो वि वो मदे रणन्गावो न यवसे विवक्षसे ॥१॥
हृदिस्पृशस्त आसते विश्वेषु सोम धामसु ।
अधा कामा इमे मम वि वो मदे वितिष्ठन्ते वसूयवो विवक्षसे ॥२॥
उत व्रतानि सोम ते प्राहं मिनामि पाक्या ।
अधा पितेव सूनवे वि वो मदे मृला नो अभि चिद्वधाद्विवक्षसे ॥३॥
समु प्र यन्ति धीतयः सर्गासोऽवताँइव ।
क्रतुं नः सोम जीवसे वि वो मदे धारया चमसाँइव विवक्षसे ४॥

---

६ अश्विद्वय, मेरा बाहर जाना प्रीतिकर हो। मेरा पुनरागमन भी वैसा ही मधुर हो—मैं जब जहाँ जाऊँ, प्रीति प्राप्त करूं। दोनों देव, अपनी दिव्यशक्तिके बलसे हमें सभी विषयोंमें सन्तुष्ट करो।

१ सोम, हमारे मनको इस प्रकार उत्तम रूपसे प्रेरित करो कि, वह निपुण और कर्मनिष्ठ हो। जैसे गायें घासमें रत होती हैं, वैसे ही स्तोता लोग अन्नके प्रति रत होते हैं। विमदके लिये तुम महान् हो।

२ सोम, पुरोहित लोग स्तुतिके द्वारा तुम्हारे चित्तका हरण करके चारो ओर बैठते हैं। धन-प्राप्तिके लिये मेरे मनमें नाना प्रकारकी कामनाएँ उत्पन्न होती हैं। विमदके लिये तुम महान् हो।

३ सोम, अपनी इस परिणत बुद्धिके द्वारा मैं तुम्हारे कार्यका परिमाण करके देखता हूं। जैसे पिता पुत्रके प्रति अनुकूल होता है, वैसे ही तुम हमारे लिये होओ। शत्रु-संहार करके हमें सुखी करो। विमदके लिये महान् हो।

४ सोम, जैसे कलस जल निकालनेके लिये कुएँके भीतर जाता है, वैसे ही हमारे सारे स्तोत्र तुम्हारे लिये जाते हैं। हमारो प्राण-रक्षाके लिये इस यज्ञको सुसम्पन्न करो। जैसे जल-पिपासु तीरके पास पान-पात्र धारण करता है, वैसे ही तुम धारण करो। तुम महान् हो।

तव त्ये सोम शक्तिभिर्निकामासो व्यृण्विरे ।
गृत्सस्य धीरास्तवसो वि वो मदे व्रजं गोमन्तमश्विनं विवक्षसे ॥५॥
पशुं नः सोम रक्षसि पुरुत्रा विष्ठितं जगत् ।
समाकृणोषि जीवसे वि वो मदे विश्वा संपश्यन् भुवना विवक्षसे ॥६॥
त्व नः सोम विश्वतो गोपा अदाभ्यो भव ।
सेध राजन्नप स्रिधो वि वो मदे मा नो दुःशंस ईशता विवक्षसे ॥७॥
त्वं नः सोम सुक्रतुर्वयोधेयाय जागृहि ।
क्षेत्रवित्तरो मनुषो वि वो मदे द्रुहो नः पाह्यंहसो विवक्षसे ॥८॥
त्वं नो वृत्रहन्तमेन्द्रस्येन्दो शिवः सखा ।
यत सीं हवन्ते समिथे वि वो मदे युध्यमानास्तोकसातौ विवक्षसे ॥९॥

---

५ विविध-फलाभिलाषी सारे धीर व्यक्तियोंने अनेक प्रकारके कार्य करके तुम्हारा परितोष किया है; क्योंकि तुम महान् और मेधावी हो। फलतः तुम गौ और अश्वसे युक्त पशुशाला हमें दो। तुम महान् हो ।

६ सोम, हमारे पशुओंकी रक्षा करो और नाना मूर्त्तियोंमें स्थित विशाल भुवनोंकी रक्षा करो। हमारे प्राण-धारणके लिये सारे भुवनोंका अन्वेषण करके जीवनोपाय ले आ देते हो। विमदके लिये तुम महान् हो ।

७ सोम, तुम सब प्रकारसे हमारे लिये रक्षक होओ; क्योंकि तुम दुर्द्धर्ष हो । राजा सोम, शत्रुओंको दूर कर दो। हमारा निन्दक हमारा कुछ न करने पावे। विमदके लिये तुम महान् हो।

८ सोम, तुम्हारा कार्य अतीव सुन्दर है। तुम हमें अन्न देनेके लिये सतर्क रहते हो । हमें भूमि देनेके लिये तुम्हारे सदृश कोई नहीं है। अनिष्ट-कर्त्ताओंके हाथसे हमारी रक्षा करो। पापसे भी बचाओ। तुम महान् हो ।

९ जिस समय भयंकर युद्ध उपस्थित होता है और अपनी सन्तानोंका उसमें बलिदान करना पड़ता है और जिस समय योद्धा शत्रु चारो ओरसे हमें, युद्धके लिये, बुलाते हैं, उस समय, हे सोम, तुम इन्द्रके सहायक होते हो, उन्हें विपदोंसे बचाते हो; क्योंकि तुम्हारे समान शत्रु-संहारक कोई नहीं है। विमदके लिये महान् हो ।

अयं घ स तुरो मद इन्द्रस्य वर्धत प्रियः ।
अयं कक्षीवतो महो वि वो मदे मतिं विप्रस्य वर्धयद्विवक्षसे ॥१०॥
अयं विप्राय दाशुषे वाजाँ इयर्ति गोमतः ।
अयं सप्तभ्य आ वरं वि वो मदे प्रान्धं श्रोणं च तारिषद्विवक्षसे ॥११॥

२६ सूक्त

पूषा देवता । विमद ऋषि । उष्णिक् और अनुष्टुप् छन्द ।

प्र ह्यच्छा मनीषाः स्पार्हा यन्ति नियुतः ।
प्र दस्रा नियुद्रथः पूषा अविष्टु माहिनः ॥१॥
यस्य त्यन्महित्वं वाताप्यमयं जनः ।
विप्र आ वंसद्धीतिभिश्चिकेत सुष्टुतीनाम् ॥२॥
स वेद सुष्टुतीनामिन्दुर्न पूषा वृषा ।
अभि प्सुरः प्रुषायति व्रजं न आ प्रुषायति ॥३॥

---

१० सोम सारे कार्योंमें क्षिप्रकारी हैं । वह मदकर और इन्द्रके तर्पक हैं । सोमने महामेधावी कक्षीवान् ऋषिकी बुद्धिको बढ़ाया था । विमदके लिये तुम महान् हो ।

११ सोम मेधावी और हविर्दाता यजमानको पशु-युक्त अन्न देते हैं । यही सोम सातो होताओंको श्रेष्ठ धन देते हैं । सोमने आधे दीर्घतमा ऋषिको नेत्र और लंगड़े परावृज ऋषिको पैर दिये थे । विमदके लिये महान् हो ।

---

१ अतीव उत्कृष्ट स्तोत्र प्रस्तुत किये गये हैं । उन सबका पूषा देवके प्रति प्रयोग किया जाता है । वह श्रेष्ठ देव सदा रथको जोतनेवाले हैं । वह आकर यजमान और उसकी पत्नीकी रक्षा करें ।

२ मेधावी यजमान पूषा (सूर्य) के मण्डलमें जो जलका भाण्डार है, उसे, यज्ञके द्वारा, पृथिवीपर ले आवें । पूषा देव यजमानका स्तोत्र सुनते हैं ।

३ पूषा देव सोमके समान रसका सेचन करनेवाले हैं । वह उत्तम स्तोत्र सुनते हैं । सुशोभित पूषा जलका सिञ्चन करते हैं । हमारे गोष्ठमें भी जलका सिञ्चन करते हैं ।

मंसीमहि त्वा वयमस्माकं देव पूषन् ।
मतीनां च साधनं विप्राणां चाधवम् ४॥
प्रत्यर्धिर्यज्ञानामश्वहयो रथानाम् ।
ऋषिः स यो मनुर्हितो विप्रस्य यवयत्सखः ॥५॥
आधीषमाणायाः पतिः शुचायाश्च शुचस्य च ।
वासोवायोऽवीनामा वासांसि मर्मृजत् ॥६॥
इनो वाजानां पतिरिनः पुष्टीनां सखा ।
प्र श्मश्रु हर्यतो दूधोद्वि वृथा यो अदाभ्यः ॥७॥
आ ते रथस्य पूषन्नजा धुरं ववृत्युः ।
विश्वस्यार्थिनः सखा सनोजा अनपच्युतः ॥८॥
अस्माकमूर्जा रथं पूषा अविष्टु माहिनः ॥
भुवद्वाजानां वृध इमं नः शृणवद्धवम् ॥९॥

---

४ पूषा देव, हम मन ही मन तुम्हारा ध्यान करते हैं। तुम हमारे स्तोत्रकी स्फूर्ति कर दो। तुम्हारी सेवाके लिये पुरोहित लोग व्यस्त रहते हैं।

५ पूषा यज्ञके अर्द्धांशके भागी हैं। वह रथमें घोड़े जोत कर जाते हैं। वह मनुष्योंके परम हितैषी हैं। वह बुद्धिशालीके बन्धु हैं। वह उसके शत्रुओंको दूर कर देते हैं।

६ गर्भाधान करनेमें समर्थ और सुन्दर-मूर्त्ति छागी और छाग आदि पशुओंके प्रभु पूषा हैं। वही मेषलोमका वस्त्र (कम्बल) बुनते हैं और वही वस्त्र धो देते हैं।

७ प्रभु पूषा अन्नके अधिपति हैं—प्रभु पूषा सबके लिये पुष्टिकर हैं। वही सौम्यमूर्त्ति और दुर्द्धर्ष पूषा क्रीड़ास्थलमें अपनी मूँछ-दाढ़ीको कँपाने लगे।

८ पूषा देव, छाग तुम्हारे रथकी धुराका वहन करने लगे। तुम अनेक समय पहले जनमे थे। तुम कभी भी अपने अधिकारसे वञ्चित नहीं हुए। सारे याचकोंकी मनःकामना पूर्ण करते हो।

९ वही महीयान् पूषा देव अपने बलके द्वारा हमारे रथकी रक्षा करें। वह अन्न-वृद्धि करें। वह हमारे इस निमन्त्रणके प्रति कर्णपात करें।

२७ सूक्त

इन्द्र देवता। इन्द्र-पुत्र वसुक्र ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

असत् सु मे जरितः साभिवेगो यत् सुन्वते यजमानाय शिक्षम्।
अनाशीर्दामहमस्मि प्रहन्ता सत्यध्वृतं वृजिनायन्तमाभुम् ॥१॥
यदीदहं युधये संनयान्यदेवयून् तन्वा शूशुजानान्।
अमा ते तुम्रं वृषभं पचानि तीव्रं सुतं पञ्चदशं निषिञ्चम् ॥२॥
नाहं तं वेद य इति ब्रवीत्यदेवयून्त्समरणे जघन्वान्।
यदावाख्यत् समरणमृघावदादिद्ध मे वृषभा प्र ब्रुवन्ति ॥३॥
यदज्ञातेषु वृजनेष्वासं विश्वे सतो मघवानो म आसन्।
जिनामि वेत् क्षेम आ सन्तमाभुं प्र तं क्षिणां पर्वते पादगृह्य ॥४॥
न वा उ मां वृजने वारयन्ते न पर्वतासो यदहं मनस्ये।
मम स्वनात् कृधुकर्णो भयात एवेदनु द्यून् किरणः समेजात् ॥५॥

१ (इन्द्रकी उक्ति—) भक्त स्तोता, मेरा यह स्वभाव है कि, सोम-यज्ञके अनुष्ठाता यजमानको मैं अभिलषित फल देता हूं। जो मुझे होमीय द्रव्य नहीं देता, वह सत्यको नष्ट करता है। जो चारो ओर पाप करता फिरता है, उसका मैं सर्वनाश करता हूं।

२ (ऋषिका कथन—) जो लोग देवानुष्ठान नहीं करते और केवल अपने उदरका पोषण करते हैं—जिस समय ऐसे लोगोंके साथ मैं युद्ध करने जाता हूं, उस समय, इन्द्र, तुम्हारे लिये, पुरोहितोंके साथ, स्थूलकाय वृषभका पाक करता हूं। मैं पन्द्रह तिथियोंमेंसे प्रत्येक तिथिको (अथवा त्रिवृत्पञ्चदशस्तोत्रोंसे युक्त माध्यन्दिन सवनको) सोमरस प्रस्तुत करता हूं।

३ (इन्द्रकी उक्ति—) मैंने ऐसा किसीको भी नहीं देखा, जो यह कहे कि, मैंने देवशून्य और देव-कर्मशून्य व्यक्तियोंको संग्राममें मारा है। जिस समय युद्धमें जाकर मैं उनका संहार करता हूं, उस समय सब उस वीरत्वका, विस्तारित, रूपसे, वर्णन करते हैं।

४ जिस समय मैं अनजानते सहसा युद्धमें प्रवृत्त होता हूं, उस समय सारे ऋषि मुझे घेर लेते हैं। प्रजाके मङ्गलके लिये मैं सर्वत्र विहार करनेवाले शत्रुका पराभव करता हूं—उसके पैर पकड़ कर उसे पत्थरके ऊपर फेंक देता हूं।

५ युद्धमें मुझे निरुद्ध करनेवाला कोई नहीं है। यदि मैं चाहूं, तो पर्वत भी मेरा निरोध नहीं कर सके। जिस समय मैं शब्द करता हूं, उस समय जिसका कान बधिर है, वह भी डर जाय अर्थात् उसके भी कर्ण-कुहरमें वह शब्द पहुँच जाय। और तो और, किरणमाली सूर्य तक प्रतिदिन काँपते हैं।

दर्शन्न्वत्र शृतपाँ अनिन्द्रान् बाहुक्षदः शरवे पत्यमानान् ।
घृषुं वा ये निनिदुः सखायमध्यू न्वेषु पवयो ववृत्युः ॥६॥
अभूर्वौक्षीर्व्यु आयुरानड् दर्षन्नु पूर्वो अपरो नु दर्षत् ।
द्वे पवस्ते परि तं न भूतो यो अस्य पारे रजसो विवेष ॥७॥
गावो यवं प्रयुता अर्यो अक्षन् ता अपश्यं सहगोपाश्चरन्तीः ।
हवा इदर्यो अभितः समायन् कियदासु स्वपतिश्छन्दयाते ॥८॥
सं यद्वयं यवसादो जनानामहं यवाद उर्वज्रे अन्तः ।
अत्रा युक्तोऽवसातारमिच्छादथो अयुक्तं युनजद्ववन्वान् ॥९॥
अत्रेदु मे मंससे सत्यमुक्तं द्विपाच्च यच्चतुष्पात् संसृजानि ।
स्त्रीभिर्यो अत्र वृषणं पृतन्यादयुद्धो अस्य वि भजानि वेदः ॥१०॥

६ मैं इन्द्र हूं। मुझे जो लोग नहीं मानते, जो लोग देवोंके लिये प्रस्तुत सोमरस बल-पूर्वक पी डालते हैं और जो बाहें भाँजते हुए, हिंसा करनेके लिये, आते हैं, उनको मैं तुरत देख लेता हूं। मैं महान् हूं; मैं सबका मित्र हूं। जो लोग मेरी निन्दा करते हैं, उनके लिये मेरे वज्रका प्रहार होता है।

७ (ऋषिका कथन—) इन्द्र, तुमने दर्शन दिया; वृष्टि भी बरसायी। तुमने सुदीर्घ आयु प्राप्त की है। तुमने पहले भी शत्रु-विनाश किया था; पश्चात् भी किया था। इन्द्र सारे विश्वके अपर पारमें हैं; सर्वव्यापक द्यावा-पृथिवी उनको नहीं माप सकते।

८ (इन्द्रकी उक्ति—) अनेक गायें इकट्ठी होकर यव (जौ) खा रही हैं। मैं इन्द्र हूं; स्वामोके समान मैं गायोंकी देख-भाल करता हूं। मैं देखता हूं कि, वह चरवाहोंके साथ चर रही हैं। बुलानेके साथ ही वह गायें अपने स्वामीके पास पहुँच गयीं। स्वामीने गायोंसे प्रचुर दूधका दोहन कर लिया है।

९ (ऋषिकी व्यापक अनुभूति—) संसारमें जो तृण खानेवाले हैं, वह हम ही हैं। जो अन्न वा यव खानेवाले मनुष्य हैं, वह भी हम ही हैं। विस्तृत हृदयाकाशमें जो अन्तर्यामी ब्रह्म हैं, वह मैं ही हूं। हृदयाकाशमें रहनेवाले इन्द्र अपने सेवकको चाहते हैं। योग-शून्य और अतीव विषयी पुरुषको इन्द्र सन्मार्गमें लगाते हैं।

१० (इन्द्रका कथन—) मैं यहाँ जो कहता हूं, वह सत्य है- निश्चय जानो। द्विपद (मनुष्य) और चतुष्पद (पशु)—सबकी सृष्टि मैं करता हूं। जो व्यक्ति स्त्रियोंके साथ पुरुषको युद्ध करनेको भेजता है, उसका धन, विना युद्धके ही, हर कर मैं भक्तोंको दे देता हूं।

यस्यानक्षा दुहिता जात्वास कस्तां विद्वाँ अभि मन्याते अन्धाम् ।
कतरो मेनिं प्रति तं मुचाते य ईं वहाते य ईं वा वरेयात् ॥११॥
कियती योषा मर्यतो वधूयोः परिप्रीता पन्यसा वार्येण ।
भद्रा वधूर्भवति यत् सुपेशाः स्वयं सा मित्रं वनुते जने चित् ॥१२॥
पत्तो जगार प्रत्यञ्चमत्ति शीर्ष्णा शिरः प्रति दधौ वरूथम् ।
आसीन ऊर्ध्वामुपसि क्षिणाति न्यङ्ङुत्तानामन्वेति भूमिम् ॥१३॥
बृहन्नच्छायो अपलाशो अर्वा तस्थौ माता विषितो अत्ति गर्भः ।
अन्यस्या वत्सं रिहती मिमाय कया भुवा नि दधे धेनुरूधः ॥१४॥
सप्त वीरासो अधरादुदायन्नष्टोत्तरात्तात् समजग्मिरन्ते ।
नव पश्चातात् स्थिविमन्त आयन्दश प्राक् सानु वि तिरन्त्यश्नः ॥१५॥

---

११ जिस-किसीकी भी अन्धी कन्याको कौन बुद्धिमान् आश्रय देगा ? जो उसका वहन करता है और जो उसका वरण करता है, उसकी हिंसा कौन करेगा ?

१२ कितनी ऐसी स्त्रियाँ हैं, जो केवल द्रव्यसे ही प्रसन्न होकर स्त्री चाहनेवाले पुरुषके ऊपर आसक्त होती हैं। जो स्त्री भद्र वा सभ्य है, जिसका शरीर सुसंगठित है, वह अनेक पुरुषोंमेंसे अपने मनके अनुकूल प्रिय पात्रको पति स्वीकृत करती है।

१३ सूर्यदेव किरणके द्वारा प्रकाशका उद्गिरण करते हैं, अपने मण्डलमें स्थित प्रकाशका ग्रास करते हैं और अपने मस्तकको ढकनेवाली किरणोंको लोगोंके मस्तकोंपर फेंकते हैं। ऊपर स्थित होकर वह अपने पासमें प्रकाश फेंकते हैं और नीचे पृथिवीपर आलोकका विस्तार करते हैं।

१४ जैसे पत्र-हीन वृक्षको छाया नहीं रहती, वैसे ही इन प्रकाण्ड और विचरणशील सूर्यकी छाया नहीं है। द्युलोकस्वरूप माता स्थिर होकर बोली—"सूर्यस्वरूप गर्भस्थ शिशु पृथक् होकर दुग्धका पान करते हैं। यह (द्युलोक-रूपिणी) गाय दूसरी गाय (अदिति) के बछड़ेको, प्रेमके साथ, चाटकर स्थापित करती है। इस गायने अपने स्तनको रखनेका स्थान कहाँ पाया ?

१५ इन्द्र-रूप प्रजापतिके शरीरसे विश्वामित्र आदि सात ऋषि उत्पन्न हुए। उनके उत्तरी शरीरसे बालखिल्य आदि आठ उत्पन्न हुए। पीछेसे भृगु आदि नौ उत्पन्न हुए। अङ्गिरा आदि दस आगेसे उत्पन्न हुए। ये भोजन (यज्ञांशका भक्षण) करनेवाले द्युलोकके उन्नत प्रदेशको संवर्द्धना करने लगे।

दशानामेकं कपिलं समानं तं हिन्वन्ति क्रतवे पार्याय ।
गर्भं माता सुधितं वक्षणास्ववेनन्तं तुषयन्ती बिभर्ति ॥१६॥
पीवानं मेषमपचन्त वीरा न्युप्ता अक्षा अनु दीव आसन् ।
द्वा धनुं बृहतीमप्स्वन्तः पवित्रवन्ता चरतः पुनन्ता ॥१७॥
वि क्रोशनासो विष्वञ्च आयन् पचाति नेमो नहि पक्षदर्धः ।
अयं मे देवः सविता तदाह द्र्वन्न इद्वनवत् सर्पिरन्नः ॥१८॥
अपश्यं ग्रामं वहमानमारादचक्रया स्वधया वर्त्तमानम् ।
सिषक्त्यर्यः प्र युगा जनानां सद्यः शिश्ना प्रमिनानो नवीयान् ॥१९॥
एतौ मे गावौ प्रमरस्य युक्तौ मो षु प्र सेधीर्मुहुरिन्ममन्धि ।
आपश्चिदस्य विनशन्त्यर्थं सूरश्च मर्क उपरो बभूवान् ॥२०॥
अयं यो वज्रः पुरुधा विवृत्तोऽवः सूर्यस्य बृहतः पुरीषात् ।
श्रव इदेना परो अन्यदस्ति तदव्यथी जरिमाणस्तरन्ति ॥२१॥

---

१६ दस अङ्गिरा लोगोंमें एक पिङ्गलवर्णवाले (कपिल) हैं। उन्हें यज्ञकी साधनाके लिये प्रेरित किया गया। सन्तुष्ट होकर माताने जलमें गर्भाधान किया ।

१७ प्रजापतिके पुत्र अङ्गिरा लोगोंने मोटे-मोटे मेष (अज) को पाया। पाशा-क्रीड़ा-स्थानमें पाश फेंके गये। इनमेंसे दो प्रकाण्ड धनु लेकर, मन्त्रोच्चारणके द्वारा, अपने शरीरको शुद्ध करते-करते, जलके बीच विचरण करने लगे।

१८ चीत्कार करनेवाले और नानागति अङ्गिरा लोग प्रजापतिसे उत्पन्न हुए। उनमें आधे लोग, प्रजापतिके लिये, हविका पाक करते हैं और आधे नहीं। इन बातोंको सूर्यदेवने मुझसे कहा है। काष्ठान्न और घृतौदन अग्नि प्रजापतिका भजन करते हैं ।

१९ देखा, अनेक लोग दूरसे आते हैं। वे स्वयंसिद्ध आहारके द्वारा प्राणका धारण करते हैं। उनके प्रभु दो-दो व्यक्तियोंको योजित करते हैं। उनकी अवस्था नयी है । वह तुरत शत्रु-संहार करते हैं ।

२० मेरा नाम प्रमर वा मारक है। मेरे ये दो वृषभ योजित हुए हैं। इनकी ताड़ना मत करो। इन्हें बार-बार सान्त्वना दो। इनका धन जलमें नष्ट होता है। जो वीर गायोंका शोधन करना जानता है, वह ऊपर उठता है।

२१ यह वज्र प्रकाण्ड सूर्यमण्डलके नीचे, घोर वेगसे, नीचे गिरता है। इसके अनन्तर और भी स्थान है। जो स्तोता हैं, वह अनायास उस स्थानका पार पा जाते हैं ।

वृक्षेवृक्षे नियता मीमयद्गोस्ततो वयः प्र पतान् पूरुषादः ।
अथेदं विश्वं भुवनं भयात इन्द्राय सुन्वदृषये च शिक्षत् ॥२२॥
देवानां माने प्रथमा अतिष्ठन् कृन्तत्रादेषामुपरा उदायन् ।
त्रयस्तपन्ति पृथिवीमनूपा द्वा बृबूकं वहतः पुरीषम् ॥२३॥
सा ते जीवातुरुत तस्य विद्धि मा स्मैतादृगप गूहः समर्ये ।
आविः स्वः कृणुते गूहते बुसं स पादुरस्य निर्णिजो न मुच्यते ॥२४॥

२८ सूक्त

इन्द्र देवता। वसुक्र ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

विश्वो ह्यन्यो अरिराजगाम ममेदह श्वशुरो नाजगाम ।
जक्षीयाद्धाना उत सोमं पपीयात् स्वाशितः पुनरस्तं जगायात् ॥१॥
स रोरुवद्वृषभस्तिग्मशृङ्गो वर्ष्मन्तस्थौ वरिमन्ना पृथिव्याः ।
विश्वेष्वेनं वृजनेषु पामि यो मे कुक्षी सुतसोमः पृणाति ॥२॥

---

२२ प्रत्येक वृक्ष (काष्ठ-निर्मित धनुष्) के ऊपर गौ अर्थात् गौके स्नायुसे निर्मित प्रत्यञ्चा शब्द करती है। शत्रु-भक्षण-कारी बाण निकलते हैं। इससे सारा संसार डरता है। सब लोग इन्द्रको सोम देते हैं। ऋषि भी उसकी शिक्षा प्राप्त करते हैं।

२३ देवोंके सृष्टि-कालमें प्रथम मेघ देखे गये। इन्द्रने मेघका छेदन किया, जिससे जल निकला। पर्जन्य, वायु और सूर्य—ये तीन उद्भिज्जोंका परिपाक करते हैं। वायु और सूर्य प्रीतिकर जलका वहन करते हैं।

२४ सूर्य ही तुम्हारे (ऋषिके) प्राणाधार हैं। यज्ञके समय सूर्यके उस प्रभावका वर्णन और स्तवन करना। सूर्यने स्वर्गका प्रकाश किया है। सूर्य शोषण करते हैं। वह परिष्कारक हैं। वह अपनी गतिका कभी त्याग नहीं करते।

—:o:—

१ (इन्द्रके पुत्र वसुक्रकी स्त्री कहती है—) इन्द्रके अतिरिक्त सारे देवता हमारे यज्ञमें आये हैं। केवल मेरे श्वशुर इन्द्र नहीं आये। यदि वह आये रहते, तो भुना हुआ जौ खाते और सोम पीते। आहारादि करके पुनः अपने घर लौट जाते।

२ (इन्द्रका कथन—) तीखी सींगवाले वृषभके समान शब्द करते-करते मैं पृथिवीके उन्नत और विस्तीर्ण प्रदेशमें रहता हूं। जो मुझे भरपेट सोम पीनेको देता है, मैं उसकी रक्षा करता हूं।

अद्रिणा ते मन्दिन इन्द्र तूयान्त्सुन्वन्ति सोमान् पिबसि त्वमेषाम् ।
पचन्ति ते वृषभाँ अत्सि तेषां पृक्षेण यन्मघवन् हूयमान ॥३॥
इदं सु मे जरितरा चिकिद्धि प्रतीपं शापं नद्यो वहन्ति ।
लोपाशः सिंहं प्रत्यञ्चमत्साः क्रोष्टा वराहं निरतक्त कक्षात् ॥४॥
कथा त एतदहमा चिकेतं गृत्सस्य पाकस्तवसो मनीषाम् ।
त्वं नो विद्वाँ ऋतुथा विवोचो यमर्धं ते मघवन् क्षेम्या धूः ॥५॥
एवा हि मां तवसं वर्धयन्ति दिवश्चिन् मे बृहत उत्तरा धूः ।
पुरू सहस्रा नि शिशामि साकमशत्रुं हि मा जनिता जजान ॥६॥
एवा हि मां तवसं जज्ञुरुग्रं कर्मन्कर्मन् वृषणमिन्द्र देवाः ।
वधीं वृत्रं वज्रेण मन्दसानोऽप व्रजं महिना दाशुषे वम् ॥७॥
देवास आयन् परशूँरबिभ्रन्वना वृश्चन्तो अभि विड्भिरायन् ।
नि सुद्र्वं दधतो वक्षणासु यत्रा कृपीटमनु तद्दहन्ति ॥८॥

३ इन्द्र, अन्न-कामनासे जिस समय तुम्हारे लिये हवन किया जाता है, उस समय यजमान शीघ्र-शीघ्र प्रस्तर-फलकोंपर मदकर सोम प्रस्तुत करते हैं। उसका तुम पान करते हो। यजमान वृषभ पकाते हैं; तुम उनका भक्षण करते हो।

४ इन्द्र, तुम मेरी ऐसी सामर्थ्य कर दो कि, मेरी इच्छा होने पर नदीका जल विपरीत दिशामें बहने लगे, तिनका खानेवाला हरिण सिंहको पराङ्मुख करके उसके पीछे-पीछे दौड़े और श्रृगाल वराहको वनसे भगा दे।

५ मैं अपरिपक्व-बुद्धि हूं। तुम प्राचीन और बुद्धिमान् हो। मेरी शक्ति कहाँ कि, मैं तुम्हारा स्तोत्र कर सकूं। किन्तु समय-समय पर तुम हमें उपदेश देते हो; इस लिये तुम्हारा स्तोत्र कुछ-कुछ कर सकते हैं।

६ (इन्द्रकी उक्ति—) मैं प्राचीन हूं। स्तोता लोग मेरी इस प्रकारकी स्तुति करते हैं कि, मेरा कार्य-भार स्वर्गसे भी बड़ा है। मैं एक ही साथ सहस्राधिक शत्रुओंको दुर्बल कर डालता हूं। मेरे जन्मदाताने मेरा जन्म ही ऐसा किया है कि, मेरा शत्रु कोई नहीं टिक सकता।

७ इन्द्र, देवता लोग मुझे तुम्हारे ही समान प्राचीन, प्रत्येक कर्ममें शूर और अभीष्ट फलके दाता समझते हैं। आह्लादके साथ मैंने वज्रके द्वारा वृत्र (असुर) का बध किया है। मैंने अपनी महिमासे दाताको गोधन दिया है।

८ देवता लोग जाते हैं। मेघ-बधके लिये वज्र धारण करते हैं। जल गिराते हैं। मनुष्योंके लिये जल बरसाते हैं। नदियोंमें उस सुन्दर जलको रखते हैं। वह जहाँ मेघमें जल देखते है, उसे जलाकर जल निकाल देते हैं।

शशः क्षुरं प्रत्यञ्चं जगाराद्रिं लोगेन व्यभेदमारात् ।
बृहन्तं चिद्दहते रन्धयानि वयद्वत्सो वृषभं शूशुवानः ॥९॥
सुपर्ण इत्था नखमासिषायावरुद्धः परिपदं न सिंहः ।
निरुद्धश्चिन्महिषस्तर्ष्यावान् गोधा तस्मा अयथं कर्षदेतत् ॥१०॥
तेभ्यो गोधा अयथं कर्षदेतद्ये ब्रह्मणः प्रतिपीयन्त्यन्नैः ।
सिम उक्ष्णोऽवसृष्टाँ अदन्ति स्वयं बलानि तन्वः शृणानाः ॥११॥
एते शमीभिः सुशमी अभूवन्ये हिन्विरे तन्वः सोम उक्थैः ।
नृवद्वदन्नुप नो माहि वाजान्दिवि श्रवो दधिषे नाम वीरः ॥१२॥

---

२९ सूक्त

इन्द्र देवता। वसुक्र ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

वने न वा यो न्यधायि चाकञ्छुचिर्वां स्तोमो भुरणावजीगः ।
यस्येदिन्द्रः पुरुदिनेषु होता नृणां नर्यो नृतमः क्षपावान् ॥१॥

---

९ इन्द्रके चाहने पर शशक भी आते हुए सिंह आदिका सामना करता है और दूरसे एक लोष्ट्र (ढेला) फेंक कर मैं पर्वतको भी तोड़ सकता हूं। क्षुद्रके वशमें महान् भी आ जाता है और बछड़ा भी, बढ़कर, महोक्ष (साँड़) के साथ लड़नेको जाता है।

१० जैसे पिँजड़ेमें बँधा सिंह चारो ओर अपना पैर रगड़ता है, वैसे ही श्येन पक्षी अपना नख रगड़ने लगा। इन्द्रकी इच्छा होने पर यदि महिष तृषातुर होता है, तो उसके लिये गोधा (गोह) भी पानी ले आता है।

११ जो यज्ञीय अन्नके द्वारा अपना पोषण करते हैं, उनके लिये गोधा अनायास जल ले आ देता है। वे सब प्रकारके रससे युक्त सोमको पीते और शत्रुओंकी देह तथा बलका विध्वंस कर देते हैं।

१२ जिन्होंने सोमरसका यज्ञ करके अपनी देहको पुष्ट किया है, वे "उत्तम कर्मके कर्त्ता" कहे जा कर सुकर्मसे युक्त होते हैं। इन्द्र, तुम, मनुष्योंके समान स्पष्ट वाक्यका उच्चारण करके, हमारे लिये, अन्न ले आते हो; क्योंकि दिव्य धाममें तुम्हारा "दानवीर" नाम प्रसिद्ध है।

१ शीघ्रगामी अश्विद्वय, यह अतिशय निर्मल स्तोत्र तुम्हारे लिये जाता है। जैसे पक्षी, भयके साथ, चारो ओर देखते-देखते अपने बच्चेको वृक्षके घोसलेमें रखता है, वैसे ही मैंने यत्न-पूर्वक, इस स्तोत्रको प्रस्तुत किया है। कितने ही दिन मैं इसो स्तोत्रसे बुलाता हूं और वह आकर यज्ञ सम्पन्न करते हैं। वह नेताओंके भी नेता हैं। वह मनुष्यके हितैषी हैं। वह रात्रिमें सोमका भाग ग्रहण करते हैं।

प्र ते अस्या उषसः प्रापरस्या नृतौ स्याम नृतमस्य नृणाम् ।
अनु त्रिशोकः शतमावहन्नॄन् कुत्सेन रथो यो असत् ससवान् ॥२॥
कस्ते मद इन्द्र रन्त्यो भूद् दुरो गिरो अभ्युग्रो वि धाव ।
कद्वाहो अर्वागुप मा मनीषा आ त्वा शक्यामुपमं राधो अन्नैः ॥३॥
कदु द्युम्नमिन्द्र त्वावतो नॄन् कया धिया करसे कन्न आगन् ।
मित्रो न सत्य उरुगाय भृत्या अन्ने समस्य यदसन्मनीषाः ॥४॥
प्रेरय सूरो अर्थं न पारं ये अस्य कामं जनिधाइव ग्मन् ।
गिरश्च ये ते तुविजात पूर्वीर्नर इन्द्र प्रति शिक्षन्त्यन्नैः ॥५॥
मात्रे नु ते सुमिते इन्द्र पूर्वी द्यौर्मज्मना पृथिवी काव्येन ।
वराय ते घृतवन्तः सुतासः स्वाद्मन् भवन्तु पीतये मधूनि ॥६॥

२ इन्द्र, तुम नेताओंके भी नेता हो। आज प्रातःकाल और अन्यान्य प्रातःकालोंमें हम तुम्हारी स्तुति कर उत्तम बनें। तुम्हारा स्तोत्र करके त्रिशोक नामक ऋषिने सौ मनुष्योंकी सहायता पायी थी और कुत्स नामक ऋषि तुम्हारे साथ एक रथपर चढ़े थे।

३ इन्द्र, किस प्रकारकी मत्तता तुम्हें अतिशय प्रसन्नता-कारक है? हमारा स्तोत्र सुनकर महावेगसे तुम यज्ञ-गृहके द्वारकी ओर आओ। मैं कब उत्तम वाहन पाऊँगा? तुम्हारी स्तुतिसे कब मैं अन्न और अर्थ अपनी ओर खींच सकूंगा?

४ इन्द्र, कब धन होगा? किस स्तोत्रका पाठ करने पर तुम मनुष्योंको अपने समान करोगे? कब आओगे? कीर्त्तिशाली इन्द्र, तुम यथार्थ बन्धुके समान सबका भरण-पोषण करते हो। स्तव करनेसे ही तुम भरण-पोषण करते हो।

५ जैसे पति अपनी पत्नीकी कामना पूर्ण करता है, वैसे ही जो तुम्हारी कामना पूर्ण करता है (इच्छानुरूप यज्ञ करता है), उन्हें यथेष्ट धन दो। क्योंकि तुम सूर्यके समान दाता हो। हे अनेक-रूप-धारी, जो लोग चिरप्रचलित स्तुति-वचनोंका तुम्हारे लिये पाठ करते और अन्न देते हैं, उन्हें धन दो।

६ इन्द्र, प्रचीन समयमें अतीव सुन्दर सृष्टि-प्रक्रियाके द्वारा विरचित यह जो द्यावा-पृथिवी हैं, वह तुम्हारी माताके सदृश हैं। जो घृत-युक्त सोमरस प्रस्तुत किया गया है, उसे पीकर प्रसन्न होओ। मधुर रससे युक्त अन्न तुम्हारे लिये सुस्वादु हो।

आ मध्वो अस्मा असिचन्नमत्रमिन्द्राय पूर्णं स हि सत्यराधाः ।
स वावृधे वरिमन्ना पृथिव्या अभि क्रत्वा नर्यः पौंस्यैश्च ॥७॥
व्यानलिन्द्रः पृतनाः स्वोजा आस्मै यतन्ते सख्याय पूर्वीः ।
आ स्मा रथं न पृतनासु तिष्ठ यं भद्रया सुमत्या चोदयासे ॥८॥



३ अनुवाक । ३० सूक्त

जल देवता । ईलूष-पुत्र कवष ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

प्र देवत्रा ब्रह्मणे गातुरेत्वपो अच्छा मनसो न प्रयुक्ति ।
महीं मित्रस्य वरुणस्य धासिं पृथुज्रयसे रीरधा सुवृक्तिं ॥१॥
अध्वर्यवो हविष्मन्तो हि भूताच्छाप इतोशतीरुशन्तः ।
अव याश्चष्टे अरुणः सुपर्णस्तमास्यध्वमूर्मिमद्या सुहस्ताः ॥२॥
अध्वर्यवोऽप इता समुद्रमपां नपातं हविषा यजध्वम् ।
स वो ददर्दूर्मिमद्या सुपूतं तस्मै सोमं मधुमन्तं सुनोत ॥३॥

---

७ इन्द्र वस्तुतः धनदाता हैं; इसलिये इन्द्रके लिये पात्र पूर्ण करके मधुर सोमरस दो । इन्द्र पृथिवीसे भी बड़े हैं । वह मनुष्योंके हितैषी हैं । उनका कार्य और पौरुष विस्मयकर हैं ।

८ शोभन बलवाले इन्द्रने शत्रु-सेनाको घेर डाला । उत्कृष्ट शत्रु सैनिक इन्द्रसे मैत्री करनेकी चेष्टा करते हैं । इन्द्र, जैसे संसारके कल्याणके लिये, बुद्धिमान् व्यक्तिके समान, तुम युद्धके लिये रथपर चढ़ा करते हो, वैसे ही इस समय भी रथ पर चढ़ो ।

१ मनके समान शीघ्र गतिसे सोमरस, यज्ञ-कालमें, देवोंके लिये जलकी ओर जायँ । मेरे अन्तःकरण, मित्र और वरुणके लिये विस्तृत अन्न (सोम-रूप) का पाक वा संशोधन करो और तीव्र वेगवाले उन इन्द्रके लिये सुन्दर रचनावाली स्तुति करो ।

२ पुरोहितो, होमीय द्रव्य (हवि) का आयोजन करो । तुम्हारे लिये जल स्नेह-युक्त हो । जलकी ओर तत्परताके साथ जाओ । लोहित-वर्ण पक्षीके समान यह जो सोम नीचे गिरता है, हे सुन्दर हाथोंवालो, उसे तरङ्गके रूपमें यथास्थान फेंको ।

३ पुरोहितो, जलके समुद्रमें जाओ । "आपांनपात्" देवताको होमीय द्रव्यके द्वारा पूजित करो । आज वह तुम्हें स्वच्छ जलकी तरङ्ग प्रदान करें । उनके लिये मधुर सोम प्रस्तुत करो ।

यो अनिध्मो दीदयदप्स्वन्तर्यं विप्रास ईलते अध्वरेषु ।
अपान्नपान्मधुमतीरपो दा याभिरिन्द्रो वावृधे वीर्याय ॥४॥
याभिः सोमो मोदते हर्षते च कल्याणीभिर्युवतिभिर्न मर्यः ।
ता अध्वर्यो अपो अच्छा परेहि यदासिञ्चा ओषधीभिः पुनीतात् ॥५॥
एवेद्यूने युवतयो नमन्त यदीमुशन्नुशतीरेत्यच्छ ।
सञ्जानते मनसा सञ्चिकित्रेऽध्वर्यवो धिषणापश्च देवीः ॥६॥
यो वो वृताभ्यो अकृणोदु लोकं यो वो मह्या अभिशस्तेरमुञ्चत् ।
तस्मा इन्द्राय मधुमन्तमूर्मिं देवमादनं प्र हिणोतनापः ॥७॥
प्रास्मै हिनोत मधुमन्तमूर्मिं गर्भो यो वः सिन्धवो मध्व उत्सः ।
घृतपृष्ठमीड्यमध्वरेष्वापो रेवतीः शृणुता हवम्मे ॥८॥

---

४ जो काष्ठ-जलके भीतर जलते हैं और यज्ञ-कालमें विप्र लोग जिसकी स्तुति करते हैं, वही आपांनपात् देवता ऐसा सुरस जल दें, जिसका पान करके इन्द्र बलशाली होकर वीरता प्रकट करें।

५ जिन जलोंमें मिलकर सोम अतीव विस्मयकर हो जाते हैं, जैसे पुरुष सुन्दरी युवतियोंसे मिलने पर आनन्दित होते हैं, वैसे ही उन जलोंके साथ मिलनेपर सोम आनन्दित होते हैं। पुरोहितो, ऐसे ही जल लानेको जाओ। जल लाकर सेचन करनेपर सोम-लता शोधित होती है।

६ जिस समय कोई युवा पुरुष, प्रेमके साथ, प्रेमसे पूर्ण युवतियोंकी ओर जाते हैं, उस समय जैसे युवतियाँ उस युवाके प्रति अनुकूल होती हैं, वैसे ही जल सोमके प्रति अनुकूल होते हैं। पुरोहितों और उनके स्तोत्रोंसे जलस्वरूप देवोंका विशेष परिचय है। दोनों अपने-अपने कार्योंकी ओर दृष्टि रखते हैं।

७ जलगण, तुम्हारे रोके जानेपर जो तुम्हें निकलनेके लिये मार्ग देते हैं और जो तुम्हें विषम निरोधसे छुड़ाते हैं, उन्हीं इन्द्रके प्रति मधु-पूर्ण और देवोंके लिये मत्तता-जनक तरङ्ग प्रेरित करो।

८ क्षरणशील जल, तुम्हारे लिये गर्भस्वरूप और मधुर रससे युक्त जो प्रस्रवण है, उसकी मधुर तरङ्गको इन्द्रके पास प्रेरित करो। धनशाली जल मेरा आह्वान सुनो। मेरे आह्वानमें यज्ञके लिये घृतदान किया जाता है और तुम्हारा स्तोत्र किया जाता है।

तं सिन्धवो मत्सरमिन्द्रपानमूर्मिं प्र हेत य उभे इयर्ति ।
मदच्युतमौशानं नभोजां न परि त्रितन्तुं विचरन्तमुत्सम् ॥९॥
आवर्वृततीरध नु द्विधारा गोषुयुधो न नियवं चरन्तीः ।
ऋषे जनित्रीर्भुवनस्य पत्नीरपो वन्दस्व सवृधः सयोनीः ॥१०॥
हिनोता नो अध्वरं देवयज्या हिनोत ब्रह्म सनये धनानाम् ।
ऋतस्य योगे विष्यध्वमूधः श्रुष्टीवरीर्भूतनास्मभ्यमापः ॥११॥
आपो रेवतीः क्षयथा हि वस्वः क्रतुं च भद्रं बिभृथामृतञ्च ।
रायश्च स्थः स्वपत्यस्य पत्नीः सरस्वती तद्गृणते वयो धात् ॥१२॥
प्रति यदापो अदृश्रमायतीर्घृतं पयांसि बिभ्रतीर्मधूनि ।
अध्वर्युभिर्मनसा संविदाना इन्द्राय सोमं सुषुतं भरन्तीः ॥१३॥
एमा अग्मन्रेवतीर्जीवधन्या अध्वर्यवः सादयता सखायः ।
नि बर्हिषि धत्तन सोम्यासोऽपां नप्त्रा संविदानास एनाः ॥१४॥

९ जल, तुम्हारी जो तरङ्ग इस लोक और पर लोकके लिये हितकर होती है, उसी मदकारक तरङ्गको इन्द्रके पानके लिये प्रेरित करो। ऐसी तरङ्ग भेजो, जो मद क्षरण करे, जो कामना बढ़ावे, जिसकी उत्पत्ति आकाशमें है और जो तीनों लोकोंमें विचरण करते हुए ऊपर उठ जाती है।

१० जो इन्द्र जलके लिये युद्ध करते हैं, उनकी आज्ञासे जल नाना धाराओंमें बार-बार गिरकर सोमके साथ मिलता है। जल संसारकी माताके सदृश और संसारकी रक्षिकाके समान है। वह सोम के साथ मिलता है, वह आत्मीय है। ऋषि, ऐसे जलकी बन्दना करो।

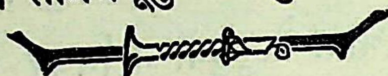
११ जल, देवोंके यज्ञके लिये हमारे यज्ञ-कार्यमें सहायता करो। धन-प्राप्तिके लिये हमारे पास पवित्रता प्रेरित करो। यज्ञानुष्ठानके समय अपने दुग्ध-स्थानका द्वार खोलो। हमारे लिये सुखकर होओ।

१२ जल, तुम धनके प्रभु-स्वरूप इस कल्याणमय यज्ञको सम्पन्न करो और अमृत ले आओ। धन और उत्तम सन्तानोंके रक्षक होओ। स्तोताको सरस्वती धन दें।

१३ मैं देखता था कि, जल, तुम आते समय घृत, दुग्ध और मधु ले आते थे। पुरोहित लोग स्तुतिके द्वारा तुमसे संभाषण करते थे। उत्तम रूपसे प्रस्तुत सोमको तुम इन्द्रको देते थे।

१४ सब प्रकारका जल आ रहा है। यह धनका आधार और जीवके लिये हितप्रद है। पुरोहित बन्धुओ, जलकी स्थापना करो। जल वृष्टिके अधिष्ठाता देवताके चिरपरिचित है। यह सोमरसके अनुकूल है। जलको कुशके ऊपर स्थापित करो।

आग्मन्नाप उशतीर्बर्हिरेदन् न्यध्वरे असदन्देवयन्तीः ।
अध्वर्यवः सुनुतेन्द्राय सोममभूदु वः सुशका देवयज्या ॥१५॥



३१ सूक्त

विश्वदेव देवता। कवष ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

आ नो देवानामुप वेतु शंसो विश्वेभिस्तुरैरवसे यजत्रः ।
तेभिर्वयं सुषखायो भवेम तरन्तो विश्वा दुरिता स्याम ॥१॥
परि चिन्मर्तो द्रविणं ममन्यादृतस्य पथा नमसा विवासेत् ।
उत स्वेन क्रतुना संवदेत श्रेयांसं दक्षं मनसा जगृभ्यात् ॥२॥
अधायि धीतिरससृग्रमंशान्तीर्थे न दस्ममुप यन्त्यूमाः ।
अभ्यानश्म सुवितस्य शूषं नवेदसो अमृतानामभूम ॥३॥
नित्यश्चाकन्यात् स्वपतिर्दमूना यस्मा उ देवः सविता जजान ।
भगो वा गोभिरर्यमेमनज्यात् सो अस्मै चारुश्छदयदुत स्यात् ॥४॥

१५ तत्परताके साथ जल कुशकी ओर आता है। देखो, जल देवोंके पास जानेके लिये यज्ञ-स्थानमें बैठता है। पुरोहितो, इन्द्रके लिये सोम प्रस्तुत करो। इस समय जल आने पर तुम्हारी देव-पूजा सुसाध्य हुई है।



१ हमारा स्तोत्र देवोंके पास जाय। यज्ञ-देवता सारे शत्रुओंसे हमें बचावें। उन देवोंके साथ हमारी मैत्री हो। हम सारे पापोंसे छूटें।

२ मनुष्य सब प्रकारके धनकी कामना करे, सत्य-मार्गसे पुण्यानुष्ठानमें प्रवृत्त हो, अपने कर्मसे कल्याणभागी बने और मनमें सुख प्राप्त करे।

३ यज्ञ-कार्यका प्रारम्भ किया गया है। सारे यज्ञीय द्रव्य, आवश्यकतानुसार, छोटे-बड़े करके, रखे गये हैं। वे द्रव्य सुदृश्य और रक्षणके साधन हैं। अभिषुत सोमका आस्वादन हमने किया है। देवता लोग स्वरूपसे ही यह सब जाननेवाले हैं।

४ अविनाशी प्रजापति दाताका अन्तःकरण धारण करके कृपा करें। यज्ञकर्त्ताको सविता-देव शुभ फूल दें। भग और अर्यमा स्तुतिके द्वारा प्रसन्न होकर स्नेह-युक्त हों। शेष सुन्दर-मूर्त्ति सारे देवता यजमानके लिये अनुकूल हों।

इयं सा भूया उषसामिव क्षा यद्ध क्षुमन्तः शवसा समायन् ।
अस्य स्तुतिं जरितुर्भिक्षमाणा आ नः शग्मास उपयन्तु वाजाः ॥५॥
अस्येदेषा सुमतिः पप्रथानाभवत् पूर्व्या भूमना गौः ।
अस्य सनीळा असुरस्य योनौ समान आ भरणे बिभ्रमाणाः ॥६॥
किं स्विद्वनं क उ स वृक्ष आस यतो द्यावापृथिवी निष्टतक्षुः ।
सन्तस्थाने अजरे इतऊती अहानि पूर्वीरुषसो जरन्त ॥७॥
नैतावदेना परो अन्यदस्त्युक्षा स द्यावापृथिवी बिभर्ति ।
त्वचं पवित्रं कृणुत स्वधावान्यदीं सूर्यं न हरितो वहन्ति ॥८॥
स्तेगो न क्षामत्येति पृथ्वीं मिहं न वातो वि ह वाति भूम ।
मित्रो यत्र वरुणो अज्यमानोऽग्निर्वने न व्यसृष्ट शोकम् ॥९॥

---

५ स्तोताके पास स्तोत्र पानेकी कामनासे जिस समय देवता लोग, कोलाहल करके, महावेगके साथ, आते हैं, उस समय, प्रातःकालके समान, हमारे लिये पृथिवी आलोकमयी हुई। सुखदाता नानाविध अन्न हमारे पास आवें।

६ हमारा स्तोत्र इस समय चिरपरिचित विशाल भाव धारण करके सारे देवोंके पास जानेके लिये विस्तृत होता है। हमारे इस यज्ञमें समस्त देवता समान स्थानपर अधिकार करके नानाविध शुभ फल देनेके लिये आव। इससे मैं बलशाली बनूँगा।

७ वह कौन वन और वह कौन वृक्ष है, जिससे उपादान लेकर इस द्युलोक और भूलोकका निर्माण किया गया है? प्राचीन दिन और उषा जीर्ण हो गये हैं; परन्तु द्यावापृथिवी परस्पर-संयुक्त हैं, एक भावमें स्थित हैं, न जीर्ण हैं, न पुरातन।

८ द्युलोक और भूलोक ही अन्तिम नहीं हैं; इनके ऊपर भी और कुछ है। वह (ईश्वर) प्रजाका बनानेवाला और द्यावापृथिवीका धारण करनेवाला है। वह अन्नका प्रभु है। जिस समय सूर्यके घोड़ोंने सूर्यका वहन करना प्रारम्भ नहीं किया था, उसी समय उसने अपने शरीरका निर्माण किया था।

९ किरणधारी सूर्यदेव पृथिवीका अतिक्रम नहीं करते और वायु वृष्टिको अतीव छिन्न-भिन्न नहीं करते। मित्र तथा वरुण, प्रकट होकर, वनके बीच उत्पन्न अग्निके समान चारो ओर प्रकाशको विस्तारित करते हैं।

स्तरीर्यत् सूत सद्योऽज्यमाना व्यथिरव्यथीः कृणुत स्वगोपा ।
पुत्रो यत् पूर्वः पित्रोर्जनिष्ट शम्यां गौर्जगार यद्ध पृच्छान् ॥१०॥
उत कण्वन्नृषदः पुत्रमाहुरुत श्यावो धनमादत्त वाजी ।
प्र कृष्णाय रुशदपिन्वतोधऋर्तमत्र नकिरस्मा अपीपेत् ॥११॥



३२ सूक्त

विश्वदेव देवता। कवष ऋषि। जगती और त्रिष्टुप् छन्द ।

प्र सु ग्मन्ता धियसानस्य सक्षणि वरेभिर्वराँ अभि षु प्रसीदतः ।
अस्माकमिन्द्र उभयं जुजोषति यत् सोम्यस्यान्धसो बुबोधति ॥१॥
वीन्द्र यासि दिव्यानि रोचना वि पार्थिवानि रजसा पुरुष्टुत ।
ये त्वा वहन्ति मुहुरध्वराँ उप ते सु वन्वन्तु वग्वनाँ अराधसः ॥२॥

---

१० रेतःसेक पाकर जैसे वृद्धा गाय प्रसव करती है, वैसे ही अरणि (अग्निमन्थन-काष्ठ) अग्निको उत्पन्न करती है। अरणि संसारको क्लेश दूर करती है। जो अरणिकी रक्षा करते हैं, उनको कष्ट नहीं होता। अग्नि दोनों अरणियोंके पुत्र हैं—उन्होंने प्राचीन समयमें अरणि-स्वरूप माता-पितासे जन्म ग्रहण किया था। यह जो अरणि-स्वरूप गाय है, वह शमी वृक्ष (शमीपर उत्पन्न अश्वत्थ वृक्ष) पर जन्म ग्रहण करती है। उसकी खोज की जाती है।

११ कण्व ऋषिको नृसदका पुत्र कहा गया है। अन्न-युक्त और श्यामवर्ण कण्वने धन ग्रहण किया था। उन्हीं श्यामवर्ण कण्वके लिये अग्निने अपने रोचक रूपको प्रकट किया था। अग्निके लिये कण्वके अतिरिक्त किसीने भी वैसा यज्ञ नहीं किया था।

---

१ यज्ञ-कर्त्ता इन्द्रका ध्यान करता है। उसकी सेवा ग्रहण करनेके लिये इन्द्र अपने अश्वोंको यज्ञकी ओर प्रेरित करते हैं। हरि नामके दोनों अश्व विचित्र गतिसे आ रहे हैं। प्रसन्न मनसे यजमान उत्तमोत्तम सामग्री देता है—इन्द्र भी उत्तम-उत्तम वर लेकर आ रहे हैं। जिस समय इन्द्र सोमरस और आहारीय द्रव्यका आस्वादन पाते हैं, उस समय हमारे स्तोत्र और होमीय द्रव्य (हवि आदि) का ग्रहण करते हैं।

२ बहुतोंके द्वारा स्तुत इन्द्र, तुम प्रकाश विस्तार करते-करते विभिन्न स्वर्गीय धामोंमें विचरण करते हो। तुम ज्योति लेकर पृथिवीपर आगमन किया करते हो। तुम्हारे दो घोड़े तुम्हें जो यज्ञमें ढो ले आते हैं, वे हमें धनी करें; क्योंकि हमारे पास धन नहीं है। धनके लिये ही हम यह सब प्रार्थना-वचन उच्चारित करते हैं।

तदिन्मे च्छन्त्सद्वपुषो वपुष्टरं पुत्रो यज्जानं पित्रोरधीयति ।
जाया पतिं वहति वग्नुना सुमत् पुंस इद्भद्रो वहतुः परिष्कृतः ॥३॥
तदित् सधस्थमभि चारु दीधय गावो यच्छासन् वहतुं न धेनवः ।
माता यन्मन्तुर्यूथस्य पूर्व्याभि वाणस्य सप्तधातुरिज्जनः ॥४॥
प्र वोऽच्छा रिरिचे देवयुष्पदमेको रुद्रेभिर्याति तुर्वणिः ।
जरा वा येष्वमृतेषु दावने परि व ऊमेभ्यः सिञ्चता मधु ॥५॥
निधीयमानमपगूळ्हमप्सु प्र मे देवानां व्रतपा उवाच ।
इन्द्रो विद्वाँ अनु हि त्वा चचक्ष तेनाहमग्ने अनुशिष्ट आगाम् ॥६॥
अक्षेत्रवित् क्षेत्रविदं ह्यप्राट् स प्रैति क्षेत्रविदानुशिष्टः ।
एतद्वै भद्रमनुशासनस्योत स्रुतिं विन्दत्यञ्जसीनाम् ॥७॥

---

३ जन्म ग्रहण करके पुत्र पितासे जो धन प्राप्त करता है, वह अतीव चमत्कारी धन है। इन्द्र मुझे देनेकी कामना करें। मीठे वचनोंसे पत्नी स्वामीको अपने पास बुलाती है। भली भाँति प्रस्तुत होकर सोमरस उस पुरुषार्थ-युक्तके पास जाता है ।

४ स्तुति-रूपिणी गायें जिस स्थानपर मिलती हैं, उस स्थानको, अपनी उज्ज्वल प्रभाके द्वारा, आलोकमय करो। स्तोत्रोंकी प्राचीन और पूजनीय जो माता (गायत्री) है, उसके सात छन्द (सात महाव्याहृतियाँ) उसी स्थानपर हैं।

५ देवोंके पास जो अग्नि जाते हैं, वह तुम्हारी भलाईके लिये दिखाई देते हैं। वह अकेले ही रुद्रोंके साथ शीघ्र अपने स्थानपर जाते हैं। अमर देवतागणके बलका ह्रास होता है; इसलिये बन्धु-बान्धवोंसे युक्त होकर इन्द्रके लिये यज्ञीय मधु (सोम) ढाल दो। तब ये लोग वर देंगे।

६ देवोंके लिये जो पुण्यानुष्ठान होता है, विद्वान् इन्द्र उसकी रक्षा करते हैं। इन्द्रने कहा है कि, अग्नि जलमें निगूढ़—रूपसे हैं। अग्नि, उसी उपदेशके अनुसार मैं तुम्हारे पास आया हूं।

७ यदि कोई किसी मार्गको नहीं जानता, तो उसे जो व्यक्ति जानता है, उसीसे उसे पूछता है। ज्ञाता व्यक्तिसे जानकर वह अभीष्ट स्थानपर पहुँच सकता है। अभिज्ञके कथनानुसार यदि तुम जलको खोजो, तो जहाँ जल है, वहाँ पहुँच सकते हो।

अद्येदु प्राणीदममन्निमाहापीवृतो अधयन्मातुरूधः ।
एमेनमाप जरिमा युवानमहेलन् वसुः सुमना बभूव ॥८॥
एतानि भद्रा कलश क्रियाम कुरुश्रवण ददतो मघानि ।
दान इद्वो मघवानः सो अस्त्वयं च सोमो हृदि यं बिभर्मि ॥९॥

---

८ आज ही यह (गोवत्सरूप) अग्नि उत्पन्न हुए हैं, कुछ दिनोंसे क्रमशः वृद्धि प्राप्त कर रहे हैं. जननीका स्तन पी चुके हैं। युवावस्थाके साथ ही बुढ़ापा आ गया है । वह सरल-कर्मा, धनाढ्य और मनः-प्रसाद-सम्पन्न हुए हैं।

९ सर्वकला-परिपूर्ण और स्तुतियोंके श्रोता इन्द्र, तुम धन देते हो। तुम्हारे लिये ये स्तुतियाँ रची गयी हैं। पूजनीय-स्तोतृ-रूप धनवालो, तुम्हारे लिये इन्द्र दाता हों और जिस सोमको मैं हृदयमें धारण करता हूं, वह भी दाता हों।

सप्तम अध्याय समाप्त

अष्टम अध्याय

३३ सूक्त

कुरुश्रवण, मित्रातिथि आदि देवता। ऐलूष कवष ऋषि। त्रिष्टुप् आदि छन्द।

प्र मा युयुज्रे प्रयुजो जनानां वहामि स्म पूषणमन्तरेण ।
विश्वे देवासो अध मामरक्षन्दुःशासुरागादिति घोष आसीत् ॥१॥
सं मा तपन्त्यभितः सपत्नीरिव पर्शवः ।
नि बाधते अमतिर्नग्नता जसुर्वेर्न वेवीयते मतिः ॥२॥
मूषो न शिश्ना व्यदन्ति माध्यः स्तोतारं ते शतक्रतो ।
सकृत् सु नो मघवन्निन्द्र मृळयाधा पितेव नो भव ॥३॥
कुरुश्रवणमावृणि राजानं त्रासदस्यवम् । मंहिष्ठं वाघतामृषिः ॥४॥
यस्य मा हरितो रथे तिस्रो वहन्ति साधुया । स्तवै सहस्रदक्षिणे ॥५॥

---

१ जो देवता सबको कर्मोंमें लगाते हैं, उन्होंने मुझे प्रेरित किया। मैंने मार्गमें पूषाका वहन किया। विश्वदेवोंने मुझ कवषकी रक्षा की। चारो ओर हल्ला मचा कि, दुर्द्धर्ष ऋषि आ रहे हैं।

२ सपत्नियोंके समान मेरी पँजरियाँ (पार्श्वास्थियाँ) मुझे दुःख देती हैं। दुर्बुद्धि मुझे क्लेश देती है। मैं दीन, हीन और क्षीण हो रहा हूं। पक्षीके समान मेरा मन चञ्चल हो रहा है।

३ इन्द्र, जैसे चूहे स्नायुको खाते हैं, वैसे तुम्हारा भक्त होनेपर भी मेरी मनोव्यथा मुझे खा रही है। धनी इन्द्र, एक बार हमारे ऊपर कृपा-कटाक्ष करो। हमारे पितृतुल्य रक्षक बनो।

४ मैं कवष ऋषि हूं। मैं त्रसदस्युके पुत्र कुरुश्रवण राजाके पास याचना करने गया था; क्योंकि वह श्रेष्ठ दाता हैं।

५ मेरी दक्षिणा, सहस्र-संख्यामें, दी जाती थी और सब उसकी श्लाघा करते थे। मेरे रथपर चढ़नेपर तीन हरित-वर्ण घोड़े, भली भाँति वहन करते थे।

यस्य प्रस्वादसो गिर उपमश्रवसः पितुः । क्षेत्रं न रण्वमूचुषे ॥६॥
अधि पुत्रोपमश्रवो नपान्मित्रातिथेरिहि । पितुष्टे अस्मि वन्दिता ॥७॥
यदीशीयामृतानामुत वा मर्त्यानाम् । जीवेदिन्मघवा मम ॥८॥
न देवानामति व्रतं शतात्मा चन जीवति । तथा युजा विववृते ॥९॥

---

३४ सूक्त

अक्ष (जुआ खेलनेका पाशा वा कौड़ी अथवा बहेरे के काठकी गोली) और द्युतकार (जुआड़ी) देवता । कवष ऋषि । जगती और त्रिष्टुप् छन्द ।

प्रावेपा मा बृहतो मादयन्ति प्रवातेजा इरिणे वर्वृतानाः ।
सोमस्येव मौजवतस्य भक्षो विभीदको जागृविर्मह्यमच्छान् ॥१॥

---

६ मेरे पिताकी कीर्ति दृष्टान्त देनेका स्थल थी । पिताका वचन, सेवकोंके निकट, रमणीय क्षेत्रके समान प्रसन्नता-कारक होता था ।

७ उपमश्रवस, तुम मित्रातिथिके पुत्र हो । मेरे पास आओ । मैं मित्रातिथिका स्तोता हूं । शोक मत करो । देने योग्य धन मुझे दो ।

८ यदि मैं अमर देवों और मरणशील मनुष्योंका स्वामी होता, तो धनवान् मित्रातिथि अवश्य जीवित रहते ।

९ एक सौ प्राण रहनेपर भी देवोंके अभिप्रायके विरुद्ध कोई नहीं जीवित रह सकता । इसीसे हमारे सहचरोंसे हमरा वियोग हुआ करता है ।

---

१ बड़े-बड़े पाशे जिस समय नकुरी (पाशा खेलनेके स्थान) के ऊपर इधर-उधर चलते हैं, उस समय उन्हें देखकर मुझे बड़ा आनन्द होता है । मूजवान् पर्वतपर उत्पन्न उत्तम सोमलताका रस पीकर जैसे प्रसन्नता होती है, वैसे ही बहेरे (वृक्ष) के काठसे बना अक्ष (पाशा) मेरे लिये प्रीति-प्रद और उत्साह-दाता है ।

न मा मिमेथ न जिहील एषा शिवा सखिभ्य उत मह्यमासीत् ।
अक्षस्याहमेकपरस्य हेतोरनुव्रतामप जायामरोधम् ॥२॥
द्वेष्टि श्वश्रूरप जाया रुणद्धि न नाथितो विन्दते मर्डितारम् ।
अश्वस्येव जरतो वस्न्यस्य नाहं विदामि कितवस्य भोगम् ॥३॥
अन्ये जायां परिमृशन्त्यस्य यस्यागृधद्वेदने वाज्यक्षः ।
पिता माता भ्रातर एनमाहुर्न जानीमो नयता बद्धमेतम् ॥४॥
यदादीध्ये न दविषाण्येभिः परायद्भ्योऽव हीये सखिभ्यः ।
न्युप्ताश्च बभ्रवो वाचमक्रतँ एमीदेषां निष्कृतं जारिणीव ॥५॥
सभामेति कितवः पृच्छमानो जेष्यामीति तन्वा शूशुजानः ।
अक्षासो अस्य वितिरन्ति कामं प्रतिदीव्ने दधत आ कृतानि ॥६॥

२ मेरी यह रूपवती पत्नी कभी मुझसे उदासीन नहीं हुई, न कभी मुझसे लज्जित हुई। वह पत्नी मेरी और मेरे बन्धुओंकी विशेष सेवा-शुश्रूषा करती थी। किन्तु केवल पाशेके कारण मैंने उस परम अनुरागिणी भार्याको छोड़ दिया।

३ जो जुआड़ी (कितव) जुआ खेलता है, उसकी सास उसकी निन्दा करती है और उस की स्त्री उसे छोड़ देती है। जुआड़ी किसीसे कुछ माँगता है, तो उसे कोई नहीं देता। जैसे बूढ़े घोड़ेको कोई नहीं खरीदता, वैसे ही जुआड़ीका कोई आदर नहीं करता।

४ पाशेका आकर्षण बड़ा कठिन है। यदि किसीके धनके प्रति अक्ष (पाशे) की लोभ-दृष्टि हो जाय, तो पाशावालेकी पत्नी व्यभिचारिणी हो जाती है। जुआड़ीके माता, पिता और सहोदर भ्राता कहते हैं—"हम इसे नहीं जानते; जुआड़ियो, इसे पकड़कर ले जाओ।"

५ जिस समय मैं इच्छा करता हूं कि, मैं अब नहीं पाशा खेलूंगा, उस समय साथी जुआड़ियोंके पाससे हट जाता हूं। किन्तु नक्शेपर पीले पाशोंको देखकर नहीं ठहरा जाता। जैसे भ्रष्टा नारी उपपतिके पास जाती है, वैसे ही मैं भी जुआड़िओंके घर जाता हूं।

६ जुआड़ी अपनी छाती फुलाकर कूदता हुआ जुएके अड्डेपर आता और कहता है कि, "मैं जीतूंगा"। कभी-कभी पाशा जुआड़ीकी इच्छा पूरी करता है और कभी विपक्षके जुआड़ीके लिये वह जो कुछ चाहता है, वह सब भी कभी सिद्ध हो जाता है।

अक्षास इदङ्कुशिनो नितोदिनो निकृत्वानस्तपनास्तापयिष्णवः ।
कुमारदेष्णा जयतः पुनर्हणो मध्वा सम्पृक्ताः कितवस्य बर्हणा ॥७॥
त्रिपञ्चाशः क्रीलति व्रात एषां देवइव सविता सत्यधर्मा ।
उग्रस्य चिन्मन्यवे ना नमन्ते राजा चिदेभ्यो नम इत् कृणोति ॥८॥
नीचा वर्तन्त उपरि स्फुरन्त्यहस्तासो हस्तवन्तं सहन्ते ।
दिव्या अङ्गारा इरिणे न्युप्ताः शीताः सन्तो हृदयं निर्दहन्ति ॥९॥
जाया तप्यते कितवस्य हीना माता पुत्रस्य चरतः क स्वित् ।
ऋणावा बिभ्यद्धनमिच्छमानोऽन्येषामस्तमुप नक्तमेति ॥१०॥
स्त्रियं दृष्ट्वाय कितवं ततापान्येषां जायां सुकृतं च योनिम् ।
पूर्वाह्णे अश्वान्युयुजे हि बभ्रून्त्सो अग्नेरन्ते वृषलः पपाद ॥११॥

७ किन्तु कभी-कभी वही पाशा बेहाथ हो जाता है—अंकुशके समान चुभता है, वाणके सदृश छेदता है, छुरेके समान काटता है, तप्त पदार्थके समान संताप देता है। जो जुआड़ी विजयी होता है, उसके लिये पाशा पुत्रजन्मके समान आनन्द-दाता होता है, मधुरिमासे युक्त होता है और मानो मीठे वचनोंसे सम्भाषण करता है; किन्तु हारे हुए जुआड़ीको तो प्रायः मार ही डालता है।

८ तिरेपन पाशे नक्शेके ऊपर मिलकर विहार करते हैं—मानो सत्य-स्वरूप सूर्यदेव संसारमें विचरण करते हैं। कोई कितना बड़ा उग्र क्यों न हो; परन्तु पाशा किसीके वशमें नहीं आ सकता। राजा तक पाशेको नमस्कार करते हैं।

९ पाशे कभी नीचे उतरते हैं और कभी ऊपर उठते हैं। इनके हाथ नहीं हैं; परन्तु जिनके हाथ हैं, वे इनसे हार खाते हैं। ये श्री-सम्पन्न हैं; जलते हुए अङ्गारेके समान ये नक्शेके ऊपर बैठे हैं। ये छूनेमें ठंढे हैं; किन्तु हृदयको जलाते हैं।

१० जुआड़ीकी स्त्री दीन-हीन वेशमें यातना भोगती रहती है, पुत्र कहाँ-कहाँ घूमा करता है—ऐसा सोचकर जुआड़ीकी माता व्याकुल रहा करती है। जो जुआड़ीको उधार देता है, वह इस सन्देहमें रहता है कि, "मेरा धन फिर मिलेगा वा नहीं।" जुआड़ी बेचारा दूसरेके घरमें रात काटा करता है।

११ अपनी स्त्रीकी दशा देखकर जुआड़ीका हृदय फटा करता है। अन्यान्य स्त्रियोंका सौभाग्य और सुन्दर अट्टालिका देखकर जुआड़ीको सन्ताप होता है। जो जुआड़ी प्रातःकाल घोड़ेकी सवारी कर आता है, वही सन्ध्या-समय, दरिद्रके समान जाड़ेसे बचनेके लिये आग तापता है—शरीरपर वस्त्र भी नहीं रहता।

यो वः सेनानीर्महतो गणस्य राजा व्रातस्य प्रथमो बभूव ।
तस्मै कृणोमि न धना रुणध्मि दशाहं प्राचीस्तदृतं वदामि ॥१२॥
अक्षैर्मा दीव्यः कृषिमित् कृषस्व वित्ते रमस्व बहु मन्यमानः ।
तत्र गावः कितव तत्र जाया तन्मे विचष्टे सवितायमर्यः ॥१३॥
मित्रं कृणुध्वं खलु मृलता नो मा नो घोरेण चरताभि धृष्णु ।
नि वो नु मन्युर्विशतामरातिरन्यो बभ्रूणां प्रसितौ न्वस्तु ॥१४॥



३५ सूक्त

विश्वदेवगण देवता। धनाक-पुत्र लूश ऋषि। त्रिष्टुप् और जगती छन्द।

अबुध्रमु त्य इन्द्रवन्तो अग्नयो ज्योतिर्भरन्त उषसो व्युष्टिषु ।
मही द्यावापृथिवी चेततामपोऽद्या देवानामव आवृणीमहे ॥१॥

---

१२ पाशो, तुम्हारे दलमें जो प्रधान, सेनापति वा राजाके समान है, उसको मैं अपनी दसो अँगुलियाँ जोड़कर प्रणाम करता हूँ। मैं सच्ची बात कहता हूं कि, मैं तुम लोगोंसे अर्थ नहीं चाहता।

१३ जुआड़ी, कभी जुआ नहीं खेलना; खेती करना। कृषिसे जो कुछ लाभ हो, उसीसे सन्तुष्ट रहना—अपनेको कृतार्थ समझना। इसीसे स्त्री प्राप्त करोगे और अनेक गायें भी पाओगे। प्रभु सूर्यदेवने मुझसे ऐसा कहा है।

१४ पाशो (अक्षो), हमें बन्धु जानो; हमारा कल्याण करो। हमारे ऊपर अपने दुर्द्धर्ष प्रभावका प्रयोग नहीं करना। हमारा शत्रु ही तुम्हारी कोप-दृष्टिमें गिरे। दूसरे तुममें फँसे रहें।



१ अग्नि जाग गये। उनके साथ इन्द्र हैं। जिस समय प्रभात अन्धकारको विदेशमें भेजता है, उस समय अग्नि, आलोक धारण करके, जलते हैं। विशाल-मूर्ति द्युलोक और भूलोक चैतन्य-युक्त हों। मैं प्रार्थना करता हूं कि, देवता आज हमें बचावें

दिवस्पृथिव्योरव आवृणीमहे मातॄन्त्सिन्धून् पर्वतान्छर्यणावतः ।
अनागास्त्वं सूर्यमुषासमीमहे भद्रं सोमः सुवानो अद्या कृणोतु नः ॥२॥
द्यावा नो अद्य पृथिवी अनागसो मही त्रायेथां सुविताय मातरा ।
उषा उच्छन्त्यप बाधतामघं स्वस्त्यग्निं समिधानमीमहे ॥३॥
इयं न उस्रा प्रथमा सुदेव्यं रेवत् सनिभ्यो रेवती व्युच्छतु ।
आरे मन्युं दुर्विदत्रस्य धीमहि स्वस्त्यग्निं समिधानमीमहे ॥४॥
प्र याः सिस्रते सूर्यस्य रश्मिभिर्ज्योतिर्भरन्तीरुषसो व्युष्टिषु ।
भद्रा नो अद्य श्रवसे व्युच्छत स्वस्त्यग्निं समिधानमीमहे ॥५॥
अनमीवा उषस आ चरन्तु न उदग्नयो जिहतां ज्योतिषा बृहत् ।
आयुक्षातामश्विना तूतुजिं रथं स्वस्त्यग्निं समिधानमीमहे ॥६॥
श्रेष्ठं नो अद्य सवितर्वरेण्यं भागमासुव स हि रत्नधा असि ।
रायो जनित्रीं धिषणामुपब्रुवे स्वस्त्यग्निं समिधानमीमहे ॥७॥

---

२ हम प्रार्थना करते हैं कि, द्यावापृथिवी हमारी रक्षा करें। जननीके समान नदियाँ और कुरुक्षेत्रके निकटस्थ पर्वत हमारी रक्षा करें। सूर्य और उषासे यही प्रार्थना है कि, हम अपराधी न हों। जो सोम प्रस्तुत किये जाते हैं, वह हमारा मङ्गल करें।

३ द्यावापृथिवी हमारी माताके समान हैं। हम इन दोनों महान् देवोंके निकट निरपराधी रहें। वह हमें सुखके लिये बचावें। उषादेवी, अधिकारका विनाश करके, हमारे पापोंका मोचन करें। प्रदीप्त अग्निके पास हम कल्याणकी भिक्षा करते हैं।

४ धनवती, मुख्या और पापोंको दूर भगानेवाली उषा हमें उत्तम धन दें। हम उसका भाग कर लें। हम दुष्टोंके क्रोधसे दूर रहें। प्रज्वलित अग्निसे हम कल्याणकी भिक्षा चाहते हैं।

५ जो उषाएँ, सूर्य-किरणोंके साथ मिलकर और आलोकका धारण करके अन्धकारका विनाश करती हैं, वे हमें आज अन्न दें। प्रज्वलित अग्निसे हम कल्याणकी भिक्षा माँगते हैं।

६ रोग-शून्य उषाएं हमारे पास आवें। महान् प्रकाशसे युक्त अग्नि भी ऊपर उठें। हमारे पास आनेके लिये अश्विद्वय भी क्षिप्रगामी रथमें अपने दोनों घोड़ोंको जोतें। प्रदीप्त अग्निसे हम कल्याणकी भिक्षा माँगते हैं।

७ सूर्यदेव, आज हमें अतीव उत्कृष्ट धन-भाग वितरित करो; क्योंकि तुम कामना पूर्ण करनेवाले हो। हम वैसे स्तोत्र पढ़ते हैं, जिससे धन उत्पन्न हो सके। प्रज्वलित अग्निके पास हम कल्याणकी भिक्षा माँगते हैं।

पिपर्तु मा तदृतस्य प्रवाचनं देवानां यन्मनुष्या अमन्महि ।
विश्वा इदुस्राः स्पलुदेति सूर्यः स्वस्त्यग्निं समिधानमीमहे ॥८॥
अद्वेषो अद्य बर्हिषः स्तरीमणि ग्राव्णां योगे मन्मनः साध ईमहे ।
आदित्यानां शर्मणि स्था भुरण्यसि स्वस्त्यग्निं समिधानमीमहे ॥९॥
आ नो बर्हिः सधमादे बृहद्दिवि देवाँ ईळे सादया सप्त होतॄन् ।
इन्द्रं मित्रं वरुणं सातये भगं स्वस्त्यग्निं समिधानमीमहे ॥१०॥
त आदित्या आगता सर्वतातये वृधे नो यज्ञमवता सजोषसः ।
बृहस्पतिं पूषणमश्विना भगं स्वस्त्यग्निं समिधानमीमहे ॥११॥
तन्नो देवा यच्छत सुप्रवाचनं छर्दिरादित्याः सुभरं नृपाय्यम् ।
पश्वे तोकाय तनयाय जीवसे स्वस्त्यग्निं समिधानमीमहे ॥१२॥

---

८ देवोंके लिये मनुष्यगण जिस यज्ञ-कार्यका संकल्प करते हैं, वही मेरी श्रीवृद्धि करें। प्रति प्रभातमें सूर्यदेव सारी वस्तुओंको स्पष्ट करके उगते हैं। प्रज्वलित अग्निसे हम कल्याणकी भिक्षा माँगते हैं।

९ यज्ञके लिये आज कुश बिछाया जाता है। सोम प्रस्तुत करनेके लिये दो पत्थर संयोजित किये जाते हैं। इस समय, अभीष्टकी सिद्धिके लिये, द्वेष-शून्य देवोंकी शरणमें जाना चाहिये। यजमान, तुम सब अनुष्ठान करते हो; इसलिये आदित्यगण तुम्हें सुखी करें। प्रदीप्त अग्निसे हम कल्याणकी भीख माँगते हैं।

१० अग्नि, हमारा यज्ञानुष्ठान हो रहा है। इसमें देवता लोग इकट्ठे होकर आमोद-आह्लाद करते हैं। इस यज्ञमें प्रकाण्ड द्युलोकमें रहनेवाले देवोंको बुलाओ, सात होताओंको बुलाओ और इन्द्र, मित्र, वरुण तथा भगको ले आओ। धन-प्राप्तिके लिये मैं सबकी स्तुति करता हूं। प्रज्वलित अग्निसे हम कल्याणकी भिक्षा चाहते हैं।

११ प्रसिद्ध आदित्यो, तुम लोग आओ। इससे सारे विषयोंमें श्रीवृद्ध होगी ही। हमारी श्रीवृद्धिके लिये सब एकत्र होकर यज्ञकी रक्षा करें। बृहस्पति, पूषा, अश्विद्वय, भग और प्रज्वलित अग्निके पास हम कल्याणकी भीख माँगते हैं।

१२ देवो, अपने यज्ञकी सफलता सम्पादित करो। हे आदित्यो, धनसे पूर्ण और राज-योग्य गृह हमें दो। हम अपने पशु, पुत्र-पौत्र और परमायु आदि सारे विषयोंमें प्रज्वलित अग्निके पास कल्याण चाहते हैं।

विश्वे अद्य मरुतो विश्व ऊती विश्वे भवन्त्वग्नयः समिद्धाः ।
विश्वे नो देवा अवसागमन्तु विश्वमस्तु द्रविणं वाजो अस्मे ॥१३॥
यं देवासोऽवथ वाजसातौ यन्त्रायध्वे यं पिपृथात्यंहः ।
यो वो गोपीथे न भयस्य वेद ते स्याम देववीतये तुरासः ॥१४॥

३६ सूक्त

विश्वदेव देवता । लूश ऋषि । जगती और त्रिष्टुप् छन्द ।

उषासानक्ता बृहती सुपेशसा द्यावाक्षामा वरुणो मित्रो अर्यमा ।
इन्द्रं हुवे मरुतः पर्वतॉं अप आदित्यान् द्यावापृथिवी अपः स्वः ॥१॥
द्यौश्च नः पृथिवी च प्रचेतस ऋतावरी रक्षतामंहसो रिषः ।
मा दुर्विदत्रा निर्ऋतिर्न ईशत तद्देवानामवो अद्या वृणीमहे ॥२॥

---

१३ सारे मरुत् हमें सब प्रकारसे बचावें । समस्त अग्नि प्रदीप्त हों । निखिल देवगण, हमारी रक्षाके लिये, पधारें सब प्रकारका अन्न और सम्पत्ति हमें मिले ।

१४ देवो, जिसे तुम अन्न देकर बचाते हो, जिसका त्राण करते हो, जिसे पाप-मुक्त करके श्रीवृद्धिसे सम्पन्न करते हो और जो तुम्हारे आश्रयमें रहकर भयका नाम तक नहीं जानता, देव-कार्यके लिये व्यग्र होकर हम वैसे ही व्यक्ति हों ।

१ उषा, रात्रि, महती और सुसंघटित-शरीरा द्यावापृथिवी, वरुण, मित्र, अर्यमा, इन्द्र, मरुद्-गण, पर्वतगण, जलगण और आदित्यगणको मैं यज्ञमें बुलाता हूं । द्यावापृथिवी, अन्तरीक्ष और स्वर्गको मैं बुलाता हूं ।

२ प्रशस्य-चित्ता और यज्ञकी अधिष्ठातृ-स्वरूपा द्यावापृथिवी हमें पापसे बचावें—शत्रुके हाथसे उबारें । दुष्ट आशयवाली निर्ऋति (मृत्यु-देवता) हमारे ऊपर आधिपत्य न करें । हम देवोंसे विशिष्ट रक्षाकी प्रार्थना करते हैं ।

विश्वस्मान्नो अदितिः पात्वंहसो माता मित्रस्य वरुणस्य रेवतः ।
स्वर्वज्ज्योतिरवृकं नशीमहि तद्देवानामवो अद्या वृणीमहे ॥३॥
ग्रावा वेदन्नप रक्षांसि सेधतु दुष्वप्न्यं निर्ऋतिं विश्वमत्रिणम् ।
आदित्यं शर्म मरुतामशीमहि तद्देवानामवो अद्या वृणीमहे ॥४॥
एन्द्रो बर्हिः सीदतु पिन्वतामिला बृहस्पतिः सामभिर्ऋक्वो अर्चतु ।
सुप्रकेतं जीवसे मन्म धीमहितद्देवानामवो अद्यावृणीमहे ॥५॥
दिविस्पृशं यज्ञमस्माकमश्विना जीराध्वरं कृणुतं सुम्नमिष्टये ।
प्राचीनरश्मिमाहुतं घृतेन तद्देवानामवो अद्या वृणीमहे ॥६॥
उप ह्वये सुहवं मारुतं गणं पावकमृष्वं सख्याय शंभुवम् ।
रायस्पोषं सौश्रवसाय धीमहि तद्देवानामवो अद्या वृणीमहे ॥७॥

३ धनी मित्र और वरुणकी जननी अदिति देवी हमें पापोंसे बचावें। हम सब प्रकार अविनाशी ज्योति प्राप्त करें। देवोंसे हम असाधारण रक्षाकी प्रार्थना करते हैं।

४ सोम-निष्पीड़नके लिये उपयोगी पत्थर, शब्द करते हुए, राक्षसोंको दूर भगावे। दुःस्वप्न, मृत्यु-देवी और सारे शत्रुओंको दूर करे। हम आदित्यों और मरुतोंसे सुख पावें। देवोंसे हम असाधारण रक्षाकी भीख माँगते हैं।

५ इन्द्र आकर कुशके ऊपर बैठें। विशेष रूपसे स्तुति-वाक्य उच्चारित हों। ऋक् और सामके द्वारा बृहस्पति अर्चना करें। हम उत्तमोत्तम और अभिलषणीय वस्तुओंको प्राप्त करके दीर्घजीवी हों। देवोंके पास विशिष्ट रक्षाकी हम भिक्षा करते हैं।

६ अश्वियुगल, ऐसा करो कि, हमारा यज्ञ देवलोकको छू ले। यज्ञके सारे विघ्न दूर करो। हमारा मनोरथ सिद्ध करके सुखी करो। जिन अग्निमें घृतकी आहुति दी जाती है, उनकी ज्वालाएँ देवोंके प्रति प्रेरित करो। देवोंसे हम साधारण रक्षाकी प्रार्थना करते हैं।

७ जो मरुद्गण सबको शुद्ध करते हैं, जो देखनेमें सुन्दर हैं, जिनसे कल्याणकी उत्पत्ति होती है, जो धनको बढ़ाते हैं और जिनका नाम लेनेपर मनमें आनन्द होता है, उन्हें मैं बुलाता हूं। विशिष्ट रूपसे अन्नकी प्राप्तिके लिये मैं उनका ध्यान करता हूं। हम देवोंसे असाधारण रक्षाकी भिक्षा माँगते हैं।

अपां पेरुं जीवधन्यं भरामहे देवाव्यं सुहवमध्वरश्रियम् ।
सुरश्मिं सोममिन्द्रियं यमीमहि तद्देवानामवो अद्या वृणीमहे ॥८॥
सनेम तत् सुसनिता सनित्वभिर्वयं जीवा जीवपुत्रा अनागसः ।
ब्रह्मद्विषो विष्वगेनो भरेरत तद्देवानामवो अद्या वृणीमहे ॥९॥
ये स्था मनोर्यज्ञियास्ते शृणोतन यद्वो देवा ईमहे दधातन ।
जैत्रं क्रतुं रयिमद्वीरवद्यशस्तद्देवानामवो अद्या वृणीमहे ॥१०॥
महदद्य महतामावृणीमहेऽवो देवानां बृहतामनर्वणाम् ।
यथा वसु वीरजातं नशामहै तद्देवानामवो अद्या वृणीमहे ॥११॥
महो अग्नेः समिधानस्य शर्मण्यनागा मित्रे वरुणे स्वस्तये ।
श्रेष्ठे स्याम सवितुः सवीमनि तद्देवानामवो अद्या वृणीमहे ॥१२॥

---

८ जो सोम जलसे मिलते हैं, जिनसे प्राणी स्वच्छन्दता पाते हैं, जो देवोंको परितृप्त करते हैं, जिनका नाम लेनेपर आनन्द होता है, जो यज्ञको शोभा हैं और जिनकी दीप्ति उत्कृष्ट हैं, उनको हम धारण करते हैं और उनसे हम बलकी याचना करते हैं। देवोंसे हम असाधारण रक्षाकी भिक्षा माँगते हैं।

९ हम और हमारे पुत्रगण दीर्घजीवी हों। हम अपराधीन हों। पुत्रादिके साथ सोमरसका भाग करके हम पान करें। स्तुति-द्रोही सब प्रकारके पापोंसे परिपूर्ण हों। देवोंसे हम विशिष्ट रक्षाकी भिक्षा माँगते हैं।

१० देवो, तुमलोग मनुष्योंसे यज्ञ पानेके योग्य हो। सुनो। तुमसे हम जो माँगते हैं, उसे दो। जिससे हम बली हों, ऐसा ज्ञान दो। धन, लोकबल और यश दो। देवोंसे हम असाधारण रक्षाकी भिक्षा माँगते है।

११ देवता लोग जैसे महान्, प्रकाण्ड और अविचलित हैं, हम उनसे वैसी ही विशिष्ट रक्षाकी प्रार्थना करते हैं। हम धन और लोकबल प्राप्त करें। देवोंसे हम विशिष्ट रक्षाकी भिक्षा माँगते हैं।

१२ प्रज्वलित अग्निसे हम विशिष्ट सुख प्राप्त करें। मित्र और वरुणके पास हम निरपराधी होकर कल्याण प्राप्त करें। सूर्य हमें सर्वोत्कृष्टशान्ति दें। देवोंसे हम विशिष्ट रक्षाकी भिक्षा माँगते हैं।

ये सवितुः सत्यसवस्य विश्वे मित्रस्य व्रते वरुणस्य देवाः ।
ते सौभगं वीरवद्गोमदप्नो दधातन द्रविणं चित्रमस्मे ॥१३॥
सविता पश्चातात् सविता पुरस्तात् सवितोत्तरात्तात् सविताद् धरात्तात् ।
सविता नः सुवतु सर्वतातिं सविता नो रासतां दीर्घमायुः ॥१४॥

---

३७ सूक्त

सूर्य देवता । सूर्यपुत्र अभितपा ऋषि । जगती और त्रिष्टुप् छन्द ।

नमो मित्रस्य वरुणस्य चक्षसे महो देवाय तदृतं सपर्यत ।
दूरेदृशे देवजाताय केतवे दिवस्पुत्राय सूर्याय शन्सत ॥१॥
सा मा सत्योक्तिः परिपातु विश्वतो द्यावा च यत्र ततनन्नहानि च ।
विश्वमन्यन्निविशते यदेजति विश्वाहापो विश्वाहोदेति सूर्यः ॥२॥

---

१३ जो सब देवता सत्य-स्वभाव सूर्य, मित्र और वरुणके कार्योंमें उपस्थित रहते हैं, वे हमें सौभाग्य, लोकबल, गाय और पुण्यकर्म दें तथा विविध प्रकारके धन भी दें ।

१४ क्या पश्चिम, क्या पूर्व, क्या उत्तर और क्या दक्षिण—सूर्यदेव हम सबको सर्वत्र श्रीवृद्धि दें । हमें दीर्घ परमायु प्रदान करें ।

---

१ पुरोहितो, जो सूर्य मित्र और वरुणको देखते हैं, जिनकी दीप्ति अतीव उज्ज्वल है, जो दूरसे ही सारी वस्तुओंको देखते हैं, जिन्होंने देवोंके वंशमें जन्म ग्रहण किया है, जो सारी वस्तुओंको स्वच्छ कर देते हैं और आकाशके पुत्र-स्वरूप हैं, उन सूर्यको नमस्कार करो, पूजा करो और स्तुति करो ।

२ वही सत्य-वचन है, जिसका अवलम्बन करके आकाश और दिन वर्त्तमान हैं, सारा संसार और प्राणिवृन्द जिसपर आश्रित हैं, जिसके प्रभावसे प्रतिदिन जल प्रवाहित होता है और सूर्य उगते हैं । वह सत्य-वचन मुझे सारे विषयोंमें बचावें ।

न ते अदेवः प्रदिवो निवासते यदेतशेभिः पतरै रथर्यसि ।
प्राचीनमन्यदनु वर्तते रज उदन्येन ज्योतिषा यासि सूर्य ॥३॥
येन सूर्य ज्योतिषा बाधसे तमो जगच्च विश्वमुदियर्षि भानुना ।
तेनास्मद्विश्वामनिरामनाहुतिमपामीवामप दुःष्वप्न्यं सुव ॥४॥
विश्वस्य हि प्रेषितो रक्षसि व्रतमहेलयन्नुच्चरसि स्वधा अनु ।
यदद्य त्वा सूर्योपब्रवामहै तन्नो देवा अनु मंसीरत क्रतुम् ॥५॥
तं नो द्यावापृथिवी तन्न आप इन्द्रः शृण्वन्तु मरुतो हवं वचः ।
मा शूने भूम सूर्यस्य सन्दृशि भद्रं जीवन्तो जरणामशीमहि ॥६॥
विश्वाहा त्वा सुमनसः सुचक्षसः प्रजावन्तो अनमीवा अनागसः ।
उद्यन्तं त्वा मित्रमहो दिवे दिवे ज्योग्जीवाः प्रति पश्येम सूर्य ॥७॥

---

३ सूर्यदेव, जिस समय तुम वेगशाली घोड़ेको रथमें जोतकर आकाश-मार्गसे जाते हो, उस समय कोई भी देव-शून्य जीव तुम्हारे पास नहीं आने पाता। तुम्हारी वह चिर-परिचित असाधारण ज्योति तुम्हारे साथ-साथ जाती है—उसी ज्योतिका धारण करके तुम उगते हो।

४ सूर्यदेव, जिस ज्योतिके द्वारा तुम अन्धकारको नष्ट करते हो और जिस किरणके द्वारा सारे संसारको प्रकाशित करते हो, उसके द्वारा तुम हमारी सारी दरिद्रता नष्ट करो। हमारा पाप, रोग और दुःख दूर करो।

५ सूर्यदेव, तुम सरल रूपसे सारे संसारके क्रिया-कलापकी रक्षा करनेके लिये प्रेरित हुए हो। तुम प्रातःकालके होमसे उदित होते हो। सूर्य, आज हम जिस समय तुम्हारे नामका उच्चारण करते हैं, उस समय देवता लोग हमारे यज्ञको सफल करें।

६ द्यावापृथिवी, जल, मरुत् और इन्द्र हमारा आह्वान सुनें। सूर्यकी कृपा-दृष्टि रहते हम दुःखभागी न हों। हम दीर्घजीवी होकर वृद्धावस्था पर्यन्त सौभाग्यशाली रहें।

७ बन्धुओंके सत्कारकारी सूर्य, जैसे तुम दिन-दिन उगते हो, वैसे ही हम प्रतिदिन तुम्हारा, प्रशस्त मन और प्रशस्त चक्षुसे, दर्शन करें; प्रत्यह हो हम नीरोग शरीरसे सन्तानोंसे घेरे जाकर और तुम्हारे पास किसी दोषसे दोषी न होकर तुम्हारा दर्शन कर सकें। हम चिरजीवी होकर तुम्हारे दर्शनकी प्राप्ति कर सकें।

महि ज्योतिर्बिभ्रतं त्वा विचक्षण भास्वन्तं चक्षुषे चक्षुषे मयः ।
आरोहन्तं बृहतः पाजसस्परि वयं जीवाः प्रति पश्येम सूर्य ॥८॥
यस्य ते विश्वा भुवनानि केतुना प्रचेरते नि च विशन्ते अक्तुभिः ।
अनागास्त्वेन हरिकेश सूर्याह्नाह्ना नो वस्यसावस्यसोदिहि ॥९॥
शन्नो भव चक्षसा शन्नो अह्ना शं भानुना शं हिमा शं घृणेन ।
यथा शमध्वञ्छमसद्दुरोणे तत् सूर्य द्रविणं धेहि चित्रम् ॥१०॥
अस्माकं देवा उभयाय जन्मने शर्म यच्छत द्विपदे चतुष्पदे ।
अदत् पिबदूर्जयमानमाशितं तदस्मे शं योररपो दधातन ॥११॥
यद्वो देवाश्चकृम जिह्वया गुरु मनसो वा प्रयुती देवहेलनम् ।
अरावा यो नो अभि दुच्छुनायते तस्मिन्तदेनो वसवो निधेतन ॥१२॥

---

८ सर्व-दर्शक सूर्य, तुम प्रकाण्ड ज्योति धारण करो । तुम्हारी दीप्ति उज्ज्वल है—सबकी आँखोंमें तुम सुखकर हो। जिस समय तुम्हारी वह मूर्त्ति आकाशके ऊपर चढ़ती है, उस समय हम, प्रदीप्त शरीरके साथ, नित्य उसका दर्शन करें ।

९ तुम्हारी जिस पताकाके साथ-साथ सारा संसार प्रकाश पाता है और प्रतिरात्र अन्धकारावृत होकर अन्तर्धान होता है, हे पिङ्गलवर्ण केशवाले सूर्य, तुम उसी उत्तम पताकाको लेकर दिन-दिन उगो । हम भी निर्दोष होकर उसका दर्शन पावें ।

१० तुम्हारी दृष्टि हमारा कल्याण करे । तुम्हारा दिन और किरण, तुम्हारी शीतलता और तुम्हारा उत्ताप कल्याणकर हो । हम घरमें ही रहें अथवा मार्गपर यात्रा करें—वह सदा कल्याणकर हो । सूर्य, हमें विविध सम्पत्तियाँ दो ।

११ देवो, हमारे अधिकारमें जो द्विपद और चतुष्पद हैं, उन सबको तुम सुखी करो। सभी प्राणी आहार करें, पुष्ट और बलिष्ठ हों और हमारे साथ वह सब अटूट स्वाधीनता पावें ।

१२ धन-सम्पन्न देवो, कथा द्वारा हो, मानसिक क्रिया द्वारा हो, देवोंके पास जो कुछ अपराधका कार्य हम किया करते हैं, उसका पाप तुम लोग उस व्यक्तिके ऊपर न्यस्त करो, जो व्यक्ति दान-धर्मसे विमुख है और जो हमारा अनिष्ट किया करता है।

३८ सूक्त

इन्द्र देवता। मुष्कवान् इन्द्र ऋषि। जगती छन्द।

अस्मिन्न इन्द्र पृत्सुतौ यशस्वति शिमीवति क्रन्दसि प्राव सातये।
यत्र गोषाता धृषितेषु खादिषु विष्वक् पतन्ति दिद्यवो नृषा ॥१॥
स नः क्षुमन्त सदने व्यूर्णु हि गोअर्णसं रयिमिन्द्र श्रवाय्यम्।
स्याम ते जयतः शक्र मेदिनो यथा वयमुश्मसि तद्वसो कृधि ॥२॥
यो नो दास आर्यो वा पुरुष्टुतादेव इन्द्र युधये चिकेतति।
अस्माभिष्टे सुषहाः सन्तु शत्रवस्त्वया वयं तान्वनुयाम संगमे ॥३॥
यो दभ्रेभिर्हव्यो यश्च भूरिभिर्यो अभीके वरिवोविन्नृषाह्ये।
तं विखादे सस्निमद्य श्रुतं नरमर्वाञ्चमिन्द्रमवसे करामहे ॥४॥
स्ववृजं हि त्वामहमिन्द्र शुश्रवानानुदं वृषभ रध्रचोदनम्।
प्रमुञ्चस्व परि कुत्सादिहागहि किमु त्वावान्मुष्कयोर्बद्ध आसते ॥५॥

---

१ इन्द्र, यह जो युद्ध है, जिसमें यश मिलता है और प्रहारपर प्रहार चलता है, उसमें तुम वीर-मदसे मत्त होकर उद्घोष करते हो और शत्रुओंसे जीती हुई गायोंको सुरक्षित करते हो। युद्धमें एक ओर दीप्यमान वाण प्रवल शत्रुओंके ऊपर गिरते हैं—इस व्यापारको देखकर लोग हत-बुद्धि हो जाते हैं।

२ फलतः हे इन्द्र, प्रचुर धन-धान्य और गायोंसे हमारा घर भर दो। शक्र, तुम्हारे विजयी होनेपर हम तुम्हारे स्नेहके पात्र हों। हम जिस धनकी अभिलाषा करते हैं, वह हमें दो।

३ बहुतोंके द्वारा स्तुत इन्द्र, आर्यजातिका हो वा दासजातिका हो, जो कोई भी देव-शून्य मनुष्य हमारे साथ युद्ध करनेकी इच्छा करता है, वह अनायास हमसे हार जाय। तुम्हारी कृपासे हम उन्हें युद्धमें हरावें।

४ जिनकी पूजा अल्प मनुष्य करते हैं अथवा बहुत मनुष्य करते हैं, जो दुःसाध्य युद्धमें विजयी होकर उत्तमोत्तम वस्तुओंको जीतते हैं, जो युद्धमें स्नान करते हैं और जो सबके यहाँ प्रसिद्धयशा होते हैं, आश्रय पानेके लिये हम उन्हीं इन्द्रको अपने अनुकूल करते हैं।

५ इन्द्र, तुम अपने भक्तोंको उत्साहसे युक्त करते हो। हमें कौन उत्साहित करेगा? हम जानते हैं कि, तुम स्वयं अपना बन्धन-छेदन करनेमें समर्थ हो। फलतः कुत्सके हाथसे हमें छुड़ाओ और पधारो। तुम्हारे समान व्यक्ति क्यों मुष्क-द्वयका बन्धन सहता है?

सूक्त ३९

अश्विद्वय देवता। कक्षीवान्‌की पुत्री और कोढ़ी घोषा नामक ब्रह्मवादिनी स्त्री ऋषि।
जगती और त्रिष्टुप् छन्द।

यो वां परिज्मा सुवृदश्विना रथो दोषामुषासो हव्यो हविष्मता।
शश्वत्तमासस्तमु वामिदं वयं पितुर्न नाम सुहवं हवामहे ॥१॥

चोदयतं सूनृताः पिन्वतं धिय उत् पुरन्धीरीरयतं तदुश्मसि।
यशसं भागं कृणुतन्नो अश्विना सोमं न चारुं मघवत्सु नस्कृतम् ॥२॥

अमाजुरश्चिद्भवथो युवं भगोऽनाशोश्चिदवितारापमस्य चित्।
अन्धस्य चिन्नासत्या कृशस्य चिद्युवामिदाहुर्भिषजा रुतस्य चित् ॥३॥

युवं च्यवानं सनयं यथा रथं पुनर्युवानं चरथाय तक्षथुः।
निष्टौग्र्यमूहथुरद्भ्यस्परि विश्वेत्ता वां सवनेषु प्रवाच्या ॥४॥

---

१ अश्विद्वय, तुम लोगोंका सर्वत्रविहारी जो सुघटित रथ है और जिस रथको, उद्देशके लिये, रात-दिन बुलाना यजमानके लिये कर्त्तव्य है, हम उसी रथका क्रमागत नाम लेते हैं। जैसे पिताका नाम लेनेमें आनन्द आता है, वैसे ही इस रथका भी नाम लेनेमें।

२ हमें मधुर वाक्य उच्चारण करनेमें प्रवृत्त करो। हमारा कर्म सम्पन्न करो। विविध बुद्धियोंका उदय कर दो—हम यही कामना करते हैं। अश्विद्वय, अतीव प्रशंसित धनका भाग हमें दो। जैसे सोमरस प्रीतिप्रद होता है, वैसे ही हमें भी यजमानोंके पास प्रीति-प्रद कर दो।

३ पितृ-गृहमें एक स्त्री (घोषा) वार्द्धक्यको प्राप्त कर रही थी, तुम लोग उसके सौभाग्य-स्वरूप वरको ले आये। जिसे चलनेकी शक्ति नहीं है अथवा जो अतीव नीच है, उसके तुम लोग आश्रय हो। तुम्हें लोग अन्धे, दुर्बल और रोते हुए रोगीका चिकित्सक कहते हैं।

४ जैसे कोई पुराने रथको नये रूपसे बनाकर उसके द्वारा गति-विधि करता है, वैसे ही तुमने जरा-जीर्ण च्यवन ऋषिको युवा बना दिया था। तुम लोगोंने ही तुग्र-पुत्रको जलके ऊपर निरुपद्रव-रूपसे, वहन करके तटपर लगा दिया था। यज्ञके समय तुम दोनोंके यह सब कार्य, विशेष रूपसे, वर्णन करनेके योग्य हैं।

पुराणा वां वीर्या प्रब्रवा जनेऽथो हासथुर्भिषजा मयोभुवा ।
ता वां नु नव्यावसे करामहेऽयं नासत्या श्रदरिर्यथा दधत् ॥५॥
इयं वामह्वे शृणुतं मे अश्विना पुत्रायेव पितरा मह्यं शिक्षतम् ।
अनापिरज्ञा असजात्यामतिः पुरा तस्या अभिशस्तेरव स्पृतम् ॥६॥
युवं रथेन विमदाय शुन्ध्युवं न्यूहथुः पुरुमित्रस्य योषणाम् ।
युवं हवं वध्रिमत्या अगच्छतं युवं सुषुतिं चक्रथुः पुरन्धये ॥७॥
युवं विप्रस्य जरणामुपेयुषः पुनः कलेरकृणुतं युवद्वयः ।
युवं वन्दनमृश्यदादुदूपथुर्युवं सद्यो विश्पलामेतवे कृथः ॥८॥
युवं ह रेभं वृषणा गुहा हितमुदैरयतं ममृवांसमश्विना ।
युवमृबीसमुत तप्तमत्रय ओमन्वन्तं चक्रथुः सप्तवध्रये ॥९॥

---

५ तुम लोगोंके उन सारे वीरत्वके कार्योंका, लोगोंके पास, मैं वर्णन करती हूं । इसके अतिरिक्त तुम दोनों ही अत्यन्त पटु चिकित्सक हो । इसीलिये, तुम्हारा आश्रय पानेकी अभिलाषासे, मैं तुम्हारी स्तुति करती हूं । सत्यस्वरूप अश्विद्वय, मैं इस प्रकारसे स्तुति करती हूं कि, उसका विश्वास यजमान अवश्य करेगा ।

६ अश्विद्वय, मैं तुम दोनोंको बुलाती हूं, सुनो । जैसे पिता पुत्रको शिक्षा देता है, वैसे ही मुझे शिक्षा दो । मेरा कोई यथार्थ बन्धु नहीं है, मैं ज्ञान-शून्य हूं । मेरा कुटुम्ब नहीं है, बुद्धि भी नहीं है । मेरी कोई दुर्गति आनेके पहले ही उसे दूर करो ।

७ पुरुमित्र राजाकी "शुन्ध्युव" नामक कन्याको तुमलोग रथपर चढ़ा ले गये थे और विमदके साथ उसका विवाह करा दिया था । वध्रिमतीने तुम लोगोंको बुलाया था । उसकी बात सुनकर और उसकी प्रसव-वेदनाको दूर करके सुखसे प्रसव करा था ।

८ कलि नामको जो स्तोता अत्यन्त वृद्ध हो गया था, तुम लोगोंने उसे फिर यौवनसे युक्त किया था । तुम लोगोंने ही वन्दन नामक व्यक्तिको कुएँके बीचसे निकाला था । तुम लोगोंने ही लँगड़ी विश्पलाको लोहेका चरण देकर उसे तुरत चलनेवाली बना दिया था ।

९ अभीष्ट-फल दाता अश्विद्वय, जिस समय रेभ नामके व्यक्तिको शत्रुओंने मृत-प्राय करके गुहाके बीच रख दिया था, उस समय तुम लोगोंने ही उसे संकटसे बचाया था । जिस समय अत्रि ऋषि, सात बन्धनोंमें बाँधे जाकर, जलते अग्निकुण्डमें फेंके गये थे, उस समय तुमलोगोंने ही उस अग्निकुण्डको बुझाया था ।

युवं श्वेतं पेदवेऽश्विनाश्वं नवभिर्वाजैर्नवती च वाजिनम् ।
चर्कृत्यं ददथुर्द्रावयत्सखं भगं न नृभ्यो हव्यं मयोभुवम् ॥१०॥
न तं राजानावदिते कुतश्चन नांहो अश्नोति दुरितं नकिर्भयम् ।
यमश्विना सुहवा रुद्रवर्तनी पुरोरथं कृणुथः पत्न्या सह ॥११॥
आ तेन यातं मनसो जवीयसा रथं यं वामृभवश्चक्रुरश्विना ।
यस्य योगे दुहिता जायते दिव उभे अहनी सुदिने विवस्वतः ॥१२॥
ता वर्तिर्यातं जयुषा वि पर्वतमपिन्वतं शयवे धेनुमश्विना ।
वृकस्य चिद्वर्तिकामन्तरास्याद्युवं शचीभिर्ग्रसितामसुञ्चतम् ॥१३॥
एतं वां स्तोममश्विनावकर्मातक्षाम भृगवो न रथम् ।
न्यमृक्षाम योषणां न मर्ये नित्यं न सूनुं तनयं दधानाः ॥१४॥



१० अश्विद्वय, तुमने ही पेदु राजाको, निन्यानबे घोड़ोंके साथ, एक उत्तम शुभ्रवर्ण घोड़ा दिया था। वह घोड़ा विचित्र-तेजस्वी था, उसे देखते ही सारी शत्रु-सेना भाग जाती थी, वह मनुष्योंके लिये बहु-मूल्य धन था। इसका नाम लेनेपर आनन्द प्राप्त होता था और उसे देखनेपर मनमें सुख होता था।

११ अक्षय राजाओ, तुम दोनोंका नाम कीर्त्तन करनेसे आनन्द ६ । जिस समय तुम रास्तेमें जाते हो, उस समय सब, चारो ओरसे, तुम्हारी स्तुति करते हैं। यदि तुम दम्पतीको अपने रथके अगले भागमें चढ़ाकर आश्रय दो, तो उन्हें कोई भी पाप, दुर्गति वा विपद नहीं छुवे।

१२ अश्विद्वय, ऋभु नामक देवोंने तुम्हारे लिये रथ प्रस्तुत किया था। उस रथके उदय होनेपर आकाशकी कन्या उषा प्रकट होती हैं और सूर्यसे अतीव सुन्दर दिन तथा रात्रि जन्म लेती हैं। उसी मनसे अधिक वेगवाले रथपर बैठकर तुम लोग पधारो।

१३ अश्विद्वय, तुम लोग उसी रथपर चढ़कर पर्वतकी ओर जानेवाले मार्गपर गमन करो और शयु नामक मनुष्यकी बूढ़ी गायको फिर दूधवाली बना दो। तुम्हारी ऐसी क्षमता है कि, तंदुपके मुँहमें गिरे वर्त्तिका (चटका) नामक पक्षीको तुमने उसके मुँहसे निकालकर उसका उद्धार किया था।

१४ जैसे भृगु-सन्तानें रथ बनाती हैं, वैसे ही, हे अश्विद्वय, तुम लोगोंके लिये यह रथ प्रस्तुत किया है। जैसे जामाताको कन्या देनेके समय लोग उसे वस्त्राभूषणसे अलङ्कृत करके देते हैं, वैसे ही हमने इस स्तोत्रको अलङ्कृत किया है। हमारे पुत्र-पौत्र सदा प्रतिष्ठित रहें।

४० सूक्त

अश्विद्वय देवता। घोषा ऋषि। जगती छन्द।

रथं यान्तं कुह को ह वां नरा प्रति द्युमन्तं सुविताय भूषति ।
प्रातर्यावाणं विभ्वं विशेविशे वस्तोर्वस्तोर्वहमानं धिया शमि ॥१॥

कुह स्विद्दोषा कुह वस्तोरश्विना कुहाभिपित्वं करतः कुहोषतुः ।
को वां शयुत्रा विधवेव देवरं मर्यं न योषा कृणुते सधस्थ आ ॥२॥

प्रातर्जरेथे जरणेव कापया वस्तोर्वस्तोर्यजता गच्छथो गृहम् ।
कस्य ध्वस्रा भवथः कस्य वा नरा राजपुत्रेव सवनाव गच्छथः ॥३॥

युवां मृगेव वारणा मृगण्यवो दोषा वस्तोर्हविषा निह्वयामहे ।
युवं होत्रामृतुथा जुह्वते नरेषं जनाय वहथः शुभस्पती ॥४॥

---

१ कर्मोंके उपदेशक अश्विद्वय, तुम्हारा प्रकाण्ड रथ जिस समय प्रातःकाल जाता है और प्रत्येक व्यक्तिके पास धन वहन करके ले जाता है, उस समय अपने यज्ञकी सफलताके लिये कौन यजमान उस उज्ज्वल रथका स्तोत्र करता है? तुम्हारा वह रथ कहाँ है?

२ अश्विद्वय, तुम लोग दिन और रातमें कहाँ जाते हो? कहाँ समय बिताते हो? जैसे विधवा स्त्री, शयन-कालमें, देवर (द्वितीय वर?)का और कामिनी अपने पतिका समादर करती है, वैसे ही यज्ञमें समादरके साथ तुम्हें कौन बुलाता है?

३ दो वृद्ध राजाओंके समान तुम्हें जगानेके लिये प्रातःकाल स्तोत्र-पाठ किया जाता है। यज्ञ पानेके लिये तुम लोग प्रतिदिन किसके घरमें जाते हो? किसका पाप नष्ट करते हो? कर्मोंके उपदेशक अश्विद्वय, राजकुमारोंके समान तुम दोनों किसके यज्ञमें जाते हो?

४ जैसे व्याध शार्दूलकी इच्छा करते हैं, वैसे ही, यज्ञीय द्रव्य लेकर, मैं तुम्हें दिन-रात बुलाता हूं। उपदेशक-द्वय यथा-समय लोग तुमलोगोंके लिये होम किया करते हैं। तुम लोग भी लोगोंके लिये अन्न ले आते हो; क्योंकि तुम कल्याणके अधिपति हो।

युवां ह घोषा पर्यश्विना यती राज्ञ ऊचे दुहिता पृच्छे वां नरा ।
भूतं मे अह्न उत भूतमक्तवेऽश्वावते रथिने शक्तमर्वते ॥५॥
युवं कवी ष्ठः पर्यश्विना रथं विशो न कुत्सो जरितुर्नशायथः ।
युवोर्ह मक्षा पर्यश्विना मध्वासा भरत निष्कृतं न योषणा ॥६॥
युवं ह भुज्युं युवमश्विना वशं युवं शिञ्जारमुशनामुपारथुः ।
युवो ररावा परि सख्यमासते युवोरहमवसा सुम्नमाचके ॥७॥
युवं ह कृशं युवमश्विना शयुं युवं विधन्तं विधवामुरुष्यथः ।
युवं सनिभ्यः स्तनयन्तमश्विनाप व्रजमूर्णुथः सप्तास्यम् ॥८॥
जनिष्ट योषा पतयत् कनीनको वि चारुहन्वीरुधो दंसना अनु ।
आस्मै रीयन्तेनिवनेव सिन्धवोऽस्मा अह्ने भवति तत् पतित्वनम् ॥९॥

५ अश्विद्वय, उपदेशक-द्वय, मैं राजकुमारी घोषा हूं। मैं चारों ओर घूम-घूमकर तुम्हारी ही कथा कहती हूं, तुम्हीं लोगोंके विषयकी जिज्ञासा करती हूं। क्या दिन, क्या रात, तुम लोग बराबर मेरे यहाँ रहते हो। रथ-युक्त और अश्व-सम्पन्न मेरे भ्रातुष्पुत्रका दमन करते हो।

६ कवि-द्वय, तुम दोनों रथपर चढ़े हुए हो। अश्विद्वय, तुम लोग कुत्सके समान रथपर चढ़कर स्तोताके घरमें जाते हो। तुम्हारा मधु इतना अधिक है कि, उसे मक्खियाँ मुँहमें ग्रहण करती हैं। जैसे कोई स्त्री व्यभिचारमें रत रहती है, वैसे ही मक्खियाँ तुम्हारे मधुका ग्रहण करती हैं।

७ अश्विद्वय, तुमने भुज्यु नामक व्यक्तिको समुद्रसे बचाया था। तुमने वश राजा, अत्रि और उशनाका उद्धार किया था। जो दाता है, वही तुम्हारा बन्धुत्व प्राप्त करता है। तुम्हारे आश्रयसे जो सुख प्राप्त होता है, मैं उसकी कामना करता हूं।

८ अश्विद्वय, तुम लोगोंने ही कृश, शयु, अपने परिचारक और विधवाको बचाया था। यज्ञकर्त्ताके लिये तुम्हीं लोग मेघको फाड़ते हो, जिससे गतिशील द्वारवाला मेघ, शब्द करते हुए, बरसाता है।

९ मैं घोषा हूं। नारी-लक्षण प्राप्त करके सौभाग्यवती हुई हूं। मेरे विवाहके लिये वर आया है। तुमने वृष्टि बरसायी है; इसलिये उसके लिये शस्य आदि भी उत्पन्न हुए हैं। निम्नाभिमुखी होकर नदियाँ इनकी ओर बह रही हैं। यह रोग-रहित हैं। सब तरहका सुख भोगनेके योग्य इन्हें शक्ति हो गयी है।

जीवं रुदन्ति विमयन्ते अध्वरे दीर्घामनु प्रसितिं दीधियुर्नरः ।
वामं पितृभ्यो य इदं समेरिरे मयः पतिभ्यो जनयः परिष्वजे ॥१०॥
न तस्य विद्म तदु षु प्र वोचत युवा ह यद्युवत्याः क्षेति योनिषु ।
प्रियोस्रियस्य वृषभस्य रेतिनो गृहं गमेमश्विना तदुश्मसि ॥११॥
आ वामगन्त्सुमतिर्वाजिनीवसू न्यश्विना हृत्सु कामा अयंसत ।
अभूतं गोपा मिथुना शुभस्पती प्रिया अर्यम्णो दुर्याँ अशीमहि ॥१२॥
ता मन्दसाना मनुषो दुरोण आधत्तं रयिं सहवीरं वचस्यवे ।
कृतं तीर्थं सुप्रपाणं शुभस्पती स्थाणुं पथेष्ठामप दुर्मतिं हतम् ॥१३॥
क्व स्विदद्य कतमास्वश्विना विक्षु दस्रा मादयेते शुभस्पती ।
क ईं नि येमे कतमस्य जग्मतुर्विप्रस्य वा यजमानस्य वा गृहम् ॥१४॥



१० अश्विद्वय, जो लोग अपनी स्त्रीकी प्राण-रक्षाके लिये रोदन तक करते हैं, स्त्रियोंको यज्ञ-कार्यमें नियुक्त करते हैं, उनका, अपनी बाँहोंसे, बहुत देरतक आलिङ्गन करते हैं और सन्तान उत्पन्न करके पितृ-यज्ञमें नियुक्त करते हैं, उनको स्त्रियाँ सुख-पूर्वक आलिङ्गन करती हैं।

११ अश्विद्वय, उनका वैसा सुख मैं नहीं जानती। युवक स्वामी और युवती स्त्रीके सहवास-सुखको मुझे भली भाँति समझा दो। अश्विद्वय, मेरी एक मात्र यही अभिलाषा है कि, मैं स्त्रीके प्रति अनुरक्त बलिष्ठ स्वामीके गृहमें जाऊँ।

१२ अन्न और धनवाले अश्विद्वय, तुम दोनों मेरे प्रति सदय होओ। मेरे मनकी अभिलाषाएँ पूरी करो। तुम कल्याण करनेवाले हो। मेरे रक्षक होओ। पति-गृहमें जाकर हम पतिके लिये प्रिय बनें।

१३ मैं तुम्हारी स्तुति करती हूं; इसलिये तुमलोग मुझसे सन्तुष्ट होकर मेरे पतिके गृहमें धन और सन्तति दो। कल्याण करनेवाले अश्विद्वय, मैं जिस तीर्थ (तट) पर जल पीती हूं, उसे तुम सुविधा-जनक करो। मेरे पति-गृहमें जानेके मार्गमें यदि कोई दुष्टाशय विघ्न करे, तो उसे नष्ट करना।

१४ प्रिय-दर्शन और कल्याणकर्त्ता अश्विद्वय, आजकल तुम कहाँ, किसके घरमें, आमोद-प्रमोद करते हो? कौन तुम्हें बाँधकर रखे हुए है? किस बुद्धिमान् यजमानके घरमें तुम गये हो?

४१ सूक्त

अश्विद्वय देवता। घोषा-पुत्र सुहस्त ऋषि। जगती छन्द।

समानमु त्यं पुरुहूतमुक्थ्यं रथं त्रिचक्रं सवना गनिग्मतम्।
परिज्मानं विदथ्यं सुवृक्तिभिर्वयं व्युष्टा उषसो हवामहे ॥१॥
प्रातर्युजं नासत्याधितिष्ठथः प्रातर्यावाणं मधुवाहनं रथम्।
विशो येन गच्छथो यज्वरीर्नरा कीरेश्चिद्यज्ञं होतृमन्तमश्विना ॥२॥
अध्वर्युं वा मधुपाणिं सुहस्त्यमग्निधं वा धृतदक्षं दमूनसम्।
विप्रस्य वा यत् सवनानि गच्छथोऽत आयातं मधुपेयमश्विना ॥३॥



४२ सूक्त

इन्द्र देवता। आङ्गिरस कृष्ण ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

अस्तेव सु प्रतरं लायमस्यन् भूषन्निव प्रभरा स्तोममस्मै।
वाचा विप्रास्तरत वाचमर्यो निरामय जरितः सोममिन्द्रम् ॥१॥

---

१ अश्विद्वय, तुम दानोंके पास एक ही रथ है, जिसे अनेक बुलाते हैं; अनेक स्तुति करते हैं। वह रथ तीन चक्कोंके ऊपर यज्ञोंमें जाता है। वह चारो ओर घूमते हुए यज्ञको सुसम्पन्न करता है। प्रतिदिन प्रातःकाल हम सुन्दर स्तुतिसे उसी रथको बुलाते हैं।

२ सत्य-स्वरूप अश्विद्वय, तुम्हारा जो रथ प्रातःकाल जोता जाता है, प्रातःकाल चलता है और मधु ले जाता है, उसी रथपर चढ़कर यज्ञ-कर्त्ताओंके पास जाओ। तुम्हारी जो स्तुति करता है, उसके होतृ-युक्त यज्ञमें भी जाओ।

३ अश्विद्वय, मैं सुहस्त हूं। मैं हाथमें मधु लेकर अध्वर्युका कार्य करता हूँ। मेरे पास पधारो अथवा, अग्निध् नामक जो बली पुरोहित दान करनेको उद्यत है, उसके पास पधारो। यद्यपि तुमलोग किसी बुद्धिमान् व्यक्तिके यज्ञमें जाते हो, तो भी, मधु-पान करनेके लिये, मेरे गृहमें पधारो।

---

१ जैसे बाण फेंकनेवाला धनुर्द्धर अतीव सुन्दर बाण फेंकता है, वैसे ही तुम, इन्द्रके लिये, क्रमागत स्तव करो। उनके लिये प्राञ्जल और अलङ्कृत करके स्तुतिका प्रयोग करो। विप्रो, तुम्हारे साथ जो स्पर्द्धा करता है, ऐसे स्तुति-वचनका प्रयोग करो कि, वह पराजित हो जाय। स्तोता, इन्द्रको सोमकी ओर आकृष्ट करो।

दोहेन गामुपशिक्षा सखायं प्र बोधय जरितर्जारमिन्द्रम् ।
कोशं न पूर्णं वसुना न्यृष्टमा च्यावय मघदेयाय शूरम् ॥२॥
किमङ्ग त्वा मघवन् भोजमाहुः शिशीहि मा शिशयं त्वा शृणोमि ।
अप्नस्वती मम धीरस्तु शक्र वसुविदं भगमिन्द्राभरा नः ॥३॥
त्वां जना ममसत्येष्विन्द्र सन्तस्थाना विह्वयन्ते समीके ।
अत्रा युजं कृणुते यो हविष्मान्नासुन्वता सख्यं वष्टि शूरः ॥४॥
धनं न स्पन्द्रं बहुलं यो अस्मै तीव्रान्त्सोमाँ आसुनोति प्रयस्वान् ।
तस्मै शत्रून्त्सुतुकान् प्रातरह्नो नि स्वष्ट्रान्युवति हन्ति वृत्रम् ॥५॥
यस्मिन्वयं दधिमा शंसमिन्द्रे यः शिश्राय मघवा काममस्मे ।
आराच्चित् सन् भयतामस्य शत्रुर्न्यस्मै द्युम्ना जन्या नमन्ताम् ॥६॥

---

२ स्तोता, जैसे गायको दूहकर लोग अपना प्रयोजन सिद्ध करते हैं, वैसे ही मित्र-स्वरूप इन्द्रसे अपने प्रयोजनको सिद्ध करा लो। स्तुत्य इन्द्रको जगाओ। जैसे लोग धान्य-पूर्ण पात्रको नीचे करके उसका धान्य गिरा लेते हैं, वैसे ही वीर इन्द्रको; कामना-सिद्धिके लिये, अनुकूल कर लो।

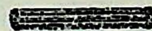
३ इन्द्र, तुम्हें लोग "भोज" (अभीष्ट-दाता) क्यों कहते हैं ? तुम दाता हो; इसीलिये यह नाम रखा गया है। मैंने सुना है कि, तुम लोगोंको तीक्ष्ण कर देते हो । मुझे तीक्ष्ण करो। इन्द्र, मेरी बुद्धि कर्ममें निपुण हो। मेरा ऐसा शुभ अदृष्ट करो कि, धन उपार्जित किया जा सके।

४ इन्द्र, जिस समय लोग युद्धमें जाते हैं, उस समय तुम्हारा नाम लेते हैं। इन्द्र यजमानके सहायक होते हैं। जो इन्द्रके लिये सोम नहीं प्रस्तुत करता, उसके साथ इन्द्र मैत्री नहीं करना चाहते।

५ जो अन्नशाली व्यक्ति इन्द्रके लिये प्रथम सोमरस प्रस्तुत करता है और गौ, अश्व आदि देनेवाले धनाढ्यके सदृश इन्द्रको उदारताके साथ सोमरस देता है, उसके सहायक इन्द्र होते हैं। उसके बलिष्ठ तथा अनेक सेनाओंवाले शत्रुओंके रहनेपर भी इन्द्र शत्रुओंको शीघ्राति-शीघ्र दूर कर देते हैं। इन्द्र वृत्रका वध करते हैं।

६ हमने जिन इन्द्रकी स्तुति की है, वह धनी हैं और उन्होंने हमारी कामनाओंको पूर्ण किया है। इन्द्रके पाससे शत्रु दूर भागें। शत्रु-देशकी सम्पत्ति इन्द्रके हाथोंमें आवे।

आराच्छत्रुमप बाधस्व दूरमुग्रो यः शम्बः पुरुहूत तेन ।
अस्मे धेहि यवमद्गोमदिन्द्र कृधी धियं जरित्रे वाजरत्नाम् ॥७॥
प्र यमन्तर्वृषसवासो अग्मन्तीव्राः सोमा बहुलान्तास इन्द्रम् ।
नाह दामानं मघवा नियंसन्नि सुन्वते वहति भूरि वामम् ॥८॥
उत प्रहामतिदीव्या जयाति कृतं यच्छ्वघ्नी विचिनोति काले ।
यो देवकामो न धना रुणद्धि समित्तं राया सृजति स्वधावान् ॥९॥
गोभिष्टरेमामतिं दुरेवां यवेन क्षुधं पुरुहूत विश्वाम् ।
वयं राजभिः प्रथमा धनान्यस्माकेन वृजनेना जयेम ॥१०॥
बृहस्पतिर्नः परिपातु पश्चादुतोत्तरस्मादधरादघायोः ।
इन्द्रः पुरस्तादुत मध्यतो नः सखा सखिभ्यो वरिवः कृणोतु ॥११॥



७ इन्द्र, असङ्ख्य मनुष्य तुम्हें बुलाते हैं। तुम्हारा जो भयानक वज्र है, उससे समीपके शत्रुको दूर कर दो। इन्द्र, मुझे जौ और गायसे युक्त सम्पत्ति दो। अपने स्तोताकी स्तुतिको अन्न-रत्न-प्रसविनी करो।

८ प्रखर सोमरस, अनेक धाराओंमें, मधुर रससे बरसते हुए जिस समय इन्द्रकी देहमें पैठता है, उस समय इन्द्र सोमरस-दाताका कभी वारण नहीं करते, कभी नहीं कहते कि, और नहीं। अधिकन्तु सोमरसके प्रस्तुत-कर्ताको विशाल अभिलषित वस्तुएँ प्रदान करते हैं।

९ जैसे जुआड़ी जिससे हारा हुआ है, उसीको जुएके अड्डेपर खोजकर हरा देता है, वैसे ही अनिष्ट-कर्त्ताको इन्द्र परास्त करते हैं। जो देवभक्त देवपूजामें धन-व्यय करनेमें कृपणता नहीं करता, धनी इन्द्र उसे ही धनी करते हैं।

१० गायोंके द्वारा हम दुःख-दारिद्र्यके पार जायँ। अनेकोंके द्वारा आहूत इन्द्र, जौ (यव) के द्वारा हम क्षुधाकी निवृत्ति कर सकें। हम राजाओंके साथ साथ अग्रसर होकर, अपने बलके प्रभावसे, विशाल सम्पत्तिको जीत सकें।

११ पापी शत्रुके हाथसे बृहस्पति हमें पश्चिम, उत्तर और दक्षिण दिशाओंमें बचावें। पूर्व दिशा और मध्य भागमें इन्द्र हमारी रक्षा करें। इन्द्र हमारे मित्र हैं और हम इन्द्रके मित्र हैं, वह हमारी अभिलाषाको सिद्ध करें।

४ अनुवाक । ४३ सूक्त

ऋषि और देवता पूर्ववत्। जगती और त्रिष्टुप् छन्द।

अ छा म इन्द्रं मतयः स्वर्विदः सध्रीचीर्विश्वा उशतीरनूषत ।
परिष्वजन्ते जनयो यथा पतिं मर्यं न शुन्ध्युं मघवानमूतये ॥१॥
न घा त्वद्रिगप वेति मे मनस्त्वे इत् कामं पुरुहूत शिश्रय ।
राजेव दस्म निषदोऽधि बर्हिष्यस्मिन्त्सु सोमेऽवपानमस्तु ते ॥२॥
विषूवृदिन्द्रो अमतेरुत क्षुधः स इन्द्रायो मघवा वस्व ईशते ।
तस्येदिमे प्रवणे सप्त सिन्धवो वयो वर्धन्ति वृषभस्य शुष्मिणः ॥३॥
वयो न वृक्षं सुपलाशमासदन्त्सोमास इन्द्रं मन्दिनश्चमूषदः ।
प्रैषामनीकं शवसा दविद्युतद्विदुवत् स्वर्मनवे ज्योतिरार्यम् ॥४॥
कृतं न श्वघ्नी विचिनोति देवने संवर्गं यन्मघवा सूर्यं जयत् ।
न तत्ते अन्यो अनु वीर्यं शकन्न पुराणो मघवन्नोत नूतनः ॥५॥

---

१ मेरी स्तुतियोंने, मिलकर, उद्देश-पूर्वक इन्द्रका गुण-गान किया है । स्तुतियाँ सब प्रकारके लाभ करा सकती हैं। जैसे स्त्रियाँ अपने स्वामीका आलिङ्गन करती हैं, वैसे ही स्तुतियाँ उन शुद्ध-स्वभाव इन्द्रका आश्रय पानेके लिये उनका आलिङ्गन करती हैं।

२ इन्द्र, तुम्हें छोड़कर मेरा मन अन्यत्र नहीं जाता। तुम्हारे ही ऊपर मैंने अपनी अभिलाषा स्थापित रखी है। जैसे राजा अपने भवनमें बैठता है, वैसे ही तुम लोग कुशोंके ऊपर बैठो। इस सुन्दर सोमसे तुम्हारा पान-कार्य सम्पन्न हो।

३ दुर्गति और अन्नाभावसे बचानेके लिये इन्द्र हमारी चारो ओर रहें। धनदाता इन्द्र सारी सम्पत्तियों और धनोंके अधिपति हैं। मनोरथ-वर्षक और तेजस्वी इन्द्रके आदेशसे हो गङ्गा आदि सात नदियाँ नीचेकी ओर बहकर कृषिकी वृद्धि करती हैं।

४ जैसे सुन्दर पत्रोंके वृक्षका आश्रय चिड़ियाँ करती हैं, वैसे ही आनन्द-वर्षक और पात्रस्थित सोम इन्द्रका आश्रय करते हैं। सोमरसके तेजके द्वारा इन्द्रका मुख उज्ज्वल हो उठा। इन्द्र मनुष्योंको उत्कृष्ट ज्योति दें।

५ जुएके अड्डेपर जैसे जुआड़ी अपने विजेताको खोजकर परास्त करता है, वैसे ही इन्द्र वृष्टि-रोधक सूर्यको परास्त करते हैं। इन्द्र, धनाधिपति, कोई भी प्राचीन वा नवीन तुम्हारे वीरत्वके अनुसार कार्य नहीं कर सकता।

विशंविशं मघवा पर्यशायत जनानां धेना अवचाकशद्वृषा ।
यस्याह शक्रः सवनेषु रण्यति स तीव्रैः सोमैः सहते पृतन्यतः ॥६॥
आपो न सिन्धुमभि यत् समक्षरन्त्सोमास इन्द्रं कुल्याइव ह्रदम् ।
वर्धन्ति विप्रा महो अस्य सादने यवं न वृष्टिर्दिव्येन दानुना ॥७॥
वृषा न क्रुद्धः पतयद्रजःस्वा यो अर्यपत्नीरकृणोदिमा अपः ।
स सुन्वते मघवा जीरदानवेऽविन्दज्ज्योतिर्मनवे हविष्मते ॥८॥
उज्जायतां परशुर्ज्योतिषा सह भूया ऋतस्य सुदुघा पुराणवत् ।
विरोचतामरुषो भानुना शुचिः स्वर्ण शुक्रं शुशुचीत सत्पतिः ॥९॥
गोभिष्टरेमामतिं दुरेवां यवेन क्षुधं पुरुहूत विश्वाम् ।
वयं राजभिः प्रथमा धनान्यस्माकेन वृजनेना जयेम ॥१०॥

---

६ धनद इन्द्र प्रत्येक मनुष्यमें रहते हैं । अभीष्टकारी इन्द्र सबके स्तोत्रकी तरफ ध्यान देते हैं। जिसके सोम-यज्ञमें इन्द्र प्रीति प्राप्त करते हैं, वह प्रखर सोमरसके द्वारा युद्धेच्छु शत्रुओंको परास्त करता है ।

७ जसे जल नदीकी ओर जाता है और जैसे छोटा-छोटा जल-प्रवाह तड़ागमें जाता है, वैसे ही सोमरस इन्द्रमें जाता है। यज्ञ-स्थलमें पण्डित लोग उसके तेजको वैसे ही बढ़ा देते हैं, जैसे स्वर्गीय जल-पातके साथ वृष्टि जौकी खेतीको बढ़ाती है ।

८ जैसे एक वृष, क्रुद्ध होकर, दूसरेकी ओर दौड़ता है, वैसे ही इन्द्र, मेघके प्रति धावित होकर अपने आश्रित जलको बाहर करते हैं। जो व्यक्ति सोम-यज्ञ करता है, उदारताके साथ दान करता है और हविका संग्रह करता है, उसे धनी इन्द्र ज्योति देते हैं ।

९ इन्द्रका वज्र तेजके साथ उदित हो। पूर्व कालके समान ही इस समय भी यज्ञकी कथा हो। स्वयं उज्ज्वल होकर इन्द्र, प्राञ्जल आलोकको धारण करके, शोभा-सम्पन्न हों। साधु पुरुषोंके पालक इन्द्र, सूर्यके समान, शुभ्रवर्ण दीप्तिसे प्रदीप्त हों।

१० गायोंके द्वारा हम दुःख-दारिद्र्यके पार जायं। अनेकोंके द्वारा आहूत इन्द्र, जौके द्वारा हम क्षुधाकी निवृत्ति कर सकें। हम राजाओंके साथ अग्रसर होकर, अपने बलके प्रभावसे, विशाल सम्पत्तिको जीत सकें।

बृहस्पतिर्नः परिपातु पश्चादुतोत्तरस्मादधरादघायोः ।
इन्द्रः पुरस्तादुत मध्यतो नः सखा सखिभ्यो वरिवः कृणोतु ॥११॥

४४ सूक्त

इन्द्र देवता। आङ्गिरस कृष्ण ऋषि। त्रिष्टुप् और जगती छन्द।

आयात्विन्द्रः स्वपतिर्मदाय यो धर्मणा तूतुजानस्तुविष्मान् ।
प्रत्वक्षाणो अति विश्वा सहांस्यपारेण महता वृष्ण्येन ॥१॥
सुष्ठामा रथः सुयमा हरी ते मिम्यक्ष वज्रो नृपते गभस्तौ ॥
शीभं राजन्सुपथायाह्यर्वाङ्वर्धाम ते पपुषो वृष्ण्यानि ॥२॥
एन्द्रवाहो नृपतिं वज्रबाहुमुग्रमुग्रासस्तविषास एनम् ।
प्रत्वक्षसं वृषभं सत्यशुष्ममेमस्मत्रा सधमादो वहन्तु ॥३॥

---

११ पापी शत्रुके हाथसे बृहस्पति हमें पश्चिम, उत्तर और दक्षिण दिशाओंमें बचावें। पूर्व दिशा और मध्य भागमें इन्द्र हमारी रक्षा करें। इन्द्र हमारे मित्र हैं और हम इन्द्रके मित्र हैं। वह हमारी अभिलाषाको सिद्ध करें।



१ जो इन्द्र देखनेमें स्थूलकाय हैं और जो अपने विपुल तथा दुर्द्धर्ष बलके द्वारा सारे बलशाली पदार्थोंको बल-हीन कर डालते हैं, वही धनी इन्द्र रथपर चढ़कर आमोद करनेके लिये आवें।

२ नरपति इन्द्र, तुम्हारा रथ सुघटित है, तुम्हारे रथके दोनों घोड़े सुशिक्षित हैं और तुम्हारे हाथमें वज्र है। प्रभु इन्द्र, ऐसी मूर्त्तिको धारण करके, सरल मार्गसे, नीचे आओ। तुम्हारे पानके लिये सोमरस प्रस्तुत है। उसे पिलाकर हम तुम्हारा बल और भी बढ़ा देंगे।

३ जो इन्द्र नेताओंके नेता हैं, जिनके हाथमें वज्र है, जो शत्रुओंको दुर्बल कर देते हैं, जो दुर्द्धर्ष हैं और जिनका क्रोध कभी वृथा नहीं जाता, उन्हें, उनके वाहक बली घोड़े मिलकर, हमारे पास ले आवें।

एवा पतिं द्रोणसाचं सचेतसमूर्जःस्कम्भं धरुण आवृषायसे ।
ओजः कृष्व सङ्गृभाय त्वे अप्यसो यथा केनिपानामिनो वृधे ॥४॥
गमन्नस्मे वसून्या हि शंसिषं स्वाशिषं भरमायाहि सोमिनः ।
त्वमीशिषे सास्मिन्नासत्सि बर्हिष्यनाधृष्या तव पात्राणि धर्मणा ॥५॥
पृथक् प्रायन् प्रथमा देवहूतयोऽकृण्वत श्रवस्यानि दुष्टरा ।
न ये शेकुर्यज्ञियां नावमारुहमीर्मैव ते न्यविशन्त केपयः ॥६॥
एवैवापागपरे सन्तु दूढ्योऽश्वा येषां दुर्युज आयुयुज्रे ।
इत्था ये प्रागुपरे सन्ति दावने पुरूणि यत्र वयुनानि भोजना ॥७॥
गिरीँरज्रान् रेजमानाँ अधारयद्द्यौः क्रन्ददन्तरिक्षाणि कोपयत् ।
समीचीने धिषणे विष्कभायति वृष्णः पीत्वा मद उक्थानि शंसति ॥८॥

४ इन्द्र, जो सोमरस शरीरको पुष्ट करता है, जो कलसमें मिल जाता है और जो बलको संचारित करता है, उस सोमका सिञ्चन अपने उदरमें करो । मेरी बल-वृद्धि कर दो और हमें अपना आत्मीय बना लो; क्योंकि तुम बुद्धिमानोंके श्रीवृद्धि करनेवाले प्रभु हो ।

५ इन्द्र, मैं स्तोता हूं; इसलिये सारी सम्पत्ति मेरे पास आवे। उत्तमोत्तम कामनाएँ सिद्ध करनेके लिये मैंने सोमका संचय करके यज्ञका आयोजन किया है। आओ। तुम सबके अधिपति हो। कुशके ऊपर बैठो। तुम्हारे पानके लिये जो सोम-पात्र सज्जित हुए हैं, किसीकी ऐसी शक्ति नहीं कि, वह उन्हें बल-पूर्वक लेकर पिये।

६ जो लोग प्राचीन समयसे ही यज्ञमें देवोंको निमन्त्रण देते थे, उन्होंने बड़े-बड़े कार्योंका सम्पादन करके स्वयं सद्गति प्राप्त की है। परन्तु जो यज्ञरूप नौकापर नहीं चढ़ सके, वे कुकर्मी हैं, ऋणी हैं और नीच अवस्थामें ही दब गये हैं ।

७ इस समयमें भी जो वैसे दुर्बुद्धि हैं, वे भी अधोगामी हों। उनकी कैसी दुर्गति होगी—इसका ठीक नहीं। जो लोग पहलेसे ही यज्ञादिके अवसरपर दान करते हैं, वे ऐसे स्थानपर जाते हैं, जहाँ अतीव चमत्कारिणी भोग-सामग्री प्रस्तुत है।

८ जिस समय इन्द्र सोमपान करके मत्त होते हैं, उस समय वह सर्वत्र-संचारी और काँपते हुए मेघोंको सुस्थिर करते हैं, आकाशको आन्दोलित कर डालते हैं और वह घहराने लगता है। जो द्यावापृथिवी परस्पर संयुक्त हैं, उन्हें इन्द्र उसी अवस्थामें रखते हैं और उत्तम वचन कहते हैं ।

इमं बिभर्मि सुकृतं ते अङ्कुशं येनारुजासि मघवञ्छफारुजः ।
अस्मिन्त्सु ते सवने अस्त्वोक्यं सुत इष्टौ मघवन्बोध्याभगः ॥९॥
गोभिष्टरेमामतिं दुरेवां यवेन क्षुधं पुरुहूत विश्वाम् ।
वयं राजभिः प्रथमा धनान्यस्माकेन वृजनेना जयेम ॥१०॥
बृहस्पतिर्नः परिपातु पश्चादुतोत्तरस्मादधरादघायोः ।
इन्द्रः पुरस्तादुत मध्यतो नः सखा सखिभ्यो वरिवः कृणोतु ॥११॥

४५ सूक्त

अग्नि देवता। भालन्दन वत्सप्रि ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

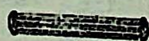
दिवस्परि प्रथमं जज्ञे अग्निरस्मद्द्वितीयं परि जातवेदाः ।
तृतीयमप्सु नृमणा अजस्रमिन्धान एनं जरते स्वाधीः ॥१॥

---

९ धनशाली इन्द्र, तुम्हारे लिये मैं यह एक सुसंघटित अंकुश हाथमें रखता हूं। इस अंकुश-रूप स्तोत्रसे हाथियोंको, दण्ड देते हुए, तुम वशमें करते हो। इस सोम-यज्ञमें आकर अपना स्थान ग्रहण करो। हमें इस यज्ञमें सौभाग्यशाली करो।

१० गायोंके द्वारा हम दुःख-दारिद्र्यके पार जायँ। अनेकोंके द्वारा आहूत इन्द्र, जौके द्वारा हम क्षुधा-निवृत्ति कर सकें। हम राजाओंके साथ अग्रसर होकर, अपने बलके प्रभावसे, विशाल सम्पत्तिको जीत सकें।

११ पापी शत्रुके हाथमें हमें बृहस्पति पश्चिम, उत्तर और दक्षिण दिशाओंमें बचावें। पूर्व दिशा और मध्य भागमें इन्द्र हमारी रक्षा करें। इन्द्र हमारे मित्र हैं और हम उनके मित्र हैं। वह हमारी अभिलाषाको सिद्ध करें।



१ अग्निने प्रथम आकाशमें विद्युद्रूपसे जन्म ग्रहण किया। उनका द्वितीय जन्म "जातवेदा" (ज्ञानी) नामसे हमलोगोंके बीच हुआ है। उनका तीसरा जन्म जलके बीचमें हुआ है। मनुष्य-हितैषी अग्नि निरन्तर प्रज्वलित हैं। जो उत्तम ध्यान करना जानते हैं, वह उनकी स्तुति करते हैं।

विद्मा ते अग्ने त्रेधा त्रयाणि विद्म ते धाम विभृता पुरुत्रा ।
विद्मा ते नाम परमं गुहा यद्विद्मा तमुत्सं यत आजगन्थ ॥२॥
समुद्रे त्वा नृमणा अप्स्वन्तर्नृचक्षा ईधे दिवो अग्न ऊधन् ॥
तृतीये त्वा रजसि तस्थिवांसमपामुपस्थे महिषा अवर्धन् ॥३॥
अक्रन्ददग्निः स्तनयन्निव द्यौः क्षामा रेरिहद्वीरुधः समञ्जन् ॥
सद्यो जज्ञानो वि हीमिद्धो अख्यदा रोदसी भानुना भात्यन्तः ॥४॥
श्रीणामुदारो धरुणो रयीणां मनीषाणां प्रार्पणः सोमगोपाः ।
वसुः सूनुः सहसो अप्सु राजा विभात्यग्र उषसामिधानः ॥५॥
विश्वस्य केतुर्भुवनस्य गर्भ आ रोदसी अपृणाज्जायमानः ॥
वीळुं चिदद्रिमभिनत् परायञ्जना यदग्निमयजन्त पञ्च ॥६॥

---

२ अग्नि, हम तुम्हारी तीन प्रकारकी तीन मूर्त्तियोंको जानते हैं। अनेक स्थलोंमें तुम्हारा जो स्थान है, उसे भी जानते हैं। तुम्हारे निगूढ़ नामको भी हम जानते हैं। जिस उत्पत्ति-स्थानसे तुम आये हो, उसे भी हम जानते हैं।

३ नर-हितैषी वरुणदेवने तुम्हें समुद्रके बीचमें, जलके भीतर, जला रखा है। आकाशके स्तनस्वरूप जो सूर्य हैं, उसके बीचमें भी तुम प्रज्वलित हो। तुम अपने तीसरे स्थान मेघलोकमें, वृष्टिजलमें, रहते हो। प्रधान प्रधान देवता तुम्हारा तेज बढ़ाते हैं।

४ अग्निका घोरतर शब्द हुआ—मानो आकाशमें वज्रपात हो रहा है। अग्नि पृथिवीको चाटते हैं, लता आदिका आलिङ्गन करते हैं। यद्यपि अग्नि अभी जनमें हैं, तो भी विशेष रूपसे प्रज्वलित और विस्तृत हुए हैं। द्यावापृथिवीमें किरण-विस्तार करनेसे अग्निकी शोभा हुई है।

५ प्रभातके प्रथम भागमें अग्नि प्रज्वलित होते हैं, तो उनकी कैसी शोभा होती है! वह कितनी शोभा प्रकट करते हैं! अग्नि अशेष सम्पत्तियोंके आधार-स्वरूप हैं। वह स्तोत्र-वचनोंकी स्फूर्त्ति कर देते हैं, सोमरसकी रक्षा करते हैं। अग्नि धन-स्वरूप हैं, वह बलके पुत्र हैं, वह जलके बीचमें रहते हैं।

६ वह समस्त पदार्थोंको प्रकाशित करते हैं। वह जलके भीतर जन्म ग्रहण करते हैं। जन्म लेते ही उन्होंने द्यावापृथिवीको परिपूर्ण किया। जिस समय पाँच वर्णोंने मनुष्योंके अग्निके लिये यज्ञ किया, उस समय वह सुघटित मेघकी ओर जाकर और मेघको फाड़कर जल ले आये।

उशिक् पावको अरतिः सुमेधा मर्तेष्वग्निरमृतो निधायि ॥
इयर्ति धूममरुषं भरिभ्रदुच्छुक्रेण शोचिषा द्यामिनक्षन् ॥७॥
दृशानो रुक्म उर्विया व्यद्यौद्दुर्मर्षमायुः श्रिये रुचानः ।
अग्निरमृतो अभवद्वयोभिर्यदेनं द्यौर्जनयत् सुरेताः ॥८॥
यस्ते अद्य कृणवद्भद्रशोचेऽपूपं देव घृतवन्तमग्ने ।
प्र तं नय प्रतरं वस्यो अच्छाभि सुम्नं देवभक्तं यविष्ठ ॥९॥
आ तं भज सौश्रवसेष्वग्न उक्थउक्थ आ भज शस्यमाने ।
प्रियः सूर्ये प्रियो अग्ना भवात्युज्जातेन भिनददुज्जनित्वैः ॥१०॥
त्वामग्ने यजमाना अनु द्यून्विश्वा वसु दधिरे वार्याणि ।
त्वया सह द्रविणमिच्छमाना व्रजं गोमन्तमुशिजो वि वव्रुः ॥११॥

---

७ अग्नि हवि चाहते हैं। वह सबको पवित्र करते हैं। वह चारो ओर जाते हैं। वनमें उत्कृष्टता है। वह स्वयं अमर हैं; परन्तु मारनेवाले मनुष्योंमें रहते हैं। रुचिकर रूप धारण करके वह गति-विधि करते हैं और शुक्लवर्ण आलोकके द्वारा आकाशको परिपूर्ण करते हैं।

८ अग्नि देखनेमें ज्योतिर्मय हैं। उनकी दीप्ति महान् हैं। वह दुर्द्धर्ष दीप्तिके साथ जाते-जाते शोभा-सम्पन्न होते हैं। अग्नि वनस्पति-स्वरूप अन्न पाकर अमर हुए। दिव्यलोकने अग्निका जन्म दिया है। दिव्यलोक (द्यौ) की जन्मदानशक्ति कैसी सुन्दर है!

९ मङ्गलमयी ज्वालावाले अभिनव अग्नि, जिस व्यक्तिने आज तुम्हारे लिये घृत-युक्त पिष्टक (पुरोडाश) प्रस्तुत किया है, उस उत्कृष्ट व्यक्तिको तुम उत्तम-उत्तम धनकी ओर ले जाओ, उस देवभक्तको सुख-स्वाच्छन्द्यकी ओर ले जाओ।

१० जिसी समय उत्तमोत्तम अन्नके साथ क्रिया-कलाप अनुष्ठित होता है, उसी समय तुम यजमानके अनुकूल होओ। वह सूर्यके पास प्रिय हो, अग्निके पास प्रिय हो। उसके जो पुत्र हैं वा जो होगा, उसके साथ वह शत्रु-संहार करे।

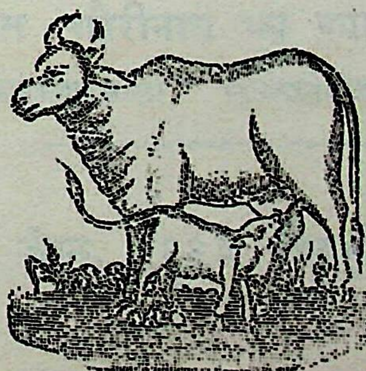
११ अग्नि, प्रतिदिन यजमान लोग तुम्हारे लिये उत्तमोत्तम नाना वस्तुएं पूजामें देते हैं। विद्वान् देवोंने, तुम्हारे साथ एकत्र होकर, धन-कामनाओंको पूर्ण करनेके लिये, गायोंसे भरे गोष्ठ-द्वारका उद्घाटन किया था।

अस्ताव्यग्निर्नरां सुशेवो वैश्वानर ऋषिभिः सोमगोपाः ॥
अद्वेषे द्यावापृथिवी हुवेम देवा धत्त रयिमस्मे सुवीरम् ॥१२॥

१२ मनुष्योंमें जिनकी सुन्दर मूर्त्ति है और जो सोमकी रक्षा करते हैं, ऋषियोंने उन्हीं अग्निकी स्तुति की। द्वेष-शून्य द्यावापृथिवीको हम बुलाते हैं। देवो, हमें लोकबल और धनबल दो।

अष्टम अध्याय समाप्त

सप्तम अष्टक समाप्त



ऋग्वेद-संहिता

[सरल-हिन्दी-टीका-सहित]

अष्टम अर्थात् अन्तिम अष्टक



टीकाकार

पण्डित रामगोविन्द त्रिवेदी वेदान्तशास्त्री

("दर्शन-परिचय," "हिन्दी-विष्णुपुराण," "हिन्दीपुस्तक-कोष," "राजर्षि प्रह्लाद," "भक्त ध्रुव," "महासती मदालसा," "रत्नावली" आदिके लेखक, "आर्यमहिला" (बनारस), "विश्वदूत" (रंगून), "सेनापति" (कलकत्ता), "गङ्गा" (सुलतानगंज) आदिके भूतपूर्व सम्पादक, "गीता-प्रचारक महामण्डल" (मोरिशस) के जन्मदाता, "दक्षिण अफ्रीकन सनातनधर्ममहामण्डल" (डरबन, नेटाल) के आजीवन सभापति तथा भारतधर्ममहामण्डल (बनारस) के महोपदेशक)

—*और*—

पण्डित गौरीनाथ झा व्याकरणतीर्थ

(प्राइवेट सेक्रेटरी, बनैलीराज्याधिपति साहित्य-विभूषण कुमार कृष्णानन्द सिंह बहादुर तथा "वैदिक-पुस्तकमाला" के अन्यतम जन्मदाता एवम् अध्यक्ष)



प्रकाशक

पण्डित गौरीनाथ झा व्याकरणतीर्थ

सञ्चालक, "वैदिकपुस्तकमाला," सुलतानगंज (ई० आई० आर०)

मूल्य २) रु० | जेष्ठ, १९९३ विक्रमीय | प्रथम संस्करण २०००

मिथिला प्रेस,
खलीफाबाग, भागलपुरमें मुद्रित

"वैदिक-पुस्तकमाला"की नियमावली

(१) इस "माला"में हिन्दी-अनुवाद-सहित चारो वेद और विशेषतः वैदिक-ग्रन्थ-पुष्प ही गूँथे जायँगे।

(२) ।।) भेजकर "माला"के स्थायी ग्राहक बननेवालोंको किसी भी पुस्तक-पर डाक खर्च नहीं देना पड़ेगा।

(३) स्थायी ग्राहकोंको "माला"में प्रकाशित सभी पुस्तकोंको खरीदना होगा।

(४) "माला" में प्रकाशित पुस्तकें वी० पी० से भेजी जायँगी।

संचालक, "वैदिक-पुस्तकमाला," सुलतानगंज (ई० आई० आर०)

निवेदन

करोड़ों हिन्दुओंका विश्वास है कि, ईश्वरकी ही तरह वेद नित्य हैं शाश्वत हैं, अपौरुषेय हैं और ऋषियोंने समाधि-दशामें, अपने विशुद्धान्तःकरणमें, वेदोंको उसी रूपमें प्राप्त किया था, जिस रूपमें—छन्द, वाक्य, शब्द और अक्षरके रूपमें—वे इन दिनों पाये जाते हैं। अनन्त हिन्दुओंकी धारणा है कि, वेद ईश्वर-कृत हैं और ईश्वरके श्वास-प्रश्वासके समान वे सदा ईश्वरके साथ रहनेवाले हैं। बहुतोंकी दृढ़ आस्था है कि, "वेदोऽखिलो धर्म-मूलम्"—सारा वेद धर्मकी जड़ है, प्राथमिक कारण है। अनेक विदेशी और कुछ देशी पुरातत्त्वज्ञ विद्वानोंकी सम्मति है कि, मृत्फलक-लिपिमें लिखी असीरियाकी एक अधूरी पुस्तकको छोड़कर संसारकी सबसे प्राचीन पुस्तक वेद (विशेषतः ऋग्वेद) हैं और आर्यजातिका इतिहास, समाज-व्यवस्था, राष्ट्रधर्म, वीरता, सदाचार, देश-सेवा, कला, त्याग, सत्य आदि जाननेके लिये वेद ही साधन हैं।

इस प्रकार चाहे जिस दृष्टिसे देखिये, वेदोंका गौरव गेय है, स्तुत्य है और उनका प्रचार करना उतना ही आवश्यक है, जितना अक्षरसे परिचय करना। परन्तु दुःख और आश्चर्य है कि, व्यर्थ रूढ़ियों और निःसार कामोंमें पानीकी तरह करोड़ों रुपये बहानेवाली हिन्दूजाति अपने प्राणप्रिय और पूजनीय वेदोंकी ओरसे एकदम उदासीन है—दर्शनों और धर्मशास्त्रके बड़े-बड़े आचार्यतक वेदाध्ययनसे कोसों दूर भागते हैं! और तो और, जिस हिन्दीको भारतकी जातीय महासभा—इंडियन नेशनल कांग्रेस—राष्ट्रभाषा स्वीकार कर चुकी है और जिसमें आजकल प्रतिदिन दर्जनों ऊल-जुलूल ग्रन्थतक निकला करते हैं, उसमें भी वाच्यार्थका अनुधावन करनेवाला सम्पूर्ण ऋग्वेदका आजतक अनुवाद नहीं हो सका है!!! क्या हिन्दूजातिके रसातल पहुँच जानेका यह सबसे बड़ा उदाहरण नहीं है? क्या हिन्दू-हृदयकी भाव-भूमि एकान्त ऊसर नहीं हो गयी है? जिन वेदोंकी रक्षाके लिये ऋषि-मुनियों, कुमारिल, शङ्कर और दयानन्द आदिने संसारके समस्त ऐश्वर्योंको ठुकरा दिया था और अज्ञेय कालसे कण्ठस्थ कर वेदोंको सुरक्षित रखनेमें असङ्ख्य ब्राह्मणोंने अपने प्राणोंकी आहुति दे डाली थी, उनकी इतनी उपेक्षा करना हमारे पतनका घृणित और प्रताड़ित रूप नहीं है? धिग्जीवनम्!!

हम शतशः साधुवाद देते हैं और अनन्त कालतक समस्त हिन्दूजाति भी कोटिशः धन्यवाद देगी उन बनैलीराज्याधिपति साहित्यविभूषण कुमार कृष्णानन्द सिंह बहादुरको, जिनकी प्रसिद्ध दान-परायणता, धर्म-भक्ति और साहित्य-प्रेमके कारण वर्त्तमान "वैदिक-पुस्तकमाला" स्थापित

हुई, "गङ्गा"का विश्व-विख्यात "वेदाङ्क" निकला और राष्ट्रभाषामें सम्पूर्ण ऋग्वेदका अनुवाद हो गया। यही नहीं, कुमार बहादुरकी और हमारी यह भी प्रबल अभिलाषा है कि, उक्त "पुस्तक-माला"के द्वारा निखिल वैदिक साहित्यका हिन्दी-अनुवाद कर दिया जाय और इसके कई विभाग खोलकर संस्कृत-साहित्यके सभी अमूल्य ग्रन्थोंका सरस सरल हिन्दी-अनुवाद भी प्रकाशित कर दिया जाय। इस सदिच्छाके अनुसार वेदान्त, भक्ति आदिपर कई ग्रन्थ लिखे जा चुके हैं, जो "वैदिक-पुस्तमाला"के स्थायी ग्राहकोंकी सेवामें शीघ्र ही पहुंचेंगे। कुमार बहादुरको और हमारे पाठकोंको मालूम है कि, ऋग्वेदका संस्कृत-अनुवाद कमसे कम १५०) रु० में मिलता है और हिन्दीमें एक अधूरा आर्य-सामाजिक ऋग्वेदानुवाद ४८) रु० में पाया जाता है। परन्तु देशकी दरिद्र जनताके ऊपर ध्यान रखकर कुमार बहादुर और हमारी कामनाके अनुकूल वर्त्तमान सम्पूर्ण "सटीक ऋग्वेद-संहिता"का मूल्य केवल लागत भर १६) रु० ही रखा गया है। पुस्तक-माला"के और इसके अन्यान्य विभागोंके ग्रन्थोंका मूल्य भी लागत भर ही रखा जायगा—ऐसा ही कुमार बहादुर और हमने सदाके लिये निश्चय कर डाला है।

कई वेद-भक्तोंकी राय है कि, "अनेक जन्म-जन्मान्तरोंतक घोर तपस्या किये विना और इस जीवनमें निर्विकल्प समाधिके द्वारा जीवन्मुक्ति प्राप्त किये विना कोई वेदोंका न तो अर्थ समझ सकता है और न अनुवाद ही कर सकता है।" हम स्वीकार करते हैं कि, हममें ये गुण नहीं हैं और न हम इस मतके पोषक ही हैं। हम इस बातको अवश्य मानते हैं कि, नैरुक्त, नैदान, ऐतिहासिक, ब्रह्मवादी, याज्ञिक, परिव्राजक, नास्तिक, स्वरमुक्तिवादी आदि कितने ही ऐसे सम्प्रदाय हैं, जो वेदार्थके सम्बन्धमें विभिन्न मत रखते हैं। औपमन्यु, कौत्स, यास्क, स्कन्द स्वामी, भरत स्वामी, रावण, भट्टभास्कर, वेङ्कट माधव, सायण, महीधर, उव्वट, सत्यव्रत, दयानन्द, तिलक, पावगी, ए० सी० दास०, राथ, ग्रिफिथ, मैक्समूलर, लुड्विग, लांगलोआ, रेले दाराशिकोह आदि आदि वेद-समीक्षकों और वेद-टीकाकारोंकी अर्थ-सम्बन्धिनी अनेकानेक सम्मतियां हैं—हम यह भी जानते हैं। परन्तु साधारण दृष्टिसे विचार किया जाय, तो इन तीन मतवादोंमें ही ये सारे सम्प्रदाय और विद्वान् चले आते हैं—आध्यात्मिक, आधिदैविक और आधिभौतिक। हमारी क्षुद्र बुद्धिके अनुसार ये तीनों ही मत वेदोंमें यथास्थान हैं। इनमेंसे एकको ही लेकर सारे मन्त्रोंकी खींचतान करके एकसा ही अर्थ निकालना केवल साम्प्रदायिक मनोवृत्तिका परिचायक है—निरपेक्षता, उदारता और दृष्टिव्यापकताका नहीं। हमारी समझसे वेदोंके प्रकृत अर्थको जाननेके साधन ऐतरेय, तैत्तिरीय, शतपथ, गोपथ आदि ब्राह्मणग्रन्थ, निरुक्त, प्रातिशाख्य, बृहद्देवता, सर्वानुक्रमणी, कल्पसूत्र, पाणिनीय व्याकरण, जैमिनीय मीमांसा आदि संस्कृत-ग्रन्थ और स्कन्द स्वामी, उद्गीथ, वेङ्कट माधव, सायण, महीधर उव्वट आदिके प्राचीन भाष्य ही हैं—ग्रीक, लैटिन आदिका कोरा अभ्यास और केवल अध्यात्मवादकी काल्पनिक उड़ान नहीं। हमने संस्कृत-साहित्यके

उक्त ग्रन्थों और भाष्योंकी समीक्षासे ही अपना वर्त्तमान हिन्दी-अनुवाद पूरा किया है और निर्वचन, निरीक्षण, प्रयोग, व्यवहार आदिसे समर्थित मन्त्रगत वाक्यों, शब्दों तथा अक्षरोंका हिन्दी-अर्थ लिखा है। इसमें सन्देह नहीं कि, आर्यजातिकी धार्मिक, सामाजिक और ऐतिहासिक मर्यादाका सायणने पूरा-पूरा अनुगमन करके और वेदार्थ-प्रकाशक ग्रन्थों तथा वेद-भाष्योंके द्वारा अनुमोदन प्राप्त करके ही अपना अधिकांश भाष्य लिखा है। इसीलिये अधिकांश स्थलोंमें हमारा हिन्दी-अनुवाद भी सायण-भाष्यका ही अनुवाद है। परन्तु जहां सायणाचार्यने एक ही मन्त्र वा शब्दके अनेक अर्थ किये हैं अथवा जहाँ-कहीं उन्होंने वाच्यार्थके सिवा ध्वनितार्थको छोड़ दिया है, वहाँ हमने उक्त प्रामाणिक ग्रन्थों और भाष्योंकी आलोचना कर जैसा कुछ आध्यात्मिक, आधिदैविक वा अधिभौतिक अर्थ पाया है, उसे लिखा है। सायणाचार्यने भी यथास्थान ये तीनों अर्थ लिखे हैं; परन्तु कहीं-कहीं उन्होंने भी अवश्य ही खींचतान की है। हमारा मतलब इतना ही था कि, वैदिक शब्दोंका जो कुछ प्रकृत अर्थ है, वह राष्ट्रभाषामें लिख दिया जाय— और इतने संक्षेपमें लिख दिया जाय कि, भारतकी दरिद्र जनताके लिये पुस्तकका कमसे कम मूल्य रखा जा सके। इसीलिये, ग्रन्थकी आकार-वृद्धि और मूल्य-वृद्धिके डरसे, हमने मन्त्रोंके स्वर-चिह्न और पद-पाठ आदि भी नहीं दिये हैं। यदि हम चाहते, तो प्रत्येक मन्त्रके पद, क्रम, जटा, माला, शिखा, लेखा, ध्वज, दण्ड, रथ, घन आदि देकर, प्राचीन ग्रन्थों और भाष्योंके उद्धरण देकर, सारे मतवादों और निखिल आलोचना-प्रत्यालोचनाओंको देकर, प्रत्येक मन्त्रके अनेकानेक अर्थ कर सरलार्थ, भावार्थ विशदार्थ और तुलनात्मक आलोचनाएं देकर प्रथम अष्टकको ही महाभारतसे भी बड़ा रूप दे सकते थे, खुशीसे उसका मूल्य २००) रु० रख सकते थे और प्रथम अष्टकमें ही अपना सारा जीवन खपाकर शेष सात अष्टकोंको अछूते रख सकते थे! परन्तु जैसा कि, कहा गया है, हमारा उद्देश ऋग्वेदका संक्षिप्त और प्रकृत अर्थ करके जनताके लिये उसे सुलभ बना देना भर था। यथाशक्ति इसी उद्देशका हमने पालन किया और हमें सन्तोष है कि, देश और विदेशके प्रायः सभी बड़े-बड़े वेदज्ञों तथा पत्र-पत्रिकाओंने हमारे कार्यकी बड़ी प्रशंसा की। इन विद्वानों और पत्र-पत्रिकाओंको यहाँ एक बड़ी नाम-सूची देकर हम पाठकोंका समय लेना उचित नहीं समझते।

हाँ, यह अवश्य ही प्रकट सत्य है कि, हमारे संक्षिप्त अर्थसे ऋग्वेदके सम्बन्धके सारे सन्देहोंकी निवृत्ति नहीं हो सकती, यज्ञ-रहस्य, देवता-विज्ञान आदिका तत्त्व नहीं खुल जाता और वैदिक साहित्यकी सैकड़ो बातें धुंधले चित्रोंसे बाहर नहीं आ जातीं। इसीलिये हमने बहुत पहले ही "वेद रहस्य" नामका एक प्रकाण्ड ग्रन्थ लिखना निश्चित किया था। "सटीक ऋग्वेद संहिता" समाप्त हो गयी है; इसलिये 'वेद-रहस्य"का ही अब प्रकाशन किया जायगा। यह ग्रन्थ अनेक खण्डोंमें प्रकाशित किया जायगा। "वैदिक-पुस्तकमाला"के अगले 'पुष्प"में "सटीक ऋग्वेद-

संहिता"की समूची मन्त्र-सूची और 'वेद-रहस्य"का कुछ अंश रहेगा । इसके अनन्तर "वेद-रहस्य"के अगले खण्ड निकलेंगे । इस ग्रन्थमें वैदिक साहित्यकी अथसे इतितक सारी बातें आ जायंगी ।

यहाँ यह बात लिख देना भी हम आवश्यक समझते हैं कि, ऋग्वेद संहिताके सामने यजुर्वेद, सामवेद और अथर्वेद बहुत ही छोटे छोटे ग्रन्थ हैं । ऋग्वेदके सैकड़ों मन्त्र यजुर्वेदमें हैं। ऋग्वेदके नवम मण्डलके प्रायः सारे मन्त्रोंसे सामवेद भरा पड़ा है और दशम मण्डलके अधिकांश मन्त्र अथर्ववेदमें हैं। फलतः ऋग्वेदका भली भाँति अध्ययन कर लेनेपर अन्य तीनों वेदोंमें बहुत ही कम ज्ञातव्य बातें रह जाती हैं। इसके सिवा इन तीनों वेदोंका हिन्दी-अनुवाद भी कई स्थानोंसे निकल चुका है। इसीलिये हमने निश्चित किया है कि, "वेद-रहस्य"को प्रकाशित कर लेनेके अनन्तर इन तीनों वेदोंका अनुवाद निकाला जाय। निश्चय ही हमारे ग्रन्थमें अधिक अभिनवता रहेगी। यही रीति हमारे पाठकोंको भी रुचिकर होगी ।

"वेद-रहस्य"में जिन विषयोंकी विस्तृत आलोचना होगी, उनमेंसे कुछ निम्नलिखित होंगे—

१ वेदका स्वरूप
२ वेदके अष्टक, मण्डल, अनुवाक आदि
३ वेदके पद, क्रम, जटा आदि
४ वेदोक्त देवता, ऋषि, छन्द, विनियोग आदि
५ वेदकी शाखाएँ
६ वेदके कोष तथा व्याकरण आदि
७ वेद और निरुक्त
८ वेदकी नित्यता
९ वेदकी अनित्यता (आधुनिक दृष्टिसे)
१० वेद और इतिहास
११ वेद-काल-निर्णय
१२ वेदके प्राचीन भाष्यकार
१३ वेदमें आर्य-निवास
१४ वेद और अन्य शास्त्र
१५ वैदिक धर्म और अन्य धर्म
१६ वैदिक यज्ञ
१७ वैदिक देवता-वाद
१८ वैदिक सभ्यता
१९ वेद-कालीन राष्ट्र
२० वेदमें जातिविभाग
२१ वेद-कालीन युद्ध
२२ वैदिक हिन्दू-समाज
२३ वेद और ईश्वर
२४ वेद और सृष्टि
२५ वेद और बलि
२६ वेद और स्वर्ग-नरक
२७ वेद और विज्ञान
२८ वेद और गणित
२९ अप्राप्य वैदिक ग्रन्थ
३० मन्त्रोंमें क्रिया, वचन, लिङ्ग आदिका व्यत्यय
३१ वेद और अवस्ता, शुकिंग आदि
३२ वेद और विदेशी विद्वान
३३ विश्वकी भाषाओंमें वैदिक साहित्य
३४ वेद और विविध सम्प्रदाय
३५ जैनियों आदिके वेद
३६ वैदिक भूगोल
३७ वेद और समुद्रयात्रा
३८ वैदिक साहित्यकी विशालता आदि आदि

इस सूचीमें अभी कोई क्रम नहीं रखा गया है, हम केवल स्मृतिसे, नमूनेकी तरह, कुछ विषय लिख रहे हैं। अवश्य ही "वेद-रहस्य"के निकलनेमें बहुत श्रम और समय लगेगा। अपने पाठकोंको हम राय देते हैं कि, इस सूचीके अनेक विषयोंको जाननेके लिये तबतक हमारे द्वारा सम्पादित "गङ्गा"के विशेषाङ्क "वेदाङ्क" को ही वे मँगा देखें। उसका मूल्य २॥) रु० है।

अपनी अल्पज्ञता और अज्ञताके कारण इस ग्रन्थमें विद्यमान त्रुटियोंके लिये हम विद्वानोंसे बार-बार क्षमा-याचना करते हैं।

कृष्णगढ़,
ज्येष्ठ पूर्णिमा, १९९३ विक्रमीय

रामगोविन्द त्रिवेदी
गौरीनाथ झा

अष्टम (अन्तिम) अष्टककी कुछ जानने योग्य बातें

इन्द्रके द्वारा आथर्वण दध्यङ्का शिरश्छेद १०।४८।२
त्वष्टाके द्वारा निर्मित इन्द्रका लोहेका वज्र १०।४८।३
गुङ्गुओंके देशमें
इन्द्र द्वारा दिवोदासकी प्रतिष्ठा १०।४८।८
कुत्स ऋषिके वशमें
वेतसु देशका किया जाना १०।४९।४
इन्द्रके द्वारा निन्यानवे नगरों
और सात शत्रु-पुरियोंका विध्वंस १०।४९।८
अखिल-ब्रह्माण्ड-दर्शक इन्द्र १०।५०।४
३३३९ देवोंके द्वारा अग्निका पूजन १०।५२।६
चारो वर्णों और निषादका उल्लेख ✓ १०।५५।२
३३ देवोंका उल्लेख १०।५५।३
प्रजापति और उषाका संगमन १०।६१।५
सावर्णि मनुके भोजनके लिये
यदु और तुर्वका पशु-दान १०।६२।१०
राजा नहुषके पुत्र ययातिके यज्ञकी बात १०।६३।१
सरस्वती, सरयू
आदि इक्कीस नदियोंका उल्लेख १०।६४।९
अश्विद्वयके द्वारा भुज्युको विपत्तिसे
बचाना, वध्रिमतीको पिङ्गल-वर्ण पुत्र देना,
विमद ऋषिको सुन्दरी भार्या देना और विश्वक
ऋषिको विष्णाप्व नामका पुत्र देना १०।६५।१२
धानकी कोठीका उल्लेख १०।६८।३
सूपसे सत्तूका फटकना १०।७१।२
हल जोतना १०।७१।९ ✓
अदितिसे दक्ष और
दक्षसे अदितिकी उत्पत्ति १०।७२।४ ✓
सिन्धु, गङ्गा, यमुना, सरस्वती, पंजाबकी पाँच नदियों तथा सिन्धुकी पूर्वी और पश्चिमी नदियोंका मार्मिक विवरण १०।७५ सूक्त
चादर, मघा, पूर्वा फाल्गुनी
और उत्तरा फाल्गुनीका उल्लेख १०।८५।१३
बधूके वस्त्रसे पतिके
शरीरको ढकनेसे हानि १०।८५।३०
मलिन, दूषित, अग्राह्य
और फटे वस्त्रका उल्लेख १०।८५।३४—३५
नवोढ़ा बधूको सास, ससुर, ननद
और देवरकी स्वामिनी बननेका उपदेश १०।८५।४६
वराह और कुक्कुरका उल्लेख १०।८६.४
इन्द्रके द्वारा साँढ़ोंका भक्षण १०।८६।१४ ✓
इन्द्र और इन्द्राणीमें
संगमनकी बात-चीत १०।८६।१६—१७
मनु-पुत्री पर्शुका
बीस पुत्रोंको उत्पन्न करना १०।८६।२३
अग्निके लौह-दन्त १०।८७।२
उड़नेवाले पक्षियों और सर्पका उल्लेख १०।८८।४
"सर्वमेध" (जिसमें सबका
हवन किया जाता है) १०।८८।९ ✓



भारत-प्रसिद्ध गिद्धौर-राज्यके अधिपति

महाराजा चन्द्रमौलीश्वरप्रसाद सिंह बहादुर

समर्पण

जो वैदिक धर्मके अनन्य भक्त हैं, जिनका हिन्दी-साहित्य प्रेम भारत-प्रसिद्ध है, जो हिन्दू-जातिके अभ्युदयके लिये सदा चिन्तित रहते हैं, जो हिन्दू-संस्कृतिके उन्नयनके लिये पानीकी तरह रुपये बहाते रहते हैं, जिनकी दान-परायणतासे कितनी ही संस्थाएँ चल रही हैं, जो विद्वानों और ब्राह्मणोंके आश्रय-स्थल हैं, जो प्रजाकी भलाई करना ही अपना पवित्र राज-धर्म समझते हैं, जो अध्ययन और मननमें ही अपना अधिक समय व्यतीत करते हैं, जो शासन-निपुणता, सदाचारिता, दान परायणता, निरहंकारिता और धार्मिकताकी दिव्य मूर्ति हैं, उन

वीर-व्याघ्र, मृगया-प्रवीण, चन्देलक्षत्रियकुलभूषण और भारतवर्षके प्राचीन राज्य

गिद्धौरराज्यके स्वनामधन्य अधिपति

महाराजा चन्द्रमौलीश्वरप्रसाद सिंह बहादुर

—के—

कमनीय कर-कमलोंमें

सप्रेम समर्पित

रामगोविन्द त्रिवेदी
गौरीनाथ झा



ऋग्वेद-संहिता

(हिन्दी-टीका-सहित)



८ अष्टक । १० मण्डल । १ अध्याय । ४ अनुवाक ।

४६ सूक्त

अग्नि देवता । भालन्दन वत्सप्रि ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

प्र होता जातो महान्नभोविन्नृषद्वा सीददपामुपस्थे ।
दधिर्यो धायि स ते वयांसि यन्ता वसूनि विधते तनूपाः ॥१॥
इमं विधन्तो अपां सधस्थे पशुं न नष्टं पदैरनुग्मन् ।
गुहा चतन्तमुशिजो नमोभिरिच्छन्तो धीरा भृगवोऽविन्दन् ॥२॥

१ जो अग्नि मनुष्यों (वा विद्युद्रूपसे अन्तरीक्ष) में रहते हैं, जो जल (वा कर्मोंके समीप वेदीपर) में रहते हैं और जो आकाशके ज्ञानी हैं (क्योंकि आकाशमें ही अग्निका जन्म हुआ है); वह गुणोंके कारण पूज्य होकर इस समय यजमानोंके होता हुए हैं। अग्नि, यज्ञ-धारक होकर, वेदीपर रखे गये हैं। वत्सप्रि, तुम उनकी पूजा करते हो। वह तुम्हारे देह-रक्षक होकर तुम्हें अन्न और सम्पत्ति दें।

२ जलके बीच स्थित अग्निको परिचारक ऋषियोंने, चोरोंसे अपहृत पशुके समान, खोजा। ऋषियोंमें अभिलाषी और पण्डित भृगुवंशीयोंने स्तुति करते-करते एकान्त स्थानमें स्थित अग्निको प्राप्त किया।

इमं त्रितो भूर्यविन्ददिच्छन्वैभूवसो मूर्धन्यघ्न्यायाः ।
स शेवृधो जात आ हर्म्येषु नाभिर्युवा भवति रोचनस्य ॥३॥
मन्द्रं होतारमुशिजो नमोभिः प्राञ्चं यज्ञं नेतारमध्वराणाम् ।
विशामकृण्वन्नरतिं पावकं हव्यवाहं दधतो मानुषेषु ॥४॥
प्र भूर्जयन्तं महां विपोधां मूरा अमूरं पुरां दर्माणम् ।
नयन्तो गर्भं वनां धियं धुर्हिरिश्मश्रुं नार्वाणं धनर्चम् ॥५॥
नि पस्त्यासु त्रितः स्तभूयन् परिवीतो योनौ सीददन्तः ।
अतः सङ्गृभ्या विशां दमूना विधर्मणायन्त्रैरीयते नॄन् ॥६॥
अस्याजरासो दमामरित्रा अर्चद्धूमासो अग्नयः पावकाः ।
श्वितीचयः श्वात्रासो भुरण्यवो वनर्षदो वायवो न सोमाः ॥७॥
प्र जिह्वया भरते वेपो अग्निः प्र वयुनानि चेतसा पृथिव्याः ।
तमायवः शुचयन्तं पावकं मन्द्रं होतारं दधिरे यजिष्ठम् ।८॥

---

३ पानेकी इच्छावाले विभूवसके पुत्र त्रित ऋषिने इन महान् अग्निको भूमिपर पाया। सुखके वर्द्धक और यजमान-गृहोंमें उत्पन्न तरुण अग्नि स्वर्ग-फलके नाभि हैं।

४ अभिलाषी ऋषियोंने मदकर, होता, आहवनीय, यजनीय, यज्ञके प्रापक, गतिशील, शोधक, हविर्वाहक और मनुष्योंमें प्रजापति अग्निको स्तुतियोंसे प्रसन्न किया।

५ स्तोता, तुम विजयी, महान् और मेधावियोंके धारक अग्निकी स्तुति करो। सभी मनुष्य ज्ञानी, पुरियोंके ध्वंसक, अरणि-गर्भ, स्तुत्य, हरित लोमवाले, ज्वालासे युक्त और प्रीति-स्तोत्र अग्निको हवि देकर अपने कर्म पा लेते हैं।

६ अग्निकी गार्हपत्य आदि तीन मूर्त्तियाँ हैं। अग्नि यजमान-गृहोंको स्थिर करनेवाले और ज्वालाओंवाले हैं। वह यज्ञ-गृहमें अपनी वेदीपर बैठते हैं। अग्नि प्रजा द्वारा प्रदत्त हवि आदि लेकर यजमानोंके लिये दानेच्छुक होकर तथा प्रजाके लिये शत्रुओंके दमनके साथ देवोंके पास जाते हैं।

७ इस यजमानके पास अनेक अग्नि हैं, जो सब अजर, शत्रुओंके शासक, पूजनीय ज्वालाओंवाले, शोधक, श्वेतवर्ण, क्षिप्रधर्मा, भरणशील, वनमें रहनेवाले और सोमके समान शीघ्रगामी हैं।

८ जो अग्नि ज्वालाके द्वारा कर्मका धारण करते हैं और जो पृथिवीके रक्षणके लिये अनुग्रह-पूर्वक स्तोत्रोंको धारण करते हैं, गतिशील मनुष्य उन दीप्त, शोधक, स्तवनीय, आह्वाता और यजनीय अग्निको धारण करते हैं।

द्यावा यमग्निं पृथिवी जनिष्टामापस्त्वष्टा भृगवो यं सहोभिः ।
ईळेन्यं प्रथमं मातरिश्वा देवास्ततक्षुर्मनवे यजत्रम् ॥९॥
यं त्वा देवा दधिरे हव्यवाहं पुरुस्पृहो मानुषासो यजत्रम् ।
स यामन्नग्ने स्तुवते वयो धाः प्र देवयन्यशसः सं हि पूर्वीः ॥१०॥

४७ सूक्त

वैकुण्ठ इन्द्र देवता । × आङ्गिरस सप्तगु ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

जगृभ्मा ते दक्षिणमिन्द्र हस्तं वसूयवो वसुपते वसूनाम् ।
विद्मा हि त्वा गोपतिं शूर गोनामस्मभ्यं चित्रं वृषणं रयिन्दाः ॥१॥
स्वायुधं स्ववसं सुनीथं चतुःसमुद्रं धरुणं रयीणाम् ।
चर्कृत्यं शंस्यं भूरिवारमस्मभ्यं चित्रं वृषणं रयिं दाः ॥२॥

९ ये वे ही अग्नि हैं, जिन्हें द्यावापृथिवीने जन्म दिया है, जिन्हें जल, त्वष्टा और भृगुओंने स्तोत्रादि साधनोंसे प्राप्त किया था, जो स्तुत्य हैं और जिन्हें मातरिश्वा (वायु) और अन्य देवोंने मनुष्योंके (वा मनुके) यज्ञको करनेके लिये बनाया है।

१० अग्नि, तुम हविर्वाहक हो । देवोंने तुम्हें धारण किया है। अभिलाषी मनुष्योंने यज्ञके लिये तुम्हें धारण किया है। अग्नि, यज्ञमें मुझ स्तोताको अन्न दो । अग्नि, देव-भक्त यजमान यश प्राप्त करता है।

१ अनेक धनोंके स्वामी इन्द्र, धनाभिलाषी हम तुम्हारे दाहिने हाथको पकड़ते हैं। शूर इन्द्र, तुम्हें हम अनेक गौओंके स्वामी जानते हैं । फलतः हमें विचित्र और वर्षक धन दो ।

२ तुम्हें हम शोभन अस्त्र और शोभन रक्षणवाले, सुन्दर नेत्रवाले, चारो समुद्रोंको जलसे परिपूर्ण करनेवाले, धन-धारक, बार-बार स्तुत्य और दुःखोंको निवारक जानते हैं । इन्द्र, तुम हमें विचित्र और वर्षक धन दो ।

× सायणाचार्यका कथन है कि, विकुण्ठा नामकी एक स्त्रीने, इन्द्रके समान पुत्रकी प्राप्तिके लिये, कृच्छ्रचान्द्रायण व्रत किया था। इन्द्र दूसरा इन्द्र नहीं देखना चाहते थे; इसलिये स्वयं उन्होंने ही जन्म ग्रहण किया; इसलिये "वैकुण्ठ इन्द्र" नाम पड़ गया ।

सुब्रह्माणं देववन्तं बृहन्तमुरुं गभीरं पृथुबुध्नमिन्द्र ।
श्रुत ऋषिमुग्रमभिमातिषाहमस्मभ्यं चित्रं वृषणं रयिं दाः ॥३॥
सनद्वाजं विप्रवीरं तरुत्रं धनस्पृतं शूशुवांसं सुदक्षम् ।
दस्युहनं पूर्भिदमिन्द्र सत्यमस्मभ्यं चित्रं वृषणं रयिं दाः ॥४॥
अश्वावन्तं रथिनं वीरवन्तं सहस्रिणं शतिनं वाजमिन्द्र ।
भद्रव्रातं विप्रवीरं स्वर्षामस्मभ्यं चित्रं वृषणं रयिं दाः ॥५॥
प्र सप्तगुमृतधीतिं सुमेधां बृहस्पतिं मतिरच्छा जिगाति ।
य आङ्गिरसो नमसोपसद्योऽस्मभ्यं चित्रं वृषणं रयिं दाः ॥६॥
वनीवानो मम दूतास इन्द्रं स्तोमाश्चरन्ति सुमतीरियानाः ।
हृदिस्पृशो मनसा वच्यमाना अस्मभ्यं चित्रं वृषणं रयिं दाः ॥७॥
यत्त्वा यामि दद्धि तन्न इन्द्र बृहन्तं क्षयमसमं जनानाम् ।
अभि तद्द्यावापृथिवी गृणीतामस्मभ्यं चित्रं वृषणं रयिं दाः ॥८॥

---

३ इन्द्र, तुम हमें स्तुति-परायण, देव-भक्त, महान्, विशाल-मूर्त्ति, गभीर, सुप्रतिष्ठित, प्रसिद्ध-ज्ञान, तेजस्वी, शत्रु-दमन-कर्त्ता, पूज्य और वर्षक पुत्र-रूप धन दो।

४ इन्द्र, अन्न पाये हुए, मेधावी, तारक, धन-पूरक, वर्द्धमान, शोभन-बल, शत्रु-घातक, शत्रु-पुरियोंके भेदक, सत्यकर्मा, विचित्र और वर्षक पुत्र-स्वरूप धन हमें दो।

५ इन्द्र, अश्व-युक्त, रथी, वीर-सम्पन्न, अनडुह गौओं आदिसे युक्त, अन्नवान्, कल्याणकारी सेवकोंसे युक्त, विप्रोंसे वेष्टित, सबके लिये सेवक, पूज्य और वर्षक पुत्र-, स्वरूप धन हमें दो।

६ सत्यकर्मा, शोभन-प्रज्ञ और मन्त्र-स्वामी गुरु सप्तगुके पास स्तुति जाती है। मैं अङ्गिरोगोत्रोत्पन्न हूं। नमस्कारके साथ देवोंके पास जाता हूँ। हमारे लिये पूज्य और वर्षक धन दो।

७ मैं जो सब सुन्दर भावोंसे युक्त स्तुतियाँ तैयार करता हूँ, उनका अन्तःकरणसे पाठ करता हूं। ये स्तुतियाँ श्रोताओंके हृदयको छूती हैं। श्रोता लोग, दूतके समान, इन्द्रके निकट प्रार्थना करते हैं। हमें पूज्य और वर्षक धन दो।

८ मैं जो तुमसे माँगता हूं, वह मुझे दो। मुझे एक ऐसा विशाल निवास-स्थान दो, जैसा किसीके भी पास न हो। द्यावापृथिवी इस बातका अनुमोदन करें। हमें पूज्य और वर्षक धन दो।

४८ सूक्त

इन्द्र देवता। इन्द्र ऋषि। जगती और त्रिष्टुप् छन्द।

अहं भुवं वसुनः पूर्व्यस्पतिरहं धनानि सं जयामि शश्वतः ।
मां हवन्ते पितरं न जन्तवोऽहं दाशुषे विभजामि भोजनम् ॥१॥
अहमिन्द्रो रोधो वक्षो अथर्वणस्त्रिताय गा अजनयमहेरधि ।
अहं दस्युभ्यः परि नृम्णमाददे गोत्रा शिक्षं दधीचे मातरिश्वने ॥२॥
मह्यं त्वष्टा वज्रमतक्षदायसं मयि देवासोऽवृजन्नपि क्रतुम् ।
ममानीकं सूर्यस्येव दुष्टरं मामार्यन्ति कृतेन कर्त्वेन च ॥३॥
अहमेतं गव्ययमश्व्यं पशुं पुरीषिणं सायकेना हिरण्ययम् ।
पुरू सहस्रा नि शिशामि दाशुषे यन्मा सोमास उक्थिनो अमन्दिषुः ॥४॥
अहमिन्द्रो न परा जिग्य इद्धनं न मृत्यवेऽव तस्थे कदाचन ।
सोममिन्मा सुन्वन्तो याचता वसु न मे पूरवः सख्ये रिषाथन ॥५॥

१ मैं ही धनका मुख्य स्वामी हूं। शत्रु-धनको जीतनेवाला भी मैं ही हूं। मुझे ही मनुष्य बुलाते हैं। जैसे पुत्र पिताको धन देते हैं, वैसे ही मैं भी हविर्दाता यजमानको अन्न देता हूं।

२ मैंने दध्यङ् (आथर्वण) ऋषिका शिर काट डाला था (क्योंकि दध्यङ्ने इन्द्रके मना करने पर भी गोपनीय मधुविद्याको अश्विद्वयको बता दिया था)। कुएँमें गिरे त्रितके उद्धारके लिये मैंने मेघमें जल दिया था। मैंने शत्रुओंसे धन लिया था। मातरिश्वाके पुत्र दधीचिके लिये बरसनेकी इच्छासे मैंने जल-रक्षक मेघोंको मारा था।

३ त्वष्टाने मेरे लिये लोहेका वज्र बनाया था। मेरे लिये देवता लोग यज्ञ करते हैं। मेरी सेना सूर्यके ही समान दुर्गम्य हैं। वृत्र-वधादि करनेके कारण मेरे पास सब जाते हैं।

४ जिस समय यजमान मुझे स्तोत्र और सोमके द्वारा तृप्त करते हैं, उस समय मैं शत्रुके गौ, अश्व, हिरण्य और क्षीर आदिसे युक्त पशुदलको, आयुधसे, जीतता हूं और दाता यजमानके शत्रु-विनाशके लिये अनेकानेक शस्त्रोंको तेज करता हूं।

५ मैं सब धनोंका स्वामी हूं। मेरे धनका कोई पराभव नहीं कर सकता। मेरे भक्त कभी मृत्यु-पात्र नहीं होते अथवा मैं मृत्युके सामने कभी नीचा नहीं होता हूं। यजमानो, मनोऽभिलषित धन मुझसे ही माँगो। पुरुओ, मनुष्य लोग मेरी मैत्री नहीं नष्ट करें।

अहमेतान्छाश्वसतो द्वाद्वेन्द्रं ये वज्रं युधयेऽकृण्वत ।
आह्वयमानाँ अव हन्मनाहनं दृह्ला वदन्ननमस्युर्नमस्विनः ॥६॥
अभीदमेकमेको अस्मि निष्षालभी द्वा किमु त्रयः करन्ति ।
खले न पर्षान् प्रति हन्मि भूरि किं मा निन्दन्ति शत्रवोऽनिन्द्राः ॥७॥
अहं गुङ्गुभ्यो अतिथिग्वमिष्करमिषं न वृत्रतुरं विक्षु धारयम् ।
यत् पर्णयघ्न उत वा करञ्जहे प्राहं महे वृत्रहत्ये अशुश्रवि ॥८॥
प्र मे नमी साप्य इषे भुजे भूद्गवामेषे सख्या कृणुत द्विता ।
दिद्युं यदस्य समिथेषु मंहयमादिदेनं शंस्यमुक्थ्यं करम् ॥९॥
प्र नेमस्मिन्ददृशे सोमो अन्तर्गोपा नेममाविरस्था कृणोति ।
स तिग्मशृङ्गं वृषभं युयुत्सन्द्रुहस्तस्थौ बहुले बद्धो अन्तः ॥१०॥

---

६ जो प्रबल निश्वास करके, दो-दो करके, अस्त्रधारक इन्द्रके साथ युद्ध करनेको प्रस्तुत हुए थे और जो स्पर्द्धाके साथ मुझे बुलाते थे, कठोर वाक्य कहते हुए उन्हें मैंने ऐसा आघात किया कि, वे मर गये। वे नत हुए; मैं नत होनेका नहीं।

७ एक शत्रु आवे, तो उसे भी हरा सकता हूं। दो आवें, तो उन्हें भी हरा सकता हूं। यदि तीन ही आवें, तो मेरा क्या बिगाड़ सकते हैं? जैसे किसान, धान मलनेके समय, अनायास ही पुराने धान्य-स्तम्भोंको मल डालता है, वैसे ही निष्ठुर शत्रुओंको मैं मार डालता हूं।

८ मैंने ही गुङ्गुओंके देशमें, प्रजाके बीच, अतिथिग्वके पुत्र दिवोदासको प्रतिष्ठित किया था। वह गुङ्गुओंके शत्रुओंका संहार करते हैं, विपत्तिका निवारण करते हैं और अन्नके समान उनका पालन करते हैं। पर्णय और करञ्ज नामके शत्रुओंके बधसे युक्त संग्राममें मैं भली भाँति विख्यात हुआ था।

९ मेरा स्तोता सबके लिये आश्रयणीय, अन्नवान् और भोगदाता हैं। मेरे स्तोताको लोग गोदाता और मित्र मानते हैं। मैं अपने स्तोताकी विजयके लिये, युद्धमें, आयुध ग्रहण करता हूं। स्तोताको मैं स्तुत्य करता हूं।

१० दोमेंसे एक सोम-यज्ञ करता है। पालक इन्द्रने उसके लिये वज्र धारण करके उसे श्री-सम्पन्न बनाया। तीक्ष्णतेजा सोम, यज्ञ-कर्त्ताके साथ शत्रु युद्ध करनेको उद्यत हुआ; परन्तु अन्धकारके बीच बँध गया।

आदित्यानां वसूनां रुद्रियाणां देवो देवानां न मिनामि धाम ।
ते मा भद्राय शवसे ततक्षुरपराजितमस्तृतमषाह्ळम् ॥११॥

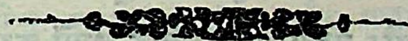


४९ सूक्त

वैकुण्ठ इन्द्र देवता । इन्द्र ऋषि । जगती और त्रिष्टुप् छन्द ।

अहं दां गृणते पूर्व्यं वस्वहं ब्रह्म कृणवं मह्यं वर्धनम् ।
अहं भुवं यजमानस्य चोदितायज्वनयः साक्षि विश्वस्मिन् भरे ॥१॥
मां धुरिन्द्रं नाम देवता दिवश्च ग्मश्चापां च जन्तवः ।
अहं हरि वृषणा विव्रता र ू अहं वज्रं शवसे धृष्ण्वाददे ॥२॥
अहमत्कं कवये शिश्नथं हथैरहं कुत्समावमाभिरूतिभिः ।
अहं शुष्णस्य श्नथिता वधर्यमन्न यो रर आर्यन्नाम दस्यवे ॥३॥

११ इन्द्र आदित्यों वस्तुओं और रुद्रों (वा मरुतों) के स्थानको नहीं नष्ट करते । मुझ अपराजित, अहिंसित और अनभिभूतको इन देवोंने कल्याण और अन्नके लिये बनाया है ।



१ स्तोताको मैंने मुख्य धन दिया । यज्ञानुष्ठान मेरे लिये वर्द्धक है । अपने लिये यजमानके धनका प्रेरक मैं ही हूं । अयाज्ञिकको सारे संग्रामोंमें हराता हूं ।

२ स्वर्गके देवता, भूचर और जलचर जन्तु मेरा नाम इन्द्र रखे हुए हैं । युद्धमें जानेके लिये मैं हरितवर्ण, पौरुषशाली, विविध कर्मा और लघुगामी अश्वोंको रथमें जोतता हूं । धर्षक वज्रको, बलके लिये, धारण करता हूं ।

३ मैंने, उशना ऋषिके मङ्गलके लिये, अत्क नामक व्यक्तिको, प्रहारके द्वारा, ताड़ित किया था । मैंने रक्षाके उपयोगी अनेक कार्य करके कुत्सको बचाया था । शुष्णके बधके लिये मैंने वज्र धारण किया था । दस्युजातिका नाम मैंने आर्य नहीं रखा ।

स्मदिभं च रन्धयम् ॥
अहं पितेव वेतसूँरभिष्टये तुग्रं कुत्साय स्मदिभं च रन्धयम् ॥
अहं भुवं यजमानस्य राजनि प्र यद्भरे तुजये न प्रियाधृषे ॥४॥
अहं रन्धयं मृगयं श्रुतर्वणे यन्माजिहीत वयुना चनानुषक् ।
अहं वेशं नम्रमायवेऽकरमहं सव्याय पड्गृभिमरन्धयम् ॥५॥
अहं स यो नववास्त्वं बृहद्रथं सं वृत्रेव दासं वृत्रहारुजम् ॥
यद्वर्धयन्तं प्रथयन्तमानुषग्दूरे पारे रजसो रोचनाकरम् ॥६॥
अहं सूर्यस्य परि याम्याशुभिः प्रैतशेभिर्वहमान ओजसा ।
यन्मा सावो मनुष आह निर्णिज ऋधक्कृषे दासं कृत्व्यं हथैः ॥७॥
अहं सप्तहा नहुषो नहुष्टरः प्राश्रावयं शवसा तुर्वशं यदुम् ॥
अहं न्यन्यं सहसा सहस्करं नव व्राधतो नवतिं च वक्षयम् ॥८॥

---

४ मैंने पिताके समान वेतसु नामका देश कुत्स ऋषिके वशमें कर दिया था। तुग्र और स्मदिभको भी कुत्सके वशमें कर दिया था। मैं यजमानको श्री-सम्पन्न कर देता हूं। पुत्र समझकर उसे प्रिय वस्तु देता हू, जिससे वह दुर्द्धर्ष हो उठे।

५ मैंने उस समय श्रुतर्वा ऋषिके वशमें मृगय असुरको कर दिया था, जिस समय उन्होंने मेरी स्तुति की थी। मैंने वेशको आयुके और षड्गृभिको सव्यके वशमें कर दिया था।

६ वृत्रबधके समान ही मैंने नववास्त्व और बृहद्रथका बध किया था। उस समय ये दोनों वर्द्ध-मान और प्रसिद्ध हो रहे थे। इन्हें मैंने उज्वल संसारसे बाहर निकाल दिया था।

७ शीघ्रगामी अश्वोंके द्वारा ढोये जाकर मैं अपने तेजसे सूर्यकी चारो ओर प्रदक्षिणा करता हूं। जिस समय यजमानके सोमाभिषवके लिये मुझे बुलाया जाता है, उस समय हथियारोंसे मैं मारने योग्य शत्रुको दूर करता हूं।

८ मैं सात शत्रु-पुरियोंको ध्वस्त करनेवाला हूं। मैं सबसे बड़ा बन्धन-कर्त्ता हूं। बली जानकर मैंने तुर्वश और यदुको प्रसिद्ध किया है। मैंने अन्य स्तोताओंको बलिष्ठ बनाया है। मैंने निन्यानबे नगरोंको नष्ट किया है।

अहं सप्त स्रवतो धारयं वृषा द्रवित्न्वः पृथिव्यां सीरा अधि ।
अहमर्णांसि वि तिरामि सुक्रतुर्युधा विदं मनवे गातुमिष्टये ॥९॥
अहं तदासु धारयं यदासु न देवश्चन त्वष्टाधारयद्रुशत् ।
स्पार्हं गवामूधःसु वक्षणास्वा मधोर्मधु श्वात्र्यं सोममाशिरम् ॥१०॥
एवा देवाँ इन्द्रो विव्ये नॄन् प्र च्यौत्नेन मघवा सत्यराधाः ।
विश्वेत्ता ते हरिवः शचीवोऽभि तुरासः स्वयशो गृणन्ति ॥११॥

५० सूक्त

देवता और ऋषि पूर्ववत्। जगती, अभिसारिणी, त्रिष्टुप् आदि छन्द।

प्र वो महे मन्दमानायान्धसोऽर्चा विश्वानराय विश्वाभुवे ।
इन्द्रस्य यस्य सुमखं सहो महि श्रवो नृम्णं च रोदसी सपर्यतः ॥१॥

---

९ मैं जल-वर्षक हूं। जो सात सिन्धु आदि नदियाँ, द्रवरूपसे, पृथिवीपर प्रवाहित हो रही हैं, उन सबको मैंने ही यथास्थान रखा है। मैं शोभन-कर्मा हूं। मैं ही जल-वितरण करता हूं। युद्ध करके मैंने यज्ञकर्त्ताके लिये मार्ग परिष्कृत कर दिया है।

१० गायोंके स्तनमें मैंने ऐसा स्पृहणीय, दीप्त और मधुर दुग्ध रखा है, जैसा कोई भी देवता नहीं रख सकता। वह स्तन नदीके समान दूधका वहन करता है। सोमके साथ मिलानेपर दुग्ध बहुत ही सुखकर हो जाता है।

११ (ऋषि—रूपसे इन्द्रकी उक्ति—) इस प्रकार इन्द्र अपने प्रभावसे देवों और मनुष्योंको सौभाग्य-सम्पन्न करते हैं। इन्द्रके पास धन है; वही यथार्थ धनी हैं। विविध-कर्मा और अश्व-युक्त इन्द्र, तुम्हारा काय तुम्हारे अधीन है। अतीव व्यस्त होकर ऋत्विक् लोग तुम्हारा उन कार्योंकी प्रशंसा करते हैं।



१ स्तोता, तुम्हारे महान् सोमसे इन्द्र प्रसन्न होते हैं। वह सबके नेता और सबके सृष्टि कर्त्ता हैं। उनकी पूजा करो। इन्द्रकी आश्चर्यजनक शक्ति, विपुल कीर्त्ति और सुख-सम्पत्तिकी सारा द्युलोक और मनुजलोक, प्रशंसा करता है।

सो चिन्नु सख्या नर्य इन स्तुतश्चर्कृत्य इन्द्रो मावते नरे ।
विश्वासु धूर्षु वाजकृत्येषु सत्पते वृत्रे वाप्स्वभि शूर मन्दसे ॥२॥
के ते नर इन्द्र ये त इषे ये ते सुम्नं सधन्यमियक्षान् ।
के ते वाजायासुर्याय हिन्विरे के अप्सु स्वासूर्वरासु पौंस्ये ॥३॥
भुवस्त्वमिन्द्र ब्रह्मणा महान् भुवो विश्वेषु सवनेषु यज्ञियः ।
भुवो नॄँश्च्यौत्नो विश्वस्मिन् भरे ज्येष्ठश्च मन्त्रो विश्वचर्षणे ॥४॥
आवा नु कं ज्यायान्यज्ञवनसो महीं त ओमात्रां कृष्टयो विदुः ।
असो नु कमजरो वर्धाश्च विश्वेदेता सवना तूतुमा कृषे ॥५॥
एता विश्वा सवना तूतुमा कृषे स्वयं सूनो सहसो यानि दधिषे ।
वराय ते पात्रं धर्मणे तना यज्ञो मन्त्रो ब्रह्मोद्यतं वचः ॥६॥

२ इन्द्र सबके स्तुत्य और सबके प्रभु हैं। वह बन्धुके समान मनुष्यके हितैषी हैं। मेरे समान मनुष्यको उनकी सदा सेवा करनी चाहिये। वीर और साधु-पालक इन्द्र, सब प्रकारके बड़े कार्यों और बल-साध्य व्यापारके समय तथा मेघसे वृष्टि-प्राप्तिके लिये तुम्हारी स्तुति करनी चाहिये।

३ इन्द्र, वे सौभाग्यशाली कौन हैं, जो तुमसे अन्न, धन और सुख-सम्पदा पानेके अधिकारी हैं। वे कौन हैं, जो तुम्हें असुर-वध-समर्थ बल पानेके लिये सोमरस प्रेरित करते हैं। वे कौन हैं, जो अपनी उर्वरा भूमिमें वृष्टि-जल और पौरुष पानेके लिये सोमरस प्रदान करते हैं।

४ इन्द्र, यज्ञानुष्ठानके द्वारा तुम महान् हुए हो। सारे यज्ञोंमें तुम यज्ञ-भाग पानेके अधिकारी हो। तुम सारे हो युद्धोंमें प्रधान-प्रधान शत्रुओंके ध्वंसक हुए हो। अखिल-ब्रह्माण्ड-दर्शक इन्द्र, तुम सर्व-श्रेष्ठ मन्त्र-रूप हो।

५ तुम सर्व-श्रेष्ठ हो। यजमानोंकी रक्षा करो। मनुष्य जानते हैं कि, तुम्हारे पास महती रक्षा प्राप्त की जाती है। तुम अजर होओ, बढ़ो। ऐसा करो कि, यह सोम-याग शीघ्र सम्पन्न हो।

६ बली इन्द्र जिन सोम-यज्ञोंको तुम धारण किये रहते हो, उनको शीघ्र सम्पन्न करते हो तुम्हारे पास आश्रय पानेके लिये यह सोमपात्र, यह सम्पत्ति, यह यज्ञ, यह मन्त्र और यह पवित्र वाक्य उद्यत हैं।

ये ते विप्र ब्रह्मकृतः सुते सचा वसूनां च वसुनश्च दावने ।
प्र ते सुम्नस्य मनसा पथा भुवन्मदे सुतस्य सोम्यस्यान्धसः ॥७॥



५१ सूक्त

अग्नि आदि देव-वृन्द देवता तथा ऋषि। त्रिष्टुप् आदि छन्द ।

महत्तदुल्बं स्थविरं तदासीद्येनाविष्टितः प्रविवेशिथापः ।
विश्वा अपश्यद्बहुधा ते अग्ने जातवेदस्तन्वो देव एकः ॥१॥
को मा ददर्श कतमः स देवो यो मे तन्वो बहुधा पर्यपश्यत् ।
क्वाह मित्रावरुणा क्षियन्त्यग्नेर्विश्वाः समिधो देवयानीः ॥२॥
ऐच्छाम त्वा बहुधा जातवेदः प्रविष्टमग्ने अप्स्वोषधीषु ।
तं त्वा यमो अचिकेच्चित्रभानो दशान्तरुष्यादतिरोचमानम् ॥३॥

---

७ मेधावी इन्द्र, स्तोत्र-निरत स्तोता लोग नाना प्रकारका धन पानेकी इच्छासे एकत्र होकर तुम्हारे लिये सोम-यज्ञ करते हैं। वे, सोम-रूप अन्न प्रस्तुत होनेके पश्चात् जिस समय आमोद-आह्लाद प्रारम्भ होता है, उस समय स्तुति-रूप साधनसे सुख-लाभके अधिकारी हों।

---

१ (अग्निहविर्वहन-कार्यमें उद्युक्त होकर जलमें छिप गये थे। उन्हींके प्रति देवोंकी उक्ति—) अग्नि, तुम अतीव प्रकाण्ड और स्थूल आच्छादनसे वेष्टित होकर जलमें पैठे थे। ज्ञात-प्रज्ञ अग्नि, तुम्हारे अनेक प्रकारके शरीरको एक देवताने देखा।

२ (अग्निकी उक्ति—) मुझे किसने देखा था? वह कौन देवता हैं, जिन्होंने मेरी नाना प्रकारकी देहको देखा था? मित्र और वरुण, अग्निकी वह दीप्त और देवयान-साधन देह कहा है, कहो तो?

३ (देवोंकी उक्ति—) ज्ञातप्रज्ञ अग्नि, जल और औषधियोंमें तुम पैठे हो। तुम्हें हम खोजते हैं। विचित्र किरणोंवाले अग्नि, यम, तुम्हें देखकर, पहचान गये। यमने देखा कि, तुम अपने दस स्थानों (तीन भुवन, अग्नि, वायु, आदित्य, जल, ओषधि, वनस्पति और प्राणि-शरीर) से भी अधिक दीप्त हो रहे हो।

होत्रादहं वरुण बिभ्यदायन्नेदेव मा युनजन्नत्र देवाः ।
तस्य मे तन्वो बहुधा निविष्टा एतमर्थं न चिकेताहमग्निः ॥४॥
एहि मनुर्देवयुर्यज्ञकामोऽरंकृत्या तमसि क्षेष्यग्ने ।
सुगान् पथः कृणुहि देवयानान्वह हव्यानि सुमनस्यमानः ॥५॥
अग्नेः पूर्वे भ्रातरो अर्थमेतं रथीवाध्वानमन्वावरीवुः ।
तस्माद्भिया वरुण दूरमायं गौरो न क्षेप्नोरविजे ज्यायाः ॥६॥
कुर्मस्त आयुरजरं यदग्ने यथा युक्तो जातवेदो न रिष्याः ।
अथा वहासि सुमनस्यमानो भागं देवेभ्यो हविषः सुजात ॥७॥
प्रयाजान्मे अनुयाजांश्च केवलानूर्जस्वन्तं हविषो दत्त भागम् ।
घृतं चापां पुरुषं चौषधीनामग्नेश्च दीर्घमायुरस्तु देवाः ॥८॥

---

४ (अग्निकी उक्ति—) वरुण, मैं होताके कार्यसे भय पाकर चला आया हूं । मैं चाहता हूं कि देवता लोग अब होम-कार्यमें नियुक्त न करें । इसीलिये मेरी देह नाना स्थानोंमें गयी है । मैं (अग्नि) अब ऐसा कार्य नहीं करना चाहता ।

५ (देवोंकी उक्ति —) अग्नि, आओ । मनुष्य यज्ञाभिलाषी हुआ है । वह यज्ञका सारा आयोजन कर चुका है और तुम अन्धकारमें हो । देवोंसे होमीय द्रव्य पानेकी इच्छासे सरल मार्ग कर दो । प्रसन्न-चेता होकर हविका वहन करो ।

६ (अग्निकी उक्ति—) देवो, जैसे रथी दूर मार्गको जाता है, वैसे ही मेरे जेष्ठ तीन भ्राता (भूपति, भुवनपति और भूतपति) इस कार्यको करते हुए नष्ट हो गये इसी डरसे मैं दूर चला आया हूं । जैसे श्वेत हरिण धनुर्द्धारीकी ज्यासे डरता है, वैसे ही मैं डरता हूं ।

७ (देवोंको उक्ति—) ज्ञातप्रज्ञ अग्नि, हम तुम्हें जरारहित आयु देते हैं । इससे तुम नहीं मरोगे। कल्याण-मूर्ति अग्नि, प्रसन्न-चित्त होकर देवोंके पास यथाभाग हव्य ले जाओ ।

८ (अग्निकी उक्ति—) देवो, यज्ञका प्रथम हविर्भाग (प्रयाज) और शेष हविर्भाग (अनुयाज) तथा अतीव विपुल भाग मुझे दो । जलका सारभाग घृत, ओषधिसे उत्पन्न प्रधान भाग और दीर्घ आयु दो ।

तव प्रयाजा अनुयाजाश्च केवल ऊर्जस्वन्तो हविषः सन्तु भागाः ।
तवाग्ने यज्ञोऽयमस्तुसर्वस्तुभ्यं नमन्तां प्रदिशश्चतस्रः ॥९॥

५२ सूक्त

विश्वदेवगण देवता । अग्नि ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

विश्वेदेवाः शास्तन मा यथेह होता वृतो मनवै यन्निषद्य ।
प्र मे ब्रूत भागधेयं यथा वो येन पथा हव्यमा वो वहानि ॥१॥
अहं होता न्यसीदं यजीयान्विश्वे देवा मरुतो मा जुनन्ति ।
अहरहरश्विनाध्वर्यवं वां ब्रह्मा समिद्भवति साहुतिर्वाम् ॥२॥
अयं यो होता किरु स यमस्य कमप्यूहे य समञ्जन्ति देवाः ।
अहरहर्जायते मासिमास्यथा देवा दधिरे हव्यवाहम् ॥३॥
मां देवा दधिरे हव्यवाहमपम्लुतं बहु कृच्छ्रा चरन्तम् ।
अग्निर्विद्वान्यज्ञं नः कल्पयाति पञ्चयामं त्रिवृतं सप्ततन्तुम् ॥४॥

---

९ (देवोंका कथन—) अग्नि, प्रयाज, अनुयाज, विपुल और असाधारण हविर्भाग तुम्हें मिलेगा। वे सारे यज्ञ भी तुम्हारे ही हों। चारो दिशाएँ तुम्हारे पास अवनत हों।

---

१ विश्वदेव, तुमने मुझे होताके रूपमें वरण किया है। मैं यहाँ बैठकर जो मन्त्र पढ़ूँगा, उसे कह दो। मेरा भाग कौन है और तुम लोगोंका भाग कौन है, यह मुझे कह दो। जिस मार्गसे तुम्हारे पास मैं होमीय द्रव्य ले जाऊंगा, वह भी कह दो।

२ होता होकर मैं यज्ञ करूंगा। इसीसे बैठा हुआ हूं। सारे देवों और मरुतोंने मुझे इस कार्यमें नियुक्त किया है। अश्विद्वय, तुम्हें प्रतिदिन अध्वर्युका कार्य करना होता है। उज्ज्वल सोम स्तोतृ-रूप हो रहे हैं। तुम दोनों सोम पीते हो।

३ होताको क्या करना होता है? होता यजमानके जिस द्रव्यका हवन करते हैं, वह देवोंको मिलता है। प्रतिदिन और प्रतिमास होम होता है। इस कार्यमें देवोंने अग्निको हव्यवाहक नियुक्त किया है।

४ मैं (अग्नि)ने पलायन किया था। मैं अनेक प्रकारके कष्ट करता था। मुझे देवोंने हव्य-वाहन नियुक्त किया है। विद्वान् अग्नि हमारे यज्ञका आयोजन करते हैं। यज्ञके पाँच मार्ग हैं। उसमें तीन बार सोमका निष्पीड़न (सवन-त्रय) किया जाता है और सात छन्दोंमें स्तव किया जाता है।

आ वो यदद्यमृतत्वं सुवीरं यथा वो देवा वरिवः कराणि ।
आ वाह्वोर्वज्रमिन्द्रस्य धेयामथेमा विश्वाः पृतना जयाति ॥५॥
त्रीणि शता त्री सहस्राण्यग्निं त्रिंशच्च देवा नव चासपर्यन् ।
औक्षन् घृतैरस्तृणन् बर्हिरस्मा आदिद्धोतारं न्यसादयन्त ॥६॥



५३ सूक्त

अग्नि देवता। देवतागण ऋषि। त्रिष्टुप् और जगती छन्द।

यमैच्छाम मनसा सोऽयमागाद्यज्ञस्य विद्वान् परुषश्चिकित्वान् ।
स नो यक्षद्देवताता यजीयान्नि हि षत्सदन्तरः पूर्वो अस्मत् ॥१॥
अराधि होता निषदा यजीयानभि प्रयांसि सुधितानि हि ख्यत् ।
यजामहै यज्ञियान् हन्त देवाँ ईलामहा ईड्याँ आज्येन ॥२॥

---

५ देवो, मैं तुम्हारी सेवा करता हूं। इसलिये तुमसे प्रार्थना करता हूं कि, मुझे अमर करो और सन्तान दो। मैं इन्द्रके दोनों हाथोंमें वज्र देता हूं। तभी वह इन सारी शत्रु-सेनाओंको जीतते हैं।

६ तीन हजार तीन सौ उनतालीस देवताओंने अग्निकी सेवा की हैं। अग्निको उन्होंने घृतसे अभिषिक्त किया हैं, उनके लिये कुश बिछा दिया है और उन्हें होताके रूपमें यज्ञमें बैठाया है।

---

१ मनसे जिन अग्निकी हम कामना करते थे, वह आ गये हैं। अग्नि यज्ञको जानते हैं। वह अपने अङ्गोंको सम्पूर्ण करते हैं। उनके समान कोई भी यज्ञकर्त्ता नहीं है। वह हमारा यजन करें। यजनीय देवोंके मध्य वह वेदीपर बैठे हुए हैं।

२ अग्नि होता और श्रेष्ठ यज्ञकर्त्ता हैं। वेदीपर बैठकर आहुतिके योग्य हुए हैं। अग्नि भली भाँति रखे हुए चरु, पुरोडाश आदिको चारो ओरसे देख रहे हैं। इस लिये कि, आहुतिपात्र देवोंका शीघ्र यज्ञ किया जाय और स्तुत्य देवोंकी स्तुति की जाय।

साध्वीमकर्देववीतिं नो अद्य यज्ञस्य जिह्वामविदाम गुह्याम् ।
स आयुरागात् सुरभिर्वसानो भद्रामकर्देवहूतिं नो अद्य ॥३॥
तदद्य वाचः प्रथमं मसीय येनासुराँ अभि देवा असाम ।
ऊर्जाद उत यज्ञियासः पञ्च जना मम होत्रं जुषध्वम् ॥४॥
पञ्च जना मम होत्रं जुषन्तां गोजाता उत ये यज्ञियासः ।
पृथिवी नः पार्थिवात् पात्वंहसोऽन्तरिक्षं दिव्यात् पात्वस्मान् ॥५॥
तन्तुं तन्वन्रजसो भानुमन्विहि ज्योतिष्मतः पथो रक्ष धिया कृतान् ।
अनुल्बणं वयत जोगुवामपो मनुर्भव जनया दैव्यं जनम् ॥६॥
अक्षानहो नह्यतनोत सोम्या इष्कृणुध्वं रशना ओत पिंशत ।
अष्टावन्धुरं वहताभितो रथं येन देवासो अनयन्नभि प्रियम् ॥७॥

---

३ हम लोगोंका देवागमन-रूप यज्ञ-कार्य है, उसे अग्नि सुसम्पन्न करें। यज्ञकी जो गूढ़ जिह्वा (अग्नि) है, उसे हम पा चुके हैं। अग्नि सुरभि होकर और दीर्घ आयु पाकर आये हैं। देवाह्वान-रूप यज्ञको अग्निने पूर्ण किया है।

४ जिस वाक्यका उच्चारण करनेपर हम असुरोंका पराभव कर सकें, उस सर्व श्रेष्ठ वाक्यका हम उच्चारण करें। अन्नभक्षक, यज्ञ-योग्य और पञ्चजनो (देवमनुष्यादिको), तुम लोग हमारे होम-कार्यका सेवन करो।

५ पञ्चजन (देवादि) मेरे होत्रका सेवन करें। हव्यके लिये उत्पन्न और यज्ञार्ह देवता मेरे होत्रका सेवन करें। पृथिवी हमें पापसे बचावे। अन्तरिक्ष हमें पापसे बचावे।

६ अग्नि, यज्ञ विस्तार करते हुए इस लोकके दीप्ति-कर्त्ता सूर्यके अनुगामी बनो (सूर्यमण्डलमें पैठो)। सत्कर्म द्वारा जिन ज्योतिर्मय मार्गों (देवयानों) को प्राप्त किया जाता है, उनकी रक्षा करो। वह अग्नि स्तोताओंका कार्य निर्दोष कर दें। अग्नि, तुम स्तवनीय बनो और देवोंको यज्ञाभिगामी करो।

७ (यज्ञागमनेच्छु देवता कहते हैं—) सोम-योग्य देवो, रथमें जोतने योग्य घोड़ोंको रथमें जोतो। घोड़ेका लगाम साफ करो। घोड़ोंको अलङ्कृत करो। आठ सारथियोंके बैठने योग्य रथोंको, सूर्य-रथके साथ, यज्ञमें ले जाओ। इसी रथसे देवता अपनेको ले जाते हैं।

अश्मन्वती रीयते सं रभध्वमुत्तिष्ठत प्र तरता सखायः ।
अत्रा जहाम ये असन्नशेवाः शिवान्वयमुत्तरेमाभि वाजान् ॥८॥
त्वष्टा माया वेदपसामपस्तमो बिभ्रत्पात्रा देवपानानि शन्तमा ।
शिशीते नूनं परशुं स्वायसं येन वृश्चादेतशो ब्रह्मणस्पतिः ॥९॥
सतो नूनं कवयः संशिशीत वाशीभिर्याभिरमृताय तक्षथ ।
विद्वांसः पदा गुह्यानि कर्तन येन देवासो अमृतत्वमानशुः ॥१०॥
गर्भे योषामदधुर्वत्समासन्यपीच्येन मनसोत जिह्वया ।
स विश्वाहा सुमना योग्या अभि सिषासनिर्वनते कार इज्जितिम् ॥११॥

—:०:—

५४ सूक्त

इन्द्र देवता । वामदेवीय बृहदुक्थ ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

तां सु ते कीर्तिं मघवन्महित्वा यत्त्वा भीते रोदसी अह्वयेताम् ।
प्रावो देवाँ आतिरो दासमोजः प्रजायै त्वस्यै यदशिक्ष इन्द्र ॥१॥

८ अश्मन्वती नामकी नदी बह रही है। प्रस्तुत होकर इसे लाँघ जाओ। मित्र देवो, जो कुछ असुख था, उसे छोड़कर और नदी पार कर हम अन्न पावेंगे।

९ त्वष्टा पात्र निर्माण करना जानते हैं। उन्होंने देवोंके लिये अतीव सुन्दर पान पात्र बनाये हैं। वह उत्तम लोहेसे बनाये गये कुठारको तेज कर रहे हैं। उसीसे ब्रह्मणस्पति पात्र बनानेके योग्य काठकोकाटते हैं।

१० मेधावियो, जिन कुठारोंसे अमृत-पानके लिये (अमर होनेके लिये) पात्र बनाया करते हो, उन्हें भली भाँति तेज करो। विद्वानो, तुम ऐसा गोपनीय वास-स्थान बनाओ, जिससे देव अमर हुए थे।

११ मृत गायोंमेंसे एक गायको ऋभुओंने रखा और उसके मुखमें एक बछड़ा भी रखा। उनकी इच्छा देवता बननेकी थी। इस कार्यको सम्पन्न करनेका उपाय उनका कुठार है। प्रतिदिन ऋभुगण अपने योग्य उत्तमोत्तम स्तोत्र ग्रहण करते हैं। वह अवश्य शत्रुजयकर्त्ता हैं।

१ धनी इन्द्र, तुम्हारी महती कीर्तिका मैं वर्णन करता हूं। जिस समय द्यावापृथिवीने डरकर तुम्हें बुलाया, उस समय तुमने देवोंकी रक्षा की, दस्युदलका संहार किया और यजमानका बल प्रदान किया।

यदचरस्तन्वा वावृधानो बलानीन्द्र प्रब्रुवाणो जनेषु ।
मायेत् सा ते यानि युद्धान्याहुर्नाद्य शत्रुं ननु पुरा विवित्से ॥२॥
क उ नु ते महिमनः समस्यास्मत् पूर्व ऋषयोऽन्तमापुः ।
यन्मातरं च पितरं च साकमजनयथास्तन्वः स्वायाः ॥३॥
चत्वारि ते असुर्याणि नामादाभ्यानि महिषस्य सन्ति ।
त्वमंग तानि विश्वानि वित्से येभिः कर्माणि मघवन्चकर्थ ॥४॥
त्वं विश्वा दधिषे केवलानि यान्याविर्या च गुहा वसूनि ।
काममिन्मे मघवन्मा वि तारीस्त्वमाज्ञाता त्वमिन्द्रासि दाता ॥५॥
यो अदधाज्ज्योतिषि ज्योतिरन्तर्यो असृजन्मधुना सं मधूनि ।
अध प्रियं शूषमिन्द्राय मन्म ब्रह्मकृतो बृहदुक्थादवाचि ॥६॥

२ इन्द्र, तुमने अपने शरीरको बढ़ाकर और अपने सारे कार्योंकी घोषणा कर जिन सब बलसाध्य व्यापारोंको सम्पन्न किया, वह सब माया मात्र हैं; तुम्हारे सारे युद्धमें माया भर है। इस समय तो तुम्हारा कोई भी शत्रु नहीं है। क्या पहले था? यह भी सम्भव नहीं।

३ इन्द्र, हमसे पहले किसी ऋषिने तुम्हारी अखिल महिमाका अन्त पाया था। तुमने अपने ही शरीरसे अपने माता-पिताको (द्यावापृथिवीको) एक साथ उत्पन्न किया था।

४ तुम महान् हो। तुम्हारे चार असुर-घातक और अहिंसनीय शरीर हैं। धनी इन्द्र, उन्हीं शरीरोंसे तुम अपने बड़े कार्योंको करते हो।

५ प्रकट और छिपी हुई—दोनों तरहकी सम्पत्तियोंको तुम अधिकारमें करते हो। इन्द्र, मेरी अभिलाषा पूरी करो। तुम स्वयं दान करनेकी आज्ञा करते हो और स्वयं दान देते हो।

६ जिन्होंने ज्योतिर्मय पदार्थोंमें ज्योति स्थापित की है और जिन्होंने मधु देकर सोमरस आदि मधुर वस्तुओंकी सृष्टि की है, उनके लिये बृहदुक्थ मन्त्रोंके कर्त्ता ऋषिने प्रिय और बलकर स्तोत्र किया था।

५५ सूक्त

देवता, ऋषि, छन्द आदि पूर्ववत् ।

दूरं तन्नाम गुह्यं पराचैर्यत्त्वा भीते अह्वयेतां वयोधै ।
उदस्तभ्नाः पृथिवीं द्यामभीके भ्रातुः पुत्रान्मघवन्तित्विषाणः ॥१॥
महत्तन्नाम गुह्यं पुरुस्पृग्येन भूतं जनयो येन भव्यम् ।
प्रत्नं जातं ज्योतिर्यदस्य प्रियं प्रियाः समविशन्त पञ्च ॥२॥
आ रोदसी अपृणादोत मध्यं पञ्च देवाँ ऋतुशः सप्तसप्त ।
चतुस्त्रिंशता पुरुधा विचष्टे सरूपेण ज्योतिषा विव्रतेन ॥३॥
यदुष औच्छः प्रथमा विभानामजनयो येन पुष्टस्य पुष्टम् ।
यत्ते जामित्वमवरं परस्या महन्महत्या असुरत्वमेकम् ॥४॥

१ इन्द्र, तुम्हारा शरीर दूर है। पराङ्मुख होकर मनुष्य उसको छिपाते हैं। जिस समय द्यावापृथिवी उसको अन्नके लिये बुलाते हैं, उस समय तुम अपने पासकी मेघराशिको प्रदीप्त करते हो और पृथिवीसे आकाशको ऊपर पकड़ रखते हो।

२ तुम्हारा विस्तृत स्थानोंमें व्याप्त गुह्य शरीर (अन्तरिक्ष) अत्यन्त प्रकाण्ड है। उससे तुमने भूत और भविष्यको उत्पन्न किया है। जिस ज्योतिर्मय वस्तुओंको उत्पन्न करनेकी इच्छा हुई, उससे सब प्राचीन वस्तुएं उत्पन्न हुई; उससे पञ्चजन (चारो वर्ण और निषाद) प्रसन्न हुए।

३ इन्द्र (सूर्यात्मक) ने अपने शरीर (वातेज) से द्युलोक, भूलोक और अन्तरिक्षको पूर्ण किया। इन्द्र, समय-समयपर पाँच जातियों (देव, मनुष्य, पितर, असुर और राक्षस) और सात तत्त्वों (सात मरुद्गण, सात सूर्य-किरण, सात लोक आदि) को, अपने प्रदीप्त नानाविध कार्योंके द्वारा, धारण करते हो। वह सब कार्य एक ही भावसे चलते हैं। इस सम्बन्धमें मेरे तीस देवता (आठ वसु, एकादश रुद्र, द्वादश आदित्य, प्रजापति, वषट्कार और विराट्) इन्द्रकी सहायता करते हैं।

४ उषा, नक्षत्र आदि आलोकधारी पदार्थोंमें तुमने सबसे पहले आलोक दिया है। जो पुष्ट है, उसको तुमने और भी पुष्ट किया है। तुम ऊपर रहती हो; किन्तु निम्नस्थ मनुष्योंके साथ तुम्हारा बन्धुत्व है। यह तुम्हारे महत्त्व और एक ही प्रकृष्ट-बलत्व है।

विधुं दद्राणं समने बहूनां युवानं सन्तं पलितो जगार ।
देवस्य पश्य काव्यं महित्वाद्या ममार स ह्यः समान ॥५॥
शाक्मना शाको अरुणः सुपर्ण आ यो महः शूरः सनादनीलः ।
यच्चिकेत सत्यमित्तन्न मोघं वसु स्पार्हमुत जेतोत दाता ॥६॥
ऐभिर्ददे वृष्ण्या पौंस्यानि येभिरौक्षद्वृत्रहत्याय वज्री ।
ये कर्मणः क्रियमाणस्य मह्न ऋतेकर्ममुदजायन्त देवाः ॥७॥
युजा कर्माणि जनयन्विश्वौजा अशस्तिहा विश्वमनास्तुराषाट् ।
पीत्वी सोमस्य दिव आ वृधानः शूरो निर्युधाधमद्दस्यून् ॥८॥

५६ सूक्त

विश्वदेवगण देवता । वामदेव-पुत्र बृहदुक्थ ऋषि । त्रिष्टुप् और जगती छन्द

इदन्त एकं पर ऊ त एकं तृतीयेन ज्योतिषा संविशस्व ।
संवेशने तन्वश्चारुरेधि प्रियो देवानां परमे जनित्रे ॥१॥

---

५ जिस समय (कालात्मक) इन्द्र युवा रहते हैं, उस समय सब कार्य करते हैं; उन द्रावकके भयसे युद्धमें कितने ही शत्रु भागते हैं; परन्तु अनेक कालोंका वृद्ध काल उनका ग्रास कर लेता है । उनकी महत्त्वजनक क्षमता देखिये कि, वह कल जीवित थे, आज मर गये ।

६ एक सुन्दर पक्षी (इन्द्रात्मक) आ रहा है । उसका बल अद्भुत है—सर्व-समर्थ है । वह महान्, विक्रान्त, प्राचीन और बिना घोसलेका है । वह जो करना चाहता है, वह अवश्य ही हो जाता है । वह अभिलषणीय सम्पत्तिको जीतता और उसे स्तोताओंको दे डालता है ।

७ वज्रधर इन्द्रने मरुतोंके साथ वर्षक बलको प्राप्त किया । मरुतोंके साथ इन्द्रने वृष्टि बरसायी और वृत्रका बध करके पृथिवीको अभिषिक्त किया । महान् इन्द्र जिस समय वह कार्य करते हैं, उस समय स्वयं मरुद्गण वृष्टिकी उत्पत्तिके कार्यमें लग जाते हैं ।

८ मरुतोंकी सहायतासे इन्द्र यह कर्म करते हैं । उनका तेज सर्वगन्ता है । वह राक्षसोंको मारते हैं । उनका मन विश्व-व्यापी है । वह क्षिप्र-विजयी हैं । इन्द्रने आकाशसे आकर और सोम पान करके अपने शरीरको बढ़ाया और आयुधसे असुरों (दस्युओं) को मारा ।

१ (अपने मृत पुत्र वाजीसे ऋषि कहते हैं—) तुम्हारा एक अंश यह अग्नि है । एक अंश यह वायु है । तुम्हारा तीसरा अंश ज्योतिर्मय आत्मा है । इन तीन अंशोंके द्वारा तुम अग्नि, वायु और सूर्यमें पैठो । अपने शरीरके प्रवेशके समय तुम कल्याण-मूर्त्ति धारण करो और देवोंमें उन सर्वश्रेष्ठ और पितृ-स्वरुप सूर्यके भुवनमें प्रिय होओ ।

तनूष्टे वाजिन्तन्वं नयन्ती वाममस्मभ्यं धातु शर्म तुभ्यम् ।
अहुतो महो धरुणाय देवान्दिवीव ज्योतिः स्वमामिमीयाः ॥२॥
वाज्यसि वाजिनेना सुवेनीः सुवितः स्तोमं सुवितो दिवं गाः ।
सुवितो धर्म प्रथमानु सत्या सुवितो देवान्सुवितोऽनु पत्म ॥३॥
महिम्न एषां पितरश्चनेशिरे देवा देवेष्वदधुरपि क्रतुम् ।
समविव्यचुरुत यान्यत्विषुरैषां तनूषु निविविशुः पुनः ॥४॥
सहोभिर्विश्वं परिचक्रमू रजः पूर्वा धामान्यमिता मिमानाः ।
तनूषु विश्वा भुवना नि येमिरे प्रासारयन्त पुरुध प्रजा अनु ॥५॥
द्विधा सूनवोऽसुरं स्वर्विदमास्थापयन्त तृतीयेन कर्मणा ।
स्वां प्रजां पितरः पित्र्यं सह आवरेष्वदधुस्तन्तुमाततम् ॥६॥

---

२ वाजी, पृथिवी तुम्हारे शरीरको ग्रहण करती है। वह हमारे लिये प्रीतिजनक हो; तुम्हारा भी कल्याण करें। तुम स्थान-भ्रष्ट न होकर, ज्योति धारण करनेके लिये, देवों और आकाशस्थ सूर्यके साथ अपनी आत्माको मिला दो।

३ पुत्र, तुम बलसे बली और सुन्दर हो। जिस प्रकार तुमने उत्तम स्तोत्र किया था, उसी प्रकार उत्तम स्वर्गमें जाओ। उत्तम धर्मका तुमने अनुष्ठान किया है; इस लिये उत्तम फल पाओ। उत्तम देवता और उत्तम सूर्यके साथ मिलो।

४ हमारे पितर, देवताके समान, महिमाके अधिकारी हुए हैं। उन्होंने देवत्व प्राप्त करके देवोंके साथ क्रिया-कलाप किया है। जो सब ज्योतिर्मय पदार्थ दीप्ति पाते हैं, वे उनके साथ मिल गये हैं; वे देवोंके शरीरमें पैठ गये हैं।

५ अपनी शक्तिसे वे पितर सारे ब्रह्माण्डको घूम चुके हैं। जिन सब प्राचीन भुवनोंमें कोई नहीं जाता, वे वहाँ गये हैं। अपने शरीरसे उन्होंने सारे भुवनोंको आयत्त कर लिया है। प्रजावृन्दके प्रति नाना प्रकारसे अपना प्रभाव विस्तारित किया है।

६ सूर्यके पुत्र-रूप देवोंने तृतीय कार्य (पुत्रोत्पत्ति-रूप) के द्वारा स्वर्गज्ञाता वा सर्वज्ञ और बली सूर्यको दो (प्रातः सायं) प्रकारसे स्थापित किया है। मेरे पितरोंने सन्तानोत्पत्ति करके सन्तानोंके शरीरमें पैतृक बल स्थापित किया। वे चिरस्थायी वंश रख गये।

नावा न क्षोदः प्रदिशः पृथिव्याः स्वस्तिभिरति दुर्गाणि विश्वा ।
स्वां प्रजां बृहदुक्थो महित्वावरेष्वदधादा परेषु ॥७॥



५७ सूक्त

मन देवता । बन्धु, श्रुतबन्धु और विप्रबन्धु आदि ऋषि । गायत्री छन्द ।

मा प्र गाम पथो वयं मा यज्ञादिन्द्र सोमिनः ।
मान्त स्थुर्नो अरातयः ॥१॥
यो यज्ञस्य प्रसाधनस्तन्तुर्देवेष्वाततः । तमाहुतं नशीमहि ॥२॥
मनो न्वाहुवामहे नाराशन्सेन सोमेन । पितॄणां च मन्मभिः ॥३॥
आ त एतु मनः पुनः क्रत्वे दक्षाय जीवसे । ज्योक् च सूर्यं दृशे ॥४॥
पुनर्नः पितरो मनो ददातु दैव्यो जनः । जीवं व्रातं सचेमहि ॥५॥

---

७ जैसे लोग नौकासे जलको पार करते है, जैसे स्थलपर पृथिवीकी भिन्न दिशाका अतिक्रम करते हैं और जैसे कल्याणके द्वारा सारी विपदाओंसे उद्धार होता है, वैसे ही बृहदुक्थ ऋषिने, अपनी शक्तिसे, अपने मृत पुत्रको अग्नि आदि पार्थिव पदार्थों और सूर्य आदि दूरवर्ती पदार्थोंमें मिला दिया ।



१ इन्द्र, हम सुपथसे कुपथमें न जायं। हम सोमवालेके गृहसे दूर न जायं । हमारे बीच शत्रु न आने पावें ।

२ जिन अग्निसे यज्ञको सिद्धि होती हैं और जो, पुत्र-स्वरूप होकर, देवोंके पास तक विस्तृत हैं, उन अग्निका हवन किया जाय और हम उन्हें प्राप्त कर लें ।

३ नराशंस (पितर) के सम्बन्धके सोमके द्वारा हम मनको बुलाते हैं । पितरोंके स्तोत्रके द्वारा मनको बुलाते हैं ।

४ (भ्राता सुबन्धु,) तुम्हारा मन फिर आवे। कार्य करो, बल प्रकट करो । जीवित रहो औ सूर्यके दर्शन करो ।

५ हमारे पूर्व-पुरुष मनको फिरा द और देवोंको फिरा दें ।हम प्राण और उसका सब कुछ आनुषङ्गिक प्राप्त करें ।

वयं सोम ब्रते तव मनस्तनूषु बिभ्रतः । प्रजावन्तः सचेमहि ॥६॥



५८ सूक्त

मृत सुबन्धुका मन, प्राण आदि देवता । सुबन्धुके भ्राता बन्धु आदि ऋषि । अनुष्टुप् छन्द ।

यत्ते यमं वैवस्वतं मनो जगाम दूरकम् ।
तत्त आवर्तयामसीह क्षयाय जीवसे ॥१॥
यत्ते दिवं यत् पृथिवीं मनो जगाम दूरकम् ।
तत्त आवर्तयामसीह क्षयाय जीवसे ॥२॥
यत्ते भूमिं चतुर्भृष्टिं मनो जगाम दूरकम् ।
तत्त आवर्तयामसीह क्षयाय जीवसे ॥३॥
यत्ते चतस्रः प्रदिशो मनो जगाम दूरकम् ।
तत्त आवर्तयामसीह क्षयाय जीवसे ॥४॥
यत्ते समुद्रमर्णवं मनो जगाम दूरकम् ।
तत्त आवर्तयामसीह क्षयाय जीवसे ॥५॥

---

६ सोम, हम देहमें मनको धारण करते हैं । हम सन्तति-युक्त होकर तुम्हारे कार्यमें मिलें ।

---

१ विवस्वान्‌के पुत्र यमके पास, दूरपर, तुम्हारा जो मन गया है, उससे हम लौटा लाते हैं । तुम इस संसारमें निवासके लिये जी रहे हो ।

२ तुम्हारा जो मन अत्यन्त दूर स्वर्ग अथवा पृथिवीपर चला गया है, उसे हम लौटा लाते हैं । तुम संसारमें निवासके लिये जीते हो ।

३ चारो ओर लुढ़क पड़नेवाला जो तुम्हारा मन अतीव दूरदर्शी देशमें गया है, उसे हम लौटाते हैं । तुम संसारमें निवासके लिये जीते हो ।

४ तुम्हारा मन जो चारो ओर अतीव दूरस्थ प्रदेशमें चला गया है, उसको हम लौटाते हैं । तुम संसारमें निवासके लिये जीते हो ।

५ तुम्हारा जो मन अतीव दूरवर्त्ती और जलसे परिपूर्ण समुद्रमें गया है, उसे हम लौटाते हैं । तुम संसारमें निवासके लिये जीवित हो ।

यत्ते मरीचीः प्रवतो मनो जगाम दूरकम् ।
तत्त आवर्तयामसीह क्षयाय जीवसे ॥६॥
यत्ते अपो यदोषधीर्मनो जगाम दूरकम् ।
तत्त आवर्तयामसीह क्षयाय जीवसे ॥७॥
यत्ते सूर्यं यदुषसं मनो जगाम दूरकम् ।
तत्त आवर्तयामसीह क्षयाय जीवसे ॥८॥
यत्ते पर्वतान्बृहतो मनो जगाम दूरकम् ।
तत्त आवर्तयामसीह क्षयाय जीवसे ॥९॥
यत्ते विश्वमिदं जगन्मनो जगाम दूरकम् ।
तत्त आवर्तयामसीह क्षयाय जीवसे ॥१०॥
यत्ते पराः परावतो मनो जगाम दूरकम् ।
तत्त आवर्तयामसीह क्षयाय जीवसे ॥११॥

---

६ तुम्हारा जो मन चारो ओर विकीर्ण किरण-मण्डलमें पैठा हैं, उसे हम लौटाते हैं। संसारमें तुम निवासके लिये वर्त्तमान हो।

७ तुम्हारा जो मन दूरस्थ जलके भीतर वा वृक्षलतादिके मध्यमें गया हैं, उसे हम लौटाते हैं। संसारमें निवासके लिये तुम विद्यमान हो।

८ तुम्हारा जो मन दूरवर्ती सूर्य वा उषाके बोच गया है, उसे हम लौटाते हैं। संसारमें निवासके लिये तुम विद्यमान हो।

९ तुम्हारा जो मन दूरस्थ पर्वतमालाओंके ऊपर चला गया है, उसे हम लौटाते हैं। संसारमें निवासके लिये तुम वर्त्तमान हो।

१० तुम्हारा जो मन इस समस्त विश्वमें अतीव दूर चला गया है, उसे हम लौटाते हैं। संसारमें निवासके लिये तुम हो।

११ तुम्हारा जो मन दूरसे भी दूर, उससे दूर, किसी स्थानपर चला गया है, उसे हम लौटाते हैं। संसारमें निवासके लिये तुम जीते हो।

यत्ते भूतं च भव्यं च मनो जगाम दूरकम् ।
तत्त आवर्तयामसीह क्षयाय जीवसे ॥१२॥

५९ सूक्त

निऋ॒ति असुनीति आदि देवता। बन्धु आदि ऋषि। त्रिष्टुप् पङ्क्ति, महापङ्क्ति आदि छन्द।

प्र तार्यायुः प्रतरं नवीयः स्थातारेव क्रतुमता रथस्य ।
अध च्यवान उत्तवीत्यर्थं परातरं सु निर्ऋतिर्जिहीताम् ॥१॥
सामन्तु राये निधिमन्वन्नं करामहे सु पुरुध श्रवांसि ।
ता नो विश्वानि जरिता ममत्तु परातरं सुनिर्ऋतिर्जिहीताम् ॥२॥
अभीष्वर्यः पौंस्यैर्भवेम द्यौर्न भूमिं गिरयो नाज्रान् ।
ता नो विश्वानि जरिता चिकेत परातरं सु निर्ऋतिर्जिहीताम् ॥३॥

---

१२ तुन्हारा जो मन भूत वा भविष्यत्—किसी दूर स्थानपर चला गया है, उसे हम लौटाते हैं। संसारमें निवासके लिये तुम जीते हो।

---

१ जैसे कर्मकुशल सारथिके होनेपर रथपर चढ़ा व्यक्ति सुख प्राप्त करता है, वैसे ही सुबन्धुकी परमायु यौवनसे युक्त होकर बढ़े। जिसकी आयुका ह्रास होता है, वह अपनी आयुकी वृद्धि चाहता है। निर्ऋति (पापदेवता) दूर हों।

२ परमायुः-स्वरूप सम्पति पानेके लिये, साम-गानके साथ, हम अन्न और भक्षणीय द्रव्यकी राशि इकट्ठी करते हैं। हमने निर्ऋतिकी स्तुति की है। वह सारे अन्नोंके भोजनमें प्रीति प्राप्त करें और दूर देश जायं।

३ बलके द्वारा हम शत्रुओंको हरावेंगे। जैसे पृथ्वीके ऊपर आकाश रहता है, वैसे ही हम शत्रुओंके ऊपर स्थान प्राप्त करें। जैसे मेघकी गति पर्वतके द्वारा रोकी जाती है, वैसे ही हम शत्रु को गति को रोके। हमारे स्तोत्रको निर्ऋति सुनें और दूर चले जायं।

मो षु णः सोम मृत्यवे परादाः पश्येम नु सूर्यमुच्चरन्तम् ।
द्युभिर्हितो जरिमा सूनो अस्तु परातरं सु निर्ऋतिर्जिहीताम् ॥४॥
असुनीते मनो अस्मासु धारय जीवातवे सु प्रतिरा न आयुः ।
रारन्धि नः सूर्यस्य सन्दृशि घृतेन त्वं तन्वं वर्धयस्व ॥५॥
असुनीते पुनरस्मासु चक्षुः पुनः प्राणमिह नो धेहि भोगम् ।
ज्योक् पश्येम सूर्यमुच्चरन्तमनुमते मृळया नः स्वस्ति ॥६॥
पुनर्नो असुं पृथिवी ददातु पुनर्द्यौर्देवी पुनरन्तरिक्षम् ।
पुनर्नः सोमस्तन्वं ददातु पुनः पूषा पथ्यां या स्वस्तिः ॥७॥
शं रोदसी सुबन्धवे यह्वी ऋतस्य मातरा ।
भरतामप यद्रपो द्यौः पृथिवि क्षमा रपो मो षु ते किं चनाममत् ॥८॥

---

४ सोम, हमें मृत्युके हाथमें नहीं देना। हम सूर्यका उदय देख सकें। हमारी वृद्धावस्था दिन दिन सुखसे बीते। निर्ऋति दूर हों।

५ असुनीति (प्राण-नेत्री) देवी, हमारी ओर मन करो। हम जीवित रहें; इसलिये हमें उत्कृष्ट परमायु प्रदान करो। जहाँ तक सूर्यकी दृष्टि है, वहाँ तक हमें रहने दो। हम तुम्हें घी देते हैं, उससे अपना शरीर पुष्ट करो।

६ असुनीति, हमें फिर नेत्र दो। फिर हमारे प्राणको हमारे पास उपस्थित करो। हमें भोग करने दो। हम चिर काल तक सूर्योदय देख सकें। अनुमति, जिससे हमारा विनाश न हो, इस प्रकार हमें सुखी करो।

७ पुनः पृथिवी हमको प्राण दान करें। फिर द्युलोक और अन्तरिक्ष हमें प्राण दें। सोम हमें फिर शरीर दें। पूषा हमें ऐसा हितकर वाक्य प्रदान करें, जिससे हमारा कल्याण हो।

८ महती और मातृ-स्वरूपा द्यावापृथिवी सुबन्धुका कल्याण करें। द्युलोक और विस्तृत पृथिवी सारे अमङ्गलोंको दूर कर दें। सुबन्धु, वह किसी भी प्रकार तुम्हारा अनिष्ट न कर सकें।

अव द्वके अव त्रिका दिवश्चरन्ति भेषजा ।
क्षमा चरिष्णवेककं भरतामप यद्रपो द्यौः
पृथिवि क्षमा रपो मो षु ते किं चनाममत् ॥९॥
समिन्द्रेरय गामनड्वाहं य आवहदुशीनराण्या अनः ।
भरतामप यद्रपो द्यौः पृथिवि क्षमा रपो मो षु ते किं चनाममत् ॥१०॥



६० सूक्त

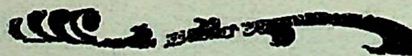
राजा असमाति आदि देवता । बन्धु आदि ऋषि । गायत्री आदि छन्द ।

आ जनं त्वेषसंदृशं माहीनानामुपस्तुतम् । अगन्म बिभ्रतो नमः ॥१॥
असमातिं नितोशनं त्वेषं निययिनं रथम् । भजेरथस्य सत्पतिम् ॥२॥

---

९ स्वर्गमें जो दो वा तीन औषध हैं, (उनमें दोको अश्विनीकुमार और तीनको सरस्वती व्यवहारमें लाती हैं,) उनमें एक पृथिवीपर विचरण करता है । (फलतः एक ही औषध है) । सो सब सुबन्धुकी प्राण-रक्षा करें । द्युलोक और विस्तृत पृथिवी सारे अमङ्गलोंको दूर कर दें । सुबन्धु, किसी भी प्रकारसे तुम्हारा अनिष्ट न कर सकें ।

१० इन्द्र, जो नृप उशीनरकी पत्नी (वा ओषधि) का शकट ले गया था, उसे प्रेरित करो । द्युलोक और विस्तृत पृथिवी सारे अमङ्गलोंको दूर कर दें । सुबन्धु, किसी भी प्रकारसे तुम्हारा अनिष्ट न कर सकें ।



१ असमाति राजाका जनपद अतीव उज्ज्वल है । महान् लोग इस देशकी प्रशंसा करते हैं । नम्र होकर हम उस देशमें गये ।

२ शत्रु-संहार करनेवाले असमाति राजाकी मूर्त्ति अत्यन्त प्रदीप्त है । रथपर चढ़ने पर जैसे अनेक अभिप्राय सिद्ध होते हैं, वैसे ही असमाति राजाके पास जानेपर अनेक अभिलाष सिद्ध होते हैं । उन्होंने भजेरथ राजाके वंशमें जन्म लिया है । वह शिष्ट-पालक है ।

यो जनान्महिषाँइवातितस्थौ पवीरवान्। उतापवीरवान्युधा ॥३॥
यस्येक्ष्वाकुरुप व्रते रेवान्मराय्येधते। दिवीव पञ्च कृष्टयः ॥४॥
इन्द्र क्षत्रासमातिषु रथप्रोष्ठेषु धारय। दिवीव सूर्यं दृशे ॥५॥
अगस्त्यस्य नद्भ्यः सप्ती युनक्षि रोहिता।
पणीन्न्यक्रमीरभि विश्वान्राजन्नराधसः ॥६॥
अयं मातायं पितायं जीवातुरागमत्।
इदं तव प्रसर्पणं सुबन्धवेहि निरिहि ॥७॥
यथा युगं वरत्रया नह्यन्ति धरुणाय कम्।
एवा दाधार ते मनो जीवातवे न मृत्यवेऽथो अरिष्टतातये ॥८॥
यथेयं पृथिवी मही दाधारेमान्वनस्पतीन्।
एवा दाधार ते मनो जीवातवे न मृत्यवेऽथो अरिष्टतातये ॥९॥

३ वह हाथमें तलवार धारण करें वा न करें। उनका ऐसा बल-वीर्य है कि, जैसे सिंह भैसों को मार गिराता है, वैसे ही वह मनुष्योंको गिरा देते हैं।

४ धनी और शत्रु-संहारक इक्ष्वाकु राजा रक्षा-कार्यमें नियुक्त हैं। पञ्च (चार वर्ण और निषाद) मनुष्य स्वर्ग-सुखका भोग करें।

५ इन्द्र, जैसे सबके दर्शनके लिये तुमने आकाशमें सूर्यको रख दिया है, वैसे ही रथारूढ़ असमाति राजाका अनुगामी होनेके लिये वीरोंको नियुक्त करो।

६ राजन्, अगस्त्यके दौहित्रों वा आनन्दी बन्धु आदिके लिये दो लोहित घोड़ोंको रथमें जोतो। जो सब व्यवसायी नितान्त कृपण हैं, कभी दान नहीं करते, उन सबको हराओ।

७ जो अग्नि आये हैं, वे माता, पिता और प्राणदाता औषध हैं। सुबन्धु, तुम्हारा यही शरीर है। इसमें आकर बैठो।

८ जैसे रथ धारण करनेके लिये रज्जु (पाश) से दोनों काष्ठोंको बाँधते हैं, वैसे ही अग्निने तुम्हारे मनको धारण कर रखा है, ताकि तुम जीवित और कल्याण-स्वरूप बनो और तुम्हारी मृत्यु दूर हो।

९ जैसे यह विस्तीर्ण पृथिवी विशाल-विशाल वृक्षोंको धारण किये हुए है, वैसे ही अग्निने तुम्हारे मनको धारण कर रखा है, ताकि तुम जीवित और कल्याण-स्वरूप रहो और तुम्हारी मृत्यु दूर हो।

यमादहं वैवस्वतात् सुबन्धोर्मन आभरम् ।
जीवातवे न मृत्यवेऽथो अरिष्टतातये ॥१०॥
न्यग्वातोऽववाति न्यक्तपति सूर्यः ।
नीचीनमघ्न्या दुहे न्यग् भवतु ते रपः ॥११॥
अयं मे हस्तो भगवानयं मे भगवत्तरः ।
अयं मे विश्वभेषजोऽयं शिवाभिमर्शनः ॥१२॥

५ अनुवाक । ६१ सूक्त

विश्वदेव देवता । मनु-पुत्र नाभा नेदिष्ठ ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

इदमित्था रौद्रं गूर्तवचा ब्रह्म क्रत्वा शच्यामन्तराजौ ।
क्राणा यदस्य पितरा मंहनेष्ठाः पर्षत् पक्थे अहन्ना सप्त होतॄन् ॥१॥

१० विवस्वान्के पुत्र यमराजसे मैंने सुबन्धुका मन अपहृत किया है, इससे वह जीवित और कल्याण-स्वरूप होंगे और उनकी मृत्यु दूर होगी ।

११ वायु द्युलोकसे नीचेके लोकमें बहते हैं, सूर्य ऊपरसे नीचो तपते हैं । गायका दूध नीचे दूहा जाता है। वैसे ही हे सुबन्धु, तुम्हारा अकल्याण नीचे गमन करे ।

१२ मेरा हाथ क्या ही सौभाग्यशाली है! यह अत्यन्त सौभाग्यशाली है। यह सबके लिये भेषज है; इसके स्पर्शसे कल्याण होता है।

१ नाभा नेदिष्टके माता, पिता, भ्राता आदि, विषय-विभाग करते समय, नाभा नेदिष्टको भाग न देकर रुद्रकी स्तुति करने लगे । इससे नाभा नेदिष्ट रुद्र-स्तव करनेको उद्यत होकर अङ्गिरा लोगोंके यज्ञमें उपस्थित हुए और यज्ञके छठे दिनमें वह लोग जो भूल गये थे, वह सब सात होताओंसे कहकर यज्ञ समाप्त किया।

स इद्दानाय दभ्याय वन्वन्च्यवानः सूदैरमिमीत वेदिम् ।
तूर्वयाणो गूर्तवचस्तमः क्षोदो न रेत इतऊति सिञ्चत् ॥२॥

मनो न येषु हवनेषु तिग्मं विपः शच्या वनुथो द्रवन्ता ।
आ यः शर्याभिस्तुविनृम्णो अस्याश्रीणीतादिशं गभस्तौ ॥३॥

कृष्णा यद्गोष्वरुणीषु सीदद्दिवो नपाताश्विना हुवे वाम् ।
वीतं मे यज्ञमागतं मे अन्नं ववन्वांसा नेषमस्मृतध्रू ॥४॥

प्रथिष्ट यस्य वीरकर्ममिष्णदनुष्ठितं नु नर्यो अपौहत् ।
पुनस्तदा वृहति यत् कनाया दुहितुरा अनुभृतमनर्वा ॥५॥

मध्या यत् कर्त्वमभवदभीकेक ामं कृण्वाने पितरि युवत्याम् ।
मनानग्रेतो जहतुर्वियन्ता सानौ निषिक्तं सुकृतस्य योनौ ॥६॥

---

२ रुद्रदेव स्तोताओंको धन देनेके लिये और शत्रुओंको नष्ट करनेके लिये उन्हें अस्त्रादि देते हुए वेदीपर जाकर बैठ गये । जैसे मेघ जल बरसाता है, वैसे ही रुद्रदेव उपस्थित होकर, वक्तृता देते हुए, चारो ओर अपनी क्षमताका प्रदर्शन करने लगे ।

३ अश्विद्वय, मैं यज्ञमें प्रवृत्त हुआ हूं । जो अध्वर्यु मेरे हाथकी अँगुलियाँ पकड़ कर और विस्तृत हविका संग्रह करके, तुम्हारा नाम लेते हुए, चरु पाक करता है, उसी स्तोता अध्वर्युका यज्ञीय उद्योग देखकर, मनके समान द्रुत वेगसे, तुमलोग यज्ञमें जाते हो ।

४ जिस समय रात्रिका अन्धकार नष्ट होता है और प्रातः कालकी लाल आभा दिखाई देने लगती है, उस समय, हे द्युलोक-पुत्र अश्विद्वय, तुम्हें मैं बुलाता हूं । तुम हमारे यज्ञमें पधारो । मेरा अन्न लो । दो ग्राहक अश्वोंके समान उसे खाओ । हमारा अनिष्ट नहीं करना ।

५ जो प्रजापतिका वीर्य पुत्रोत्पादनमें समर्थ है, वह बढ़कर निकला । प्रजापतिने मनुष्योंके हितके लिये रेतका त्याग किया । अपनी सुन्दरी कन्या (उषा) के शरीरमें ब्रह्मा वा प्रजापतिने उस शुक्र (वीर्य वा रेत) का सेक किया ।

६ जिस समय पिता युवती कन्या (उषा) के ऊपर पूर्वोक्त रूपसे रतिकामी हुए और दोनोंका संगमन हुआ, उस समय दोनोंके परस्पर-संगमनसे अल्प शुक्रका सेक हुआ । सुकर्मके आधार-स्वरूप एक उन्नत स्थानमें उस शुक्रका सेक हुआ ।

पिता यत् स्वां दुहितरमधिष्कन् क्ष्मया रेतः संजग्मानो निषिंञ्चत् ।
स्वाध्योऽजनयन्ब्रह्म देवा वास्तोष्पतिं व्रतपां निरतक्षन् ॥७॥
स ईं वृषा न फेनमस्यदाजौ स्मदा परैदप दभ्रचेताः ।
सरत् पदा न दक्षिणा परावृङ् न ता नु मे पृशन्यो जगृभ्रे ॥८॥
मक्षु न वह्निः प्रजाया उपब्दिरग्निं न नग्न उप सीददूधः ।
सनितेध्मं सनितोत वाजं स धर्ता जज्ञे सहसा यवीयुत् ॥९॥
मक्षू कनायाः सख्यं नवग्वा ऋतं वदन्त ऋतयुक्तिमग्मन् ।
द्विबर्हसो य उप गोपमागुरदक्षिणासो अच्युता दुधुक्षन् ॥१०॥
मक्षू कनायाः सख्यं नवीयो राधो न रेत ऋतमित्तुरण्यन् ।
शुचि यत्ते रेक्ण आयजन्त सबर्दुघायाः पय उस्रियायाः ॥११॥

७ जिस समय पिताने अपनी कन्या (उषा) के साथ संभोग किया, उस समय पृथिवीके साथ मिलकर शुक्रका सेक किया। सुकृती देवोंने इससे व्रतरक्षक ब्रह्म (वास्तोष्पति वा रूद्र) का निर्माण किया।

८ जैसे इन्द्र, नमुचिके वध-कालमें, युद्धमें फेन फेंकते हुए आये थे, वैसे ही मेरे पाससे वास्तोष्पतिने प्रतिगमन किया। वह जिस पैरसे आये थे, उसीसे लौट गये। अङ्गिरा लोगोंने मुझे दक्षिणा-स्वरुप जो गायें दी थीं, उन्हें उन्होंने दूर किया। अनायास ग्रहण-समर्थ होनेपर भी उन्होने गायों को नहीं लिया।

९ प्रजाके उत्पीड़क और अग्निके समान दाहक राक्षस आदि सहसा इस यज्ञमें नहीं आ सकते; क्योंकि इस यज्ञकी रक्षा रुद्र कर रहे हैं। रातको भी नग्न राक्षस यज्ञीय अग्निके पास नहीं आ सकते। यज्ञके रक्षक अग्नि काठोंको लेते हुए और अन्नका वितरण करते हुए आविर्भूत हुए और राक्षसोंके साथ युद्धमें प्रवृत्त हुए।

१० नौ मास तक यज्ञानुष्ठान करते करते अङ्गिरा लोग गायें पाया करते हैं। उन्होंने कमनीय स्तुति की सहायतासे, यज्ञ-वचनोंको कहते कहते, यज्ञकी समाप्ति की। इह लोक और परलोक, दोनों स्थानों में वृद्धि प्राप्त की और इन्द्र के पास गये। उन्होंने दक्षिणा-विहीन यज्ञ (सत्र नामक यज्ञ) करके अविनाशी फल प्राप्त किया।

११ अङ्गिरा लोगोंने जिस समय अमृतके समान दूध देनेवाली गायोंके उज्ज्वल और पवित्र दूधको यज्ञमें दिया, उस समय सुन्दर स्तोत्रोंके द्वारा, नयी सम्पदाके समान, अभिषिक्त वृष्टि—जल प्राप्त किया।

पश्वा यत् पश्चा वियुता बुधन्तेति ब्रवीति वक्तरी रराणः ।
वसोर्वसुत्वा कारवोऽनेहा विश्वं विवेष्टि द्रविणमुप क्षु ॥१२॥
तदिन्न्वस्य परिषद्वानो अग्मन् पुरू सदन्तो नार्षदं बिभित्सन् ।
वि शुष्णस्य संग्रथितमनर्वा विदत् पुरुप्रजातस्य गुहा यत् ॥१३॥
भर्गो ह नामोत यस्य देवाः स्वर्ण ये त्रिषधस्थे निषेदुः ।
अग्निर्ह नामोत जातवेदाः श्रुधी नो होतर्ऋतस्यहोताध्रुक् ॥१४॥
उत त्या मे रौद्रावर्चिमन्ता नासत्याविन्द्र गूर्तये यजध्यै ।
मनुष्वद्वृक्तबर्हिषे रराणा मन्दू हितप्रयसा विक्षु यज्यू ॥१५॥
अयं स्तुतो राजा वन्दि वेधा अपश्च विप्रस्तरतिः स्वसेतुः ।
स कक्षीवन्तं रेजयत् सो अग्निं नेमिं न चक्रमर्वतो रघुद्रु ॥१६॥

---

१२ ऐसा कहा गया है कि, इन्द्र यज्ञकर्त्ताका इतना स्नेह करते हैं कि, जिसका पशु खो गया है, उसके जानते या अनजानते ही, अतीव धनी, कुशल और निष्पाप पशुको खोज देते हैं ।

१३ सुस्थिर इन्द्र जिस समय बहु—विस्तारक शुष्णके निगूढ़ मर्मको खोजकर उसे मारते हैं अथवा नृषदके पुत्रको विदीर्ण करते हैं, उस समय उनके अनुचर, नाना प्रकारसे, उन्हें घेरकर उनके साथ जाते हैं ।

१४ जो देवता, स्वर्गके समान, यज्ञ—स्थान (कुश) में बैठते हैं, वह अग्निके तेजका नाम "भर्ग" रखते हैं । अग्निके एक तेजका नाम "जातवेदा" है । होम-निष्पादक अग्नि, तुम्हीं यज्ञके होता हो । तुम्हीं, अनुकूल होकर, हमारे आह्वानको सुनते हो ।

१५ इन्द्र, वे दो दीप्त—मूर्त्ति और रुद्रपुत्र अश्विद्वय मेरे स्तोत्र और यज्ञको ग्रहण करें । जैसे वे मनुके यज्ञमें प्रसन्न होते हैं, वैसे ही मेरे यज्ञमें भी प्रसन्न हों । मैंने कुश बिछाया है । प्रजाको धन दें और यज्ञका ग्रहण करें ।

१६ सवश्रेष्ठ सोमकी स्तुति सब करते हैं—हम भी करते हैं । क्रिया-कुशल सोम स्वयं ही सेतु हैं । वह जलको पार करते हैं । जैसे शीघ्रगामी घोड़े चक्रोंकी परीधिको कँपाते हैं, वैसे ही कक्षीवान् और अग्निको भी कँपाते हैं ।

स द्रिबन्धुर्वैतरणो यष्टा सबर्धुं धेनुमस्वं दुहध्यै ।
सं यन्मित्रावरुणा वृञ्ज उक्थैर्ज्येष्ठेभिरर्यमणं वरूथैः ॥१७॥
तद्बन्धुः सूरिर्दिवि ते धियन्धा नाभा नेदिष्ठो रपति प्रवेनन् ।
सा नो नाभिः परमास्य वा घाहं तत्पश्चा कतिथश्चिदास ॥१८॥
इयं मे नाभिरिह मे सधस्थमिमे मे देवा अयमस्मि सर्वः ।
द्विजा अह प्रथमजा ऋतस्येदं धेनुरदुहज्जायमाना ॥१९॥
अधासु मन्द्रो अरतिर्विभावाव स्यति द्विवर्तनिर्वनेषाट् ।
ऊर्ध्वा यच्छ्रेणिर्न शिशुर्दन्मक्षू स्थिरं शेवृधं सूत माता ॥२०॥
अधा गाव उपमातिं कनाया अनु श्वान्तस्य कस्य चित् परेयुः ।
श्रुधि त्वं सुद्रविणो नस्त्वं याळाश्वघ्नस्य वावृधे सूनृताभिः ॥२१॥

१७ अग्नि यह लोक, परलोक—दोनों स्थानोंके हितैषी हैं । वह तारक और यज्ञ—कर्त्ता है । जब कि, अमृतके समान दूध देनेवाली गाय दूध नहीं देती, तब उसे प्रसववती करके वह दुग्धदायिनी बनाते हैं । मित्र, वरुण और आर्यमाको उत्तमोत्तम स्तोत्रोंके द्वारा संतुष्ट किया जाता है ।

१८ स्वर्गस्थ सूर्य, मैं तुम्हारा बन्धु नाभा नेदिष्ट हूं । तुम्हारी स्तुति करता हूं । मेरी इच्छा है कि, मैं गायें प्राप्त करूं । द्युलोक [स्वर्ग] हमारा और सूर्यका उत्तम उत्पत्ति-स्थान है । सूर्यसे मेरा कितने पुरुषका अन्तर ही है ?*

१९ द्युलोक ही मेरा उत्पत्ति-स्थान है; यहीं मैं रहता हूं । सारे देवता वा किरणें मेरे अपने हैं । मैं सब हूं । द्विज लोग सत्यरूप ब्रह्मासे प्रथम उत्पन्न हुए हैं । यज्ञ-स्वरूपा गाय वा माध्यमिकी वाक्ने उत्पन्न होकर यह सब उत्पन्न किया ।

२० आनन्दके साथ जाकर अग्नि चारो ओर अपना स्थान ग्रहण करते हैं । यह उज्ज्वल, इस लोक और परलोकमें सहायक और काठोंको हरानेवाले हैं । इनकी ज्वाला ऊपर उठती है । अग्नि स्तुत्य हैं । अग्निकी माता अरणि इन सुस्थिर और सुखावह अग्निको शीघ्र उत्पन्न करती है ।

२१ उत्तमोत्तम स्तोत्र कहते-कहते मुझ नाभा नेदिष्टको श्रान्ति हो गयी है । मेरी स्तुतियाँ इन्द्रके पास गयी हैं । धनी अग्नि, सुनो । हमारे इन इन्द्रका यज्ञ करो । मैं अश्वघ्न वा अश्वमेध यज्ञ करनेवाले (मनु) का पुत्र हूं । मेरी स्तुतिसे तुम बढ़ते हो ।

*सूर्यके पुत्र मनु हैं और मनुके नाभा नेदिष्ट हैं ।

अध त्वमिन्द्र विद्ध्यस्मान्महो राये नृपते वज्रबाहुः ।
रक्षा च नो मघोनः पाहि सूरीननेहसस्ते हरिवो अभिष्टौ ॥२२॥
अध यद्राजाना गविष्टौ सरत् सरण्युः कारवे जरण्युः ।
विप्रः प्रेष्ठः स ह्येषां बभूव परा च वक्षदुतपर्षदेनान् ॥२३॥
अधा न्वस्य जेन्यस्य पुष्टौ वृथा रेभन्त ईमहे तदू नु ।
सरण्युरस्य सूनुरश्वो विप्रश्चासि श्रवसश्च सातौ ॥२४॥
युवोर्यदि सख्यायास्मे शर्धाय स्तोमं जुजुषे नमस्वान् ।
विश्वत्र यस्मिन्ना गिरः समीचीः पूर्वीव गातुर्दाशत् सूनृतायै ॥२५॥
स गृणानो अद्भिर्देववानिति सुबन्धुर्नमसा सूक्तैः ।
वर्धदुक्थैर्वचोभिरा हि नूनं व्यध्वैति पयस उस्रियायाः ॥२६॥

२२ वज्रधर और नरेन्द्र इन्द्र, तुम जानो कि, हमने प्रचुर धनकी कामना की है। हम तुम्हारी स्तुति करते और तुम्हें हवि देते हैं। हमारी रक्षा करो। हरि नामके दो घोड़ों वाले इन्द्र, तुम्हारे पास जाकर हम अपराधी न हों।

२३ दीप्त मूर्त्तिवाले मित्र और वरुण, गाय पानेकी इच्छासे अङ्गिरा लोग यज्ञ करते थे। सर्वग नाभा नेदिष्ट स्तोत्राभिलाषी होकर उनके निकट गया। मैं (नाभा नेदिष्ट) ने स्तोत्र किया और यज्ञको समाप्त किया। इसी लिये मैं उनका अत्यन्त प्रिय विप्र हुआ हूं।

२४ इस समय हम, गोधन पानेकी इच्छासे, अनायास ही, स्तुति करते हुए जयशील वरुणके पास जाते हैं। शीघ्रगामी अश्व उन वरुणका पुत्र हैं। वरुण, तुम मेधावी और अन्न देनेवाले हो।

२५ मित्र और वरुण, अन्नवान् पुरोहित स्तुति करते हैं। इस लिये कि, तुम हमारे प्रति अनुकूल होगे। तुम्हारा बन्धुत्व अतीव हितकर है! तुम्हारा बन्धुत्व पानेपर सारे स्थानोंमें स्तोत्र-वाक्य उच्चारित होंगे। जैसे चिर-परिचित पथ सुखकर होता है, वैसे ही तुम्हारा बन्धुत्व हमारी स्तुतियोंको सुखकर करे।

२६ परम बन्धु वरुण, देवोंके साथ, उत्तमोत्तम स्तोत्र और नमस्कार प्राप्त करके प्रवृद्ध हों। गायके दूधकी धारा उनके यज्ञके लिये बहे।

त ऊ षु णो महो यजत्रा भूत देवास ऊतये सजोषाः ।
ये वाजाँ अनयता वियन्तो ये स्था निचेतारो अमूराः ॥२७॥

२७ देवो, तुम्हीं यज्ञपानेके अधिकारी हो । हमारी भली भाँति रक्षाके लिये, तुम सब मिलो । अङ्गिरा लोगो, उद्योगी होकर तुमने मुझे अन्न दिया है । तुम्हारा मोह विनष्ट हो गया है । इस समय तुम गोधन प्राप्त करो ।

प्रथम अध्याय समाप्त

द्वितीय अध्याय

६२ सूक्त

विश्वदेव आदि देवता। नाभा नेदिष्ठ ऋषि। जगती आदि छन्द।

ये यज्ञेन दक्षिणया समक्ता इन्द्रस्य सख्यममृतत्वमानश।
तेभ्यो भद्रमङ्गिरसो वो अस्तु प्रति गृभ्णीत मानवं सुमेधसः ॥१॥
य उदाजन् पितरो गोमयं वस्वृतेनाभिन्दन् परिवत्सरे बलम्।
दीर्घायुत्वमङ्गिरसो वो अस्तु प्रतिगृभ्णीत मानवं सुमेधसः ॥२॥
य ऋतेन सूर्यमारोहयन्दिव्यप्रथयन् पृथिवीं मातरं वि।
सु प्रजास्त्वमङ्गिरसो वो अस्तु प्रतिगृभ्णीत मानवं सुमेधसः ॥३॥
अयं नाभा वदति वल्गु वो गृहे देवपुत्रा ऋषयस्तच्छृणोतन।
सुब्रह्मण्यमङ्गिरसो वो अस्तु प्रतिगृभ्णीत मानवं सुमेधसः ॥४॥

---

१ अङ्गिरा लोगो, तुम लोग यज्ञीय द्रव्य (हवि आदि) और दक्षिणासे, एक साथ, इन्द्रका बन्धुत्व और अमरत्व प्राप्त कर चुके हो। तुम्हारा कल्याण हो। सुधी अङ्गिरोगण, इस समय तुम मुझ मनु-पुत्रको ग्रहण करो। मैं भली भाँति यज्ञ करूँगा।

२ अङ्गिरोगण, तुम लोग हमारे पितृ-सदृश हो। तुम लोग अपहृत गायको ले आये थे। तुम लोगोंने वर्ष भर यज्ञ करके "बल" नामक असुरको नष्ट किया था। तुम लोग दीर्घायु बनो। अङ्गिरोगण, इस समय तुम मुझे मनु-पुत्र (मानव) को ग्रहण करो। मैं भली भाँति यज्ञ करूँगा।

३ तुम लोगोंने सत्यरूप यज्ञके द्वारा द्युलोकमें सूर्यको स्थापित किया है और सबकी निर्मात्री पृथिवीको प्रसिद्ध किया है। तुम्हें सन्तति हो। अङ्गिरोगण, इस समय तुम मुझ मानवको ग्रहण करो। मैं भली भाँति यज्ञ करूँगा।

४ देवपुत्र ऋषियो (अङ्गिरा लोगो), यह नाभा नेदिष्ठ तुम्हारे यज्ञमें कल्याणमय वचन कहता है। सुनो। तुम लोग शोभन ब्रह्म-तेज प्राप्त करो अङ्गिरोगण, इस समय तुम मुझ मानवको ग्रहण करो। मैं भली भाँति यज्ञ करूँगा।

विरूपास इदृषयस्त इद्गम्भीरवेपसः ।
ते अङ्गिरसः सूनवस्ते अग्नेः परि जज्ञिरे ॥५॥
ये अग्नेः परि जज्ञिरे विरूपासो दिवस्परि ।
नवग्वो नु दशग्वो अङ्गिरस्तमः सचा देवेषु मंहते ॥६॥
इन्द्रेण युजा निःसृजन्त वाघतो व्रजं गोमन्तमश्विनम् ।
सहस्रं मे ददतो अष्टकर्ण्यः श्रवो देवेष्वक्रत ॥७॥
प्र नूनं जायतामयं मनुस्तोक्मेव रोहतु ।
यः सहस्रं शताश्वं सद्यो दानाय मंहते ॥८॥
न तमश्नोति कश्चन दिवइव सान्वारभम् ।
सावर्ण्यस्य दक्षिणा वि सिन्धुरिव पप्रथे ॥९॥
उत दासा परिविषे स्मद्दिष्टी गोपरीणसा । यदुस्तुर्वश्च मामहे ॥१०॥

५ ये ऋषि लोग नाना-रूप हैं। अङ्गिरा लोग गम्भीर कर्मवाले हैं । अङ्गिरा लोग अग्निके पुत्र हैं। ये चारो ओर प्रादुर्भूत हुए हैं ।

६ जो विविध रूप अङ्गिरा लोग अग्निके द्वारा द्युलोकमें चारो ओर प्रादुर्भुत हुए, उनमेंसे किसीने नौ मास तक और किसीने दस मास तक यज्ञ करनेके पश्चात् गोधन प्राप्त किया । देवोंके साथ अवस्थित अङ्गिरा लोगोंमें श्रेष्ठ अङ्गिरा मुझे धन देते हैं ।

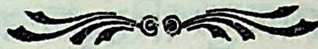
७ कर्मकर्त्ता अङ्गिरा लोगोंने इन्द्रकी सहायता प्राप्त करके अश्वों और गौओंसे युक्त गोष्ठका उद्धार किया । उनके कान लम्बे-लम्बे हैं । उन्हों ने एक सहस्र गायें मुझे देकर देवोंके लिये यज्ञीय अश्व दिया ।

८ जलसे सींचे हुए वीजके समान कर्म-फल-युक्त सावर्णि मनु बढ़ें । मनु, इसी समय, सौ अश्व और सहस्र गायें अभी देनेको प्रस्तुत हैं ।

९ मनुके समान कोई भी दान देनेमें समर्थ नहीं है । स्वर्गके उच्च प्रदेशके समान वह उन्नत भावसे अवस्थित हैं। सावर्णि मनुका दान, नदीके समान, सर्वत्र विस्तृत है ।

१० कल्याणकारक, गौओंसे युक्त और दासके समान स्थित यदु और तुर्व नामक राजर्षि मनुके भोजनके लिये पशु देते हैं ।

सहस्रदा ग्रामणीर्मा रिषन्मनुः सूर्येणास्य यतमानैतु दक्षिणा ।
सावर्णेर्देवाः प्रतिरन्त्वायुर्यस्मिन्नश्रान्ता असनाम वाजम् ॥११॥



६३ सूक्त

पथ्या और स्वस्ति देवता । प्लुतिके पुत्र गय ऋषि । जगती और त्रिष्टुप् छन्द ।

परावतो ये दिधिषन्त आप्यं मनुप्रीतासो जनिमा विवस्वतः ।
ययातेर्ये नहुष्यस्य बर्हिषि देवा आसते ते अधिब्रुवन्तु नः ॥१॥
विश्वा हि वो नमस्यानि वन्द्या नामानि देवा उत यज्ञियानि वः ।
ये स्थ जाता अदितेरद्भ्यस्परि ये पृथिव्यास्ते म इह श्रुता हवम् ॥२॥
येभ्यो माता मधुमत् पिन्वते पयः पीयूषं द्यौरदितिरद्रिबर्हाः ।
उक्थशुष्मान्वृषभरान्त्स्वप्नसस्ताँ आदित्याँ अनुमदा स्वस्तये ॥३॥

---

११ मनु सहस्र गौओंके दाता और मनुष्योंके नेता हैं। उनका कोई अनिष्ट नहीं कर सकता। मनुकी दक्षिणा सूर्यके साथ तीनों लोकोंमें प्रसिद्ध हो। सावर्णि (सवर्ण-पुत्र) मनु की आयु देवता लोग बढ़ावें। सारे कर्म करनेवाले हम अन्न प्राप्त करें।

---

१ जो सब देवता दूर देशसे आकर मनुष्योंके साथ मैत्री करते हैं, जो देवता, प्रसन्न किये जाकर, विवस्वान्के पुत्र मनुकी सन्तानोंको धारण करते हैं और जो देवता नहुषपुत्र ययाति राजाके यज्ञमें उपविष्ट होते हैं, वे धनादि-प्रदानके द्वारा हमें सम्मान-युक्त करें।

२ देवो, तुम्हारे सब नाम नमस्कारके योग्य, स्तुत्य और यज्ञ-योग्य हैं। जो देवता अदिति, जल वा पृथिवीसे उत्पन्न हुए हैं, वे तुम लोग मेरे आह्वानको सुनो।

३ सबको बनानेवाली पृथिवी जिन देवोंके लिये मधुर दुग्ध बहाती हैं औ जिनके लिये मेघवान् और अविनाशी आकाश अमृतको धारण करता है, उन सब अदिति-पुत्र देवोंकी स्तुति करो। इससे मङ्गल होगा। उनकी शक्ति प्रशंसनीय है। वे वृष्टिको ले आते हैं। उनका कार्य अत्यन्त सुन्दर है।

नृचक्षसो अनिमिषन्तो अर्हणा बृहद्देवासो अमृतत्वमानशुः ।
ज्योतीरथा अहिमाया अनागसो दिवो वर्ष्माणं वसते स्वस्तये ॥४॥
सम्राजो ये सुवृधो यज्ञमाययुरपरिह्वृता दधिरे दिवि क्षयम् ।
ताँ आविवास नमसा सुवृक्तिभिर्महो आदित्याँ अदितिं स्वस्तये ॥५॥
को वः स्तोमं राधति यं जुजोषथ विश्वेदेवासो मनुषो यति ष्ठन ।
को वोऽध्वरं तुविजाता अरं करद्यो नः पर्षदत्यंहः स्वस्तये ॥६॥
येभ्यो होत्रां प्रथमामायेजे मनुः समिद्धाग्निर्मनसा सप्त होतृभिः ।
त आदित्या अभयं शर्म यच्छत सुगा नः कर्त सुपथा स्वस्तये ॥७॥
य ईशिरे भुवनस्य प्रचेतसो विश्वस्य स्थातुर्जगतश्च मन्तवः ।
ते नः कृतादकृतादेनसस्पर्यद्या देवासः पिपृता स्वस्तये ॥८॥

४ कर्मनिष्ठ मनुष्योंके बिना पलक गिराये दर्शकने देवता लोगोंके सेवनके लिये व्यापक अमृतत्व प्राप्त किया है। उनका रथ ज्योतिर्मय है। उनके कार्यमें विघ्न नहीं है; वे निष्पाप हैं। लोगोंके मङ्गलके लिये वह उन्नत देशमें रहते हैं।

५ अपने तेजसे विराजमान और सुप्रवृद्ध जो देवता यज्ञमें आते हैं और जो अहिंसित होकर द्युलोकमें रहते हैं, उन सब महान् देवों और अदितिका कल्याणके लिये नमस्कार और शोभन स्तुतियोंसे सेवन करो।

६ देवो, मुझे छोड़कर तुम लोगोंकी स्तुति कौन कर सकता है? ज्ञाता और सन्तानवाले देवो, जो यज्ञ पापसे बचाकर कल्याण देता है, मुझे छोड़कर उस यज्ञका आयोजन कौन कर सकता है?

७ अग्निको प्रज्वलित करके मनुने, श्रद्धावान् चित्तसे, सात होताओंके साथ, जिन देवोंको उत्तम होमीय द्रव्य दिया है, वे सब देवता हमें अभय दें, सुखी करें, हमें सर्वत्र सुभीता दें और कल्याण दें।

८ उत्तम ज्ञानी और सबके ज्ञाता देवता स्थावर संसार और जङ्गम लोकके ईश्वर हैं। वैसे देवो, इस समय हमें अतीत और भविष्यत् पापोंसे बचाकर कल्याण दो।

भरेष्विन्द्रं सुहवं हवामहेऽहोमुचं सुकृतं दैव्यं जनम् ।
अग्निमित्रं वरुणं सातये भगं द्यावापृथिवी मरुतः स्वस्तये ॥९॥

सुत्रामाणं पृथिवीं द्यामनेहसं सुशर्माणमदितिं सुप्रणीतिम् ।
दैवीं नावं स्वरित्रामनागसमस्रवन्तीमारुहेमा स्वस्तये ॥१०॥

विश्वे यजत्रा अधिवोचतोतये त्रायध्वं नो दुरेवाया अभिह्रुतः ।
सत्यया वो देवहूत्या हुवेम शृण्वतो देवा अवसे स्वस्तये ॥११॥

अपामीवामप विश्वमनाहुतिमपारातिं दुर्विदत्रामघायतः ।
आरे देवा द्वेषो अस्मद्युयोतनोरु णः शर्म यच्छता स्वस्तये ॥१२॥

अरिष्टः समर्त्तो विश्व एधते प्र प्रजाभिर्जायते धर्मणस्परि ।
यमादित्यासो नयथा सुनीतिभिरति विश्वानि दुरिता स्वस्तये ॥१३॥

---

९ हम सब यज्ञोंमें इन्द्रको बुलाते हैं। उन्हें बुलानेमें आनन्द आता है। हम देवोंको बुलाते हैं। वे पापसे छुड़ाते हैं। उनका कार्य सुन्दर है। कल्याण और धन पानेकी इच्छासे हम अग्नि, मित्र, वरुण, भग, द्यावापृथिवी और मरुतोंको बुलाते हैं।

१० मङ्गलके लिये हम द्युलोक-रूपिणी नौकापर चढ़कर देवत्व प्राप्त करें। इस नौकापर चढ़नेसे रक्षणका कोई भय नहीं रहता। यह विस्तृत हो। इसपर चढ़नेसे सुखी हुआ जाता है। यह अक्षय है। इसका संगठन सुदृढ़ है। इसका आवरण सुन्दर है। यह निष्पाप और अविनश्वर है।

११ यजनीय देवो, रक्षाके लिये हमसे कहो। विनाशक दुर्गतिसे हमें बचाओ। सत्यरूप यज्ञका आयोजन करके हम तुम्हें बुलाते हैं। सुनो, रक्षा करो और कल्याण दो।

१२ देवो, हमारे रोगों और सब प्रकारकी पाप-बुद्धिको दूर करो। हमें दान-शून्य बुद्धि न हो। दुष्टकी दुर्बुद्धिको दूर करो। हमारे शत्रुओंको अत्यन्त दूर ले जाओ। हमें विशिष्ट सुख और कल्याण दो।

१३ अदितिके पुत्र देवो, तुम जिसे उत्तम मार्ग दिखाकर और सारे पापोंसे पार करके कल्याणमें ले जाते हो, वैसा कोई भी व्यक्ति श्री—वृद्धि-शाली होता है। उसका कोई अनिष्ट नहीं होता। वह धर्म्म-कर्म्म करता है। उसका वंश बढ़ता है

यं देवासोऽवथ वाजसातौ यं शूरसाता मरुतो हिते धने ।
प्रातर्यावाणं रथमिन्द्र सानसिमरिष्यन्तमारुहेमा स्वस्तये ॥१४॥
स्वस्ति नः पथ्यासु धन्वसु स्वस्त्यप्सु वृजने स्वर्वति ।
स्वस्ति नः पुत्रकृथेषु योनिषु स्वस्ति राये मरुतो दधातन ॥१५॥
स्वस्तिरिद्धि प्रपथे श्रेष्ठा रेक्णस्वत्यभि या वाममेति ।
सा नो अमा सो अरणे नि पातु स्वावेशा भवतु देवगोपा ॥१६॥
एवा प्लुतेः सूनुरवीवृधद्वो विश्व आदित्या अदिते मनीषी ।
ईशानासो नरो अमर्त्येनास्तावि जनो दिव्यो गयेन ॥१७॥

---

१४ देवो, अन्न-प्राप्तिके लिये तुम लोग जिस रथकी रक्षा करते हो और मरुतो, युद्ध के समय सञ्चित धनकी प्राप्तिके लिये तुम लोग जिस रथकी रक्षा करते हो, इन्द्र, उसी प्रातःकाल युद्धमें जाने वाले रथको प्राप्त (वा भजन) करना चाहिये। उसे कोई ध्वस्त नहीं कर सकता। उसीपर चढ़कर हम कल्याण-भाजन हों ।

१५ सुपथ और मरुस्थल दोनों, स्थानोंमें हमारा कल्याण हो । जल और युद्ध, दोनोंमें हमारा कल्याण हो । उस सेनाके बीच हमारा कल्याण हो, जहाँ अस्त्र-शस्त्र फेंके जाते हैं । पुत्रोत्पादक स्त्री-योनिमें हमारा कल्याण हो (अर्थात् गर्भ न गिरने पावे)। देवो, धन-लाभ के लिये हमारा मङ्गल करो ।

१६ जो पृथिवी मार्ग जानेमें मङ्गलमयी है, जो सर्वश्रेष्ठ धनसे परिपूर्ण है और जो वरणीय यज्ञ-स्थानमें उपस्थित है, वह गृह और अरण्य, दोनों स्थानोंमें हमारी रक्षा करे। उसके रक्षक देवता लोग हैं। हम सुखसे पृथिवीपर निवास करें ।

१७ देवो और अदिति, प्राज्ञ प्लुति-पुत्र गयने इस प्रकारसे तुम लोगोंकी संवर्द्धना की । देवोंकी प्रसन्नतासे मनुष्य प्रभुत्व पाया करते हैं । गयने देवोंकी स्तुति की ।

६४ सूक्त

विश्वदेव देवता। गय ऋषि। जगती और त्रिष्टुप् छन्द।

कथा देवानां कतमस्य यामनि सुमन्तु नाम शृण्वतां मनामहे ।
को मृळाति कतमो नो मयस्करत् कतम ऊती अभ्यावर्वर्तति ॥१॥
क्रतूयन्ति क्रतवो हृत्सु धीतयो वेनन्ति वेनाः पतयन्त्यादिशः ।
न मर्डिता विद्यते अन्य एभ्यो देवेषु मे अधि कामा अयंसत ॥२॥
नराशंसं पूषणमगोह्यमग्निं देवेद्धमभ्यर्चसे गिरा ।
सूर्यामासा चन्द्रमसा यमं दिवि त्रितं वातमुषसमक्तुमश्विना ॥३॥
कथा कविस्तुवीरवान् कया गिरा बृहस्पतिर्वावृधते सुवृक्तिभिः ।
अज एकपात् सुहवेभिर्ऋक्वभिरहिः शृणोतु बुध्न्यो हवीमनि ॥४॥

---

१ यज्ञमें देवता लोग हमारा स्तोत्र सुनें। देवोंमेंसे किस देवताका स्तोत्र, किस उपायसे, भली भाँति, हम बनावें ? कौन हमारे ऊपर कृपा करेंगे ? कौन सुखका विधान करेंगे ? हमारे रक्षणके लिये कौन हमारे पास आवेंगे ?

२ हमारे अन्तःकरणमें निहित प्रज्ञा अग्निहोत्र आदि करनेकी इच्छा करती हैं। प्रज्ञा देवोंकी इच्छा करती है। हमारी अभिलाषाएं देवोंके पास आती हैं। उनके सिवा और कोई सुखदाता नहीं है। इन्द्रादि देवोंमें हमारी अभिलाषाएं नियत हैं।

३ धनदानके द्वारा पोषक और दूसरोंके द्वारा अगम्य पूषा देवताकी, स्तुतिके द्वारा, पूजा करो। देवोंमें प्रदीप्त अग्निकी स्तुति करो। सूर्य, चन्द्र, यम, दिव्यलोकवासी त्रित, वायु, उषा, रात्रि और अश्विद्वयका स्तोत्र करो।

४ ज्ञानी अग्नि किस प्रकार अनेक स्तोताओंवाले होते हैं और किस स्तुतिसे सम्मान-युक्त होते हैं ? शोभन स्तुतिसे बृहस्पति देवता बढ़ते हैं। अज एकपात् और अहिर्बुध्न्य नामके देवता, हमारे आह्वान-कालमें, सुरचित स्तवोंको सुनें।

६

दक्षस्य वादिते जन्मनि व्रते राजाना मित्रावरुणा विवाससि ।
अतूर्तपन्थाः पुरुरथो अर्यमा सप्तहोता विषुरूपेषु जन्मसु ॥५॥
ते नो अर्वन्तो हवनश्रुतो हवं विश्वे शृण्वन्तु वाजिनो मितद्रवः ।
सहस्रसा मेधसाताविव त्मना महो ये धनं समिथेषु जभ्रिरे ॥६॥
प्र वो वायुं रथयुजं पुरन्धिं स्तोमैः कृणुध्वं सख्याय पूषणम् ।
ते हि देवस्य सवितुः सवीमनि क्रतुं सचन्ते सचितः सचेतसः ॥७॥
त्रिः सप्त सस्रा नद्यो महीरपो वनस्पतीन् पर्वताँ अग्निमूतये ।
कृशानुमस्तॄन्तिष्यं सधस्थ आ रुद्रं रुद्रेषु रुद्रियं हवामहे ॥८॥
सरस्वती सरयुः सिन्धुरूर्मिभिर्महो महीरवसा यन्तु वक्षणीः ।
देवीरापो मातरः सूदयित्न्वो घृतवत् पयो मधुमन्नो अर्चत ॥९॥

---

५ अविनश्वर पृथिवी, सूर्यके जन्मके समय तुम मित्र और वरुण राजाओंकी सेवा करती हो। विशाल रथपर चढ़कर सूर्य धीरे—धीरे जाते हैं। उनका जन्म नाना मूर्त्तियोंमें होता है। उनके आह्वान-कर्त्ता सप्तर्षि हैं।

६ इन्द्रके जो घोड़े स्वयं युद्धके समय शत्रुओंसे महान् धन ले आते हैं, जो यज्ञके समय सदा ही सहस्र धन देते हैं और जो सुशिक्षित अश्वोंके समान परिमित रूपसे चरण-निक्षेप करते हैं, वे सब हमारा आह्वान सुनें। निमन्त्रण ग्रहण करनेमें वे कभी विरत नहीं होते।

७ स्तोताओ, रथ-योजक वायु, बहुकर्मकर्त्ता इन्द्र और पूषाकी स्तुति करके अपनी मैत्री स्वीकार कराओ। वे सब एकमना और अनन्यमना होकर प्रभात-कालमें यज्ञमें उपस्थित होते हैं।

८ सरस्वती, सरयू, सिन्धु आदि इक्कीस प्रकाण्ड नदियां, वनस्पतियों, पर्वतों, अग्नि, सोम-पालक कृशानु गन्धर्व, वाण-चालक गन्धर्वों, नक्षत्र, हविःपात्र रुद्र और रुद्रोंमें प्रधान रुद्रको, यज्ञमें, रक्षाके लिये, हम बुलाते हैं।

९ महती और तरङ्गशालिनी सरस्वती, सरयू सिन्धु आदि इक्कीस नदियां, रक्षणके लिये, आवें। जल-प्रेरक, मातृ-भूत ये सब देवियां घृत और मधुके समान जल-दान करें।

उत माता बृहद्दिवा शृणोतु नस्त्वष्टा देवेभिर्जनिभिः पिता वचः ।
ऋभुक्षा वाजो रथस्पतिर्भगो रण्वः शंसः शशमानस्य पातु नः ॥१०॥
रण्वः सन्दृष्टौ पितुमाँइव क्षयो भद्रा रुद्राणां मरुतामुपस्तुतिः ।
गोभिः ष्याम यशसो जनेष्वा सदा देवास इळया सचेमहि ॥११॥
यां मे धियं मरुत इन्द्र देवा अददात वरुण मित्र यूयम् ।
तां पीपयत पयसेव धेनुं कुविद्गिरो अधिरथे वहाथ ॥१२॥
कुविदङ्ग प्रति यथा चिदस्य नः सजात्यस्य मरुतो बुबोधथ ।
नाभा यत्र प्रथमं संनसामहे तत्र जामित्वमदितिर्दधातु नः ॥१३॥
ते हि द्यावापृथिवी मातरा मही देवी देवाञ्जन्मना यज्ञिये इतः ।
उभे बिभृत उभयं भरीमभिः पुरू रेतांसि पितृभिश्च सिञ्चतः ॥१४॥

१० महद्दीप्ति देवमाता हमारा आह्वान सुनें। देवपिता त्वष्टा, अपने पुत्र देवों और देवपत्नियोंके, साथ, हमारा वचन सुनें। ऋभुक्षा, इन्द्र, वाज, रथपति भग और स्तुत्य मरुद्गण, स्तुतिके लिये, हमारी रक्षा करें।

११ अन्नसे भरे गृहके समान मरुत् लोग देखनेमें रमणीय हैं। रुद्र-पुत्र मरुतोंकी स्तुति कल्याण देनेवाली होती है। मनुष्योंमें हम गोधनसे धनी होकर यशस्वी हों। देवो, सदा हम अन्नसे मिलें।

१२ मरुद्गण, इन्द्र, देववृन्द, वरुण और मित्र, जैसे गाय दूधसे भरी रहती है, वैसे ही तुम लोगोंसे पाये हुए कर्मका फल सुसम्पन्न करो। हमारे स्तोत्रको सुनकर और रथपर चढ़कर तुम लोग यज्ञमें आये हो।

१३ मरुतो, तुम लोगोंने जैसे प्रथम अनेक वार हमारे बन्धुत्वकी रक्षा की है, वैसे ही इस समय भी करो। हम जिस स्थानपर सर्व-प्रथम वेदी बनाते हैं, वहाँ अदिति (वा पृथिवी) मनुष्योंके साथ हमें बन्धुत्व प्रदान करें।

१४ सबको बनानेवाले, महान्, दीप्तिशील और यज्ञ-योग्य द्यावापृथिवी जन्मके साथ ही इन्द्रादिको प्राप्त करते हैं। द्यावापृथिवी नानाविध रक्षणोंसे देवों और मनुष्योंकी रक्षा करते हैं पालक देवोंके साथ मिलकर द्यावापृथिवी जलको क्षरित करते हैं।

वि षा होत्रा विश्वमश्नोति वार्यं बृहस्पतिररमतिः पनीयसी ।
ग्रावा यत्र मधुषुदुच्यते बृहदवीवशन्त मतिभिर्मनीषिणः ॥१५॥
एवा कविस्तुवीरवाँ ऋतज्ञा द्रविणस्युर्द्रविणसश्चकानः ।
उक्थेभिरत्र मतिभिश्च विप्रोऽपीपयद्गयो दिव्यानि जन्म ॥१६॥
एवा प्लुतेः सूनुरवीवृधद्वो विश्व आदित्या अदिते मनीषी ।
ईशानासो नरो अमर्त्येनास्तावि जनो दिव्यो गयेन ॥१७॥



६५ सूक्त

विश्वदेव देवता । वसुक्रु-पुत्र वसुकर्ण ऋषि । जगती और त्रिष्टुप् छन्द ।

अग्निरिन्द्रो वरुणो मित्रो अर्यमा वायुः पूषा सरस्वती सजोषसः ।
आदित्या विष्णुर्मरुतः स्वर्बृहत् सोमो रुद्रो अदितिर्ब्रह्मणस्पतिः ॥१॥

---

१५ महानोंकी पालिका, यथेष्ट स्तुतिवाली, देवोंका स्तोत्र करनेवाली और सोमाभिषवके कारण महान् कही जानेवाली वाणी (वा मन्त्र) सारे स्वीकरणीय धनको व्याप्त करती है । स्तोता लोग स्तोत्रोंसे देवोंको यज्ञकामी बनाते हैं ।

१६ क्रान्तप्रज्ञ, बहुस्तुति-सम्पन्न, यज्ञ-ज्ञाता, धनेच्छु और मेधावी गय ऋषिने प्रचुर-धन-कामना करके इस प्रकारके उक्थों (मन्त्र-विशेष) और स्तवोंसे देवोंकी स्तुति की ।

१७ देवो और अदिति, ज्ञानी प्लुति-पुत्र गयने इस प्रकारसे तुम लोगों की संवर्द्धना की । देवोंकी प्रसन्नतासे मनुष्य प्रभुत्व प्राप्त करते हैं । गयने देवोंकी स्तुति की ।



१ अग्नि, इन्द्र वरुण, मित्र, अर्यमा, वायु, पूषा, सरस्वती, आदित्यगण, विष्णु, मरुत्, महान् स्वर्ग, सोम, रुद्र, अदिति और ब्रह्मणस्पति मिलकर अपनी महिमासे अन्तरिक्षको पूरित करते हैं ।

इन्द्राग्नी वृत्रहत्येषु सत्पती मिथो हिन्वाना तन्वा समोकसा ।
अन्तरिक्षं मह्या पप्रुरोजसा सोमो घृतश्रीर्महिमानमीरयन् ॥२॥
तेषां हि मह्ना महतामनर्वणां स्तोमाँ इयर्म्यृतज्ञा ऋतावृधाम् ।
ये अप्सवमर्णवं चित्रराधसस्ते नो रासन्तां महये सुमित्र्याः ॥३॥
स्वर्णरमन्तरिक्षाणि रोचना द्यावाभूमी पृथिवीं स्कम्भुरोजसा ।
पृक्षाइव महयन्तः सुरातयो देवाः स्तवन्ते मनुषाय सूरयः ॥४॥
मित्राय शिक्ष वरुणाय दाशुषे या सम्राजा मनसा न प्रयुच्छतः ।
ययोर्धाम धर्मणा रोचते बृहद्ययोरुभे रोदसी नाधसी वृतौ ॥५॥
या गौर्वर्तनिं पर्येति निष्कृतं पयो दुहाना व्रतनीरवारतः ।
सा प्रब्रुवाणा वरुणाय दाशुषे देवेभ्यो दाशद्धविषा विवस्वते ॥६॥

२ इन्द्र और अग्नि शिष्टोंके रक्षक हैं। ये युद्धके समय इकट्ठे होकर अपनी शक्तिसे शत्रुओंको भगा देते हैं तथा प्रकाण्ड आकाशको अपने तेजसे भरते हैं। घृत-युक्त सोमरस उनके बलको बढ़ा देता है।

३ महत्तम, अविचल और यज्ञ-वर्द्धक देवता लोगोंके लिये होनेवाले यज्ञमें मैं स्तुति करता हूं। जो सुन्दर मेघोंसे जल बरसाते हैं, वे ही परम सखा देवता हमें धन देकर श्रेष्ठ करें।

४ उन्हीं देवोंने, अपनी शक्तिसे, सबके नायक सूर्य, आकाशस्थ ग्रहों, नक्षत्रों, द्युलोक, भूलोक और पृथिवीको यथास्थान नियत कर रखा है। धनदाताओंके समान उत्तम दान करके ये देवता मनुष्योंको श्रेष्ठ बनाते हैं। ये मनुष्योंको धन देते हैं; इसीलिये इनकी स्तुति की जाती है।

५ मित्र और दाता वरुणको होमीय द्रव्य (हवि आदि) दो। ये दोनों राजाओंके भी राजा हैं; ये कभी असावधान नहीं होते, इनका धाम भली भाँति धृत होकर अत्यन्त प्रकाश कर रहा है। इनके पास, याचकके समान, द्यावापृथिवी अवस्थित हैं।

६ जो गाय स्वयं पवित्र स्थान यज्ञमें आती है, वह दूध देते हुए यज्ञ-कर्मको सम्पन्न करती है। मेरी इच्छा है कि, वह गाय दाता वरुण और अन्यान्य देवोंको होमीय द्रव्य दे और मुझ देव-सेवककी रक्षा करे।

दिवक्षसो अग्निजिह्वा ऋतावृध ऋतस्य योनिं विमृशन्त आसते ।
द्यां स्कभित्व्यप आ चक्रुरोजसा यज्ञं जनित्वी तन्वी नि मामृजुः ॥७॥
परिक्षिता पितरा पूर्वजावरी ऋतस्य योना क्षयतः समोकसा ।
द्यावापृथिवी वरुणाय सव्रते घृतवत् पयो महिषाय पिन्वतः ॥८॥
पर्जन्यावाता वृषभा पुरीषिणेन्द्रवायू वरुणो मित्रो अर्यमा ।
देवाँ आदित्याँ अदितिं हवामहे ये पार्थिवासो दिव्यासो अप्सु ये ॥९॥
त्वष्टारं वायुमृभवो य ओहते दैव्या होतारा उषसं स्वस्तये ।
बृहस्पतिं वृत्रखादं सुमेधसमिन्द्रियं सोमं धनसा ऊ ईमहे ॥१०॥
ब्रह्म गामश्वं जनयन्तओषधीर्वनस्पतीन् पर्वताँ अपः ।
सूर्यं दिवि रोहयन्तः सुदानव आर्या व्रता विसृजन्तो अधि क्षमि ॥११॥

७ जो देवता अपने तेजसे आकाशको परिपूर्ण करते हैं, अग्नि ही जिनकी जीभ हैं और जो यज्ञकी वृद्धि करते हैं, वे अपना अपना स्थान समझ कर यज्ञमें बैठते हैं । वे आकाशको धारण करके अपने बलसे जलको निकालते हैं और यजनीय हविको अपने शरीर में रख लेते हैं ।

८ द्यावापृथिवी सर्व-व्यापक हैं । ये सबके माता-पिता हैं । सबसे प्रथम उत्पन्न हैं । दोनों का स्थान एक ही है । दोनों ही यज्ञ-स्थानमें निवास करते हैं । दोनों ही एकमना होकर उन पूजनीय वरुणको घृत-युक्त दूध देते हैं ।

९ मेघ और वायु काम-वर्षक हैं । ये जल वाले हैं । इन्द्र. वायु, वरुण, मित्र, अदिति-पुत्र देवों और अदितिको हम बुलाते हैं । जो देवता द्युलोक, भूलोक और जलमें उत्पन्न हुए हैं, उनको भी बुलाते हैं ।

१०. ऋभुओ, जो सोम, तुम्हारे मङ्गलके लिये, देवोंको बुलानेवाले त्वष्टा और वायुके पास जाते हैं और जो बृहस्पति तथा ज्ञानी और वृत्रघ्न इन्द्रके पास जाते हैं, उन्हीं इन्द्रको सन्तुष्ट करनेवाले सोमसे हम धन माँगते हैं ।

११ देवोंने अन्न, गौ, अश्व, वृक्ष, लता, पर्वत और पृथिवीको उत्पन्न किया है और सूर्यको आकाशमें चढ़ाया है । उनका दान अतीव शोभन है; उन्होंने पृथिवीपर उत्तमोत्तम कार्य किये हैं ।

भुज्युमंहसः पिपृथो निरश्विना श्यावं पुत्रं वध्रिमत्या अजिन्वतम् ।
कमद्युवं विमदायोहथुर्युवं विष्णाप्वं विश्वकायाव सृजथः ॥१२॥
पावीरवी तन्यतुरेकपादजो दिवो धर्ता सिन्धुरापः समुद्रियः ।
विश्वे देवासः शृणवन् वचांसि मे सरस्वती सह धीभिः पुरन्ध्या ॥१३॥
विश्वे देवाः सह धीभिः पुरन्ध्या मनोर्यजत्रा अमृता ऋतज्ञाः ।
रातिषाचो अभिषाचः स्वर्विदः स्वर्गिरो ब्रह्म सूक्तं जुषेरत ॥१४॥
देवान् वसिष्ठो अमृतान् ववन्दे ये विश्वा भुवनाभि प्रतस्थुः ।
ते नो रासन्तामुरुगायमद्य यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥१५॥



६६ सूक्त

देवता, ऋषि, छन्द आदि पूर्ववत् ।

देवान् हुवे बृहच्छ्रवसः स्वस्तये ज्योतिष्कृतो अध्वरस्य प्रचेतसः ।
ये वावृधुः प्रतरं विश्ववेदस इन्द्रज्येष्ठासो अमृता ऋतावृधः ॥१॥

---

१२ अश्विद्वय, तुमने भुज्युको विपत्तिसे बचाया है। बध्रिमती नामक रमणीको एक पिङ्गल-वर्ण पुत्र दिया था, विमद ऋषिको सुन्दरी भार्या दी थी और विश्वक ऋषिको विष्णाप्व नामक पुत्र दिया था ।

१३ आयुधवाली और मधुरा माध्यमिकी वाक्, आकाश-धारक अज एकपात्, सिन्धु, आकाशीय जल, विश्वदेव और अनेक कर्मों तथा ज्ञानोंसे संयुक्त सरस्वती मेरे बचनको सुनें ।

१४ अनेक कर्मों और ज्ञानोंसे युक्त, मनुष्यके यज्ञमें यजनीय, अमर, सत्यज्ञाता, हविका ग्रहण करनेवाले, यज्ञमें मिलनेवाले और सब कुछ जाननेवाले इन्द्रादि देवता हमारी स्तुतियों और उत्तम तथा निवेदित अन्नको ग्रहण करें ।

१५ वसिष्ठ-वंशमें उत्पन्न इन ऋषिने अमर देवोंकी स्तुति की । जो देवता सारे भुवनोंमें रहते हैं, वे आज हमें कीर्त्तिकर अन्न दें। देवो, तुम हमें कल्याणके साथ बचाओ ।



१ जो देवता प्रचुर अन्न वाले, आदित्य-तेजके कर्त्ता, प्रकृष्ट-ज्ञानी, सर्वधनी, इन्द्र वाले, अमर और यज्ञसे प्रवृद्ध हैं, उनको निर्विघ्न यज्ञ-समाप्तिके लिये मैं बुलाता हूं ।

इन्द्रप्रसूता वरुणप्रशिष्टा ये सूर्यस्य ज्योतिषो भागमानशुः ।
मरुद्गणे वृजने मन्म धीमहि माघोने यज्ञं जनयन्त सूरयः ॥२॥
इन्द्रो वसुभिः परिपातु नो गयमादित्यैर्नो अदितिः शर्म यच्छतु ।
रुद्रो रुद्रेभिर्देवो मृळयाति नस्त्वष्टा नो ग्नाभिः सुविताय जिन्वतु ॥३॥
अदितिर्द्यावापृथिवी ऋतं महदिन्द्राविष्णू मरुतः स्वर्बृहत् ।
देवाँ आदित्याँ अवसे हवामहे वसून्रुद्रान्त्सवितारं सुदंससम् ॥४॥
सरस्वान् धीभिर्वरुणो धृतव्रतः पूषा विष्णुर्महिमा वायुरश्विना ।
ब्रह्मकृतो अमृता विश्ववेदसः शर्म नो यंसन्त्रिवरूथमंहसः ॥५॥
वृषा यज्ञो वृषणः सन्तु यज्ञिया वृषणो देवा वृषणो हविष्कृतः ।
वृषणा द्यावापृथिवी ऋतावरी वृषा पर्जन्यो वृषणो वृषस्तुभः ॥६॥
अग्नीषोमा वृषणा वाजसातये पुरुप्रशस्ता वृषणा उपब्रुवे ।
यावीजिरे वृषणो देवयज्यया ता नः शर्म त्रिवरूथं वि यन्सतः ॥७॥

---

२ इन्द्रके द्वारा कार्योंमें प्रेरित और वरुणके द्वारा अनुमोदित होकर जिन्होंने ज्योतिर्मय सूर्यके गति-पथको परिपूर्ण किया है, उन्हीं शत्रु-संहारक मरुतोंके स्तोत्रका हम चिन्तन करते हैं। विद्वानो, इन्द्र-पुत्रोंके यज्ञका आयोजन करो।

३ वसुओंके साथ इन्द्र हमारे गृहकी रक्षा करें। आदित्योंके साथ अदिति हमें सुख दें। रुद्र-पुत्र मरुतोंके साथ रुद्रदेव हमें सुखी करें। पत्नी-सहित त्वष्टा हमारा सुख बढ़ावें।

४ अदिति, द्यावापृथिवी, महान् सत्य अग्नि, इन्द्र, विष्णु, मरुत्, विशाल स्वर्ग, आदित्यगण, वसुगण, रुद्रगण और उत्तम दाता सूर्यको हम बुला रहे हैं। ये हमारी रक्षा करें।

५ ज्ञानी समुद्र, कर्म-निष्ठ वरुण, पूषा, महिमा वाले विष्णु, वायु, अश्विद्वय, स्तोताओंको अन्न देनेवाले, ज्ञानी, पापियोंके नाशक और अमर देवतागण तीन तल्लों वाला गृह हमें दें।

६ यज्ञ अभिलषित फल दे। यज्ञीय देवता कामना पूरी करें। देवता, हवि आदि जुटाने वाले, यज्ञाधिष्ठात्री द्यावापृथिवी, पर्जन्य और स्तोता—सभी हमारी कामना पूरी करें।

७ अन्न पानेके लिये अभीष्टदाता अग्नि और सोमका मैं स्तोत्र करता हूं। सारा संसार उन्हें दाता कहकर प्रशंसित करता है। उन दोनोंको ही पुरोहित लोग यज्ञमें पूजा देते हैं। वह हमें तीन तल्लों वाला घर दें।

धृतव्रताः क्षत्रिया यज्ञनिष्कृतो बृहद्दिवा अध्वराणामभिश्रियः ।
अग्निहोतार ऋतसापो अद्रुहोऽपो असृजन्ननु वृत्रतूर्ये ॥८॥
द्यावापृथिवी जनयन्नभि व्रताप ओषधीर्वनिनानि यज्ञिया ।
अन्तरिक्षं स्वरा पप्रुरूतये वशं देवासस्तन्वी निमामृजुः ॥९॥
धर्तारो दिव ऋभवः सुहस्ता वातापर्जन्या महिषस्य तन्यतोः ।
आप ओषधीः प्रतिरन्तु नो गिरो भगो रातिर्वाजिनो यन्तु मे हवम् ॥१०॥
समुद्रः सिन्धू रजो अन्तरिक्षमज एकपात्तनयित्नुरर्णवः ।
अहिर्बुध्न्यः शृणवद्वचांसि मे विश्वे देवास उत सूरयो मम ॥११॥
स्याम वो मनवो देववीतये प्राञ्चं नो यज्ञं प्रणयत साधुया ।
आदित्या रुद्रा वसवः सुदानव इमा ब्रह्म शस्यमानानि जिन्वत १२॥

---

८ जो कर्त्तव्य-पालनमें सदा तत्पर हैं, जो बली हैं, जो यज्ञको अलङ्कृत करते हैं, जिनकी दीप्ति महान् है, जो यज्ञमें आते हैं, जिन्हें अग्नि बुलाते हैं और जो सत्यपात्र हैं, उन्हीं देवोंने, वृत्र-युद्धके समयमें, वृष्टि-जल रचा ।

९ अपने कार्यके द्वारा द्यावापृथिवी, जल, वनस्पति और यज्ञोपयोगी उत्तमोत्तम द्रव्य बनाकर देवोंने अपने तेजसे आकाश और स्वर्गको परिपूर्ण कर दिया । उन्होंने यज्ञके साथ अपनेको मिलाकर यज्ञको अलङ्कृत किया ।

१० ऋभुओंका हाथ सुन्दर है; वे आकाशके धारक हैं । वायु और मेघका शब्द महान् होता है । जल और वनस्पति हमारे स्तोत्रको बढ़ावें । धनदाता भग और अर्यमा मेरे यज्ञमें पधारें ।

११ समुद्र, नदी, धूलिमय पृथिवी, आकाश, अज एकपात्, गर्जनशील मेघ और अहिर्बुध्न्य मेरा आह्वान सुनें ।

१२ देव, हम मनु-सन्तान हैं । तुम्हें हम यज्ञ दे सकें । हमारे सदासे प्रचलित यज्ञको तुम भली भाँति सम्पन्न करो । आदित्यो, रुद्रो और वसुओ, तुम्हारी दान-शक्ति शोभन है । स्तोत्रोंको सुनें ।

दैव्या होतारा प्रथमा पुरोहित ऋतस्य पन्थामन्वेमि साधुया ।
क्षेत्रस्य पतिं प्रतिवेशमीमहे विश्वान्देवाँ अमृताँ अप्रयुच्छतः ॥१३॥
वसिष्ठासः पितृवद्वाचमक्रत देवाँ ईळाना ऋषिवत् स्वस्तये
प्रीताइव ज्ञातयः काममेत्यास्मे देवासोऽव धूनुता वसु ॥१४॥
देवान् वसिष्ठो अमृतान् ववन्दे ये विश्वा भुवनाभि प्रतस्थुः ।
ते नो रासन्तामुरुगायमद्य यूयं पात स्वस्तिभिः सदा नः ॥१५॥

---

६७ सूक्त

बृहस्पति देवता । आङ्गिरस अयास्य ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

इमां धियं सप्तशीर्ष्णीं पिता न ऋतप्रजातां बृहतीमविन्दत् ।
तुरीयं स्विज्जनयद्विश्वजन्योऽयास्य उक्थमिन्द्राय शंसन् ॥१॥

---

१३ जो दो व्यक्ति देवोंको बुलानेवाले हैं और जो सर्व-श्रेष्ठ पुरोहित हैं, उन अग्नि और आदित्यकी हविसे सेवा करता हूं। मैं निर्विघ्न यज्ञ-मार्गको जा रहा हूं । हमारे पास रहने-वाले क्षेत्रपति (देवता) और अमर देवोंकी, आश्रय देनेके लिये, हम प्रार्थना करते हैं । प्रार्थना पूरी करनेको वे सावधान रहते हैं ।

१४ वसिष्ठके समान ही वसिष्ठके वंशजोंने स्तुति की । उन्होंने मङ्गलके लिये वसिष्ठ ऋषिके समान देव-पूजा की। देवो, अपने मित्रके समान आकर, सन्तुष्ट मनसे, अभीष्ट फल दो ।

१५ वसिष्ठ-वंशोत्पन्न इन ऋषिने अमर देवोंकी स्तुति की है । जो देवता अपने तेज-से सारे भवनोंमें रहते हैं, वे आज हमें कीर्तिकर अन्न दें । देवो, मङ्गलके लिये तुम हमारी रक्षा करो ।

---

१ हमारे पितरों (अङ्गिरा लोगों)ने सात छन्दोंवाले विशाल स्तोत्रकी रचना की थी । उसकी सत्यसे उत्पत्ति हुई। संसारके हितैषी अयास्य ऋषिने इन्द्रकी प्रशंसा करते हुए, एक पदके स्तोत्रको बनाया ।

ऋतं शंसन्त ऋजु दीध्याना दिवस्पुत्रासो असुरस्य वीराः ।
विप्रं पदमङ्गिरसो दधाना यज्ञस्य धाम प्रथमं मनन्त ॥२॥
हंसैरिव सखिभिर्वावदद्भिरश्मन्मयानि नहना व्यस्यन् ।
बृहस्पतिरभिकनिक्रदद्गा उत प्रास्तौदुच्च विद्वाँ अगायत् ॥३॥
अवो द्वाभ्यां पर एकया गा गुहा तिष्ठन्तीरनृतस्य सेतौ ।
बृहस्पतिस्तमसि ज्योतिरिच्छन्नुदुस्रा आकर्वि हि तिस्र आवः ॥४॥
विभिद्या पुरं शयथेमपाचीं निस्त्रीणि साकमुदधेरकृन्तत् ।
बृहस्पतिरुषसं सूर्यं गामर्कं विवेद स्तनयन्निव द्यौः ॥५॥
इन्द्रो बलं रक्षितारं दुघानां करेणेव विचकर्त्ता रवेण ।
स्वेदाञ्जिभिराशिरमिच्छमानोऽरोदयत् पणिमा ग अमुष्णात् ॥६॥

२ अङ्गिरा लोगोंने यज्ञके सुन्दर स्थानमें जाना निश्चित किया । वे सत्यवादी हैं, उनके मनका भाव सरल है, वे स्वर्गके पुत्र हैं, वे महाबली हैं और बुद्धिमानोंके समान आचरण करते हैं ।

३ हंसोंके समान ही बृहस्पतिके सहायकोंने कोलाहल करना प्रारम्भ किया । उनकी सहायतासे बृहस्पतिने प्रस्तरमय द्वारको खोल दिया । भीतर रोकी गयी गायें चिल्लाने लगीं । वह उत्तम रूपसे स्तोत्र और उच्चैः स्वरसे गान करने लगे ।

४ गायें नीचे एक द्वारके द्वारा और ऊपर दो द्वारोंके द्वारा अन्धकार वा अधर्मके आलयस्वरूप उस गुहामें छिपायी गयी थीं । अन्धकारके बीच प्रकाश ले जानेकी इच्छासे बृहस्पतिने तीनों द्वारोंको खोलकर गायोंको निकाल दिया ।

५ रातको चुपचाप सोकर पुरीके पिछले भागको तोड़ा और समुद्र-तुल्य उस गुहाके तीनों द्वारोंको खोल दिया (अथवा उषा, सूर्य और गायको बाहर कर दिया) । प्रातःकाल उन्होंने पूजनीय सूर्य और गायको एक साथ देखा । उस समय वह मेघके समान वीर-हुङ्कार करते थे ।

६ जिस बलने गायको रोका था, उसे इन्द्र (वा बृहस्पति) ने अपनी हुङ्कारसे ही छिन्न कर डाला—मानों अस्त्रसे ही उसे मारा है । मरुतोंके साथ मिलनेकी इच्छासे उन्होंने पापको रुलाया और गायोंको लिया ।

स ईं सत्येभिः सखिभिः शुचद्भिर्गोधायसं वि धनसैरदर्दः ।

ब्रह्मणस्पतिर्वृषभिर्वराहैर्घर्मस्वेदेभिर्द्रविणं व्यानट् ॥७॥

ते सत्येन मनसा गोपतिं गा इयानास इषणयन्त धीभिः ।

बृहस्पतिर्मिथोऽवद्यपेभिरुदुस्रिया असृजत स्वयुग्भिः ॥८॥

तं वर्धयन्तो मतिभिः शिवाभिः सिंहमिव नानदतं सधस्थे ।

बृहस्पतिं वृषणं शूरसातौ भरेभरे अनुमदेम जिष्णुम् ॥९॥

यदा वाजमसनद्विश्वरूपमा द्यामरुक्षदुत्तराणि सद्म ।

बृहस्पतिं वृषणं वर्धयन्तो नाना सन्तो बिभ्रतो ज्योतिरासा ॥१०॥

सत्यामाशिषं कृणुता वयोधै कीरिं चिद्ध्यवथ स्वेभिरेवैः ।

पश्चा मृधो अपभवन्तु विश्वास्तद्रोदसी शृणुतं विश्वमिन्वे ॥११॥

---

७ अपने सत्यवादी, दीप्तिमान् और धनदाता सहायकोंके साथ उन्होंने गायोंको रोकने-वाले बलको विदीर्ण किया। वर्षक, जल लानेवाले और प्रदीप्त-गमन मरुतोंके साथ उन सामस्तोत्रके अधिपतिने गोधनको अधिकृत किया।

८ मरुतोंने, सत्य-चेता होकर, अपने कर्मोंसे गायोंको प्राप्त करते हुए, बृहस्पतिको गोपति बनानेकी इच्छा की। परस्पर सहायक अपने मरुतोंके साथ बृहस्पतिने गायोंको बाहर किया।

९ अन्तरिक्षमें सिंहके समान शब्द करनेवाले, कामोंके वर्षक और विजयी बृहस्पतिको बढ़ाने-वाले हम मरुत् वीरोंके संग्राममें मङ्गलमयी स्तुतियोंसे उनका स्तोत्र करते हैं।

१० जिस समय वह बृहस्पति नानारूप अन्नका सेवन करते हैं और जिस समय अन्त-रिक्षपर चढ़ते हैं, उस समय वर्षक बृहस्पतिकी, नाना दिशाओंमें ज्योति धारण करनेवाले देवता, मुँहसे, स्तुति करते हैं।

११ देवी, अन्न-लाभके लिये मेरी स्तुतिको यथार्थ (सफल) करो। अपने आश्रयसे मेरी रक्षा करो। सारे शत्रु नष्ट हों। विश्वका प्रसन्न करनेवाले द्यावापृथिवी, हमारे बचनको सुनो।

इन्द्रो मह्ना महतो अर्णवस्य वि मूर्धानमभिनदर्बुदस्य ।
अहन्नहिमरिणात् सप्त सिन्धून् देवैर्द्यावापृथिवी प्रावतं नः ॥१२॥

६८ सूक्त

देवता, ऋषि, छन्द आदि पूर्ववत् ।

उदप्रुतो न वयो रक्षमाणा वावदतो अभ्रियस्येव घोषाः ।
गिरिभ्रजो नोर्मयो मदन्तो बृहस्पतिमभ्यर्का अनावन् ॥१॥
सं गोभिराङ्गिरसो नक्षमाणो भगइवेदर्यमणं निनाय ।
जने मित्रो न दम्पती अनक्ति बृहस्पते वाजयाशूँरिवाजौ ॥२॥
साध्वर्या अतिथिनीरिषिराः स्पार्हाः अनवद्यरूपाः ।
बृहस्पतिः पर्वतेभ्यो वितूर्या निर्गा ऊपे यवमिव स्थिविभ्यः ॥३॥

---

१२ ईश्वर (स्वामी) और महिमान्वित बृहस्पतिने महान् जलवाले मेघका मस्तक काट दिया। उन्होंने जलको रोकनेवाले शत्रुको मारा। गङ्गा आदि नदियोंको समुद्रमें मिलाया। द्यावापृथिवी, देवोंके साथ हमारी रक्षा करो।



१ जैसे जल-सेचक कृषक शस्य-क्षेत्रसे पक्षियोंको उड़ाते समय शब्द करते हैं, जैसे मेघोंका गर्जन होता है अथवा जैसे पर्वतसे धक्का लगनेपर वा मेघसे गिरनेपर तरङ्गें शब्द करती हैं, वैसे ही बृहस्पतिकी प्रशंसा-ध्वनि होने लगी।

२ अङ्गिराके पुत्र बृहस्पति गुहामें रहनेवाली गायोंके पास सूर्यका आलोक ले आये। भग देवताके समान उनका तेज व्यापी हुआ। जैसे मित्र दम्पती (स्त्री और पुरुष)का मिलन करा देते हैं, वैसे ही उन्होंने गायोंको लोगोंके साथ मिला दिया। बृहस्पति, जैसे युद्धमें घोड़ेको दौड़ाया जाता है, वैसे ही गायोंको दौड़ाओ।

३ जैसे धानको कोठी (कुशूल) से जौ (यव) बाहर किया जाता है, वैसे ही बृहस्पतिने गायोंको पर्वतसे शीघ्र बाहर किया। गायें मङ्गलरूप दुग्ध देनेवाली, सतत-गमन-शीला, स्पृहणीया, वर्ण-मनोहरा और प्रशंसनीय-मूर्त्ति थीं।

आप्रुषायन्मधुन ऋतस्य योनिमवक्षिपन्नर्क उल्कामिव द्योः ।
बृहस्पतिरुद्धरन्नश्मनो गा भूम्या उद्नेव वि त्वचं बिभेद ॥४॥
अप ज्योतिषा तमो अन्तरिक्षादुद्नः शीपालमिव वात आजत् ।
बृहस्पतिरनुमृश्या बलस्याभ्रमिव वात आ चक्र आ गाः ॥५॥
यदा बलस्य पीयतो जसुं भेद्बृहस्पतिरग्नितपोभिरर्कैः ।
दद्भिर्न जिह्वा परिविष्टमाददाविर्निधीरकृणोदुस्रियाणाम् ॥६॥
बृहस्पतिरमत हि त्यदासां नाम स्वरीणां सदने गुहा यत् ।
आंडेव भित्वा शकुनस्य गर्भमुदुस्रियाः पर्वतस्य त्मनाजत् ॥७॥
अश्नापिनद्धं मधुपर्यपश्यन्मत्स्यं न दीन उदनि क्षियन्तम् ।
निष्टज्जभार चमसं न वृक्षाद्बृहस्पतिर्विरवेणा विकृत्य ॥८॥

---

४ गायोंका उद्धार करके बृहस्पतिने सत्कर्मके आकर-स्थान मधु-बिन्दुको सिक्त किया अर्थात् यज्ञानुष्ठानकी सुविधा कर दी। बृहस्पति ऐसे दीप्ति-युक्त हुए, मानो आकाशसे सूर्य उल्का-को फेंक रहे हों उन्होंने प्रस्तरके आच्छादन (ढकने) से गायोंका उद्धार करके उनके खुरोंसे धरा-तलको वैसे हो विदीर्ण कराया, जैसे मेघ, वृष्टिके समय, पृथिवीको विदीर्ण करते हैं।

५ जैसे वायु जलसे शैवालको हटाता है, वैसे ही बृहस्पतिने आकाशसे अन्धकारको दूर किया। जैसे वायु मेघोंको फैलाता है, वैसे हो बृहस्पतिने विचार करके "बल" के गोपन-स्थानसे गायोंको निकाला।

६ जिस समय हिंसक "बल" का अस्त्र, बृहस्पतिके अग्नितुल्य प्रतप्त और उज्ज्वल अस्त्रोंके द्वारा, तोड़ दिया गया, उस समय बृहस्पतिने गोधनपर अधिकार कर लिया। जैसे दाँतोंके द्वारा मुँहमें डाले गये पदार्थका भक्षण जीभ करती है, वैसे ही पर्वतमें गायें चुरानेवाले पणियोंके मारनेपर बृहस्पतिने गायोंको प्राप्त किया।

७ जिस समय उस गुहामें गायें शब्द करती थीं, उसी समय बृहस्पतिने समझा कि, उसमें गायें बन्द हैं। जैसे पक्षी अंडा फोड़कर बच्चेको निकालता है, वैसे ही वह भी पर्वतसे गायोंको निकाल ले आये।

८ जैसे थोड़े जलमें मत्स्य (व्याकुल) रहते हैं, वैसे ही बृहस्पतिने पर्वतके बीच बँधी और मधुरके समान अभीष्ट गायोंको देखा। जैसे वृक्षसे सोमपात्रको निकाला जाता है, वैसे ही बृहस्पतिने पर्वतसे गायोंको निकाला

सोषामविन्दत् सः स्वः सो अग्निं सो अर्केण वि बबाधे तमांसि ।
बृहस्पतिर्गोवपुषो बलस्य निर्मज्जानं न पर्वणो जभार ॥९॥
हिमेव पर्णा मुषिता वनानि बृहस्पतिनाकृपयद्वलो गाः ।
अनानुकृत्यमपुनश्चकार यात् सूर्यामासा मिथ उच्चरातः ॥१०॥
अभि श्यावं न कृशनेभिरश्वं नक्षत्रेभिः पितरो द्यामपिंशन् ।
रात्र्यां तमो अदधुर्ज्योतिरहन् बृहस्पतिर्भिनदद्रिं विदद्गाः ॥११॥
इदमकर्म नमो अभ्रियाय यः पूर्वीरन्वानोनवीति ।
बृहस्पतिः स हि गोभिः सो अश्वैः स
वीरेभिः स नृभिर्नो वयो धात् ॥१२॥

६ अनुवाक । ६९ सूक्त

अग्नि देवता । बध्य्रश्व-पुत्र सुमित्र ऋषि । जगती और त्रिष्टुप् छन्द ।

भद्रा अग्नेर्वध्र्यश्वस्य संदृशो वामी प्रणीतिः सुरणा उपेतयः ।
यदीं सुमित्रा विशो अग्र इन्धते घृतेनाहुतो जरते दविद्युतत् ॥१॥

---

९ बृहस्पतिने गायोंको देखनेके लिये उषाको प्राप्त किया । उन्होंने सूर्य और अग्निको पाकर उत्तम तेजसे अन्धकारको नष्ट किया। गायोंसे घिरे हुए "बल"के पर्वतसे उन्होंने गायोंका वैसे ही उद्धार किया, जैसे अस्थिसे मज्जा बाहर की जाती है।

१० जैसे हिम पद्म-पात्रोंका हरण करता है, वैसे ही "बल"की सारी गायें बृहस्पतिके द्वारा अपहृत हुईं। ऐसा कर्म दूसरेके लिये अकर्त्तव्य और अननुकरणीय है। इस कार्यसे सूर्य और चन्द्रमा उदित होने लगे।

११ पालक देवोंने द्युलोकको नक्षत्रोंसे वैसे ही अलङ्कृत किया, जैसे श्यामवर्ण घोड़ेको सुवर्णाभूषणोंसे विभूषित किया जाता है। उन्होंने अन्धकारको रात्रिके लिये रखा और ज्योति दिनके लिये। पर्वतको फाड़कर बृहस्पतिने गोधनको प्राप्त किया।

१२ जिन बृहस्पतिने अनेक ऋचाओंको कहा है और जो अन्तरिक्ष-वासी हो गये हैं, उनको हमने नमस्कार किया । बृहस्पति हमें गाय, घोड़ा, संन्तान, भृत्य और अन्न द ।

---

१ बध्य्रश्वने जिन अग्निको स्थापित किया था, उनकी मूर्त्ति दर्शनीय हो, उनकी प्रसन्नता मङ्गलमयी हो और उनका यज्ञागमन शोभन हो। जिस समय हम सुमित्र लोग अग्निको स्थापित करते हैं, उस समय अग्नि घृताहुति पाकर उद्दीप्त होते हैं और उनकी हम स्तुति करते हैं ।

घृतमग्नेर्वध्र्यश्वस्य वर्धनं घृतमन्न घृतन्वस्य मेदनम् ।
घृतेनाहुत उर्विया वि पप्रथे सूर्यइव रोचते सर्पिरासुतिः ॥२॥
यत्ते मनुर्यदनीकं सुमित्रः समीधे अग्ने तदिदं नवीयः ।
स रेवच्छोच स गिरो जुषस्व स वाजं दर्षि स इह श्रवोधाः ॥३॥
यं त्वा पूर्वमीलितो वध्र्यश्वः समीधे अग्ने स इदं जुषस्व ।
स नः स्तिपा उत भवा तनूपा दात्रं रक्षस्व यदिदं ते अस्मे ॥४॥
भवा द्युम्नी वाध्र्यश्वोत गोपा मा त्वा तारीदभिमातिर्जनानाम् ।
शूरइव धृष्णुश्च्यवनः सुमित्रः प्र नु वोचं वाध्र्यश्वस्य नाम ॥५॥
समज्र्या पर्वत्या वसूनि दासा वृत्राण्यार्या जिगेथ ।
शूरऽइव धृष्णुश्च्यवनो जनानां त्वमग्ने पृतनायूँरभि ष्याः ॥६॥

---

२ बध्र्यश्वके अग्नि घृतके द्वारा ही बढ़ें, घृत ही उनका आहार हो और घृत ही उन्हें स्निग्ध करे वा पुष्ट करे। घृताहुति पाकर अग्नि अत्यन्त विस्तृत होते हैं। घी देनेपर अग्नि सूर्यके समान प्रदीप्त हो जाते हैं।

३ जैसे मनु तुम्हारी मूर्ति (किरणों) को प्रदीप्त करते हैं, वैसे ही मैं भी तुम्हें प्रदीप्त करता हूं। यह रश्मिसङ्घ नया है। तुम धनी होकर प्रदीप्त होओ। हमारे स्तोत्रको ग्रहण करो, शत्रु-सेनाको विदीर्ण करो और यहां अन्न स्थापित करो।

४ बध्र्यश्वने प्रथम तुम्हें प्रदीप्त किया था। तुम हमारे गृह और देहकी रक्षा करो। तुमने यह जो कुछ दिया है, सबकी रक्षा करो।

५ बध्र्यश्वके अग्नि, प्रदीप्त होओ। रक्षक बनो। लोगोंकी हिंसा करनेवाला तुम्हें पराजित न करने पावे। वीरके समान शत्रु-धर्षक और शत्रु-नाशक बनो। बध्र्यश्वके अग्निके नामोंको मैं (सुमित्र) कहता हूं।

६ अग्नि, पर्वतपर उत्पन्न जो धन हैं, उसे तुमने दासोंसे जीतकर आर्योंको दिया है। तुम दुर्द्धर्ष वीरके समान शत्रुओंको मारा। जो युद्ध करने आते हैं, उनसे भिड़ो।

दीर्घतन्तुर्बृहदुक्षायमग्निः सहस्त्ररतरीः शतनीथ ऋभ्वा ।
द्युमान् द्युमत्सु नृभिर्मृज्यमानः सुमित्रेषु दीद्यो देवयत्सु ॥७॥
त्वे धेनुः सुदुघा जातवेदोऽसश्चतेव समना सबर्धुक् ।
त्वं नृभिर्दक्षिणावद्भिरग्ने सुमित्रेभिरिध्यसे देवयद्भिः ॥८॥
देवाश्चित्ते अमृता जातवेदो महिमानं वाध्र्यश्व प्रवोचन् ।
यत् सम्पृच्छं मानुषीर्विश आयन्त्वं नृभिरजयस्त्वावृधेभिः ॥९॥
पितेव पुत्रमबिभरुपस्थे त्वामग्ने वध्र्यश्वः सपर्यन् ।
जुषाणो अस्य समिधं यविष्ठोत पूर्वां अवनोर्व्राधतश्चित् ॥१०॥
शश्वदग्निर्वध्र्यश्वस्य शत्रून्नृभिर्जिगाय सुतसोमवद्भिः ।
समनं चिददहश्चित्रभानोऽव व्राधन्तमभिनद्वृधश्चित् ॥११॥

७ ये अग्नि दीर्घ-तन्तु हैं (इनका वंश विस्तृत है)। ये प्रधान दाता हैं। ये सहस्र स्थानोंका आच्छादन करते हैं। शतसंख्यक मार्गोंसे जाते हैं। ये प्रदीप्तोंमें महान् प्रदीप्त हैं। प्रधान पुरोहित लोग इन्हें अलङ्कृत करते हैं। अग्नि, देव-भक्त सुमित्र—वंशीयोंके गृहमें प्रदीप्त होओ।

८ ज्ञानी अग्नि, तुम्हारी गायको बहुत सरलतासे दूहा जाता है। उसके दोहनमें कोई विघ्न-बाधा नहीं है। वह सावधान होकर अमृत-रूप दूध देती है। देव-भक्त सुमित्रवंशीय प्रधान व्यक्ति, दक्षिणा-सम्पन्न होकर, तुम्हें प्रज्वलित करते हैं।

९ बध्र्यश्वके अग्नि, अमर देवता तुम्हारी महिमा गाते हैं। जिस समय मनुष्य लोग तुम्हारी महिमा जाननेके लिये गये, उस समय तुमने सबके नेता और वर्द्धित देवोंके साथ कर्मविघ्नकारकोंको जीत डाला।

१० अग्नि, जैसे पिता पुत्रको गोदमें लेकर उसका लालन-पालन करता है, वैसे ही मेरे पिताने तुम्हारी सेवा की है। युवक अग्नि, तुमने मेरे पितासे समिधा प्राप्त करके बाधक शत्रुओंको मारा था।

११ सोमरस प्रस्तुत करनेवालोंके साथ बध्र्यश्वके अग्नि शत्रुओंको सदासे जीतते आते हैं। नाना तेजोंवाले अग्नि, तुमने, ध्यान देकर, हिंसकको जलाया है। जो हिंसक अधिक बढ़ गये थे, उन्हें अग्निने मार डाला।

अयमग्निर्वध्र्यश्वस्य वृत्रहा सनकात् प्रेद्धो नमसोपवाक्यः ।
स नो अजामीँ रुत वा विजामीनभितिष्ठ शर्धतो वाध्र्यश्व ॥१२॥

७० सूक्त

आप्री देवता । सुमित्र ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

इमां मे अग्ने समिधं जुषस्वेलस्पदे प्रति हर्या घृताचीम् ।
वर्ष्मन् पृथिव्याः सुदिनत्वे अह्नामूर्ध्वो भव सुक्रतो देवयज्या ॥१॥
आ देवानामग्रयावेह यातु नराशंसो विश्वरूपेभिरश्वैः ।
ऋतस्य पथा नमसा मियेधो देवेभ्यो देवतमः सुषूदत् ॥२॥
शश्वत्तममीलते दूत्याय हविष्मन्तो मनुष्यासो अग्निम् ।
वहिष्ठैरश्वैः सुवृता रथेना देवान्वक्षि निषदेह होता ॥३॥
वि प्रथतां देवजुष्टं तिरश्चा दीर्घं द्राघ्मा सुरभि भूत्वस्मे ।
अहेलता मनसा देव बर्हिरिन्द्रज्येष्ठाँ उशतो यक्षि देवान् ॥४॥

---

१२ बध्र्यश्वके अग्नि शत्रु-हन्ता हैं। यह सदासे प्रज्वलित हैं। यह नमस्कारके योग्य हैं। बध्र्यश्वके अग्नि, हमारे विजातीय शत्रुओं और विजातीय हिंसकोंको हराओ ।

---

१ अग्नि, उत्तरवेदीपर दी गयी मेरी समिधाको ग्रहण करो और घृतवाली स्रुक्की अभिलाषा करो। सुप्रज्ञ अग्नि, पृथिवीके उन्नत प्रदेशपर सुदिनके लिये देवयज्ञसे, ज्वालाओंके साथ, ऊपर उठो ।

२ देवोंके अग्रगामी और मनुष्योंके द्वारा प्रशंसनीय अग्नि नाना वर्णोंवाले अश्वोंके साथ इस यज्ञमें पधारें। अत्यन्त योग्य और देवोंमें मुख्य अग्नि हवि ले जायं।

३ हविर्दाता यजमान सनातन अग्निकी, दूत-कर्मके लिये, स्तुति करते हैं। वाहक अश्वों और सुन्दर रथके साथ इन्द्रादि देवोंको यज्ञमें ले आओ। होता होकर तुम इस यज्ञमें बैठो।

४ देवोंके द्वारा सेवित और टेढ़ा कुश विस्तृत हो—अत्यन्त लम्बा हो। हमारा कुश सुरभि हो। बर्हि नामक अग्नि, प्रसन्न चित्तसे हवि चाहनेवाले इन्द्रादि देवोंका पूजन करो।

दिवो वा सानु स्पृशता वरीयः पृथिव्या वा मात्रया विश्रयध्वम् ।
उशतीर्द्वारो महिना महद्भिर्देवं रथं रथयुर्धारयध्वम् ॥५॥
देवी दिवो दुहितरा सुशिल्पे उषासानक्ता सदतां नि योनौ ।
आ वां देवास उशती उशन्त उरौ सीदन्तु सुभगे उपस्थे ॥६॥
ऊर्ध्वो ग्रावा बृहदग्निः समिद्धः प्रिया धामान्यदितेरुपस्थे ।
पुरोहितावृत्विजा यज्ञे अस्मिन् विदुष्टरा द्रविणमा यजेथाम् ॥७॥
तिस्रो देवीर्बर्हिरिदं वरीय आसीदत चकृमा वः स्योनम् ।
मनुष्वद्यज्ञं सुधिता हवींषीळा देवी घृतपदी जुषन्त ॥८॥
देव त्वष्टर्यद्ध चारुत्वमानड्यदङ्गिरसामभवः सचाभूः ।
स देवानां पाथ उप प्र विद्वानुशन्यक्षि द्रविणोदः सुरत्नः ॥९॥

---

५ द्वार-देवियो, आकाशके उन्नत स्थानको छुओ वा उन्नत होओ। पृथिवीके समान विस्तृत होओ। देवाभिलाषी और रथकामी होकर तुमलोग अपनी महिमासे देवोंके द्वारा अधिष्ठित और विहार-साधन रथको धारण करो।

६ प्रकाशमाना, द्युलोककी पुत्री और शोभन-रूपा उषा तथा रात्रि यज्ञ-स्थानमें विराजें। अभिलाषिणी और शोभन-धन देवियो, तुम्हारे विस्तृत और समीपस्थ स्थानमें हविकी इच्छा वाले देवता बैठें।

७ जिस समय सोमाभिषवके लिये पत्थर उठाया जाता है, जिस समय महान् अग्नि समिद्ध होते हैं और जिस समय देवोंके प्रिय धाम (हविर्धारक यज्ञ-पात्र) यज्ञ-स्थानमें लाये जाते हैं, उस समय, हे पुरोहित, ऋत्विक् और विद्वान् दो पुरुषो, इस यज्ञमें धन दो।

८ हे इड़ा आदि तीन देवियो, इस उन्नत कुशपर बैठो। तुम्हारे लिये इसे हमने बिछाया है। इड़ा, प्रकाशमाना सरस्वती और दीप्त पदसे युक्त भारतीने जैसे मनुके यज्ञमें हविका सेवन किया था, वैसे ही हमारे यज्ञमें भलीभाँति रखे हुए हविका सेवन करो।

९ त्वष्टा देव, तुम मङ्गलमय रूप प्राप्त कर चुके हो। तुम अङ्गिरा लोगोंके सखा होओ। हे धनदाता, तुम सुन्दर धनवाले हो। हविकी इच्छा करके तुम देवोंका भाग जानकर उन्हें अन्न दो।

वनस्पते रशनया नियूया देवानां पाथ उप वक्षि विद्वान् ।
स्वदाति देवः कृणवद्धवींष्यवतां द्यावापृथिवी हवं मे ॥१०॥
आग्ने वह वरुणमिष्टये न इन्द्रं दिवो मरुतो अन्तरिक्षात् ।
सीदन्तु बर्हिर्विश्व आ यजत्राः स्वाहा देवा अमृता मादयन्ताम् ॥११॥

७१ सूक्त

ब्रह्मज्ञान देवता। बृहस्पति ऋषि। त्रिष्टुप् और जगती छन्द ।

बृहस्पते प्रथमं वाचो अग्रं यत् प्रैरत नामधेयं दधानाः ।
यदेषां श्रेष्ठं यदरिप्रमासीत् प्रेणा तदेषां निहितं गुहाविः ॥१॥
सक्तुमिव तितउना पुनन्तो यत्र धीरा मनसा वाचमक्रत ।
अत्रा सखायः सख्यानि जानते भद्रैषां लक्ष्मीर्निहिताधि वाचि ॥२॥

---

१० वनस्पतिसे बने यूपकाष्ठ, तुम जानकार हो। तुम रज्जुके द्वारा बाँधे जाकर देवोंको अन्न दो। वनस्पतिदेव हविका स्वाद लें और हमारे दिये हुए हविको देवोंको दें। मेरे आह्वानकी रक्षा द्यावापृथिवी करें।

११ अग्नि, हमारे यज्ञके लिये द्युलोक (स्वर्ग) और अन्तरिक्ष (आकाश) से इन्द्र, वरुण और मित्रको ले आओ। यजनीय सब देवता कुशपर बैठें। अमर देवता स्वाहा शब्दसे आनन्दित हों।

---

१ बृहस्पति (स्वात्मन्), बालक प्रथम पदार्थोंका नाम भर ("तात" आदि) रखते हैं; यह उनकी भाषा-शिक्षाका प्रथम सोपान है। इनका जो उत्कृष्ट और निर्दोष ज्ञान (वेदार्थज्ञान) गोपनीय है, वह सरस्वतीके प्रेमसे प्रकट होता है।

२ जैसे सूपसे सत्तूको परिष्कृत किया जाता है, वैसे ही बुद्धिमान् लोग बुद्धि बलसे परिष्कृत भाषाको प्रस्तुत करते हैं। उस समय विद्वान् लोग अपने अभ्युदयको जानते हैं। इनके वचनमें मङ्गलमयी लक्ष्मी निवास करती हैं।

यज्ञेन वाचः पदवीयमायन्तामन्वविन्दन्नृषिषु प्रविष्टाम् ।
तामाभृत्या व्यदधुः पुरुत्रा तां सप्त रेभा अभि सं नवन्ते ॥३॥
उत त्वः पश्यन्न ददर्श वाचमुत त्वः शृण्वन्न शृणोत्येनाम् ।
उतो त्वस्मै तन्वं वि सस्रे जायेव पत्य उशती सुवासाः ॥४॥
उत त्वं सख्ये स्थिरपीतमाहुर्नैनं हिन्वन्त्यपि वाजिनेषु ।
अधेन्वा चरति माययैष वाचं शुश्रुवाँ अफलामपुष्पाम् ॥५॥
यस्तित्याज सचिविदं सखायं न तस्य वाच्यपि भागो अस्ति ।
यदीं शृणोत्यलकं शृणोति नहि प्रवेद सुकृतस्य पन्थाम् ॥६॥
अक्षण्वन्तः कर्णवन्तः सखायो मनोजवेष्वसमा बभूवुः ।
आदघ्नास उपकक्षास उ त्वे ह्रदाइव स्नात्वा उ त्वे ददृश्रे ॥७॥

३ बुद्धिमान् लोग यज्ञके द्वारा वचन (भाषा) का मार्ग पाते हैं। ऋषियोंके अन्तःकरणमें जो वाक् (भाषा) थी, उसको उन्होंने प्राप्त किया । उस वाणी (भाषा)को लेकर उन्होंने सारे मनुष्यों-को पढ़ाया । सातो छन्द इसी भाषामें स्तुति करते हैं ।

४ कोई-कोई समझकर वा देखकर भी भाषाको नहीं समझते वा देखते; कोई-कोई उसे सुन कर भी नहीं सुनते । किसी-किसीके पास वाग्देवी स्वयं वैसे ही प्रकट होती हैं, जैसे संभोगा-भिलाषी भार्या, सुन्दर वस्त्र धारण करके, अपने स्वामीके पास अपने शरीरको प्रकाश करती है ।

५ विद्वन्मण्डलीमें किसी-किसीकी यह प्रतिष्ठा है कि, वह उत्तम-भाव-ग्राही है और उसके विना कोई कार्य नहीं हो सकता (ऐसे लोगोंके कारण ही वेदार्थ ज्ञान होता है) । कोई-कोई असार-वाक्यका अभ्यास करते हैं । वे वास्तविक धेनु नहीं हैं—काल्पनिक, माया मात्र धेनु हैं ।

६ जो विद्वान् मित्रको छोड़ देता , उसकी वाणीसे कोई फल नहीं है । वह जो कुछ सुनता है, व्यर्थ ही सुनता है । वह सत्कर्मका मार्ग नहीं जान सकता ।

७ जिन्हें आँखें हैं, कान हैं, ऐसे सखा (समान-ज्ञानी) मनके भावको (ज्ञानको) प्रकाश करनेमें असाधारण होते हैं । कोई-कोई मुखतक जलवाले पुष्कर और कोई-कोई कटि-पर्यन्त जलवाले तड़ागके समान होते हैं । कोई-कोई स्नान करनेके उपयुक्त गभीर ह्रदके समान होते हैं ।

हृदा तष्टेषु मनसो जवेषु यद्ब्राह्मणाः संयजन्ते सखायः ।
अत्राह त्वं वि जहुर्वेद्याभिरोहब्रह्माणो वि चरन्त्यु त्वे ॥८॥
इमे ये नार्वाङ्न परश्चरन्ति न ब्राह्मणासो न सुतेकरासः ।
त एते वाचमभिपद्य पापया सिरीस्तन्त्रं तन्वते अप्रजज्ञयः ॥९॥
सर्वे नन्दन्ति यशसागते न सभासाहेन सख्या सखायः ।
किल्बिषस्पृत् पितुषणिर्ह्येषामरं हितो भवति वाजिनाय ॥१०॥
ऋचां त्वः पोषमास्ते पुपुष्वान् गायत्रं त्वो गायति शक्वरीषु ।
ब्रह्मा त्वो वदति जातविद्यां यज्ञस्य मात्रां वि मिमीत उत्वः ॥११॥



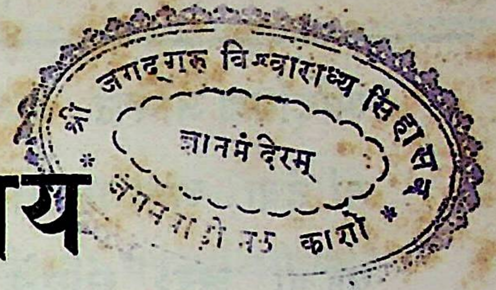
८ जिस समय अनेक समान-ज्ञानी ब्राह्मण हृदयसे मनोगम्य वेदार्थोंके गुण-दोष-परीक्षणके लिये एकत्र होते हैं, उस समय किसी-किसी व्यक्तिको कुछ ज्ञान नहीं होता । कोई-कोई स्तोत्रज्ञ (ब्राह्मण) वेदार्थ-ज्ञाता होकर विचरण करते हैं ।

९ जो व्यक्ति इस लोकमें वेदज्ञ ब्राह्मणोंके और परलोकीय देवोंके साथ (यज्ञादिमें) कर्म नहीं करते, जो न तो स्तोता (ऋत्विक्) हैं, न सोम-यज्ञ-कर्त्ता हैं, वे पापाश्रित लौकिक भाषाकी शिक्षाके द्वारा, मूर्ख व्यक्तिके समान, लाङ्गल-चालक (हल जोतनेवाले) बनकर कृषि-रूप वाना बुनते हैं ।

१० यश (सोम) मित्रके समान कार्य करता है, यह सभामें प्राधान्य प्रदान करता है। इसे प्राप्त कर सब प्रसन्न होते हैं; क्योंकि यशके द्वारा दुर्नाम दूर होता हैं, अन्न-प्राप्ति होती है, बल मिलता है, नाना प्रकारसे उपकार होता हैं।

११ एक जन अनेक ऋचाओंका स्तव करते हुए यज्ञानुष्ठानमें सहायता करते हैं, दूसरे गायत्री छन्दमें साम-गान करते हैं । ब्रह्मा नामक जो पुरोहित हैं, वे ज्ञात-विद्या (प्रायश्चित्त आदि) की व्याख्या करते हैं । अध्वर्यु पुरोहित यज्ञके विभिन्न कार्य करते हैं ।

द्वितीय अध्याय समाप्त



तृतीय अध्याय

७२ सूक्त

देव देवता। लोकनामाके पुत्र बृहस्पति ऋषि। अनुष्टुप् छन्द।

देवानां नु वयं जाना प्र वोचाम विपन्यया।
उक्थेषु शस्यमानेषु यः पश्यादुत्तरे युगे ॥१॥
ब्रम्हणस्पतिरेता सं कर्मारइवाधमत्।
देवानां पूर्व्ये युगेऽसतः सदजायत ॥२॥
देवानां युगे प्रथमेऽसतः सदजायत।
तदाशा अन्वजायन्त तदुत्तानपदस्परि ॥३॥
भूर्जज्ञ उत्तानपदो भुव आशा अजायन्त।
अदितेर्दक्षो अजायत दक्षाद्वदितिः परि ॥४॥

---

१ हम देवों वा आदित्योंके जन्मको स्पष्ट रूपसे कहते हैं। आगे आनेवाले युगमें देव-संघ, यज्ञानुष्ठान होनेपर, स्तोताको देखेगा।

२ आदि सृष्टिमें ब्रह्मणस्पति (वा अदिति) ने कर्मकारके समान देवोंको उत्पन्न किया। असत् वा अविद्यमान (नाम-रूप-विहीन) से सत् (नाम-रूप आदि) उत्पन्न हुआ।

३ देवोत्पत्तिके पूर्व समयमें असत्से सत् उत्पन्न हुआ। इसके अनन्तर दिशाएँ उत्पन्न हुईं और दिशाओंके अनन्तर वृक्ष उत्पन्न हुए।

४ वृक्षोंसे पृथिवी उत्पन्न हुई और पृथिवीसे दिशाएँ उत्पन्न हुईं। अदितिसे दक्ष उत्पन्न हुए और दक्षसे अदिति। +

× विभिन्न जन्मोंमें विभिन्न प्रकृतिवाले दक्ष और अदितिसे अदिति और दक्ष उत्पन्न हुए।

अदितिर्ह्यजनिष्ट दक्ष या दुहिता तव ।
तां देवा अन्वजायन्त भद्रा अमृतबन्धवः ॥५॥

यद्देवा अदः सलिले सुसंरब्धा अतिष्ठत ।
अत्रा वो नृत्यतामिव तीव्रो रेणुरपायत ॥६॥

यद्देवा यतयो यथा भुवनान्यपिन्वत ।
अत्रा समुद्र आ गूळ्हमा सूर्यमजभर्तन ॥७॥

अष्टौ पुत्रासो अदितेर्ये जातास्तन्वस्परि ।
देवाँ उप प्रैत् सप्तभिः परा मार्ताण्डमास्यत् ॥८॥

सप्तभिः पुत्रैरदितिरुप प्रैत् पूर्व्यं युगम् ।
प्रजाय मृत्यवे त्वत् पुनर्मार्ताण्डमाभरत् ॥९॥



५ दक्ष, तुम्हारी पुत्री अदितिने देवोंको जन्म दिया । देवता स्तुत्य और अमर हैं ।

६ देवता लोग इस सलिलमें रहकर महोत्साह प्रकट करने लगे । व मानो नाचने लगे । इससे दुःसह धूलि उठी ।

७ मेघोंके समान देवोंने सारे संसारको ढक लिया । आकाशमें सूर्य निगूढ़ थे । देवोंने उन्हें प्रकाशित किया ।

८ अदितिके आठ पुत्र (मित्र, वरुण, धाता, अर्यमा, अंश, भग, विवस्वान् और आदित्य) हुए, जिनमेंसे सातको लेकर वह देवलोकमें गयीं और आठवें सूर्यको आकाशमें छोड़ दिया ।

९ उत्तम युगमें सात पुत्रोंको लेकर अदिति चली गयीं और जन्म तथा मृत्युके लिये सूर्यको आकाशमें रख दिया ।



७३ सूक्त

मरुत् देवता। शक्ति-पुत्र गौरवीति ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

जनिष्ठा उग्रः सहसे तुराय मन्द्र ओजिष्ठो बहुलाभिमानः।
अवर्धन्निन्द्रं मरुतश्चिदत्र माता यद्वीरं दधनद्धनिष्ठा ॥१॥
द्रुहो निषत्ता पृशनी चिदेवैः पुरू शंसेन वावृधुष्ट इन्द्रम्।
अभीवृतेव ता महापदेन ध्वान्तात् प्रपित्वादुदरन्त गर्भाः ॥२॥
ऋष्वा ते पादा प्र यज्जिगास्यवर्धन् वाजा उत ये चिदत्र।
त्वमिन्द्र सालावृकान्त्सहस्रमासन् दधिषे अश्विना ववृत्याः ॥३॥
समना तूर्णिरुप यासि यज्ञमा नासत्या सख्याय वक्षि।
वसाव्यामिन्द्र धारयः सहस्राश्विना शूर ददतुर्मघानि ॥४॥
मन्दमान ऋतादधि प्रजायै सखिभिरिन्द्र इषिरेभिरर्थम्।
आभिर्हि माया उप दस्युमागान्मिहः प्र तम्रा अवपत्तमांसि ॥५॥

---

१ इन्द्र, जिस समय गर्भ-धारयित्री इन्द्र-माताने इन्द्रको जन्म दिया, उस समय मरुतोंने महानुभाव इन्द्रको यह कह कर प्रशंसित किया कि, तुम बल और शत्रु-विनाशके लिये जनमे हो; तुम वीर, स्तुत्य, ओजस्वी और अतीव अभिमानी हो।

२ गमनशील मरुतोंके साथ दोहक इन्द्रके पास सेना बैठी हुई है। मरुतोंने प्रचुर स्तोत्रके साथ इन्द्रको वर्द्धित किया। जैसे गायें विशाल गोष्ठके बीच आच्छादित रहती हैं और आच्छादनके दूर होते ही बाहर निकलती हैं, वैसे ही गर्भ अर्थात् वृष्टि-जल व्यापक अन्धकारके बीचसे बाहर निकला।

३ इन्द्र, तुम्हारे चरण महान् हैं। जिस समय तुम जाते हो, उस समय ऋभु लोग वर्द्धित होते हैं। जो देवता हैं, सो सब वर्द्धित होते हैं। इन्द्र, तुम एक सहस्र वृकको मुखमें धारण करते हो। अश्विद्वयको फिरा सकते हो।

४ इन्द्र युद्धकी शीघ्रता होनेपर भी तुम यज्ञमें जाते हो। उस समय तुम अश्विद्वयके साथ मैत्री करते हो। हमारे लिये तुम सहस्र धनोंको धारण करते हो। अश्विद्वय भी हमें धन देते हैं।

५ यज्ञमें आह्लादित होकर इन्द्र गतिशील मरुतोंके साथ यजमानको धन देते हैं। इन्द्रने यजमानके लिये दस्युकी मायाको विनष्ट किया। उन्होंने वृष्टि बरसायी और अन्धकारको विनष्ट किया।

सनामाना चिद्ध्वसयो न्यस्मा अवाहन्निन्द्र उषसो यथानः ।
ऋष्वैरगच्छः सखिभिर्निकामैः साकं प्रतिष्ठा हृद्या जघन्थ ॥६॥
त्वं जघन्थ नमुचिं मखस्युं दासं कृण्वान ऋषये विमायम् ।
त्वं चकर्थ मनवे स्योनान् पथो देवत्राञ्जसेव यानान् ॥७॥
त्वमेतानि पप्रिषे वि नामेशान इन्द्र दधिषे गभस्तौ ।
अनु त्वा देवाः शवसा मदन्त्युपरिबुध्नान् वनिनश्चकर्थ ॥८॥
चक्रं यदस्याप्स्वा निषत्तमुतो तदस्मै मध्विच्चच्छद्यात् ।
पृथिव्यामतिषितं यदूधः पयो गोष्वदधा ओषधीषु ॥९॥
अश्वादियायेति यद्वदन्त्योजसो जातमुत मन्य एनम् ।
मन्योरियाय हर्म्येषु तस्थौ यतः प्रजज्ञ इन्द्रो अस्य वेद ॥१०॥

---

६ इन्द्र सब शत्रुओंको समान रूपसे नष्ट करते हैं। जैसे इन्होंने उषाके शकटको नष्ट किया, वैसे ही शत्रुको विध्वस्त किया। दीप्त, महान्, वृत्र-बधाभिलाषी और मित्र मरुतोंके इन्द्र वृत्र-बधके लिये गये। इन्द्र, शत्रुओंके सुन्दर-सुन्दर शरीरोंको तुमने विध्वस्त किया।

७ इन्द्र, तुम्हारा धन चाहनेवाले नमुचिको तुमने मार दिया। विघातक नमुचि नामक असुरको, मनु (ऋषि) के पास, तुमने माया-शून्य कर दिया। देवोंके बीच मनु(सामान्यतया मनुष्य मात्र) के लिये तुमने पथ प्रस्तुत कर दिये हैं। वे पथ देव-लोकमें जानेके लिये सरल हैं।

८ इन्द्र तुम इसे (संसारको) जल वा तेजसे परिपूर्ण करते हो। इन्द्र, तुम सबके स्वामी हो। तुम हाथमें वज्र धारण करते हो। सारे देवता बलधारी तुम्हारी स्तुति करते हैं। तुमने मेघोंका मुंह नीचे कर दिया है।

९ जलके बीच इन्द्रका चक्र स्थापित है। वह इन्द्रके लिये मधुका छेदन कर दे। इन्द्र, तुमने तृण, लता आदिमें जो दूध वा जल रखा है, वह गायोंके स्तनसे अतीव शुभ्र मूर्तिमें निकलता है।

१० कुछ लोग कहते हैं कि, इन्द्रकी उत्पत्ति अश्व वा आदित्यसे हुई है। परन्तु मैं जानता हूं कि, इन्द्रकी उत्पत्ति बलसे हुई है। इन्द्र क्रोधसे उत्पन्न होकर शत्रुओंकी अट्टालिकाओंके ऊपर चढ़ गये। इन्द्र कहाँसे उत्पन्न हुए हैं, यह बात वही जानते हैं।

वयः सुपर्णा उप सेदुरिन्द्रं प्रियमेधा ऋषयो नाधमानाः ।
अप ध्वान्तमूर्णुहि पूर्धि चक्षुर्मुमुग्ध्यस्मान्निधयेव बद्धान् ॥११॥



७४ सूक्त

देवता, ऋषि, छन्द आदि पूर्ववत् ।

वसूनां वा चर्कृषइयक्षन् धिया वा यज्ञैर्वा रोदस्योः ।
अर्वन्तो वा ये रयिमन्तः सातौ वनुं वा ये सुश्रुणं सुश्रुतो धुः ॥१॥
हव एषामसुरो नक्षत द्यां श्रवस्यता मनसा निंसत क्षाम् ।
चक्षाणा यत्र सुविताय देवा द्यौर्न वारेभिः कृणवन्त स्वैः ॥२॥
इयमेषाममृतानां गीः सर्वताता ये कृपणन्त रत्नम् ।
धियं च यज्ञं च साधन्तस्ते नो धान्तु वसव्यमसामि ॥३॥

---

११ गमनशील और भली भाँति गिरनेवाली आदित्यकिरणें इन्द्रके पास गयीं—यज्ञाभिलाषी ऋषि ही पक्षी हैं, जिनकी प्रार्थना इन्द्रसे थी। इन्द्र, अन्धकारको दूर करो, नेत्रको आलोकसे भर दो। हम पाशसे बद्ध हैं, हमें उससे छुड़ाओ।

---

१ धनदानके लिये इन्द्र यज्ञके द्वारा आकृष्ट किये जाते हैं। वह देवों और मनुष्योंके द्वारा आकृष्ट होते हैं। युद्धमें धनका उपार्जन करनेवाले घोड़े उन्हें आकृष्ट कर रहे हैं। जो यशस्वी व्यक्ति शत्रु-संहार करते हैं, वे इन्द्रको आकृष्ट कर रहे हैं।

२ अङ्गिरा लोगोंके आह्वान-निनादने आकाशको पूर्ण कर दिया। इन्द्रको और अन्नको चाहनेवाले देवोंने अनुष्ठाताओंको गायें दिखानेके लिये पृथिवीको प्राप्त किया। पृथिवीपर पणियोंके द्वारा अपहृत गायोंको देखते हुए देवोंने, अपने हितके लिये, आकाशमें आदित्यके समान, अपने तेजसे प्रकाश किया।

३ यह अमर देवोंकी स्तुति की जाती है। वे यज्ञमें नाना उत्तमोत्तम वस्तुएँ देते हैं। वे हमारी स्तुति और यज्ञको सिद्ध करते हुए असाधारण धन दें।

आ तत्त इन्द्रायवः पनन्ताभि य ऊर्वं गोमन्तं तितृत्सान् ।
सकृत्स्वं ये पुरुपुत्रां महीं सहस्रधारां बृहतीं दुधुक्षन् ॥४

शचीव इन्द्रमवसे कृणुध्वमनानतं दमयन्तं पृतन्यून् ।
ऋभुक्षणं मघवानं सुवृक्तिं भर्ता यो वज्रं नर्यं पुरुक्षुः ॥५॥

यद्वावान पुरुतमं पुराषाला वृत्रहेन्द्रो नामान्यप्राः ।
अचेति प्रासहस्पतिस्तुविष्मान्यदीमुश्मसि कर्तवे करत्तत् ॥६॥



७५ सूक्त

नदी देवता । प्रियमेध-पुत्र सिन्धुक्षित् ऋषि । जगती छन्द ।

प्र सु व आपो महिमानमुत्तमं कारुर्वोचाति सदने विवस्वतः ।
प्र सप्तसप्त त्रेधा हि चक्रमुः प्र सृत्वरीणामति सिन्धुरोजसा ॥१॥

---

४ इन्द्र, जो लोग शत्रुओंसे गोधन ले लेना चाहते हैं, वे तुम्हारी ही स्तुति करते हैं। यह विशाल पृथिवी एक बार उत्पन्न हुई है; परन्तु अनेक सन्तानें (शस्य आदि) उत्पन्न करती हैं। ये सहस्र धाराओंमें सम्पत्ति-रूप दुग्धका दान करती हैं। जो लोग इस पृथिवी-धेनुको दूहना चाहते हैं, वे भी इन्द्रकी ही स्तुति करते हैं।

५ कर्म-निष्ठ पुरोहितो, कभी भी अवनत न होनेवाले, शत्रुओंका दहन करनेवाले, महान् धनी, सुन्दर स्तुतिवाले और मनुष्य-हितके लिये वज्र धारण करनेवाले इन्द्रको शरणमें रक्षाके लिये जाओ।

६ शत्रु-पुरी-ध्वंसक इन्द्रने जिस समय अत्यन्त प्रवृद्ध शत्रुका संहार किया, उस समय वृत्रघ्न होकर उन्होंने जलसे पृथिवीको पूर्ण किया। उस समय सबने समझा कि, इन्द्र अत्यन्त बली और क्षमताशाली हैं। हम जो कुछ चाहते हैं, इन्द्र सबको पूर्ण करते हैं।

——०——

१ जल, सेवक यजमानके गृहमें तुम्हारी उत्तम महिमाको मैं कहा करता हूं। नदियाँ, सात-सात करके तीन प्रकार (पृथिवी, आकाश और द्युलोक) से चलीं। सबसे अधिक बहनेवाली सिन्धु ही है।

प्र तेऽरदद्वरुणो यातवे पथः सिन्धो यद्वाजाँ अभ्यद्रवस्त्वम् ।
भूम्या अधि प्रवता यासि सानुना यदेषामग्रं जगतामिरज्यसि ॥२॥
दिवि स्वनो यतते भूम्योपर्यनन्तं शुष्ममुदियर्ति भानुना ।
अभ्रादिव प्र स्तनयन्ति वृष्टयः सिन्धुर्यदेति वृषभो न रोरुवत् ॥३॥
अभि त्वा सिन्धो शिशुमिन्न मातरो वाश्रा अर्षन्ति पयसेव धेनवः ।
राजेव युध्वा नयसि त्वमित् सिचौ यदासामग्रं प्रवतामिनक्षसि ॥४॥
इमं मे गङ्गे यमुने सरस्वति शुतुद्रि स्तोमं सचता परुष्ण्या ।
असिक्न्या मरुद्वृधे वितस्तयार्जीकीये शृणुह्या सुषोमया ॥५॥
तृष्टामया प्रथमं यातवे सजूः सुसर्त्वा रसया श्वेत्या त्या ।
त्वं सिन्धो कुभया गोमतीं क्रुमुं मेहत्न्वा सरथं याभिरीयसे ॥६॥

२ सिन्धु, जिस समय तुम शस्यशाली प्रदेशकी ओर चली, उस समय वरुणने तुम्हारे गमनके लिये विस्तृत पथ बना दिया। तुम भूमिके ऊपर उत्तम मार्गसे जाती हो। तुम सब नदियोंके ऊपर विराजमान हो।

३ पृथिवीसे सिन्धुका शब्द उठकर आकाशको घहरा देता है। यह महावेग और दीप्त लहरोंके साथ जाती है। जिस समय सिन्धु वृषभके समान प्रबल शब्द करती हुई आती है, उस समय विदित होता है कि, आकाश (वा मेघ) से घोर गर्जन-तर्जनके साथ वृष्टि हो रही है।

४ जैसे शिशुके पास माता जाती है और दुग्धवती गायें बछड़ेके पास जाती हैं, वैसे ही शब्द करती हुई अन्य नदियाँ सिन्धुके पास जाती हैं। जैसे युद्ध-कर्त्ता राजा सेना ले जाता है, वैसे ही तुम अपनी सहगामिनी दो नदियोंको लेकर आगे-आगे जाती हो।

५ हे गङ्गा, यमुना, सरस्वती, शुतुद्री (सतलज), परुष्णी (रावी), असिक्नी (चिनाब)के साथ मरुद्वृधा (चिनाब और झेलमकी बीचकी वा चिनाबकी पश्चिमवाली मरुवर्दवन नामकी सहायक नदी), वितस्ता (झेलम), सुषोमा (सोहान) और आर्जीकीया (व्यास), तुम लोग मेरे इस स्तोत्रका भाग कर लो और सुनो।

६ सिन्धु, पहले तुम तृष्टामा (सिन्धुकी पश्चिमी सहायक नदी) के साथ चली। पुनः सुसर्त्तु, रसा और श्वेत्या (ये तीनों सिन्धुकी पश्चिमी सहायक नदियाँ हैं) से मिलीं। तुम क्रुमु (कुर्रम) और गोमती (गोमल) को, कुभा ("काबुल" नदी) और मेहत्नू (सिन्धुकी पश्चिमी सहायक नदी) से मिलाती हो। इन नदियोंके साथ तुम बहती हो। *

* ५ वीं ऋचामें सिन्धुकी पूर्वी और ६ठी ऋचामें सिन्धुकी पश्चिमी नदियोंका उल्लेख है।

ऋजीत्येनी रुशती महित्वा परि ज्रयाँसि भरते रजांसि ।
अदब्धा सिन्धुरपसामपस्तमाश्वा न चित्रा वपुषीव दर्शता ॥७॥
स्वश्वा सिन्धुः सुरथा सुवासा हिरण्ययी सुकृता वाजिनीवती ।
ऊर्णावती युवतिः सीलमावत्युताधि वस्ते सुभगा मधुवृधम् ॥८॥
सुखं रथं युयुजे सिन्धुरश्विनं तेन वाजं सनिषदस्मिन्नाजौ ।
महान्ह्यस्य महिमा पनस्यतेऽदब्धस्य स्वयशसो विरप्शिनः ॥९॥

७६ सूक्त

सोमाभिषववाला प्रस्तर देवता। इरावान्के पुत्र जरत्कर्ण ऋषि। जगती छन्द ।

आ व ऋञ्जस ऊर्जां व्युष्टिष्विन्द्रं मरुतो रोदसी अनक्तन ।
उभे यथा नो अहनी सचाभुवा सदःसदो वरिवस्यात उद्भिदा ॥१॥

७ सिन्धु नदी सरल-गामिनी, श्वेतवर्णा और प्रदीप्ता हैं । सिन्धुका वेगशाली जल चारो ओर जाता है। नदियोंमेंसे सबसे वेगवती सिन्धु ही है । यह घोड़ीके समान अद्भुत है और मोटी स्त्रीके समान दर्शनीया है ।

८ सिन्धु शोभन अश्वों, सुन्दर रथ, सुन्दर वस्त्र, सुवर्णाभरण, सुन्दर सज्जा, अन्न और पशुलोमवाली है। सिन्धु नित्यतरुणी और तिनकों (सीलमा) वाली है। सौभाग्यवती सिन्धु मधुवर्द्धक पुष्पोंसे आच्छादित है ।

९ सिन्धु सुखकर और अश्ववाले रथको जोतती है । उस रथसे वह अन्न दे। यज्ञमें सिन्धुके रथकी महिमा गायी जाती है। सिन्धुका रथ अहिंसित कीर्तिकर और महान् है।



१ पत्थरो, अन्नवाली उषाके आते ही तुम्हें मैं प्रस्तुत करता हूँ ।तुम सोम देकर इन्द्र, मरुत् और द्यावापृथिवीको अनुकूल करो। ये द्यावापृथिवी एक साथ हमलोगोंमेंसे प्रत्येकके गृहमें सेवा ग्रहण कर गृहोंको धनसे पूर्ण कर दें ।

तदु श्रेष्ठं सवनं सुनोतनात्यो न हस्तयतो अद्रिः सोतरि।
विदद्ध्यर्यो अभिभूति पौंस्यं महो राये चित्तरुते यदर्वतः ॥२॥
तदिद्ध्यस्य सवनं विवेरपो यथा पुरा मनवे गातुमश्रेत्।
गोअर्णसि त्वाष्ट्रे अश्वनिर्णिजि प्रेमध्वरेष्वध्वराँ अशिश्रयुः ॥३॥
अप हत रक्षसो भङ्गुरावतः स्कभायत निर्ऋतिं सेधतामतिम्।
आ नो रयिं सर्ववीरं सुनोतन देवाव्यं भरत श्लोकमद्रयः ॥४॥
दिवश्चिदा वोमवत्तरेभ्यो विभ्वना चिदाश्वपस्तरेभ्यः।
वायोश्चिदा सोमरभस्तरेभ्योऽग्नेश्चिदर्च पितुकृत्तरेभ्यः ॥५॥
भुरन्तु नो यशसः सोत्वन्धसो ग्रावाणो वाचा दिविता दिवित्मता।
नरो यत्र दुहते काम्यं मध्वाघोषयन्तो अभितो मिथस्तुरः ॥६॥

२ हाथोंसे पकड़े जानेपर अभिषव-प्रस्तर घोड़ेके समान हो जाता है। श्रेष्ठ सोमको तुम प्रस्तुत करो। प्रस्तरसे सोमाभिषव करनेवाला यजमान शत्रुओंको हरानेवाला बल प्राप्त करता है। यह अश्व देता है, जिससे यथेष्ट धन मिलता है।

३ जैसे प्राचीन समयमें मनुके यज्ञमें सोमरस आया था, वैसे ही इस प्रस्तरके द्वारा निष्पीड़ित सोम जलमें प्रवेश करे। गायोंको जलमें स्नान कराने, गृह-निर्माण-कार्य और घोड़ोंको स्नान करानेके समय, यज्ञ-कालमें, इस अविनश्वर सोमरसका आश्रय लिया जाता है।

४ पत्थरो, भञ्जक राक्षसोंको विनष्ट करो। निर्ऋति (पाप-देवता) को दूर करो। दुर्बुद्धिको हटाओ। सन्तान-युक्त धन दो। देवोंको प्रसन्न करनेवाले श्लोकका सम्पादन करो।

५ जो आकाशसे भी तेजस्वी वा बली हैं, जो सुधन्वाके पुत्र विभ्वासे भी शीघ्र-कर्मा हैं, जो वायुसे भी सोमाभिषवमें वेगशाली हैं और जो अग्निसे भी अधिक अन्नदाता हैं, उन पत्थरोंकी, देवोंकी प्रसन्नताके लिये, पूजा करो।

६ यशस्वी प्रस्तर हमारे लिये अभिषुत सोमका रस सम्पादित कर। वे स्तोत्रके साथ उज्ज्वल वाक्यके द्वारा उज्ज्वल सोम-यागमें हमें स्थापित करें। नेता ऋत्विक् लोग स्तोत्र-ध्वनि और परस्पर शीघ्रता करते-करते कमनीय सोम-रस, सोम-यज्ञमें दूहते हैं।

सुन्वन्ति सोमं रथिरासो अद्रयो निरस्य रसं गविषो दुहन्ति ते ।
दुहन्त्यूधरुपसेचनाय कं नरो हव्या न मर्जयन्त आसभिः ॥७॥
एते नरः स्वपसो अभूतन य इन्द्राय सुनुथ सोममद्रयः ।
वामंवामं वो दिव्याय धाम्ने वसुवसु वः पार्थिवाय सुन्वते ॥८॥

७७ सूक्त

मरुत् देवता। भृगुगोत्रीय स्यूमरश्मि ऋषि । त्रिष्टुप् और जगती; छन्द।

अभ्रप्रुषो न वाचा प्रुषा वसु हविष्मन्तो न यज्ञा विजानुषः ।
सुमारुतं न ब्रह्माणमर्हसे गणमस्तोष्येषां न शोभसे ॥१॥
श्रिये मर्यासो अञ्जीँरकृण्वत सुमारुतं न पूर्वीरति क्षपः ।
दिवस्पुत्रास एता न येतिर आदित्यासस्ते अक्रा न वावृधुः ॥२॥

---

७ चालित होकर वे पत्थर सोम चुलाते हैं। वे स्तोत्रकी इच्छा करते हुए, अग्निके सेचनके लिये, सोम रस दूहते हैं। अभिषव-कारी ऋत्विक् लोग मुखसे शेष सोमका पान करके शुद्धि करते ।

८ नेताओ और पत्थरो, तुम शोभन अभिषवके कर्त्ता होओ । इन्द्रके लिये सोमाभिषव करो। दिव्य लोकके लिये तुम लोग अद्भुत सम्पत्ति उपस्थित करो। जा कुछ निवास-योग्य धन है, उसे यजमानका दो ।



१ स्तुतिसे प्र : मरुत् लोग मेघ-निर्गत वारि-बिन्दुके समान धन बरसाते हैं। हविसे युक्त यज्ञके समान संसारकी उत्पत्तिके कारण मरुत् हैं। मरुतोंके महान् दलकी पूजा वास्तवमें मैंने नहीं की है ।शोभाके लिये भी मैंने स्तोत्र नहीं किया।

२ मरुत् लोग पहले मनुष्य थे, पीछे, पुण्यके द्वारा, देवता बन गये । एकत्र सेना भी मरुतोंका पराभव नहीं कर सकती । हमने इनकी स्तुति नहीं की; इसलिये ये द्युलोकके न: त् अब भी दिखाई नहीं दिये और न ये आक्रमणशील बढ़े ।

प्र ये दिवः पृथिव्या न बर्हणा त्मना रिरिच्रे अभ्रान्न सूर्यः ।

पाजस्वन्तो न वीराः पनस्यवो रिशादसो न मर्या अभिद्यवः ॥३॥

युष्माकं बुध्ने अपां न यामनि विथुर्यति न मही श्रथर्यति ।

विश्वप्सुर्यज्ञो अर्वागयं सु वः प्रयस्वन्तो न सत्राच आ गत ॥४॥

यूयं धूर्षु प्रयुजो न रश्मिभिर्ज्योतिष्मन्तो न भासा व्युष्टिषु ।

श्येनासो न स्वयशसो रिशादसः प्रवासो न प्रसितासः परिप्रुषः ॥५॥

प्र यद्वहध्वे मरुतः पराकाद्यूयं महः सम्वरणस्य वस्वः ।

विदानासो वसवो राध्यस्याराच्चिद्द्वेषः सनुतर्युयोत ॥६॥

य उदृचि यज्ञे अध्वरेष्ठा मरुद्भ्यो न मानुषो ददाशत् ।

रेवत् स वयो दधते सुवीरं स देवानामपि गोपीथे अस्तु ॥७॥

---

३ स्वर्ग और पृथिवीपर ये मरुत् स्वयं बढ़े हैं । जैसे सूर्य मेघसे निकलते हैं, वैसे ही मरुत् बाहर हुए। ये वीर पुरुषोंके समान स्तोत्राभिलाषी होते हैं । शत्रु-घातक मनुष्योंके समान ये दीप्त होते हैं ।

४ मरुतो, जिस समय तुम लोग परस्पर प्रतिघातक और वृष्टि-पात करते हो, उस समय पृथिवी न तो कातर होती और न दुर्बल ही होती है । तुम्हें हवि दिया गया है। तुम लोग अन्नवाले व्यक्तियोंके समान एकत्र होकर आओ ।

५ रस्सीसे रथमें जोते घोड़ेके समान तुम लोग गमनशील हो । तुम लोग प्रभात-कालीन आलोकके समान प्रकाशवान् हुए हो । श्येन पक्षीके समान तुम लोग शत्रुको दूर करते हो और अपनी कीर्ति स्वयं उपार्जित करते हो । पथिकोंके समान तुम लोग चारो ओर जाकर वर्षा बरसाते हो ।

६ मरुतो, तुम लोग बहुत दूरसे यथेष्ट गुप्त धन ले आते हो। धन प्राप्त करके तुम लोग द्वेषी शत्रुओंको गुप्त रीतिसे दूर करते हो ।

७ जो मनुष्य यज्ञ-समाप्ति होनेपर यज्ञानुष्ठान करके मरुतोंको दान देता है, उसे अन्न, धन और जनकी प्राप्ति होती है। वह देवोंके साथ सोमपान करता है।

ते हि यज्ञेषु यज्ञियास ऊमा आदित्येन नाम्ना शम्भविष्ठाः ।
ते नोवन्तु रथतूर्मनीषां महश्च यामन्नध्वरे चकानाः ॥८॥

७८ सूक्त

देवता, ऋषि और छन्द पूर्ववत् ।

विप्रासो न मन्मभिः स्वाध्यो देवाव्यो न यज्ञैः स्वप्नसः ।
राजानो न चित्राः सुसन्दृशः क्षितीनां न मर्या अरेपसः ॥१॥
अग्निर्न ये भ्राजसा रुक्मवक्षसो वातासो न स्वयुजः सद्यऽउतयः ।
प्रज्ञातारो न ज्येष्ठाः सुनीतयः सुशर्माणो न सोमा ऋतं यते ॥२॥
वातासो न ये धुनयो जिगत्नवोग्नीनां न जिह्वा विरोकिणः ।
वर्मण्वन्तो न योधाः शिमीवन्तः पितॄणां न शंसाः सुरातयः ॥३॥

८ मरुत् लोग यज्ञनीय हैं। वे यज्ञके समय रक्षक हैं। आकाशके जलसे अदिति सुख देती हैं। वह क्षिप्रकारी रथसे आकर हमारी बुद्धिकी रक्षा करें। यज्ञमें जाकर यथेष्ट हविका भक्षण करते हैं।



१ स्तोत्र-परायण मेघावी स्तोताओंके समान यज्ञमें मरुत् लोग शोभन ध्यानवाले हैं। जैसे देवोंके तर्पक यजमान कर्ममें व्यस्त रहते हैं, वैसे ही वृष्टि-प्रदान आदि कर्मोंमें मरुत् लोग व्यापृत रहते हैं। मरुत् लोग राजाओंके समान पूजनीय, दर्शनीय और गृहस्वामी मनुष्योंके समान निष्पाप और शोभित हैं।

२ मरुत् लोग अग्निके समान तेजसे शोभित हैं। उनके वक्षःस्थलमें स्वर्णालङ्कार शोभा पाते हैं। वे वायुके समान क्षिप्रगन्ता हैं। ज्ञाता ज्ञानियोंके समान वे पूज्य हैं। सुन्दर नेत्रों और सुन्दर मुख सोमके समान वे यज्ञमें जाते हैं।

३ मरुत् लोग (वायुके अभिमानी देव) वायुके समान शत्रुओंको कँपानेवाला और गतिशील हैं। अग्निकी ज्वालाके समान शोभन मुखवाले हैं। कवचधारी योद्धाओंके समान वे शौर्यकर्मवाले हैं। पितरोंके वचनके समान दानी हैं

रथानां न येराः सनाभयो जिगीवांसो न शूरा अभिद्यवः ।
वरेयवो न मर्या घृतप्रुषोभिस्वर्तारो अर्कं न सुष्टुभः ॥४॥
अश्वासो न ये ज्येष्ठास आशवो दिधिषवो न रथ्यः सुदानवः ।
आपो न निम्नैरुदभिर्जिगत्नवो विश्वरूपा अङ्गिरसो न सामभिः ॥५॥
ग्रावाणो न सूरयः सिन्धुमातर आदर्दिरासो अद्रयो न विश्वहा ।
शिशूला न क्रीलयः सुमातरो महाग्रामो न यामन्नुत त्विषा ॥६॥
उषसां न केतवोध्वरश्रियः शुभंयवो नाञ्जिभिर्व्यश्वितन् ।
सिन्धवो न ययियो भ्राजदृष्टयः परावतो न योजनानि ममिरे ॥७॥
सुभागान्नो देवाः कृणुता सुरत्नानस्मान् स्तोतॄन्मरुतो वावृधानाः ।
अधि स्तोत्रस्य सख्यस्य गात सनाद्धि वो रत्नधेयानि सन्ति ॥८॥



४ मरुत् लोग रथचक्रके डंडोंके समान एक नाभि (आश्रय वा अन्तरिक्ष)वाले हैं । वे जयशील शूरोंके समान दीप्तिशाली हैं । दानेच्छु मनुष्योंके समान वे जल-सेचक हैं । सुन्दर स्तोत्र करनेवालोंके समान वे सुशब्दवाले हैं ।

५ मरुत् लोग अश्वोंके समान श्रेष्ठ शीघ्र-गन्ता हैं । धनवाले रथस्वामियोंके समान वे सुन्दर दानवाले हैं । वे नदियोंके समान नीचे जल ले जानेवाले हैं । वे अङ्गिरा लोगोंके समान वे सामगाता हैं । वे नाना रूपधारी हैं ।

६ वे जलदाता मेघोंके समान नदी-निर्माता हैं । ध्वंसक वज्र आदि आयुधोंके समान वे शत्रु-हन्ता हैं । वे वत्सल माताओंके बच्चोंके समान क्रीड़ा-परायण हैं । वे महान् जनसंघके समान गमनमें दीप्तिशाली हैं ।

७ उषाकी किरणोंके समान वे यज्ञाश्रयी हैं । कल्याणकामी वरोंके समान वे आभरणोंसे सुशोभित होते हैं । नदियोंके समान वे गतिशील हैं । उनके आयुध प्रदीप्त हैं । दूर मार्गवाले पथिकोंके समान वे अनेक योजनोंको अतिक्रम करते हैं ।

८ देव मरुतो, स्तुतियोंसे वर्द्धित होकर तुम हम स्तोताओंको धनी और शोभन रत्नवाले बनाओ । स्तोत्रके सहकारी स्तवको ग्रहण करो । हमें तुम सदासे रत्न-दान करते आये हो

७६ सूक्त

अग्नि देवता। वाजम्भर-पुत्र सप्ति ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

अपश्यमस्य महतो महित्वममर्त्यस्य मर्त्यासु विक्षु ।
नाना हनू विभृते सं भरेते असिन्वती बप्सती भूर्यत्तः ॥१॥
गुहा शिरो निहितमृधगक्षी असिन्वन्नत्ति जिह्वया वनानि ।
अत्राण्यस्मै पड्भिः सं भरन्त्युत्तानहस्ता नमसाधि विक्षु ॥२॥
प्र मातुः प्रतरं गुह्यमिच्छन् कुमारो न वीरुधः सर्पदुर्वीः ।
ससं न पक्वमविदच्छुचन्तं रिरिह्वांसं रिप उपस्थे अन्तः ॥३॥
तद्वामृतं रोदसी प्र ब्रवीमि जायमानो मातरा गर्भो अत्ति ।
नाहं देवस्य मर्त्यश्चिकेताग्निरङ्ग विचेताः स प्रचेताः ॥४॥

---

१ मरणशील मनुष्योंमें अमर-स्वभाव अग्निकी महिमाको मैं देखता हूँ। इनके दोनों जबड़ (हनु) नाना प्रकारके और परिपूर्ण कृतिके हैं। ये चर्वण न करके काष्ठादि पदार्थोंका भक्षण करते हैं।

२ इनका मस्तक गुप्त स्थानमें है। इनके नेत्र भिन्न-भिन्न स्थानों (सूर्य और चन्द्रमा) में हैं। ये चर्वण न करके ज्वालासे काठोंको खाते हैं। मनुष्योंमें यजमान हाथ उठाते और नमस्कार करते हुए इनके पास आकर इनका आहार जुटाते हैं।

३ ये अग्नि-रूपी बालक अपनी माता पृथिवीके ऊपर अग्रसर चलते-चलते प्रकाण्ड-प्रकाण्ड लताओं का ग्रास करते हैं—उनके छिपे मूल तकका भक्षण करते हैं। पृथिवीपर जो आकाशको छूनेवाले वृक्ष हैं, उन्हें ये पके हुए अन्नके समान पकड़ लेते हैं। इनकी ज्वालासे वृक्ष जलते हैं।

४ हे द्यावापृथिवी, तुमसे मैं सच्ची बात कहता हूं कि, अरणियोंसे उत्पन्न यह बालक-रूप अग्नि अपने माता-पिता (दोनों अरणियों वा लड़कियों)का भक्षण करते हैं। मैं मनुष्य देवता अग्निका वर्त्तन वा विषय नहीं जानता हूं। वैश्वानर, तुम विविध ज्ञानवाले हो वा प्रकृष्ट ज्ञानवाले हो—यह मैं नहीं जान सकता।

यो अस्मा अन्नं तृष्वादधात्याज्यैघृतैर्जुहोति पुष्यति ।
तस्मै सहस्रमक्षभिर्वि चक्षेऽग्ने विश्वतः प्रत्यङ्ङसि त्वम् ॥५॥
किं देवेषु त्यज एनश्चकर्थाग्ने पृच्छामि नु त्वामविद्वान् ।
अक्रीलन् क्रीलन् हरिरत्तवेदन् विपर्वशश्चकर्त गामिवासिः ॥६॥
विषूचो अश्वान् युयुजे वनेजा ऋजीतिभी रशनाभिर्गृभीतान् ।
चक्षदे मित्रो वसुभिः सुजातः समानृधे पर्वभिर्वावृधानः ॥७॥



८० सूक्त

अग्नि देवता । सौचीक वैश्वानर ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

अग्निः सप्तिं वाजम्भरं ददात्यग्निर्वीरं श्रुत्यं कर्मनिःष्ठाम् ।
अग्नी रोदसी वि चरत् समञ्जन्नग्निर्नारी वीरकुक्षिं पुरन्धिम् ॥१॥

---

५ जो यजमान अग्निको शीघ्र अन्न देता है, गोघृत वा सोमरससे अग्निमें हवन करता है और जो काष्ठ आदिसे इनकी पुष्टि करता है, उसे अग्नि अपरिमित ज्वालाओंसे देखते हैं। अग्नि, उसके प्रति तुम हमारे प्रति अनुकूल रहते हो ।

६ अग्नि, क्या तुमने देवोंके ऊपर क्रोध किया है? न जानकर मैं तुम दाहकसे पूछता हूं। कहीं क्रीड़ा करते हुए और क्रीड़ा न करते हुए और हरितवर्ण अग्नि अन्न, काष्ठ आदिको खाते समय उनको वैसे ही छिन्दी-छिन्दी कर डालते हैं, जैसे खड्गसे गौको खण्ड-खण्ड किया जाता है ।

७ वनमें प्रवृद्ध होकर अग्निने सरल रज्जुओंके द्वारा बाँध करके कुछ द्रुतगामी घोड़ोंको रथमें जोता। अग्नि काष्ठ-स्वरूप धन पाकर और प्रवृद्ध होकर सबको चूर्ण करते हैं। ये काष्ठ-खण्डोंसे वर्द्धित हैं।

---

१ अग्नि गतिशील और युद्धमें शत्रुओंको जीतकर अन्न देनेवाला अश्व स्तोताओंको देते हैं। वह वीर और यज्ञ-प्रेमी पुत्र देते हैं। अग्नि द्यावापृथिवीको शोभामय करके विचरण करते हैं। अग्नि स्त्रीको वीर-प्रसविनी करते हैं ।

अग्नेरप्नसः समिदस्तु भद्राग्निर्मही रोदसी आ विवेश।
अग्निरेकं चोदयत् समत्स्वग्निर्वृत्राणि दयते पुरूणि ॥२॥
अग्निर्ह त्यं जरतः कर्णमावाग्निरद्भ्यो निरदहज्जरूथम्।
अग्निरत्रिं घर्म उरुष्यदन्तरग्निर्नृमेधं प्रजयासृजत् सम् ॥३॥
अग्निर्दाद्द्रविणं वीरपेशा अग्निर्ऋषिं यः सहस्रा सनोति।
अग्निर्दिवि हव्यमा ततानाग्नेर्धामानि विभृता पुरुत्रा ॥४॥
अग्निमुक्थैर्ऋषयो वि ह्वयन्तेऽग्निं नरो यामनि बाधितासः।
अग्निं वयो अन्तरिक्षे पतन्तोऽग्निः सहस्रा परि याति गोनाम् ॥५॥
अग्निं विश ईलते मानुषीर्या अग्निं मनुषो नहुषो वि जाताः।
अग्निर्गान्धर्वीं पथ्यामृतस्याग्नेर्गव्यूतिर्घृत आ निषत्ता ॥६॥

२ अग्नि-कार्यके लिये उपयोगी समित्काष्ठ कल्याणकर हो। अग्नि अपने तेजसे द्यावापृथिवीमें पैठे हैं। युद्धमें अग्नि अपने भक्तको स्वयं सहायक होकर विजयी बनाते हैं। अग्नि अनेक शत्रुओंको मारते हैं।

३ अग्निने प्रसिद्ध जरत्कर्ण नामक ऋषिकी रक्षा की। अग्निने जलसे निकाल करके जरूथ नामक शत्रुको जलाया था। अग्निने प्रतप्त कुण्डमें पतित अत्रिका उद्धार किया था। अग्निने नृमेघ ऋषिको सन्तानवान् किया था।

४ अग्नि ज्वाला-रूप धन देते हैं। जो ऋषि सहस्र गायोंवाले हैं, उन्हें मन्त्रद्रष्टा पुत्र देते हैं। यजमानोंका दिया हुआ हवि अग्नि द्युलोकमें पहुँचाते हैं। अग्निके पृथिवीपर बड़े-बड़े शरीर हैं।

५ प्रथम ऋषि लोग मन्त्रोंके द्वारा अग्निको बुलाते हैं। मनुष्य, संग्राममें शत्रुओंसे बाधित होकर, जयके लिये, बुलाते हैं। आकाशमें उड़ते हुए पक्षी अग्निको बुलाते हैं। सहस्र गायोंसे वेष्टित होकर अग्नि जाते हैं।

६ मानवी प्रजा अग्निकी स्तुति करती है। नहुष-वंशीय लोग अग्निकी स्तुति करते हैं। गन्धर्वोंका यज्ञ-मार्गके लिये हित वचन अग्नि सुनते हैं। अग्निका मार्ग घृतमें बैठा है।

अग्नये ब्रह्म ऋभवस्ततक्षुरग्निं महामवोचामा सुवृक्तिम् ।
अग्ने प्राव जरितारं यविष्ठाग्ने महि द्रविणमा यजस्व ॥७॥

---

८१ सूक्त

विश्वकर्मा देवता । भुवन-पुत्र विश्वकर्मा ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

य इमा विश्वा भुवनानि जुह्वदृषिर्होता न्यसीदत् पिता नः ।
स आशिषा द्रविणमिच्छमानः प्रथमच्छदवराँ आ विवेश ॥१॥
किं स्विदासीदधिष्ठानमारम्भणं कतमत् स्वित् कथासीत् ।
यतो भूमिं जनयन् विश्वकर्मा वि द्यामौर्णोन्महिना विश्वचक्षाः ॥२॥
विश्वतश्चक्षुरुत विश्वतोमुखो विश्वतोबाहुरुत विश्वतस्पात् ।
सं बाहुभ्यां धमति सं पतत्रैर्द्यावाभूमी जनयन् देव एकः ॥३॥

---

७ अग्निके लिये मेधावी ऋभुओंने स्तोत्र बनाया है । हमने भी महान् अग्निकी स्तुति की है । तरुणतम अग्नि, स्तोताकी रक्षा करो । अग्नि, महान् धन दो ।



१ हमारे पिता और होता विश्वकर्मा प्रथम सारे संसारका हवन करके स्वयं भी अग्निमें पैठ गये । स्तोत्रादिके द्वारा स्वर्ग-धनकी कामना करते हुए वे प्रथम सारे जगत्से अग्निका आच्छादन करके पश्चात् समीपके भूतोंके साथ स्वयं भी हुत हो गये वा अग्निमें पैठ गये ।

२ सृष्टि-कालमें विश्वकर्माका आश्रय क्या था ? कहाँसे और कैसे उन्होंने सृष्टि-कार्यका प्रारम्भ किया ? विश्वदर्शक देव विश्व-कर्माने किस स्थानपर रहकर पृथिवीको बनाकर आकाशको बनाया ?

३ विश्वकर्मा की आँखें, मुख, बाँहें और चरण सभी ओरसे हैं । अपनी भुजाओं और पदोंसे प्रेरण करते वह दिव्य पुरुष द्यावाभूमिको उत्पन्न करते हैं । वह एक हैं ।

किं स्विद्वनं क उ स वृक्ष आस यतो द्यावापृथिवी निष्टतक्षुः ।
मनीषिणो मनसा पृच्छतेदुतद्यदध्यतिष्ठद्भुवनानि धारयन् ॥४॥
या ते धामानि परमाणि यावमा या मध्यमा विश्वकर्मन्नुतेमा ।
शिक्षा सखिभ्यो हविषि स्वधावः स्वयं यजस्व तन्वं वृधानः ॥५॥
विश्वकर्मन् हविषा वा वृधानः स्वयं यजस्व पृथिवीमुत द्याम् ।
मुह्यन्त्वन्ये अभितो जनास इहास्माकं मघवा सूरिरस्तु ॥६॥
वाचस्पतिं विश्वकर्माणमूतये मनोजुवं वाजे अद्या हुवेम ।
स नो विश्वानि हवनानि जोषद्विश्वशम्भूरवसे साधुकर्मा ॥७॥

---

८२ सूक्त

देवता, ऋषि और छन्द पूर्ववत्।

चक्षुषः पिता मनसा हि धीरो घृतमेने अजनन्नम्नमाने ।
यदेदन्ता अददृहन्त पूर्व आदिद्द्यावापृथिवी अप्रथेताम् ॥१॥

---

४ वह कौन वन और उसमें कौनसा वृक्ष है, जिससे सृष्टि-कर्त्ताओंने द्यावापृथिवीको बनाया ? विद्वानो अपने मनसे पूछ देखो कि, किस पदार्थके ऊपर खड़े होकर ईश्वर सारे विश्वका धारण करते हैं।

५ यज्ञभाग-ग्राही विश्वकर्मा, यज्ञ-कालमें हमें उत्तम, मध्यम और साधारण शरीरोंको बता दो। अन्नयुक्त तुम स्वयं यज्ञ करके अपने शरीर पुष्ट करते हो।

६ विश्वकर्मा, तुम द्यावापृथिवीमें स्वयं यज्ञ करके अपनेको पुष्ट किया करते हो वा यज्ञीय हविसे प्रवृद्ध होकर तुम द्यावापृथिवीका पूजन करो। हमारे यज्ञ-विरोधी मूर्छित हों। इस यज्ञमें धनी विश्वकर्मा स्वर्गादिके फल-दाता हों।

७ इस यज्ञमें, आज, उन विश्वकर्माको रक्षाके लिये हम बुलाते हैं। वह हमारे सारे हवनोंका सेवन करें। वह हमारे रक्षणके लिये सुखोत्पादक और साधु कर्मवाले हैं।

---

१ शरीरके उत्पादयिता और अनुपम धीर विश्वकर्माने प्रथम जलको उत्पन्न किया। पश्चात् जलमें इधर-उधर चलनेवाले द्यावापृथिवीको बनाया। द्यावापृथिवीके प्राचीन और अन्त्य प्रदेशोंको विश्वकर्माने दृढ़ किया। तब द्यावापृथिवी प्रसिद्ध हुए।

विश्वकर्मा विमना आद्विहाया धाता विधाता परमोत सन्दृक् ।
तेषामिष्टानि समिषा मदन्ति यत्रा सप्तऋषीन् पर एकमाहुः ॥२॥
यो नः पिता जनिता यो विधाता धामानि वेद भुवनानि विश्वा ।
यो देवानां नामधा एक एव तं संप्रश्नं भुवना यन्त्यन्या ॥३॥
त आयजन्त द्रविणं समस्मा ऋषयः पूर्वे जरितारो न भूना ।
असूर्ते सूर्ते रजसि निषत्ते ये भूतानि समकृण्वन्निमानि ॥४॥
परो दिवा पर एना पृथिव्या परो देवेभिरसुरैर्यदस्ति ।
कं स्विद्गर्भं प्रथमं दध्र आपो यत्र देवाः समपश्यन्त विश्वे ॥५॥
तमिद्गर्भं प्रथमं दध्र आपो यत्र देवाः समगच्छन्त विश्वे ।
अजस्य नाभावध्येकमर्पितं यस्मिन् विश्वानि भुवनानि तस्थुः ॥६॥
न तं विदाथ य इमा जजानान्यद्युष्माकमन्तरं बभूव ।
नीहारेण प्रावृता जल्प्या चासुतृप उक्थशासश्चरन्ति ॥७॥

२ विश्वकर्माका मन बृहत् है, वह स्वयं बृहत् हैं, वह निर्माण करते हैं, वह सर्वश्रेष्ठ हैं, वह सब कुछ देखते हैं, सप्तर्षियोंके परवर्ती स्थानोंको देखते हैं। वहाँ वह अकेले हैं। विद्वान् लोग ऐसा कहते हैं। विद्वानोंकी अभिलाषाएँ अन्नके द्वारा पूर्ण होती हैं।

३ जो विश्वकर्मा हमारे पालक, उत्पादक, संसारके उत्पादक, जो विश्वके सारे धामोंको जानते हैं वा जो देवोंके तेजःस्थानोंको जानते हैं, जो देवोंके नाम रखनेवाले और जो एक हैं, सारे प्राणी उन्हीं देवको प्राप्त करते हैं वा उनके विषयके जिज्ञासु होते हैं।

४ स्थावर-जङ्गमात्मक विश्वके होनेपर जिन ऋषियोंने प्राणियोंको बनाया वा उनको धनादि प्रदान किया, उन्हीं प्राचीन ऋषियोंने स्तोताओंके समान, धन-व्यय करके यज्ञानुष्ठान किया।

५ वह द्युलोक, पृथिवी, असुरों और देवोंको अतिक्रम करके अवस्थित है। जलने ऐसा कौनसा गर्भ धारण किया है, जिसमें सभी इन्द्रादि देवता रहकर परस्पर मिलित देखते हैं।

६ उन्हीं विश्वकर्माको जलने गर्भमें धारण किया है। गर्भमें सारे देवता संगत होते हैं। उस अजकी नाभिमें ब्रह्माण्ड है। ब्रह्माण्डमें सारे प्राणी रहते हैं।

७ जिन विश्वकर्माने सारे प्राणियोंको उत्पन्न किया है, उन्हें तुम लोग नहीं जानते हो। तुम्हारा अन्तस्तल उन्हें समझनेकी शक्ति नहीं पाये हुए हैं। हिम-रूपी अज्ञानसे आच्छन्न होकर लोग नाना प्रकारकी कल्पनाएँ करते है। वे अपने लिये भोजन करते और स्तुतियाँ करके स्वर्गकी प्राप्तिके लिये चेष्टा करते हैं—ईश्वर-तत्वका विचार नहीं करते।

८३ सूक्त

मन्यु देवता। तपःपुत्र मन्यु ऋषि। जगती और त्रिष्टुप् छन्द।

यस्ते मन्योऽविधद्वज्र सायक सह ओजः पुष्यति विश्वमानुषक्।
साह्याम दासमार्यं त्वया युजा सहस्कृतेन सहसा सहस्वता ॥१॥
मन्युरिन्द्रो मन्युरेवास देवो मन्युर्होता वरुणो जातवेदाः।
मन्युं विश ईळते मानुषीर्याः पाहि नो मन्यो तपसा सजोषाः ॥२॥
अभीहि मन्यो तवसस्तवीयान् तपसा युजा वि जहि शत्रून्।
अमित्रहा वृत्रहा दस्युहा च विश्वा वसून्या भरा त्वं नः ॥३॥
त्वं हि मन्यो अभिभूत्योजाः स्वयम्भूर्भामो अभिमातिषाहः।
विश्वचर्षणिः सहुरिः सहावानस्मास्वोजः पृतनासु धेहि ॥४॥
अभागः सन्नप परेतो अस्मि तव क्रत्वा तविषस्य प्रचेतः।
तं त्वा मन्यो अक्रतुर्जिहीळाहं स्वा तनूर्बलदेयाय मेहि ॥५॥

---

१ वज्रसदृश, बाणतुल्य और क्रोधाभिमानी देव मन्यु, जो यजमान तुम्हारी पूजा करता है, वह ओज और बल—दोनोंको धारण करता है। तुम्हारी सहायता पाकर हम दास और आर्य शत्रुओंको हरावें। तुम बलके कर्त्ता, बल-रूप और महान् बली हो।

२ मन्यु ही इन्द्र हैं, देवता हैं, होता हैं, वरुण हैं और जातप्रज्ञ अग्नि हैं। सारी मानवी प्रजा मन्युकी स्तुति करती है। मन्यु, तुम हमारे पितासे मिलकर हमारी रक्षा करो।

३ मन्यु, तुम महाबली हो। पधारो। मेरे पिताको सहायक बनाकर शत्रुओंको ध्वस्त करो। तुम शत्रुओंके संहारक, वृत्रघ्न और दस्युओंके हन्ता हो। हमारे लिये समस्त धन ले आओ।

४ मन्यु, तुम दूसरोंको हरानेवाले हो। तुम स्वयम्भू, दीप्तिशील, शत्रु-जयकारी, चारो ओर देखनेवाले, शत्रुओंका आक्रमण सहनेवाले और बली हो। हमारी सेनाओंको तेजस्विनी बनाओ।

५ उत्तम ज्ञानवाले मन्यु, मैं यज्ञ-भागका आयोजन नहीं कर सका; इसलिये तुम्हें पूजा नहीं दे सका। तुम महान् हो; परन्तु तुम्हें मैं पूजा नहीं दे सका। मन्यु, इस प्रकार तुम्हारे यजनमें शिथिलता करके इस समय मैं लज्जाका अनुभव कर रहा हूँ। अपने गुणके अनुसार, अपनी इच्छासे, मुझे बल देनेको पधारो।

अयं ते अस्म्युप मेह्यर्वाङ् प्रतीचीनः सहुरे विश्वधायः ।
मन्यो वज्रिन्नभि मामा ववृत्स्व हनाव दस्यूँरुत बोध्यापेः ॥६॥
अभि प्रेहि दक्षिणतो भवा मेधा वृत्राणि जङ्घनाव भूरि ।
जुहोमि ते धरुणं मध्वो अग्रमुभा उपांशु प्रथमा पिबाव ॥७॥

---

८४ सूक्त

देवता, ऋषि, छन्द पूर्ववत् ।

त्वया मन्यो सरथमारुजन्ता हर्षमाणासो धृषिता मरुत्वः ।
तिग्मेषव आयुधा संशिशाना अभि प्र यन्तु नरो अग्निरूपाः ॥१॥
अग्निरिव मन्यो त्विषितः सहस्व सेनानीर्नः सहुरे हूत एधि ।
हत्वाय शत्रून् विभजस्व वेद ओजो मिमानो वि मृधो नुदस्व ॥२॥

---

६ मन्यु, मैं तुम्हारे पास पहुँचा हूँ । तुम अनुकूल होकर मेरे पास आकर अवतीर्ण होओ । तुम आक्रमणको सह सकते हो । सब के धारक हो । वज्रधर मन्यु, मेरे पास वृद्धि प्राप्त होओ । मुझे आत्मीय समझो । ऐसा होनेपर मैं दस्युओंका बध कर सकता हूँ ।

७ मेरे पास आओ । मेरे दक्षिण हाथकी ओर ठहरो । ऐसा होनेपर हम दोनों वृत्रोंका विनाश कर सकेंगे । तुम्हारे लिये मैं मधुर और उत्तम सोमरसका हवन करता हूँ । हम दोनों सबसे प्रथम, एकान्त स्थानमें सोमपान करें ।



१ मन्यु, तुम्हारे साथ एक रथपर चढ़कर तथा हृष्ट, धृष्ट और तीक्ष्ण वाणवाले आयुधोंको तेज कर और अग्निके समान तीक्ष्ण दाहवाले बनकर मरुत् आदि युद्ध-नेता लोग सहायताके लिये युद्धमें जायँ ।

२ मन्यु, अग्निके समान प्रज्वलित होकर शत्रुओंको हराओ । सहनशील मन्यु, तुम्हें बुलाया गया है । संग्राममें हमारे सेनापति बनो । शत्रुओंका बध करके उनका धन हमें दे दो । हमें बल देकर शत्रुओंको मारो ।

सहस्व मन्यो अभिमातिमस्मे रुजन् मृणन् प्रमृणन् प्रेहि शत्रून् ।
उग्रं ते पाजो नन्वा रुरुध्रे वशीवशं नयस एकज त्वम् ॥३॥
एको बहूनामसि मन्यवीलितो विशं विशं युधये संशिशाधि ।
अकृत्तरुक् त्वया युजा वयं द्युमन्तं घोषं विजयाय कृण्महे ॥४॥
विजेषकृदिन्द्रइवानवब्रवोऽस्माकं मन्यो अधिपा भवेह ।
प्रियं ते नाम सहुरे गृणीमसि विद्मा तमुत्सं यत आबभूथ ॥५॥
आभूत्या सहजा वज्र सायक सहो बिभर्ष्यभिभूतउत्तरम् ।
क्रत्वा नो मन्यो सह मेद्येधि महाधनस्य पुरुहूत संसृजि ॥६॥
संसृष्टं धनमुभयं समाकृतमस्मभ्यं दत्तां वरुणश्च मन्युः ।
भियं दधाना हृदयेषु शत्रवः पराजितासो अप नि लयन्ताम् ॥७॥

---

३ मन्यु, हमारा सामना करनेवाले शत्रुको हराओ। काटते-काटते और मारते-मारते शत्रुओंके सामने जाओ। तुम्हारे दुर्द्धर्ष बलको कौन रोक सकता है? एकाकी मन्यु, तुम शत्रुओंको वशमें ले आते हो।

४ मन्यु, तुम्हारी स्तुति की जाती है। तुम अकेले हो। युद्धके लिये प्रत्येक मनुष्यको तीक्ष्ण करो। तुम्हें सहायक पाकर हमारी दीप्ति कभी नष्ट नहीं होगी। जय-प्राप्तिके लिये हम प्रबल सिंहनाद करते हैं।

५ मन्यु, तुम इन्द्रके समान विजेता हो। तुम्हारे वचनमें निन्दा नहीं रहती। इस यज्ञमें तुम हमारे विशिष्ट रक्षक बनो। सहनशील मन्यु, तुम्हारा प्रिय स्तोत्र हम करते हैं। तुम स्तोत्रसे प्रवृद्ध होते हो, तुम्हें हम बलोत्पादक जानते हैं।

६ वज्रतुल्य और शत्रुनाशक मन्यु, शत्रु-नाश करना तुम्हारा स्वभाव है। शत्रु-पराभव-कारी मन्यु, तुम उत्कृष्ट तेजको धारण करते हो। मन्यु, कर्मके साथ तुम हमारे लिये युद्धमें स्निग्ध होओ। तुम बहुतोंके द्वारा बुलाये गये हो।

७ वरुण और मन्यु—दोनों ही हमें पाये गये और लाये गये धनको दें। शत्रु लोग भीरु, पराजित और विलीन हों।

७ अनुवाक । ८५ सूक्त

सोम आदि देवता। सूर्या ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द ।

सत्येनोत्तभिता भूमिः सूर्येणोत्तभिता द्यौः ।
ऋतेनादित्यास्तिष्ठन्ति दिवि सोमो अधि श्रितः ॥१॥
सोमेनादित्या बलिनः सोमेन पृथिवी मही ।
अथो नक्षत्राणामेषामुपस्थे सोम आहितः ॥२॥
सोमं मन्यते पपिवान् यत् संपिंषन्त्योषधिम् ।
सोमं यं ब्रह्माणो विदुर्न तस्याश्नाति कश्चन ॥३॥
आच्छद्विधानैर्गुपितो बार्हतैः सोम रक्षितः ।
ग्राव्णामिच्छृण्वन्तिष्ठसि न ते अश्नाति पार्थिवः ॥४॥
यत्त्वा देव प्रपिबन्ति तत आ प्यायसे पुनः ।
वायु सोमस्य रक्षिता समानां मास आकृतिः ॥५॥

---

१ देवोंमें सत्यरूप ब्रह्माने पृथिवीको आकाशमें रोक रखा है। सूर्यने द्युलोकको स्तम्भित कर रखा है। यज्ञाहुतिके द्वारा देवता रहते हैं। द्युलोकमें सोम अवस्थित है।

२ सोमसे ही इन्द्रादि बली होते हैं। सोमसे ही पृथिवी प्रकाण्ड हुई है। नक्षत्रोंके पास सोम रखा गया है।

३ जिस समय वनस्पति-रूपी सोमको पीसा जाता है, उस समय लोग समझते हैं कि, उन्होंने सोम-पान कर लिया। परन्तु ब्राह्मण लोग जिसे प्रकृत सोम कहते हैं, उसका कोई अयाज्ञिक पान नहीं कर सकता।

४ सोम, स्तोता लोग छिपानेकी व्यवस्था जानकर तुम्हें गुप्त रखते हैं। तुम पाषाणका शब्द सुनते हो। पृथिवीका कोई मनुष्य तुम्हारा पान नहीं कर सकता।

५ देव सोम, तुम्हारा पान करनेसे तुम्हारी वृद्धि होती है—क्षय नहीं। वायु सोमकी वैसे ही रक्षा करते हैं, जैसे महीने वर्षकी रक्षा करते हैं। दोनोंका स्वरूप एकसा है।

रैभ्यासीदनुदेयी नाराशंसी न्योचनी ।
सूर्याया भद्रमिद्वासो गाथयैति परिष्कृतम् ॥६॥
चित्तिरा उपबर्हणं चक्षुरा अभ्यञ्जनम् ।
द्यौर्भूमिः कोश आसीद्यदयात् सूर्या पतिम् ॥७॥
स्तोमा आसन् प्रतिधयः कुरीरं छन्द ओपशः ।
सूर्याया अश्विना वराग्निरासीत् पुरोगवः ॥८॥
सोमो बधूयुरभवदश्विनास्तामुभा वरा ।
सूर्यां यत् पत्ये शंसन्तीं मनसा सवितादात् ॥९॥
मनो अस्या अन आसीद् द्यौरासीदुत छदिः ।
शुक्रावनड्वाहावास्तां यदयात् सूर्या गृहम् ॥१०॥
ऋक्सामाभ्यामभिहितौ गावौ ते सामनावितः ।
श्रोत्रं ते चक्रे आस्तां दिवि पन्थाश्चराचरः ॥११॥

---

६ सूर्यपुत्रीके विवाहके समय "रैभी' नामकी ऋचाएँ उसकी सखी हुई थीं। नाराशंसी नामकी ऋचाएँ उसकी दासी हुई थीं। सूर्याका अत्यन्त सुन्दर वस्त्र साम-गानके द्वारा परिष्कृत हुआ था।

७ जिस समय सूर्या पति-गृहमें गयी, उस समय चैतन्य-स्वरूप चादर था। नेत्र ही उसका उबटन था। द्यावापृथिवी ही उसके कोश थे।

८ स्तोत्र ही उसके रथ-चक्रके डंडे थे। कुटिर नामक छन्द रथका भीतरी भाग था। सूर्याके वर अश्विनीकुमार थे और अग्नि अग्रगामी दूत।

९ सूर्या मन ही मन पतिकी कामना करती थी। जिस समय सूर्यने सूर्याको प्रदान किया, उस समय सोम उसके साथ विवाह करनेके इच्छुक थे। परन्तु अश्विद्वय ही उसके वर स्वीकृत किये गये।

१० सूर्या पतिके गृहमें गयी। उसका मन ही उसका शकट था। आकाश ही ओढ़ना था। सूर्य और चन्द्रमा उसके रथ-वाहक हुए।

११ ऋक् और सामके द्वारा वर्णित दो वृषभ वा वृषभ-रूप सूर्य-चन्द्र उसके शकटको यहाँसे वहाँ ले जानेवाले हुए। सूर्या, दोनों कान तुम्हारे दो रथ-चक्र हुए। रथके चलनेका मार्ग हुआ आकाश।

शुची ते चक्रे यात्या व्यानो अक्ष आहतः।
अनो मनस्मयं सूर्यारोहत् प्रयती पतिम् ॥१२॥
सूर्याया वहतुः प्रागात् सविता यमवासृजत्।
अघासु हन्यन्ते गावोऽर्जुन्योः पर्युह्यते ॥१३॥
यदश्विना पृच्छमानावयातं त्रिचक्रेण वहतुं सूर्यायाः।
विश्वे देवा अनु तद्वामजानन् पुत्रः पितराववृणीत पूषा ॥१४॥
यदयातं शुभस्पती वरेयं सूर्यामुप।
क्वैकं चक्रं वामासीत् क्व देष्ट्राय तस्थथुः ॥१५॥
द्वे ते चक्रे सूर्ये ब्रह्माण ऋतुथा विदुः।
अथैकं चक्रं यद्गुहा तदद्धातय इद्विदुः ॥१६॥
सूर्यायै देवेभ्यो मित्राय वरुणाय च।
ये भूतस्य प्रचेतस इदं तेभ्योऽकरं नमः ॥१७॥

---

१२ जानेके समय तुम्हारे दोनों रथके पहिये नेत्र हुए वा अत्यन्त उज्ज्वल हुए। उस रथमें विस्तृत अक्ष (दोनों पहियोंमें लगा हुआ मोटा डंडा) हुआ। पति-गृहमें जानेके लिये सूर्या मनोरूप शकटपर चढ़ी।

१३ पति-गृहमें जाते समय सूर्यने सूर्याको जो चादर दिया था, वह आगे-आगे चला। मघा नक्षत्रके उदय-कालमें चादर (उपढौकन) के अङ्ग-स्वरूप बिदाईमें दी गयी गायोंको डंडेसे हाँका जाता है और अर्जुनी अर्थात् पूर्वा फाल्गुनी और उत्तरा फाल्गुनीमें उस चादरको रथसे ले जाया जाता है।

१४ अश्विद्वय, जिस समय तुम लोगोंने तीन पहियोंवाले रथपर चढ़कर और सूर्याके विवाहकी बात पूछकर उससे विवाह किया था, उस समय सारे देवोंने तुम्हारे कार्यका समर्थन किया और तुम्हारे पुत्र (पूषा) ने तुम्हें वरण किया।

१५ अश्विद्वय, जिस समय तुमलोग वर होकर सूर्याके पास गये, उस समय तुम्हारा चक्र कहाँ था? मार्गकी जिज्ञासा करनेके समय तुम लोग कहाँ खड़े थे?

१६ ब्राह्मण लोग जानते हैं कि, समयानुसार चलनेवाले तुम्हारे दो चक्र (सूर्य-चन्द्रात्मक) प्रख्यात हैं और एक गोपनीय चन्द्र (वर्ष) को विद्वान् लोग समझते हैं।

१७ सूर्या, देवगण, मित्र और वरुण प्राणियोंके शुभचिन्तक हैं। उन्हें मैं नमस्कार करता हूं।

पूर्वापरं चरतो माययैतौ शिशू क्रीलन्तौ परि यातो अध्वरम् ।
विश्वान्यन्यो भुवनाभिचष्ट ऋतूँरन्यो विदधज्जायते पुनः ॥१८॥
नवोनवो भवति जायमानोऽह्नां केतुरुषसामेत्यग्रम् ।
भागं देवेभ्यो वि दधात्यायन् प्र चन्द्रमास्तिरते दीर्घमायुः ॥१९॥
सुकिंशुकं शल्मलिं विश्वरूपं हिरण्यवर्णं सुवृतं सुचक्रम् ।
आ रोह सूर्ये अमृतस्य लोकं स्योनं पत्ये वहतुं कृणुष्व ॥२०॥
उदीर्ष्वातः पतिवती ह्येषा विश्वावसुं नमसा गीर्भिरीळे ।
अन्यामिच्छ पितृषदं व्यक्तां स ते भागो जनुषा तस्य विद्धि ॥२१॥
उदीर्ष्वातो विश्वावसो नमसेळामहे त्वा ।
अन्यामिच्छ प्रफर्व्यं सं जायां पत्या सृज ॥२२॥
अनृक्षरा ऋजवः सन्तु पन्था येभिः सखायो यन्ति नो वरेयम् ।
समर्यमा सं भगो नो निनीयात् सं जास्पत्यं सुयममस्तु देवाः ॥२३॥

१८ ये दोनों शिशु (सूर्य और चन्द्र) अपनी शक्तिसे पूर्व-पश्चिममें विचरण करते हैं। ये क्रीड़ा करते हुए यज्ञमें जाते हैं। इनमेंसे एक चन्द्रमा संसारमें ऋतु-व्यवस्था करते हुए अश्वको देखते हैं और दूसरे सूर्य ऋतु-विधान करते हुए बार-बार जन्म लेते हैं (उदय-अस्त होते हैं)।

१९ सूर्य दिनके सूचक हैं। प्रतिदिन नये होकर वह प्रातःकाल सामने आते हैं। आकर देवोंको यज्ञ-भाग देनेकी व्यवस्था करते हैं। चन्द्रमा चिर जीवन देते हैं।

२० सूर्या, तुम अपने पतिगृहमें जाते समय शोभन पलाश-वृक्ष और शाल्मली वृक्षसे निर्मित नानारूप, सुवर्णवर्ण, उत्तम और शोभन चक्रवाले रथपर चढ़ो। सुखकर और अमर स्थानमें सोमके लिये जाओ।

२१ विश्वावसु, यहाँसे उठो; क्योंकि इस कन्याका विवाह हो गया। मैं नमस्कार और स्तोत्रके द्वारा विश्वावसुकी स्तुति करता हूं। यदि कोई दूसरी कन्या पितृगृहमें विवाहके योग्य हुई हो, तो उसके पास जाओ। वही तुम्हारे भाग्यमें जनमी है। उसकी बात जानो।

२२ विश्वावसु, यहांसे उठो। नमस्कारके द्वारा मैं तुम्हारी पूजा करता हूं। किसी बृहत् नितम्बवाली कन्याके पास जाओ और उसे पत्नी बनाकर पतिसे मिलाओ।

२३ देवो, वह मार्ग सरल और कण्टक-विहीन हों, जिनसे हमारे मित्र लोग कन्याके पिताके पास जाते हैं। अर्यमा और भग देवता हमें भली भाँति ले चलें। पति-पत्नी मिलकर रहें।

प्र त्वा मुञ्चामि वरुणस्य पाशाद्येन त्वाबध्नात् सविता सुशेवः।
ऋतस्य योनौ सुकृतस्य लोकेऽरिष्टां त्वा सह पत्या दधामि ॥२४॥
प्रेतो मुञ्चामि नामुतः सुबद्धाममुतस्करम्।
यथेयमिन्द्र मीढ्वः सुपुत्रा सुभगासति ॥२५॥
पूषा त्वेतो नयतु हस्तगृह्याश्विना त्वा प्रवहतां रथेन।
गृहान् गच्छ गृहपत्नी यथासो वशिनी त्वं विदथमा वदासि ॥२६॥
इह प्रियं प्रजया ते समृध्यतामस्मिन् गृहे गार्हपत्याय जागृहि।
एना पत्या तन्वं संसृजस्वाधा जिव्री विदथमा वदाथः ॥२७॥
नीललोहितं भवति कृत्यासक्तिर्व्यज्यते।
एधन्ते अस्या ज्ञातयः पतिर्बन्धेषु बध्यते ॥२८॥
परा देहि शामुल्यं ब्रह्मभ्यो वि भजा वसु।
कृत्यैषा पद्वती भूत्व्या जाया विशते पतिम् ॥२९॥

२४ कन्या, सुन्दर-शरीर सूर्यदेवने जिस बन्धनसे तुम्हें बाँधा था, उसी वरुणके (सूर्य द्वारा प्रेरित होकर वरुण ही बाँधते हैं) पाशसे मैं तुम्हें छुड़ाता हूं। जो सत्यका आधार है और जो सत्कर्मका निवास है, उसी स्थानपर तुम्हें निर्विघ्न रूपसे, पतिके साथ, स्थापित करता हूं।

२५ मैं कन्याको पितृ-कुलसे छुड़ाता हूं। दूसरे स्थानसे नहीं। भर्तृगृहमें इसे भली भाँति स्थापित करता हूं। वर्षक इन्द्र, यह सौभाग्यवती और सुपुत्रवाली हो।

२६ तुम्हें हाथमें धारण करके पूषा यहाँसे ले जायं। अश्विद्वय तुम्हें रथसे ले जायं। गृहमें जाकर गृहिणी बनो। पतिके वशमें रहकर भृत्यादिका व्यवस्थापन करो।

२७ इस गृहमें सन्तान उत्पन्न करके प्रसन्न होओ। यहाँ सावधान होकर कार्य करना। स्वामीके साथ अपने शरीरको सम्मिलित करो। वृद्धावस्थातक अपने गृहमें प्रभुता करो।

२८ पाप-देवता (कृत्या) नील और लोहित वर्णके हो रहे हैं। इस स्त्रीपर संबद्ध कृत्याको छोड़ा जाता है। तब इस नारीके जातीय लोग बढ़ रहे हैं। इनका पति सांसारिक बन्धनमें है।

२९ मलिन वस्त्रका त्याग करो। ब्राह्मणोंको धन दो। कृत्या चली गयी है। पत्नी पतिमें सम्मिलित हो रही है।

अश्रीरा तनूर्भवति रुशती पापयामुया ।
पतिर्यद्वध्वो वाससा स्वमङ्गमभिधित्सते ॥३०॥
ये वध्वश्चन्द्रं वहतुं यक्ष्मा यन्ति जनादनु ।
पुनस्तान्यज्ञिया देवा नयन्तु यत आगताः ॥३१॥
मा विदन् परिपन्थिनो य आसीदन्ति दम्पती ।
सुगेभिर्दुर्गमतीतामप द्रान्त्वरातयः ॥३२॥
सुमङ्गलीरियं वधूरिमां समेत पश्यत ।
सौभाग्यमस्यै दत्त्वायाथास्तं वि परेतन ॥३३॥
तृष्टमेतत् कटुकमेतदपाष्ठवद्विषवन्नैतदत्तवे ।
सूर्यां यो ब्रह्मा विद्यात् स इद्वाधूयमर्हति ॥३४॥
आशसनं विशसनमथो अधिविकर्तनम् ।
सूर्यायाः पश्य रूपाणि तानि ब्रह्मा तु शुन्धति ॥३५॥

३० यदि पति वधूके वस्त्रसे अपने शरीरको ढकनेकी चेष्टा करता है, तो उसपर कृत्याका आक्रमण होता है और उज्ज्वल शरीर भी श्री-भ्रष्ट हो जाता है।

३१ जो लोग वरसे वधूको मिले आह्लादकजनक चादरको लेनेको आये थे, उन्हें यज्ञ-भाग-ग्राही देवता उनके स्थानपर लौटा दें वा विफल-प्रयास कर दें।

३२ जो शत्रुताके लिये इन दम्पतीके पास आते हैं, वे विनष्ट हों। दम्पती सुविधाके द्वारा असुविधाको नष्ट कर दें। शत्रु लोग दूर भाग जायं।

३३ यह वधू शोभन कल्याणवाली है। सभी आशीर्वादकर्त्ता आवें और इसे देखें। इसे स्वामीकी प्रियपात्री बननेका आशीर्वाद देकर सब लोग अपने-अपने घर चले जायं।

३४ यह वस्त्र दूषित, अग्राह्य, मलिन और विषयुक्त हैं। यह व्यवहारके योग्य नहीं है। जो ब्राह्मण सूर्याको जाने, वही यह वस्त्र पा सकता है।

३५ सूर्याकी मूर्त्ति कैसी है, देखो। इसका वस्त्र कहीं प्रथम फटा है। कहां बीचमें फटा है और कहीं चारो ओर फटा है। जो ब्रह्मा हैं, वही इसका संशोधन करते हैं।

गृभ्णामि ते सौभगत्वाय हस्तं मया पत्या जरदष्टिर्यथासः ।

भगो अर्यमा सविता पुरन्धिर्मह्यं त्वादुर्गार्हपत्याय देवाः ॥३६॥

तां पूषञ्छिवतमामेरयस्व यस्यां बीजं मनुष्या वपन्ति ।

या न ऊरू उशती विश्रयाते यस्यामुशन्तः प्रहराम शेपम् ॥३७॥

तुभ्यमग्रे पर्यवहन्सूर्यां वहतुना सह ।

पुनः पतिभ्यो जायां दा अग्ने प्रजया सह ॥३८॥

पुनः पत्नीमग्निरदादायुषा सह वर्चसा ।

दीर्घायुरस्या यः पतिर्जीवाति शरदः शतम् ॥३९॥

सोमः प्रथमो विविदे गन्धर्वो विविद उत्तरः ।

तृतीयो अग्निष्टे पतिस्तुरीयस्ते मनुष्यजाः ॥४०॥

---

३६ तुम्हारे सौभाग्यके लिये मैं तुम्हारा हाथ पकड़ता हूं। मुझे पति पाकर तुम वृद्धावस्थामें पहुंचना—यही मेरी प्रार्थना है। भग, अर्यमा और पूषाने तुम्हें मुझे गृह-धर्म चलानेके लिये दिया है।

३७ पूषा, जिस नारीके गर्भमें पुरुष वीज बोता है, उसे तुम कल्याणी बनाकर भेजो। कामिनी होकर वह अपना उरु-द्वय विस्तारित करेगी और हम कामवश होकर उसमें अपना इन्द्रिय प्रहार करेंगे।

३८ अग्नि, ओढ़नीके साथ सूर्याको पहले तुम्हारे ही पास ले जाया जाता है। तुम सन्तान-रहित वनिताको पतिके हाथ सौंपते हो।

३९ अग्निने पुनः सौन्दर्य और परमायुके साथ वनिताको दिया। इसका पति दीर्घायु होकर सौ वर्ष जीवित रहेगा।

४० सोमने सबसे प्रथम तुम्हें पत्नी-रूपसे प्राप्त किया। तुम्हारे दूसरे पति गन्धर्व हुए और तीसरे अग्नि। मनुष्य-वंशज तुम्हारे चौथे पति हैं।

सोमो ददद्गन्धर्वाय गन्धर्वो दददग्नये ।
रयिं च पुत्रांश्चादादग्निर्मह्यमथो इमाम् ॥४१॥
इहैव स्तं मा वि यौष्टं विश्वमायुर्व्यश्नुतम् ।
क्रीळन्तौ पुत्रैर्नप्तृभिर्मोदमानौ स्वे गृहे ॥४२॥
आ नः प्रजां जनयतु प्रजापतिराजरसाय समनक्त्वर्यमा ।
अदुर्मङ्गलीः पतिलोकमा विश शन्नो भव द्विपदे शं चतुष्पदे ॥४३॥
अघोरचक्षुरपतिघ्न्येधि शिवा पशुभ्यः सुमनाः सुवर्चाः ।
वीरसूर्देवकामा स्योना शन्नो भवद्विपदे शं चतुष्पदे ॥४४॥
इमां त्वमिन्द्र मीढ्वः सुपुत्रां सुभगां कृणु ।
दशास्यां पुत्रानाधेहि पतिमेकादशं कृधि ॥४५॥
सम्राज्ञी श्वशुरे भव सम्राज्ञी श्वश्र्वां भव ।
ननान्दरि सम्राज्ञी भव सम्राज्ञी अधि देवृषु ॥४६॥

---

४१ सोमने उस स्त्रीको गन्धर्वको दिया, गन्धर्वने अग्निको दिया और अग्निने धन-सन्तान-सहित मुझे दिया ।

४२ वर और बधू, तुम दोनों यहीं रहो, परस्पर पृथक् नहीं होना। नाना खाद्य भक्षण करना। अपने गृहमें रहकर पुत्र-पौत्रोंके साथ आमोद, आह्लाद और क्रीड़ा करना।

४३ ब्रह्मा वा प्रजापति हमें सन्तति दें और अर्यमा बुढ़ापेतक हमें साथ रखें। बधू, तुम मङ्गलमयी होकर पति-गृहमें ठहरना। हमारे मनुष्यों और पशुओंके लिये कल्याणकारिणी रहना।

४४ तुम्हारा नेत्र निर्दोष हो। तुम पतिके लिये मङ्गलमयी होओ। पशुओंके लिये मङ्गल-कारिणी होओ। तुम्हारा मन प्रफुल्ल हो और तुम्हारा सौन्दर्य शुभ्र हो। तुम वीर-प्रसविनी और देवोंकी भक्ता होओ। हमारे मनुष्यों और पशुओंके लिये कल्याणमयी होओ।

४५ वर्षक इन्द्र, इस नारीको उत्तम पुत्र और सौभाग्यवाली करो। इसके गर्भमें दस पुत्र स्थापित करो—पतिको लेकर इसे ग्यारह व्यक्तिवाली बनाओ।

४६ बधू, तुम सास, ससुर, ननद और देवरोंकी सम्राज्ञी (महारानी) बनो—सबके ऊपर प्रभुत्व करो।

समञ्जन्तु विश्वे देवाः समापो हृदयानि नौ ।
सं मातरिश्वा सन्धाता समु देष्ट्री दधातु नौ ॥४७॥

४७ सारे देवता हम दोनोंके हृदयोंको मिला दें। जल, वायु, धाता और सरस्वती हम दोनोंको संयुक्त करें।

तृतीय अध्याय समाप्त

चतुर्थ अध्याय

८६ सूक्त

देवता और ऋषि इन्द्र, वृषाकपि, इन्द्राणी आदि। पञ्चपदा पङ्क्ति छन्द।

वि हि सोतोरसृक्षत नेन्द्रं देवममंसत।
यत्रामदद्वृषाकपिरर्यः पुष्टेषु मत्सखा विश्वस्मादिन्द्र उत्तरः ॥१॥
परा हीन्द्र धावसि वृषाकपेरति व्यथिः।
नो अह प्र विन्दस्यन्यत्र सोमपीतये विश्वस्मादिन्द्र उत्तरः ॥२॥
किमयं त्वां वृषाकपिश्चकार हरितो मृगः।
यस्मा इरस्यसीदु न्वर्यो वा पुष्टिमद्वसु विश्वस्मादिन्द्र उत्तरः ॥३॥
यमिमं त्वं वृषाकपिं प्रियमिन्द्राभिरक्षसि।
श्वा न्वस्य जम्भिषदपि कर्णे वराहयुर्विश्वस्मादिन्द्र उत्तरः ॥४॥

---

१ मैं (इन्द्र) ने सोमाभिषव करनेके लिये स्तोताओंको कहा था। परन्तु उन्होंने इन्द्रकी स्तुति नहीं की—वृषाकपिकी ही स्तुति की। सोम-प्रवृद्ध यज्ञमें स्वामी वृषाकपि (इन्द्र-पुत्र) मेरे सखा होकर सोम-पानसे हृष्ट हुए। तो भी मैं (इन्द्र) सबसे श्रेष्ठ हूं।

२ इन्द्र, तुम अत्यन्त चलित होकर वृषाकपिके पास जाते हो। तुम सोम-पानके लिये नहीं जाते हो। इन्द्र सर्व-श्रेष्ठ हैं।

३ इन्द्र, वृषाकपिने तुम्हारा क्या भला किया है कि, तुम उदार होकर हरित-वर्ण मृग वृषाकपिको पुष्टिकर धन देते हो। इन्द्र सर्व-श्रेष्ठ हैं।

४ इन्द्र, तुम जिस प्रिय वृषाकपिकी रक्षा करते हो, उसके कानको वराहाभिलाषी कुक्कुर काटे। इन्द्र सर्व-श्रेष्ठ हैं।

प्रिया तष्टानि मे कपिर्व्यक्ता व्यदूदुषत् ।
शिरो न्वस्य राविषं न सुगं दुष्कृते भुवं विश्वस्मादिन्द्र उत्तरः ॥५॥
न मत् स्त्री सुभसत्तरा न सुयाशुतरा भुवत् ।
न मत् प्रतिच्यवीयसी न सक्थ्युद्यमीयसी विश्वस्मादिन्द्र उत्तरः ॥६॥
उवे अम्ब सुलाभिके यथेवाङ्ग भविष्यति ।
भसन्मे अम्ब सक्थि मे शिरो मे वीव हृष्यति विश्वस्मादिन्द्र उत्तरः ॥७॥
किं सुबाहो स्वङ्गुरे पृथुष्टो पृथुजाघने ।
किं शूरपत्नि नस्त्वमभ्यमीषि वृषाकपिं विश्वस्मादिन्द्र उत्तरः ॥८॥
अवीरामिव मामयं शरारुरभिमन्यते ।
उताहमस्मि वीरिणीन्द्रपत्नी मरुत्सखा विश्वस्मादिन्द्र उत्तरः ॥९॥

---

५ (इन्द्राणीकी उक्ति—) मेरे लिये यजमानोंके द्वारा कल्पित, प्रिय और घृत-युक्त जो सामग्री रखी हुई थी, उसे वृषाकपिने दूषित कर दिया। मेरी इच्छा है कि, मैं इसका सिर काट डालूं। मैं इस दुष्ट-कर्माको सुख नहीं दे सकती। इन्द्र सर्व श्रेष्ठ हैं।

६ मुझसे बढ़कर कोई स्त्री सौभाग्यवती नहीं है—सुपुत्रवाला भी नहीं है। मुझसे बढ़कर कोई भी स्त्री पुरुष (स्वामी) के पास शरीरको नहीं प्रफुल्ल कर सकती और न रति-समयमें दोनों जाँघोंको उठा ही सकती है।

७ (वृषाकपिकी उक्ति–) माता (इन्द्राणी), तुमने सुन्दर लाभ किया है। तुम्हारा अङ्ग, जङ्घा, मस्तक आदि आवश्यकतानुसार हो जायंगे प्रेमालापसे कोकिलादि पक्षीके समान तुम पिताको प्रसन्न करो। इन्द्र सर्व-श्रेष्ठ हैं।

८ (इन्द्रकी उक्ति—) सुन्दर भुजाओं, सुन्दर अङ्गुलियों लम्बे बालों और मोटी जाँघों-वाली तथा वीर-पत्नी इन्द्राणी, तुम वृषाकपिपर क्यों क्रुद्ध हो रही हो ? इन्द्र सर्व-श्रेष्ठ हैं।

९ (इन्द्राणीका कथन—) यह हिंसक वृषाकपि मुझे पति-पुत्र-विहीनाके समान समझता है। परन्तु मैं पति-पुत्रवाली इन्द्र-पत्नी हूं। मेरे सहायक मरुत् लोग हैं। इन्द्र सर्व-श्रेष्ठ हैं

संहोत्रं स्म पुरा नारी समनं वाव गच्छति

वेधा ऋतस्य वीरिणीन्द्रपत्नी महीयते विश्वस्मादिन्द्र उत्तरः ॥१०॥

इन्द्राणीमासु नारिषु सुभगामहमश्रवम् ।

नह्यस्या अपरं चन जरसा मरते पतिर्विश्वस्मादिन्द्र उत्तरः ॥११॥

नाहमिन्द्राणि रारण सख्युर्वृषाकपेर्ऋते ।

यस्येदमप्यं हविः प्रियं देवेषु गच्छति विश्वस्मादिन्द्र उत्तरः ॥१२॥

वृषाकपायि रेवति सुपुत्र आदु सुस्नुषे ।

घसत्त इन्द्र उक्षणः प्रियं काचित्करं हविर्विश्वस्मादिन्द्र उत्तरः ॥१३॥

उक्ष्णो हि मे पञ्चदश साकं पचन्ति विंशतिम् ।

उताहमद्मि पीव इदुभा कुक्षी पृणन्ति मे विश्वस्मादिन्द्र उत्तरः ॥१४॥

---

१० जिस समय हवन वा युद्ध होता है, उस समय पति और पुत्रवाली इन्द्राणी वहाँ जाती हैं। वह यज्ञका विधान करनेवाली हैं—उनकी पूजा सब लोग करते हैं। इन्द्र सर्व-श्रेष्ठ हैं।

११ (इन्द्रकी उक्ति—) सब स्त्रियोंमें मैंने इन्द्राणीको सौभाग्यवाली सुना है। अन्यान्य पुरुषोंके समान इन्द्राणीके पतिको बुढ़ापेमें पड़कर नहीं मरना पड़ता। इन्द्र सर्व-श्रेष्ठ हैं।

१२ इन्द्राणी, अपने हितैषी वृषाकपिके विना मैं नहीं प्रसन्न रहता। वृषाकपिका ही प्रीतिकर द्रव्य (हवि आदि) देवोंके पास जाता है। इन्द्र सर्व-श्रेष्ठ हैं।

१३ वृषाकपिकी स्त्री, तुम धनशालिनी, उत्तम पुत्र-वाली और सुन्दरी पुत्र-बधू हो। तुम्हारे वृषों (साँड़ों) को इन्द्र खा जायं। तुम्हारे प्रिय और सुखकर हविका वह भक्षण करें। इन्द्र सर्व-श्रेष्ठ हैं।

१४ (इन्द्रकी उक्ति—) मेरे लिये इन्द्राणीके द्वारा प्रेरित याज्ञिक लोग पन्द्रह-बीस साँड़ वा बैल पकाते हैं। उन्हें खाकर मैं मोटा होता हूं। मेरी दोनों कुक्षियोंको याज्ञिक लोग सोमसे भरते हैं। इन्द्र सर्व-श्रेष्ठ हैं।

वृषभो न तिग्मशृङ्गोऽन्तर्यूथेषु रोरुवत् ।
मन्थस्त इन्द्र शं हृदे यं ते सुनोति भावयुर्विश्वस्मादिन्द्र उत्तरः ॥१५॥
न सेशे यस्य रम्बतेऽन्तरा सक्थ्या कपृत् ।
सेदीशे यस्य रोमशं निषेदुषो विजृम्भते विश्वस्मादिन्द्र उत्तरः ॥१६॥
न सेशे यस्य रोमशं निषेदुषो विजृम्भते ।
सेदीशे यस्य रम्बतेऽन्तरा सक्थ्या कपृद्विश्वस्मादिन्द्र उत्तरः ॥१७॥
अयमिन्द्र वृषाकपिः परस्वन्तं हतं विदत् ।
असिं सूनां नवं चरुमादेधस्यान आचितं विश्वस्मादिन्द्र उत्तरः ॥१८॥
अयमेमि विचाकशद्विचिन्वन् दासमार्यम् ।
पिबामि पाकसुत्वनोऽभि धीरमचाकशं विश्वस्मादिन्द्र उत्तरः ॥१९॥

१५ इन्द्र, जैसे तीक्ष्णशृङ्ग वृषभ गोवृन्दमें गर्जन करता हुआ रमता है, वैसे ही तुम भी मेरे साथ रमण करो । तुम्हारे हृदयके लिये दधिमन्थन, शब्द करता हुआ, कल्याणकर हो । भावाभिलाषिणी इन्द्राणी जिस सोमका अभिषव करती हैं, वह भी कल्याणकर हो । इन्द्र सर्व-श्रेष्ठ हैं ।

१६ (इन्द्राणीकी उक्ति—) इन्द्र, वह मनुष्य मैथुन करनेमें नहीं समर्थ हो सकता, जिसका पुरुषाङ्ग दोनों जघनोंके बीच लम्बायमान है । वही समर्थ हो सकता है, जिसके बैठनेपर लोम-युक्त पुरुषाङ्ग बल प्रकाश करता वा फैलता है । इन्द्र सर्व-श्रेष्ठ हैं ।

१७ (इन्द्रकी उक्ति—) वह मनुष्य मैथुन करनेमें समर्थ नहीं हो सकता, जिसके बैठने पर लोम-युक्त पुरुषाङ्ग बल प्रकाश करता है । वही समर्थ हो सकता है, जिसका पुरुषाङ्ग दोनों जघनोंके बीच लम्बायमान है ।

१८ इन्द्र, वृषाकपि दूसरेका धन चुरानेवालेको अपने विषयमें मरा हुआ पावे । यह खड्ग, सूना (बध-स्थान), नया चरु और काठका शकट प्राप्त करे । इन्द्र सर्व-श्रेष्ठ हैं ।

१९ मैं (इन्द्र) यजमानोंको देखते हुए, आर्योंका अन्वेषण करते हुए और शत्रुओंका दूर करते हुए यज्ञमें आता हूँ । सोमाभिषव करनेवाले और हवि पकानेवालेका सोम पीता हूं । बुद्धिमान्को देखता हूँ । इन्द्र सर्व-श्रेष्ठ हैं ।

धन्व च यत् कृन्तत्रं च कति स्वित्ता वि योजना ।
नेदीयसो वृषाकपेऽस्तमेहि गृहाँ उप विश्वस्मादिन्द्र उत्तरः ॥२०॥
पुनरेहि वृषाकपे सुविता कल्पयावहै ।
य एषः स्वप्ननंशन्नोऽस्तमेषि पथा पुनर्विश्वस्मादिन्द्र उत्तरः ॥२१॥
यदुदञ्चो वृषाकपे गृहमिन्द्राजगन्तन ।
क्वस्य पुल्वघो मृगः कमगञ्जनयोपनो विश्वस्मादिन्द्र उत्तरः ॥२२॥
पर्शुर्ह नाम मानवी साकं ससूव विंशतिम् ।
भद्रं भल त्यस्या अभूद्यस्या उदरमामयद्विश्वस्मादिन्द्र उत्तरः ॥२३॥

८७ सूक्त

रक्षोघ्न अग्नि देवता । भरद्वाज-पुत्र पायु ऋषि । अनुष्टुप् आदि छन्द ।

रक्षोहणं वाजिनमा जिघर्मि मित्रं प्रथिष्ठमुपयामि शर्म ।
शिशानो अग्निः क्रतुभिः समिद्धः स नो दिवा स रिषः पातु नक्तम् ॥१॥

२० जल-शून्य मरुदेश और काटने योग्य वनमें कितने योजनोंका अन्तर है ? वृषाकपि, पासके गृहमें ही आश्रय ग्रहण करो । इन्द्र सर्व-श्रेष्ठ हैं ।

२१ वृषाकपि, तुम फिर आओ । तुम्हारे लिये हम (इन्द्र और इन्द्राणी) उत्तमोत्तम कर्म करते हैं । स्वप्न-नाशक सूर्य जैसे अस्त होते हैं, वैसे ही तुम भी घरमें आओ । इन्द्र सर्व-श्रेष्ठ हैं ।

२२ वृषाकपि और इन्द्र. ऊपर मुँह किये हुए तुम लोग मेरे गृहमें आओ । बहुभोक्ता और जन-हर्ष-दाता मृग कहाँ गया ? इन्द्र सर्व-श्रेष्ठ हैं ।

२३ इन्द्रके द्वारा छोड़े गये वाण, मनु-पुत्री पर्शुने बीस पुत्रोंको उत्पन्न किया । जिस (पर्शु)का उदर मोटा हुआ था, उसका कल्याण हो । इन्द्र सर्व-श्रेष्ठ हैं ।

१ राक्षस-नाशक, बली, यजमानोंके मित्र और स्थूल अग्निका घृतसे हवन करता हूं । घरको जाता हूं । ज्वालाओंको तेज करते हुए अग्नि यजमानोंके द्वारा प्रज्वालित होते हैं । अग्नि हमें हिंसक राक्षसोंसे दिन-रात बचावें ।

अयोदंष्ट्रो अर्चिषा यातुधानानुप स्पृश जातवेदः समिद्धः ।
आ जिह्वया मूरदेवान् रभस्व क्रव्यादो वृक्त्व्यपि धत्स्वासन् ॥२॥
उभोभयाविन्नुप धेहि दंष्ट्रा हिंस्रः शिशानोऽवरं परं च ।
उतान्तरिक्षे परि याहि राजञ्जम्भैः सं धेह्यभि यातुधानान् ॥३॥
यज्ञैरिषूः सन्नममानो अग्ने वाचा शल्याँ अशनिभिर्दिहानः ।
ताभिर्विध्य हृदये यातुधानान् प्रतीचो बाहून् प्रति भङ्ध्येषाम् ॥४॥
अग्ने त्वचं यातुधानस्य भिन्धि हिंस्राशनिर्हरसा हन्त्वेनम् ।
प्र पर्वाणि जातवेदः शृणीहि क्रव्यात् क्रविष्णुर्वि चिनोतु वृक्णम् ॥५॥
यत्रेदानीं पश्यसि जातवेदस्तिष्ठन्तमग्न उत वा चरन्तम् ।
यद्वान्तरिक्षे पथिभिः पतन्तं तमस्ता विध्य शर्वा शिशानः ॥६॥
उतालब्धं स्पृणुहि जातवेद आलेभानादृष्टिभिर्यातुधानात् ।
अग्ने पूर्वो नि जहि शोशुचान आमादः क्ष्विङ्कास्तमदन्त्वेनीः ॥७॥

२ ज्ञानी अग्नि, लौह-दन्त (तीक्ष्ण-दन्त) होकर अपनी ज्वालासे राक्षसोंको जलाओ। मारक राक्षसोंको ज्वालासे मारो। मांस-भक्षक राक्षसोंको काट करके मुँहमें रख लो।

३ दोनों ओरके दाँतोंसे युक्त अग्नि, तुम राक्षसोंके हिंसक हो। दोनों ओरके दाँतोंको तेज करते हुए उन्हें राक्षसोंमें बैठा दो। शोभावान् अग्नि, अन्तरिक्षस्थ राक्षसोंके पास जाओ और दाँतोंसे राक्षसोंको पीस डालो।

४ अग्नि, तुम यज्ञसे और हमारी स्तुतिसे वाणोंको नवाते हुए और उनके अग्र भागोंको वज्र-संयुक्त करते हुए राक्षसोंके हृदयको छेदो। उनकी भुजाओंको रगड़ डालो।

५ धनी अग्नि, राक्षसोंके चमड़ेको काट डालो। हिंसक वज्र उन्हें तेजसे मारे। राक्षसोंके अङ्गोंको फाड़ो। मांस-भक्षक वृक आदि मांसाभिलाषी होकर इनका मांस खायं।

६ ज्ञानी अग्नि, चाहे राक्षस खड़ा रहे, इधर-उधर घूमता रहे, आकाशमें रहे अथवा मार्गमें जाय—जहाँ कहीं भी तुम उसे देखते हो, तेज वाण फेंककर उसे छेदो।

७ ज्ञानी अग्नि, आक्रमणकर्त्ता राक्षसके हाथसे आक्रान्त व्यक्तिको ऋष्टि (दो धारोंवाले खड्ग) से बचाओ। अग्नि, उज्ज्वल मूर्ति धारण करके सबसे पहले अपक्व मांस खानेवालोंको मारो। ये पक्षियाँ उस राक्षसको खायं।

इह प्र ब्रूहि यतमः सो अग्ने यो यातुधानो य इदं कृणोति ।
तमा रभस्व समिधा यविष्ठ नृचक्षसश्चक्षुषे रन्धयैनम् ॥८॥
तीक्ष्णेनाग्ने चक्षुषा रक्ष यज्ञं प्राञ्चं वसुभ्यः प्रणय प्रचेतः ।
हिंस्रं रक्षांस्यभि शोशुचानं मा त्वा दभन् यातुधाना नृचक्षः ॥९॥
नृचक्षा रक्षः परि पश्य विक्षु तस्य त्रीणि प्रति शृणीह्यग्रा ।
तस्याग्ने पृष्टीर्हरसा शृणीहि त्रेधा मूलं यातुधानस्य वृश्च ॥१०॥
त्रिर्यातुधानः प्रसितिं त एत्वृतं यो अग्ने अनृतेन हन्ति ।
तमर्चिषा स्फूर्जयन् जातवेदः समक्षमेनं गृणते नि वृङ्धि ॥११॥
तदग्ने चक्षुः प्रति धेहि रेभे शफारुजं येन पश्यसि यातुधानम् ।
अथर्ववज्ज्योतिषा दैव्येन सत्यं धूर्वन्तमचितं न्योष ॥१२॥

---

८ अग्नि, कहो, कौन राक्षस इस यज्ञमें विघ्न करता है। तरुणतम अग्नि, काष्ठ द्वारा प्रज्वलित होकर तुम उस राक्षसको मारो। मनुष्योंके ऊपर तुम कृपामयी दृष्टि डालते हो। उसी दृष्टिसे इस राक्षसको मारो।

९ अग्नि, तुम तीक्ष्ण तेजसे हमारे यज्ञकी रक्षा करो। उत्तम ज्ञानवाले अग्नि, इस यज्ञको धनके अनुकूल करो। मनुष्योंके दर्शक अग्नि, तुम राक्षस-घातक हो। तुम्हें राक्षस न मारें।

१० मनुष्य-दर्शक अग्नि, मनुष्योंके हिंसक राक्षसको देखो। उसके तीन मस्तकोंको काटो। उसके पासके राक्षसोंको भी शीघ्र मारो। उसके पैरको तीन प्रकारसे काटो वा उसके तीन पैरोंको काटो।

११ ज्ञानी अग्नि, राक्षस तुम्हारी लपटोंमें तीन बार जाय। जो राक्षस सत्यको असत्यसे मारता है, उसे अपने तेजसे भस्म कर डालो। मुझ स्तोताके सामने ही इसे छिन्न-भिन्न कर डालो।

१२ अग्नि, गरजनेवाले राक्षसपर अपना वह तेज फेंको, जिससे खुरके समान नखोंसे साधुओंके भञ्जक राक्षसोंको देखते हो। सत्यको असत्यसे दबानेवाले राक्षसको, दध्यङ् अथर्वा ऋषिके समान, अपने तेजसे भस्म कर डालो।

यदग्ने अद्य मिथुना शपातो यद्वाचस्तृष्टं जनयन्त रेभाः ।
मन्योर्मनसः शरव्या जायते या तया विध्य हृदये यातुधानान् ॥१३॥
पराशृणीहि तपसा यातुधानान् पराग्ने रक्षो हरसा शृणीहि ।
परार्चिषा मूरदेवाञ्छृणीहि परासुतृपो अभि शोशुचानः ॥१४॥
पराद्य देवा वृजिनं शृणन्तु प्रत्यगेनं शपथा यन्तु तृष्टाः ।
वाचास्तेनं शरव ऋच्छन्तु मर्मन् विश्वस्यैतु प्रसितिं यातुधानः ॥१५॥
यः पौरुषेयेण क्रविषा समङ्क्ते यो अश्व्येन पशुना यातुधानः ।
यो अघ्न्याया भरति क्षीरमग्ने तेषां शीर्षाणि हरसापि वृश्च ॥१६॥
संवत्सरीणं पय उस्रियायास्तस्य माशीद्यातुधानो नृचक्षः ।
पीयूषमग्ने यतमस्तितृप्सात्तं प्रत्यञ्चमर्चिषा विध्य मर्मन् ॥१॥

---

१३ अग्नि, स्त्री-पुरुष आपसमें झगड़ा कर रहे हैं। स्तोता लोग आपसमें कटु कथा कह रहे हैं। फलतः मनमें क्रोध उत्पन्न होनेपर जो वाण फेंका जाता है, उससे राक्षसोंके हृदयको विद्ध करो; क्योंकि इन सब कटु कथाओंको कहनेवाले राक्षस होते हैं।

१४ राक्षसोंको तेजसे भस्म करो। राक्षसको बलके द्वारा मारो। मारने योग्य राक्षसोंको अपने तेजसे मारो। मनुष्योंके प्राण लेनेवाले राक्षसोंको मारो।

१५ आज अग्नि आदि देवता पापी राक्षसको नष्ट करें। हमारे दुर्वाक्य इस राक्षसके पास जायँ। मिथ्यावादी राक्षसके मर्मके पास वाण जाय। विश्वव्यापी अग्निके बन्धनमें राक्षस गिरे।

१६ अग्नि, जो राक्षस मनुष्यके मांसका संग्रह करता है, जो अश्व आदि पशुओंके मांसका संग्रह करता है और जो अबध्य गौका दूध चुरा ले जाता है, ऐसे राक्षसोंके मस्तकको, अपने बलसे, छिन्न कर डालो।

१७ एक वर्षतक गायका जो दूध संचित होता है, उस दूधका पान राक्षस न करने पावे। मनुष्य-दर्शक अग्नि, जो राक्षस उस अमृतके समान दूधको पीनेकी चेष्टा करता है, उसके आगे आते ही अपनी ज्वालासे उसके मर्मको छिन्न-भिन्न कर डालो।

विषं गवां यातुधानाः पिबन्त्व वृश्च्यन्तामदितये दुरेवाः ।
परैनान् देवः सविता ददातु परा भागमोषधीनां जयन्ताम् ॥१८॥
सनादग्ने मृणसि यातुधानान्न त्वा रक्षांसि पृतनासु जिग्युः ।
अनु दह सहमूरान् क्रव्यादो मा ते हेत्या मुक्षत दैव्यायाः ॥१९॥
त्वं नो अग्ने अधरादुदक्तात्त्वं पश्चादुत रक्षा पुरस्तात् ।
प्रति ते ते अजरासस्तपिष्ठा अघशंसं शोशुचतो दहन्तु ॥२०॥
पश्चात् पुरस्तादधरादुदक्तात् कविः काव्येन परि पाहि राजन् ।
सखे सखायमजरो जरिम्णेऽग्ने मर्तां अमर्त्यस्त्वं नः ।
परि त्वाग्ने पुरं वयं विप्रं सहस्य धीमहि ।
धषद्वर्णं दिवेदिवे हन्तारं भङ्गुरावताम् ॥२२॥
विषेण भङ्गुवतः प्रति ष्म रक्षसो दह ।
अग्ने तिग्मेन शोचिषा तपूरग्राभिर्ऋष्टिभिः ॥२३॥

---

१८ गायोंके जिस दूधको राक्षस पीते हैं, वह उनके लिये विषके समान हो जाय। उन दुष्टोंको काटकर अदितिके पास उनका बलिदान कर दो। इन्हें सूर्य उच्छिन्न कर डालें। तृण, लता आदिका जो छोड़ने योग्य असार अंश है, राक्षस उसका ही ग्रहण करें।

१९ अग्नि, क्रमागत राक्षसोंको मार डालो। राक्षस लोग युद्धमें तुम्हें जीत न सकें। कच्चा मांस खानेवाले राक्षसोंको जड़से विध्वस्त कर डालो। वे तुम्हारे दिव्य अस्त्रोंसे बचने न पावें।

२० अग्नि, तुम हमें पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण—चारो ओरसे बचाओ। तुम्हारी ज्वालाएँ अत्यन्त उज्ज्वल, अविनाशी और उत्तप्त हैं। वे पापी राक्षसोंको भस्म कर दें।

२१ दीप्त अग्नि, तुम कार्य-पटु हो; इसलिये क्रिया-कौशलसे हमें उत्तर, दक्षिण, पूर्व और पश्चिमसे बचाओ। सखा अग्नि, मैं तुम्हारा मित्र हूँ। तुम्हारे पास बुढ़ापा नहीं आता। मुझे दीर्घ जीवन और जरा दो। तुम अमर हो। हम मरण-शील हैं। हमारी रक्षा करो।

२२ बलके पुत्र अग्नि, तुम पूरक, मेधावी, धर्षक और टेढ़े राक्षसोंको अनुदिन मारनेवाले हो। तुम्हारा हम ध्यान करते हैं।

२३ अग्नि, भञ्जक कर्म करनेवाले राक्षसोंको तुम व्यापक तेजसे जलाओ। तपते हुए खड्गोंसे भी उन्हें जलाओ।

प्रत्यग्ने मिथुना दह यातुधाना किमीदिना ।
सं त्वा शिशामि जागृह्यदब्धं विप्र मन्मभिः ॥२४॥
प्रत्यग्ने हरसा हरः शृणीहि विश्वतः प्रति ।
यातुधानस्य रक्षसो बलं वि रुज वीर्यम् ॥२५॥

८८ सूक्त

अग्नि और सूर्य देवता। मूर्द्धन्वान् ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

हविष्पान्तमजरं स्वर्विदि दिविस्पृश्याहुतं जुष्टमग्नौ ।
तस्य भर्मणे भुवनाय देवा धर्मणे कं स्वधया पप्रथन्त ॥१॥
गीर्णं भुवनं तमसापगूळ्हमाविः स्वरभवज्जाते अग्नौ ।
तस्य देवाः पृथिवी द्यौरुतापोऽरणयन्नोषधीः सख्ये अस्य ॥२॥

२४ स्त्री-पुरुषमें कहाँ क्या है, इस बातको देखते हुए घूमनेवाले राक्षसोंको जलाओ। मेधावी अग्नि, तुम्हें कोई मार नहीं सकता। स्तुतियोंसे मैं तुम्हें स्तुत करता हूं। जागो।

२५ अग्नि, अपने तेजसे राक्षसोंके तेजको चारो ओर नष्ट कर दो। राक्षसोंके बल-वीर्यको नष्ट कर डालो।

१ पीनेके योग्य, चिर नूतन और देवोंके द्वारा सेवित सोमरस स्वर्गस्थ और आकाश-स्पर्शी अग्निमें हुत किया गया है। उसीके उत्पादन, परिपूरण और धारणके लिये देवता लोग सुख कर अग्निको वर्द्धित करते हैं।

२ अन्धकार भुवनका ग्रास करता है। उसमें भुवनका अन्तर्धान होता है। अग्निके प्रक होनेपर सब प्रसन्न होते हैं। देवता, आकाश, जल, वृक्ष आदि सभी सन्तुष्ट होते हैं।

देवेभिर्निषितो यज्ञियेभिरग्निं स्तोषाण्यजरं बृहन्तम् ।
यो भानुना पृथिवीं द्यामुतेमामाततान रोदसी अन्तरिक्षम् ॥३॥
यो होतासीत् प्रथमो देवजुष्टो यं समांजन्नाज्येना वृणानाः ।
स पतत्रीत्वरं स्था जगद्यच्छ्वात्रमग्निरकृणोज्जातवेदाः ॥४॥
यज्जातवेदो भुवनस्य मूर्धन्नतिष्ठो अग्ने सह रोचनेन ।
तं त्वाहेम मतिभिर्गीर्भिरुक्थैः स यज्ञियो अभवो रोदसिप्राः ॥५॥
मूर्धा भुवो भवति नक्तमग्निस्ततः सूर्यो जायते प्रातरुद्यन् ।
मायामु तु यज्ञियानामेतामपो यत्तूर्णिश्चरति प्रजानन् ॥६॥
दृशेन्यो यो महिना समिद्धोऽरोचत दिवियोनिर्विभावा ।
तस्मिन्नग्नौ सूक्तवाकेन देवा हविर्विश्व आजुहवुस्तनूपाः ॥७॥

---

३ यज्ञ-भाग-ग्राही देवोंने मुझे प्रवृत्ति दी है; इसलिये मैं अजर और विशाल अग्निकी स्तुति करता हूँ। अग्निने अपने तेजसे पृथिवी और आकाशके मध्यस्थ स्थान और द्यावापृथिवी-को विस्तारित कर डाला।

४ जो वैश्वानर अग्नि देवोंके द्वारा सेवित और मुख्य होता हुए थे और जिन्हें वर चाहनेवाले यजमानलोग घृतसे युक्त करते हैं, उन्हीं अग्निने उड़नेवाले पक्षियों, गतिशील सर्प आदिको और स्थावर-जङ्गमात्मक जगत्को शीघ्र उत्पन्न किया।

५ ज्ञाता अग्नि, जो तुम त्रिलोकके सिरपर, आदित्यके साथ, रहते हो, उन तुमको हम सुन्दर स्तुतियोंके द्वारा प्राप्त करते हैं। तुम द्यावापृथिवीके पूरक और यज्ञ-योग्य हो।

६ रात्रि-कालमें अग्नि, सारे प्रणियोंके मस्तक-स्वरूप होते हैं और प्रातःकाल सूर्यरूपसे उदित होते हैं। इन्हें यज्ञ-सम्पादक देवोंकी प्रज्ञा कहा जाता है। अग्नि विचार-पूर्वक सभी स्थानोंमें शीघ्र-शीघ्र विचरण करते हैं।

७ जो अग्नि, विशेष रूपसे प्रज्वलित होकर, सुन्दर मूर्त्ति धारण कर और आकाशमें स्थान ग्रहण करके, दीप्तिके साथ, शोभा पाने लगे, उन्हीं अग्निमें शरीररक्षक सारे देवता लोगोंने, सूक्त-पाठ करते हुए, हवि प्रदान किया।

सूक्तवाकं प्रथममादिदग्निमादिद्धविरजनयन्त देवाः ।
स एषां यज्ञो अभवत्तनूपास्तं द्यौर्वेद तं पृथिवी तमापः ॥८॥
यं देवासोऽजनयन्ताग्निं यस्मिन्नाजुहवुर्भुवनानि विश्वा ।
सो अर्चिषा पृथिवीं द्यामुतेमामृजूयमानो अतपन्महित्वा ॥९॥
स्तोमेन हि दिवि देवासो अग्निमजीजनञ्छक्तिभी रोदसिप्राम् ।
तमू अकृण्वन् त्रेधा भुवे कं स ओषधीः पचति विश्वरूपाः ॥१०॥
यदेदेनमदधुर्यज्ञियासो दिवि देवाः सूर्यमादितेयम् ।
यदा चरिष्णू मिथुनावभूतामादित् प्रापश्यन् भुवनानि विश्वा ॥११॥
विश्वस्मा अग्निं भुवनाय देवा वैश्वानरं केतुमह्नामकृण्वन् ।
आ यस्ततानोषसो विभातीरपो ऊर्णोति तमो अर्चिषा यन् ॥१२॥

---

८ प्रथम देवता लोग "द्यावापृथिवी" आदि वाक्योंका मनसे निरूपण करते हैं। पश्चात् अग्निको उत्पन्न करते हैं—हविको भी प्रकट करते हैं। अग्नि देवोंके यजनीय हैं। वह शरीर-रक्षक हैं। उन अग्निको द्युलोक, पृथिवी और अन्तरिक्ष जानते हैं।

९ जिन अग्निको देवोंने उत्पन्न किया और "सर्वमेध" नामक यज्ञमें जिनमें सारी वस्तुओंका हवन किया जाता है, वही अग्नि सरल-गामी होकर अपनी विशाल ज्वालाके द्वारा द्यावापृथिवीको ताप देने लगे।

१० द्यावापृथिवीको परिपूर्ण करनेवाले अग्निको देवलोकमें देवोंने अपनी शक्तिसे, केवल स्तुतिके द्वारा, उत्पन्न किया। उन सुखावह अग्निको उन्होंने तीन भावों (पृथिवी, अन्तरिक्ष और द्यौ) से बनाया। वही अग्नि ओषधि, व्रीहि आदि सब वस्तुओंको परिणत अवस्थामें ले जाते हैं।

११ यज्ञ-योग्य देवोंने जिस समय इन अग्नि और अदिति-पुत्र सूर्यको आकाशमें स्थापित किया, उस समय वह दोनों युग्म-रूप होकर विचरण करने लगे। उस समय सारे प्राणी उन्हें देख सके।

१२ मनुष्य-हितैषी अग्निको सारे संसारके लिये देवोंने दिनकी पताका माना है। वह अग्नि विशिष्ट दीप्तिवाले प्रभातको विस्तृत करते हैं और जाते हुए अपनी ज्वालासे सारे अन्धकारको विनष्ट करते हैं।

वैश्वानरं कवयो यज्ञियासोऽग्निं देवा अजनयन्नजुर्यम् ।
नक्षत्रं प्रत्नममिनच्चरिष्णु यक्षस्याध्यक्षं तविषं बृहन्तम् ॥१३॥
वैश्वानरं विश्वहा दीदिवांसं मन्त्रैरग्निं कविमच्छा वदामः ।
यो महिम्ना परिबभूवोर्वी उतावस्तादुत देवः परस्तात् ॥१४॥
द्वे स्रुती अशृणवं पितॄणामहं देवानामुत मर्त्यानाम् ।
ताभ्यामिदं विश्वमेजत् समेति यदन्तरा पितरं मातरं च ॥१५॥
द्वे समीची बिभृतश्चरन्तं शीर्षतो जातं मनसा विमृष्टम् ।
स प्रत्यङ् विश्वा भुवनानि तस्थावप्रयुच्छन्तरणिर्भ्राजमानः ॥१६॥
यत्रा वदेते अवरः परश्च यज्ञन्योः कतरो नौ वि वेद ।
आ शेकुरित् सधमादं सखायो नक्षन्त यज्ञं क इदं वि वोचत् ॥१७॥

१३ मेधावी और यज्ञ-योग्य देवोंने अजर सूर्यात्मक (वैश्वानर) अग्निको उत्पन्न किया। जिस समय अग्नि स्थूल और विराट् होते हैं, उस समय आकाशमें चिर कालसे विहरण-शील नक्षत्रोंको देवोंके सामने ही वह निष्प्रभ कर डालते हैं।

१४ सर्वदा दीप्त, क्रान्तप्रज्ञ और विश्व-हितैषी अग्निकी, मन्त्रोंसे हम, स्तुति करते हैं। वैश्वानर अग्नि अपनी महिमासे द्यावापृथिवीको परिभूत करते हैं। अग्नि नीचे-ऊपर तपते हैं।

१५ पितरों, देवों और मनुष्योंके दो मार्गों (देव-यान और पितृयान)को मैंने सुना है। यह सारा संसार अग्रसर होते-होते उन्हीं मार्गोंको प्राप्त करता है अर्थात् जो कोई माता पिताके बीच जनमा हुआ है, उसके लिये इन दोनोंके अतिरिक्त कोई गति नहीं है।

१६ जो सूर्यके मस्तकसे उत्पन्न हुए है, जिन्हें स्तुतियोंसे परिपुष्ट किया जाता है और जो जब विचरण करते हैं, तब उन्हें द्यावापृथिवी धारण करते हैं, वह रक्षक कभी अपने कर्ममें शिथिलता नहीं करते—वह दीप्त होते-होते सारे जगत्में सुखसे रहते हैं।

१७ जिस समय पार्थिव अग्नि और मध्यम अग्नि वा वायु आपसमें विवाद करते हैं कि, हम दोनोंमें यज्ञको कौन जानता है, उस समय बन्धु ऋत्विक् यज्ञ करते हैं। परन्तु उनमेंसे कोई भी इस विवादका निर्णय नहीं कर सकता।

कत्यग्नयः कति सूर्यासः कत्युषासः कत्यु स्विदापः ।
नोपस्पिजं वः पितरो वदामि पृच्छामि वः कवयो विद्मने कम् ॥१८॥
यावन्मात्रमुषसो न प्रतीकं सुपर्ण्यो वसते मातरिश्वः ।
तावद्दधात्युप यज्ञमायन् ब्राह्मणो होतुरवरो निषीदन् ॥१९॥



८९ सूक्त

इन्द्र देवता । विश्वामित्र-पुत्र रेणु ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

इन्द्रं स्तवा नृतमं यस्य मह्ना विबबाधे रोचना विज्मो अन्तान् ।
आ यः पप्रौ चर्षणीधृद्वरोभिः प्र सिन्धुभ्यो रिरिचानो महित्वा ॥१॥
स सूर्यः पर्युरू वरांस्येन्द्रो ववृत्याद्रथ्येव चक्रा ।
अतिष्ठन्तमपस्यं न सर्गं कृष्णा तमांसि त्विष्या जघान ॥२॥

---

१८ पितरो, मैं तुम लोगोंसे तर्क-वितर्ककी बातें नहीं करता, केवल भली भाँति जाननेके लिये जिज्ञासा करता हूं कि, अग्नि कितने हैं, सूर्य कितने हैं, उषाएँ कितनी हैं और जल-देवियाँ कितनी हैं ।

१९ वायु, जबतक रातें उषाके मुँहका ढकना नहीं हटा देती हैं, तभीतक निम्नस्थ पार्थिव अग्नि आकर यज्ञके पास स्थान ग्रहण करते हैं । वही होता हैं और वही स्तोता हैं ।



१ स्तोता, नेताओंमें श्रेष्ठ इन्द्रकी स्तुति करो । इन्द्रकी महिमा सबके तेजको अभिभूत कर देती है । वह मनुष्योंको धारण करते हैं । उनकी महिमा समुद्रसे भी अधिक है– उनका तेज सारे संसारको परिपूर्ण करता है ।

२ वीर्यशाली इन्द्र अपने समस्त तेजको वैसे ही चारो ओर घुमाते हैं, जैसे रथी चक्रको घुमाता है । काला अन्धकार एक अस्थायी और अदृश्य सृष्टिके समान है । इन्द्र अपनी ज्योतिसे उसे नष्ट करते हैं ।

समानमस्मा अनपावृदर्च क्ष्मया दिवो असमं ब्रह्म नव्यम् ।
वि यः पृष्ठेव जनिमान्यर्य इन्द्रश्चिकाय न सखायमीषे ॥३॥
इन्द्राय गिरो अनिशितसर्गा अपः प्रेरयं सगरस्य बुध्नात् ।
यो अक्षेणेव चक्रिया शचीभिर्विष्वक् तस्तम्भ पृथिवीमुत द्याम् ॥४॥
आपान्तमन्युस्तृपलप्रभर्मा धुनिः शिमीवाञ्छरुमाँ ऋजीषी ।
सोमो विश्वान्यतसा वनानि नार्वागिन्द्रं प्रतिमानानि देभुः ॥५॥
न यस्य द्यावापृथिवी न धन्व नान्तरिक्षं नाद्रयः सोमो अक्षाः ।
यदस्य मन्युरधिनीयमानः शृणाति वीलु रुजति स्थिराणि ॥६॥
जघान वृत्रं स्वधितिर्वनेव रुरोज पुरो अरदन्न सिन्धून् ।
बिभेद गिरिं नवमिन्न कुम्भमा गा इन्द्रो अकृणुत स्वयुग्भिः ॥७॥

---

३ स्तोता, मेरे साथ मिलकर उन इन्द्रके लिये एक ऐसे नये स्तोत्रका उच्चारण करो, जो निकृष्ट न हो और जो द्यावापृथिवीमें निरुपम हो। वह यज्ञमें उच्चारित स्तुतियोंको पानेके लिये भी जैसे इच्छुक होते हैं, वैसे ही शत्रुओंको देखनेके लिये भी व्यस्त होते हैं। वह अनिष्टके लिये बन्धुको नहीं चाहते।

४ अकातर भावसे इन्द्रकी स्तुति की गयी है। आकाशके मस्तकसे मैं जल लाया हूँ। जैसे धुरीके द्वारा चक्र चलता है, वैसे ही इन्द्र अपने कर्मोंके द्वारा द्यावापृथिवीको रोके हुए हैं।

५ जिनका पान करनेसे मनमें तेज उत्पन्न होता है, जो शीघ्र प्रहार करने वाले हैं, जो वीरताके साथ शत्रुओंको कँपाते हैं और जो अस्त्र-शस्त्र-धारी और गति-शील हैं, वही सोम वनोंको बढ़ाते हैं; परन्तु बढ़े हुए वन भी इन्द्रकी बराबरी नहीं कर सकते और न इन्द्रके भावकी लघुता ही कर सकते हैं।

६ द्यावापृथिवी, मरुस्थल, आकाश और पर्वत जिन इन्द्रकी बराबरी नहीं कर सकते, उनके लिये सोमरस क्षरित होता है। जिस समय शत्रुओंके ऊपर इनका क्रोध होता है, उस समय यह दृढ़तासे मारते हैं—स्थिर पदार्थोंको तोड़ डालते हैं।

७ जैसे फरसा वनको काटता है, वैसे ही इन्द्रने वृत्रका बध किया, शत्रु-नगरीको ध्वस्त किया, वृष्टि-जलसे नदियोंको मार्ग दिया और कच्चे घड़ेके समान मेघको भङ्ग किया। इन्द्रने अपने सहायक मरुतोंके साथ जलको हमारे सम्मुख किया।

त्वं ह त्यदृणया इन्द्र धीरोऽसिर्न पर्व वृजिना शृणासि ।
प्र ये मित्रस्य वरुणस्य धाम युजं न जना मिनन्ति मित्रम् ॥८॥
प्र ये मित्रं प्रार्यमणं दुरेवाः प्र सङ्गिरः प्र वरुणं मिनन्ति ।
न्यमित्रेषु बधमिन्द्र तुम्रं वृषन् वृषाणमरुषं शिशीहि ॥६॥
इन्द्रो दिव इन्द्र ईशे पृथिव्या इन्द्रो अपामिन्द्र इत् पर्वतानाम् ।
इन्द्रो वृधामिन्द्र इन्मेधिराणामिन्द्रः क्षेमे योगे हव्य इन्द्रः ॥१०॥
प्राक्तुभ्य इन्द्रः प्रवृधो अहभ्यः प्रान्तरिक्षात् प्र समुद्रस्य धासेः ।
प्र वातस्य प्रथसः प्र ज्मो अन्तात् प्र सिन्धुभ्यो रिरिचे प्र क्षितिभ्यः ॥११॥
प्र शोशुचत्या उषसो न केतुरसिन्वा ते वर्ततामिन्द्र हेतिः ।
अश्मेव विध्य दिव आसृजानस्तपिष्ठेन हेषसा द्रोघमित्रान् ॥१२॥
अन्वह मासा अन्विद्वानान्यन्वोषधीरनु पर्वतासः ।
अन्विन्द्रं रोदसी वावशाने अन्वापो अजिहत जायमानम् ॥१३॥

८ इन्द्र, तुम धीर हो। तुम स्तोताओंको ऋण-मुक्त करते हो, जैसे खड्ग गाँठोंको काटता है, वैसे ही तुम स्तोताओंके उपद्रवको नष्ट करते हो। जो सब मूर्ख व्यक्ति वरुण और मित्रके बन्धुके समान धारक कर्मका विनाश करते हैं, उनका बध भी इन्द्र करते हैं।

६ जो दुष्ट व्यक्ति मित्र, अर्यमा, वरुण और मरुतोंसे द्वेष करते हैं, वर्षक इन्द्र, उनका बध करनेके लिये तुम गन्ता वा शब्दकर्त्ता, वर्षक और प्रदीप्त वज्रको तेज करो।

१० स्वर्ग, पृथिवी, जल, पर्वत आदि सबपर इन्द्रका आधिपत्य है। बली और बुद्धिमान् व्यक्तियोंपर इन्द्रका ही आधिपत्य है। नयी वस्तुएँ पानेके लिये और प्राप्त वस्तुओंकी रक्षाके लिये इन्द्रकी प्रार्थना करनी होती है।

११ रात्रि, दिन, आकाश, जलधारक सागर, विशाल वायु, पृथिवीकी सीमा, नदी, मनुष्य आदिसे इन्द्र बड़े हैं। इन्द्र सबका अतिक्रम किये हुए हैं।

१२ इन्द्र, तुम्हारा आयुध टूटने योग्य नहीं है। ज्योतिर्मयी उषाकी पताका—किरणके समान तुम्हारा आयुध शत्रुओंके ऊपर गिरे। जैसे आकाशसे वज्र गिरकर वृक्षोंको विध्वस्त करता है, वैसे ही तुम अनिष्टकारी शत्रुओंको, अतीव उत्तप्त और गर्जनकारी अस्त्रसे, छेदो।

१३ उत्पन्न होनेके साथ इन्द्रके पीछे-पीछे मास, वन, वनस्पति, पर्वत और परस्पर संयुक्त द्यावापृथिवी जाने लगे।

कर्हि स्वित् सा त इन्द्र चेत्यासदघस्य यद्भिनदो रक्ष एषत् ।
मित्रक्रुवो यच्छसने न गावः पृथिव्या आपृगमुया शयन्ते ॥१४॥
शत्रूयन्तो अभि ये नस्ततस्रे महि व्राधन्त ओगणास इन्द्र ।
अन्धेनामित्रास्तमसा सचन्तां सुज्योतिषो अक्तवस्तां अभि ष्युः ॥१५॥
पुरूणि हि त्वा सवना जनानां ब्रह्माणि मन्दन् गृणतामृषीणाम् ।
इमामाघोषन्नवसा सहूतिं तिरो विश्वाँ अर्चतो याह्यर्वाङ् ॥१६॥
एवा ते वयमिन्द्र भुञ्जतीनां विद्याम सुमतीनां नवानाम् ।
विद्याम वस्तोरवसा गृणन्तो विश्वामित्रा उत त इन्द्र नूनम् ॥१७॥
शुनं हुवेम मघवानमिन्द्रमस्मिन् भरे नृतमं वाजसातौ ।
शृण्वन्तमुग्रमूतये समत्सु घ्नन्तं वृत्राणि सञ्जितं धनानाम् ॥१८॥

---

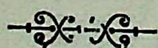
१४ इन्द्र, जिस अस्त्र (वा बाण) को फेंक कर तुमने पापी राक्षसको काटा था, वह फेंकने योग्य कहाँ है? जैसे गोहत्याके स्थानमें गायें काटी जाती हैं, वैसे ही तुम्हारे इस अस्त्रसे निहत होकर मित्रद्वेषी राक्षस लोग पृथिवीपर गिरकर (अनन्त निन्द्रामें) सो जाते हैं।

१५ जिन राक्षसोंने शत्रुता करते-करते और अत्यन्त पीड़ा पहुँचाते-पहुँचाते हमें घेर लिया, इन्द्र, वे गूढ़ अन्धकारमें गिरें, उँजियाली रात भी उनके लिये अन्धकारमयी रजनी हो जाय।

१६ यजमान तुम्हारे लिये अनेक यज्ञोंका अनुष्ठान करते हैं। स्तोता ऋषियोंके मन्त्र तुम्हें आह्लादित करते हैं। सब मिलकर तुम्हें जो बुलाते हैं, उसे कहो। पूजकोंके ऊपर प्रसन्न होकर उनके पास जाओ।

१७ इन्द्र, तुम्हारे स्तोत्र हमारी रक्षा करते हैं। हम नये-नये और उत्तम स्तोत्र प्राप्त करें। हम विश्वामित्रकी सन्तति हैं। रक्षणके लिये तुम्हारी स्तुति करते हैं। हम नाना पदार्थ प्राप्त करें।

१८ उन स्थूल-काय और धनी इन्द्रको हम बुलाते हैं। युद्ध–समयमें जिस समय अन्न आदि बाँटे जायँगे, उस समय वही प्रधानरूपसे अध्यक्षता करते हैं। युद्धमें वह अपने पक्षकी रक्षाके लिये उग्र मूर्त्ति धारण करके शत्रुओंको मारते हैं, वृत्रोंका बध करते हैं और समस्त धन जीतते हैं।



९० सूक्त

पुरुष देवता। नारायण ऋषि। अनुष्टुप् और त्रिष्टुप् छन्द।

सहस्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात् ।
स भूमिं विश्वतो वृत्वात्यतिष्ठद्दशाङ्गुलम् ॥१॥
पुरुष एवेदं सर्वं यद्भूतं यच्च भव्यम् ।
उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति ॥२॥
एतावानस्य महिमातो ज्यायांश्च पूरुषः ।
पादोऽस्य विश्वा भूतानि त्रिपादस्यामृतं दिवि ॥३॥
त्रिपादूर्ध्व उदैत् पुरुषः पादोस्येहाभवत् पुनः ।
ततो विष्वङ् व्यक्रामत् साशनानशने अभि ॥४॥
तस्माद्विराडजायत विराजो अधि पूरुषः ।
स जातो अत्यरिच्यत पश्चाद्भूमिमथो पुरः ॥५॥

---

१ विराट् पुरुष (ईश्वर) सहस्र (अनन्त) शिरों, अनन्त चक्षुओं और अनन्त चरणोंवाले हैं। वह भूमि (ब्रह्माण्ड-गोलक) को चारो ओरसे व्याप्त करके और दश-अङ्गुलि-परिमाण अधिक होकर अर्थात् ब्रह्माण्डसे बाहर भी व्याप्त होकर अवस्थित हैं।

२ जो कुछ हुआ है और जो कुछ होनेवाला है, सो सब ईश्वर (पुरुष) ही हैं। वह देवत्वके स्वामी हैं; क्योंकि प्राणियोंके भोग्यके निमित्त अपनी कारणावस्थाको छोड़कर जगदवस्थाको प्राप्त करते हैं।

३ यह सारा ब्रह्माण्ड उनकी महिमा है—वह तो स्वयं अपनी महिमासे भी बड़े हैं। इन पुरुषका एक पाद (अंश) ही यह ब्रह्माण्ड है—इनके अविनाशी तीन पाद तो दिव्य लोकमें हैं।

४ तीन पादोंवाले पुरुष ऊपर (दिव्य धाममें) उठे और उनका एक पाद यहाँ रहा। अनन्तर वह भोजन-सहित और भोजन-रहित (चेतन और अचेतन) वस्तुओंमें विविध-रूपोंसे व्याप्त हुए।

५ उन आदि पुरुषने विराट् (ब्रह्माण्ड-देह) उत्पन्न हुआ और ब्रह्माण्ड-देहका आश्रय करके जीव-रूपसे पुरुष उत्पन्न हुए। वह देव-मनुष्यादि-रूप हुए। उन्होंने भूमि बनायी और जीवोंके शरीर (पुरः) बनाये।

यत् पुरुषेण हविषा देवा यज्ञमतन्वत ।
वसन्तो अस्यासीदाज्यं ग्रीष्म इध्मः शरद्धविः ॥६॥
तं यज्ञं बर्हिषि प्रौक्षन् पुरुषं जातमग्रतः ।
तेन देवा अयजन्त साध्या ऋषयश्च ये ॥७॥
तस्माद्यज्ञात् सर्वहुतः सम्भृतं पृषदाज्यम् ।
पशून् तांश्चक्रे वायव्यानारण्यान् ग्राम्यांश्च ये ॥८॥
तस्माद्यज्ञात् सर्वहुत ऋचः सामानि जज्ञिरे ।
छन्दांसि जज्ञिरे तस्माद्यजुस्तस्मादजायत ॥९॥
तस्मादश्वा अजायन्त ये के चोभयादतः ।
गावो ह जज्ञिरे तस्मात्तस्माज्जाता अजावयः ॥१०॥
यत् पुरुषं व्यदधुः कतिधा व्यकल्पयन् ।
मुखं किमस्य कौ बाहू का ऊरू पादा उच्यते ॥११॥

---

६ जिस समय पुरुष-रूप मानस हविसे देवोंने मानसिक यज्ञ किया, उस समय यज्ञमें वसन्त-रूप घृत हुआ, ग्रीष्म-स्वरूप काष्ठ हुआ और शरद् हव्य-रूपसे कल्पित हुआ।

७ जो सबसे प्रथम उत्पन्न हुए, उन्हीं (यज्ञ-साधक पुरुष) को यज्ञीय-पशु-रूपसे मानस यज्ञमें दिया गया। उन पुरुषके द्वारा देवों, साध्यों (प्रजापति आदि) और ऋषियोंने यज्ञ किया।

८ जिस यज्ञमें सर्वात्मक पुरुषका हवन होता है, उस मानस यज्ञसे दधि-मिश्रित घृत आदि उत्पन्न हुए। उससे वायु देवतावाले वन्य (हरिण आदि) और ग्राम्य (कुक्कुर आदि) पशु उत्पन्न हुए।

९ सर्वात्मक पुरुषके होमसे युक्त उस यज्ञसे ऋक् और साम उत्पन्न हुए। उससे गायत्री आदि छन्द उत्पन्न हुए और उसीसे यजुःकी भी उत्पत्ति हुई।

१० उस यज्ञसे अश्व और अन्य नीचे-ऊपर दाँतोंवाले पशु उत्पन्न हुए। गौ, अज और मेष भी उत्पन्न हुए।

११ जो विराट् पुरुष उत्पन्न किये गये, वह कितने प्रकारोंसे उत्पन्न किये गये? इनके मुख, दो हाथ, दो उरु और दो चरण कौन हुए?

ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद्बाहू राजन्यः कृतः ।
ऊरू तदस्य यद्वैश्यः पद्भ्यां शूद्रो अजायत ॥१२॥
चन्द्रमा मनसो जातश्चक्षोः सूर्यो अजायत ।
मुखादिन्द्रश्चाग्निश्च प्राणाद्वायुरजायत ॥१३॥
नाभ्या आसीदन्तरिक्षं शीर्ष्णो द्यौः समवर्तत ।
पद्भ्यां भूमिर्दिशः श्रोत्रात्तथा लोकाँ अकल्पयन् ॥१४॥
सप्तास्यासन् परिधयस्त्रिः सप्त समिधः कृताः ।
देवा यद्यज्ञं तन्वाना अबध्नन् पुरुषं पशुम् ॥१५॥
यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन् ।
ते ह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः ॥१६॥

---

१२ इनका मुख ब्राह्मण हुआ, दोनों बाहुओंसे क्षत्रिय बनाया गया, दोनों ऊरुओं (जघनों)से वैश्य हुआ और पैरोंसे शूद्र उत्पन्न हुआ ।

१३ पुरुषके मनसे चन्द्रमा, नेत्रसे सूर्य, मुखसे इन्द्र और अग्नि तथा प्राणसे वायु उत्पन्न हुए ।

१४ पुरुषकी नाभिसे अन्तरिक्ष, शिरसे द्यौ (स्वर्ग), चरणोंसे भूमि, श्रोत्रसे दिशाएं आदि भुवन बनाये गये ।

१५ प्रजापतिके प्राणादि-रूप देवोंने मानसिक यज्ञके सम्पादन-कालमें जिस समय पुरुष-रूप पशुको बाँधा, उस समय सात परिधियाँ (ऐष्टिक और आहवनीयकी तीन और उत्तर वेदीकी तीन वेदियाँ तथा एक आदित्य-वेदी आदि सात परिधियाँ वा सात छन्द) बनायी गयीं और इक्कीस (बारह मास, पाँच ऋतुएं, तीन लोक और आदित्य) यज्ञीय काष्ठ वा समिधाएं बनायी गयीं ।

१६ देवोंने यज्ञ (मानसिक संकल्प)के द्वारा जो यज्ञ किया वा पुरुषका पूजन किया, उससे जगत्रूप विकारोंके धारक और मुख्य धर्म हुए । जिस स्वर्गमें प्राचीन साध्य (देवजाति-विशेष) और देवता हैं, उसे उपासक महात्मा लोग पाते हैं ।

१५

८ अनुवाक । ६१ सूक्त

अग्नि देवता। वीतहव्यके पुत्र अरुण ऋषि। जगती और त्रिष्टुप् छन्द ।

सं जागृवद्भिर्जरमाण इध्यते दमे दमूना इषयन्निळस्पदे ।
विश्वस्य होता हविषो वरेण्यो विभुर्विभावा सुषखा सखीयते ॥१॥
स दर्शतश्रीरतिथिर्गृहेगृहे वनेवने शिश्रिये तक्ववीरिव ।
जनंजनं जन्यो नाति मन्यते विश आ क्षेति विश्यो विशंविशम् ॥२॥
सुदक्षो दक्षैः क्रतुनासि सुक्रतुरग्ने कविः काव्येनासि विश्ववित् ।
वसुर्वसूनां क्षयसि त्वमेक इद्द्यावा च यानि पृथिवी च पुष्यतः ॥३॥
प्रजानन्नग्ने तव योनिमृत्वियमिळायास्पदे घृतवन्तमासदः ।
आ ते चिकित्र उषसामिवेतयोऽरेपसः सूर्यस्येव रश्मयः ॥४॥
तव श्रियो वर्ष्यस्येव विद्युतश्चित्राश्चिकित्र उषसां न केतवः ।
यदोषधीरभिसृष्टो वनानि च परि स्वयं चिनुषे अन्नमास्ये ॥५॥

---

१ अग्नि, जागरणशील स्तोता लोग तुम्हारी स्तुति करते हैं। दानमना अग्नि उत्तरवेदी-पर बैठकर अन्नलाभके लिये सारे हविके होता होते हैं। वह वरणीय, व्यापक, दीप्तिमान् और शोभन सखा हैं। वह सख्यकी अभिलाषा करते हुए भली भाँति प्रज्वलित होते हैं।

२ अग्नि सुशोभन और अतिथि हैं। वह यजमानोंके गृहों और वनोंमें रहते हैं। मनुष्य-हितैषी अग्नि किसीको नहीं छोड़ते। वह प्रजा-हितैषी हैं। वह मनुष्यों—सारी प्रजाके गृहमें रहते हैं।

३ अग्नि, तुम बलोंसे बली हो। तुम कर्मसे शोभन-कर्मा और क्रान्त कर्मसे मेधावी हो। तुम सर्वज्ञ और धनोंके स्थापक हो। तुम अकेले रहते हो। द्यावापृथिवी जिन धनोंका संवर्द्धन करते हैं, उनके भी तुम स्वामी हो।

४ यज्ञवेदीके ऊपर यथासमय घृत-युक्त निवासस्थान बनाया जाता है। अग्नि, तुम उसे पहचान कर बैठो। तुम्हारी ज्वालाएँ प्रभातकी आभा अथवा सूर्यकी किरणोंके समान विमल देखी जाती हैं।

५ तुम्हारी विचित्र शिखाएँ जल-वर्षक मेघसे निकलीं। बिजली अथवा प्रभातकी आगमन-सूचिका आभाओंके समान देखी जाती हैं। उस समय तुम मानो बन्धनसे मुक्त होकर वन और काष्ठको खोजते हो। यह सब तुम्हारे मुखका अन्न है।

तमोषधीर्दधिरे गर्भमृत्वियं तमापो अग्निं जनयन्त मातरः ।
तमित् समानं वनिनश्च वीरुधोऽन्तर्वतीश्च सुवते च विश्वहा ॥६॥
वातोपधूत इषितो वशाँ अनु तृषु यदन्ना वेविषद्वितिष्ठसे ।
आ ते यतन्ते रथ्यो यथा पृथक् शर्धांस्यग्ने अजराणि धक्षतः ॥७॥
मेधाकारं विदथस्य प्रसाधनमग्निं होतारं परिभूतमं मतिम् ।
तमिदर्भे हविष्या समानमित्तमिन्महे वृणते नान्यं त्वत् ॥८॥
त्वामिदत्र वृणते त्वायवो होतारमग्ने विदथेषु वेधसः ।
यद्देवयन्तो दधति प्रयांसि ते हविष्मन्तो मनवो वृक्तबर्हिषः ॥१०॥
तवाग्ने होत्रं तव पोत्रमृत्वियं तव नेष्ट्रं त्वमग्निदृतायतः ।
तव प्रशास्त्रं त्वमध्वरीयसि ब्रह्मा चासि गृहपतिश्च नो दमे ॥११॥

---

६ ओषधियाँ अग्निको यथासमय गर्भ-स्वरूप धारण करती हैं और माताके समान जल उन्हें जन्म देता है। वन-स्थित लताएँ गर्भवती होकर बराबर उन्हें एक भावसे जनमाती हैं।

७ अग्नि, तुम वायुके द्वारा कम्पित होकर संचालित होते हो एवम् सुन्दर वनस्पतियोंमें पैठकर रहते हो। अग्नि, जिस समय तुम जलानेको तैयार होते हो, उस समय रथारूढ़ योद्धाओंके समान तुम्हारी प्रबल और अक्षय शिखाएँ, पृथक्-पृथक् होकर, बलका प्रकाश करती हैं।

८ अग्नि लोगोंको मेधावी बनानेवाले, यज्ञके सिद्धिदाता, होम-निष्पादक, अतीव विराट् और ज्ञानी हैं। हवि कम वा अधिक मात्रामें दिया जाय, अग्निको ही सदा उसे स्वीकार करना पड़ता है— अन्य किसीको भी नहीं।

९ अग्नि, यजमान लोग, यज्ञके, समय, तुम्हें पानेकी अभिलाषा करके होताके रूपसे तुम्हें ही वरण करते हैं। उस समय देवभक्त मनुष्य लोग कुशाका छेदन करके और हवि लाकर तुम्हारे लिये हवि देते हैं।

१० अग्नि, यथासमय तुम्हें ही होता और पोता का कार्य करना पड़ता है। यज्ञ-कर्त्ताके लिये तुम्हीं नेष्टा और अग्नि हो। तुम प्रशास्ता, अध्वर्यु और ब्रह्माका कार्य करते हो। तुम हमारे गृहके गृहपति हो।

११ अग्नि, जो मनुष्य तुम्हें अमर जानकर समिधा और हवि देता है, उसके तुम होता होते हो, उसके लिये तुम देवोंके पास दूत-कर्म करते हो, देवोंको निमन्त्रित करते हो, यज्ञानुष्ठान करते हो और अध्वर्युका कार्य करते हो।

यस्तुभ्यमग्ने अमृताय मर्त्यः समिधा दाशदुत वा हविष्कृति ।
तस्य होता भवसि यासि दूत्यमुपब्रूषे यजस्यध्वरीयसि ॥१२॥
इमा अस्मै मतयो वाचो अस्मदाँ ऋचो गिरः सुष्टुतयः समग्मत ।
वसूयवो वसवे जातवेदसे वृद्धासु चिद्वर्धनो यासु चाकनत् ॥१३॥
इमां प्रत्नाय सुष्टुतिं नवीयसीं वोचेयमस्मा उशते शृणोतु नः ।
भूया अन्तरा हृद्यस्य निस्पृशे जायेव पत्य उशती सुवासाः ॥१३॥
यस्मिन्नश्वास ऋषभास उक्षणो वशा मेषा अवसृष्टास आहुताः ।
कीलालपे सोमपृष्ठाय वेधसे हृदा मतिं जनये चारुमग्नये ॥१४॥
अहाव्यग्ने हविरास्ये ते स्रुचीव घृतं चम्वीव सोमः ।
वाजसनिं रयिमस्मे सुवीरं प्रशस्तं धेहि यशसं बृहन्तम् ॥१५॥

---

१२ अग्निके लिये यह सारा ध्यान, वेद-वाक्य और स्तोत्र किये जाते हैं। ज्ञानी अग्नि वासक हैं। अर्थाभिलाषसे ये सारे स्तोत्र उनमें जाकर मिलते हैं। श्री-वृद्धि करनेवाले अग्नि इन स्तोत्रोंकी वृद्धि होनेपर सन्तुष्ट होते हैं।

१३ स्तोत्राभिलाषी उन प्राचीन अग्निके लिये मैं अत्यन्त नूतन और सुन्दर स्तोत्र कहता हूं। वह सुनें। जैसे प्रणय-परवशा स्त्री बढ़िया कपड़े पहनकर पतिके हृदय-देशमें अपनी देहको मिलाती है, वैसे ही मैं अग्नि-हृदयके मध्य स्थानको छूता हूं।

१४ जिन अग्निमें घोड़ों, बली वृषों और पौरुष-हीन मेषोंकी, अश्वमेध—यज्ञमें, आहुति दी जाती है, जो जल पीते हैं, जिनके ऊपर सोम रहता है और जो यज्ञानुष्ठाता हैं, उन अग्निके लिये हृदयसे मैं कल्याण-करी स्तुति बनाता हूं।

१५ जैसे स्रुक्में घी रखा जाता है और जैसे चमसमें सोमरस रखा जाता है, वैसे ही अग्नि, तुम्हारे मुँहमें हवि, पुरोडाश आदिका हवन किया जाता है। तुम मुझे अन्न, अर्थ, उत्कृष्ट पुत्र, पौत्र आदि और विपुल यश दो

६२ सूक्त

नाना देवता। मनु-पुत्र शार्यात ऋषि। जगती छन्द।

यज्ञस्य वो रथ्यं विश्पतिं विशां होतारमक्तोरतिथिं विभावसुम्।
शोचञ्छुष्कासु हरिणीषु जर्भुरद्वृषा केतुर्यजतो द्यामशायत ॥१॥
इममञ्जस्पामुभये अकृण्वत धर्माणमग्निं विदथस्य साधनम्।
अक्तुं न यह्वमुषसः पुरोहितं तनूनपातमरुषस्य निंसते ॥२॥
बलस्य नीथा वि पणेश्च मन्महे वया अस्य प्रहुता आसुरत्तवे।
यदा घोरासो अमृतत्वमाशतादिज्जनस्य दैव्यस्य चर्किरन् ॥३॥
ऋतस्य हि प्रसितिर्द्यौरुरु व्यचो नमो मह्यरमतिः पनीयसी।
इन्द्रो मित्रो वरुणः सञ्चिकित्रिरेऽथो भगः सविता पूतदक्षसः ॥४॥
प्र रुद्रेण ययिना यन्ति सिन्धवस्तिरो महीमरमतिं दधन्विरे।
येभिः परिज्मा परियन्नुरुज्रयो वि रोरुवत् जठरे विश्वमुक्षते ॥५॥

१ देवो, यज्ञ-नेता, मनुष्योंके स्वामी, होता, रात्रिके अतिथि और विविध-दीप्ति-धनवाले अग्निकी सेवा करो। शुष्क काष्ठोंको जलानेवाले और हरे काठोंमें टेढ़े जानेवाले, काम वर्षक, यज्ञकी पताका और यजनीय अग्नि आकाशमें सोते हैं।

२ रक्षक और धर्म धारक अग्निको देवों और मनुष्योंने यज्ञ-साधक बनाया। वे महान् पुरोहित और शोभन वायुके पुत्र हैं। उषाएँ उन्हें, सूर्यके समान, चूमती हैं।

३ स्तुत्य अग्नि जो मार्ग दिखा देते हैं, वही प्रकृत है। हम जिसका हवन करते हैं, उसका वह भोजन करें। जिस समय उनकी प्रबल शिखाएँ दीप्तिशील हुईं, उस समय देवोंके लिये फेंकी जाने लगीं।

४ विस्तृत द्यौ, विस्तीर्ण वचन, व्याप्त अन्तरिक्ष, स्तुत्य और असीम पृथिवी यज्ञीय अग्निको नमस्कार करते हैं। इन्द्र, मित्र, वरुण, भग, सविता आदि पवित्र बलवाले देवता आविर्भूत होते हैं।

५ वेगशाली मरुतोंकी सहायता पाकर नदियाँ बहती हैं और असीम भूमिको ढकती हैं। सर्वत्र विचरण करनेवाले इन्द्र सर्वत्र जाकर, मरुतोंकी सहायतासे, आकाशमें गरजते हैं और महावेगसे संसारमें जल बरसाते हैं।

क्राणा रुद्रा मरुतो विश्वकृष्टयो दिवः श्येनासो असुरस्य नीळयः ।
तेभिश्चष्टे वरुणो मित्रो अर्यमेन्द्रो देवेभिरर्वशेभिरर्वशः ॥६॥
इन्द्रे भुजं शशमानास आशत सूरो दृशीके वृषणश्च पौंस्ये ।
प्र ये न्वस्यार्हणा ततक्षिरे युजं वज्रं नृषदनेषु कारवः ॥७॥
सूरश्चिदा हरितो अस्य रीरमदिन्द्रादा कश्चिद्भयते तवीयसः ।
भीमस्य वृष्णो जठरादभिश्वसो दिवेदिवे सहुरि स्तन्नबाधितः ॥८॥
स्तोमं वो अद्य रुद्राय शिक्वसे क्षयद्वीराय नमसा दिदिष्टन ।
येभिः शिवः स्ववाँ एवयावभिर्दिवः सिषक्ति स्वयशा निकामभिः ॥९॥
ते हि प्रजाया अभरन्त वि श्रवो बृहस्पतिर्वृषभः सोमजामयः ।
यज्ञैरथर्वा प्रथमो वि धारयद्देवा दक्षैर्भृगवः सं चिकित्रिरे ॥१०॥

---

६ जिस समय मरुत् लोग कार्यारम्भ करते हैं, उस समय संसारको खींच लेते हैं। वे आकाशके श्येन पक्षी और मेघके आश्रय हैं। वरुण, मित्र, अर्यमा और अश्वारोही इन्द्र, अश्वारूढ़ मरुतोंके साथ, ये सारी बातें देखते हैं।

७ स्तोता लोग इन्द्रसे रक्षण, सूर्यसे दृष्टि-शक्ति और वर्षक इन्द्रसे पौरुष पाते हैं। जो स्तोता उत्कृष्ट रूपसे इन्द्रकी पूजा प्रस्तुत करते हैं, वे यज्ञ-कालमें, इन्द्रके वज्रको सहायक पाते हैं।

८ इन्द्रके डरसे सूर्य भी अपने अश्वोंको चलाते और मार्गमें जानेके समय सबको प्रसन्न करते हैं। उन इन्द्रसे कौन नहीं डरता? वह भयानक और वारि-वर्षक हैं। वह आकाशमें शब्द करते हैं। शत्रुओंको हरानेवाली वज्रध्वनि उन्हींके डरसे प्रतिदिन प्रकट होती रहती है।

९ आज उन्हीं कर्म-कुशल और रुद्रको नमस्कार तथा अनेक स्तोत्र अर्पित करो। वह शत्रुओंका विनाश करते हैं वह अश्वारूढ़ और उत्साही मरुतोंकी सहायता पाकर और आकाशसे जल-सिञ्चन करके मङ्गलजनक होते हैं और अपनी कीर्तिका विस्तार करते हैं।

१० बृहस्पति और सोमाभिलाषी अन्य देवताओंने प्रजावृन्दके लिये अन्नका सञ्चय किया है। अथर्वा ऋषिने सबसे प्रथम यज्ञके द्वारा देवोंको सन्तुष्ट किया। देवता लोग और भृगुवंशधर लोग बल प्रकट करके उस यज्ञमें गये और यज्ञको जाना।

ते हि द्यावापृथिवी भूरिरेतसा नराशंसश्चतुरङ्गो यमोऽदितिः ।
देवस्त्वष्टा द्रविणोदा ऋभुक्षणः प्र रोदसी मरुतो विष्णुरर्हिरे ॥११॥
उत स्य न उशिजामुर्विया कविरहिः शृणोतु बुध्न्यो हवीमनि ।
सूर्यामासा विचरन्ता दिविक्षिता धिया शमीनहुषी अस्य बोधतम् ॥१२॥
प्र नः पूषा चरथं विश्वदेव्योऽपां नपादवतु वायुरिष्टये ।
आत्मानं वस्यो अभि वातमर्चत तदश्विना सुहवा यामनि श्रुतम् ॥१३॥
विशामासामभयानामधिक्षितं गीर्भिरु स्वयशसं गृणीमसि ।
ग्नाभिर्विश्वाभिरदितिमनर्वणमक्तोर्युवानं नृमणा अधा पतिम् ॥१४॥
रेभदत्र जनुषा पूर्वो अङ्गिरा ग्रावाण ऊर्ध्वा अभि चक्षुरध्वरम् ।
येभिर्विहाया अभवद्विचक्षणः पाथः सुमेकं स्वधितिर्वनन्वति ॥१५॥

---

११ नराशंस नामक यज्ञमें चार अग्नि स्थापित किये गये। बहु-वृष्टि-वर्षक द्यावापृथिवी, यम, अदिति, धनद त्वष्टा, ऋभु लोगों, रुद्रकी स्त्री, मरुतों और विष्णुने यज्ञमें स्तोत्र प्राप्त किया था।

१२ अभिलाषी होकर हमलोग जो विशाल-विशाल स्तोत्र करते हैं, यज्ञके समय आकाशवासी अहिर्बुध्न्य वह सब सुनें। आकाशमें घूमनेवाले सूर्य और इन्द्र, तुम लोग आकाशमें रहकर अन्तः-करणसे यही स्तोत्र सुनो।

१३ समस्त देवोंके हितैषी और जलके वंशज पूषा देव हमारे पशु इत्यादिकी रक्षा करें। यज्ञके लिये वायु भी रक्षा करें। धनके लिये आत्म-स्वरूप वायुकी स्तुति करो। अश्विद्वय, तुम्हें बुलानेसे कल्याण होता है। मार्गमें जानेके लिये तुम वह स्तोत्र सुनो।

१४ सारी प्रजाको जो अभय देनेके स्वामी हैं, जो अपनी कीर्त्तिका स्वयं उपार्जन करते हैं, उनकी हम स्तुति करते हैं। देवपत्नियोंके साथ अविचल अदिति और रात्रि-पति चन्द्रमा-की हम स्तुति करते हैं। वे मनुष्योंपर अनुग्रह करते हैं।

१५ ज्येष्ठ अङ्गिरा ऋषि इस यज्ञमें स्तुति करते हैं। प्रस्तर ऊपर उठकर यज्ञीय] सोमको प्रस्तुत करते हैं। सोमको पीकर बुद्धिशाली इन्द्र मोटे हुए—उनका अस्त्र उत्तम वारि-वर्षण करने लगा।

९३ सूक्त

विश्वदेव देवता। पृथु-पुत्र ताम्र ऋषि। बृहती, अनुष्टुप् आदि छन्द ।

महि द्यावापृथिवी भूतमुर्वी नारी यह्वी न रोदसी सदं नः ।

तेभिर्नः पातं सह्यस एभिर्नः पातं शूषणि ॥१॥

यज्ञेयज्ञे स मर्त्यो देवान्त्सपर्यति ।

यः सुम्नैर्दीर्घश्रुत्तम आविवासात्येनान् ॥२॥

विश्वेषामिरज्यवो देवानां वार्महः ।

विश्वे हि विश्वमहसो विश्वे यज्ञेषु यज्ञियाः ॥३॥

ते घा राजानो अमृतस्य मन्द्रा अर्यमा मित्रो वरुणः परिज्मा ।

कद्रुद्रो नृणां स्तुतो मरुतः पूषणो भगः ॥४॥

उत नो नक्तमपां वृषणवसू सूर्यामासा सदनाय सधन्या ।

सचा यत् साद्येषामहिर्बुध्नेषु बुध्न्यः ॥५॥

१ द्यावापृथिवी, तुमलोग अतीव विस्तृत होओ। विशाल-मूर्त्ति होकर तुमलोग, स्त्रीके समान, हमारे गृहमें आओ। इन रक्षणोंसे हमें शत्रुसे बचाओ। इन कार्योंके द्वारा हमें शत्रुसे भली भाँति बचाओ।

२ जो मनुष्य सभी यज्ञोंमें देवोंकी सेवा करता है और जो अनेक शास्त्रोंका श्रोता सुखकर हविके द्वारा देवोंकी सेवा करता है, (वही प्रकृत देव-सेवक है।)

३ देवता लोग सबके प्रभु हैं। उनका दान महान् है। वे सब प्रकारके बलोंसे बली हैं। वे सब यज्ञोंके समय यज्ञ-भाग पाते हैं।

४ जिन रुद्र-पुत्रोंकी स्तुति करनेपर मनुष्योंको सुख मिलता है वे, अर्यमा. मित्र, सर्वग वरुण और भग अमृतके राजा, स्तुत्य और पुष्टि-कर्त्ता हैं।

५ जिस समय अहिर्बुध्न्य जलके साथ एकत्र होकर बैठते हैं, उस समय सूर्य और चन्द्रमा एकत्र बैठकर दिन-रात जल-स्वरूप धनका वर्षण करते हैं।

उत नो देवावश्विना शुभस्पती धामभिर्मित्रावरुणा उरुष्यताम् ।
महः स राय एषतेऽति धन्वेव दुरिता ॥६॥
उत नो रुद्रा चिन्मृलतामश्विना विश्वे देवासो रथस्पतिर्भगः ।
ऋभुर्वाज ऋभुक्षणः परिज्मा विश्ववेदसः ॥७॥
ऋभुर्ऋभुक्षा ऋभुर्विधतो मद आ ते हरी जूजुवानस्य वाजिना ।
दुष्टरं यस्य साम चिदृधग्यज्ञो न मानुषः ॥८॥
कृधी नो अह्रयो देव सवितः स च स्तुषे मघोनाम् ।
सहो न इन्द्रो वह्निभिर्न्येषां चर्षणीनां चक्रं रश्मिं न योयुवे ॥९॥
ऐषु द्यावापृथिवी धातं महदस्मे वीरेषु विश्वचर्षणि श्रवः ।
पृक्षं वाजस्य सातये पृक्षं रायोत तुर्वणे ॥१०॥

---

६ कल्याणके अधिपति अश्विद्वय, मित्र और वरुण अपने शरीरों वा तेजसे हमारी रक्षा करें। इनके द्वारा रक्षित यजमान बहुत धन पाता है और मरुभूमिके समान दुर्गतिसे पार पाता है।

७ हम स्तुति करते हैं। रुद्रपुत्र वायु, अश्विद्वय, समस्त देवता, रथारूढ़ पूषा, ऋभु, अन्नवान् भग, सर्वत्रगामी इन्द्र, सर्वज्ञाता ऋभुक्षण आदि हमें सुख दें।

८ महान् इन्द्र यज्ञके द्वारा प्रभायुक्त होते हैं। इन्द्र, जिस समय तुम वेगशाली रथकी योजना करते हो, उस समय यज्ञकर्त्ता भी आनन्द पाते हैं। इन्द्रके लिये जो सोमका पान होता है, वह असाधारण है। उनके लिये जो यज्ञानुष्ठान होता है, वह मनुष्यके लिये साध्य नहीं है। वह दिव्य है।

९ प्रेरक देव, हमें अलज्जित करो। तुम धनी यजमानोंके ऋत्विकोंके द्वारा स्तुत होते हो। इन्द्र हमारे बल-रूप हैं। उन्होंने इन मनुष्योंके यज्ञमें आनेके लिये अपने उज्ज्वल रथ-चक्रमें मानो वायुको जोता—महावेगसे पधारे।

१० द्यावापृथिवी, तुम लोग हमारे पुत्रादिको प्रभूत अन्न दो। वह अन्न लोगोंके लिये यथेष्ट हो, बलकर हो, धन-लाभ और विपत्तिसे परित्राण पानेके लिये उपयोगी हो।

एतं शंसमिन्द्रास्मयुष्ट्वं कूचित् सन्तं सहसावन्नभिष्टये
सदा पाह्यभिष्टये ।
मेदतां वेदता वसो ॥११॥
एतं मे स्तोमं तना न सूर्ये द्युतद्यामानं वावृधन्त नृणाम् ।
सम्वननं नाश्व्यं तष्टेवानपच्युतम् ॥१२॥
वावर्त येषां राया युक्तैषां हिरण्ययी ।
नेमधिता न पौंस्या वृथेव विष्टान्ता ॥१३॥
प्र तद्दुःशीमे पृथवाने वेने प्र रामे वोचमसुरे मघवत्सु ।
ये युक्त्वाय पञ्च शतास्मयु पथा विश्राव्येषाम् ॥१४॥
अधीन्वत्र सप्ततिं च सप्त च ।
सद्यो दिदिष्ट तान्वः सद्यो दिदिष्ट पार्थ्यः सद्यो दिदिष्ट मायवः ॥१५॥

---

११ इन्द्र, जिस समय तुम हमारे पास आनेकी इच्छा करते हो, उस समय स्तोता जहाँ कहीं भी रहे; यज्ञ करते समय उसकी रक्षा करो। हे धनद, तुम्हारी जो स्तुति करता है, उसको जानो।

१२ मेरा यह विस्तृत स्तोत्र, दीप्तिके साथ, सूर्यके लिये जाता है और मनुष्योंकी श्री बढ़ाता है। जैसे बढ़ई अश्वके खींचने योग्य सुदृढ़ रथ बनाता है, वैसे ही मैंने इसे बनाया है।

१३ जिनके पास हम धनकी इच्छा करते हैं, उनके लिये हम अत्यन्त उत्तम स्तोत्रका बार-बार पारायण करते हैं। जैसे युद्धके सैनिक बार-बार अग्रसर होते हैं अथवा जैसे घटी-चक्र श्रेणीबद्ध होकर आगे-पीछे चलता है, हमारे स्तोत्र भी वैसे ही हैं।

१४ जैसे सब देवता पाँच सौ रथोंमें घोड़े जोतकर, यज्ञमें जानेके लिये, मार्गमें जाते हैं, वैसे ही उनके प्रशंसा-युक्त स्तोत्रका पाठ मैंने दुःशीम, पृथवान्, वेन और बली राम आदि धन-पति राजाओंके पास किया है।

१५ इन राजाओंसे ताम्ब, पार्थ्य और मायव आदि ऋषियोंने शीघ्र ही सतहत्तर गायें माँगीं।



९४ सूक्त

सोमाभिषव-सम्बन्धी प्रस्तर देवता। अर्बुद ऋषि। जगती और त्रिष्टुप् छन्द।

प्रैते वदन्तु प्र वयं वदाम ग्रावभ्यो वाचं वदता वदद्भ्यः।
यदद्रयः पर्वताः साकमाशवः श्लोकं घोषं भरथेन्द्राय सोमिनः ॥१॥

एते वदन्ति शतवत् सहस्रवदभि क्रन्दन्ति हरितेभिरासभिः।
विष्ट्वी ग्रावाणः सुकृतः सुकृत्यया होतुश्चित् पूर्वे हविरद्यमाशत ॥२॥

एते वदन्त्यविदन्नना मधुन्यूङ्खयन्ते अधि पक्व आमिषि।
वृक्षस्य शाखामरुणस्य वप्सतस्ते सूभर्वा वृषभाः प्रेमराविषुः ॥३॥

बृहद्वदन्ति मदिरेण मन्दिनेन्द्रं कोशन्तेऽविदन्नना मधु।
संरभ्या धीराः स्वसृभिरनर्तिषुराघोषयन्तः पृथिवीमुपब्दिभिः ॥४॥

---

१ प्रस्तर अभिषव—शब्द करें। हम यजमान उन प्रस्तरोंकी स्तुति करते हैं। ऋत्विको, स्तोत्र-पाठ करो। आदरणीय और दृढ़ प्रस्तर, इन्द्रके लिये सोमाभिषवका शब्द करो। सोमवालो, सोमसे तृप्त होओ।

२ ये पत्थर सौ वा सहस्र व्यक्तियोंके समान शब्द करते हैं। ये सोम-संसर्गसे हरित-वर्ण मुखोंसे देवोंको बुलाते हैं। शोभनकर्मा ये पत्थर यज्ञको पाकर देवाह्वान करनेवाले अग्निके पूर्व ही भक्षणीय हविको पाते हैं।

३ नये वा लाल रंगकी शाखाको खाते हुए शोभन भोजनवाले वृषभोंके समान ये प्रस्तर शब्द करते हैं। जैसे मांस भक्षण करनेवाले मांस-पाक होनेपर आनन्द-ध्वनि करते हैं, वैसे ही ये भी शब्द करते हैं।

४ मदकर और चुलाये जाते हुए सोमसे ये प्रस्तर इन्द्रको बुलाते हुए विशाल शब्द करते हैं। इन्होंने मुखसे मदकर सोमको प्राप्त किया। ये अभिषव-कार्यमें लगकर और धीर होकर अपने शब्दोंसे पृथिवीको भरते हुए भगिनी-स्वरूप अँगुलियोंके साथ नाचते हैं।

सुपर्णा वाचमक्रतोप द्यव्याखरे कृष्णा इषिरा अनर्तिषुः ।
न्यङ्नियन्त्युपरस्य निष्कृतं पुरू रेतो दधिरे सूर्यश्वितः ॥५॥
उग्राइव प्रवहन्तः समायमुः साकं युक्ता वृषणो बिभ्रतो धुरः ।
यच्छ्वसन्तो जग्रसाना अराविषुः शृण्व एषां प्रोथथो अर्वतामिव ॥६॥
दशावनिभ्यो दशकक्ष्येभ्यो दशयोक्त्रेभ्यो दशयोजनेभ्यः ।
दशाभीशुभ्यो अर्चताजरेभ्यो दश धुरो दस युक्ता वहद्भ्यः ॥७॥
ते अद्रयो दशयन्त्रास आशवस्तेषामाधानं पर्येति हर्यतम् ।
त ऊ सुतस्य सोम्यस्यान्धसोंशोः पीयूषं प्रथमस्य भेजिरे ॥८॥
ते सोमादो हरी इन्द्रस्य निसतेंशुं दुहन्तो अध्यासते गवि ।
तेभिर्दुग्धं पपिवान्त्सोम्यं मध्विन्द्रो वर्धते प्रथते वृषायते ॥९॥

५ प्रस्तरोंका शब्द सुनकर विदित होता है कि, आकाशमें पक्षी शब्द करते हैं। ये मृगोंके स्थानमें गमनशील कृष्ण-सार मृगोंके समान गति-शील होकर नाच रहे हैं। निष्पीड़ित सोमरसको ये प्रस्तर नीचे गिराते हैं—मानो सूर्यके समान श्वेतवर्ण जल धारण करते हैं।

६ जैसे बली अश्व परस्पर मिलकर और रथकी धुराको धारण करके रथ ले जाते हैं और शरीरको बढ़ाते हैं, वैसे ही ये प्रस्तर भी आयत होकर सोमरसको बरसाते हैं। ये सोमका ग्रास करते-करते, श्वासके साथ, शब्द करते हैं। घोड़ोंके समान इनके मुखसे निकले शब्द को मैं सुनता हूं।

७ इन अविनाशी प्रस्तरोंका गुण-कीर्त्तन करो। सोमके अभिषवके समय, जब कि, दस अँगुलियाँ इन्हें छूती हैं, उस समय इन दस अँगुलियोंको प्रस्तर-स्वरूप घोड़ोंकी दस वरत्रा (कसनेकी रस्सा=तंग) अथवा दस योक्त्र (घोड़ेके सामान), दस रथ जोतनेकी रस्सियाँ अथवा दस लगाम जाना जाता है। वा दस रथ-धुराए इकट्ठा होकर ढोती हैं।

८ ये प्रस्तर दस अँगुलियोंको बन्धनकी रस्सीके समान पाकर शीघ्र-शीघ्र कार्य करते हैं। इनके द्वारा उत्पादित सोमरस हरित-वर्ण होकर आ रहा है। सोमके टुकड़े कूटे जाकर और अन्नरूप धारण करके अमृतरस निकालते हैं। सोमका प्रथम खण्ड ये ही पाते हैं।

९ वे पत्थर सोमका भक्षण करके इन्द्रके दो घोड़ोंको चूमते हैं—अर्थात् इन्द्रके रथके पास जाते हैं। डाँठ अंशुसे रस निकलकर गोचर्मके ऊपर जाता है। ये पत्थर सोमसे जो मधुर रस निकालते हैं, उसे पीकर इन्द्र फूलते और बढ़ते हैं—साँड़के समान बल प्रकट करते हैं।

वृषा वो अंशुर्न किला रिषाथनेळावन्तः सदमित् स्थनाशिताः ।
रैवत्येव महसा चारवः स्थन यस्य ग्रावाणो अजुषध्वमध्वरम् ॥१०॥
तृदिला अतृदिलासो अद्रयेऽश्रमणा अशृथिता अमृत्यवः ।
अनातुरा अजराः स्थामविष्णवः सुपीवसो अतृषिता अतृष्णजः ॥११॥
ध्रुवा एव वः पितरो युगेयुगे क्षेमकामासः सदसो न युञ्जते ।
अजुर्यासो हरिषाचो हरिद्रव आ द्यां रवेण पृथिवीमशुश्रवुः ॥१२॥
तदिद्वदन्त्यद्रयो विमोचने यामन्नञ्जस्पाइव घेदुपब्दिभिः ।
वपन्तो बीजमिव धान्याकृतः पृञ्चन्ति सोमं न मिनन्ति बप्सतः ॥१३॥
सुते अध्वरे अधि वाचमक्रता क्रीळयो न मातरं तुदन्तः ।
वि षू मुञ्चा सुषुवुषो मनीषां विवर्तन्तामद्रयश्चायमानाः ॥१४॥

१० प्रस्तरो, सोमका अंशु, खण्ड वा डाँठ तुम्हें रस देगा; तुम निराश नहीं होना। तुम जिनके यज्ञमें रहते हो, वे सदा अन्न और भोजनवाले होते हैं और सदा धनी लोगोंके समान उज्ज्वल तेजसे युक्त होते हैं।

११ तुम स्वयं निराश न होकर दूसरेको निराश करनेवाले हो। तुम्हें परिश्रम, शिथिलता, मृत्यु, ज़रा, रोग, तृष्णा और स्पृहा नहीं है। तुम मोटे हो। तुम लोग फेंकने और बटोरनेमें बहुत निपुण हो।

१२ तुम्हारे पूर्वज पर्वत युग-युगान्तरोंसे स्थिर हैं, पूर्णाभिलाष हैं और किसी भी कारणसे अपना स्थान नहीं छोड़ते। वे अजर और हरे वृक्षसे युक्त हैं। हरे वर्णके होकर पक्षियोंके कलरवके द्वारा द्यावापृथिवीको पूर्ण करते हैं।

१३ जैसे रथारोही लोग रथ चलानेके स्थानपर रथ चलाकर ध्वनि प्रकट करते हैं, वैसे ही ये पत्थर सोमरसको उत्पन्न करनेके समय शब्द करते हैं। जैसे धान्य बोनेवाले धान्य बोते हैं, वैसे ही ये सोमरस फैलाते हैं। ये खाकर उसे नष्ट नहीं करते।

१४ सोमाभिषव होनेपर पत्थर शब्द करते हैं—मानो क्रीड़ाशील बालक क्रीड़ास्थलमें अपनी माताका ठेलकर शब्द करते हैं। जो पत्थर सोमरसका अभिषव कर चुके हैं, उनकी स्तुति करो। प्रस्तर, प्रस्तुत होकर, घूमें।

चतुर्थ अध्याय समाप्त

पञ्चम अध्याय

९५ सूक्त

उर्वशी और पुरुरवा देवता तथा ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

हये जाये मनसा तिष्ठ घोरे वचांसि मिश्रा कृणवावहै नु।
न नौ मन्त्रा अनुदितास एते मयस्करन् परतरे चनाहन् ॥१॥
किमेता वाचा कृणवा तवाहं प्राक्रमिषमुषसामग्रियेव।
पुरूरवः पुनरस्तं परेहि दुरापना वातइवाहमस्मि ॥२॥
इषुर्न श्रिय इषुधेरसना गोषाः शतसा न रंहिः।
अवीरे क्रतौ वि दविद्युतन्नोरा न मायुं चितयन्त धुनयः ॥३॥
सा वसु दधती श्वसुराय वय उषो यदि वष्ट्यन्तिगृहात्।
अस्तं ननक्षे यस्मिञ्चाकन्दिवा नक्तं श्नथिता वैतसेन ॥४॥

---

१ (पुरुरवाकी उक्ति—) अयि निष्ठुर पत्नी, अनुरागी चित्तसे ठहरो। हमलोग शीघ्र कथनोपकथन करें। इस समय यदि हम दोनोंमें बातें नहीं हों तो आनेवाले दिनोंमें सुख नहीं होगा।

२ (उर्वशीकी उक्ति—) केवल बात-चीतसे क्या होगा? प्रमथ उषाके समान तुम्हारे पाससे मैं चली आ रही हूं। हे पुरुरवा, तुम अपने घर लौट जाओ। मैं वायुके समान दुष्प्राप्य हूं।

३ (पुरुरवाका कथन—) तुम्हारे विरहके कारण मेरे तुणीरसे वाण नहीं निकलता, जय-श्री नहीं मिलती और युद्धमें जाकर मैं अपरिमित गायोंको नहीं ले आ सकता। राज-कार्य वीर-विहीन हो गया है। इसकी कोई शोभा नहीं है। मेरे सैनिकोंने युद्धमें सिंहनाद करनेकी चिन्ता छोड़ दी थी।

४ (उर्वशीका कथन—) उषा, यदि उर्वशी श्वशुरको भोजन-सामग्री देनेकी इच्छा करती, तो सन्निहित गृहसे पतिके शयन-गृहमें जाती और दिन-रात स्वामीके पास रमण-सुख भोगती।

त्रिः स्म माह्नः श्नथयो वैतसेनोत स्म मेऽव्यत्यै पृणासि ।
पुरूरवोऽनु ते केतमायं राजा मे वीर तन्वस्तदासीः ॥५॥
या सुजूर्णिः श्रेणिः सुम्नआपिर्ह्रदेचक्षुर्न ग्रन्थिनी चरण्युः ।
ता अञ्जयोऽरुणयो न सस्रुः श्रिये गावो न धेनवोऽनवन्त ॥६॥
सम स्मञ्जायमान आसत ग्ना उतेमवर्धन्नद्यः स्वगूर्ताः ।
महे यत्त्वा पुरूरवो रणायावर्धयन् दस्युहत्याय देवाः ॥७॥
सचा यदासु जहतीष्वत्कममानुषीषु मानुषो निषेवे ।
अप स्म मत्तरसन्ती न भुज्युस्ता अत्रसन् रथस्पृशो नाश्वाः ॥८॥
यदासु मर्तो अमृतासु निस्पृक् सं क्षोणीभिः क्रतुभिर्न पृङ्क्ते ।
ता आतयो न तन्वः शुम्भत स्वा अश्वासो न क्रीलयो दन्दशानाः ॥९॥

५ पुरुरवा, तुम दिनमें मुझे तीन बार पुरुष-दण्डसे ताड़ित करते थे। किसी सपत्नीके साथ मेरी प्रतिद्वन्द्विता नहीं थी। मुझे ही तुम नियमित रूपसे सन्तुष्ट करते थे। तुम्हारे गृहमें मैं आयी। तुम मेरे वीर राजा हुए। तुम मेरे सारे सुखोंके विधायक हुए।

६ (पुरुरवाकी उक्ति—) सुजूर्णि, श्रेणि, सुम्न, आपि, हृदेचक्षु, ग्रन्थिनी, चरण्यू आदि जो महिलाएँ वा अप्सराएँ थीं, तुम्हारे आनेके बाद वे सब मेरे पास वेश-भूषा करके नहीं आती थीं। गोष्ठमें जाते समय जैसे गायें बोलती हैं, वैसे शब्द करके वे सब अब मेरे गृहमें नहीं आती थीं।

७ (उर्वशीकी उक्ति—) जिस समय पुरुरवाने जन्म ग्रहण किया, उस समय देव-पत्नियाँ देखने आयीं। अपनी शक्तिसे बहनेवाली नदियोंने भी उनकी संवर्द्धना की। पुरुरवा, तुम्हें दस्यु-बध करनेको, घोर युद्धमें भेजनेके लिये, देवता लोग तुम्हारी संवर्द्धना करने लगे।

८ (पुरुरवाका कथन—) जिस समय मनुष्य होकर पुरुरवा अप्सराओंकी ओर अग्रसर हुए, उस समय वे अपना रूप छोड़कर अन्तर्धान हो गयीं। जैसे डरके मारे हरिणी भागती है अथवा जैसे रथमें जोते हुए घोड़े भागते हैं, वैसे ही वे चली गयीं।

९ जिस समय पुरुरवा मनुष्य होकर देवलोकवासिनी अप्सराओंके साथ बातें करने और उनका शरीर छूनेको आगे बढ़े, उस समय वे लुप्त हो गयीं—अपने शरीरको नहीं दिखाया—क्रीड़ाशील अश्वोंके समान भाग गयीं।

विद्युन्न या पतन्ती दविद्योद्भरन्ती मे अप्या काम्यानि ।
जनिष्टो अपो नर्यः सुजातः प्रोर्वशी तिरत दीर्घमायुः ॥१०॥
जज्ञिष इत्था गोपीथ्याय हि दधाथ तत् पुरुरवो म ओजः ।
अशासं त्वा विदुषी सस्मिन्नहन्न म आशृणोः किमभुग्वदासि ॥११॥
कदा सूनुः पितरं जात इच्छाच्चक्रं नाश्रु वर्तयद्विजानन् ।
को दम्पती समनसा वि यूयोदध यदग्निः श्वशुरेषु दीदयत् ॥१२॥
प्रति ब्रवाणि वर्तयते अश्रु चक्रं नक्रं दद्ाध्ये शिवायै ।
प्र तत्ते हिनवा यत्ते अस्मे परेह्यस्तं नहि मूर मापः ॥१३॥
सुदेवो अद्य प्रपतेदनावृत् परावतं परमां गन्तवा उ ।
अधा शयीत निर्ऋतेरुपस्थेऽधैनं वृका रभसासो अद्युः ॥१४॥

---

१० जिस उर्वशीने आकाशसे पतनशील विद्युत्के समान शुभ्रता धारण की थी और मेरे सारे मनोरथोंको पूर्ण किया था, उसके गर्भसे मनुष्यका औरस सुन्दर पुत्र जनमा था । उर्वशी उसे दीर्घायु करे ।

११ (उर्वशीका कथन—) पुरुरवा, पृथिवीकी रक्षाके लिये तुमने पुत्रको जन्म दिया था, मेरे गर्भमें वीर्य-पात किया था, मैंने तुमसे बारबार कहा है कि, क्या होनेसे मैं तुम्हारे पास नहीं रहूँगी; क्योंकि मैं वह बात जानती थी । परन्तु तुमने मेरी बात नहीं सुनी । इस समय पृथिवी-पालन-कार्यको छोड़कर क्यों वृथा बातें करते हो ?

१२ (पुररवाकी उक्ति—) कब तुम्हारा पुत्र मुझे चाहेगा ? यदि वह मेरे पास आवे, तो क्या वह नहीं रोवेगा ? आँसु नहीं गिरावेगा ? परस्पर प्रेमसे सम्पन्न स्त्री-पुरुषमें विच्छेद करनेकी किसकी इच्छा होगी ? तुम्हारे श्वशुरके गृहमें तेजोरूप गर्भ प्रदीप्त हो उठा ।

१३ (उर्वशीका कथन—) मैं तुम्हारी बातका उत्तर देती हूं । तुम्हारे पास पुत्र जाकर अश्रु-पात वा क्रन्दन नहीं करेगा । मैं उसकी कल्याण-कामना करूँगी । तुम्हारे पुत्रको मैं तुम्हारे पास भेज दूंगी । मूढ़, अपने घरको लौट जाओ । अब मुझे नहीं पा सकोगे ।

१४ (पुरुरवाकी उक्ति—) तुम्हारा प्रेमी पति (मैं) आज गिर पड़ा—फिर कभी नहीं उठा । वह बहुत दूर चला गया । वह निर्ऋति (दुर्गति) में मर जाय । उसे वृक आदि खा जायं ।

पुरुरवो मा मृथा मा प्र पप्तो मा त्वा वृकासो अशिवास उ क्षन् ।
न वै स्त्रैणानि सख्यानि सन्ति सालावृकाणां हृदयान्येता ॥१५॥
यद्विरूपाचरं मर्त्येष्ववसं रात्रीः शरदश्चतस्रः ।
घृतस्य स्तोकं सकृदह्न आश्नां तादेवेदन्तातृपाणा चरामि ॥१६॥
अन्तरिक्षप्रां रजसो विमानीमुपशिक्षाम्युर्वशीं वसिष्ठः ।
उप त्वा रातिः सुकृतस्य तिष्ठान्निवर्तस्व हृदयं तप्यते मे ॥१७॥
इति त्वा देवा इम आहुरैल यथेमेतद्भवसि मृत्युबन्धुः ।
प्रजा ते देवान् हविषा यजाति स्वर्ग उ त्वमपि मादयासे ॥१८॥

---

९६ सूक्त

इन्द्रके दोनों घोड़े देवता । आङ्गिरस वरु ऋषि । जगती और त्रिष्टुप् छन्द ।

प्र ते महे विदथे शंसिषं हरी प्र ते वन्वे वनुषो हर्यतं मदम् ।
घृतं न यो हरिभिश्चारु सेचत आ त्वा विशन्तु हरिवर्पसं गिरः ॥१॥

---

१५ (उर्वशीकी उक्ति—) पुरुरवा, तुम मृत्यु-कामना मत करो । यहीं मत गिरो । तुम्हें वृक (भेंड़िया) आदि न खायं । स्त्रियोंका प्रेम वा मैत्री स्थायी नहीं होती । स्त्रियों और वृकोंका हृदय एक समान होता है ।

१६ मैं नाना रूपोंमें मनुष्योंमें घूमी हुई हूँ । मैंने मनुष्योंमें चार वर्ष रात्रि-वास किया है । दिनमें एक बार कुछ घी पीकर क्षुधा-निवृत्ति करते हुए मैंने भ्रमण किया है ।

१७ (पुरुरवाका कथन—) अन्तरिक्षको पूर्ण करनेवाली और जलको बनानेवाली उर्वशीको वसिष्ठ (अतीव वासयिता पुरुरवा) वशमें ले आते हैं । शुभ-कर्म-दाता पुरुरवा तुम्हारे पास रहे । मेरा हृदय जल रहा है; इसलिये हे उर्वशी, लौटो ।

१८ (उर्वशीकी उक्ति—) इला—पुत्र पुरुरवा, ये सारे देवता तुमसे कह रहे हैं कि, तुम मृत्यु-जयी होओगे, हविसे देवोंकी पूजा करोगे और स्वर्गमें जाकर आमोद—आह्लाद करोगे ।

---

१ इन्द्र, इस महायज्ञमें तुम्हारे दोनों घोड़ोंकी मैंने स्तुति की । तुम शत्रु-हिंसक हो । भली भाँति मत्त होओ, मैं यही प्रार्थना करता हूँ । हरित—वर्ण अश्वसे आकर घृतके समान सुन्दर जल गिराओ । तुम शुभ्र हो । तुम्हारे पास मेरे स्तोत्र जायं ।

हरिं हि योनिमभि ये समस्वरन् हिन्वन्तो हरी दिव्यं यथा सदः ।
आ यं पृणन्ति हरिभिर्न धेनव इन्द्राय शूषं हरिवन्तमर्चत ॥२॥
सो अस्य वज्रो हरितो य आयसो हरिर्निकामो हरिरा गभस्त्योः ।
द्युम्नी सुशिप्रो हरिमन्युसायक इन्द्रे नि रूपा हरिता मिमिक्षिरे ॥३॥
दिवि न केतुरधि धायि हर्यतो विव्यचद्वज्रो हरितो न रंह्या ।
तुददहिं हरिशिप्रो य आयसः सहस्रशोका अभवद्धरिम्भरः ॥४॥
त्वन्त्वमहर्यथा उपस्तुतः पूर्वेभिरिन्द्र हरिकेश यज्वभिः ।
त्वं हर्यसि तव विश्वमुक्थ्यमसामि राधो हरिजात हर्यतम् ॥५॥
ता वज्रिणं मन्दिनं स्तोम्यं मद इन्द्रं रथे वहतो हर्यता हरी ।
पुरूण्यस्मै सवनानि हर्यत इन्द्राय सोमा हरयो दधन्विरे ॥६॥

---

२ स्तोताओ, तुम लोगोंने इन्द्रको यज्ञकी ओर बुलाया है और यज्ञ-गृहकी ओर इन्द्रके दोनों घोड़ोंको लाये हो। घोड़ोंके साथ इन्द्रके बल-वीर्यकी स्तुति करो। देखो, जैसे गायें दूध देती हैं, वैसे ही इन्द्रको हरित-वर्ण सोमरसके द्वारा तृप्त करो।

३ इन्द्रका लोहेका जो वज्र है, वह हरित-वर्ण और सुन्दर है। वह शत्रु-नाशक है और दोनों हाथोंमें धारण किया जाता है। इन्द्र धनी हैं, सुगठित जबड़ोंवाले हैं और बाणके द्वारा क्रोधके साथ शत्रु-संहार करते हैं। हरित-वर्ण सोमरसके द्वारा इन्द्रको अभिषिक्त किया गया।

४ आकाशमें सूर्यके समान उज्ज्वल वज्र धृत हुआ—मानों उसने अपने वेगसे सारी दिशाओंको व्याप्त किया। सुगठित जबड़ोंसे युक्त और सोमरस पीनेवाले इन्द्रने लौहमय वज्रके द्वारा वृत्रको मारनेके समय असीम दीप्ति प्राप्त की।

५ हरित केशोंवाले इन्द्र, पूर्वकालीन यजमान तुम्हारी स्तुति करते थे और तुम यज्ञमें आते थे। तुम हरित होओ। इन्द्र, तुम्हारा सब प्रकारका अन्न प्रशंसाके योग्य है, निरुपम और उज्ज्वल है।

६ स्तुत्य और वज्रधर इन्द्र जिस समय सोमरसके पानके आमोदमें प्रवृत्त होते हैं, उस समय दो कमनीय घोड़े रथमें जोते जाकर उन्हें ढोते हैं। कान्त इन्द्रके लिये अनेक बार सोमरस अभिषुत किया जाता है।

अरं कामाय हरयो दधन्विरे स्थिराय हिन्वन् हरयो हरी तुरा ।
अर्वद्भिर्यो हरिभिर्जोषमीयते सो अस्य कामं हरिवन्तमानशे ॥७॥
हरिश्मशारुर्हरिकेश आयसस्तुरस्पेये यो हरिपा अवर्धत ।
अर्वद्भिर्यो हरिभिर्वाजिनीवसुरति विश्वा दुरिता पारिषद्धरी ॥८॥
स्रुवेव यस्य हरिणी विपेततुः शिप्रे वाजाय हरिणी दविध्वतः ।
प्र यत् कृते चमसे मर्मृजद्धरी पीत्वा मदस्य हर्यतस्यान्धसः ॥९॥
उत स्म सद्म हर्यतस्य पस्त्योरत्यो न वाजं हरिवाँ अचिक्रदत् ।
मही चिद्धि धिषणाहर्यदोजसा बृहद्वयो दधिषे हर्यतश्चिदा ॥१०॥
आ रोदसी हर्यमाणो महित्वा नव्यं नव्यं हर्यसि मन्म नु प्रियम् ।
प्र पस्त्यमसुर हर्यतं गोराविष्कृधि हरये सूर्याय ॥११॥

७ अविचल इन्द्रके लिये यथेष्ट सोमरस रखा गया है। वही सोमरस इन्द्रके घोड़ोंको यज्ञकी ओर वेगवान् करता है। हरित-वर्ण घोड़े जिस रथको युद्धमें ले जाते हैं, वही रथ इस रमणीय सोम-यज्ञमें आकर अधिष्ठित हुआ है।

८ इन्द्रका श्मश्रु (दाढ़ी-मूँछ) हरित वा उज्ज्वल है। वह लोहेके समान दृढ़ काय हैं। वह सोम पाते हैं। शीघ्र-शीघ्र सोमपान करके अपने शरीरको फुलाते हैं। उनकी सम्पत्ति यज्ञ है। हरितवर्णके घोड़े उन्हें यज्ञमें ले जाते हैं। वह दो घोड़ोंपर चढ़कर सारी दुर्गति दूर कर देते हैं।

९ इन्द्रके दो हरित वा उज्ज्वल नेत्र स्रुवा नामक यज्ञ-पात्रके समान यज्ञमें लगे। वह, अन्न-भक्षण करनेके लिये अपने दोनों हरित वा उज्ज्वल जबड़े कँपाते हैं। परिष्कृत चमसके बीच जो कमनीय सोमरस था, उसे पीकर वह अपने दो घोड़ोंके शरीरको परिष्कृत करते हैं।

१० हरित वा कमनीय इन्द्रका आवास-स्थान द्यावापृथिवीपर ही है। वह रथपर चढ़कर घोड़ेके समान महावेगसे युद्धमें जाते हैं। अत्यन्त उत्कृष्ट स्तोत्र उनकी प्रशंसा करता है। हरित-वर्ण वा उज्ज्वल इन्द्र, तुम अपनी शक्तिसे प्रचुर अन्न दिया करते हो।

११ इन्द्र, तुम अपनी महिमाके द्वारा द्यावापृथिवीको व्याप्त करके नित्य नये और प्रिय स्तोत्र पाते हो। असुर (बली) इन्द्र, गायोंके उत्कृष्ट स्थानको जल-हरण-कर्त्ता सूर्यके पास प्रकट करो।

आ त्वा हर्यन्तं प्रयुजो जनानां रथे वहन्तु हरिशिप्रमिन्द्र ।
पिबा यथा प्रतिभृतस्य मध्वोः हर्यन् यज्ञं सधमादे दशोणिम् ॥१२॥
अपाः पूर्वेषां हरिवः सुतानामथो इदं सवनं केवलं ते ।
ममद्धि सोमं मधुमन्तमिन्द्र सत्रा वृषञ्जठर आ वृषस्व ॥१३॥

९७ सूक्त

ओषधि देवता । अथर्वाके पुत्र भिषक् ऋषि । अनुष्टुप् छन्द ।

या ओषधीः पूर्वा जाता देवेभ्यस्त्रियुगं पुरा ।
मनै नु बभ्रूणामहं शतं धामानि सप्त च ॥१॥
शतं वो अम्ब धामानि सहस्रमुत वो रुहः ।
अधा शतकृत्वो यूयमिमं मे अगदं कृत ॥२॥

१२ हरितवर्णके जबड़ोंवाले इन्द्र, तुम्हारे घोड़े रथमें जोते जाकर तुम्हें मनुष्यके यज्ञमें ले आवें। तुम्हारे लिये जो मधुर सोमरस प्रस्तुत हुआ है, उसे पियो। जो सोम दस अँगुलियोंसे प्रस्तुत होकर यज्ञका उपकरण-स्वरूप हुआ, युद्धके समय तुम उसे पीनेकी इच्छा करो।

१३ अश्ववाले इन्द्र, पहले (प्रातःसवनमें) जो सोम प्रस्तुत हुआ है, उसका तुमने पान किया है। इस समय (माध्यन्दिन सवनमें) जो प्रस्तुत हुआ है, वह केवल तुम्हारे लिये। इन्द्र, इस मधुर सोमका आस्वादन करो। प्रचुर वृष्टि-कर्त्ता इन्द्र, अपना उदर भिगोओ।

---

१ पूर्व समयमें, तीन युगों (सत्य, त्रेता और द्वापर वा वसन्त, वर्षा और शरद्) में, जो ओषधियाँ प्राचीन देवोंने बनायी हैं, वह सब पिङ्गलवर्ण ओषधियाँ एक सौ सात स्थानोंमें विद्यमान हैं, मैं ऐसा जानता हूं।

२ मातृ-रूप ओषधियो, तुम्हारे जन्म असीम हैं और तुम्हारे प्ररोहण अपरिमित हैं। तुम सौ कर्मोंवाली हो। तुम मुझे आरोग्य प्रदान करो।

ओषधीः प्रति मोदध्वं पुष्पवतीः प्रसूवरीः ।
अश्वाइव सजित्वरीर्वीरुधः पारयिष्णवः ॥३॥
ओषधीरिति मातरस्तद्वो देवीरुप ब्रुवे ।
सनेयमश्वं गाँ वास आत्मानं तव पूरुष ॥४॥
अश्वत्थे वो निषदनं पर्णे वो वसतिष्कृता ।
गोभाज इत् किलासथ यत् सनवथ पूरुषम् ॥५॥
यत्रौषधीः समग्मत राजानः समिताविव ।
विप्रः स उच्यते भिषग्रक्षोहामीवचातनः ॥६॥
अश्वावतीं सोमावतीमूर्जयन्तीमुदोजसम् ।
आवित्सि सर्वा ओषधीरस्मा अरिष्टतातये ॥७॥
उच्छुष्मा ओषधीनां गावो गोष्ठादिवेरते ।
धनं सनिष्यन्तीनामात्मानं तव पूरुष ॥८॥

३ ओषधियो, तुम फूल और फलवाली हो। तुम रोगोके प्रति सन्तुष्ट होओ। तुम घोड़ोंके समान रोगोंके लिये जय-शील हो और पुरुषोंको रोगसे पार ले जानेवाली हो।

४ दीप्तिशाली ओषधियो, तुम मातृ-रूप हो। तुम्हारे सामने मैं स्वीकार करता हूं कि, चिकित्सकको गौ, अश्व, वस्त्र और अपनेको भी देनेको प्रस्तुत हूँ।

५ ओषधियो, तुम्हारा अश्वत्थ वृक्ष और पलाश वृक्षपर निवास-स्थान है। जिस समय तुम लोग रोगोके ऊपर अनुग्रह करती हो, उस समय तुम्हें गायें देना उचित है—तुम विशिष्ट कृतज्ञताकी पात्रा हो।

६ जैसे राजा लोग युद्धमें एकत्र होते हैं, वैसे ही जिसके पास ओषधियाँ हैं वा जो उन्हें जानता है, उसी बुद्धिमान् भिषक्को चिकित्सक कहा जाता है। वह रोगोंका विनाश-कर्त्ता है।

७ इसे नीरोग करनेके लिये मैं अश्ववती, सोमवती, ऊर्जयन्ती, उदोजस आदि ओषधियोंको जानता हूँ।

८ रोगी, जैसे गोष्ठसे गायें बाहर होती हैं, वैसे ही ओषधियोंसे उनका गुण बाहर होता है। ये ओषधियाँ तुम्हें स्वास्थ्य-धन देंगी।

इष्कृतिर्नाम वो माताथो यूयं स्थ निष्कृतीः ।
सीराः पतत्रिणीः स्थन यदामयति निष्कृथ ॥९॥
अति विश्वाः परिष्ठाः स्तेनइव व्रजमक्रमुः ।
ओषधीः प्राचुच्यवुर्यत् किञ्च तन्वो रपः ॥१०॥
यदिमा वाजयन्नहमोषधीर्हस्त आदधे ।
आत्मा यक्ष्मस्य नश्यति पुरा जीवगृभो यथा ॥११॥
यस्यौषधीः प्रसर्पथाङ्गमङ्गं परुष्परुः ।
ततो यक्ष्मं विबाधध्व उग्रो मध्यमशीरिव ॥१२॥
साकं यक्ष्म प्र पत चाषेण किकिदीविना ।
साकं वातस्य ध्राज्या साकं नश्य निहाकया ॥१३॥
अन्या वो अन्यामवत्वन्यान्यस्या उपावत ।
ताः सर्वाः संविदाना इदं मे प्रावता वचः ॥१४॥

---

९ ओषधियो, तुम्हारी माताका नाम इष्कृति (नीरोग करनेवाली) है। तुम लोग भी रोगोंको दूर करनेवाली हो। जो कुछ शरीरको पीड़ा देता है, उसे तुमलोग वेगवाली और पतनशील हो। रोगीको नीरोग करती हो।

१० जैसे कोई चोर गोष्ठको लाँघकर जाता है, वैसे ही विश्वव्यापी और सर्वंग ओषधियाँ रोगोंको लाँघ डालती हैं। शरीरमें जो पीड़ा होती है, उसे ओषधियाँ दूर करती हैं।

११ जभी मैं इन सब ओषधियोंको हाथमें ग्रहण करता हूं और रोगोंका दौर्बल्य दूर करता हूं, तभी रोगकी आत्मा वैसे ही मर जाती है, जैसे मृत्युसे जीव मर जाता है।

१२ ओषधियो, जैसे बली और मध्यस्थ व्यक्ति सबको आधीन करते हैं, वैसे ही, ओषधियो, तुमलोग जिसके अङ्ग-प्रत्यङ्ग और ग्रन्थि-ग्रन्थिमें विचरण करती हो, उसके रोग सभी शरीरावयवोंसे दूर करती हो।

१३ नीलकण्ठ और किकिदीवि (श्येन !) पक्षी जैसे द्रुत वेगसे उड़ जाते हैं अथवा जैसे वायु वेगसे बहता है वा जैसे गोधा (गोह) दौड़ती है, वैसे ही, रोग, तुम भी शीघ्र दूर होओ।

१४ ओषधियो, तुमलोगोंमें एक ओषधि दूसरीके पास जाय और दूसरी तीसरीके पास जाय। इस प्रकार संसारकी सारी ओषधियाँ एकमत होकर मेरी प्रार्थनाकी रक्षा करे।

याः फलिनीर्या अफला अपुष्पा याश्च पुष्पिणीः ।
बृहस्पतिप्रसूतास्ता नो मुञ्चन्त्वंहसः ॥१५॥
मुञ्चन्तु मा शपथ्यादथो वरुण्यादुत ।
अथो यमस्य पड्वीशात् सर्वस्माद्देवकिल्बिषात् ॥१६॥
अवपतन्तीरवदन् दिव ओषधयस्परि ।
यं जीवमश्नवामहै न स रिष्याति पूरुषः ॥१७॥
या ओषधीः सोमराज्ञीर्बह्वीः शतविचक्षणाः ।
तासां त्वमस्युत्तमारं कामाय शं हृदे ॥१८॥
या ओषधीः सोमराज्ञीर्विष्ठिताः पृथिवीमनु ।
बृहस्पतिप्रसूता अस्यै सं दत्त वीर्यम् ॥१९॥
मा वो रिषत् खनिता यस्मै चाहं खनामि वः ।
द्विपच्चतुष्पदस्माकं सर्वमस्त्वनातुरम् ॥२०॥

१५ फलवती और फलशून्या तथा पुष्पवती और पुष्पशून्या ओषधियाँ, बृहस्पतिके द्वारा उत्पादित होकर, हमें पापसे बचावें।

१६ शपथसे उत्पन्न पापसे मुझे ओषधियाँ बचावें। वरुणके पाश और यमकी बेड़ीसे भी बचावें। देवोंके पापसे भी बचावें।

१७ स्वर्गसे नीचे आते समय ओषधियोंने कहा था कि, हम जिस प्राणीपर अनुग्रह करती हैं, उसका कोई अनिष्ट न हो।

१८ जिन ओषधियोंका राजा सोम है और जो ओषधियाँ असीम उपकार करती हैं, ओषधि, उनमें तुम श्रेष्ठ हो, तुम वासनाको पूरी करने और हृदयको सुखी करनेमें समर्थ हो।

१९ जिन ओषधियोंका राजा सोम है और जो पृथिवीके नाना स्थानोंमें अधिष्ठित हैं, वे ही बृहस्पतिके द्वारा उत्पादित ओषधियाँ इस रोगीको बल दें अथवा इस उपस्थित ओषधिको वीर्यवती करें।

२० ओषधियो, मैं तुम्हें खोदकर निकालने वाला हूं। मुझे नष्ट नहीं करना। जिसके लिये खोदता हूँ वह भी नष्ट नहीं हो। हमारी जो द्विपद और चतुष्पद आदि सम्पत्तियाँ हैं, वे नीरोग रहें।

याश्चेदमुपशृण्वन्ति याश्च दूरं परागताः ।
सर्वाः संगत्य वीरुधोऽस्यै सन्दत्त वीर्यम् ॥२१॥
ओषधयः संवदन्ते सोमेन सह राज्ञा ।
यस्मै कृणोति ब्राह्मणस्तं राजन् पारयामसि ॥२२॥
त्वमुत्तमास्योषधे तव वृक्षा उपस्तयः ।
उपस्तिरस्तु सोऽस्माकं यो अस्माँ अभिदासति ॥२३॥

९८ सूक्त

नाना देवता । ऋष्टिषेणके पुत्र देवापि ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

बृहस्पते प्रति मे देवतामिहि मित्रो वा यद्वरुणो वासि पूषा ।
आदित्यैर्वा यद्वसुभिर्मरुत्वान्त्स पर्जन्यं शन्तनवे वृषाय ॥१॥
आ देवो दूतो अजिरश्चिकित्वान् त्वद्देवापे अभि मामगच्छत् ।
प्रतीचीनः प्रति मामावृत्स्व दधामि ते द्युमतीं वाचमासन् ॥२॥

२१ जो ओषधियां मेरा यह स्तोत्र सुनती हैं और जो अत्यन्त दूरपर हैं (इसीलिये स्तोत्र नहीं सुना है), वह सब इकट्ठी होकर इस ओषधियको वीर्यवती करें ।

२२ ओषधियाँ सोम राजाके साथ यह कथोपकथन करती हैं । राजन्, जिसकी चिकित्सा स्तोता करते हैं, उसे ही हम बचाते हैं ।

२३ ओषधि, तुम श्रेष्ठ हो । जितने वृक्ष हैं, सब तुमसे हीन हैं । जो हमारा अनिष्ट-चिन्तन करता है, वह हमारे पास हीन हो जाय ।

१ बृहस्पति, तुम मेरे लिये प्रत्येक देवताके पास जाओ । तुम मित्र, वरुण, पूषा अथवा आदित्यों और वसुओंके साथ इन्द्र (मरुत्वान्) ही हो । तुम शन्तनु (याज्ञिक) राजाके लिये मेघसे जल बरसाओ ।

२ देवापि, कोई एक ज्ञानी और शीघ्रगामी देवता दूत होकर तुम्हारे यहाँसे मेरे पास आवें । बृहस्पति, हमारे प्रति अभिमुख होकर आओ । हमारे मुँहमें तुम्हारे लिये शुभ्र स्तोत्र धृत है ।

अस्मे धेहि द्युमतीं वाचमासन् बृहस्पते अनमीवामिषिराम् ।
यया वृष्टिं शन्तनवे वनाव दिवो द्रप्सो मधुमाँ आ विवेश ॥३॥
आ नो द्रप्सा मधुमन्तो विशन्त्विन्द्र देह्यधिरथं सहस्रम् ।
निषीद होत्रमृतुथा यजस्व देवान् देवापे हविषा सपर्य ॥४॥
आर्ष्टिषेणो होत्रमृषिर्निषीदन् देवापिर्देवसुमतिं चिकित्वान् ।
स उत्तरस्मादधरं समुद्रमपो दिव्या असृजद्वर्ष्या अभि ॥५॥
अस्मिन्त्समुद्रे अध्युत्तरस्मिन्नापो देवेभिर्निवृता अतिष्ठन् ।
ता अद्रवन्नार्ष्टिषेणेन सृष्टा देवापिना प्रेषिता मृक्षिणीषु ॥६॥
यद्देवापिः शन्तनवे पुरोहितो होत्राय वृतः कृपयन्नदीधेत् ।
देवश्रुतं वृष्टिवनिं रराणो बृहस्पतिर्वाचमस्मा अयच्छत् ॥७॥
यं त्वा देवापि शुशुचानो अग्न आर्ष्टिषेणो मनुष्यः समीधे ।
विश्वेभिर्देवैरनुमद्यमानः प्र पर्जन्यमीरया वृष्टिमन्तम् ॥८॥

---

३ बृहस्पति, हमारे मुंहमें तुम एक ऐसा शुभ्र स्तोत्र डाल दो, जिसमें अस्पष्टता न हो और भली भाँति स्फूर्त्ति हो, उसके द्वारा हम शन्तनुके लिये वृष्टिको उपस्थित करें। मधु-युक्त रस आकाशसे आवे।

४ मधु-युक्त रस (वृष्टि-वारि) हमारे लिये आवे। इन्द्र, रथके ऊपर रखकर विस्तृत धन दो। देवापि, इस होम-कार्यमें आकर बैठो। यथाकाल देवोंका पूजन करो और होमीय द्रव्य देकर सन्तुष्ट करो।

५ ऋषिषेणके पुत्र देवापि ऋषि तुम्हारे लिये उत्तम स्तुति करना स्थिर करके हवन करनेको बैठे। उस समय वह ऊपरके समुद्र (अन्तरिक्ष) से नीचेके पार्थिव समुद्रमें वृष्टि-जल ले आये।

६ अन्तरिक्ष (समुद्र) को देवोंने आकाशमें ढककर रखा है। ऋषिषेणके पुत्र देवापिने इस जलको संचालित किया। उस समय स्वच्छ भूमिपर जल बहने लगा।

७ जिस समय शन्तनुके पुरोहित देवापि (कौरव) ने, होम करनेके लिये उद्यत होकर, जलोत्पादक देव-स्तोत्रको निरूपित किया, उस समय सन्तुष्ट होकर बृहस्पतिने उनके मनमें स्तोत्रका उदय कर दिया।

८ अग्नि, ऋषिषेणके पुत्र देवापि नामक मनुष्यने कमनीय होकर तुम्हें प्रज्वलित किया। देवोंका सहयोग पाकर तुम जलवर्षक मेघको प्रज्वलित करो।

त्वां पूर्व ऋषयो गीर्भिरायन् त्वामध्वरेषु पुरुहूत विश्वे ।
सहस्राण्यधिरथान्यस्मे आ नो यज्ञं रोहिदश्वोप याहि ॥९॥
एतान्यग्ने नवतिर्नव त्वे आहुतान्यधिरथा सहस्रा ।
तेभिर्वर्धस्व तन्वः शूर पूर्वीर्दिवो नो वृष्टिमिषितो रिरीहि ॥१०॥
एतान्यग्ने नवतिं सहस्रा सं प्रयच्छ वृष्ण इन्द्राय भागम् ।
विद्वान् पथ ऋतशो देवयानानप्यौलानं दिवि देवेषु धेहि ॥११॥
अग्ने बाधस्व वि मृधो वि दुर्गहापामीवामप रक्षांसि सेध ।
अस्मात् समुद्राद्बृहतो दिवो नोऽपां भूमानमुप नः सृजेह ॥१२॥

९९ सूक्त

इन्द्र देवता । वैखानस वम्र ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

कं नश्चित्रमिषण्यसि चिकित्वान् पृथुग्मानं वाश्रं वावृधध्यै ।
कत्तस्य दातु शवसो व्युष्टौ तक्षद्वज्रं वृत्रतुरमपिन्वत् ॥१॥

९ अग्नि, पूर्वके ऋषिलोग स्तुतियोंके साथ तुम्हारे पास आये थे। बहुतोंके द्वारा आहूत अग्नि, इस समयके सब यजमान यज्ञोंमें स्तुतियोंके साथ तुम्हारे पास जाते हैं। रथके साथ सहस्र पदार्थ शन्तनु राजाने दक्षिणामें दिये। रोहित नामक अश्ववाले अग्नि, पधारो।

१० अग्नि, रथोंके साथ ९९ सहस्र पदार्थ तुममें आहुति-रूपमें दिये गये हैं। उनसे तुम अपने शरीरको मोटा करो। द्युलोकसे हमारे लिये वृष्टि करो।

११ अग्नि, नब्बे सहस्र आहुतियोंमेंसे इन्द्रका भाग दो। सारे देवयानोंको जाननेवाले तुम यथा-समय कौरव शन्तनुको देवोंके बीच स्थापित करना।

१२ अग्नि, शत्रुओंकी दुर्गम पुरियोंको नष्ट करो। रोग और राक्षसोंका दूर करो। इस संसारमें महान् अन्तरिक्षसे असीम जल ले आओ।

१ इन्द्र, तुम जानकर हमें विचित्र सम्पत्ति देते हो। वह सम्पत्ति बढ़ती है, वह प्रशंसनीय है और वह हमें बढ़ाती है। इन्द्रके बलकी वृद्धिके लिये हमें क्या देना होगा? उनके लिये मृत्र हिंसक-वज्र बनाया गया है। उन्होंने वृष्टि-वर्षण किया।

स हि द्युता विद्युता वेति साम पृथुं योनिमसुरत्वा ससाद ।
स सनीळेभिः प्रसहानो अस्य भ्रातुर्न ऋते सप्तथस्य मायाः ॥२॥
स वाजं यातापदुष्पदा यन्त्स्वर्षाता परिषदत् सनिष्यन् ।
अनर्वा यच्छतदुरस्य वेदो घ्नञ्छिश्नदेवाँ अभि वर्पसा भूत् ॥३॥
स यह्व्यो३वनीर्गोष्वर्वा जुहोति प्रधन्यासु सस्रिः ।
अपादो यत्र युज्यासोऽरथा द्रोण्यश्वास ईरते घृतं वाः ॥४॥
स रुद्रेभिरशस्तवार ऋभ्वा हित्वी गयमारे अवद्य आगात् ।
वम्रस्य मन्ये मिथुना विवव्री अन्नमभीत्यारोदयन्मुषायन् ॥५॥
स इद्दासं तुवीरवं पतिर्दन् षळक्षं त्रिशीर्षाणं दमन्यत् ।
अस्य त्रितो न्वोजसा वृधानो विपा वराहमयोअग्रया हन् ॥६॥

---

२ इन्द्र विद्युत् नामक आयुधसे युक्त होकर यज्ञमें सामगानके प्रति जाते हैं। वह बल-पूर्वक अनेक स्थानोंपर अधिकार कर डालते हैं। वह समान-स्थानमें रहनेवाले मरुतोंके साथ शत्रुको हराते हैं। वह आदित्योंके सप्तम भ्राता हैं। उनका त्याग करके कोई कार्य नहीं हो सकता।

३ वह सुन्दर गतिसे जाकर युद्ध-क्षेत्रमें अवस्थित होते हैं। वह अविचल होकर सौ दरवाजों वाली शत्रुपुरीसे धन ले आते हैं और इन्द्रियपरायण दुरात्माओंको अपने तेजसे हराते हैं।

४ वह मेघोंकी ओर जाकर और मेघमें भ्रमण करके उर्वरा भूमिपर बहुत जल गिराते हैं। उन सब जलवाले स्थानोंपर अनेक छोटी-छोटी नदियाँ एकत्र होकर घृतके समान जलको बहाती हैं। उनके न चरण हैं, न रथ है और न डोंगी (द्रोणि) है।

५ इन्द्र, विना प्रार्थनाके ही, मनोरथको पूर्ण करते हैं। वह प्रकाण्ड हैं। उनके पास दुर्नाम नहीं जाता। वह अपने स्थानसे रुद्र-पुत्र मरुतोंके साथ यहाँ आवें। मुझ वम्रके माता-पिताका क्लेश चला गया; क्योंकि मैंने शत्रु-धनका हरण कर लिया है और शत्रुओंको रुलाया है।

६ प्रभु इन्द्रने कोलाहल करनेवाले दासोंका शासन किया था। उन्होंने तीन कपालों और छ आँखोंवाले विश्वरूप (त्वष्टाके पुत्र) को मारा था। इन्द्रके तेजसे तेजस्वी होकर त्रितने लोहेके समान तीखे नखोंवाली अँगुलियोंसे वराहका वध किया था।

स द्रुह्वणे मनुष ऊर्ध्वसान आ साविषदर्शसानाय शरुम् ।
स नृतमो नहुषोऽस्मत् सुजातः पुरोऽभिनदर्हन् दस्युहत्ये ॥७॥
सो अभ्रियो न यवस उदन्यन् क्षयाय गातुं विदन्नो अस्मे ।
उप यत् सीददिन्दुं शरीरैः श्येनोऽयोपाष्टिर्हन्ति दस्यून् ॥८॥
स व्राधतः शवसानेभिरस्य कुत्साय शुष्णं कृपणे परादात् ।
अयं कविमनयच्छस्यमानमत्कं यो अस्य सनितोत नृणाम् ॥९॥
अयं दशस्यन्नर्येभिरस्य दस्मो देवेभिर्वरुणो न मायी ।
अयं कनीन ऋतुपा अवेद्यमिमीतारुं यश्चतुष्पात् ॥१०॥
अस्य स्तोमेभिरौशिज ऋजिश्वा व्रजं दरयद्वृषभेण पिप्रोः ।
सुत्वा यद्यजतो दीदयद्गीः पुर इयानो अभि वर्पसा भूत् ॥११॥

७ उनके किसी भक्तको यदि शत्रु लोग युद्धके लिये बुलाते हैं, तो वह दर्पके साथ शरीरको फुलाकर शत्रु-वध करनेके लिये उत्तम अस्त्र प्रदान करते हैं। वह मनुष्योंके सर्व-श्रेष्ठ नेता हैं। दस्यु-विनाशके समय मान्य इन्द्रने अनेक शत्रु-पुरियोंको ध्वस्त किया था।

८ वह मेघ-समुदायके समान तृणमयी भूमिपर जल गिराते हैं। उन्होंने हमारे निवासका मार्ग बताया है। वह अपने शरीरके सारे अङ्गोंमें सोम गिराकर, श्येन पक्षीके समान, लोहेके सदृश तीक्ष्ण और दृढ़ पाद-पृष्ठसे दस्युओंका बध करते हैं।

९ वह पराक्रमी शत्रुओंको दृढ़ अस्त्रके द्वारा भगा देते हैं। उन्होंने कुत्स नामक व्यक्तिका स्तोत्र सुनकर शुष्ण नामक असुरको छेदा था। उन्होंने स्तोता और कवि उशनाके विरोधियोंको वशमें किया था। वह उशना और दूसरोंको दान देते हैं।

१० मनुष्य-हितैषी मरुतोंके साथ धनेच्छु होकर इन्द्रने धन भेजा था। वह वरुणके समान अपने तेजसे सुन्दर और शक्तिमान् हैं। वह रमणीय-मूर्ति हैं। उन्हें सभी यथासमय रक्षक जानते हैं। उन्होंने चार पैरोंवाले शत्रुको मार डाला।

११ उशिज्के पुत्र ऋजिश्वाने इन्द्रकी स्तुति करके वज्रके द्वारा पिप्रुके गोष्ठको विदीर्ण किया। जिस समय ऋजिश्वाने सोमको प्रस्तुत करके यज्ञमें स्तोत्र किया, उस समय आकर इन्द्रने शत्रु-पुरियोंको विनष्ट किया।

एवा महो असुर वक्षथाय वम्रकः पड्भिरुपसर्पदिन्द्रम् ।
स इयानः करति स्वस्तिमस्मा इषमूर्जं सुक्षितिं विश्वमाभाः ॥१२॥

६ अनुवाक । १०० सूक्त

विश्वदेव देवता । बन्दन-पुत्र दुवस्यु ऋषि । जगती और त्रिष्टुप् छन्द ।

इन्द्र दृह्य मघवन् त्वावदिद्भुज इह स्तुतः सुतपा बोधि नो वृधे ।
देवेभिर्नः सविता प्रावतु श्रुतमा सर्वतातिमदितिं वृणीमहे ॥१॥
भराय सु भरत भागमृत्वियं प्र वायवे शुचिपे क्रन्ददिष्टये ।
गौरस्य यः पयसः पीतिमानश आ सर्वतातिमदितिं वृणीमहे ॥२॥
आ नो देवः सविता साविषद्वय ऋजूयते यजमानाय सुन्वते ।
यथा देवान् प्रतिभूषेम पाकवदा सर्वतातिमदितिं वृणीमहे ॥३॥
इन्द्रो अस्मे सुमना अस्तु विश्वहा राजा सोमः सुवितस्याध्येतु नः ।
यथायथा मित्रधितानि सन्दधुरा सर्वतातिमदितिं वृणीमहे ॥४॥

---

१२ बली (असुर) इन्द्र, मैं वम्र तुम्हें बहुत हवि देनेकी इच्छासे पदल चलकर तुम्हारे पास आया हूं। तुम मेरा मङ्गल करो। अन्न, बल और उत्तम गृह आदि सारी वस्तुएँ प्रदान करो।

१ धनी इन्द्र, अपने समान बली शत्रु-सैन्यका बध करो। स्तोत्रको ग्रहण कर और सोमको पीकर हमारी रक्षाके लिये प्रस्तुत रहो। हमारी श्रीवृद्धि करो। अन्य देवोंके साथ सविता देव हमारे विख्यात यज्ञकी रक्षा करें। हम सर्व-ग्राहिणी अदितिकी प्रार्थना करते हैं।

२ युद्धके लिये उपस्थित ऋतुके अनुकूल यज्ञ-भाग वायुको दो। वह विशुद्ध सोमका पान करते हैं। उनके जानेके समय शब्द होता है। वह शुभ्र दुग्धके पीनेमें लगे हैं। हम सर्व-ग्राहिणी अदिति देवीकी प्रार्थना करते हैं।

३ हमारे सरलता चाहनेवाले और अभिषव-कर्त्ता यजमानको सविता देवता अन्न दें, ताकि उस परिपक्व अन्नसे देवोंकी पूजा की जा सके। सर्व-ग्राहिणी अदिति देवीकी हम प्रार्थना करते हैं।

४ इन्द्र प्रतिदिन हमारे प्रति प्रसन्न रहें। हमारे यज्ञमें सोम राजा अधिष्ठान करें। बन्धुओंके आयोजनके अनुसार उक्त कर्म सम्पन्न हो। सर्वग्राहिणी अदितिकी हम प्रार्थना करते हैं।

इन्द्र उक्थेन शवसा परुर्दधे बृहस्पते प्रतरीतास्यायुषः ।
यज्ञो मनुः प्रमतिर्नः पिता हि कमा सर्वतातिमदितिं वृणीमहे ॥५॥
इन्द्रस्य नु सुकृतं दैव्यं सहोऽग्निर्गृहे जरिता मेधिरः कविः ।
यज्ञश्च भूद्विदथे चारुरन्तम आ सर्वतातिमदितिं वृणीमहे ॥६॥
न वो गुहा चकृम भूरि दुष्कृतं नाविष्ट्यं वसवो देवहेलनम् ।
माकिर्नो देवा अनृतस्य वर्पस आ सर्वतातिमदितिं वृणीमहे ॥७॥
अपामीवां सविता साविषन्न्यग्वरीय इदपसेधन्त्वद्रयः ।
ग्रावा यत्र मधुषुदुच्यते बृहदा सर्वतातिमदितिं वृणीमहे ॥८॥
ऊर्ध्वो ग्रावा वसवोऽस्तु सोतरि विश्वा द्वेषांसि सनुतर्युयोत ।
स नो देवः सविता पायुरीड्य आ सर्वतातिमदितिं वृणीमहे ॥९॥
ऊर्जं गावो यवसे पीवो अत्तन ऋतस्य याः सदने कोशे अङ्ध्वे ।
तनूरेव तन्वो अस्तु भेषजमा सर्वतातिमदितिं वृणीमहे ॥१०॥

५ इन्द्र स्तुत्य बलसे हमारे यज्ञकी रक्षा करते हैं। बृहस्पति, तुम परमायु प्रदान किया करते हो। यज्ञ ही हमारी गति, मति, रक्षक और सुख हैं सर्व ग्राहिणी अदितिकी हम प्रार्थना करते हैं।

६ देवोंका बल इन्द्रने ही बनाया है। गृहस्थित अग्नि देवोंकी स्तुति करते, यज्ञ करते और कार्य-निर्वाह करते हैं। वह यज्ञके समय पूज्य और रमणीय तथा हम लोगोंके अपने हैं। सर्व-ग्राहिणी अदितिकी हम प्रार्थना करते हैं।

७ वसुओ, तुम्हारे परोक्षमें हमने कोई विशेष अपराध नहीं किया है। तुम्हारे सामने भी हमने ऐसा कोई कार्य नहीं किया है, जो देवोंके क्रोधका कारण बने। देवो, हमें मिथ्या नहीं करना। सर्व-ग्राहिणी अदितिकी हम प्रार्थना करते हैं।

८ जहाँ मधुके समान सोमरस प्रस्तुत किया जाता और अनन्तर अभिषव-प्रस्तरको भली भाँति स्तुत किया जाता है, वहाँका रोग सविता हटाते हैं और पर्वत वहाँका गुरुतर अनर्थ दूर करते हैं। सर्वग्राहिणी अदितिकी हम प्रार्थना करते हैं।

९ वसुओ, सोमको प्रस्तुत करनेका प्रस्तर ऊपर उठे। तबतक तुम लोग शत्रुओंको अव्यक्त भावसे अलग-अलग करो। सविता रक्षा करनेवाले हैं। उनका स्तोत्र करना चाहिये। सर्वग्राहिणी अदितिकी हम प्रार्थना करते हैं।

१० गायो, तुम लोग गोचर-भूमिपर विचरण करके मोटी बनो। यज्ञमें तुम लोग दुग्ध-पात्रमें दूध देती हो। तुम्हारा दूध सोमरसके औषधके समान हो। सर्वग्राहिणी अदितिकी हम प्रार्थना करते हैं।

क्रतुप्रावा जरिता शश्वतामव इन्द्र इद्भद्रा प्रमतिः सुतावताम् ।
पूर्णमूधर्दिव्यं यस्य सिक्तय आ सर्वतातिमदितिं वृणीमहे ॥११॥
चित्रस्ते भानुः क्रतुप्रा अभिष्टिः सन्ति स्पृधो जरणिप्रा अधृष्टाः ।
रजिष्ठया रज्या पश्व आ गोस्तूतूर्षति पर्यग्रं दुवस्युः ॥१२॥

१०१ सूक्त

विश्वेदेव देवता । सोमपुत्र बुध ऋषि । त्रिष्टुप्, जगती आदि छन्द ।

उद्बुध्यध्वं समनसः सखायः समग्निमिन्ध्वं बहवः सनीलाः ।
दधिक्रामग्निमुषसं च देवीमिन्द्रावतोवसे नि ह्वये वः ॥१॥
मन्द्रा कृणुध्वं धिय आ तनुध्वं नावमरित्रपरणीं कृणुध्वम् ।
इष्कृणुध्वमायुधारं कृणुध्वं प्राञ्चं यज्ञं प्रणयता सखायः ॥२॥

---

११ इन्द्र यज्ञको पूर्ण करते हैं, सबको जरा-युक्त करते हैं। वह युवक और सोम-यज्ञ-कर्त्ताकी रक्षा करते हैं और उत्तम स्तोत्र पाकर अनुकूल होते हैं। उनके पानके लिये उद्धत द्रोण-कलश सोमसे परिपूर्ण है। सर्वसंग्राहिणी अदिति देवीकी हम प्रार्थना करते हैं।

१२ इन्द्र, तुम्हारा प्रकाश आश्चर्यजनक है। वह प्रकाश कर्म-पूरक है। उसकी प्रार्थना करनी चाहिये। तुम्हारा दुर्द्धर्ष कार्य सारे स्तोताओंकी मनःकामना पूर्ण करता है। इसीलिये दुवस्यु ऋषि अतीव सरल रज्जुके द्वारा गायका अग्रभाग शीघ्र खींचते हैं।

---

१ मित्र ऋत्विको, समान-मना होकर जागो। अनेक लोग एक स्थानवासी होकर अग्निको प्रज्वलित करो। मैं दधिक्रा, उषा, अग्नि और इन्द्रको, रक्षणके लिये, बुलाता हूं।

२ मित्रो, मदकर स्तोत्र करो। कर्षण (जोताई) आदि कर्मोंका विस्तार करो। हल-दण्ड-रूपिणी और पार लगानेवाली नौका प्रस्तुत करो। हलके फल या फालको तेज और सुशोभित करो। मित्रो, उत्तम यज्ञका अनुष्ठान करो।

युनक्त सीरा वि युगा तनुध्वं कृते योनौ वपतेह बीजम् ।
गिरा च श्रुष्टिः सभरा असन्नो नेदीय इत् सृण्यः पक्वमेयात् ॥३॥
सीरा युञ्जन्ति कवयो युगा वि तन्वते पृथक् । धीरा देवेषु सुम्नया ॥४॥
निराहावान् कृणोतन संवरत्रा दधातन ।
सिञ्चामहा अवतमुद्रिणं वयं सुषेकमनुपक्षितम् ॥५॥
इष्कृताहावमवतं सुवरत्रं सुषेचनम् । उद्रिणं सिञ्चे अक्षितम् ॥६॥
प्रीणीताश्वान् हितं जयाथ स्वस्तिवाहं रथमित् कृणुध्वम् ।
द्रोणाहावमवतमश्मचक्रमंसत्रकोशं सिञ्चता नृपाणम् ॥७॥
व्रजं कृणुध्वं स हि वो नृपाणो वर्म सीव्यध्वं बहुला पृथूनि ।
पुरः कृणुध्वमायसीरधृष्टा मा वः सुस्रोच्चमसो दृंहता तम् ॥८॥

---

३ ऋत्विको, हल योजित करो। युगों (जुआठों) को विस्तृत करो। यहाँ जो क्षेत्र प्रस्तुत किया गया है, उसमें बीज बोओ। हमारी स्तुतियोंके साथ हमारा अन्न परिपूर्ण हो। हँसुए (सृणि) पासके पके धान्यमें गिरें।

४ लाङ्गल (हल) जोते जाते हैं। कर्म-कर्त्ता लोग जुआठों (युगों) को अलग करते हैं और बुद्धिमान लोग सुन्दर स्तोत्र पढ़ रहे हैं।

५ पशुओंके जलपान-स्थानको बनाओ। वरत्रा (चर्म-रज्जु) को योजित करो। अधिक, अक्षय और सेचन-समर्थ गड्ढेसे जल लेकर हम सींचते हैं।

६ पशुओंका जलपान स्थान प्रस्तुत हुआ है। अधिक, अक्षय और जल-पूर्ण गड्ढेमें सुन्दर चर्म-रज्जु है। बड़ी सरलतासे जल-सेचन किया जाता है। इससे जल लेकर सेचन करो।

७ घोड़ों वा व्यापक बैलोंको परितृप्त करो। क्षेत्र (खेत) में रखे हुए धान्यको लो। सरलतासे धान्य ढोनेवाले रथको प्रस्तुत करो। पशुओंका यह जल-पूर्ण जलाधार एक द्रोण (३२ सेर) होगा। इसमें पत्थरका बनाया हुआ चक्र है। मनुष्योंके पीने योग्य जलाधार कूपवत् होगा। इसे जल-पूर्ण करो।

८ गोष्ठ प्रस्तुत करो। वह स्थान ही मनुष्योंके जलपानके लिये उपयुक्त है। अनेक स्थूल कवच सीकर प्रस्तुत करो, दृढ़तर लौहमय पात्र प्रस्तुत करो और चमसको दृढ़ करो, ताकि इससे जल न चू सके।

आ वो धियं यज्ञियां वर्त ऊतये देवा देवीं यजतां यज्ञियामिह ।
सा नो दुहीयद्यवसेव गत्वी सहस्रधारा पयसा मही गौः ॥९॥
आ तू षिंच हरिमीन्द्रोरुपस्थे वाशीभिस्तक्षताश्मन्मयीभिः ।
परिष्वजध्वं दश कक्ष्याभिरुभे धुरौ प्रति वह्निं युनक्त ॥१०॥
उभे धुरौ वह्निरापिब्दमानोऽन्तर्योनेव चरति द्विजानिः ।
वनस्पतिं वन अस्थापयध्वं नि षू दधिध्वमखनन्त उत्सम् ॥११॥
कपृन्नरः कपृथमुद्दधातन चोदयत खुदत वाजसातये ।
निष्टिग्र्यः पुत्रमाच्यावयोतय इन्द्रं सबाध इह सोमपीतये ॥१२॥

१०२ सूक्त

इन्द्र देवता । भर्म्याश्व-पुत्र मुद्गल ऋषि । बृहती और त्रिष्टुप् छन्द ।

प्र ते रथं मिथूकृतमिन्द्रोऽवतु धृष्णुया ।
अस्मिन्नाजौ पुरुहूत श्रवाय्ये धनभक्षेषु नोऽव ॥१॥

---

९ देवो वा ऋत्विको, मैं तुम्हारे ध्यानको प्रवृत्त करता हूं, ताकि तुम रक्षा करो। वह ध्यान यज्ञोपयोगी है, वही तुम्हें यज्ञ-भाग देता है। जैसे घास खाकर गायें सहस्र धाराओंसे दूध देती हैं, वैसे ही वह ध्यान हमारी अभिलाषा पूर्ण करे।

१० काठके पात्रमें रखे हुए हरित-वर्ण सोमको सिञ्चित करो। प्रस्तरमय कुठारोंसे पात्र प्रस्तुत करो। दस अँगुलियोंके द्वारा पात्रको वेष्टन करके धारण करो। वाहक पशुओंको रथकी दोनों धुराओंमें योजित करो ।

११ रथकी दोनों धुराओंका शब्दायमान करके रथ-वाहक पशु वैसे ही विचरण करता है, जैसे दो स्त्रियोंका स्वामी रति-क्रीड़ा करता है। काठके शकटको काठके आधारपर रखो, भली भाँति संस्थापित करो—ताकि शकट आधार-शून्य न होने पावे।

१२ कर्माध्यक्षो, इन्द्र सुखके दाता हैं। इन्हें सुखमय सोम दो। अन्न देनेके लिये इन्हें प्रेरित करो, अनुरुद्ध करो। इन्द्र अदितिके पुत्र हैं। तुम सब लोगोंको पीड़ाका डर है। फलतः रक्षणके लिये उन्हें यहाँ बुलाओ, ताकि सोमपान करें।

---

१ मुद्गल, युद्धमें जिस समय तुम्हारा रथ असहाय होता है, उस समय दुर्द्धर्ष इन्द्र उसकी रक्षा करें। इन्द्र, इस प्रसिद्ध युद्धमें, धनोपार्जनके समय, तुम हमारी रक्षा करना।

उत् स्म वातो वहति वासो अस्या अधिरथं यदजयत् सहस्रम् ।
रथीरभून्मुद्गलानी गविष्टौ भरे कृतं व्यचेदिन्द्रसेना ॥२॥
अन्तर्यच्छ जिघांसतो वज्रमिन्द्राभिदासतः ।
दासस्य वा मघवन्नार्यस्य वा सनुतर्यवया वधम् ॥३॥
उद्नो ह्रदमपिबज्जर्हृषाणः कूटं स्म तृंहदभिमातिमेति ।
प्र मुष्कभारः श्रव इच्छमानोऽजिरं बाहू अभरत् सिषासन् ॥४॥
न्यक्रन्दयन्नुपयन्त एनममेहयन् वृषभं मध्य आजेः ।
तेन सुभर्वं शतवत् सहस्रं गवां मुद्गलः प्रधने जिगाय ॥५॥
ककर्दवे वृषभो युक्त आसीदवावचीत् सारथिरस्य केशी ।
दुधेर्युक्तस्य द्रवतः सहानस ऋच्छन्ति ष्मा निष्पदो मुद्गलानीम् ॥६॥

---

२ जिस समय रथपर चढ़कर मुद्गलकी पत्नी (मुद्गलानी) सहस्र गायोंको जीतनेवाली हुईं, उस समय उनके वस्त्रका सञ्चालन वायुने किया। गायोंके जीतनेके समय मुद्गल-पत्नी रथी हुईं। इन्द्रसेना नामकी वह मुद्गलानी युद्धके समय शत्रुओंके हाथसे गायोंको ले आयीं।

३ इन्द्र, अनिष्टकर्त्ता और मारनेको तैयार शत्रुओंके ऊपर वज्रपात करो। दासजातीय हो वा आर्यजातीय हो, शत्रुका, गूढ़ रूपसे, बध करो।

४ यह वृषभ महानन्दके साथ जल पी चुका। अपनी सींगसे मिट्टीके ढेरको खोदकर वह शत्रुकी ओर दौड़ा। उसका अण्डकोष लम्बायमान है। आहारकी इच्छासे वह दोनों सींगोंको तेज करके शीघ्र आ रहा है।

५ मनुष्योंने इस वृषभके पास जाकर उसे गरजाया और युद्धके बीच उससे मूत्र-त्याग कराया। इससे मुद्गलने उत्तम और आहार-पटु सैकड़ो-सहस्रों गायोंको जीता।

६ शत्रु-हिंसाके लिये वृषभ योजित किया गया। उसको केशधारिणी सारथि मुद्गलानी गरजने लगीं। रथमें जोते गये उस वृषको पकड़कर रखा नहीं गया। वह शकट लेकर दौड़ा। सेनाएँ मुद्गलानीके पीछे-पीछे चलीं।

उत् प्रधिमुदहन्नस्य विद्वानुपायुनग्वंसगमत्र शिक्षन् ।
इन्द्र उदावत् पतिमघ्न्यानामरंहत पद्याभिः ककुद्मान् ॥७॥

शुनमष्ट्राव्यचरत् कपर्दी वरत्रायां दार्वानह्यमानः ।
नृम्णानि कृण्वन् बहवे जनाय गाः पस्पशानस्तविषीरधत्त ॥८॥

इमं तं पश्य वृषभस्य युञ्जं काष्ठाया मध्ये द्रुघणं शयानम् ।
येन जिगाय शतवत् सहस्रं गवां मुद्गलः पृतनाज्येषु ॥९॥

आरे अघा को न्वी त्था ददर्श यं युञ्जन्ति तम्वा स्थापयन्ति ।
नास्मै तृणं नोदकमाभरन्त्युत्तरो धुरो वहति प्रदेदिशत् ॥१०॥

परिवृक्तेव पतिविद्यमानट् पीप्याना कूचक्रेणेव सिञ्चन् ।
एषैष्या चिद्रथ्या जयेम सुमङ्गलं सिनवदस्तु सातम् ॥११॥

---

७ विद्वान् मुद्गलने रथ-चक्रको चारों ओर बाँध दिया। बड़ी निपुणतासे उन्होंने रथमें बैलको जोता। गायोंके पति उस वृषको इन्द्रने बचाया। वह वृष बड़े वेगसे मार्गपर चला।

८ चाबुक और रस्सीवाला वा डोल (कपर्द) वाला चर्मरज्जु (वरत्रा) के द्वारा रथाङ्गको बाँधते हुए भली भाँति विचरण करने लगा। अनेक लोगोंके धनका उद्धार करने लगा। अनेकानेक गायोंको घर लाया।

९ युद्ध-सीमामें जो मुद्गल गिरा हुआ है, उसने उस वृषका साथ दिया था। इसके द्वारा मुद्गलने सैकड़ों और सहस्रों गायोंको जीता था।

१० किसीने अत्यन्त दूर देशमें वा समीपमें कभी ऐसा देखा है? जो रथमें योजित किया जाता है, वही उसपर प्रहरणके लिये बैठाया जाता है। इसे घास और जल नहीं दिया गया है; तो भी यह रथ-धुराका भार ढो रहा है। यह प्रभुको विजयी भी करता है।

११ पति-वियुक्ता स्त्रीके समान मुद्गलानीने शक्ति प्रदर्शित करके पतिके धनका ग्रहण किया—उन्होंने मानो मेघके समान बाण-वर्षण किया। ऐसे सारथिके द्वारा हम जय प्राप्त करें। हमें अन्न आदि मिले।

त्वं विश्वस्य जगतश्चक्षुरिन्द्रासि चक्षुषः ।
वृषा यदाजिं वृषणा सिषाससि चोदयन् वध्रिणा युजा ॥१२॥

१०३ सूक्त

इन्द्र और अप्वा देवता। इन्द्र-पुत्र अप्रतिरथ ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

आशुः शिशानो वृषभो न भीमो घनाघनः क्षोभणश्चर्षणीनाम् ।
संक्रन्दनोऽनिमिष एकवीर शतं सेना अजयत् साकमिन्द्रः ॥१३॥
संक्रन्दनेनानिमिषेण जिष्णुना युत्कारेण दुश्च्यवनेन धृष्णुना ।
तदिन्द्रे जयत तत् सहध्वं युधो नर इषुहस्तेन वृष्णा ॥२॥
स इषुहस्तैः स निषङ्गिभिर्वशी संस्रष्टा स युध इन्द्रो गणेन ।
संस्रष्टजित् सोमपा बाहुशर्ध्युग्रधन्वा प्रतिहिताभिरस्ता ॥३॥

१२ इन्द्र, तुम सारे संसारके नेत्र-रूप हो। जिन्हें नेत्र हैं, उनके भी तुम नेत्र हो। तुम जल-वर्षक हो। दो अश्वोंको रज्जुके द्वारा एकत्र बाँध करके चलाते और धन देते हो।



१ इन्द्र सर्वव्यापी शत्रुओंके लिये तीक्ष्ण, वृषभके समान भयंकर, शत्रुहन्ता तथा मनुष्योंको विचलित करनेवाले हैं। मनुष्य त्रस्त होते हैं। वह शत्रुओंको रुलाते और सदा चारो ओर दृष्टि रखनेवाले हैं। उन्होंने एकत्र विराट् सेनाको जीता है।

२ योद्धा मनुष्यो, इन्द्रको सहायक पाकर विजयी बनो। विपक्षको पराजित करो। वह शत्रुओंको रुलाते और सदा चारो ओर दृष्टि रखते हैं। वह युद्ध करके विजयी बनते हैं। उन्हें कोई भी स्थान-भ्रष्ट नहीं कर सकता। वह दुर्द्धर्ष हैं। उनके हाथोंमें वाण है। वह जल बरसाते हैं।

३ वाण और तुणीरवाले उनके संगमें रहते हैं। वह सबको वशमें करते हैं। युद्ध-कालमें वह विशाल शत्रुओंके साथ युद्ध करते हैं। जो उनके सामने जाता है, उसे वह जीत लेते हैं। वह सोमपान करते हैं। उनका भुजबल विलक्षण है और धनु भयावह है। उसी धनुषसे वाण छोड़कर वह शत्रुको गिराते हैं।

बृहस्पते परि दीया रथेन रक्षोहामित्राँ अपबाधमानः ।
प्रभञ्जन्त्सेनाः प्रमृणो युधा जयन्नस्माकमेध्यविता रथानाम् ॥४॥
बलविज्ञायः स्थविरः प्रवीरः सहस्वान् वाजी सहमान उग्रः ।
अभिवीरो अभिसत्वा सहोजा जैत्रमिन्द्र रथमातिष्ठ गोवित् ॥५॥
गोत्रभिदं गोविदं वज्रबाहुं जयन्तमज्म प्रमृणन्तमोजसा ।
इमं सजाता अनु वीरयध्वमिन्द्रं सखायो अनु सं रभध्वम् ॥६॥
अभि गोत्राणि सहसा गाहमानोऽदयो वीरः शतमन्युरिन्द्रः ।
दुश्च्यवनः पृतनाषालयुध्योऽस्माकं सेना अवतु प्रयुत्सु ॥७॥
इन्द्र आसां नेता बृहस्पतिर्दक्षिणा यज्ञः पुर एतु सोमः ।
देवसेनानामभिभञ्जतीनां जयन्तीनां मरुतो यन्त्वग्रम् ॥८॥

---

४ बृहस्पति, राक्षसोंका बध कर, शत्रुओंको दुःख पहुँचाकर और रथपर चढ़कर पधारो। शत्रु-सेनाको ध्वस्त करो, विपक्षके योद्धाओंको मार डालो, विजयी बनो और हमारे रथोंकी रक्षा करो।

५ इन्द्र, तुम शत्रु-बल-ज्ञाता, अनन्त कालके प्राचीन, उत्कृष्ट वीर, तेजस्वी, वेगशाली, भयंकर और विपक्ष-विजयी हो। वीरोंके प्रति दौड़ो और प्राणियोंके प्रति दौड़ो। तुम बलके पुत्र-स्वरूप हो। तुम गायोंको जीतनेके लिये जयशील रथपर चढ़ो।

६ इन्द्र मेघोंको फाड़नेवाले और गायोंको प्राप्त करनेवाले हैं। उनके हाथोंमें वज्र है। वह अस्थिर शत्रु-सैन्यको अपने तेजसे जीतते और मारते हैं। हे अपने वीरो, इन्हें आगे करके वीरता दिखाओ। सखा लोगो, इनके अनुकूल होकर पराक्रम प्रदर्शित करो।

७ सौ यज्ञ करनेवाले और वीर इन्द्र मेघोंकी ओर दौड़ते हैं। वह निर्दय बली हैं। वह कभी स्थान-भ्रष्ट नहीं होते। वह शत्रुओंकी सेनाको हराते हैं। उनके साथ कोई युद्ध नहीं कर सकता। युद्धस्थलमें वह हमारी सेनाओंको बचावें।

८ इन्द्र उन सब सेनाओंके सेनापति हैं। बृहस्पति उन सेनाओंकी दाहिनी ओर रहें। यज्ञोपयोगी सोम उनके आगे रहें। मरुद्गण शत्रु-भयकर्त्री और विजयिनी देव-सेनाओंके आगे-आगे जायँ।

इन्द्रस्य वृष्णो वरुणस्य राज्ञ आदित्यानां मरुतां शर्ध उग्रम् ।
महामनसां भुवनच्यवानां घोषो देवानां जयतामुदस्थात् ॥९॥
उद्धर्षय मघवन्नायुधान्युत् सत्वनां मामकानां मनांसि ।
उद्वृत्रहन् वाजिनां वाजिनान्युद्रथानां जयतां यन्तु घोषाः ॥१०॥
अस्माकमिन्द्रः समृतेषु ध्वजेष्वस्माकं या इषवस्ता जयन्तु ।
अस्माकं वीरा उत्तरे भवन्त्वस्माँ उ देवा अवता हवेषुः ॥११॥
अमीषां चित्तं प्रतिलोभयन्ती गृहाणाङ्गान्यप्वे परेहि ।
अभि प्रेहि निर्दह हृत्सु शोकैरन्धेनामित्रास्तमसा सचन्ताम् ॥१२॥
प्रेता जयता नर इन्द्रो वः शर्म यच्छतु ।
उग्रा वः सन्तु बाहवोऽनाधृष्या यथासथ ॥१३॥

---

९ वारि-वर्षक इन्द्र, राजा वरुण, आदित्यगण और मरुद्गणकी शक्ति अत्यन्त भयानक है। महानुभाव देवतालोग जिस समय भुवनको कँपाकर विजयी होने लगे, उस समय कोलाहल उपस्थित हुआ ।

१० इन्द्र, अस्त्र-शस्त्र प्रस्तुत करो। हमारे अनुचरोंके मनको उत्साहित करो। वृत्रघ्न इन्द्र, घोड़ोंका बल बढ़े। जयशील रथकी निर्घोष-ध्वनि उठे ।

११ जिस समय पताका फहरायी जाती है, उस समय इन्द्र हमारी ही ओर रहते हैं। हमारे बाण विजयी हों। हमारे वीर श्रेष्ठ हों, देवो, युद्धमें हमारी रक्षा करो।

१२ हे पापाभिमानी देवता (अप्वा), तुम चले जाओ और उन शत्रुओंके मनको प्रलुब्ध करो। उनके शरीरोंमें पैठो। उनकी ओर जाओ। शोकके द्वारा उनके हृदयमें दाह उत्पन्न करो। शत्रु लोग अन्धकारमयी रजनीमें एकत्र हों।

१३ मनुष्यो, अग्रसर होओ। जयी होओ । इन्द्र तुम्हें सुखी करें । तुमलोग जैसे दुर्द्धर्ष हो, वैसी ही भयंकर तुम्हारी बाँहें हों ।

---

१०४ सूक्त

इन्द्र देवता। विश्वामित्र-पुत्र अष्टक ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

असावि सोमः पुरुहूत तुभ्यं हरिभ्यां यज्ञमुप याहि तूयम् ।
तुभ्यं गिरो विप्रवीरा इयाना दधन्विर इन्द्र पिबा सुतस्य ॥१॥
अप्सु धूतस्य हरिवः पिबेह नृभिः सुतस्य जठरं पृणस्व ।
मिमिक्षुर्यमद्रय इन्द्र तुभ्यं तेभिर्वर्धस्व मदमुक्थवाहः ॥२॥
प्रोग्रां पीतिं वृष्ण इयर्मि सत्यां प्रयै सुतस्य हर्यश्व तुभ्यम् ।
इन्द्र धेनाभिरिह मादयस्व धीभिर्विश्वाभिः शच्या गृणानः ॥३॥
ऊती शचीवस्तव वीर्येण वयो दधाना उशिज ऋतज्ञाः ।
प्रजावदिन्द्र मनुषो दुरोणे तस्थुर्गृणन्तः सधमाद्यासः ॥४॥

१ बहुतोंके द्वारा आहूत इन्द्र, तुम्हारे लिये सोम अभिषुत हुआ है। दोनों घोड़ोंके द्वारा शीघ्र ही यज्ञमें पधारो। प्रधान-प्रधान स्तोताओंने, तुम्हारे लिये, स्तोत्र पाठ करके यह सोम दिया है। इन्द्र, सोम-पान करो।

२ हरि नामक घोड़ोंके स्वामी इन्द्र, कर्मकर्त्ता जिसे प्रस्तुत और जलमें परिष्कृत करके ले आये हैं, उसी सोमका पान करो। उदर भरो। तुम्हारे लिये पत्थरोंने जो सेवन किया है, उसके द्वारा मत्त होओ और अपनी स्तुतियोंको ग्रहण करो।

३ हरि नामक घोड़ोंके प्रभु इन्द्र, सोम अभिषुत (प्रस्तुत) हुआ है। तुम वर्षक हो। तुम्हारे यज्ञागमनकी सम्भावना देखकर तुम्हारे पानके लिये सोम प्रेरित करता हूँ। इन्द्र, उत्तमोत्तम स्तोत्र पाकर आमोद करो। विविध कार्य करो। नाना प्रकारसे तुम्हारा स्तोत्र हो।

४ क्षमताशाली इन्द्र, उशिज् वंशवाले यज्ञ करना जानते हैं। जो लोग तुम्हारा आश्रय पाकर, तुम्हारे प्रभावसे अन्न लाभ करके और सन्तान-प्राप्ति करके यजमानके घरमें रह गये, वे सब आनन्द-निमग्न होकर तुम्हारी स्तुति करने लगे।

प्रणीतिर्भिष्टे हर्यश्व सुष्टोः सुषुम्नस्य पुरुरुचो जनासः ।
मन्हिष्ठामूतिं वितिरे दधानाः स्तोतार इन्द्र तव सूनृताभिः ॥५॥
उप ब्रह्माणि हरिवो हरिभ्यां सोमस्य याहि पीतये सुतस्य ।
इन्द्र त्वा यज्ञः क्षममाणमानट् दाश्वाँ अस्यध्वरस्य प्रकेतः ॥६॥
सहस्रवाजमभिमातिषाहं सुतेरणं मघवानं सुवृक्तिम् ।
उपभूषन्ति गिरो अप्रतीतमिन्द्रं नमस्या जरितुः पनन्त ॥७॥
सप्तापो देवीः सुरणा अमृक्ता याभिः सिन्धुमतर इन्द्र पूर्भित् ।
नवतिं स्रोत्या नव च स्रवन्तीर्देवेभ्यो गातुं मनुषे च विन्दः ॥८॥
अपो महीरभिशस्तेरमुञ्चोऽजागरास्वधि देव एकः ।
इन्द्र यास्त्वं वृत्रतूर्ये चकर्थ ताभिर्विश्वायुस्तन्वं पुपुष्या ॥९॥

५ हरि नामक घोड़ोंके स्वामी इन्द्र, तुम्हारा स्तोत्र सुन्दर है। तुम्हारा धन आश्चर्यजनक है और तुम्हारी उज्ज्वलता अत्यन्त है। तुम जो कुछ सुन्दर और यथार्थ स्तोत्र बना चुके हो अथवा धनादि प्रदान कर चुके हो, उनसे तुम्हारी स्तुति करके अनेकोंने आत्मरक्षा की है और दूसरोंकी भी रक्षा की है।

६ हरियोंके प्रभु इन्द्र, जो सोम अभिषुत किया गया है, उसे पीनेके लिये हरि नामके दोनों घोड़ोंके द्वारा सारे यज्ञोंमें जाया करते हो। तुम शक्तिशाली हो। तुम्हें ही यज्ञ प्राप्त करते हैं। यज्ञीय विषयको समझ करके तुम दान करते हो।

७ जिनके पास असीम अन्न है, जो शत्रुओंको पराजित करते हैं, जो सोमसे प्रसन्न होते हैं, जिनका स्तोत्र करनेपर आनन्द मिलता है और जिनके विपक्षमें कोई नहीं जा सकता, उन्हें स्तोत्र विभूषित करते हैं और स्तोताओंके प्रणाम उनकी पूजा करते हैं।

८ इन्द्र, रमणीय और अमित गतिवाली गङ्गा आदि सात नदियोंके द्वारा तुमने शत्रु-पुरियोंको नष्ट करके सिन्धुको (सागरको) बढ़ाया। तुमने देवों और मनुष्योंके उपकारके लिये निन्यानवे नदियोंका मार्ग परिष्कृत किया है।

९ तुमने जलका आवरण खोल दिया है। तुम जल लानेको अकेले ही प्रस्तुत हुए थे। इन्द्र, वृत्र-वधके उपलक्षमें तुमने जो कार्य किये हैं, उनके द्वारा सारे संसारके शरीरका पोषण किया है।

वीरेण्यः क्रतुरिन्द्रः सुशस्तिरुतापि धेना पुरुहूतमीट्टे ।
आर्दयद्वृत्रमकृणोदु लोकं ससाहे शक्रः पृतना अभिष्टिः ॥१०॥
शुनं हुवेम मघवानमिन्द्रमस्मिन् भरे नृतमं वाजसातौ ।
शृण्वन्तमुग्रमूतये समत्सु घ्नन्तं वृत्राणि सञ्जितं धनानाम् ॥११॥

१०५ सूक्त

इन्द्र देवता। उत्सके पुत्र सुमित्र वा दुर्मित्र ऋषि। गायत्री आदि छन्द।

कदा वसो स्तोत्रं हर्यत आव श्मशा रुधद्वाः । दीर्घं सुतं वाताप्याय ॥१॥
हरी यस्य सुयुजा विव्रता वेरर्वन्तानु शेपा ।
उभा रजी न केशिना पतिर्दन् ॥२॥
अप योरिन्द्रः पापज आ मर्तो न शश्रमाणो बिभीवान् ।
शुभे यद्युयुजे तवीषीवान् ॥३॥

---

१० इन्द्र, महावीर और क्रिया-कुशल हैं। उनका स्तोत्र करनेपर आनन्द होता है। उत्तम स्तोत्र उदित होकर उनकी पूजा करता है। उन्होंने वृत्रका बध किया, संसारको बनाया, शक्तिशाली हो शत्रु-पराभव किया और शत्रु-सेनाके प्रतिकूल गये।

११ स्थूलकाय और धनी इन्द्रको बुलाते हैं। युद्धके समय जब कि अन्न आदिको बाँटा जायगा, तब इन्द्र ही प्रधानतया अध्यक्षता करेंगे। अपने पक्षकी रक्षाके लिये वह युद्धमें उग्र मूर्त्ति धारण करते, शत्रुओंको मारते, वृत्रोंका नाश करते और धन जीतते हैं।



१ इन्द्र, तुम स्तोत्राभिलाष करते हो। स्तोत्र किया गया है। वृष्टिके लिये यथेष्ट सोम प्रस्तुत किया गया है। हमारे खेतकी जल-प्रणाली कब जल-पूर्ण होगी?

२ उनके दो घोड़े सुशिक्षित हैं। वे अनेक कार्य करते हैं। वे दोनों शुभ्र और केशवाले हैं। उनके स्वामी इन्द्र, दान करनेके लिये आवें।

३ शोभाके लिये जिस समय बली इन्द्रने घोड़ोंको जोता, उस समय सारे पाप-फल दूर हुए, उस समय मनुष्य सुखी हुए।

सचायोरिन्द्रश्चकृष आँ उपानसः सपर्यन् ।
नद्योर्विव्रतयोः शूर इन्द्रः ॥४॥
अधि यस्तस्थौ केशवन्ता व्यचस्वन्ता न पुष्ट्यै ।
वनोति शिप्राभ्यां शिप्रिणीवान् ॥५॥
प्रास्तौदृष्वौजा ऋष्वेभिस्ततक्ष शूरः शवसा । ऋभुर्न क्रतुभिर्मातरिश्वा ॥६॥
वज्रं यश्चक्रे सुहनाय दस्यवे हिरीमशो हिरीमान् ।
अरुतहनुरद्भुतं न रजः ॥७॥
अव नो वृजिना शिशीह्यृचा वनेमानृचः
नाब्रह्मा यज्ञ ऋधग्जोषति त्वे ॥८॥
ऊर्ध्वा यत्ते त्रेतिनी भूद्यज्ञस्य धूर्षु सद्मन् ।
सजूर्नावं स्वयशसं सचायोः ॥९॥

४ मनुष्योंसे पूजा पाकर इन्द्रने सारे धनोंको एकत्र कर डाला। वे नाना कार्य करनेवाले और शब्दायमान दो घोड़े चलाने लगे।

५ केशवाले और विशाल, दोनों घोड़ोंपर चढ़कर, अपनी देहकी पुष्टिके लिये इन्द्र अपने सुघटित दोनों जबड़ोंको चलाते हुए आहार माँगने लगे।

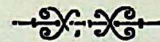
६ इन्द्रकी शक्ति अतीव सुन्दर है। वह सुशोभन हैं। वह मरुतोंके साथ यजमानको साधुवाद करते हैं। वह अन्तरिक्षमें रहते हैं। जैसे ऋभुओंने कर्म-कौशलसे रथ आदिका निर्माण किया है, वैसे ही वीर इन्द्रने अपने बलसे अनेक वीर-कार्य किये हैं।

७ दस्युका बध करनेके लिये उन्होंने वज्र प्रस्तुत किया था। उनके श्मश्रु (दाढ़ी-मूँछ) हरितवर्ण हैं। उनके घोड़े भी हरितवर्ण हैं। उनके जबड़े सुन्दर हैं। वह आकाशके समान विशाल हैं।

८ इन्द्र, हमारे सारे पापोंको विनष्ट करो। हम ऋचाओंके प्रभावसे ऋक्शून्य व्यक्तियोंका बध कर सकें। जिस यज्ञमें स्तुतिका संसर्ग नहीं है, वह कभी भी स्तोत्रवाले यज्ञके समान तुम्हें प्रीतिप्रद नहीं होता।

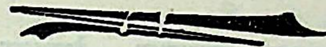
९ जिस समय यज्ञभार-वाहक ऋत्विकोंने यज्ञ-गृहमें कार्यारम्भ किया, उस समय तुम यजमानके साथ एक नौकापर चढ़कर यजमानको तारो।

श्रिये ते पृश्निरुपसेचनी भूच्छ्रिये दर्विररेपाः ।
यया स्वे पात्रे सिञ्चस उत् ॥१०॥
शतं वा यदसुर्य प्रति त्वा सुमित्र इत्थास्तौद्दुर्मित्र इत्थास्तौत् ।
आवो यद्दस्युहत्ये कुत्सपुत्रं प्रावो यद्दस्युहत्ये कुत्सवत्सम् ॥११॥



१० दूधवाली गाय तुम्हारे मङ्गलके लिये हो । जिस पात्रके द्वारा तुम अपने पात्रमें मधु ले लेते हो, जिस पात्रके द्वारा तुम अपने पात्रमें मधु ले लेते हो, वह दर्वी (पात्र-विशेष) निर्मल और कल्याण-कर हो ।

११ बली इन्द्र, तुम्हारे लिये इस प्रकारसे सुमित्रने एक सौ स्तोत्र पढ़े — दुर्मित्रने भी स्तुति की; क्योंकि तुमने दस्यु-हत्याके समय कुत्स-पुत्रकी रक्षा की है ।



पञ्चम अध्याय समाप्त

षष्ठ अध्याय

१०६ सूक्त

अश्विद्वय देवता। कश्यप-पुत्र भूतांश ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

उभा उ नूनं तदिदर्थयेथे वि तन्वाथे धियो वस्त्रापसेव।
सध्रीचीना यातवे प्रेमजीगः सुदिनेव पृक्ष आ तंसयेथे ॥१॥
उष्टारेव फर्वरेषु श्रयेथे प्रायोगेव श्वात्र्या शासुरेथः।
दूतेव हि ष्ठो यशसा जनेषु माप स्थातं महिषेवावपानात् ॥२॥
साकंयुजा शकुनस्येव पक्षा पश्वेव चित्रा यजुरा गमिष्टम्।
अग्निरिव देवयोर्दीदिवांसा परिज्मानेव यजथः पुरुत्रा ॥३॥

---

१ अश्विद्वय, तुम दोनों हमारी आहुतिके अभिलाषी हो रहे हो। जैसे जैसे तन्तुवाय वस्त्रका विस्तार करता है, वैसे ही तुमलोग हमारे स्तोत्रका विस्तार कर देते हो। यह यजमान यह कहकर भली भाँति तुम लोगोंकी स्तुति करता है कि, तुम लोग एक साथ आते हो। चन्द्र-सूर्यके समान तुम लोग खाद्य द्रव्यको आलोकित करके बैठे हो।

२ जैसे दो बैल गोचर भूमिमें विचरण करते हैं, वैसे ही तुम लोग यज्ञ-दान-समर्थ व्यक्तिके पास जाते हो। रथमें जोते दो वृषों वा अश्वोंके समान धन-दानके लिये तुमलोग स्तोताके पास आया करते हो। दूतके समान तुमलोग लोगोंके पास यशस्वी बनो। जैसे दो महिष जल-पान-स्थानसे नहीं हटते, वैसे ही तुमलोग भी सोमपानसे नहीं हटना।

३ जैसे पक्षीके दो पंख आपसमें मिले रहते हैं, वैसे ही तुमलोग भी परस्पर मिले हुए हो। दो अद्भुत पशुओंके समान इस यज्ञमें आये हो। यज्ञ-कर्त्ता अग्निके समान तुमलोग दीप्ति-वाले हो। सर्वत्रविहारी दो पुरोहितोंके समान तुमलोग नाना स्थानोंमें देव-पूजा किया करते हो।

आपी वो अस्मे पितरेव पुत्रोग्रेव रुचा नृपतीव तुर्यै ।
इर्येव पुष्ट्यै किरणेव भुज्यै श्रुष्टीवानेव हवमा गमिष्टम् ॥४॥
वंसगेव पूषर्या शिम्बाता मित्रेव ऋता शतरा शातपन्ता ।
वाजेवोच्चा वयसा घर्म्येष्ठा मेषेवेषा सपर्या पुरीषा ॥५॥
सृण्येव जर्भरी तुर्फरी तू नैतोशेव तुर्फरी पर्फरीका ।
उदन्यजेव जेमना मदेरू ता मे जराय्वजरं मरायु ॥६॥
पज्रेव चर्चरं जारं मरायु क्षद्मेवार्थेषु तर्तरीथ उग्रा ।
ऋभू नापत् खरमज्रा खरज्रुर्वायुर्न पर्फरत् क्षयद्रयीणाम् ॥७॥

४ जैसे माता-पिता पुत्रके प्रति आसक्त रहते हैं, वैसे ही तुमलोग हमारे प्रति होओ। तुमलोग अग्नि और सूर्यके समान दीप्तिशील होओ, राजाके समान क्षिप्रकारी होओ, धनी व्यक्तिके समान उपकारी होओ और सूर्य-किरणोंके समान आलोक देते हुए लोगोंके सुख-भोगके अनुकूल होओ। सुखी मनुष्यके समान इस यज्ञमें पधारो।

५ सुन्दर गतिवाले दो वृषोंके समान तुमलोग हृष्ट-पुष्ट और सुदृश्य हो तथा मित्र और वरुणके समान तुम लोग यथार्थदर्शी, वदान्य और दुःख-ह्रास-पूर्वक स्तुति प्राप्त करते हो। दो घोड़ोंके समान तुमलोग खाकर मोटे-तगड़े हो गये हो। तुमलोग प्रकाशमय आकाशमें रहते हो। भेड़ोंके समान तुमलोग यथेष्ट भोजनादि करके सुघटित अङ्ग-प्रत्यङ्गवाले हुए हो।

६ हाथीको रोकनेवाले और मारनेवाले अङ्कुशोंके समान तुमलोग रोकनेवाले वा भरण करनेवाले (जर्भरि) और हन्ता (तुर्फरि) हो। हन्ता (नैतोश) के समान तुम लोग शत्रुओंके मारनेवाले हो; इसीलिये तुमलोगोंको शत्रु-विदारक (फर्फरीका) अथवा यजमान-पालक कहा गया है। तुमलोग ऐसे निर्मल हो, मानो जलमें उत्पन्न हुए हो, तुमलोग बली और विजयी हो। मेरी मरण-धर्मशील देहको फिर यौवन दो।

७ तीव्रबली अश्विद्वय, जैसे दीर्घ चरणवाला व्यक्ति दूसरेको जलसे पार कर देता है, वैसे ही तुमलोग मेरी मरण-धर्मशील देहको विपत्तिसे पार करके अभिलषित विषयमें ले चलो। ऋभुके समान तुमने अत्यन्त संस्कृत रथ पाया है। वह शीघ्रगामी रथ वायुके समान उड़कर शत्रुका धन ले आया है।

घर्मेव मधु जठरे सनेरू भगेऽविता तुर्फरी फारिवारम् ।
पतरेव चचरा चन्द्रनिर्णिङ्मनऋङ्गा मनन्या न जग्मी ॥८॥
बृहन्तेव गम्भरेषु प्रतिष्ठां पादेव गाधं तरते विदाथः ।
कर्णेव शासुरनु हि स्मराथोंऽशेव नो भजतं चित्रमप्नः ॥९॥
आरङ्गरेव मध्वेरयेथे सारघेव गवि नीचीनवारे ।
कीनारेव स्वेदमासिष्विदाना क्षामेवोर्जा सूयवसात् सचेथे ॥१०॥
ऋध्याम स्तोमं सनुयाम वाजमा नो मन्त्रं सरथेहोप यातम् ।
यशो न पक्वं मधु गोष्वन्तरा भूतांशो अश्विनोः काममप्राः ॥११॥

---

८ महावीरके समान तुमलोग अपने पेटमें घृत गिरा लो। तुमलोग धनके रक्षक और अस्त्र लेकर शत्रुओंके बध-कर्त्ता हो। तुमलोग पक्षीके समान सुन्दर और सर्वत्रविहारी हो। इच्छा करनेके साथ ही तुमलोग भूषित होते हो और स्तोत्रके लिये यज्ञमें आते हो।

९ जैसे लम्बे पैर रहनेपर, गम्भीर जलके पार होनेके समय, आश्रय मिलता है, वैसे ही तुम लोग आश्रय दो। तुम लोग, दोनों कानोंके समान, स्तोताकी स्तुतिको, ध्यानसे, सुनते हो। दो यज्ञाङ्गोंके समान हमारे इस विचित्र यज्ञमें पधारो।

१० जैसे बोलनेवाली दो मधुमक्खियाँ मधुके छातेमें मधुका सेचन करती हैं, वैसे ही तुम लोग गायके स्तनमें मधुतुल्य दुग्धका संचार कर दो। जैसे श्रमजीवी श्रम करके पसीनेसे तर हो जाता है, वैसे ही तुमलोग भी स्वेदवाले होकर जल-सेचन करो। जैसे दुर्बल गाय गोचर भूमिमें जाकर अपना आहार पाती है, वैसे ही तुमलोग भी यज्ञमें आकर आहार पाते हो।

११ हम स्तोत्र-विस्तार करते हैं और आहारका वितरण करते हैं; इसलिये तुमलोग एक रथपर चढ़कर हमारे यज्ञमें आओ। गायके स्तनमें सुमिष्ट आहारके समान दुग्ध है। भूतांश ऋषिने यह स्तोत्र करके अश्विद्वयका मनोरथ पूर्ण किया।

१०७ सूक्त

प्रजापति-पुत्री दक्षिणा देवता। आङ्गिरस दिव्य ऋषि। त्रिष्टुप् और जगती छन्द।

आविरभून्महि माघोनमेषां विश्वं जीवं तमसो निरमोचि।
महि ज्योतिः पितृभिर्दत्तमागादुरुः पन्था दक्षिणाया अदर्शि ॥१॥
उच्चा दिवि दक्षिणावन्तो अस्थुर्ये अश्वदाः सह ते सूर्येण।
हिरण्यदा अमृतत्वं भजन्ते वासोदाः सोम प्र तिरन्त आयुः ॥२॥
दैवी पूर्तिर्दक्षिणा देवयज्या न कवारिभ्यो नहि ते पृणन्ति।
अथा नरः प्रयतदक्षिणासोऽवद्यभिया बहवः पृणन्ति ॥३॥
शतधारं वायुमर्कं स्वर्विदं नृचक्षसस्ते अभिचक्षते हविः।
ये पृणन्ति प्र च यच्छन्ति सङ्गमे ते दक्षिणां दुहते सप्तमातरम् ॥४॥

---

१ इन यजमानोंके यज्ञ-निर्वाहके लिये सूर्य-रूपी इन्द्रका विपुल तेज प्रकट हुआ। सारे प्राणी अन्धकारसे बाहर आये। पितरोंके द्वारा दी गयी ज्योति उपस्थित हुई। दक्षिणा देनेकी प्रशस्त पद्धति उपस्थित हुई।

२ जो लोग दक्षिणा देते हैं, वे स्वर्गमें उच्च आसन पाते हैं। अश्वदाता सूर्यके साथ एकत्र होते हैं। सुवर्णदाता अमरता पाते हैं। वस्त्रदाता लोग सोमके पास जाते हैं। सभी दीर्घायु होते हैं।

३ दक्षिणाके द्वारा पुण्य कर्मकी पूर्णता प्राप्त की जाती है—यह देव-पूजाका अङ्ग-स्वरूप है। जिनका आचरण खराब है, उनका कार्य देवता लोग नहीं पूरा करते। जो लोग पवित्र दक्षिणा देते हैं, निन्दासे डरते हैं, वे अपने कर्मको पूर्ण करते हैं।

४ जो वायु सैकड़ो मार्गोंसे बहता है, उसके लिये, आकाश, सूर्य तथा अन्यान्य मनुष्य-हितैषी देवोंके लिये होमीय द्रव्य (हवि) दिया जाता है। जो लोग देवोंको तृप्त करते और दान देते हैं, उनका मनोरथ दक्षिणा पूरा करती है। यह दक्षिणा पानेके अधिकारी सात पुरोहित विद्यमान हैं।

दक्षिणावान् प्रथमो हूत एधि दक्षिणावान् ग्रामणीरग्रमेति ।
तमेव मन्ये नृपतिं जनानां य प्रथमो दक्षिणामाविवाय ॥५॥
तमेव ऋषिं तमु ब्रह्माणमाहुर्यज्ञन्यं सामगामुक्थशासम् ।
स शुक्रस्य तन्वो वेद तिस्रो यः प्रथमो दक्षिणया रराध ॥६॥
दक्षिणाश्वं दक्षिणा गां ददाति दक्षिणा चन्द्रमुत यद्धिरण्यम् ।
दक्षिणान्नं वनुते यो न आत्मा दक्षिणां वर्म कृणुते विजानन् ॥७॥
न भोजा मम्रुर्न न्यर्थमीयुर्न रिष्यन्ति न व्यथन्ते ह भोजाः ।
इदं यद्विश्वं भुवनं स्वश्चैतत् सर्वं दक्षिणैभ्यो ददाति ॥८॥
भोजा जिग्युः सुरभिं योनिमग्रे भोजा जिग्युर्वध्वं या सुवासाः ।
भोजा जिग्युरन्तः पेयं सुराया भोजा जिग्युर्ये अहूताः प्रयन्ति ॥९॥
भोजायाश्वं संमृजन्त्याशुं भोजायास्ते कन्या शुम्भमाना ।
भोजस्येदं पुष्करिणीव वेश्म परिष्कृतं देवमानेव चित्रम् ॥१०॥

---

५ दाताको सबसे पहले बुलाया जाता है। वह ग्रामाध्यक्ष होते हैं और सबके आगे-आगे जाते हैं। जो सबसे पहले दक्षिणा देते हैं, उन्हें मैं सबका राजा जानता हूं।

६ जो सर्व-प्रथम दक्षिणा देकर पुरोहितको तुष्ट करते हैं, वे ही ऋषि और ब्रह्मा कहे जाते हैं, वे ही यज्ञके अध्यक्ष, सामगाता और स्तोता कहे जाते हैं। वे अग्निकी तीनों मूर्त्तियोंको जानते हैं।

७ दक्षिणामें अश्व, गाय और मनःप्रसादकर सुवर्ण पाया जाता है। हमारा आत्म-स्वरूप जो आहार है, वह भी दक्षिणासे पाया जाता है। विद्वान् व्यक्ति दक्षिणाका, देह-रक्षक कवचके समान, व्यवहार करते हैं।

८ दाताओंकी मृत्यु नहीं होती—वे देवता हो जाते हैं। वे दरिद्र नहीं होते—वे क्लेश, व्यथा वा दुःख भी नहीं पाते। इस पृथिवी वा स्वर्गमें जो कुछ है, सो सब उन्हें दक्षिणा देती है।

९ घी, दूध देनेवाली गायको तो दाता लोग सबसे पहले पाते हैं। वे सुन्दर परिच्छद वाली नवोढ़ा स्त्री पाते हैं। वे सुरा (मदिरा का सार) (क्या सोम?) पाते हैं। दातालोग ही चढ़ा-ऊपरी करनेवाले शत्रुओंको जीतते हैं।

१० दाताको शीघ्रगन्ता अश्व, अलङ्कृत करके, दिया जाता है। उसके लिये सुन्दरी स्त्री उपस्थित रहती है। पुष्करणीके समान निर्मल और देवालयके समान मनोहर गृह दाताके लिये ही विद्यमान है।

भोजमश्वाः सुष्ठुवाहो वहन्ति सुवृद्रथो वर्तते दक्षिणायाः ।
भोजं देवासोऽवता भरेषु भोजः शत्रून्त्समनीकेषु जेता ॥११॥

१०८ सूक्त

पणिगण और सरमा देवता तथा ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

किमिच्छन्ती सरमा प्रेदमानड् दूरे ह्यध्वा जगुरिः पराचैः ।
कास्मेहितिः का परितक्म्यासीत् कथं रसाया अतरः पयांसि ॥१॥
इन्द्रस्य दूतीरिषिता चरामि मह इच्छन्ती पणयो निधीन् वः ।
अतिष्कदो भियसा तन्न आवत्तथा रसाया अतरं पयांसि ॥२॥
कीदृङ्ङिन्द्रः सरमे का दृशीका यस्येदं दूतीरसरः पराकात् ।
आ च गच्छान्मित्रमेना दधामाथा गवां गोपतिर्नो भवाति ॥३॥

---

११ सुन्दर वहनकर्त्ता अश्वदाताको ले जाते हैं। उसीके लिये सुघटित रथ विद्यमान है। युद्धके समय देवतालोग दाताकी रक्षा करते हैं। युद्धमें दाता शत्रुओंको जीतता है।

१ (पणियोंकी उक्ति—) सरमा, तुम क्या किसी प्रार्थनाके लिये यहाँ आयी हो? यह मार्ग तो बहुत दूरका है। इस मार्गपर आते समय पीछेकी ओर दृष्टि फेंकनेपर नहीं आना हो सकता। हमारे पास ऐसी कौनसी वस्तु है, जिसके लिये तुम आयी हो? कितनी रातोंमें आयी हो? नदीके जलका पार कैसे किया?

२ (सरमाकी उक्ति—) पणिगण, इन्द्रकी दूती होकर मैं आयी हूं। तुमने जो गोधन एकत्र किया है, उसे ग्रहण करनेकी मेरी इच्छा है। जलने मुझे बचाया है। जलका डर तो हुआ था; किन्तु पीछे उसे लाँघकर मैं चली आयी। इस प्रकार मैं नदीके पार चली आयी।

३ (पणियोंकी उक्ति—) सरमा, जिन इन्द्रकी दूती बनकर तुम इतनी दूरसे आयी हो, वह इन्द्र कैसे हैं? उनका कितना पराक्रम है? उनकी कैसी सेना है? इन्द्र आवें। उन्हें हम मित्र माननेको प्रस्तुत हैं। वे हमारी गायें लेकर उनके स्वत्वाधिकारी बनें।

नाहं तं वेद दभ्यं दभत् स यस्येदं दूतीरसरं पराकात् ।
न तं गूहन्ति स्रवतो गभीरा हता इन्द्रेण पणयः शयध्वे ॥४॥
इमा गावः सरमे या ऐच्छः परि दिवो अन्तान्त्सुभगे पतन्ती ।
कस्त एना अव सृजादयुध्व्युतास्माकमायुधा सन्ति तिग्मा ॥५॥
असेन्या वः पणयो वचांस्यनिषव्यास्तन्वः सन्तु पापीः ।
अधृष्टो व एतवा अस्तु पन्था बृहस्पतिर्व उभया न मृळात् ॥६॥
अयं निधिः सरमे अद्रिबुध्नो गोभिरश्वेभिर्वसुभिर्न्यृष्टः ।
रक्षन्ति तं पणयो ये सुगोपा रेकु पदमलकमा जगन्थ ॥७॥
एह गमन्नृषयः सोमशिता अयास्यो अङ्गिरसो नवग्वाः ।
त एतमूर्वं वि भजन्त गोनामथैतद्वचः पणयो वमन्नित् ॥८॥

---

४ (सरमाकी उक्ति—) जिन इन्द्रकी दूती बनकर मैं दूर देशसे आयी हूँ, उन्हें कोई हरा नहीं सकता। वे ही सबको हराते हैं। गहन-गम्भीर नदियाँ भी उनकी गतिको रोकनेमें समर्थ नहीं हैं। पणियो, तुम्हें निश्चय ही इन्द्र मारकर सुला देंगे।

५ (पणियोंकी उक्ति—) सुन्दरी सरमा, तुम स्वर्गकी शेष सीमापरसे आ रही हो; इसलिये इन गायोंमेंसे जिन-जिनको चाहो, हम तुम्हें दे सकते हैं। विना युद्धके कौन तुम्हें गायें देता? हमारे पास भी अनेक तीक्ष्ण आयुध हैं।

६ (सरमा=इन्द्रकी कुतियाकी उक्ति—) तुम्हारी बातें सैनिकोंके योग्य नहीं हैं। तुम्हारे शरीरोंमें पाप है। ये शरीर कहीं इन्द्रके वाणोंका लक्ष्य न हो जायँ। तुम्हारे यहाँ यह जो आनेका मार्ग है, इसपर देवतालोग कहीं आक्रमण न कर बैठें। मुझे सन्देह है कि, पीछे बृहस्पति तुम्हें क्लेश देंगे—यदि तुम गायें नहीं दे दोगे, तो आपदाएँ सन्निकट हैं।

७ (पणियोंकी उक्ति—) सरमा, हमारी सम्पत्ति पर्वतोंके द्वारा सुरक्षित है—गायों, अश्वों और अन्यान्य धनोंसे पूर्ण है। रक्षा-कार्यमें समर्थ पणि लोग इस सम्पतिकी रखवाली करते हैं। गायोंके द्वारा शब्दायमान हमारे स्थानको तुम व्यर्थ ही आयी हो।

८ (सरमाकी उक्ति—) आङ्गिरस अयास्य ऋषि और नवगुगण, सोम-पानसे प्रमत्त होकर, यहाँ आवेंगे और इन सारी गायोंका भाग करके इन्हें ले जायँगे। पणियो, उस समय तुम्हें ऐसी दर्पोक्ति छोड़नी पड़ेगी।

एवा च त्वं सरम आजगन्थ प्रबाधिता सहसा दैव्येन ।
स्वसारं त्वा कृणवै मा पुनर्गा अप ते गवां सुभगे भजाम ॥९॥
नाहं वेद भ्रातृत्वं नो स्वसृत्वमिन्द्रो विदुरङ्गिरसश्च घोराः ।
गोकामा मे अच्छदयन्यदायमपात इत पणयो वरीयः ॥१०॥
दूरमित पणयो वरीय उद्गावो यन्तु मिनतीर्ऋतेन ।
बृहस्पतिर्या अविन्दन्निगूह्ळाः सोमो ग्रावाण ऋषयश्च विप्राः ॥११॥

---

१०९ सूक्त

विश्वदेव देवता । ब्रह्मवादिनी जुहू ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

तेऽवदन् प्रथमा ब्रह्मकिल्बिषेऽकूपारः सलिलो मातरिश्वा ।
वीलुहरास्तप उग्रो मयोभूरापो देवीः प्रथमजा ऋतेन ॥१॥

---

९ (पणिगणकी उक्ति—) सरमा, डरकर देवोंने तुम्हें यहाँ भेजा है; इसीलिये तुम आयी हो। तुम्हें हम भगिनी-स्वरूप समझते हैं। तुम अब नहीं लौटना। सुन्दरी, हम गोधनका भाग देते हैं।

१० (सरमाकी उक्ति—) मैं भ्राता और भगिनीकी कथा नहीं समझ सकती। इन्द्र और पराक्रमी अङ्गिरोवंशीय जानते हैं कि, गायें पानेके लिये मुझे उन्होंने, रक्षा-पूर्वक, भेजा है। मैं उनका आश्रय पाकर आयी हूं। पणियो, यहांसे बहुत दूर भाग जाओ।

११ पणियो, यहाँसे बहुत दूर भाग जाओ। गायें कष्ट पा रही हैं। वे धर्मके आश्रयमें इस पर्वतसे लौट चलें। बृहस्पति, सोम, सोमाभिषव-कर्त्ता पत्थर, ऋषि और मेधावी लोग इस गुप्त स्थानमें स्थित गायोंकी बात जान गये हैं।

---

१ जिस समय बृहस्पतिने अपनी पत्नी जुहूका त्याग कर दिया—इस प्रकार ब्रह्म-किल्बिष प्राप्त किया, उस समय सूर्य, शीघ्रगामी वायु, प्रज्वलित अग्नि, सुखकर सोम, जलके अधिष्ठाता देवता वरुण और सत्यस्वरूप प्रजापतिकी अन्य सन्ततियोंने कहा—प्रायश्चित्त कराया।

सोमो राजा प्रथमो ब्रह्मजायां पुनः प्रायच्छदहृणीयमानः ।
अन्वर्तिता वरुणो मित्र आसीदग्निर्होता हस्तगृह्यानिनाय ॥२॥
हस्तेनैव ग्राह्य आधिरस्या ब्रह्मजायेयमिति चेदवोचन् ।
न दूताय प्रह्ये तस्थ एषा तथा राष्ट्रं गुपितं क्षत्रियस्य ॥३॥
देवा एतस्यामवदन्त पूर्वे सप्तऋषयस्तपसे ये निषेदुः ।
भीमा जाया ब्राह्मणस्योपनीता दुर्धां दधाति परमे व्योमन् ॥४॥
ब्रह्मचारी चरति वेविषद्विषः स देवानां भवत्येकमङ्गम् ।
तेन जायामन्वविन्दद्बृहस्पतिः सोमेन नीतां जुह्वं न देवाः ॥५॥
पुनर्वै देवा अददुः पुनर्मनुष्या उत ।
राजानः सत्यं कृण्वाना ब्रह्मजायां पुनर्ददुः ॥६॥
पुनर्दाय ब्रह्मजायां कृत्वी देवैर्निकिल्बिषम् ।
ऊर्जं पृथिव्या भक्त्वायोरुगायमुपासते ॥७॥

२ लज्जा छोड़कर सोम राजाने पवित्र-चरित्रा स्त्रीको सर्व-प्रथम बृहस्पतिको दिया। मित्र और वरुणने इसका अनुमोदन किया। होम-निष्पादक अग्नि हाथसे पकड़कर पत्नीको ले आये।

३ "इन पत्नीकी देहको हाथसे छूना चाहिये--ये यथाविधि विवाहित पत्नी हैं।"--ऐसा सबने कहा। इन्हें खोजनेके लिये जो दूत भेजा गया था, उसके प्रति ये अनासक्त रहीं। जैसे बली राजाका राज्य सुरक्षित रहता है, वैसे ही इनका सतीत्व सुरक्षित रहा।

४ तपस्यामें प्रवृत्त सप्तर्षियों और प्राचीन देवोंने इन पत्नीकी बात कही है। ये अत्यन्त शुद्ध-चरित्रा हैं। इन्होंने बृहस्पतिसे विवाह किया है। तपस्या और सच्चरित्रतासे निकृष्ट पदार्थ भी उत्तम स्थानमें स्थापित हो सकता है।

५ स्त्रीके अभावमें बृहस्पति ब्रह्मचर्यके नियमका पालन करते हैं। वे सारे देवोंके साथ एकात्मा होकर उनके अङ्ग-विशेष हो गये हैं। जैसे उन्होंने प्रथम सोमके हाथसे भार्याको पाया था, वैसे ही इस समय भी उन्होंने फिर जुहू नामकी पत्नीको प्राप्त किया।

६ देवों और मनुष्योंने पुनः बृहस्पतिको उनकी पत्नीको समर्पित कर दिया। राजाओंने भी पुनः शपथके साथ शुद्ध-चरित्रा पत्नीको समर्पित किया।

७ शुद्ध-चरित्रा पत्नीको फिर लाकर देवोंने बृहस्पतिको निष्पाप किया। अनन्तर पृथिवीका सर्व-श्रेष्ठ अन्न विभक्त करके सभी सुखसे अवस्थान करने लगे।

११० सूक्त

आप्री देवता। भार्गव जमदग्नि ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

समिद्धो अद्य मनुषो दुरोणे देवो देवान् यजसि जातवेदः।
आ च वह मित्रमहश्चिकित्वान् त्वं दूतः कविरसि प्रचेताः ॥१॥
तनूनपात् पथ ऋतस्य यानान् मध्वा समञ्जन्त्स्वदया सुजिह्व।
मन्मानि धीभिरुत यज्ञमृन्धन् देवत्रा च कृणुह्यध्वरं नः ॥२॥
आजुह्वान ईड्यो वन्द्यश्चा याह्यग्ने वसुभिः सजोषाः।
त्वं देवानामसि यह्व होता स एनान्यक्षीषितो यजीयान् ॥३॥
प्राचीनं बर्हिः प्रदिशा पृथिव्या वस्तोरस्या वृज्यते अग्रे अह्नाम्।
व्युप्रथते वितरं वरीयो देवेभ्यो अदितये स्योनम् ॥४॥

१ ज्ञानी अग्नि, तुम मनुष्योंके गृहमें आज समिद्ध होकर अपने देवता और अन्यान्य देवोंकी पूजा करो। तुम्हारा मित्र तुम्हारी पूजा करता है—यह जानकर तुम देवोंको ले आओ; क्योंकि तुम उत्तम बुद्धिसे युक्त और क्रिया-कुशल दूत हो।

२ हे तनूनपात् (अग्नि), यज्ञ-गमनके जो पथ (हवि आदि) हैं, उन्हें मधु-मिश्रित करके अपनी सुन्दर शिखासे स्वाद लो। सुन्दर भावोंके द्वारा स्तोत्रों और यज्ञको समृद्ध करो और हमारे यज्ञको देव-भोग्य कर दो।

३ अग्नि, तुम देवोंको बुलानेवाले, प्रार्थनीय और प्रणामके योग्य हो। वसुओंके साथ पधारो। हे महान् पुरुष, तुम देवोंके होता हो। तुम्हें प्रेरित किया जाता है। तुम्हारे समान कोई यज्ञ नहीं कर सकता। तुम इन सारे देवोंके लिये यज्ञ करो।

४ पूर्वाह्णमें, वेदीको ढकनेके लिये, कुशको पूर्वमुख करके बिछाया जाता है। वह परम सुन्दर कुश और विस्तृत किया जाता है। उसपर अदिति और अन्य देवता लोग सुखसे बैठते हैं।

व्यचस्वतीरुर्विया वि श्रयन्तां पतिभ्यो न जनयः शुम्भमानाः ।
देवीर्द्वारो बृहतीर्विश्वमिन्वा देवेभ्यो भवत सुप्रायणाः ॥५॥
आ सुष्वयन्ती यजते उपाके उषासानक्ता सदतां नि योनौ ।
दिव्ये योषणे बृहती सुरुक्मे अधि श्रियं शुक्रपिशं दधाने ॥६॥
दैव्या होतारा प्रथमा सुवाचा मिमाना यज्ञं मनुषो यजध्यै ।
प्रचोदयन्ता विदथेषु कारू प्राचीनं ज्योतिः प्रदिशा दिशन्ता ॥७॥
आ नो यज्ञं भारती तूयमेत्विळा मनुष्वदिह चेतयन्ती ।
तिस्रो देवीर्बर्हिरेदं स्योनं सरस्वती स्वपसः सदन्तु ॥८॥
य इमे द्यावापृथिवी जनित्री रूपैरपिंशद्भुवनानि विश्वा ।
तमद्य होतरिषितो यजीयान् देवं त्वष्टारमिह यक्षि विद्वान् ॥९॥

---

५ जैसे स्त्रियाँ वेश-भूषा करके पतियोंके पास अपने शरीरको प्रकट करती हैं, वैसे ही इन सब सुनिर्मित द्वारोंकी अभिमानिनी देवियाँ पृथक् हो जायं—विस्तृत रूपसे खुल जायं। द्वार-देवियो, देवता सरलतासे जा सकें, इस प्रकार खुल जाओ ।

६ उषा देवी और रात्रि देवी लोगोंके लिये सुषुप्तिसे उत्पन्न सुख उत्पन्न कर दें। वे यज्ञ-भागकी अधिकारिणी हैं। वे परस्पर मिलकर यज्ञ-स्थानमें बैठें। वे दिव्य—लोक-वासिनी स्त्रीके समान अत्यन्त गुणवती, परम शोभासे युक्त और उज्ज्वल श्री धारण करनेवाली हैं ।

७ दोनों देव—होता (अग्नि और आदित्य) ही प्रथम उत्तम वाक्योंसे स्तोत्र करते हैं—मनुष्यके यज्ञके लिये अनुष्ठान-कार्यका निर्माण कर देते हैं । वे पुरोहितोंको विभिन्न अनुष्ठानोंमें प्रेरित करते हैं। वे क्रिया-कुशल हैं और पूर्व दिशाके प्रकाशको उत्पन्न करते हैं ।

८ भारती देवी (सूर्य-दीप्ति) हमारे यज्ञमें शीघ्र आवें। इलादेवी इस यज्ञकी बातका स्मरण करके, मनुष्यके समान, आगमन करें। ये दोनों और सरस्वती देवी—ये तीन चमत्कार-कार्य-कारिणी देवियां सामनेके सुखावह आसनपर आकर बैठें।

९ द्यावापृथिवी देवोंकी मातृ-स्वरूपिणी हैं। होता, जिन देवताने उन दोनोंको उत्पन्न करके सारे संसारमें नाना प्राणियोंकी सृष्टि की है, उन्हीं त्वष्टा देवकी आज तुम पूजा करो। तुम्हारे पास अन्न है, तुम विद्वान् हो और तुम्हारे समान दूसरा कोई यज्ञ नहीं कर सकता।

उपावसृज त्मन्या समञ्जन् देवानां पाथ ऋतुथा हवींषि ।
वनस्पतिः शमिता देवो अग्निः स्वदन्तु हव्यं मधुना घृतेन ॥१०॥
सद्यो जातो व्यमिमीत यज्ञमग्निर्देवानामभवत् पुरोगाः ।
अस्य होतुः प्रदिश्यृतस्य वाचि स्वाहाकृतं हविरदन्तु देवाः ॥११॥

१११ सूक्त

इन्द्र देवता। वैरूप अष्टादंष्ट्र ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

मनीषिणः प्र भरध्वं मनीषां यथायथा मतयः सन्ति नृणाम् ।
इन्द्रं सत्यैरेरयामा कृतेभिः स हि वीरो गिर्वणस्युर्विदानः ॥१॥
ऋतस्य हि सदसो धीतिरद्यौत् सं गार्ष्टेयो वृषभो गोभिरानट् ।
उदतिष्ठत्तविषेणा रवेण महान्ति चित् संविव्याचा रजांसि ॥२॥

---

१० यूप (यज्ञमें पशुओंके बाँधनेके काष्ठ), तुम स्वयं, यथासमय, देवोंके लिये अन्न और अन्यान्य होमीय द्रव्य लाकर निवेदित करो। वनस्पति, शमिता नामक देव और अग्नि, मधु और घृतके साथ, होमीय द्रव्यका आस्वादन करें।

११ जन्मके साथ ही अग्निने यज्ञ-निर्माण किया और देवोंके अग्रगामी दूत हुए। अग्नि-स्वरूप होता मन्त्र-पाठ करें। यज्ञोपयोगी देव-वाक्य उच्चारित हों। स्वाहाके साथ जो होमीय द्रव्य दिया जाता है, उसका भक्षण देवता करें।

---

१ स्तोताओ, तुम्हारी बुद्धिका उदय जैसे-जैसे होता है, वैसे-वैसे तुमलोग स्तोत्र-पाठ करो। सत्कर्मानुष्ठान करके इन्द्रको बुलाया जाय; क्योंकि वीर इन्द्र स्तोत्र जाननेपर स्तोताओंका प्यार करते हैं।

२ जलका आधार (अन्तरिक्ष) धारण करनेवाले इन्द्र प्रकाशित होते हैं। अल्पवयस्क गायके गर्भसे उत्पन्न वृष जैसे गायोंके साथ मिलता है, वैसे ही इन्द्र सर्व-व्यापी होते हैं। विलक्षण कोलाहलके साथ इन्द्र प्रकट होते हैं। वे बृहत्-बृहत् जलराशि बनाते हैं।

इन्द्रः किल श्रुत्या अस्य वेद स हि जिष्णुः पथिकृत् सूर्याय ।
आन्मेनां कृण्वन्नच्युतो भुवद्गोः पतिर्दिवः सनजा अप्रतीतः ॥३॥
इन्द्रो मह्ना महतो अर्णवस्य व्रता मिनादङ्गिरोभिर्गृणानः ।
पुरूणि चिन्नितताना रजांसि दाधार यो धरुणं सत्यताता ॥४॥
इन्द्रो दिवः प्रतिमानं पृथिव्या विश्वा वेद सवना हन्ति शुष्णम् ।
महीं चिद्द्यामातनोत् सूर्येण चास्कम्भ चित् कम्भनेन स्कभीयान् ॥५॥
वज्रेण हि वृत्रहा वृत्रमस्तरदेवस्य शूशुवानस्य मायाः ।
वि धृष्णो अत्र धृषता जघन्थाथाभवो मघवन् बाह्वोजाः ॥६॥
सचन्त यदुषसः सूर्येण चित्रामस्य केतवो रामविन्दन् ।
आयन्नक्षत्रं ददृशे दिवो न पुनर्यतो नकिरद्धा नु वेद ॥७॥

३ इस स्तोत्रका श्रवण इन्द्र ही जानते हैं। वह जयशील हैं। उन्होंने सूर्यका मार्ग बना दिया है। अविचल इन्द्रने सेनाको प्रकट किया। वे गायोंके सत्वाधिकारी और स्वर्गके प्रभु हुए। वे चिरन्तन हैं। उनके विपक्षमें कोई नहीं जा सकता।

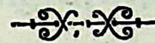
४ अङ्गिराकी सन्ततियोंने जिस समय स्तोत्र किया, उस समय इन्द्रने, अपनी महिमासे, विशाल मेघका कार्य नष्ट किया। उन्होंने बहुत अधिक जल बनाया। उन्होंने सत्य-रूप द्युलोकमें बल धारण किया।

५ एक ओर इन्द्र हैं और दूसरी ओर द्यावापृथिवी हैं—दोनोंके बराबर इन्द्र हैं। वे सारे सोम-यज्ञोंकी बातें जानते हैं। वे ताप नष्ट करते हैं। सूर्यके द्वारा उन्होंने प्रकाण्ड आकाशको सुसज्जित किया है। वे धारण करनेमें पटु हैं। मानों खम्भेके द्वारा उन्होंने आकाशको ऊपर धारण कर रखा है।

६ इन्द्र, तुम वृत्रघ्न हो—वज्रसे वृत्रको मारा है। जिस समय यज्ञ-विरोधी वृत्र बढ़ रहा था, उस समय दुर्द्धर्ष तुमने वज्र द्वारा उसकी सारी मायाको नष्ट कर डाला। बली इन्द्र, इसके अनन्तर तुम बहुत बलसे बली हुए।

७ जिस समय उषा देवियाँ सूर्यसे मिलीं; उस समय सूर्य-किरणोंने नाना वर्णोंकी शोभा धारण की। अनन्तर, जिस समय, आकाशमें नक्षत्र दिखाई दिया, उस समय कोई भी मार्ग-गामी सूर्यका कुछ देख नहीं सका।

दूरं किल प्रथमा जग्मुरासामिन्द्रवे याः प्रसस्वे सस्त्रु रायः ।
क स्विदग्रं क बुध्न आसामापो मध्यं क वो नूनमन्तः ॥८॥
सृजः सिन्धूँरहिना जग्रसानाँ आदिदेताः प्र विविज्रे जवेन ।
मुमुक्षमाणा उत या मुमुच्रेऽधेदेता न रमन्ते नितिक्ताः ॥९॥
सध्रीचीः सिन्धुमुशतीरिवायन्त्सनाज्जार आरितः पूर्भिदासाम् ।
अस्तमा ते पार्थिवा वसून्यस्मे जग्मुः सूनृता इन्द्र पूर्वीः ।



११२ सूक्त

इन्द्र देवता । विरूपगोत्रीय नभःप्रभेदन ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

इन्द्र पिब प्रतिकामं सुतस्य प्रातःसावस्तव हि पूर्वपीतिः ।
हर्षस्व हन्तवे शूर शत्रूनुक्थोऽभिष्टे वीर्या प्र ब्रवाम ॥१॥

---

८ इन्द्रकी आज्ञासे जो जल बहने लगा था, वह प्रथम जल बहुत दूर गया था। जलका अग्र भाग कहाँ है? मस्तक कहाँ है? जल, तुम्हारा मध्य स्थान वा चरम सीमा कहां है?

९ इन्द्र, जिस समय वृत्रासुर जलको ग्रास कर रहा था, उस समय तुमने जलका मोचन किया था। उसी समय जल वेगके साथ सर्वत्र दौड़ा था। जिस समय इन्द्रने अपनी इच्छासे जलको मुक्त किया था, उस समय वह विशुद्ध जल स्थिर नहीं रह सका।

१० सारे जल मानो कामातुरा स्त्रीके समान होकर और एकत्र मिलकर समुद्रकी ओर चले। शत्रु-पुर-ध्वंसक और शत्रु-जर्जर-कर्त्ता इन्द्र सदा ही सारे जलोंके प्रभु हैं। इन्द्र, हमारी पृथिवीपर स्थित नाना यज्ञ-सामग्री और चिराभ्यस्त अनेक प्रीतिप्रद स्तोत्र तुम्हारे पास जायं।

---

१ इन्द्र, सोम प्रस्तुत हुआ है। जितना चाहो, पियो। जो सोम प्रातःकाल प्रस्तुत होता है, वह सबसे आगे तुम्हारे पानके योग्य है। वीर इन्द्र, शत्रु-बधके लिये उत्साह-युक्त होओ। हम मन्त्रोंके द्वारा तुम्हारे वीरत्वकी प्रशंसा करते हैं।

यस्ते रथो मनसो जवीयानेन्द्र तेन सोमपेयाय याहि ।
तूयमा ते हरयः प्र द्रवन्तु येभिर्यासि वृषभिर्मन्दमानः ॥२॥
हरित्वता वर्चसा सूर्यस्य श्रेष्ठै रूपैस्तन्वं स्पर्शयस्व ।
अस्माभिरिन्द्र सखिभिर्हुवानः सध्रीचीनो मादयस्वा निषद्य ॥३॥
यस्य त्यत्ते महिमानं मदेष्विमे मही रोदसी नाविविक्ताम् ।
तदोक आ हरिभिरिन्द्र युक्तैः प्रियेभिर्याहि प्रियमन्नमच्छ ॥४॥
यस्य शश्वत् पपिवाँ इन्द्र शत्रूननानुकृत्या रण्या चकर्थ ।
स ते पुरन्धिं तविषीमियर्ति स ते मदाय सुत इन्द्र सोमः ॥५॥
इन्द्र ते पात्रं सनवित्तमिन्द्र पिबा सोममेना शतक्रतो ।
पूर्ण आहावो मदिरस्य मध्वो यं विश्व इदभिहर्यन्ति देवाः ॥६॥
वि हि त्वामिन्द्र पुरुधा जनासो हितप्रयसो वृषभ ह्वयन्ते ।
अस्माकं ते मधुमत्तमानीमा भुवन्त्सवना तेषु हर्य ॥७॥

२ इन्द्र, तुम्हारा रथ मनसे भी अधिक शीघ्रगामी है । उसी रथपर चढ़कर सोमपानके लिये आओ । जिन घोड़ोंकी सहायतासे तुम आनन्दके साथ जाते हो, वे हरि नामक घोड़े शीघ्र दौड़ें ।

३ इन्द्र, हरित-वर्ण तेजके द्वारा और सूर्यकी अपेक्षा भी श्रेष्ठतर नाना शोभाओंके द्वारा अपने शरीरको विभूषित करो । हम बन्धुत्वके साथ तुम्हें बुलाते हैं । हमारे साथ बैठकर सोम-पानसे प्रमत्त होओ ।

४ सोम-पानसे मत्त होनेपर जो तुम्हारी महिमा होती है, उसे ये द्यावापृथिवी नहीं धारण कर सकतीं । इन्द्र, अपने स्नेह-पात्र घोड़ोंको जोतकर सुस्वादु यज्ञ-सामग्रीकी ओर, यजमानके गृहमें, आओ ।

५ इन्द्र, जिसका प्रतिदिन सोम-पान करके तुमने अत्यन्त बल दिखाते हुए शत्रु-बध किया है, वही यजमान तुम्हारे लिये यथेष्ट स्तोत्र प्रेरित कर रहा है । तुम्हारे मनोरञ्जनके लिये सोम प्रस्तुत किया गया है ।

६ सौ यज्ञ करनेवाले इन्द्र, इस सोम-पात्रको तुम बराबर पाया करते हो । इससे पियो । जिसे देवता चाहते हैं, उसी मधु-तुल्य और मत्तता-कारक सोमके पात्रको परिपूर्ण कर दिया गया है ।

७ इन्द्र, अन्न संग्रह करके तुम्हें अनेक लोग, नाना स्थानोंमें, सोमपानके लिये, निमन्त्रित करते हैं । परन्तु हमारा प्रस्तुत किया गया सोम तुम्हें सबसे मधुर हो—इसीमें तुम्हारी रुचि उत्पन्न हो ।

प्र त इन्द्र पूर्व्याणि प्र नूनं वीर्या वोचं प्रथमा कृतानि ।
सतीनमन्युरश्रथायो अद्रिं सुवेदनामकृणोर्ब्रह्मणे गाम् ॥८॥
नि षु सीद गणपते गणेषु त्वामाहुर्विप्रतमं कवीनाम् ।
न ऋते त्वत् क्रियते किञ्चनारे महामर्कं मघवञ्चित्रमर्च ॥९॥
अभिख्या नो मघवन्नाधमानान्त्सखे बोधि वसुपते सखीनाम् ।
रणं कृधि रणकृत् सत्यशुष्माभक्ते चिदा भजा राये अस्मान् ॥१०॥

१० अनुवाक । ११३ सूक्त

इन्द्र देवता । शैवरूप शतप्रभेदन ऋषि । जगती और त्रिष्टुप् छन्द ।

तमस्य द्यावापृथिवी सचेतसा विश्वेभिर्देवैरनुशुष्ममावताम् ।
यदैत् कृण्वानो महिमानमिन्द्रियं पीत्वी सोमस्य क्रतुमाँ अवर्धत ॥१॥

८ इन्द्र, पूर्व कालमें सबसे आगे तुमने जो वीरत्व दिखाया था, उसकी मैं प्रशंसा करता हूं। जलके लिये तुमने मेघको फाड़ा था और स्तोताके लिये गायकी प्राप्ति सुलभ कर दी थी।

९ बहुतोंके अधिपति इन्द्र, स्तोताओंके बीचमें बैठो । क्रिया-कुशल व्यक्तियोंमें तुम्हें लोग सर्वापेक्षा बुद्धिमान् कहते हैं । समीप वा दूरमें तुम्हारे अतिरिक्त कोई अनुष्ठान नहीं होता । धनी इन्द्र, हमारी ऋचाओंको विस्तारित और नाना-रूप कर दो ।

१० धनी इन्द्र, हम तुम्हारे याचक हैं । हमें तेजस्वी कर दो । धनाधिपति और मित्र इन्द्र, यह जानो कि, हम तुम्हारे बन्धु हैं । युद्धकर्त्ता इन्द्र, तुम्हारी शक्ति ही यथार्थ है। जहां धन-प्राप्तिकी कोई सम्भावना नहीं हो, वहां भी तुम हमें धन-भागी करो।

१ अन्यान्य देवोंके साथ द्यावापृथिवी मनोयोग-पूर्वक इन्द्रके बलकी रक्षा करें । जब कि, वह वीरता प्राप्त करते-करते अपनी उपयुक्त महिमाको प्राप्त हुए, तब सोम-पान करते-करते अनेक कार्योंका सम्पादन करके वृद्धिगत हुए ।

तमस्य विष्णुर्महिमानमोजसांशुं दधन्वान् मधुनो वि रप्शते ।
देवेभिरिन्द्रो मघवा सयावभिर्वृत्रं जघन्वाँ अभवद्वरेण्यः ॥२॥
वृत्रेण यदहिना बिभ्रदायुधा समस्थिथा युधये शंसमाविदे ।
विश्वे ते अत्र मरुतः सह त्मनावर्धन्नुग्र महिमानमिन्द्रियम् ॥३॥
जज्ञान एव व्यबाधत स्पृधः प्रापश्यद्वीरो अभि पौंस्यं रणम् ।
अवृश्चदद्रिमव सस्यदः सृजदस्तभ्नान्नाकं स्वपस्यया पृथुम् ॥४॥
आदिन्द्रः सत्रा तविषीरपत्यत वरीयो द्यावापृथिवी अबाधत ।
अवाभरद्धृषितो वज्रमायसं शेवं मित्राय वरुणाय दाशुषे ॥५॥
इन्द्रस्यात्र तविषीभ्यो विरप्शिन ऋघायतो अरंहयन्त मन्यवे ।
वृत्रं यदुग्रो व्यवृश्चदोजसापो बिभ्रतं तमसा परीवृतम् ॥६॥

२ विष्णुने मधुर सोमलता—खण्डको भेजकर इन्द्रकी उस महिमाकी, उत्साहके साथ, घोषणा की। धनी इन्द्र सहयोगी देवोंके साथ एकत्र होकर और वृत्रका बध करके सर्व-श्रेष्ठ हुए।

३ उग्रतेजा इन्द्र जिस समय तुम स्तुतिकी इच्छासे अस्त्र-शस्त्र धारण करके, दुर्द्धर्ष वृत्रके साथ, युद्ध करनेके लिये आगे बढ़े, उस समय सारे मरुद्गणने तुम्हारी महिमा बढ़ा दी और स्वयं भी वे वृद्धिको प्राप्त हुए।

४ जन्मके साथ ही इन्द्रने शत्रु-दमन किया था। उन्होंने युद्धका विचार करके अपने पौरुषकी वृद्धिकी ओर ध्यान दिया। उन्होंने वृत्रका छेदन किया, मनुष्योंको छुड़ाया और उत्तम उद्योग करके विस्तृत स्वर्गलोकको ऊपर उठा रखा।

५ विशाल-विशाल सेनाओंकी ओर इन्द्र एकाएक दौड़े। अपनी विशिष्ट महिमासे उन्होंने द्यावापृथिवीको वशीभूत किया। जो वज्र दानपरायण वरुण और मित्रके सुखका जनक है, इन्द्रने उसी लौहमय वज्रको दुर्द्धर्ष रूपसे धारण किया।

६ इन्द्र नाना प्रकारके शब्द कर रहे थे और शत्रु-बध कर रहे थे। उनके बल-विक्रमकी घोषणा करनेके लिये जल निर्गत हुआ। वृत्रने अन्धकारसे घिरकर जलको धारण कर रखा था; परन्तु तीक्ष्ण तेजवाले इन्द्रने बल-पूर्वक वृत्रको काट डाला।

या वीर्याणि प्रथमानि कर्त्वा महित्वेभिर्यतमानौ समीयतुः ।
ध्वान्तं तमोऽव दध्वसे हत इन्द्रो मह्ना पूर्वहूतावपत्यत ॥७॥
विश्वे देवासो अध वृष्ण्यानि तेऽवर्धयन्त्सोमवत्या वचस्यया ।
रद्धं वृत्रमहिमिन्द्रस्य हन्मनाग्निर्न जम्भैस्तृष्वन्नमावयत् ॥८॥
भूरि दक्षेभिर्वचनेभिर्ऋक्वभिः सख्येभिः सख्यानि प्र वोचत ।
इन्द्रो धुनिं च चुमुरिं च दम्भयञ्छ्रद्धामनस्या शृणुते दभीतये ॥९॥
त्वं पुरूण्या भरा स्वश्व्या येभिर्मंसै निवचनानि शंसन् ।
सुगेभिर्विश्वा दुरिता तरेम विदो षु ण उर्विया गाधमद्य ॥१०॥

११४ सूक्त

विश्वदेव देवता। वैरूप सध्रि ऋषि। त्रिष्टुप् और जगती छन्द।

घर्मा समन्ता त्रिवृतं व्यापतुस्तयोर्जुष्टिं मातरिश्वा जगाम ।
दिवस्पयो दिधिषाणा अवेषन् विदुर्देवाः सहसामानमर्कम् ॥१॥

---

७ आपसमें होड़ करके इन्द्र और वृत्र प्रथम-प्रथम अपनी-अपनी वीरता दिखाकर महाक्रोधके साथ युद्ध करने लगे। वृत्रके विनाशके अनन्तर घना अन्धकार विनष्ट हुआ। इन्द्रकी महिमा ही ऐसी है कि, वीरोंकी नाम-गणनाके समय सबसे प्रथम इन्द्रका ही नाम लिया जाता है।

८ इन्द्र, सोमरस और स्तोत्रके द्वारा देवोंने तुम्हारी संवर्द्धना की। इन्द्रने दुर्द्धर्ष वृत्रका बध कर डाला। इससे शीघ्र ही लोगोंको अन्न-प्राप्ति हुई। जैसे अग्नि अपनी शिखाके द्वारा जलाने योग्य वस्तुका भक्षण करते हैं, वैसे ही लोग दाँतोंसे अन्न चबाने लगे।

९ स्तोताओ, इन्द्रने जो सखाके कार्य किये हैं, उनकी प्रशंसा, उत्तमोत्तम वाक्यों और बन्धुजनोचित छन्दोंके द्वारा, करो। इन्द्रने धुनि और चुमुरि नामक असुरोंका बध किया है और विश्वासी मनसे दभीति राजाकी प्रार्थना सुनी है।

१० इन्द्र, मैंने जो स्तोत्रके समयमें प्रचुर सम्पत्ति और उत्तमोत्तम घोड़ोंकी अभिलाषा की थी, वह सब दो। मैं पापको लाँघकर कल्याण प्राप्त करूँ। हम जो स्तोत्र बना रहे हैं, उसे जानकर ध्यान दो।



१ सूर्य और अग्नि नामक प्रदीप्त देवता चारो ओर जाकर त्रिभुवन-व्यापी हुए। मातरिश्वा (अन्तरिक्ष-स्थित वायुदेव) ने उनकी प्रसन्नता प्राप्त की। जिस समय देवोंने साम-मन्त्र और सूर्यको प्राप्त किया, उस समय उन लोगोंने, त्रिभुवनकी रक्षाके लिये आकाशीय जलकी सृष्टि की।

तिस्रो देष्ट्राय निर्ऋतीरुपासते दीर्घश्रुतो वि हि जानन्ति वह्नयः ।
तासां नि चिक्युः कवयो निदानं परेषु या गुह्येषु व्रतेषु ॥२॥
चतुष्कपर्दा युवतिः सुपेशा घृतप्रतीका वयुनानि वस्ते ।
तस्यां सुपर्णा वृषणा नि षेदतुर्यत्र देवा दधिरे भागधेयम् ॥३॥
एकः सुपर्णः स समुद्रमा विवेश स इदं विश्वं भुवनं वि चष्टे ।
तं पाकेन मनसापश्यमन्तितस्तं माता रेळ्हि स उ रेळ्हि मातरम् ॥४॥
सुपर्णं विप्राः कवयो वचोभिरेकं सन्तं बहुधा कल्पयन्ति ।
छन्दांसि च दधतो अध्वरेषु ग्रहान्त्सोमस्य मिमते द्वादश ॥५॥
षट्त्रिंशांश्च चतुरः कल्पयन्तश्छन्दांसि च दधत आद्वादशम् ।
यज्ञं विमाय कवयो मनीष ऋक्सामाभ्यां प्ररथं वर्तयन्ति ॥६॥

---

२ याज्ञिक लोग यज्ञके समय तीन निर्ऋतियों (अग्नि, सूर्य और वायु) की उपासना करते हैं। इसके अनन्तर यशस्वी अग्निदेवोंका परिचय देवोंसे होता है। विद्वान् लोग अग्नि आदिका मूल कारण जानते हैं। वे परम गोपनीय व्रतमें रहते हैं।

३ एक युवती (यज्ञ-वेदी) है। उसके चार कोने हैं। उसकी मूर्त्ति सुन्दर और (घृतके कारण) स्निग्ध है। वह उत्तमोत्तम वस्त्र (यज्ञ-सामग्री) धारण करती है। दो पक्षी (यजमान और पुरोहित) उसपर बैठते हैं। वहाँ देवता लोग अपना-अपना भाग पाते हैं।

४ एक पक्षी (प्राण वायु) समुद्र (ब्रम्हाण्ड) में पैठा। वह सारा विश्व देखता है। परिपक्व बुद्धिके द्वारा मैंने उसको देखा है। वह निकट-वर्त्तिनी माता (वाक्) का आस्वादन करता है और माता भी उसका आस्वादन करती है।

५ पक्षी (परमात्मा) एक है; परन्तु क्रान्तदर्शी विद्वान् लोग उसकी अनेक प्रकारसे कल्पना करते हैं। वे यज्ञ-कालमें नाना प्रकारके छन्दोंका उच्चारण करते और बारह (उपांशु, अन्तर्याम आदि) सोम-पात्र स्थापित करते हैं।

६ पण्डित लोग चालीस प्रकारके सोम-पात्र स्थापित करते वा छन्द उच्चारण करते हैं और बारह प्रकारके छन्द कहते वा सोम-पात्र रखते हैं। इस प्रकार वह बुद्धि-पूर्वक अनुष्ठान करके ऋक् और सामके द्वारा यज्ञ-रथ चलाते हैं।

चतुर्दशान्ये महिमानो अस्य तं धीरा वाचा प्रणयन्ति सप्त ।
अप्नानं तीर्थं क इह प्रवोचद्येन पथा प्रपिबन्ते सुतस्य ॥७॥
सहस्रधा पञ्चदशान्युक्था यावद्द्यावापृथिवी तावदित्तत् ।
सहस्रधा महिमानः सहस्रं यावद्ब्रह्म विष्ठितं तावती वाक् ॥८॥
कश्छन्दसां योगमा वेद धीरः को धिष्ण्यां प्रति वाचं पपाद ।
कमृत्विजामष्टमं शूरमाहुर्हरी इन्द्रस्य नि चिकाय कः स्वित् ॥९॥
भूम्या अन्तं पर्येके चरन्ति रथस्य धूर्षु युक्तासो अस्थुः ।
श्रमस्य दायं वि भजन्त्येभ्यो यदा यमो भवति हर्म्ये हितः ॥१०॥



७ इस यज्ञ (परमात्मा) की चौदह महिमाएँ (भुवन) हैं। सात होता आदि शस्त्र वाक्यके द्वारा यज्ञ-सम्पादन करते हैं। यज्ञ-मार्गमें उपस्थित होकर देवता लोग सोम-पान करते हैं। उस विश्व—व्यापी यज्ञ-मार्गकी बातका कौन वर्णन करे ?

८ पन्द्रह सहस्र उक्थ मन्त्र हैं। * द्यावापृथिवीके समान ही उक्थ भी बृहत् हैं। स्तोत्रकी महिमा सहस्र प्रकारकी है। जैसे स्तोत्र असीम है, वैसे ही वाक्य भी।

९ कौन ऐसे पण्डित हैं, जो सारे छन्दोंकी बात जानते हैं ? किनने मूल-वाक्यको समझा है ? कौन ऐसे प्रधान पुरुष हैं; जो सातो पुरोहितोंके ऊपर अष्टम हो सकें ? इन्द्रके हरित-वर्ण घोड़ेको किसने देखा वा समझा है ?

१० कुछ घोड़े पृथिवीकी शेष सीमातक विचरण करते हैं और कुछ रथकी धुरामें ही जोते रहते हैं। जिस समय सारथि रथके ऊपर रहता है, उस समय परिश्रम दूर करनेके लिये घोड़ोंको उपयुक्त आहार दिया जाता है।



* सायणाचार्यके विचारसे उक्थका अर्थ प्राणियोंका अङ्ग है। अनेक यूरोपियनोंके मतसे उक्थ मानी ऋचा है। मैक्समूलर साहबके मतसे ऋग्वेदमें १०६२२ ऋचाएँ, १५३८२६ शब्द और ४३२००० अक्षर हैं। हमारी गणनाके अनुसार १०४६७ मन्त्र, शौनककी अनुक्रमणीके अनुसार १०५८०½ मन्त्र और अनेक सज्जनोंके मतानुसार १०४१७ मन्त्र हैं।

११५ सूक्त

अग्नि देवता। वृष्टिहव्य-पुत्र उपस्तुत ऋषि। जगती आदि छन्द।

चित्र इच्छिशोस्तरुणस्य वक्षथो न यो मातरावप्येति धातवे ।
अनूधा यदि जीजनदधा च नु ववक्ष सद्यो महि दूत्यं चरन् ॥१॥
अग्निर्ह नाम धायि दन्नपस्तमः सं यो वना युवते भस्मना दता ।
अभिप्रमुरा जुह्वा स्वध्वर इनो न प्रोथमानो यवसे वृषा ॥२॥
तं वो विं न द्रुषदं देवमन्धस इन्दुं प्रोथन्तं प्रवपन्तमर्णवम् ।
आसा वह्निं न शोचिषा विरप्शिनं महिव्रतं न सरजन्तमध्वनः ॥३॥
वि यस्य ते ज्रयसानस्याजर धक्षोर्न वाताः परि सन्त्यच्युताः ।
आ रण्वासो युयुधयो न सत्वनं त्रितं नशन्त प्र शिषन्त इष्टये ॥४॥

---

१ इन नवीन बालक अग्निका क्या ही अद्भुत प्रभाव है! दूध पीनेके लिये यह बालक माता-पिताके पास नहीं जाता। इसके पानके लिये स्तन-दुग्ध नहीं है; परन्तु यह बालक प्रादुर्भूत हुआ है। जन्मके साथ ही इस बालकने कठिन दूत-कार्यका भार ग्रहण करके उसका निर्वाह किया।

२ जो नाना कार्य करनेवाले और दाता हैं, उन्हीं अग्निका आधान किया गया। ये ज्योतीरूप दाँतसे बल लोगोंका भक्षण करते हैं। जुहू नामक उच्च पात्रमें इन्द्रको यज्ञ-भाग दिया गया। जैसे हृष्ट-पुष्ट और बली वृष घास खाता है, वैसे ही ये यज्ञ-भागका भक्षण करते हैं।

३ पक्षीके समान अग्नि वृक्ष (अरणि) का आश्रय करते हैं। वे प्रदीप्त अन्नके दाता हैं। वे शब्द करते हुए वनको जलाते हैं, जल धारण करते हैं, मुखके द्वारा हव्यका वहन करते हैं और आलोकके द्वारा महान् होते हैं। उनका कार्य महान् है। अपने मार्गको वे रक्त-वर्ण कर देते हैं। उन अग्निकी, स्तोताओ, स्तुति करो।

४ अजर अग्नि, जिस समय तुम दाह करते हो, उस समय वायु आकर तुम्हारी चारो ओर ठहरते हैं और अविचलित पुरोहित लोग, यज्ञके अवसरपर, स्तुति करते हुए, तुम्हें घेर कर खड़े हो जाते हैं। उस समय तुम तीन मूर्तियाँ (आहवनीय आदि) धारण करते हो, बल प्रकाश करते हो, इधर-उधर जाते हो। पुरोहित लोग, योद्धाओंके समान, कोलाहल करने लगते हैं।

स इद्ग्निः कण्वतमः कण्वसखार्यः परस्यान्तरस्य तरुषः ।
अग्निः पातु गृणतो अग्निः सूरीनग्निर्ददातु तेषामवो नः ॥५॥
वाजिन्तमाय सह्यसे सुपित्र्य तृषु च्यवानो अनु जातवेदसे ।
अनुद्रे चिद्यो धृषता वरं सते महिन्तमाय धन्वनेद्विष्यते ॥६॥
एवाग्निर्मर्तैः सह सूरिभिर्वसुः सहसः सूनरो नृभिः ।
मित्रासो न ये सुधिता ऋतायवो द्यावो न द्युम्नैरभिसन्ति मानुषान् ॥७॥
ऊर्जो नपात् सहसावन्निति त्वोपस्तुतस्य वन्दते वृषा वाक् ।
त्वां स्तोषाम त्वया सुवीरा द्राघीय आयुः प्रतरं दधानाः ॥८॥
इति त्वाग्ने वृष्टिहव्यस्य पुत्रा उपस्तुतास ऋषयोऽवोचन् ।
तांश्च पाहि गृणतश्च सूरीन् वषड्वषलित्यूर्ध्वासो
अनक्षन्नमो नम इत्यूर्ध्वासो अनक्षन् ॥९॥

---

५ वे अग्नि ही सबसे अधिक शब्द करनेवाले हैं। जो सशब्द स्तोत्र करते हैं, उनके तुम सखा हो। वे प्रभु हैं और समीपस्थ शत्रुका विनाश करनेवाले हैं। अग्नि स्तोताओंके और विद्वानोंके रक्षक हैं। वे उन्हें और हमें आश्रय देते हैं।

६ शोभन पितावाले अग्नि, तुम्हारे समान अन्नवाला कोई भी नहीं है। तुम बली और सर्व-श्रेष्ठ हो तथा विपत्तिके समय धनुष् धारण करके रक्षा करते हो। उन ज्ञानी अग्निको, उत्साहके साथ, यज्ञ-सामग्री दो और शीघ्र स्तुति करनेको प्रस्तुत होओ।

७ ज्ञाता और कार्य-कर्त्ता मनुष्य अग्निकी स्तुति करते हुए उन्हें सम्पत्ति और बल पुत्र कहते हैं। यज्ञानुष्ठान करनेवाले बन्धुके समान अग्नि-कृपामें तृप्ति प्राप्त करते हैं। वे ज्योतिर्मय ग्रह, नक्षत्र आदिके समान अपने तेजसे शत्रु-मनुष्योंको हराते हैं।

८ बलके पुत्र और शक्तिशाली अग्नि, मेरा नाम "उपस्तुत" है। मेरा वर्षक स्तोत्र तुम्हारी स्तुति करता है। हम तुम्हारी स्तुति करते हैं, तुम्हारी दयासे हम दीर्घायु हों और सन्तान प्राप्त करें।

९ वृष्टिहव्य नामक ऋषिके पुत्र "उपस्तुत" आदिने तुम्हारी स्तुति की। उनकी और स्तोता विद्वानोंकी रक्षा करो। उन्होंने "वषट्" मन्त्र और "नमोनमः" वाक्यसे तुम्हारी स्तुति की।

११६ सूक्त

इन्द्र देवता। स्थूल-पुत्र अग्निषुत ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

पिबा सोमं महत इन्द्रियाय पिबा वृत्राय हन्तवे शविष्ठ ।
पिब राये शवसे हूयमानः पिब मध्वस्तृपदिन्द्रा वृषस्व ॥१॥
अस्य पिब क्षुमतः प्रस्थितस्येन्द्र सोमस्य वरमा सुतस्य ।
स्वस्तिदा मनसा मादयस्वार्वाचीनो रेवते सौभगाय ॥२॥
ममत्तु त्वा दिव्यः सोम इन्द्र ममत्तु यः सूयते पार्थिवेषु ।
ममत्तु येन वरिवश्चकर्थ ममत्तु येन निरिणासि शत्रून् ॥३॥
आ द्विबर्हा अमिनो यात्विन्द्रो वृषा हरिभ्यां परिषिक्तमन्धः ।
गव्या सुतस्य प्रभृतस्य मध्वः सत्रा खेदामरुशहा वृषस्व ॥४॥

---

१ बलियोंमें अग्रगण्य इन्द्र, प्रचुर बलकी प्राप्तिके लिये और वृत्रके बधके लिये सोम-पान करो। अन्न और धनके लिये तुम्हें बुलाया जाता है। सोम-पान करो। मधुतुल्य सोमका पान करो और तृप्त होकर जल बरसाओ।

२ इन्द्र, यह सोम प्रस्तुत है। इसके साथ खाद्य द्रव्य है। सोम क्षरित हो रहा है। इसके सार-भागका पान करो। कल्याण दो, मन ही मन आनन्द प्राप्त करो तथा धन और सौभाग्य देनेके लिये अग्रसर होओ।

३ इन्द्र, स्वर्गीय सोम तुम्हें मत्त करे। पृथिवीस्थ मनुष्योंके मध्य जो प्रस्तुत हुआ है, वह भी तुम्हें मत्त करे। जिससे तुम धन दो, वही सोम मत्त करे। जिसके द्वारा शत्रु-बध करते हो, वह भी मत्त करे।

४ इन्द्र इस लोक और परलोकमें दृढ़, सर्वत्र-गन्ता और वृष्टि-दाता हैं। हमने सोम-रूप आहारीय द्रव्यका चारों ओर सिञ्चन किया है। दोनों घोड़ोंके द्वारा इन्द्र उसके पास जायं। शत्रु-घातक इन्द्र, मधु-तुल्य सोम गोचर्मके ऊपर ढाला हुआ और परिपूर्ण है। वृषके समान बलका प्रकाश करके यज्ञके शत्रुओंका विनाश करो।

नि तिग्मानि भ्राशयन् भ्राश्यान्यव स्थिरा तनुहि यातुजूनाम् ।
उग्राय ते सहो बलं ददामि प्रतीत्या शत्रून् विगदेषु वृश्च ॥५॥
व्यर्य इन्द्र तनुहि श्रवांस्योजः स्थिरेव धन्वनोऽभिमातीः ।
अस्मद्र्यग्वावृधानः सहोभिरनिभृष्टस्तन्वं वावृधस्व ॥६॥
इदं हविर्मघवन् तुभ्यं रातं प्रति सम्राळहृणानो गृभाय ।
तुभ्यं सुतो मघवन् तुभ्यं पक्वोऽद्धीन्द्र पिब च प्रस्थितस्य ॥७॥
अद्धीदिन्द्र प्रस्थितेमा हवींषि चनो दधिष्व पचतोत सोमम् ।
प्रयस्वन्तः प्रति हर्यामसि त्वा सत्याः सन्तु यजमानस्य कामाः ॥८॥
प्रेन्द्राग्निभ्यां सुवचस्यामियर्मि सिन्धाविव प्रेरयन्नावमर्कैः ।
अयाइव परि चरन्ति देवा ये अस्मभ्यं धनदा उद्भिदश्च ॥९॥

---

५ इन्द्र, तीक्ष्ण अस्त्रोंको दिखाते हुए राक्षसोंको भूमिशायी करो। तुम्हारी मूर्त्ति भयंकर है। तुम्हें बल और उत्साह बढ़ानेवाला सोम हम देते हैं। शत्रुओंके सामने जाकर कोलाहलमय युद्धके बीच उन्हें काट डालो।

६ प्रभु इन्द्र, अन्नका विस्तार करो, शत्रुओंके ऊपर अपना अभिलषित प्रभाव और धनुष् फैलाओ। हमारे अनुकूल होकर बढ़ो। शत्रुओंसे पराजय न प्राप्त करके अपने बलसे शरीरको बढ़ाओ।

७ धनी इन्द्र, इस यज्ञ-सामग्रीको तुम्हारे लिये हम अर्पित करते हैं। सम्राट् इन्द्र, क्रोध न करके इसे ग्रहण करो। धनी इन्द्र, सोम प्रस्तुत हुआ है। तुम्हारे लिये खाद्य पकाया गया है। यह सारा द्रव्य तुम्हारे पास जाता है। पियो और खाओ।

८ इन्द्र, यह सारी यज्ञ-सामग्री तुम्हारे पास जाती है। जो आहारीय द्रव्य पकाया गया है और जो सोम है, उन दोनोंको ही खाओ। अन्न लेकर हम तुम्हें भोजनके लिये निमन्त्रित करते हैं। यजमानोंके मनकी वासनाएं सफल हों।

९ अग्नि और इन्द्रके लिये सुरचित स्तुति मैं प्रेरित करता हूं। जैसे नदीमें नाव भेजी जाती है, वैसे ही पूजनीय मन्त्रोंसे मैंने स्तुति प्रेरित की। पुरोहितोंके समान देवता लोग परिचर्या करते हैं। वे हमारे शत्रुओंका विनाश करनेके लिये हमें धन देते हैं।

११७ सूक्त

दान देवता। आङ्गिरस भिक्षु ऋषि। जगती और त्रिष्टुप् छन्द।

न वा उ देवाः क्षुधमिद्वधं ददुरुताशितमुप गच्छन्ति मृत्यवः ।
उतो रयिः पृणतो नोप दस्यत्युतापृणन्मर्डितारं न विन्दते ॥१॥
य आध्राय चकमानाय पित्वोऽन्नवान्त्सन्रफितायोपजग्मुषे ।
स्थिरं मनः कृणुते सेवते पुरोतो चित् स मर्डितारं न विन्दते ॥२॥
स इद्भोजो यो गृहवे ददात्यन्नकामाय चरते कृशाय ।
अरमस्मै भवति यामहूता उतापरीषु कृणुते सखायम् ॥३॥
न स सखा यो न ददाति सख्ये सचाभुवे सचमानाय पित्वः ।
अपास्मात् प्रेयान्न तदोको अस्ति पृणन्तमन्य मरणं चिदिच्छेत् ॥४॥

---

१ देवोंने क्षुधा (भूख) की जो सृष्टि की है, वह प्राण-नाशिनी हैं। परन्तु आहार करने-पर भी तो प्राणको मृत्युसे छुट्टी नहीं मिलती। तो भी दाताका धन कम नहीं होता। अदाताको कोई सुखी नहीं कर सकता।

२ जिस समय कोई भूखा मनुष्य भीख माँगनेको उपस्थित होता है, अन्नकी याचना करता है, उस समय जो अन्नवाला होकर भी हृदयको निष्ठुर रखता और सामने ही भोजन करता है, उसे कोई सुखदाता नहीं मिल सकता।

३ अन्नकी इच्छासे किसी दुर्बल व्यक्तिके भिक्षा माँगनेपर जो अन्न-दान करता है, वही दाता है। उसे सम्पूर्ण यज्ञ-फल मिलता है और वह शत्रुओंमें भी सखा पा लेता है।

४ अपना साथी पास आता है और मित्र होकर भी जो व्यक्ति उसे अन्नदान नहीं करता, वह मित्र कहाने योग्य नहीं है। उसके पाससे चला जाना ही उचित है। उसका गृह गृह ही नहीं है। उस समय किसी धनी दाताके यहाँ जाना ही उचित है।

पृणीयादिन्नाधमानाय तव्यान् द्राघीयांसमनु पश्येत पन्थाम् ।
ओ हि वर्तन्ते रथ्येव चक्रान्यमन्यमुप तिष्ठन्ति रायः ॥५॥
मोघमन्नं विन्दते अप्रचेताः सत्यं ब्रवीमि बध इत् स तस्य ।
नार्यमणं पुष्यति नो सखायं केवलाघो भवति केवलादी ॥६॥
कृषन्नित् फाल आशितं कृणोति यन्नध्वानमप वृङ्क्ते चरित्रैः ।
वदन् ब्रह्मावदतो वनीयान् पृणन्नापिरपृणन्तमभिष्यात् ॥७॥
एकपाद्भूयो द्विपदो विचक्रमे द्विपात् त्रिपादमभ्येति पश्चात् ।
चतुष्पादेति द्विपदामभिस्वरे संपश्यन् पङ्क्तीरुपतिष्ठमानः ॥८॥
समौ चिद्धस्तौ न समं विविष्टः संमातरा चिन्न समं दुहाते ।
यमयोश्चिन्न समा वीर्याणि ज्ञाती चित् सन्तौ न समं पृणीतः ॥९॥

---

५ याचकको अवश्य धन देना चाहिये। दाताको अत्यन्त लम्बा मार्ग (पुण्य-पथ) मिलता है। जैसे रथ-चक्र नीचे-ऊपर घूमता है, वैसे ही धन भी कभी किसीके पास रहता है और कभी दूसरेके पास चला जाता है—कभी एक स्थानपर स्थिर नहीं रहता।

६ जिसका मन उदार नहीं है, उसका भोजन करना वृथा है। उसका भोजन उसकी मृत्युके समान है। जो न तो देवताको देता है और न मित्रको देता है और स्वयं भोजन करता है, वह केवल पाप ही खाता है।

७ कृषि-कार्य करके हल अन्न प्रस्तुत करता है—वह अपने मार्गसे जाकर अपने कर्मके द्वारा शस्य (अन्न) उत्पादन करता है। जैसे विद्वान् पुरोहित मूर्खसे श्रेष्ठ है, वैसे ही दाता सदा अदाताके ऊपर रहता है।

८ जिसके पास एक अंश सम्पत्ति है, वह दो अंश सम्पत्तिके अधिकारीकी याचना करता है, जिसके पास दो अंश है, वह तीन वालेके पास जाता है और जिसे चार अंश प्राप्त है, वह उससे अधिकवालेके पास जाता है। इसी प्रकार श्रेणी बँधी हुई है। अल्प धनी अधिक धनीकी उपासना करता है।

९ हमलोगोंके दोनों हाथ सामान रूपवाले हैं; परन्तु धारण करनेकी शक्ति समान नहीं है। एक मातासे उत्पन्न होकर दो गायें समान दुग्ध नहीं देतीं। दो (यमज) भ्राता होनेपर भी उनका पराक्रम विभिन्न प्रकारका होता है। एक वंशकी सन्तान होकर भी दो व्यक्ति समान दाता नहीं होते।

११८ सूक्त

राक्षसबध-कर्त्ता अग्नि देवता। अमहीयगोत्रज उरुक्षय ऋषि। गायत्री छन्द।

अग्ने हंसि न्यत्रिणं दीद्यन्मर्त्येष्वा। स्वे क्षये शुचिव्रत ॥१॥
उतिष्ठसि स्वाहुतो घृतानि प्रति मोदसे। यत्त्वा स्रुचः समस्थिरन् ॥२॥
स आहुतो वि रोचतेऽग्निरीलेन्यो गिरा। स्रुचा प्रतीकमज्यते ॥३॥
घृतेनाग्निः समज्यते मधुप्रतीक आहुतः। रोचमानो विभावसुः ॥४॥
जरमाणः समिध्यसे देवेभ्यो हव्यवाहन। तं वा हवन्तुमर्त्याः ॥५॥
तं मर्ता अमर्त्यं घृतेनाग्निं सपर्यत। अदाभ्यं गृहपतिम् ।
अदाभ्येन शोचिषाग्ने रक्षस्त्वं दह। गोपा ऋतस्य दीदिहि ॥७॥
स त्वमग्ने प्रतीकेन प्रत्योष यातुधान्यः। उरुक्षयेषु दीद्यत् ॥८॥

---

१ पवित्र व्रतवाले अग्नि, मनुष्योंके बीच तुम अपने स्थानमें प्रदीप्त होओ। शत्रुका बध करो।

२ स्रुक् नामका यज्ञ-पात्र तुम्हारे लिये उठाया गया है। तुम्हें उत्तम आहुति दी गयी है। तुम उत्तम घृतके प्रति रुचि करो।

३ अग्निको बुलाया गया है। वह वाक्यके द्वारा स्तुत्य हैं। वह प्रदीप्त होते हैं। सभी देवोंके पहले उन्हें स्रुक्के द्वारा घृत-युक्त किया जाता है।

४ अग्निमें आहुति दी गयी। उनकी देह घृतमय हुई। वह दीप्तिमान् और समृद्ध प्रकाशसे युक्त हुए। वह घृताक्त हुए।

५ अग्नि, तुम देवोंके पास हवि ले जाया करते हो। स्तोत्र करनेपर तुम प्रज्वलित होते हो। तुम्हें मनुष्य बुलाते हैं।

६ मरण-शील मनुष्यो, अग्नि अमर, दुर्द्धर्ष और गृहके स्वामी हैं। घृत द्वारा उनकी पूजा करो।

७ अग्नि, प्रचण्ड तेजके द्वारा तुम राक्षसोंको जलाओ। यज्ञके रक्षक होकर दीप्ति धारण करो।

८ अग्नि, अपने स्वभाव-सिद्ध तेजके द्वारा राक्षसियोंको जलाओ। अपने प्रशस्त स्थानोंपर रहकर दीप्ति धारण करो।

तं त्वा गीर्भिरुरुक्षया हव्यवाहं समीधिरे । यजिष्ठं मानुषे जने ॥६॥

११६ सूक्त

लवरूपी इन्द्र देवता और ऋषि । गायत्री छन्द ।

इति वा इति मे मनो गामश्वं सनुयामिति । कुवित् सोमस्यापामिति ॥१॥
प्र वाताइव दोधत उन्मा पीता अयंसत । कुवित् सोमस्यापामिति ॥२॥
उन्मा पीता अयंसत रथमश्वा इवाशवः । कुवित् सोमस्यापामिति ॥३॥
उप मा मतिरस्थित वाश्रा पुत्रमिव प्रियम् । कुवित् सोमस्यापामिति ॥४॥
अहं तष्टेव बन्धुरं पर्यचामि हृदा मतिम् । कुवित् सोमस्यापामिति ॥५॥
नहि मे अक्षिपच्चनाच्छान्त्सुः पञ्च कृष्टयः । कुवित् सोमस्यापामिति ॥६॥

६ मनुष्योंमें तुम सर्वश्रेष्ठ यज्ञ-कर्त्ता हो । तुम्हारा निवास-स्थान अद्भुत हैं । तुम हव्य-वाहक हो । तुम्हें स्तुतिके साथ प्रज्वलित किया जाता है ।

१ मेरी (इन्द्रकी) इच्छा है कि, मैं गौ, अश्व आदिका दान करूँ । मैंने कई बार सोम-पान किया है ।

२ जैसे वायु वृक्षको कँपाता और ऊपर उठाता है, वैसे ही सोमरस, पिये जानेपर, मुझे ऊपर उठाता है । मैंने कई बार सोम पिया है ।

३ जैसे शीघ्रगामी अश्व रथको ऊपर उठाया रखता है, वैसे ही सोमने, पिये जानेपर, मुझे ऊपर उठा रखा है । मैंने अनेक बार सोम-पान किया है ।

४ जैसे गाय "हम्बा" कहती हुई बछड़ेके प्रति दौड़ती है, वैसे ही मेरी ओर स्तुति जाती है । मैंने अनेक बार सोम पिया है ।

५ जैसे त्वष्टा रथके ऊपरके भाग (सारथि-स्थान) को बनाते हैं, वैसे ही मैं भी स्तोताके मनमें स्तोत्रका उदय कर देता हूं । मैंने अनेक बार सोम पिया है ।

६ पञ्च जन (चार वर्ण और निषाद) मेरी दृष्टिसे ओझल नहीं हो सकते । मैंने अनेक बार सोम-पान किया है ।

नहि मे रोदसी उभे अन्यं पक्षं चन प्रति । कुवित् सोमस्यापामिति ॥७॥
अभि द्यां महिना भुवमभीमां पृथिवीं महीम् । कुवित् सोमस्यापामिति ॥८॥
हन्ताहं पृथिवीमिमां नि दधानीह वेह वा । कुवित् सोमस्यापामिति ॥९॥
ओषमित् पृथिवीमहं जङ्घनानीह वेह वा । कुवित् सोमस्यापामिति ॥१०॥
दिवि मे अन्यः पक्षोऽधो अन्यमचीकृषम् । कुवित् सोमस्यापामिति ॥११॥
अहमस्मि महामहोऽभिनभ्यमुदीषितः । कुवित् सोमस्यापामिति ॥१२॥
गृहो याम्यरङ्कृतो देवेभ्यो हव्यवाहनः । कुवित् सोमस्यापामिति ॥१३॥



७ द्यावापृथिवी—दोनों मेरे एक पार्श्वके समान भी नहीं हैं । मैंने अनेक बार सोम पिया है ।

८ मेरी महिमा स्वर्ग और विस्तृत पृथिवीको लाँघती है । मैंने अनेक बार सोम पिया है ।

९ मेरी इतनी शक्ति है कि, यदि कहो, तो इस धरित्रीको एक स्थानसे दूसरे स्थानमें ले जाकर रख सकता हूं । मैंने अनेक बार सोम-पान किया है ।

१० इस पृथिवीको मैं जला सकता हूं । जिस स्थानको कहो, मैं उसे विध्वस्त कर दूं । मैंने अनेक बार सोम-पान किया है ।

११ मेरा एक पार्श्व आकाशमें है और एक पार्श्व पृथिवीपर है । अनेक बार मैंने सोम-पान किया है ।

१२ मैं महान्से भी महान् हूं । मैं आकाशकी ओर हूं । मैंने अनेक बार सोम-पान किया है ।

१३ मेरी स्तुति की जाती है, मैं देवोंके पास हव्य ले जाता हूं और स्वयं हव्य ग्रहण करके चला जाता हूं । मैंने अनेक बार सोम-पान किया है ।



षष्ठ अध्याय समाप्त

सप्तम अध्याय

१२० सूक्त

इन्द्र देवता । अथर्वाके पुत्र बृहद्दिव ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

तदिदास भुवनेषु ज्येष्ठं यतो जज्ञ उग्रस्त्वेषनृम्णः ।
सद्यो जज्ञानो नि रिणाति शत्रूननु यं विश्वे मदन्त्यूमाः ॥१॥
वावृधानः शवसा भूर्योजाः शत्रुर्दासाय भियसं दधाति ।
अव्यनच्च व्यनच्च सस्नि सन्ते नवन्त प्रभृता मदेषु ॥२॥
त्वे क्रतुमपि वृञ्जन्ति विश्वे द्विर्यदेते त्रिर्भवन्त्यूमाः ।
स्वादोः स्वादीयः स्वादुना सृजा समदः सु मधु मधुनाभि योधीः ॥३॥
इति चिद्धि त्वा धना जयन्तं मदेमदे अनुमदन्ति विप्राः ।
ओजीयो धृष्णो स्थिरमा तनुष्व मा त्वा दभन्यातुधाना दुरेवाः ॥४॥

---

१ जिनसे ज्योतिर्मय सूर्य उत्पन्न हुए हैं, वे ही सबसे ज्येष्ठ हैं—उनके पहले कोई नहीं था। जन्मके साथ ही वे शत्रु-विनाश करते हैं। सभी देवता उनका अभिनन्दन करते हैं।

२ अतीव तेजस्वी और शत्रु हन्ता इन्द्र, विशिष्ट बलसे युक्त होकर, दासोंके हृदयमें भय उत्पन्न कर देते हैं। इन्द्र, सारे प्राणियोंको, तुम सोम-पानके आनन्दसे, सुखी करते और उनका शोधन करते हो। तब वे तुम्हारी स्तुति करते हैं।

३ जिस समय देवोंको तृप्त करनेवाले यजमान विवाह करते और (जिस समय) सन्तान उत्पन्न करते हैं, उस समय वे तुम्हारे ऊपर सारा यज्ञ-कार्य समाप्त करते हैं। इन्द्र, जो सुस्वादु हैं, उसमें उससे भी अधिक सुस्वादु वस्तु तुम मिला दो। इस अद्भुत मधुके साथ और मधु मिला दो—अर्थात् सौभाग्यके ऊपर सौभाग्य कर दो।

४ इन्द्र, जिस समय तुम सोम-पानसे मत्त होकर धन जीतते हो, उस समय स्तोता लोग भी, साथ ही साथ, सोमपानसे मद-मत्त होते हैं। अजेय इन्द्र, अटल तेज दिखाओ। दुःसाहसिक राक्षस तुम्हें पराजित न कर सकें।

त्वया वयं शाशद्महे रणेषु प्रपश्यन्तो युधेन्यानि भूरि ।
चोदयामि त आयुधा वचोभिः सं ते शिशामि ब्रह्मणा वयांसि ॥५॥
स्तुषेय्यं पुरुवर्पसमृभ्वमिनतममाप्त्यमाप्त्यानाम् ।
आ दर्षते शवसा सप्त दानून् प्र साक्षते प्रतिमानानि भूरि ॥६॥
नि तद्दधिषेऽवरं परं च यस्मिन्नाविथावसा दुरोणे ।
आ मातरा स्थापयसे जिगत्नू अत इनोषि कर्वरा पुरूणि ॥७॥
इमा ब्रह्म बृहद्दिवो विवक्तीन्द्राय शूषमग्रियः स्वर्षाः ।
महो गोत्रस्य क्षयति स्वराजो दुरश्च विश्वा अवृणोदप स्वाः ॥८॥
एवा महा बृहद्दिवो अथर्वावोचत् स्वां तन्वमिन्द्रमेव ।
स्वसारो मातरिभ्वरीररिप्रा हिन्वन्ति च शवसा वर्धयन्ति च ॥९॥

५ इन्द्र, तुम्हारी सहायतासे हम समर-भूमिमें शत्रु-जय करते हैं। मैं युद्ध करने योग्य अनेक शत्रुओंका साक्षात् करता हूं। स्तुति करते हुए तुम्हारे अस्त्र-शस्त्रको मैं उत्साहित करता हूं। मन्त्रोंके द्वारा मैं तुम्हारे तेजको तीक्ष्ण कर देता हूं।

६ स्तुत्य, नाना मूर्त्तियोंवाले, विलक्षण दीप्तिसे युक्त, अनुपम प्रभु और श्रेष्ठ आत्मीय इन्द्रकी मैं स्तुति करता हूं। वह अपनी शक्तिसे वृत्र, नमुचि, कुयव आदि सात दानवोंका विनाश करनेवाले और अनेक असुरोंको हरानेवाले हैं।

७ इन्द्र, तुम जिस गृहमें हवीरूप अन्नसे तृप्त होते हो, उसमें दिव्य और पार्थिव धन देते हो। जिस समय सारे भूतोंको बनानेवाले द्यौ और पृथिवी चञ्चल होती है, उस समय तुम्हीं उन्हें सुस्थिर करते हो। उस अवसरपर तुम्हें अनेक कार्य करने पड़ते हैं।

८ ऋषि-श्रेष्ठ और स्वर्गाभिलाषी "बृहद्दिव" इन्द्रके लिये यह सब प्रसन्नता-कारक वेद-मन्त्र पढ़ रहे हैं। वह प्रदीप्त इन्द्र विशाल पर्वतको हटाते और शत्रुके सारे द्वारोंको खोलते हैं।

९ अथर्वाके पुत्र और महाबुद्धि बृहद्दिवने, इन्द्रके लिये, अपनी स्तुतिका पाठ किया। पृथिवीस्थ निर्मल नदियां जल बहाती और अन्नके द्वारा लोगोंकी कल्याण-वृद्धि करती हैं।

१२१ सूक्त

"क" नामवाले प्रजापति देवता। प्रजापति-पुत्र हिरण्यगर्भ ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत्।
स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥१॥
य आत्मदा बलदा यस्य विश्व उपासते प्रशिषं यस्य देवाः।
यस्य छायामृतं यस्य मृत्युः कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥२॥
यः प्राणतो निमिषतो महित्वैक इद्राजा जगतो बभूव।
य ईशे अस्य द्विपदश्चतुष्पदः कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥३॥
यस्येमे हिमवन्तो महित्वा यस्य समुद्रं रसया सहाहुः।
यस्येमाः प्रदिशो यस्य बाहू कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥४॥
येन द्यौरुग्रा पृथिवी च दृह्ला येन स्वः स्तभितं येन नाकः।
यो अन्तरिक्षे रजसो विमानः कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥५॥

---

१ सबसे पहले केवल परमात्मा वा हिरण्यगर्भ थे। उत्पन्न होनेपर वह सारे प्राणियोंके अद्वितीय अधीश्वर थे। उन्होंने इस पृथिवी और आकाशको अपने-अपने स्थानोंमें स्थापित किया। उन "क" नामवाले प्रजापति देवताकी हम हविके द्वारा पूजा करेंगे अथवा हम हव्यके द्वारा किन देवताकी पूजा करें?

२ जिन प्रजापतिने जीवात्माको दिया है, बल दिया है, जिनकी आज्ञा सारे देवता मानते हैं, जिनकी छाया अमृत-रूपिणी है और जिनके वशमें मृत्यु है, उन "क" नामवाले आदि।

३ जो अपनी महिमासे दर्शनेन्द्रिय और गतिशक्तिवाले जीवोंके अद्वितीय राजा हुए हैं और जो इन द्विपदों और चतुष्पदोंके प्रभु हैं, उन "क" नामवाले आदि।

४ जिनकी महिमासे ये सब हिमाच्छन्न पर्वत उत्पन्न हुए हैं, जिनकी सृष्टि यह ससागरा धरित्री कही जाती है और जिनकी भुजाएँ ये सारी दिशाएँ हैं, उन "क" नाम आदि।

५ जिन्होंने इस उन्नत आकाश और पृथिवीको अपने-अपने स्थानोंपर दृढ़ रूपसे स्थापित किया है, जिन्होंने स्वर्ग और आदित्यको रोक रखा है और जो अन्तरिक्षमें जलके निर्माता हैं, उन "क" नाम आदि।

यं क्रन्दसी अवसा तस्तभाने अभ्यैक्षेतां मनसा रेजमाने ।
यत्राधि सूर उदितो विभाति कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥६॥
आपो ह यद्बृहतीर्विश्वमायन् गर्भं दधाना जनयन्तीरग्निम् ।
ततो देवानां समवर्ततासुरेकः कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥७॥
यश्चिदापो महिना पर्यपश्यद्दक्षं दधाना जनयन्तीर्यज्ञम् ।
यो देवेष्वधि देव एक आसीत् कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥८॥
मा नो हिंसीज्जनिता यः पृथिव्या यो वा दिवं सत्यधर्मा जजान ।
यश्चापश्चन्द्रा बृहतीर्जजान कस्मै देवाय हविषा विधेम ॥९॥
प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा जातानि परिता बभूव ।
यत् कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वयं स्याम पतयो रयीणाम् ॥१०॥



६ जिनके द्वारा द्यौ और पृथिवी, शब्दायमान होकर, स्तम्भित और उल्लसित हुए थे और दीप्तिशील द्यौ और पृथिवीने जिन्हें महिमान्वित समझा था तथा जिनके आश्रयसे सूर्य उगते और प्रकाश करते हैं, उन "क" नाम आदि।

७ प्रचुर जल सारे भुवनको आच्छन्न किये हुए था। जलने गर्भ धारण करके अग्नि वा आकाश आदि सबको उत्पन्न किया। इससे देवोंके प्राण वायु उत्पन्न हुए उन "क" नाम आदि।

८ बल धारण करके जिस समय जलने अग्निको उत्पन्न किया, उस समय जिन्होंने अपनी महिमासे उस जलके ऊपर चारो ओर निरीक्षण किया तथा जो देवोंमें अद्वितीय देवता हुए, उन "क" नाम आदि।

९ जो पृथिवीके जन्मदाता हैं, जिनकी धारण-क्षमता सत्य है, जिन्होंने आकाशको जन्म दिया और जिन्होंने आनन्द-वर्द्धक तथा प्रचुर परिमाणमें जल उत्पन्न किया, वह हमें नहीं मारें। उन "क" नाम आदि।

१० प्रजापति, तुम्हारे अतिरिक्त और कोई इन समस्त उत्पन्न वस्तुओंको अधीन करके नहीं रख सकता। जिस अभिलाषासे हम तुम्हारा हवन करते हैं, वह हमें मिले। हम धनाधिपति हों।



१२२ सूक्त

अग्नि देवता। वसिष्ठ-पुत्र चित्रमहा ऋषि। जगती और त्रिष्टुप् छन्द।

वसुं न चित्रमहसं गृणीषे वामं शेवमतिथिमद्विषेण्यम्।
स रासते शुरुधो विश्वधायसोऽग्निर्होता गृहपतिः सुवीर्यम् ॥१॥
जुषाणो अग्ने प्रति हर्य मे वचो विश्वानि विद्वान्वयुनानि सुक्रतो।
घृतनिर्णिग्ब्रह्मणे गातुमेरय तव देवा अजनयन्ननु व्रतम् ॥२॥
सप्त धामानि परियन्नमर्त्यो दाशद्दाशुषे सुकृते मामहस्व।
सुवीरेण रयिणाग्ने स्वाभुवा यस्त आनट् समिधा तं जुषस्व ॥३॥
यज्ञस्य केतुं प्रथमं पुरोहितं हविष्मन्त ईळते सप्त वाजिनम्।
शृण्वन्तमग्निं घृतपृष्ठमुक्षणं पृणन्तं देवं पृणते सुवीर्यम् ॥४॥

---

१ अग्निका तेज विचित्र है। वह सूर्यके समान हैं। वह रमणीय, सुखकर और प्रेम-पात्र अतिथिके समान हैं। उनकी मैं स्तुति करता हूं। जो अग्नि दूधके द्वारा संसारको धारण करते और क्लेशको दूर करते हैं, वह गौ और उत्तम बल देते हैं। वह होता और गृहपति हैं।

२ अग्नि, तुम सन्तुष्ट होकर मेरे स्तोत्रके प्रति रुचि करो। उत्तम कर्म करनेवाले अग्नि जो कुछ जानने योग्य है, वह सब तुम जानते हो। घृतकी आहुति पाकर तुम स्तोताको साम-गानके लिये कहो। तुम्हारा कार्य देखनेके अनन्तर देवता लोग अपना-अपना कार्य करते हैं।

३ अग्नि, तुम अमर हो। तुम सर्वत्र जाते हो। उत्तम कार्यकर्त्ता दाताको दान करो। पूजा ग्रहण करो। यज्ञ-काष्ठके द्वारा जो तुम्हारी संवर्द्धना करता है, उसके पास उत्तमोत्तम सम्पत्ति और सन्तान ले जाओ।

४ याज्ञिक सामग्रीसे युक्त यजमान सात अश्वों वा पृथिव्यादि लोकोंके स्वामी अग्निकी स्तुति करते हैं। अग्नि यज्ञके केतु और सर्व-श्रेष्ठ पुरोहित हैं। वह घृताहुति प्राप्त करके और कामना सुनकर अभिलषित फल देते हैं और दाताको उत्तम बल देते हैं।

त्वं दूतः प्रथमो वरेण्यः सहूयमानो अमृताय मत्स्व ।
त्वां मर्जयन्मरुतो दाशुषो गृहे त्वां स्तोमेभिर्भृगवो वि रुरुचुः ॥५॥
इषं दुहन्त्सुदुघां विश्वधायसं यज्ञप्रिये यजमानाय सुक्रतो ।
अग्ने घृतस्नुस्त्रिर्ऋतानि दीद्यद्वर्तिर्यज्ञं परियन्त्सुक्रतूयसे ॥६॥
त्वामिदस्या उषसो व्युष्टिषु दूतं कृण्वाना अयजन्त मानुषाः ।
त्वां देवा महयाय्याय वावृधुराज्यमग्ने निमृजन्तो अध्वरे ॥७॥
नि त्वा वसिष्ठा अह्वन्त वाजिनं गृणन्तो अग्ने विदथेषु वेधसः ।
रायस्पोषं यजमानेषु धारय यूयं स्वस्तिभिः सदा नः ॥८॥

१२३ सूक्त

वेन देवता । भार्गव वेन ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

अयं वेनश्चोदयत् पृश्निगर्भा ज्योतिर्जरायू रजसो विमाने ।
इममपां सङ्गमे सूर्यस्य शिशुं न विप्रा मतिभी रिहन्ति ॥१॥

---

५ अग्नि, तुम सर्व-श्रेष्ठ और अग्रगण्य दूत हो। अमरता प्राप्त करनेके लिये तुम बुलाये जाते हो। तुम आनन्ददाता हो। दाताके गृहमें मरुद्गण तुम्हें सुशोभित करते हैं। भार्गव लोग, स्तुतिके द्वारा, तुम्हारी उज्ज्वलता बढ़ाते हैं।

६ अग्नि, तुम्हारा कर्म अद्भुत है। जो यजमान यज्ञानुष्ठानमें रत रहता है, उसके लिये तुम यज्ञ-रूपिणी, यथेष्ट-दुग्धदात्री और विश्वपालिका गायसे यज्ञ-फल दूह डालो। घृताहुति प्राप्त करके तुम पृथिवी आदि तीनों स्थानोंको प्रकाशमय करते हो। तुम यज्ञ-गृहमें सर्वत्र हो। सर्वत्र जाते हो। सुकृतीका जो आवरण है, वह तुममें दिखाई देता है।

७ उषाका समय होते ही यजमान लोग तुम्हें दूत-स्वरूप समझकर यज्ञ करते हैं। अग्नि देवता लोग भी तुम्हें, घृतके द्वारा, प्रदीप्त करके, पूजा करनेके लिये संवर्द्धित करते हैं।

८ अग्नि, यज्ञोंमें वसिष्ठ-पुत्र अनुष्ठान प्रारम्भ करके और तुम्हें अन्न-युक्त करके तुम्हें बुलाने लगे। यजमानोंके घरोंमें प्रभूत धन रखो। तुम लोग हमें सदा कल्याणके द्वारा बचाओ।

१ वेन नामक देवता ज्योतिके द्वारा परिवेष्टित हैं। वह जल-निर्माता आकाशके मध्यमें सूर्य-किरणोंके सन्तान-स्वरूप जलको पृथिवीपर गिराते हैं। जिस समय सूर्यके साथ जलका मिलन होता है, उस समय बुद्धिमान् स्तोता लोग उन वेन देवताको, बालकके समान नाना मीठे वचनोंसे, सन्तुष्ट करते हैं

समुद्रादूर्मिमुदियर्ति वेनो नभोजाः पृष्ठं हर्यतस्य दर्शि ।
ऋतस्य सानावधि विष्टपि भ्राट् समानं योनिमभ्यनूषत व्राः ॥२॥
समानं पूर्वीरभि वावशानास्तिष्ठन् वत्सस्य मातरः सनीळाः ।
ऋतस्य सानावधि चक्रमाणा रिहन्ति मध्वो अमृतस्य वाणीः ॥३॥
जानन्तो रूपमकृपन्त विप्रा मृगस्य घोषं महिषस्य हि ग्मन् ।
ऋतेन यन्तो अधि सिन्धुमस्थुर्विदद्गन्धर्वो अमृतानि नाम ॥४॥
अप्सरा जारमुपसिष्मियाणा योषा बिभर्ति परमे व्योमन् ।
चरत् प्रियस्य योनिषु प्रियः सन्त्सीदत् पक्षे हिरण्यये स वेनः ॥५॥
नाके सुपर्णमुप यत् पतन्तं हृदा वेनन्तो अभ्यचक्षत त्वा ।
हिरण्यपक्षं वरुणस्य दूतं यमस्य योनौ शकुनं भरण्युम् ॥६॥

२ वेन अन्तरिक्षसे जल-माला प्रेरित करते हैं। आकाशमें उज्ज्वल मूर्त्ति वेनका पृष्ठदेश दिखाई दिया। जलके उन्नत स्थान आकाशमें वेन दीप्ति पाते हैं। उनके पारषदोंने सबके उत्पत्ति-स्थान आकाशको प्रतिध्वनित किया।

३ वेनके साथ जल आकाशमें रहता है। वह वत्स-रूपी विद्युत्की माता है। वह अपने सहवासी वेनके साथ शब्द करने लगा। जलके उत्पत्ति-स्थान आकाशमें मधु-तुल्य वृष्टि-जलका शब्द उत्पन्न होकर वेनकी संवर्द्धना करने लगा।

४ बुद्धिमान् स्तोताओंने प्रकाण्ड महिषके समान वेनका शब्द सुना। इससे उन लोगोंने समझकर उनके रूपकी कल्पना की। उन्होंने वेनका यजन करके, नदीके समान, प्रचुर जल प्राप्त किया। गन्धर्व-रूपी वेन जलके प्रभु हैं।

५ विद्युत् एक अप्सरा है और वेन उसके पति है। विद्युत्ने वेनको देखकर, मन्द मुस्कान करते हुए, उनका आलिङ्गन किया। वेन प्रेमी नायकके समान प्रेयसी विद्युत्की रति-कामना पूर्ण करके सुवर्णमय पक्ष वा मेघमें सो गये।

६ वेन, तुम स्वर्गमें उड़नेवाले पक्षीके समान हो। तुम्हारे दोनों पक्ष सुवर्णमय हैं। तुम सर्वलोक-शासक वरुणके दूत हो। तुम संसारके भरण पोषण-कारी पक्षीके समान हो। तुम्हारा सब दर्शन करते हैं और अन्तःकरणमें तुम्हारे प्रति प्रीति धारण करते हैं।

ऊर्ध्वो गन्धर्वो अधि नाके अस्थात् प्रत्यङ् चित्रा बिभ्रदस्यायुधानि ।
वसानो अत्कं सुरभिं दृशे कं स्वर्ण नाम जनत प्रियाणि ॥७॥
द्रप्सः समुद्रमभि यज्जिगाति पश्यन् गृध्रस्य चक्षसा विधर्मन् ।
भानुः शुक्रेण शोचिषा चकानस्तृतीये चक्रे रजसि प्रियाणि ॥८॥

१२४ सूक्त

अग्नि आदि देवता और ऋषि । त्रिष्टुप्, जगती आदि छन्द ।

इमं नो अग्न उप यज्ञमेहि पञ्चयामं त्रिवृतं सप्ततन्तुम् ।
असो हव्यवालुत नः पुरोगा ज्योगेव दीर्घन्तम आशयिष्ठाः ॥१॥
अदेवाद्देवः प्रचता गुहा यन् प्रपश्यमानो अमृतत्वमेमि ।
शिवं यत् सन्तमशिवो जहामि स्वात् सख्यादरणीं नाभिमेमि ॥२॥

७ वह गन्धर्व-रूपी स्वर्गके उन्नत प्रदेशमें, उन्नत भावसे, रहते हैं। वह चारो ओर विचित्र अस्त्र-शस्त्र धारण किये हुए हैं। वह अपनी अत्यन्त सुन्दर मूर्त्तिका आच्छादन किये हुए हैं। अन्तर्हित होकर वह अभिलषित वृष्टि-वारि उत्पन्न करते हैं।

८ वेन जलवाले हैं। वह अपने कर्मके साधन-कालमें गृध्रके समान दूरदर्शक चक्षुके द्वारा देखते हुए अन्तरिक्षकी ओर जाते हैं। वह शुभ्र-वर्ण आलोकके द्वारा प्रदीप्त होते हैं। प्रदीप्त होकर तृतीय लोक आकाशमें ऊपरी भागसे सर्व-लोक-वाञ्छित जलकी सृष्टि करते हैं।

---

१ अग्नि, हमारे इस यज्ञके ऋत्विक्, यजमान आदि पाँच व्यक्ति नियामक वा अध्यक्ष हैं। इसका अनुष्ठान तीन प्रकार (सवन-त्रय) से होता है। इसके अनुष्ठाता होता आदि सात हैं। इस यज्ञकी ओर आओ। तुम्हीं हमारे हविर्वाहक और अग्रगामी दूत हो।

२ (अग्निका कथन–) देवता मेरी प्रार्थना करते हैं; इसलिये मैं दीप्तिहीन और अव्यक्त अवस्थासे दीप्तिवाली अवस्थाको प्राप्त करके, चारो ओर निरीक्षण करते हुए, अमरता पाता हूं। जिस समय यज्ञ निरुपद्रवके साथ सम्पन्न होता है उस समय मैं अदृष्ट होता और यज्ञको छोड़ देता हूं। चिर सखा और उत्पत्ति-स्थान अरणिमें चला जाता हूं।

पश्यन्नन्यस्या अतिथिं वयाया ऋतस्य धाम वि मिमे पुरूणि ।
शंसामि पित्रे असुराय शेवमयज्ञियाद्यज्ञियं भागमेमि ॥३॥
बह्वीः समा अकरमन्तरस्मिन्निन्द्रं वृणानः पितरं जहामि ।
अग्निः सोमो वरुणस्ते च्यवन्ते पर्यावर्द्राष्ट्रं तदवाम्यायन् ॥४॥
निर्माया उ त्ये असुरा अभुवन् त्वं च मा वरुण कामयासे ।
ऋतेन राजन्ननृतं विविञ्चन् मम राष्ट्रस्याधिपत्यमेहि ॥५॥
इदं स्वरिदमिदास वाममयं प्रकाश उर्वन्तरिक्षम् ।
हनाव वृत्रं निरेहि सोम हविष्ट्वा सन्तं हविषा यजाम ॥६॥
कविः कवित्वा दिवि रूपमासजदप्रभूती वरुणो निरपः सृजत् ।
क्षेमं कृण्वाना जनयो न सिन्धवस्ता अस्य वर्णं शुचयो भरिभ्रति ॥७॥

३ पृथिवीके अतिरिक्त जो आकाश गमन-मार्ग है, उसके अतिथि सूर्यकी वार्षिक गतिके अनुसार मैं भिन्न-भिन्न ऋतुओंमें यज्ञानुष्ठान करता हूं। बली देवता पितृ-रूप हैं। उनके सुखके लिये मैं स्तुति करता हूं। यज्ञके अयोग्य और अपवित्र स्थानसे मैं यज्ञके उपयुक्त स्थानमें जाता हूं।

४ इस यज्ञ-स्थानमें मैंने अनेक वर्ष बिताये हैं। यहाँ इन्द्रका वरण करते हुए अपने पिता अरणिसे निकलता हूं। मेरा अदर्शन होनेपर सोम, वरुण आदिका पतन हो जाता है और राष्ट्र-विप्लव हो जाता है। उस समय आकर मैं रक्षा करता हूं।

५ मेरे आते ही असुर लोग असमर्थ हो गये। वरुण, तुम भी मेरी प्रार्थना करो। परमात्मन्, सत्यसे मिथ्याको अलग करके मेरे राज्यका आधिपत्य ग्रहण करो।

६ (अग्नि वा वरुणकी उक्ति—) सोम, यह देखो, स्वर्ग है। यह अत्यन्त रमणीय था। यह प्रकाश देखो। यह विस्तृत आकाश है। सोम, प्रकट होओ। वृत्रका बध किया जाय। तुम होमीय द्रव्य हो। अन्यान्य हवनीय द्रव्योंके द्वारा हम तुम्हारी पूजा करते हैं।

७ क्रान्तदर्शी मित्रदेवने क्रिया-कौशलके द्वारा द्युलोकमें अपने तेजको संलग्न किया। वरुण-देवने थोड़े ही यत्नसे मेघसे जलको निकाला। सारे जल नदियाँ बनकर संसारका मङ्गल करते हैं। वह सब निर्मल नदियाँ, वरुणकी पत्नीके समान, वरुणका शुभ्र तेज धारण करती हैं।

ता अस्य ज्येष्ठमिन्द्रियं सचन्ते ता इमा क्षेति स्वधया मदन्तीः ।
ता इं विशो न राजानं वृणाना बीभत्सुवो अप वृत्रादतिष्ठन् ॥८॥
बीभत्सूनां सयुजं हंसमाहुरपां दिव्यानां सख्ये चरन्तम् ।
अनुष्टुभमनु चर्चूर्यमाणमिन्द्रं नि चिक्युः कवयो मनीषा ॥९॥

१२५ सूक्त

परमात्मा देवता । अम्भृणकी पुत्री वाक् ऋषि । त्रिष्टुप् और जगती छन्द ।

अहं रुद्रेभिर्वसुभिश्चराम्यहमादित्यैरुत विश्वदेवैः ।
अहं मित्रावरुणोभा बिभर्म्यहमिन्द्राग्नी अहमश्विनोभा ॥१॥
अहं सोममाहनसं बिभर्म्यहं त्वष्टारमुत पूषणं भगम् ।
अहं दधामि द्रविणं हविष्मते सुप्राव्ये यजमानाय सुन्वते ॥२॥

---

८ सब जल देवता वरुणका सर्व-श्रेष्ठ तेज प्राप्त करते हैं। उन्हींके समान वह होमीय द्रव्य पाकर आनन्दित होते हैं। अपनी पत्नीके समान वरुण उनके पास जाते हैं। जैसे प्रजा भय पाकर राजाको आश्रय करती है, वैसे ही जलदेव, भयके कारण, वरुणका आश्रय करके वृत्रके पास से भागते हैं।

९ उन सब भीत और दिव्य जलदेवके साथी होकर जो उनकी हितैषिता करते हैं, उन्हें "हंस" वा सूर्य वा इन्द्र कहा जाता है। वह स्तुत्य हैं—वह जलके पीछे-पीछे जाते हैं। विद्वान् लोग बुद्धि-बलसे उन्हें इन्द्र कहकर स्थिर किये हुए हैं।

१ (वाग्देवीकी उक्ति—) मैं रुद्रों और वसुओंके साथ विचरण करती हूं। मैं आदित्यों और देवोंके साथ रहती हूँ। मैं मित्र और वरुणको धारण करती हूं। मैं इन्द्र, अग्नि और अश्विद्वयका अवलम्बन करती हूं।

२ जो सोम प्रस्तरसे पीसे जाकर उत्पन्न होते हैं, उन्हें मैं ही धारण करती हूं। मैं त्वष्टा, पूषा और भगको धारण करती हूं। जो यजमान यज्ञ-सामग्रीका आयोजन करके और सोमरस प्रस्तुत करके देवोंको भली भाँति सन्तुष्ट करता है, उसे मैं ही धन देती हूं।

अहं राष्ट्री संगमनी वसूनां चिकितुषी प्रथमा यज्ञियानाम् ।
तां मा देवा व्यदधुः पुरुत्रा भूरिस्थात्रां भूर्यावेशयन्तीम् ॥३॥
मया सो अन्नमत्ति यो विपश्यति यः प्राणिति य इं शृणोत्युक्तम् ।
अमन्तवो मान्त उपक्षियन्ति श्रुधि श्रुतः श्रुद्धिवं ते वदामि ॥४॥
अहमेव स्वयमिदं वदामि जुष्टं देवेभिरुत मानुषेभिः ।
यं कामये तन्तमुग्रं कृणोमि तं ब्रह्माणं तमृषिं तं सुमेधाम् ॥५॥
अहं रुद्राय धनुरातनोमि ब्रह्मद्विषे शरवे हन्तवा उ ।
अहं जनाय समदं कृणोम्यहं द्यावापृथिवी आविवेश ॥६॥
अहं सुवे पितरमस्य मूर्धन्मम योनिरप्स्वन्तः समुद्रे ।
ततो वितिष्ठे भुवनानु विश्वोतामूं द्यां वर्ष्मणोप स्पृशामि ॥७॥
अहमेव वातइव प्र वाम्यारभमाणा भुवनानि विश्वा ।
परो दिवा पर एना पृथिव्यैतावती महिना सं बभूव ॥८॥

३ मैं राज्यकी अधीश्वरी हूं और धन देनेवाली हूं। मैं ज्ञानवती हूं और यज्ञोपयोगी वस्तुओंमें श्रेष्ठ हूं। देवोंने मुझे नाना स्थानोंमें रखा है। मेरा आश्रय-स्थान विशाल है। मैं सब प्राणियोंमें आविष्ट हूं।

४ जो प्राण धारण करता, देखता, सुनता और अन्न-भोग करता है, वह मेरी सहायतासे ही यह सब कार्य करता है। जो मुझे नहीं मानते, वे क्षीण हो जाते हैं। विज्ञ, सुनो। जो मैं कहती हूं, वह श्रद्धेय है।

५ देवता और मनुष्य जिसकी शरणमें जाते हैं, उसको मैं ही उपदेश देती हूं। मैं जिसे चाहूं, उसे बली, स्तोता, ऋषि अथवा बुद्धिमान् कर सकती हूं।

६ जिस समय इन्द्र स्तोत्र-द्रोही शत्रुका बध करनेको उद्यत होते हैं, उस समय उनके धनुष्का विस्तार करती हूं। मनुष्यके लिये मैं ही युद्ध करती हूं। मैं द्यावापृथिवीमें व्याप्त हूं।

७ मैं पिता हूं। मैंने आकाशको उत्पन्न किया है। वह आकाश इस संसारका मस्तक है। समुद्र-जलमें मेरा स्थान है। उसी स्थानसे मैं सारे संसारमें विस्तृत होती हूं। मैं अपनी उन्नत देहसे इस द्युलोकको छूती हूं।

८ मैं ही भुवन-निर्माण करते-करते वायुके समान बहती हूं। मेरी महिमा ऐसी बड़ी है कि, मैं द्यावापृथिवीका अतिक्रम कर चुकी हूं।

१२६ सूक्त

विश्वदेव देवता । शिलूष-पुत्र कुल्मलबर्हिष ऋषि । बृहती और त्रिष्टुप् छन्द ।

न तमंहो न दुरितं देवासो अष्ट मर्त्यम् ।
सजोषसो यमर्यमा मित्रो नयन्ति वरुणो अति द्विषः ॥१॥
तद्धि वयं वृणीमहे वरुण मित्रार्यमन् ।
येना निरंहसो यूयं पाथ नेथा च मर्त्यमति द्विषः ॥२॥
ते नूनं नोऽयमूतये वरुणो मित्रो अर्यमा ।
नयिष्ठा उ नो नेषणि पर्षिष्ठा उ नः पर्षण्यति द्विषः ॥३॥
यूयं विश्वं परि पाथ वरुणो मित्रो अर्यमा ।
युष्माकं शर्मणि प्रिये स्याम सुप्रणीतयोऽति द्विषः ॥४॥
आदित्यासो अति स्रिधो वरुणो मित्रो अर्यमा ।
उग्रं मरुद्भीरुद्रं हुवेमेन्द्रमग्निं स्वस्तयेऽति द्विषः ॥५॥

---

१ अर्यमा, मित्र और वरुण जिसे शत्रुके हाथसे बचा देते हैं, देवो, कोई भी अमङ्गल और कोई भी पाप उसपर आक्रमण नहीं कर सकता ।

२ वरुण, मित्र और अर्यमा, हम तुमसे प्रार्थना करते हैं कि, मनुष्यको पाप और शत्रुके हाथसे बचाओ ।

३ वरुण, मित्र और अर्यमा निश्चय ही हमारी रक्षा करेंगे । वरुण आदि देवो, हमें ले चलो, पार करो और शत्रुके हाथसे परित्राण करो ।

४ वरुण, मित्र और अर्यमा, तुम लोग संसारकी रक्षा करते और नेताका कार्य भली भाँति करते हो । तुम लोगोंके द्वारा हम शत्रुके हाथसे रक्षा पाकर तुम्हारे पास सुन्दर सुख पावें ।

५ आदित्य, वरुण, मित्र और अर्यमा शत्रुओंके हाथसे बचावें । शत्रुसे परित्राण पाकर, कल्याण-लाभके लिये, हम उग्र-मूर्ति रुद्र, मरुद्-गण, इन्द्र और अग्निको बुलाते हैं ।

नेतार उ षु णस्तिरो वरुणो मित्रो अर्यमा ।
अति विश्वानि दुरिता राजानश्चर्षणीनामति द्विषः ॥६॥
शुनमस्मभ्यमूतये वरुणो मित्रो अर्यमा ।
शर्म यच्छन्तु सप्रथ आदित्यासो यदीमहे अति द्विषः ॥७॥
यथा ह त्यद्वसवो गौर्यं चित् पदि षिताममुञ्चता यजत्राः ।
एवोष्वस्मन्मुञ्चता व्यंहः प्र तार्यग्ने प्रतरन्न आयुः ॥८॥



१२७ सूक्त

रात्रि देवता। सोभरि-पुत्र कुशिक ऋषि। गायत्री छन्द।

रात्री व्यख्यदायती पुरुत्रा देव्यक्षभिः । विश्वा अधि श्रियोऽधित ॥१॥
ओर्वप्रा अमर्त्या निवतो देव्युद्वतः । ज्योतिषा बाधते तमः ॥२॥
निरु स्वसारमस्कृतोषसं देव्यायती । अपेदु हासते तमः ॥३॥

---

६ वरुण, मित्र और अर्यमा मार्ग दिखाकर ले जानेमें अत्यन्त निपुण हैं। ये पापको लुप्त कर देते हैं। मनुष्योंके मालिक ये सब देवता सारे पापों और शत्रु-हस्तसे हमें बचावें।

७ वरुण, मित्र और अर्यमा रक्षाके साथ हमें सुखी करें। हम जो सुख चाहते हैं, प्रचुर परिमाणमें आदित्य लोग हमें वही सुख दें और शत्रु-हस्तसे बचावें।

८ जिस समय शुभ्रवर्ण गौका पैर बाँधा गया था, उस समय यज्ञ-भाग-भागी वसु लोगोंने बन्धन छुड़ा दिया था। वैसे ही हमें पापसे बचाओ। अग्नि, हमें उत्तम परमायु प्रदान करो।

---

१ आती हुई रात्रिदेवी चारो ओर विस्तृत हुई हैं। उन्होंने नक्षत्रोंके द्वारा निःशेष शोभा पायी है।

२ दीप्तिशालिनी रात्रिदेवीने अतीव विस्तार प्राप्त किया है। जो नीचे रहते हैं और जो ऊपर रहते हैं, उन सबको वह आच्छन्न करनेवाली हैं। प्रकाशके द्वारा उन्होंने अन्धकारको नष्ट किया है।

३ रात्रिने आकर उषाको, अपनी भगिनीके समान, परिग्रहण किया। उन्होंने अन्धकारको दूर किया।

सा नो अद्य यस्या वयं नि ते यामन्नविक्ष्महि । वृक्षे न वसतिं वयः ॥४॥

नि ग्रामासो अविक्षत नि पद्वन्तो नि पक्षिणः । नि श्येनासश्चिदर्थिनः ॥५॥

यावया वृक्यं वृकं यवय स्तेनमूर्म्ये । अथा नः सुतरा भव ॥६॥

उप मा पेपिशत्तमः कृष्णं व्यक्तमस्थित । उष ऋणेव यातय ॥७॥

उप ते गाइवाकरं वृणीष्व दुहितर्दिवः । रात्रि स्तोमं न जिग्युषे ॥८॥

१२८ सूक्त

विश्वदेव देवता । आङ्गिरस विहव्य ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

ममाग्ने वर्चो विहवेष्वस्तु वयं त्वेन्धानास्तन्वं पुषेम ।

मह्यं नमन्तां प्रदिशश्चतस्रस्त्वयाध्यक्षेण पृतना जयेम ॥१॥

---

४ जैसे चिड़ियां पेड़पर रहती हैं, वैसे ही जिनके आनेपर हम सोये थे, वे रात्रिदेवी हमारे लिये शुभंकरी हों।

५ सब गाँव निस्तब्ध हैं; पादचारी, पक्षी और शीघ्रगामी श्येन आदि निस्तब्ध होकर सो गये हैं।

६ हे रात्रि, वृक और वृकीको हमसे अलग कर दो। चोरको दूर ले जाओ। हमारे लिये तुम विशेष रीतिसे शुभंकरी होओ ।

७ कृष्णवर्णका अन्धकार दिखाई दे रहा है। मेरे पासतक सब ढक गया है । उषा देवी जैसे मेरे ऋणका परिशोध कर ऋणको हटा देती हो, वैसे ही अन्धकारको नष्ट करो।

८ आकाशकी कन्या रात्रि, तुम जाती हो। गायके समान तुम्हें यह स्तोत्र मैं अर्पित करता हूँ। ग्रहण करो।



१ अग्नि, युद्धके समय मेरे तेजका उदय हो। तुम्हें प्रज्वलित करके हम अपनी देहकी पुष्टि करते हैं। मेरे पास चारो दिशाएँ अवनत हों । तुम्हें स्वामी पाकर हम शत्रुओंको जीतें ।

मम देवा विहवे सन्तु सर्व इन्द्रवन्तो मरुतो विष्णुरग्निः ।
ममान्तरिक्षमुरुलोकमस्तु मह्यं वातः पवतां कामे अस्मिन् ॥२॥
मयि देवा द्रविणमा यजन्तां मय्याशीरस्तु मयि देवहूतिः ।
दैव्या होतारो वनुषन्त पूर्वेऽरिष्टाः स्याम तन्वा सुवीराः ॥३॥
मह्यं यजन्तु मम यानि हव्याकूतिः सत्या मनसो मे अस्तु ।
एनो मा नि गां कतमच्चनाहं विश्वे देवासो अधि वोचता नः ॥४॥
देवीः षळुर्वीरुरु नः कृणोत विश्वे देवास इह वीरयध्वम् ।
मा हास्महि प्रजया मा तनूभिर्मा रधाम द्विषते सोम राजन् ॥५॥
अग्ने मन्युं प्रतिनुदन् परेषामदब्धो गोपाः परि पाहि नस्त्वम् ।
प्रत्यञ्चो यन्तु निगुतः पुनस्तेऽमैषां चित्तं प्रबुधां वि नेशत् ॥६॥

---

२ इन्द्रादि देवता, मरुद्गण, विष्णु और अग्नि, युद्धके समय, मेरे पक्षमें रहें। आकाशके समान विस्तीर्ण भुवन मेरे पक्षमें हो। मेरी कामनापर वायु, मेरे अनुकूल होकर, मुझे पवित्र करें।

३ मेरे यज्ञमें सन्तुष्ट होकर देवता लोग मुझे धन दें। मैं आशीर्वाद प्राप्त करूं। देवाह्वान करूं। प्राचीन समयमें जिन्होंने देवोंके लिये होम किया है, वे अनुकूल हों। मेरा शरीर निरुपद्रव हो। सन्तान उत्पन्न हों।

४ मेरी यज्ञ-सामग्री, मेरे लिये, देवोंको अर्पित हो। मेरा मनोरथ सिद्ध हो। मैं किसी पापमें लिप्त न होऊँ। निखिल देवता हमें यह आशीर्वाद करें।

५ छ देवियाँ (द्यौ, पृथिवी, दिन, रात्रि, जल और ओषधि) हमारी श्रीवृद्धि करें। देवो, यहां वीरत्व करो। हमारी सन्तति और शरीरका अमङ्गल न हो। राजा सोम, शत्रुके पास हम विनष्ट न हों।

६ अग्नि, शत्रुओंका क्रोध विफल करके रक्षक बनो और दुर्द्धर्ष होकर हमारी सब प्रकारसे रक्षा करो। शत्रु लोग व्यर्थ-मनोरथ होकर लौट जायं। यदि शत्रु बुद्धिमान् भी हों, तो भी उनकी बुद्धि लुप्त हो जायं।

धाता धातॄणां भुवनस्य यस्पतिर्देवं त्रातारमभिमातिषाहम् ।
इमं यज्ञमश्विनोभा बृहस्पतिर्देवाः पान्तु यजमानं न्यर्थात् ॥७॥
उरुव्यचा नो महिषः शर्म यंसदस्मिन् हवे पुरुहूतः पुरुक्षुः ।
स नः प्रजायै हर्यश्व मृलयेन्द्र मा नो रीरिषो मा परा दाः ॥८॥
ये नः सपत्ना अप ते भवन्त्विन्द्राग्निभ्यामव बाधामहे तान् ।
वसवो रुद्रा आदित्या उपरिस्पृशं मोग्रं चेत्तारमधिराजमक्रन् ॥९॥

११ अनुवाक । १२६ सूक्त

परमात्मा देवता । परमेष्ठी प्रजापति ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द । *

नासदासीन्नो सदासीत्तदानीं नासीद्रजो नो व्योमा परा यत् ।
किमावरीवः कुह कस्य शर्मन्नम्भः किमासीद्गहनं गभीरम् ॥१॥

७ जो सृष्टि-कर्त्ताओंके भी सृष्टि-कर्त्ता हैं, जो भुवनके अधीश्वर हैं, जो रक्षक और शत्रु-विजेता हैं, उनकी मैं स्तुति करता हूं। अश्विद्वय, बृहस्पति तथा अन्यान्य देवता इस यज्ञकी रक्षा करें। यजमानकी क्रिया निरर्थक न हो।

८ जो अतीव विस्तृत तेजके अधिकारी हैं, जो महान् हैं, जो सबसे पहले बुलाये जाते हैं और जो विविध स्थानोंमें रहते हैं, वे ही इन्द्र इस यज्ञमें हमें सुखी करें। हरित-वर्ण अश्वके स्वामी इन्द्र, हमें सुखी करो, सन्तानसे युक्त करो। हमारा अनिष्ट नहीं करना, हमसे प्रतिकूल नहीं होना।

९ जो हमारे शत्रु हैं, वे दूर हों। इन्द्र और अग्निकी सहायतासे हम उन्हें जीतें। वसुगण, रुद्रगण और आदित्यगण मुझे सर्व-श्रेष्ठ, दुर्द्धर्ष, बुद्धिमान् और अधिराज करें।

१ उस समय वा प्रलय दशामें असत् (सियारकी सींगके समान जिसका अस्तित्व नहीं है) नहीं था। जो सत् (जीवात्मा आदि) है, वह भी नहीं था। पृथिवी भी नहीं थी और आकाश तथा आकाशमें विद्यमान सातो भुवन भी नहीं थे। आवरण (ब्रह्माण्ड) भी कहाँ था ? किसका कहां स्थान था ? क्या दुर्गम और गभीर जल उस समय था ?

* यही "नासदीय सूक्त" है। इसे ही लो० तिलकने मनुष्य-जातिका सर्व-श्रेष्ठ स्वाधीन चिन्तन कहा है।

न मृत्युरासीदमृतं न तर्हि न रात्र्या अह्न आसीत् प्रकेतः।
आनीदवातं स्वधया तदेकं तस्माद्धान्यन्न परः किंचनास ॥२॥
तम आसीत्तमसा गूह्लमग्रेऽप्रकेतं सलिलं सर्वमा इदं।
तुच्छ्येनाभ्वपिहितं यदासीत्तपसस्तन्महिना जायतैकम् ॥३॥
कामस्तदग्रे समवर्त्तताधिमनसो रेतः प्रथमं यदासीत्।
सतो बन्धुमसति निरविन्दन् हृदि प्रतीष्या कवयो मनीषा ॥४॥
तिरश्चीनो विततो रश्मिरेषामधः स्विदासीदुपरि स्विदासीत्।
रेतोधा आसन् महिमान आसन्त्स्वधा अवस्तात् प्रयतिः परस्तात् ॥५॥
को अद्धा वेद क इह प्र वोचत् कुतआजाता कुत इयं विसृष्टिः।
अर्वाग्देवा अस्य विसर्जनेनाथा को वेद यत आबभूव ॥६॥

२ उस समय मृत्यु नहीं थी, अमरता भी नहीं थी, रात और दिनका भेद भी नहीं था। वायु-शून्य और आत्मावलम्बनसे श्वास-प्रश्वास-युक्त केवल एक ब्रह्म थे। उनके अतिरिक्त और कुछ नहीं था।

३ सृष्टिके प्रथम अन्धकार (वा माया-रूपी अज्ञान) से अन्धकार (वा जगत्कारण) ढका हुआ था। सभी अज्ञात और सब जलमय (वा अविभक्त) था। अविद्यमान वस्तुके द्वारा वह सर्वव्यापी आच्छन्न था। तपस्याके प्रभावसे वही एक तत्त्व उत्पन्न हुआ।

४ सर्व-प्रथम परमात्माके मनमें काम (सृष्टिकी इच्छा) उत्पन्न हुआ। उससे सर्व-प्रथम बीज (उत्पत्तिकारण) निकला। बुद्धिमानोंने, बुद्धिके दुवारा, अपने अन्तःकरणमें विचार करके अविद्यमान वस्तुसे विद्यमान वस्तुका उत्पत्ति-स्थान निरूपित किया।

५ बीज-धारक पुरुष (भोक्ता) उत्पन्न हुए। महिमाएँ (भोग्य) उत्पन्न हुईं। उन (भोक्ताओं) का कार्य-कलाप दोनों पार्श्वों (नीचे और ऊपर) विस्तृत हुआ। नीचे स्वधा (अन्न) रहा और ऊपर प्रयति (भोक्ता) अवस्थित हुआ।

६ प्रकृत तत्त्वको कौन जानता है? कौन उसका वर्णन करे? यह सृष्टि किस उपादान कारणसे हुई? किस निमित्त कारणसे ये विविध सृष्टियाँ हुईं? देवतालोग इन सृष्टियोंके अनन्तर उत्पन्न हुए हैं। कहांसे सृष्टि हुई, यह कौन जानता है?

इयं विसृष्टिर्यत आबभूव यदि वा दधे यदि वा न ।
यो अस्याध्यक्षः परमे व्योमन्त्सो अङ्ग वेद यदि वा न वेद ॥७॥

१३० सूक्त

प्रजापति देवता। प्रजापति-पुत्र यज्ञ ऋषि। जगती और त्रिष्टुप् छन्द।

यो यज्ञो विश्वतस्तन्तुभिस्तत एकशतं देवकर्मेभिरायतः ।
इमे वयन्ति पितरो य आययुः प्र वयाप वयेत्यासते तते ॥१॥
पुमाँ एनं तनुत उत्कृणत्ति पुमान् वि तत्ने अधि नाके अस्मिन् ।
इमे मयूखा उप सेदुरू सदः सामानि चक्रुस्तसराण्योतवे ॥२॥
कासीत् प्रमा प्रतिमा किं निदानमाज्यं किमासीत् परिधिः क आसीत् ।
छन्दः किमासीत् प्रउगं किमुक्थं यद्देवा देवमयजन्त विश्वे ॥३॥

---

७ ये नाना सृष्टियाँ कहाँसे हुईं, किसने सृष्टियाँ कीं और किसने नहीं कीं—यह सब वे ही जानें, जो इनके स्वामी परम धाममें रहते हैं। हो सकता है कि, वे भी यह सब नहीं जानते हों ।

---

१ चारो ओर सूत्र-विस्तारके द्वारा यज्ञरूप वस्त्र बुना जाता है। देवोंके लिये बहुसङ्ख्यक अनुष्ठानोंके द्वारा इसका विस्तार किया गया है। यज्ञमें जो पितर लोग आये हैं, वे बुन रहे हैं। "लम्बा बुनो, चौड़ा बुनो" कहते हुए वे वस्त्र-वयनका कार्य करते हैं ।

२ एक वस्त्रको लम्बा करते हैं और दूसरे चौड़ाईके लिये उसे पसार रहे हैं। यह स्वर्गतक विस्तारित हो रहा है। ये सब तेजःपुञ्ज देवता यज्ञ-गृहमें बैठे हैं। इस कार्यमें साम-मन्त्रोंका ताना-बाना बनाया जाता है।

३ जिस समय देवोंने प्रजापति-यज्ञ किया, उस समय यज्ञकी सीमा क्या थी? देव-मूर्त्ति क्या थी? सङ्कल्प क्या था? घृत क्या था? यज्ञकी (पलाश आदिकी) तीन परिधियां (माप) क्या थीं? छन्द और उक्थ क्या थे?

अग्नेर्गायत्र्यभवत् सयुग्वोष्णिहया सविता सं बभूव ।
अनुटुभ्भा सोम उक्थैर्महस्वान् बृहस्पतेर्बृहती वाचमावत् ॥४॥
विराण्मित्रावरुणयोरभिश्रीरिन्द्रस्य त्रिष्टुबिह भागो अह्नः ।
विश्वान् देवाञ्जगत्या विवेश तेन चाक्लृप्र ऋषयो मनुष्याः ॥५॥
चाक्लृप्रे तेन ऋषयो मनुष्या यज्ञे जाते पितरो नः पुराणे ।
पश्यन्मन्ये मनसा चक्षसा तान्य इमं यज्ञमयजन्त पूर्वे ॥६॥
सहस्तोमाः सहछन्दस आवृतः सहप्रमा ऋषयः सप्त दैव्याः ।
पूर्वेषां पन्थामनुदृश्य धीरा अन्वालेभिरे रथ्यो न रश्मीन् ॥७॥

१३१ सूक्त

अश्विद्वय और इन्द्र देवता। कक्षीवान्के पुत्र सुकीर्त्ति ऋषि। त्रिष्टुप् और अनुष्टुप् छन्द।

अप प्राच इन्द्र विश्वाँ अमित्रानपापाचो अभिभूते नुदस्व ।
अपोदीचो अप शूराधराच उरौ यथा तव शर्मन्मदेम ॥१॥

४ गायत्री छन्द अग्निका सहायक हुआ और उष्णिक् सविता देवका। सोम अनुष्टुप् छन्दके और तेजस्वी सूर्य उक्थ छन्दके साथ मिले। बृहती छन्दने बृहस्पति-वाक्यका आश्रय किया।

५ विराट् छन्द मित्र और वरुणके आश्रित हुआ। इन्द्र और दिनके सोमके भागमें त्रिष्टुप् पड़ा। जगती छन्दने अन्य देवोंका आश्रय किया। इस प्रकार ऋषियों और मनुष्योंने यज्ञ किया।

६ प्राचीन समयमें, यज्ञ उत्पन्न होनेपर, हमारे पूर्व पुरुष ऋषियों और मनुष्योंने उक्त नियमके अनुसार अनुष्ठान सम्पन्न किया। जिन्होंने प्राचीन समयमें यज्ञानुष्ठान किया था, उन्हें, मुझे जान पड़ता है कि, मैं मनश्चक्षुसे देख रहा हूं।

७ सात दिव्य ऋषियोंने स्तोत्रों और छन्दोंका संग्रह करके पुनः पुनः अनुष्ठान किया और यज्ञका परिमाण स्थिर किया। जैसे सारथि घोड़ेका लगाम हाथसे पकड़ते हैं, वैसे ही विद्वान् ऋषियोंने पूर्व पुरुषोंकी प्रथाके प्रति दृष्टि रखकर-यज्ञानुष्ठान किया।

१ शत्रु-विजेता इन्द्र, सामने और पीछे, उत्तर और दक्षिण जो सब शत्रु हैं, उन्हें दूर करो। वीर, तुम्हारे पास विशिष्ट सुखकी प्राप्ति करके हम आनन्दित हों।

कुविदङ्ग यवमन्तो यवं चिद्यथा दान्त्यनुपूर्वं वियूय ।
इहेहैषां कृणुहि भोजनानि ये बर्हिषो नमोवृक्तिं न जग्मुः ॥२॥
नहि स्थूर्यृतुथा यातमस्ति नोत श्रवो विविदे सङ्गमेषु ।
गव्यन्त इन्द्रं सख्याय विप्रा अश्वायन्तो वृषणं वाजयन्तः ॥३॥
युवं सुराममश्विना नमुचावासुरे सचा ।
विपिपाना शुभस्पती इन्द्रं कर्मस्वावतम् ॥४॥
पुत्रमिव पितरावश्विनोभेन्द्रावथुः काव्यैर्दंसनाभिः ।
यत् सुरामं व्यपिबः शचीभिः सरस्वती त्वा मघवन्नभिष्णक् ॥५॥
इन्द्रः सुत्रामा स्वां अवोभिः सुमृळीको भवतु विश्ववेदाः ।
बाधतां द्वेषो अभयं कृणोतु सुवीर्यस्य पतयः स्याम ॥६॥
तस्य वयं सुमतौ यज्ञियस्यापि भद्रे सौमनसे स्याम ।
स सुत्रामा स्ववाँ इन्द्रो अस्मे आराच्चिद्द्वेषः सनुतर्युयोतु ॥७॥

---

२ जिनके खेतमें यव (जौ) होता है, वे जैसे अलग-अलग करके क्रमशः उसे, अनेक बार, काटते हैं, वसे ही, हे इन्द्र, जो यज्ञमें "नमः" नहीं करते अथवा जो पुण्यानुष्ठानसे विरत हैं, उनकी भोजन-सामग्रीको अभी नष्ट कर दो ।

३ जिस शकटमें एक ही चन्द्र है, वह कभी भी नियत स्थानपर नहीं उपस्थित हो सकता। युद्धके समय उससे अन्न-लाभ नहीं हो सकता। जो लोग गौ, अश्व, अन्न आदिकी इच्छा करते हैं वे बुद्धिमान् इन्द्रके सख्यके लिये लालायित रहते हैं ।

४ कल्याण-मूर्त्ति अश्विद्वय, जिस समय नमुचिके साथ इन्द्रका युद्ध हुआ, उस समय तुम दोनोंने मिलकर और सुन्दर सोमका पान करके इन्द्रके कार्यमें उनकी रक्षा की ।

५ अश्विद्वय, जैसे माता-पिता पुत्रकी रक्षा करते हैं, वैसे ही तुम लोगोंने सुन्दर सोमका पान करके अपनी क्षमता और अद्भुत कार्योंके द्वारा इन्द्रकी रक्षा की । इन्द्र, सरस्वती देवी तुम्हारे पास थीं ।

६ और ७—इन्द्र उत्तम रक्षक, धनी और सर्वज्ञ हैं । वह रक्षा करके सुखदाता हों । वह शत्रुओंको हटाकर अभय दें । हम उत्तम शक्तिके अधिकारी हों । यज्ञ भागग्राही इन्द्रके पास हम प्रसन्नता-पात्र हों । वह हमारे प्रति भली भाँति सन्तुष्ट हों । वह उत्तम रक्षक और धनी हैं । इन्द्र हमारे पासके और दूरके शत्रुको दृष्टि-मार्गसे अलग करें ।

१३२ सूक्त

मित्र और वरुण देवता। नृमेध-पुत्र शकपूत ऋषि। प्रस्तारणपङ्क्ति आदि छन्द।

ईजानमिद्द्यौर्गूर्तावसुरीजानं भूमिरभि प्रभूषणि ।
ईजानं देवावश्विनावभि सुम्नैरवर्धताम् ॥१॥
ता वां मित्रावरुणा धारयत्क्षिती सुषुम्नेषितत्वता यजामसि ।
युवोः क्राणाय सख्यैरभिष्याम रक्षसः ॥२॥
अधा चिन्नु यद्दिधिषामहे वामभि प्रियं रेक्णः पत्यमानाः ।
दद्वाँ वा यत् पुष्यति रेक्णः सम्वारन्नकिरस्य मघानि ॥३॥
असावन्यो असुर सूयत द्यौस्त्वं विश्वेषां वरुणासि राजा ।
मूर्धा रथस्य चाकन्नैतावतैनसान्तकध्रुक् ॥४॥
अस्मिन्त्स्वेतच्छकपूत एनो हिते मित्रे निगतान् हन्ति वीरान् ।
अवोर्वा यद्धात्तनूष्ववः प्रियासु यज्ञियास्ववी ॥५॥

१ जो यज्ञ करता है, उसीके लिये आकाश (द्यौ) धन रखता है। पृथिवी भी उसे ही श्री-सम्पन्न करती है। यज्ञकर्त्ताको ही अश्विद्वय नाना सुख-सामग्री देकर सन्तुष्ट करते हैं।

२ मित्र और वरुण, तुम पृथिवीको धारण किये हुए हो। उत्तम सुख-सामग्रीके लिये हम तुम दोनोंकी पूजा करते हैं। यजमानके प्रति तुम लोगोंका जो सख्य-व्यवहार होता है, उसके प्रभावसे हम शत्रु-जय करें।

३ मित्र और वरुण, जिसी समय तुम्हारे लिये हम यज्ञ-सामग्रीका आयोजन करते हैं, उसी समय हम प्रिय धनके पास उपस्थित होते हैं। यज्ञ-दाता जो धन पाता है, उसपर कोई उपद्रव नहीं होता।

४ बली (असुर) मित्र, आकाशसे उत्पन्न सूर्य तुमसे भिन्न हैं। वरुण, तुम सबके राजा हो। तुम्हारे रथका मस्तक इधर ही आ रहा है। हिंसकोंके विनाशक इस यज्ञको तनिक भी अशुभ छू नहीं सकता।

५ मुझ शकपूतका पाप नीच-स्वभाव शत्रुओंको नष्ट करता है; क्योंकि मित्रदेव मेरे हितैषी हैं। मित्र देवता आकर शरीरकी रक्षा करें। उत्तमोत्तम यज्ञ-सामग्रीकी भी वह रक्षा करें

युवोर्हि मातादितिर्विचेतसा द्यौर्न भूमिः पयसा पुपूतनि ।
अव प्रिया दिदिष्टन सूरो निनिक्त रश्मिभिः ॥६॥
युवं ह्यप्नराजावसीदतं तिष्ठद्रथं न धूर्षदं वनर्षदम् ।
ता नः कणूकयन्तीर्नृमेधस्तत्रे अंहसः सुमेधस्तत्रे अंहसः ॥७॥

१३३ सूक्त

इन्द्र देवता । पिजवन-पुत्र सुदास ऋषि । शक्वरी छन्द ।

प्रोष्वस्मै पुरोरथमिन्द्राय शूषमर्चत ।
अभीके चिदु लोककृत् संगे समत्सु वृत्रहास्माकं बोधि चोदिता ।
नभन्तामन्यकेषां ज्याका अधि धन्वसु ॥१॥
त्वं सिन्धूँरवासृजोऽधराचो अहन्नहिम् ।
अशत्रुरिन्द्र जज्ञिषे विश्वं पुष्यसि वार्यं तं त्वा परिष्वजामहे नभन्ता-
मन्यकेषां ज्याका अधि धन्वसु ॥२॥

---

६ विशिष्ट ज्ञानी मित्र और वरुण, तुम्हारी माता अदिति हैं। द्यावापृथिवीको जलसे परिष्कृत करो। निम्न लोकमें उत्तमोत्तम सामग्री दो। सूर्य-किरणोंके द्वारा सारे भुवनको पवित्र करो।

७ अपने कर्मके बल तुम दोनों राजा हुए हो। तुम्हारा जो रथ वनमें विहार करता है, वह इस समय अश्वोंके वहन-स्थानमें रहे। सब शत्रु क्रोधके साथ चीत्कार करते हैं। बुद्धिमान् नृमेध ऋषि विपत्तिसे उद्धार पा चुके हैं।

१ इन्द्रकी जो सेना उनके रथके सामने है, उसकी भली भाँति पूजा करो। युद्धके समय जब शत्रु पास आकर भिड़ जाता है, तब इन्द्र पलायन नहीं करते—वृत्रका वध कर डालते हैं। हमारे प्रभु इन्द्र हमारी चिन्ता करें। शत्रुओं की ज्या छिन्न हो जाय।

२ नीचे बहनेवाली जल-राशिको तुमने मुक्त किया है। तुमने ही मेघ वा वृत्रका वध किया है। इन्द्र, तुम अजेय और शत्रुके लिये अवध्य होकर जनमे हो। तुम विश्व-पालक हो। तुम्हें ही सर्वश्रेष्ठ जानकर हम पासमें आये हैं। शत्रुओंकी ज्या छिन्न हो जाय।

वि षु विश्वा अरातयोऽर्यो नशन्त नो धियः ।
अस्तासि शत्रवे वधं यो न इन्द्र जिघांसति या ते रातिर्ददिर्वसु
नभन्तामन्यकेषां ज्याकाअधि धन्वसु ॥३॥
यो न इन्द्राभितो जनो वृकायुरादिदेशति ।
अधस्पदं तमीं कृधि विबाधो असि सासहिर्नभन्ता-
मन्यकेषां ज्याकाअधि धन्वसु ॥४॥
यो न इन्द्राभिदासति सनाभिर्यश्च निष्ट्यः ।
अव तस्य बलं तिर महीव द्यौरध त्मना नभन्ता-
मन्यकेषां ज्याका अधि धन्वसु ॥५॥
वयमिन्द्र त्वायवः सखित्वमारभामहे ।
ऋतस्य नः पथा नयाति विश्वानि दुरिता नभन्ता-
मन्यकेषां ज्याकाअधि धन्वसु ॥६॥
अस्मभ्यं सु त्वमिन्द्र तां शिक्ष या दोहते प्रति वरं जरित्रे ।
अच्छिद्रोध्नी पीपयद्यथा नः सहस्रधारा पयसा मही गौः ॥७॥



३ अदाता शत्रु दृष्टि-पथसे दूर हो। हमारी स्तुतियाँ चलती रहें। इन्द्र, हमारे बधकी इच्छा करनेवाले शत्रुको मारो। तुम्हारी दानशीलता हमें धन दे। विपक्षियोंकी प्रत्यञ्चा छिन्न हो जाय।

४ इन्द्र, भेड़ियेके समान आचरण करनेवाले जो लोग हमारी चारो ओर घूमते हैं, उन्हें धराशायी करो। तुम शत्रुओंको हरानेवाले और उन्हें पीड़ा पहुंचानेवाले हो। शत्रुओंकी प्रत्यञ्चा छिन्न हो जाय।

५ हमारे निकृष्ट, समान-जन्मा और अनिष्ट कर्म करनेवाले शत्रुओंके बलको वैसे ही नीचा दिखाओ, जैसे विशाल आकाश सारी वस्तुओंको नीचा दिखाता है। शत्रुओंकी प्रत्यञ्चा छिन्न हो जाय।

६ इन्द्र, हम तुम्हारे अनुगामी हैं। तुम्हारे बन्धुत्वके उपयुक्त कार्यके लिये हम उद्योग करते हैं। पुण्य कर्मके मार्गसे हमें ले चलो। हम सारे पापोंके पार जायं। शत्रुओंकी प्रत्यञ्चा छिन्न हो जाय।

७ इन्द्र, हमें तुम वह विद्या बताओ, जिसके प्रभावसे स्तोताका मनोरथ पूर्ण हो। पृथिवी-स्वरूपा यह गौ विशाल स्तनवाली होकर और सहस्र धाराओंसे दूध गिराकर हमें परितृप्त करे।

१३४ सूक्त

इन्द्र देवता। युवनाश्वके पुत्र मान्धाता ऋषि। सातवें मन्त्रकी गोधा नामकी ब्रह्मवादिनी ऋषिका। महापङ्क्ति और पङ्क्ति छन्द।

उभे यदिन्द्र रोदसी आपप्राथोषाइव।
महान्तं त्वा महीनां सम्राजं चर्षणीनां देवी जनित्र्यजी-
जनद्भद्रा जनित्र्यजीजनत् ॥१॥
अव स्म दुर्हणायतो मर्तस्य तनुहि स्थिरम्।
अधस्पदं तमीं कृधि यो अस्माँ आदिदेशति देवी
जनित्र्यजीजनद्भद्रा जनित्र्यजीजनत् ॥२॥
अव त्या बृहतीरिषो विश्वश्चन्द्रा अमित्रहन्।
शचीभिः शक्र धूनुहीन्द्र विश्वाभिरूतिभिर्देवी
जनित्र्यजीजनद्भद्रा जनित्र्यजीजनत् ॥३॥
अव यत्त्वं शतक्रतविन्द्र विश्वानि धूनुषे।
रयिं न सुन्वते सचा सहस्रिणीभिरूतिभिर्देवी
जनित्र्यजीजनद्भद्रा जनित्र्यजीजनत् ॥४॥

---

१ इन्द्र, तुम उषाके समान द्यावापृथिवीको तेजसे परिपूर्ण करते हो। तुम महान्से भी महान् हो। तुम मनुष्योंके सम्राट् हो। तुम्हारी कल्याणमयी माताने तुम्हें उत्पन्न किया है।

२ जो दुरात्मा हमारा बध करना चाहता है, उसके अधिक बली रहने पर भी तुम उस बलको कम कर देते हो। जो हमारा अनिष्ट चाहता है, उसे तुम धराशायी करते हो। तुम्हारी कल्याणमयी माताने तुम्हें उत्पन्न किया है।

३ शक्तिशाली और शत्रुसंहारी इन्द्र, सबको आनन्दित करनेवाले उस प्रचुर अन्नको, अपनी क्षमतासे, तुम हमारी ओर प्रेरित करो। साथ ही सब प्रकारसे हमारी रक्षा भी करो। कल्याणमय माताने तुम्हें उत्पन्न किया है।

४ शतक्रतु इन्द्र, तुम जिस समय नाना प्रकारके अन्न प्रेरित करोगे, उस समय सोम-यज्ञ-कर्त्ता यजमानको असीम प्रकारसे बचाओगे और धन दोगे। कल्याणमयी माताने तुम्हें उत्पन्न किया है।

अव स्वेदाइवाभितो विष्वक् पतन्तु दिद्यवः ।
दूर्वायाइव तन्तवो व्यस्मदेतु दुर्मतिर्देवी
जनित्र्यजीजनद्भद्रा जनित्र्यजीजनत् ॥५॥
दीर्घं ह्यंकुशं यथा शक्तिं बिभर्षि मन्तुमः ।
पूर्वेण मघवन् पदाजो वयां यथा यमो देवी
जनित्र्यजीजनद्भद्रा जनित्र्यजीजनत् ॥६॥
नकिर्देवा मिनीमसि नकिरा योपयामसि मन्त्रश्रुत्यं चरामसि ।
पक्षेभिरपिकक्षेभिरत्राभि सं रभामहे ॥७॥



१३५ सूक्त

यम देवता। यमगोत्रीय कुमार ऋषि। अनुष्टुप् छन्द।

यस्मिन् वृक्षे सुपलाशे देवैः संपिबते यमः ।
अत्रा नो विश्पतिः पिता पुराणाँ अनु वेनति ॥१॥

५ स्वेद (पसीने) के समान इन्द्रके हथियार चारो ओर गिरें। दूबके प्रतानके समान आयुध सर्व-व्यापी हों। हमारी दुर्बुद्धि दूर हो। कल्याणमयी माताने तुम्हें उत्पन्न किया है।

६ ज्ञानी और धनी इन्द्र, विशाल अङ्कुशके समान "शक्ति" नामक अस्त्रको तुम धारण करते हो। जैसे छाग अपने चरणोंसे वृक्ष-शाखाको खींचता है, वैसे ही तुम उस "शक्ति"के द्वारा शत्रुको खींचकर गिराते हो। कल्याणमयी माताने तुम्हें उत्पन्न किया है।

७ देवो, तुम्हारे विषयमें हम कोई भी त्रुटि नहीं करते, किसी भी कर्ममें शैथिल्य वा औदास्य नहीं करते। मन्त्र और श्रुतिके अनुसार हम आचरण करते हैं। दोनों हाथोंसे इकट्ठी यज्ञ-सामग्री लेकर इस यज्ञ-कर्मका हम सम्पादन करते हैं।

---

१ सुन्दर पत्रोंके द्वारा शोभित जिस वृक्षपर देवोंके साथ यमदेव पान करते हैं, हमारे नरपति पिताकी इच्छा है कि, मैं उसी वृक्षपर जाकर पूर्वजोंका साथी बनूं।

पुराणाँ अनुवेनन्तं चरन्तं पापयामुया ।
असूयन्नभ्यचाकशं तस्मा अस्पृहयं पुनः ॥२॥
यं कुमार नवं रथमचक्रं मनसाकृणोः ।
एकेषं विश्वतः प्राञ्चमपश्यन्नधि तिष्ठसि ॥३॥
यं कुमार प्रावर्तयो रथं विप्रेभ्यस्परि ।
तं सामानु प्रावर्तत समितो नाव्याहितम् ॥४॥
कः कुमारमजनयद्रथं को निरवर्तयत् ।
कः स्वित्तदद्य नो ब्रूयादनुदेयी यथाभवत् ॥५॥
यथाभवदनुदेयी ततो अग्रमजायत ।
पुरस्ताद्बुध्न आततः पश्चान्निरयणं कृतम् ॥६॥
इदं यमस्य सादनं देवमानं यदुच्यते ।
इयमस्य धम्यते नालीरयं गीर्भिः परिष्कृतः ॥७॥

---

२ निर्दय होकर मेरे पिताकी "पूर्व पुरुषोंका साथी" बननेकी बातपर मैंने उनके प्रति विरक्तिसे भरा दृष्टि-पात किया था। विरक्तिको छोड़कर अब मैं अनुरक्त हुआ हूं।

३ (यमकी उक्ति—) नचिकेत कुमार, तुमने ऐसा अभिनव रथ चाहा था, जिसमें चक्र न हो और जिसकी ईषा (दण्ड) एक ही हो तथा जो सर्वत्र जानेवाला हो। विना समझे ही तुम उस रथ पर चढ़े हो।

४ कुमार, बुद्धिशाली बन्धु-बान्धवोंको छोड़कर तुमने उस रथको चलाया है। वह तुम्हारे पिताके सान्त्वना-पूर्ण उपदेश वचनके अनुसार चला है। वह उपदेश उसके लिये नौका और आश्रय हुआ। उस नौकापर संस्थापित होकर यह रथ यहाँसे चला गया है।

५ इस बालकका जन्मदाता कौन है? किसने इस रथको भेजा है? जिससे यह बालक यमके द्वारा जीवलोकमें प्रत्यर्पित होगा, उस बातको आज हमसे कौन कहेगा?

६ जिससे यमके द्वारा बालक जीवलोकमें प्रत्यर्पित होगा, वह बात प्रथम ही कह दी गयी थी। प्रथम पिताके उपदेशका मूल अंश प्रकट हुआ, पीछे प्रत्यागमनका उपाय कहा गया।

७ यही यमका निवास-स्थान है। लोग कहते हैं कि, यह देवोंके द्वारा निर्मित हुआ है। यह यमकी प्रसन्नताके लिये वेणु (वाद्य) बजाया जाता है और स्तुतियोंसे यमको भूषित किया जाता है।

१३६ सूक्त

अग्नि, सूर्य और वायु देवता। जूति आदि ऋषि। अनुष्टुप् छन्द।

केश्यग्निं केशी विषं केशी बिभर्ति रोदसी।
केशी विश्वं स्वर्दृशे केशीदं ज्योतिरुच्यते ॥१॥
मुनयो वातरशनाः पिशङ्गा वसते मला।
वातस्यानु ध्राजिं यन्ति यद्देवासो अविक्षत ॥२॥
उन्मदिता मौनेयेन वाताँ आ तस्थिमा वयम्।
शरीरेदस्माकं यूयं मर्तासो अभि पश्यथ ॥३॥
अन्तरिक्षेण पतति विश्वा रूपावचाकशत्।
मुनिर्देवस्यदेवस्य सौकृत्याय सखा हितः ॥४॥
वातस्याश्वो वायोः सखाथो देवेषितो मुनिः।

उभौ समुद्रावा क्षेति यश्च पूर्व उतापरः ॥५॥

१ केशी (सूर्य) अग्नि, जल और द्यावापृथिवीको धारण करते हैं। केशी ही सारे संसारको प्रकाशके द्वारा दर्शनीय बनाते हैं। इस ज्योतिको ही केशी कहा जाता है।

२ वातरशनके वंशज मुनि लोग पीले बल्कल पहनते हैं। वे देवत्व प्राप्त करके वायुकी गतिके अनुगामी हुए हैं।

३ सारे लौकिक व्यवहारोंके विसर्जनसे हम उन्मत्त (परमहंस) हो गये हैं। हम वायुके ऊपर चढ़ गये हैं। तुमलोग केवल हमारा शरीर देखने हो—हमारी प्रकृत आत्मा तो वायुरूपी हो गयी है।

४ मुनि लोग आकाशमें उड़ सकते और सारे पदार्थोंको देख सकते हैं। जहां कहीं भी जितने देवता हैं, वे सबके प्रिय बन्धु हैं। वह सत्कर्मके लिये ही जीते हैं।

५ मुनि लोग वायुमार्गपर घूमनेके लिये अश्व-स्वरूप हैं। वे वायुके सहचर हैं। देवता उनको पानेकी इच्छा करते हैं। वह पूर्व और पश्चिमके दोनों समुद्रोंमें निवास करते हैं।

अप्सरसां गन्धर्वाणां मृगाणां चरणे चरन् ।
केशी केतस्य विद्वान् सखा स्वादुर्मदिन्तमः ॥६॥
वायुरस्मा उपामन्थत् पिनष्टि स्मा कुनन्नमा ।
केशी विषस्य पात्रेण यद्रुद्रेणापिबत् सह ॥७॥

१३७ सूक्त

विश्वदेव देवता । भरद्वाज, कश्यप, गौतम, अत्रि, विश्वामित्र, जमदग्नि और वसिष्ठ ऋषि । अनुष्टुप् छन्द ।

उत देवा अवहितं देवा उन्नयथा पुनः ।
उतागश्चकुषं देवा देवाजी वयथा पुनः ॥१॥
द्वाविमौ वातौ वात आ सिन्धोरा परावतः ।
दक्षं ते अन्य आ वातु परान्यो वातु यद्रपः ॥२॥
आ वात वाहि भेषजं वि वात वाहि यद्रपः ।
त्वं हि विश्वभेषजो देवानां दूत ईयसे ॥३॥

---

६ केशी देवता अप्सराओं, गन्धर्वों और हरिणोंमें विचरण करते हैं। वह सारे ज्ञातव्य विषयोंको जानते हैं। वह रसके उत्पादक और आनन्ददाता मित्र हैं।

७ जिस समय केशी रुद्रके साथ जल-पान करते हैं, उस समय वायु उस जलको हिला देते और कठिन माध्यमिकी वाक्को भङ्ग कर देते हैं।

१ देवो, मुझ पतितको ऊपर उठाओ। मुझ अपराधीको अपराधसे बचाओ। देवो, मुझे चिरजीवी करो।

२ समुद्रपर्यन्त—समुद्रसे भी दूरवर्त्ती स्थानतक दो वायु बहते हैं—एक वायु तुम्हारा (स्तोताका) बलाधान करे और दूसरा तुम्हारे पाप-ध्वंसके लिये बहे।

३ वायु, तुम इस ओर बहकर औषध ले आओ और जो अहितकर है, उसे यहाँसे बहा ले जाओ। तुम संसारके औषध-रूप हो। तुम देव-दूत होकर जाते हो।

आ त्वागमं शन्तातिभिरथो अरिष्टतातिभिः ।
दक्षं ते भद्रमाभार्षं परा यक्ष्मं सुवामि ते ॥४॥
त्रायन्तामिह देवास्त्रायतां मरुतां गणः ।
त्रायन्तां विश्वा भूतानि यथायमरपा असत् ॥५॥
आप इद्वा उ भेषजीरापो अमीवचातनीः ।
आपः सर्वस्य भेषजीस्तास्ते कृण्वन्तु भेषजम् ॥६॥
हस्ताभ्यां दशशाखाभ्यां जिह्वा वाचः पुरोगवी ।
अनामयित्नुभ्यां त्वा ताभ्यां त्वोप स्पृशामसि ॥७॥



१३८ सूक्त

इन्द्र देवता। ऊरुके पुत्र अङ्ग ऋषि। जगती छन्द।

तव त्य इन्द्र सख्येषु वह्नय ऋतं मन्वाना व्यदर्दिरुर्वलम् ।
यत्रा दशस्यन्नुषसो रिणन्नपः कुत्साय मन्मन्नह्यश्च दंसयः ॥१॥

४ यजमान, तुम्हारे लिये सुखकर और अहिंसाकर रक्षणोंके साथ मैं आया हूं। तुम्हारे उत्तम बलाधानका कार्य भी मैंने किया है। इस समय तुम्हारे रोगको मैं दूर कर देता हूं।

५ इस समय देवता, मरुद्गण और चराचर रक्षा करें। यह व्यक्ति नीरोग हो।

६ जल ही औषध, रोगशान्तिका कारण और सारे रोगोंके लिये भेषज है। तुम्हारे लिये वही जल औषध-विधान करे।

७ दोनों हाथोंमें दस अँगुलियाँ हैं। बचनके आगे-आगे जिह्वा चलती है। रोगशान्तिके लिये दोनों हाथोंसे मैं तुम्हें छूता हूं।



१ इन्द्र, तुम्हारे लिये बन्धुत्व करनेको यज्ञ-कर्त्ताओंने यज्ञ-सामग्री ले जाकर और यज्ञ करके बल (राक्षस) को मार डाला। उस समय स्तोत्र किया गया। तुमने कुत्सको प्रभातका आलोक दिया, जलको छोड़ा और वृत्रके सारे कर्मोंको ध्वस्त किया।

अवासृजः प्रस्वः श्वञ्चयो गिरीनुदाज उस्रा अपिबो मधु प्रियम् ।
अवर्धयो वनिनो अस्य दंससा शुशोच सूर्य ऋतजातया गिरा ॥२॥
वि सूर्यो मध्ये अमुचद्रथं दिवो विदद्दासाय प्रतिमानमार्यः ।
दृह्लानि पिप्रोरसुरस्य मयिन इन्द्रो व्यास्यच्चकृवाँ ऋजिश्वना ॥३॥
अनाधृष्टानि धृषितो व्यास्यन्निधीँरदेवाँ अमृणदयास्यः ।
मासेव सूर्यो वसु पुर्यमाददे गृणानः शत्रूँरशृणाद्विरुक्मता ॥४॥
अयुद्धसेनो विभ्वा विभिन्दता दाशद्वृत्रहा तुज्यानि तेजते ।
इन्द्रस्य वज्रादबिभेदभिश्नथः प्राक्रामच्छुन्ध्यूरजहादुषा अनः ॥५॥
एता त्या ते श्रुत्यानि केवला यदेक एकमकृणोरयज्ञम् ।
मासां विधानमदधा अधि द्यवि त्वया विभिन्नं भरति प्रधिं पिता ॥६॥

२ इन्द्र, तुमने जननीके समान जलको छोड़ा है, पर्वतोंको विचलित किया है। गायोंको हाँककर ले गये, मीठा सोम पिया और वनके वृक्षोंको वृष्टिके द्वारा वर्द्धित किया। यज्ञोपयोगी स्तुति-वचनोंसे इन्द्रकी स्तुति हुई। इन्द्रके कर्मसे सूर्य दीप्तिशाली हुए।

३ आकाशमें सूर्यने अपने रथको चला दिया। उन्होंने देखा कि आर्यलोग दासोंसे पराजित नहीं होते। इन्द्रने ऋजिश्वाके साथ बन्धुता करके पिप्रु नामक मायावी असुरके बल-वीर्यको नष्ट कर दिया।

४ दुर्द्धर्ष इन्द्रने दुर्द्धर्ष शत्रु-सेनाको नष्ट कर डाला। उन्होंने देव-शून्योंकी सम्पत्तिको ध्वस्त कर डाला। जैसे सूर्य मास-विशेषमें भूमि-रसको खींचते हैं, वैसे ही उन्होंने शत्रु-पुरी-स्थित धनको हर लिया। स्तोत्र ग्रहण करते-करते उन्होंने प्रदीप्त अस्त्रके द्वारा शत्रु-निपात किया।

५ इन्द्र-सेनाके साथ कोई युद्ध नहीं कर सकता। वह सर्वगन्ता और विदारक वज्रके द्वारा वृत्र-निपात करके आयुधपर शान चढ़ाते हैं। विदारक इन्द्र-वज्रसे शत्रु लोग डरे। सर्व-शोधक इन्द्र चलने लगे। उषाने अपना शकट चला दिया।

६ इन्द्र, यह सब वीरत्वका काय तुम्हारा ही सुना जाता है। अकेले ही तुमने यज्ञ-विघ्न-कर्त्ता और प्रधान असुरको मारा था। तुमने आकाशके ऊपर चन्द्रमाके जाने-आनेकी व्यवस्था की है। जिस समय वृत्र सूर्यके रथ-चक्रको भङ्ग करता है, उस समय सबके पिता द्युलोक, तुम्हारे ही द्वारा उस चक्रका धारण कराते हैं।

१३९ सूक्त

सविता और विश्वावसु देवता। विश्वावसु गन्धर्व ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

सूर्यरश्मिर्हरिकेशः पुरस्तात् सविता ज्योतिरुदयाँ अजस्रम् ।
तस्य पूषा प्रसवे याति विद्वान्त्संपश्यन् विश्वा भुवनानि गोपाः ॥१॥
नृचक्षा एष दिवो मध्य आस्त आपप्रिवान्रोदसी अन्तरिक्षम् ।
स विश्वाचीरभिचष्टे घृताचीरन्तरा पूर्वमपरञ्च केतुम् ॥२॥
रायो बुध्नः सङ्गमनो वसूनां विश्वा रूपाभिचष्टे शचीभिः ।
देवइव सविता सत्यधर्मेन्द्रो न तस्थौ समरे धनानाम् ॥३॥
विश्वावसुं सोमगन्धर्वमापो ददृशुषीस्तदृतेनाव्यायन् ।
तदन्ववैदिन्द्रो रारहाण आसां परि सूर्यस्य परिधीँ रपश्यत् ॥४॥
विश्वावसुरभि तन्नो गृणातु दिव्यो गन्धर्वो रजसो विमानः ।
यद्वा घा सत्यमुत यन्न विद्म धियो हिन्वानो धिय इन्नो अव्याः ॥५॥

---

१ सविता (सूर्योदयके प्रथम कालके अभिमानी देवता) देव सूर्य-किरणवाले और उज्ज्वल केशवाले हैं। वह पूर्वकी ओर क्रमागत आलोकका उदय किया करते हैं। उनका जन्म होनेपर पूषा अग्रसर होते हैं। वह ज्ञानी हैं। वह सारे संसारको देखते और बचाते हैं।

२ ये मनुष्यके प्रति कृपादृष्टि करके आकाशके बीचमें रहते और द्यावापृथिवी तथा मध्य-स्थित आकाशको आलोकसे पूर्ण करते हैं। वे सारी दिशाओं और कोनोंको प्रकाशित करते हैं वह पूर्व भाग, परभाग, मध्य भाग और प्रान्त भागको प्रकाशित करते हैं।

३ सूर्यदेव धनके मूल-रूप हैं, सम्पत्तिके मिलन-स्थान हैं। वह अपनी क्षमतासे द्रष्टव्य पदार्थको प्रकाशित करते हैं। सविता देवताके समान वह जो कुछ करते हैं, वह सफल होता है। जहां सारा धन एकत्र मिलता है; वहां वह इन्द्रके समान दण्डायमान हुए थे।

४ सोम, जिस समय सस्मत जलने विश्वावसु गन्धर्वको देखा, उस समय, पुण्य-कर्म-प्रभावसे वह विलक्षण रीतिसे, निकला। जल-प्रेरक इन्द्र उक्त वृत्तान्तको जान गये हैं। उन्होंने चारों ओर सूर्यमण्डलका निरीक्षण किया।

५ देवलोकवासी और जलके सृष्टि-कर्त्ता गन्धर्व विश्वावसु यह सब विषय हमें बता दें। जो यथार्थ और जो हमें अज्ञात है, उसमें वह हमारी चिन्ताको प्रवर्त्तित करें। हमारी बुद्धिकी रक्षा करें।

सस्निमविन्दच्चरणे नदीनामपावृणोद्दुरो अश्मव्रजानाम् ।
प्रासां गन्धर्वो अमृतानि वोचदिन्द्रो दक्षं परि जानादहीनाम् ॥६॥

१४० सूक्त

अग्नि देवता अर ऋषि। विस्तारपङ्क्ति, अष्टकवती आदि छन्द।

अग्ने तव श्रवो वयो महि भ्राजन्ते अर्चयो विभावसो ।
बृहद्भानो शवसा वाजमुक्थ्यं दधासि दाशुषे कवे ॥१॥
पावकवर्चाः शुक्रवर्चा अनूनवर्चा उदियर्षि भानुना ।
पुत्रो मातरा विचरन्नुपावसि पृणक्षि रोदसी उभे ॥२॥
ऊर्जो नपाज्जातवेदः सुशस्तिभिर्मन्दस्व धीतिभिर्हितः ।
त्वे इषः सन्दधुर्भूरिवर्पसश्चित्रोतयो वामजाताः ॥३॥
इरज्यन्नग्ने प्रथयस्व जन्तुभिरस्मे रायो अमर्त्य ।
स दर्शतस्य वपुषो वि राजसि पृणक्षि सानसिं क्रतुम् ॥४॥

६ नदियोंके चरण-देशमें इन्द्रने एक मेघको देखा। उन्होंने प्रस्तरमय द्वारका उद्घाटन कर दिया। गन्धर्वने इन सारी नदियोंके जलकी बात कही। इन्द्र भली भाँति मेघोंका बल जानते हैं।

१ अग्नि, तुम्हारे पास प्रशंसनीय अन्न हैं। तुम्हारी ज्वालाएँ विचित्र दीप्ति पाती हैं। दीप्ति ही तुम्हारी सम्पत्ति है। तुम्हारी दीप्ति प्रकाण्ड है। तुम क्रिया-कुशल हो। तुम दाताको उत्तम अन्न और बल देते हो।

२ अग्नि, जिस समय तुम दीप्तिके साथ उदित होते हो, उस समय तुम्हारा तेज सबको विशुद्ध करता है—यह शुक्रवर्ण धारण करके बृहत् हो जाते हैं। अग्नि, तुम द्यावापृथिवीको छूते हो। तुम पुत्र हो, वे माता हैं। इसीलिये तुम क्रीड़ा करते हुए उनका आलिङ्गन करते हो।

३ तेजके पुत्र ज्ञानी अग्नि, उत्तम स्तोत्रके पठनके साथ तुम्हें स्थापित किया गया है। आनन्द करो। तुम्हारे ही ऊपर नानाविध और नाना रूपोंकी यज्ञ-सामग्री हुत हुई है।

४ अमर अग्नि, नवोत्पन्न किरण-मण्डलसे सुशोभित होकर हमारे पास धन-विस्तार करो। तुम सुन्दर मूर्त्तिसे विभूषित हुए हो। तुम सर्वफलद यज्ञका स्पर्श करते हो।

इष्कर्तारमध्वरस्य प्रचेतसं क्षयन्तं राधसो महः ।
रातिं वामस्य सुभगां महीमिषं दधासि सानसिं रयिम् ॥५॥
ऋतावानं महिषं विश्वदर्शतमग्निं सुम्नाय दधिरे पुरो जनाः ।
श्रुत्कर्णं सप्रथस्तमं त्वा गिरा दैव्यं मानुषा युगा ॥६॥

१४१ सूक्त

विश्वदेव देवता । अग्नि ऋषि । अनुष्टुप् छन्द ।

अग्ने अच्छा वदेह नः प्रत्यङ् नः सुमना भव ।
प्र नो यच्छ विशस्पते धनदा असि नस्त्वम् ॥१॥
प्र नो यच्छत्वर्यमा प्र भगः प्र बृहस्पतिः ।
प्र देवाः प्रोत सूनृता रायो देवी ददातु नः ॥२॥

---

५ अग्नि, तुम यज्ञके शोभा-सम्पादक, ज्ञानी, प्रचुर-अन्नदाता और उत्तमोत्तम वस्तुओंके समर्पक हो। तुम्हारा हम स्तोत्र करते हैं। अतीव सुन्दर और प्रचुर अन्न दो तथा सर्व-फलोत्पादक धन दो।

६ यज्ञोपयोगी, सर्वदर्शक और विशाल अग्निका मनुष्योंने, सुखके लिये, आधान किया है। तुम्हारा कान सब कुछ सुनता है। तुम्हारे समान विस्तृत कुछ भी नहीं है। तुम देवलोकवासी हो। सभी मनुष्य, यजमान-पति-पत्नी, तुम्हारी स्तुति करते हैं।

---

१ अग्नि, उपयुक्त उपदेश दो। हमारे प्रति अनुकूल और प्रसन्न होओ। नरपति, तुम धनद हो; इसलिये हमें; दान दो।

२ अर्यमा, भग, बृहस्पति, अन्य देवता और सत्यप्रिय तथा वाक्यमयी सरस्वती देवी आदि हमें दान करें।

सोमं राजानमवसेऽग्निं गीर्भिर्हवामहे ।
आदित्यान् विष्णुं सूर्यं ब्रह्माणं च बृहस्पतिम् ॥३॥
इन्द्रवायू बृहस्पतिं सुहवेह हवामहे ।
यथा नः सर्व इज्जनः सङ्गत्यां सुमना असत् ॥४॥
अर्यमणं बृहस्पतिमिन्द्रं दानाय चोदय ।
वातं विष्णुं सरस्वतीं सवितारं च वाजिनम् ॥५॥
त्वं नो अग्ने अग्निभिर्ब्रह्म यज्ञं च वर्धय ।
त्वं नो देवतातये रायो दानाय चोदय ॥६॥

१४२ सूक्त

अग्नि देवता । जरिता आदि पक्षी दो-दो मन्त्रोंके ऋषि । जगती आदि छन्द ।

अयमग्ने जरिता त्वे अभूदपि सहसः सूनो नह्यन्यदस्त्याप्यम् ।
भद्रं हि शर्म त्रिवरूथमस्ति त आरे हिंसानामप दिद्युमा कृधि ॥१॥

३ अपनी रक्षाके लिये हम राजा सोम, अग्नि, सूर्य, आदित्यगण, विष्णु, बृहस्पति और प्रजापतिको बुलाते हैं ।

४ इन्द्र, वायु और बृहस्पतिको बुलानेसे आनन्द होता है । इन्हें हम बुलाते हैं । धन-प्राप्तिके लिये सब हमारे प्रति प्रसन्न हों ।

५ स्तोता, अर्यमा, बृहस्पति, इन्द्र, वायु, विष्णु, सरस्वती और सविता देवताकी, दानके लिये, प्रार्थना करो ।

६ अग्नि, तुम अन्यान्य अग्नियोंके साथ एक होकर हमारे स्तोत्र और यज्ञकी श्री-वृद्धि करो । हमारे यज्ञके लिये तुम दाताओंका, धन-दानके लिये, अनुरोध करो ।

१ अग्नि, यह जरिता तुम्हारे स्तोता हुए हैं । बलके पुत्र अग्नि, तुम्हारे समान दूसरा कोई आत्मीय नहीं है । तुम्हारा वास-स्थान सुन्दर है, जिसके तीन प्रकोष्ठ हैं । हम तुम्हारे उत्तापसे दग्ध होते हैं; इसलिये अपनी उज्ज्वल ज़्वाला हमसे दूर ले जाओ ।

प्रवत्ते अग्ने जनिमा पितूयतः साचीव विश्वा भुवना न्यृञ्जसे ।
प्र सप्तयः प्र सनिषन्त नो धियः पुरश्चरन्ति पशुपाइव त्मना ॥२॥
उत वा उ परि वृणक्षि बप्सद्बहोरग्न उलपस्य स्वधावः ।
उत खिल्या उर्वराणां भवन्ति मा ते हेतिं तविषीं चुक्रुधाम ॥३॥
यदुद्वतो निवतो यासि बप्सत् पृथगेषि प्रगर्धिनीव सेना ।
यदा ते वातो अनुवाति शोचिर्वप्तेव श्मश्रु वपसि प्र भूम ॥४॥
प्रत्यस्य श्रेणयो ददृश्र एकं नियानं बहवो रथासः ।
बाहू यदग्ने अनुमर्मृजानो न्यङ्ङुत्तानामन्वेषि भूमिम् ॥५॥
उत्ते शुष्मा जिहतामुत्ते अर्चिरुत्ते अग्ने शशमानस्य वाजाः ।
उच्छ्वञ्चस्व नि नम वर्धमान आ त्वाद्य विश्वे वसवः सदन्तु ॥६॥

२ अग्नि, जिस समय तुम अन्न-कामनासे उत्पन्न होते हो, उस समय तुम्हारा प्रकटन क्या ही सुन्दर होता है। बन्धुके समान तुम सारे भुवनोंको विभूषित करते हो। इधर-उधर जानेवाली तुम्हारी शिखाओंने हमारे स्तवका उदय कर दिया है। पशु-पालकके समान वे आगे-आगे जाती हैं।

३ दीप्तिशाली अग्नि, दाह करते समय तुम अनेक तृणोंको स्वयं छोड़ देते हो। तुम धान्य-से भरी भूमिको धान्यशून्य कर देते हो। हम तुम्हारी प्रबल शिखाके कोपमें न गिरें।

४ जिस समय तुम ऊपर-नीचे वृक्ष आदिको जलाते हो, उस समय लूटनेवाली सेनाके समान अलग-अलग जाते हो। जिस समय तुम्हारे पीछे वायु बहता है, उस समय तुम वैसे ही असीम प्रदेशका मुण्डन कर देते हो, जैसे नाई लोगोंके श्मश्रु (दाढ़ी-मूँछ) मुड़ता है।

५ अग्निकी अनेक शिखाएं देखी जाती हैं। इनका गन्तव्य स्थान एक है; किन्तु रथ अनेक हैं। अग्नि, तुम बाहुओं (ज्वालाओं)से सारे वनको जलाते हुए और नम्र होकर ऊंची भूमिपर चढ़ते हो।

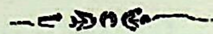
६ अग्नि, तुम्हारी स्तुति की जाती है। तुम्हारे तेज, शिखा और बल-विक्रमका उदय हो। बुद्धि प्राप्त करो। ऊपर गमन करो और नीचे उतर आओ। तुम्हें सारे वासयिता देवता प्राप्त करें।

अपामिदं न्ययनं समुद्रस्य निवेशनम् ।
अन्यं कृणुष्वेतः पन्थां तेन याहि वशाँ अनु ॥७॥
आयने ते परायणे दूर्वा रोहन्तु पुष्पिणीः ।
ह्रदाश्च पुण्डरीकाणि समुद्रस्य गृहा इमे ॥८॥



७ यह स्थान जलका आधार है । इस स्थानपर समुद्र अवस्थित है । अग्नि, तुम अन्य स्थान ग्रहण करो । उसी पथसे यथेच्छ गमन करो ।

८ अग्नि, तुम्हारे आगमन और प्रत्यागमनपर फूलोंवाली दूबें बढ़ें । यहां तड़ाग है, श्वेत पद्म है और समुद्रकी अवस्थिति है ।



सप्तम अध्याय समाप्त

अष्टम अध्याय

१४३ सूक्त

अश्विद्वय देवता सङ्ख्य-पुत्र अत्रि ऋषि। अनुष्टुप् छन्द।

त्यं चिदत्रिमृतजुरमर्थमश्वं न यातवे।
कक्षीवन्तं यदी पुना रथं न कृणुथो नवम् ॥१॥
त्यं चिदश्वं न वाजिनमरेणवो यमत्नत।
दृह्लं ग्रन्थिं न विष्यतमत्रिं यविष्ठमा रजः ॥२॥
नरा दसिंष्ठावत्रये शुभ्रा सिषासतं धियः।
अथा हि वां दिवो नरा पुनः स्तोमो न विशसे ॥३॥
चिते तद्वां सुराधसा रातिः सुमतिरश्विना।
आ यन्नः सदने पृथौ समने पर्षथो नरा ॥४॥

---

१ अश्विद्वय, यज्ञ करके अत्रि ऋषि वृद्ध हो गये थे। उन्हें तुम लोगोंने ऐसा बना दिया कि, वे घोड़ेके समान गन्तव्य स्थानपर चले गये। कक्षीवान् ऋषिको तुम लोगोंने वैसे ही नव यौवन प्रदान किया, जैसे जीर्ण रथको नया किया जाता है।

२ प्रबल पराक्रमी शत्रुओंने शीघ्रगामी घोड़के समान अत्रि ऋषिको बाँध रखा था। जैसे सुदृढ़ गांठको खोला जाता है, वैसे ही तुमने अत्रिको छोड़ दिया था। वे तरुण पुरुषके समान पृथिवीकी ओर चले गये।

३ शुभ्रवर्ण और सुन्दर नायक-द्वय, अत्रिको बुद्धि देनेकी इच्छा करो। स्वर्गके नायक-द्वय, ऐसा होनेपर मैं पुनः स्तुति कर सकता हूं।

४ उत्तम अन्नवाले अश्विद्वय, नायकद्वय, जब तुमने हमारे गृहमें महान् समारोहके साथ यज्ञारम्भ होनेपर रक्षा की, तब हम समझते हैं कि, हमारे दान और हमारे स्तोत्रको तुमने जाना है।

युवं भुज्युं समुद्र आ रजसः पार ईङ्खितम् ।
यातमच्छा पतत्रिभिर्नासत्या सातये कृतम् ॥५॥
आ वां सुम्नैः शंयूऽइव मंहिष्ठा विश्ववेदसा ।
समस्मे भूषतं नरोत्सं न पिप्युषीरिषः ॥६॥

१४४ सूक्त

इन्द्र देवता । तार्क्ष्य पुत्र सुपर्ण ऋषि. गायत्री आदि छन्द ।

अयं हि ते अमर्त्य इन्दुरत्यो न पत्यते । दक्षो विश्वायुर्वेधसे ॥१॥
अयमस्मासु काव्य ऋभुर्वज्रो दास्वते ।
अयं बिभर्त्यूर्ध्वकृशनं मदमृभुर्न कृत्व्यं मदम् ॥२॥
घृषुः श्येनाय कृत्वन आसु स्वासु वंसगः । अव दीधेदहीशुवः ॥३॥

५ भुज्यु नामक व्यक्ति समुद्रमें गिर गये थे और तरङ्गोंके ऊपर आन्दोलित हो रहे थे। तुम लोग पक्षवाली नौका लेकर समुद्रमें गये। सत्यरूप अश्विद्वय, तुमने पुनः भुज्युको (उद्धार करके) यज्ञानुष्ठानके योग्य बना दिया।

६ सर्वज्ञ नायकद्वय, भाग्यवान् लोगोंके समान तुम लोग दाता होकर, धनके साथ, हमारे पास आओ। जैसे दूध बढ़कर गायके स्तनको भर देता है, वैसे ही हमें धनसे पूर्ण करो।



१ इन्द्र, तुम सृष्टिकर्त्ता हो। तुम्हारे लिये यह अमृतके समान सोम, घोड़ेके समान, दौड़ता है। यह बलाधार और जीवन-स्वरूप है।

२ दाता इन्द्रका उज्ज्वल वज्र हमारी स्तुतिके योग्य है। इन्द्र ऊर्द्ध्वकृशन नामक स्तोताका पालन करते हैं। जैसे ऋभुदेव यज्ञकर्त्ताका पालन करते हैं, वैसे ही यह पालन करते हैं।

३ दीप्त इन्द्र अपनी यजमान-स्वरूप प्रजाके पास भली भाँति गति-विधि करते हैं। मुझ सुपर्ण श्येन ऋषिकी उन्होंने वंशवृद्धि की है।

यं सुपर्णः परावतः श्येनस्य पुत्र आभरत् ।
शतचक्रं योऽह्यो वर्तनिः ॥४॥
यं ते श्येनश्चारुमवृकं पदाभरदरुणं मानमन्धसः ।
एना वयो वि तार्यायुर्जीवस एना जागार बन्धुता ॥५॥
एवा तदिन्द्र इन्दुना देवेषु चिद्धारयाते महि त्यजः ।
क्रत्वा वयो वि तार्यायुः सुक्रतो क्रत्वायमस्मदा सुतः ॥६॥



१४५ सूक्त

सपत्नीपीड़न देवता । इन्द्राणी ऋषि । अनुष्टुप् और पङ्क्ति छन्द ।

इमां खनाम्योषधिं वीरुधं बलवत्तमाम् ।
यया सपत्नीं बाधते यया संविन्दते पतिम् ॥१॥

---

४ श्येन ताक्ष्र्यके पुत्र सुपर्ण, अत्यन्त दूर देशसे, सोम ले आये हैं । वह निखिल कर्मोंके लिये उपयोगी है । वह वृत्रकी उत्साह-वृद्धि करता है ।

५ वह रक्तवर्ण, अन्यका सृष्टि-कर्त्ता, देखनेमें सुन्दर और दूसरोंके द्वारा नष्ट न करने योग्य है । उसे अपने चरणसे श्येन ले आये हैं । इन्द्र, सोमके लिये अन्न, परमायु और जीवन दो । सोमके लिये हमारे साथ मैत्री करो ।

६ सोम-पान करके इन्द्र देवों और हम लोगोंकी, भली भाँति, विशेष रक्षा करते हैं । उत्तम कर्मवाले इन्द्र, यज्ञके लिये हमें अन्न और परमायु दो । यज्ञके लिये यह सोम हमारे द्वारा प्रस्तुत हुआ है ।



१ तीव्र शक्तिसे युक्त और लता-रूपिणी यह औषधि खोदकर मैं निकालता हूं । इससे सपत्नीको दुःख दिया जाता है और स्वामीका प्रेम प्राप्त किया जाता है ।

उत्तानपर्णे सुभगे देवजूते सहस्वति ।
सपत्नीं मे परा धम पतिं मे केवलं कुरु ॥२॥
उत्तराहमुत्तर उत्तरेदुत्तराभ्यः ।
अथा सपत्नी या ममाधरा साधराभ्यः ॥३॥
नह्यस्या नाम गृभ्णामि नो अस्मिन्रमते जने ।
परामेव परावतं सपत्नीं गमयामसि ॥४॥
अहमस्मि सहमानाथ त्वमसि सासहिः ।
उभे सहस्वती भूत्वी सपत्नीं मे सहावहै ॥५॥
उप तेऽधां सहमानामभि त्वाधां सहीयसा ।
मामनु प्र ते मनो वत्सं गौरिव धावतु पथा वारिव धावतु ॥६॥

---

२ ओषधि, तुम्हारे पत्ते उन्नत-मुख हैं। तुम स्वामीके लिये प्रिय होनेका उपाय हो। देवोंने तुम्हारी सृष्टि की है। तुम्हारा तेज अतीव तीव्र है। तुम मेरी सपत्नीको दूर कर दो। मेरे स्वामी मेरे वशीभूत रहें, ऐसा तुम कर दो।

३ ओषधि तुम प्रधान हो। मैं भी प्रधान होऊँ—प्रधानमें भी प्रधान होऊँ। मेरी सपत्नी नीचसे भी नीच हो जाय।

४ मैं सपत्नीका नामतक नहीं लेती। सपत्नी सबके लिये अप्रिय है। मैं उसे दूरसे भी दूर भेज देती हूं।

५ ओषधि, तुम्हारी शक्ति विलक्षण है, मेरी क्षमता भी विचित्र है। आओ, हम दोनों शक्ति-सम्पन्ना होकर सपत्नीको हीन-बल कर दें।

६ पतिदेव, इस शक्ति-सम्पन्न ओषधिको मैंने तुम्हारे सिरहाने रख दिया। शक्ति-सम्पन्न उपाधान (तकिया), तुम्हारे सिरहाने देनेको, मैंने दिया। जैसे गाय बछड़ेके लिये दौड़ती है और जैसे जल नीचेकी ओर दौड़ता है, वैसे ही तुम्हारा मन मेरी ओर दौड़े।

१४६ सूक्त

अरण्यानी देवता। इरम्मद-पुत्र देवमुनि ऋषि। अनुष्टुप् छन्द।

अरण्यान्यरण्यान्यसौ या प्रेव नश्यसि।
कथा ग्रामं न पृच्छसि न त्वा भीरिव विन्दतिम् ॥१॥
वृषारवाय वदते यदुपावति चिच्चिकः।
आघाटिभिरिव धावयन्नरण्यानिर्महीयते ॥२॥
उत गावइवादन्त्यूत वेश्मेव दृश्यते।
उतो अरण्यानिः सायं शकटीरिव सर्जति ॥३॥
गामङ्गैष आ ह्वयति दार्वङ्गैषो अपावधीत्।
वसन्नरण्यान्यां सायमक्रुक्षदिति मन्यते ॥४॥
न वा अरण्यानिर्हन्त्यन्यश्चेन्नाभिगच्छति।
स्वादोः फलस्य जग्ध्वाय यथाकामं नि पद्यते ॥५॥

---

१ अरण्यानी (बृहद् वन), तुम देखते-देखते अन्तर्धान हो जाते—इतनी दूर चले जाते हो कि, दिखाई नहीं देते। तुम क्यों नहीं गाँवमें जानेका मार्ग पूछते? अकेले रहनेमें तुम्हें डर नहीं होता?

२ कोई जन्तु वृषके समान बोलता है और कोई "चीची" करके मानो उसका उत्तर देता है—मानो ये वीणाके पर्दे-पर्देमें शब्द करके अरण्यानीका यश गाते हैं।

३ विदित होता है कि, इस विपिनमें कहीं गायें चरती हैं और कहीं लता, गुल्म आदिका गृह दिखाई देता है। सन्ध्याको वनसे कितने ही शकट निकल रहे हैं।

४ एक व्यक्ति गायको बुला रहा है और एक काठ काट रहा है। अरण्यानीमें जो व्यक्ति रहता है, वह रातको शब्द सुनता है।

५ अरण्यानी किसीका प्राण-बध नहीं करती। यदि व्याघ्र, चौर आदि नहीं आवें, तो कोई डर नहीं। वनमें स्वादिष्ट फल खा-खाकर भली भाँति काल-क्षेप किया जा सकता है।

आञ्जनगन्धिं सुरभिं बह्वन्नामकृषीवलाम् ।
प्राहं मृगाणां मातरमरण्यानिमशंसिषम् ॥६॥

१४७ सूक्त

इन्द्र देवता । शिरीष-पुत्र सुवेदा ऋषि । जगती और त्रिष्टुप् छन्द ।

श्रत्ते दधामि प्रथमाय मन्यवेऽहन्यद्वृत्रं नर्यं विवेरपः ।
उभे यत्त्वा भवतो रोदसी अनु रेजते शुष्मात् पृथिवी चिदद्रिवः ॥१॥
त्वं मायाभिरनवद्य मायिनं श्रवस्यता मनसा वृत्रमर्दयः ।
त्वामिन्नरो वृणते गविष्टिषु त्वां विश्वासु हव्यास्विष्टिषु ॥२॥
ऐषु चाकन्धि पुरुहूत सूरिषु वृधासो ये मघवन्नानशुर्मघम् ।
अर्चन्ति तोके तनये परिष्टिषु मेधसाता वाजिनमह्रये धने ॥३॥

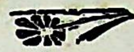
६ मृगनाभि (कस्तूरी) के समान अरण्यानीका सौरभ है । वहाँ आहार भी है। वहां प्रथम कृषिका अभाव रहता है । वह हरिणोंकी मातृ-रूपिणी है । इस प्रकार मैंने अरण्यानीकी स्तुति की ।

१ इन्द्र, तुम्हारे क्रोधको मैं प्रधान समझता हूं। तुमने वृत्रका बध किया है और लोक-कल्याणके लिये वृष्टि बनायी है। द्यावापृथिवी तुम्हारे ही अधीन हैं। वज्रधर इन्द्र, तुम्हारे प्रभावसे यह पृथिवी काँपती है।

२ इन्द्र, तुम प्रशंसनीय हो । अन्न-सृष्टि करनेका संकल्प करके तुमने अपनी शक्तिसे मायावी वृत्रको व्यथा पहुँचायी । गोकामना करके मनुष्य तुम्हारे पास याचक होते हैं। सारे यज्ञों और हवनके समय तुम्हारी ही प्रार्थना की जाती है ।

३ धनी और पुरुहूत इन्द्र, इन विद्वानोंके पास प्रादुर्भूत होओ । तुम्हारी कृपासे ये श्रीवृद्धिशाली और धनी हुए हैं । पुत्रपौत्रों, अन्यान्य अभिलषित वस्तुओं और विशिष्ट धन पानेके लिये ये लोग यज्ञारम्भ करके बली इन्द्रकी ही पूजा करते हैं ।

स इन्नु रायः सुभृतस्य चाकनन्मदं यो अस्य रंह्यं चिकेतति ।
त्वावृधो मघवन्दाश्वध्वरो मक्षू स वाजं भरते धना नृभिः ॥४॥
त्वं शर्धाय महिना गृणान उरु कृधि मघवञ्छग्धि रायः ।
त्वं नो मित्रो वरुणो न मायी पित्वो न दस्म दयसे विभक्ता ॥५॥



१४८ सूक्त

इन्द्र देवता । वेन-पुत्र पृथु ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

सुष्वाणास इन्द्र स्तुमसि त्वा ससवांसश्च तुविनृम्ण वाजम् ।
आ नो भर सुवितं यस्य चाकन् त्मना तना सनुयाम त्वोताः ॥१॥
ऋष्वस्त्वमिन्द्र शूर जातो दासीर्विशः सूर्येण सह्याः ।
गुहा हितं गुह्यं गूळ्हमप्सु बिभृमसि प्रस्रवणे न सोमम् ॥२॥

---

४ जो व्यक्ति इन्द्रको सोम-पान-जन्य आनन्द प्रदान करना जानता है, वही यथेष्ट धनके लिये प्रार्थना करता है। धनी इन्द्र, तुम जिस यज्ञ-दाताकी श्रीवृद्धि करते हो, वह शीघ्र ही अपने भृत्योंके द्वारा धन और अन्नसे परिपूर्ण हो जाता है।

५ बल पानेके लिये विशिष्ट रीतिसे तुम्हारी स्तुति की जाती है। तुम बहुत बल और धन दो। प्रियदर्शन इन्द्र, तुम मित्र और वरुणके समान अलौकिक ज्ञानके अधिकारी हो। तुम हमें सारे अन्नका भाग करके दिया करते हो।

१ प्रभूत धनवाले इन्द्र, हमलोग सोम और अन्नका आयोजन करके तुम्हारी स्तुति करते हैं। जो सम्पत्ति तुम्हारे मनके अनुकूल है, उसे हमें, प्रचुर परिमाणमें, दो। तुम्हारे आश्रयसे हमलोग अपने उद्योगमें ही धन प्राप्त करें।

२ वीर और प्रियदर्शन इन्द्र, तुम जन्म-ग्रहण करनेके साथ ही, सूर्य-मूर्त्तिके द्वारा, दास-जातीय प्रजाको हराते हो। जो गुहामें छिपा हुआ है वा जलमें निगूढ़ है, उसे भी हराते हो। वृष्टि-वर्षण होनेपर हम सोम प्रस्तुत करेंगे।

अर्यो वा गिरो अभ्यर्च विद्वानृषीणां विप्रः सुमतिं चकानः ।
ते स्याम ये रणयन्त सोमैरेनोत तुभ्यं रथोळ्ह भक्षैः ॥३॥

इमा ब्रह्मेन्द्र तुभ्यं शंसि दा नृभ्यो नृणां शूर शवः ।
तेभिर्भव सक्रतुर्येषु चाकन्नुत त्रायस्व गृणत उत स्तीन् ॥४॥

श्रुधी हवमिन्द्र शूर पृथ्या उत स्तवसे वेन्यस्यार्कैः ।
आ यस्ते योनिं घृतवन्तमस्वारूर्मिर्न निम्नैर्द्रवयन्त वक्वाः ॥५॥

१४६ सूक्त

सविता देवता । हिरण्यस्तूपके पुत्र अर्चत् ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

सविता यन्त्रैः पृथिवीमरम्णादस्कम्भने सविता द्यामदृंहत् ।
अश्वमिवाधुक्षद्धुनिमन्तरिक्षमतूर्ते बद्धं सविता समुद्रम् ॥१॥

---

३ इन्द्र, तुम विद्वान्, प्रभु, मेधावी और ऋषियोंकी स्तुतिकी कामना करनेवाले हो । तुम स्तोत्रोंका अनुमोदन करो । सोमके द्वारा हमने तुम्हारी प्रीति उत्पन्न कर डाली है । इसलिये हम तुम्हारे अन्तरङ्ग हों । रथारूढ़ इन्द्र, यह सब आहारीय द्रव्य तुम्हें निवेदित हैं ।

४ इन्द्र, यह सब प्रधान-प्रधान स्तोत्र, तुम्हारे लिये पठित हैं । वीर, जो प्रधानसे भी प्रधान हैं, उन्हें अन्न दो । तुम जिन्हें स्नेह करते हो, वे तुम्हारे लिये यज्ञ करें । जो स्तोत्र करनेको एकत्र हुए हैं, उनकी रक्षा करो ।

५ वीर इन्द्र, मैं (पृथु) तुम्हें बुलाता हूं । मेरा आह्वान सुनो । वेन-पुत्र पृथुके स्तोत्रके द्वारा तुम्हारी स्तुति की जाती है । वेन-पुत्रने घृतयुक्त यज्ञ-गृहमें आकर तुम्हारी स्तुति की है । जैसे धाराएँ नीचेकी ओर दौड़ती हैं, वैसे ही अन्यान्य स्तोता भी दौड़ रहे हैं ।

---

१ नाना (वृष्टि-दान आदि) यन्त्रोंसे सविताने पृथिवीको सुस्थिर रखा है । उन्होंने विना अवलम्बनके द्युलोकको दृढ़ रूपसे बाँध रखा है । आकाशमें समुद्रके समान मेघराशि अवस्थित है । मेघराशि घोड़ेके समान गात्र कम्पित करती है । यह निरुपद्रव स्थानमें बद्ध है । इसीसे सविता जल निकालते हैं ।

यत्रा समुद्रः स्कभितो व्यौनदपान्नपात् सविता तस्य वेद ।
अतो भूरत आ उत्थितं रजोऽतो द्यावापृथिवी अप्रथेताम् ॥२॥
पश्चेदमन्यदभवद्यजत्रममर्त्यस्य भुवनस्य भूना ।
सुपर्णो अङ्ग सवितुर्गरुत्मान् पूर्वो जातः स उ अस्या नु धर्म ॥३॥
गावइव ग्रामं यूयुधिरिवाश्वान्वाश्रेव वत्सं सुमना दुहाना ।
पतिरिव जायामभि नो न्येतु धर्ता दिवः सविता विश्ववारः ॥४॥
हिरण्यस्तूपः सवितर्यथा त्वाङ्गिरसो जुह्वे वाजे अस्मिन् ।
एवा त्वार्चन्नवसे वन्दमानः सोमस्येवांशुं प्रति जागराहम् ॥५॥



२ जिस स्थानपर रहकर समुद्रके समान मेघराशि पृथिवीको आर्द्र करती है, उस स्थानको जल-पुत्र सविता जानते हैं। सवितासे ही पृथिवी, आकाश और द्यावापृथिवी विस्तीर्ण हुए हैं।

३ अमर-स्वर्गोत्पन्न सोमके द्वारा जिन देवोंका यज्ञ होता है, वे सवितासे पीछे उत्पन्न हुए हैं। सुन्दर पक्षवाले गरुड़ सवितासे प्रथम उत्पन्न हुए हैं। सविताकी धारण-क्रिया (सोमा-हरण-कर्म)का अनुसरण करके वह अवस्थित हैं।

४ सबके द्वारा प्रार्थनीय सविता स्वर्गके धारण-कर्त्ता हैं। वह हमारे पास वैसी ही उत्सु-कताके साथ आते हैं, जिस उत्सुकतासे गाय गाँवकी ओर जाती है, योद्धा अश्वकी ओर जाता है, नवप्रसूता धेनु, प्रसन्न-मना होकर, दूध देनेको बछड़ेकी ओर जाती है और जैसे स्त्री स्वामीकी ओर जाती है।

५ सविता, अङ्गिरोवंशीय मेरे पिता (हिरण्यस्तूप) इस यज्ञमें तुम्हें बुलाते थे। मैं भी तुमसे आश्रय-प्राप्तिके निमित्त बन्दना करते-करते, तुम्हारी सेवाके लिये, वैसे ही सतर्क हूं, जैसे यजमान, सोम-लताकी रक्षाके लिये, सतर्क रहता है।

१५० सूक्त

अग्नि देवता । वसिष्ठ-पुत्र मृड़ीक ऋषि । बृहती आदि छन्द ।

समिद्धश्चित् समिध्यसे देवेभ्यो हव्यवाहन ।
आदित्यै रुद्रैर्वसुभिर्न आगहि मृलीकाय न आगहि ॥१॥
इमं यज्ञमिदं वचो जुजुषाण उपागहि ।
मर्तासस्त्वा समिधान हवामहे मृलीकाय हवामहे ॥२॥
त्वामु जातवेदसं विश्ववारं गृणे धिया ।
अग्ने देवाँ आ वह नः प्रियव्रतान्मृलीकाय प्रियव्रतान् ॥३॥
अग्निर्देवो देवानामभवत् पुरोहितोऽग्निं मनुष्या ऋषयः समीधिरे ।
अग्निं महो धनसातावहं हुवे मृलीकं धनसातये ॥४॥
अग्निरत्रिं भरद्वाजं गविष्ठिरं प्रावन्नः कण्वं त्रसदस्युमाहवे ।
अग्निं वसिष्ठो हवते पुरोहितो मृलीकाय पुरोहितः ॥५॥

१ अग्नि, तुम देवोंके पास हव्य ले जाया करते हो । तुम्हें प्रज्वलित किया गया है, तुम प्रदीप्त हुए हो । आदित्यों, वसुओं और रुद्रोंके साथ हमारे यज्ञमें पधारो । सुख देनेके लिये पधारो

२ यह यज्ञ है और यह स्तव है । ग्रहण करो । पास आओ । प्रदीप्त अग्नि, हम मनुष्य तुम्हें बुलाते हैं—सुखके लिये बुलाते हैं ।

३ तुम ज्ञानी और सबके द्वारा प्रार्थित हो । मैं तुम्हें स्तुति-वचनोंसे स्तुत करता हूं । अग्नि जिनका कार्य सुखकर है, उन देवोंको साथ लेकर आओ—सुखके लिये आओ ।

४ अग्निदेव देवोंके पुरोहित हुए हैं । मनुष्यों और ऋषियोंने अग्निको प्रज्वलित किया है । मैं प्रचुर धनकी प्राप्तिके लिये अग्निको बुलाता हूं । वह मुझे सुखी करें ।

५ युद्धके समय अग्निने अत्रि, भरद्वाज, गविष्ठिर, कण्व और त्रसदस्युकी रक्षा की है । पुरोहित वसिष्ठ अग्निको बुलाते हैं—सुखके लिये बुलाते हैं ।



१५१ सूक्त

श्रद्धा देवता। कामगोत्रीय श्रद्धा ऋषि। अनुष्टुप् छन्द।

श्रद्धयाग्निः समिध्यते श्रद्धया हूयते हविः।
श्रद्धां भगस्य मूर्धनि वचसा वेदयामसि ॥१॥
प्रियं श्रद्धे ददतः प्रियं श्रद्धे दिदासतः।
प्रियं भोजेषु यज्वस्विदं म उदितं कृधि ॥२॥
यथा देवा असुरेषु श्रद्धामुग्रेषु चक्रिरे।
एवं भोजेषु यज्वस्वस्माकमुदितं कृधि ॥३॥
श्रद्धां देवा यजमाना वायुगोपा उपासते।
श्रद्धां हृदय्ययाकूत्या श्रद्धया विन्दते वसु ॥४॥
श्रद्धां प्रातर्हवामहे श्रद्धां मध्यन्दिनं परि।
श्रद्धां सूर्यस्य निम्रुचि श्रद्धे श्रद्धापयेह नः ॥५॥

---

१ श्रद्धाके द्वारा अग्नि प्रज्वलित होते हैं और श्रद्धाके द्वारा ही यज्ञ-सामग्रीकी आहुति दी जाती है। श्रद्धा सम्पत्तिके मस्तकके ऊपर रहती है। यह सब मैं स्पष्ट रूपसे कहती हूं।

२ श्रद्धा, दाताको अभीष्ट फल दो। जो दान करनेकी इच्छा करता है, उसे भी अभिष्ट दो। श्रद्धा, मेरे भोगार्थियों और याज्ञिकोंको प्रार्थित फल दो।

३ इन्द्रादिने बली असुरोंके लिये यह विश्वास किया कि, इनका बध करना ही चाहिये। श्रद्धा, भोक्ताओं और याज्ञिकोंको प्रार्थित फल दो।

४ देवता और मनुष्य वायुको रक्षक पाकर श्रद्धाकी उपासना करते हैं। मनमें कोई संकल्प होनेपर लोग श्रद्धाकी शरणमें जाते हैं। श्रद्धाके कारण मनुष्य धन पाता है।

५ हमलोग प्रातःकाल, मध्याह्न और सूर्यास्तके समय श्रद्धाको ही बुलाते हैं। श्रद्धा हमें इस संसारमें श्रद्धावान् करो।



१२ अनुवाक । १५२ सूक्त

इन्द्र देवता । भरद्वाज शास ऋषि । अनुष्टुप् छन्द ।

शास इत्था महां अस्यमित्रखादो अद्भुतः ।
न यस्य हन्यते सखा न जीयते कदाचन ॥१॥
स्वस्तिदा विशस्पतिर्वृत्रहा विमृधो वशी ।
वृषेन्द्रः पुर एतु नः सोमपा अभयंकरः ॥२॥
वि रक्षो विमृधो जहि वि वृत्रस्य हनू रुज ।
वि मन्युमिन्द्र वृत्रहन्नमित्रस्याभिदासतः ॥३॥
वि न इन्द्र मृधो जहि नीचा यच्छ पृतन्यतः ।
यो अस्मां अभिदासत्यधरं गमया तमः ॥४॥
अपेन्द्र द्विषतो मनोऽप जिज्यासतो बधम् ।
वि मन्योः शर्म यच्छ वरीयोयवया बधम् ॥५॥

---

१ मैं इस प्रकार इन्द्रकी स्तुति करता हूं । इन्द्र, तुम महान् शत्रु-भक्षक और अद्भुत हो । तुम्हारे सखाकी न तो मृत्यु होती है, न पराजय ।

२ इन्द्र कल्याणदाता, प्रजाधिपति, वृत्रघ्न, युद्ध-कर्त्ता, शत्रु-वश-कर्त्ता, काम-वर्षक, सोम-पाता और अभय-दाता हैं । वह हमारे सामने पधारें ।

३ वृत्रघ्न इन्द्र, राक्षसों और शत्रुओंका बध करो । वृत्रके दोनों जबड़ोंको तोड़ डालो । अनिष्टकर शत्रुका क्रोध नष्ट करो ।

४ इन्द्र, हमारे शत्रुओंका बध करो । युद्धार्थी विपक्षियोंको हीन-बल करो । जो हमें निकृष्ट करता है, उसे जघन्य अन्धकारमें डाल दो ।

५ इन्द्र, शत्रुका मन नष्ट कर दो । जो हमें जराजीर्ण करना चाहता है, उसके प्रति सांघातिक अस्त्रका प्रयोग करो । शत्रुके क्रोधसे बचाओ । उत्तम सुख दो । शत्रुके सांघातिक अस्त्रको तोड़ दो ।

१५३ सूक्त

न्द्र देवता । इन्द्र-माता ऋषि । गायत्री छन्द ।

ईङ्खयन्तीरपस्युव इन्द्रं जातमुपासते । भेजानासः सुवीर्यम् ॥१॥
त्वमिन्द्र बलादधि सहसो जात ओजसः । त्वं वृषन्वृषेदसि ॥२॥
त्वमिन्द्रासि वृत्रहा व्यन्तरिक्षमतिरः । उद्द्यामस्तभ्ना ओजसा ॥३॥
त्वमिन्द्र सजोषसमर्कं बिभर्षि बाह्वोः । वज्रं शिशान ओजसा ॥४॥
त्वमिन्द्राभिभूरसि विश्वा जातान्योजसा । स विश्वा भुव आभवः ॥५॥

१५४ सूक्त

मृत व्यक्तिकी अवस्था देवता । विवस्वान्की पुत्री यमी ऋषि । अनुष्टुप् छन्द ।

सोम एकेभ्यः पवते घृतमेक उपासते ।
येभ्यो मधु प्रधावति तांश्चिदेवापि गच्छतात् ॥१॥

---

१ क्रिया-परायणा इन्द्र-माताएँ प्रादुर्भूत इन्द्रके पास जाकर उनकी सेवा करती हैं और इन्द्रसे उत्कृष्ट धन प्राप्त करती हैं।

२ इन्द्र, तुमने बल-वीर्य और तेजसे जन्म ग्रहण किया है। वर्द्धक इन्द्र, तुम अभिलाषाकी पूर्त्ति करते हो।

३ इन्द्र, तुम वृत्रघ्न हो और तुमने आकाशको विस्तारित किया है। तुमने अपनी शक्तिके द्वारा स्वर्गको ऊँचा कर रखा है।

४ इन्द्र, तुम्हारे साथी सूर्य हैं। तुमने उन्हें दोनों हाथोंसे धारण कर रखा है। तुम बल-पूर्वक वज्रपर शान चढ़ाते हो।

५ इन्द्र, तुम प्राणियोंको अपने तेजसे अभिभूत करते हो। तुम सारे स्थानोंको आक्रान्त किये हुए हो।

१ किन्हीं पितरोंके लिये सोम-रस क्षरित होता है। कोई-कोई घृतका सेवन करते हैं। जिन पितरोंके लिये मधुर स्रोत बहा करता है, प्रेत, तुम उनके पास जाओ।

तपसा ये अनाधृष्यास्तपसा ये स्वर्ययुः ।
तपो ये चक्रिरेमहस्तांश्चिदेवापि गच्छतात् ॥२॥
ये युध्यन्ते प्रधनेषु शूरासो ये तनूत्यजः ।
ये वा सहस्रदक्षिणास्तांश्चिदेवापि गच्छतात् ॥३॥
ये चित् पूर्व ऋतसाप ऋतावान ऋतावृधः ।
पितॄन्तपस्वतो यम तांश्चिदेवापि गच्छतात् ॥४॥
सहस्रणीथाः कवयो ये गोपायन्ति सूर्यम् ।
ऋषीन्तपस्वतो यम तपोजाँ अपि गच्छतात् ॥५॥

१५५ सूक्त

अलक्ष्मी-नाश, ब्रह्मणस्पति और विश्वदेव देवता । भरद्वाज-पुत्र शिरिम्बिठ ऋषि । अनुष्टुप् छन्द ।

अरायि काणे विकटे गिरिं गच्छ सदान्वे ।
शिरिम्बिठस्य सत्वभिस्तेभिष्ट्वा चातयामसि ॥१॥

---

२ जो तपस्याके बलसे दुर्द्धर्ष हुए हैं, जो तपस्याके बलसे स्वर्ग गये हैं और जिन्होंने कठिन तपस्या की है, प्रेत, तुम उन लोगोंके पास जाओ ।

३ जो युद्ध-स्थलमें युद्ध करते हैं, जिन्होंने शरीरकी माया छोड़ दी है अथवा जो बहुत दक्षिणा देते हैं, प्रेत, तुम उनके पास जाओ ।

४ पुण्यकर्म करके जो सब प्राचीन व्यक्ति पुण्यवान् हुए हैं, जो पुण्यकी स्रोत-वृद्धि कर चुके हैं और जिन्होंने तपस्या की है, यम, यह प्रेत उन्हींके पास जाय ।

५ जिन बुद्धिमानोंने सहस्र प्रकार सत्कर्मोंकी पद्धति प्रदर्शित की है, जो सूर्यकी रक्षा करते हैं और जिन्होंने तपस्या-बलसे उत्पन्न होकर तपस्या की है, यम, यह प्रेत उन्हीं ऋषियोंके पास जाय ।

---

१ अलक्ष्मी, तुम दान-विरोधिनी, सदा कुत्सित शब्द करनेवाली, विकट आकृतिवाली और सदा क्रोध करनेवाली हो । तुम पर्वतपर आओ । मैं (शिरिम्बिठ) ऐसा उपाय करता हूं, जिससे तुम्हें अवश्य दूर करूंगा ।

चत्तो इतश्चत्तामुतः सर्वा भ्रूणान्यारुषी ।
अराय्यं ब्रह्मणस्पते तीक्ष्णशृङ्गोदृषन्निहि ॥२॥
अदो यद्दारु प्लवते सिन्धोः पारे अपूरुषम् ।
तदा रभस्व दुर्हणो तेन गच्छ परस्तरम् ॥३॥
यद्ध प्राचीरजगन्तोरो मण्डूरधाणिकीः ।
हत इन्द्रस्य शत्रवः सर्वे बुद्बुदयाशवः ॥४॥
परीमे गामनेषत पर्यग्निमहृषत । देवेष्वक्रत श्रवः क इमाँ दधर्षति ॥५॥

१५६ सूक्त

अग्नि देवता । अग्नि-पुत्र केतु ऋषि । गायत्री छन्द ।

अग्निं हिन्वन्तु नो धियः सप्तिमाशुमिवाजिषु । तेन जेष्म धनन्धनम् ॥१॥
यया गा आकरामहे सेनयाग्ने तवोत्या । तां नो हिन्व मघत्तये ॥२॥

---

२ अलक्ष्मी वृक्ष, लता, शस्य आदिका अङ्कुर नष्ट करके दुर्भिक्ष ले आती है । उसे मैं इस लोक और उस लोकसे दूर करता हूं । तीक्ष्ण तेजवाले ब्रह्मणस्पति, दान-विरोधिनी इस अलक्ष्मी-को यहांसे दूर करके आओ ।

३ यह जो एक काठ समुद्र-तीरके पास बहता है, उसका कोई कर्त्ता (स्वत्वाधिकारी) नहीं है। विकट आकृतिवाली अलक्ष्मी, उसके ऊपर चढ़कर समुद्रके दूसरे पार जाओ ।

४ हिंसामयी और कुत्सित शब्दोंवाली अलक्ष्मियो, जिस समय तत्पर होकर तुमलोग प्रकृष्ट गमनसे चली गयीं, उस समय इन्द्रके सब शत्रु, जल-बुद्बुदके समान, विलीन हो गये ।

५ इन लोगोंने गायोंका उद्धार किया है, इन्होंने अग्निको विभिन्न स्थानोंमें स्थापित किया है और देवोंको अन्न दिया है। इनपर आक्रमण करनेकी किसकी शक्ति है ?

---

१ जैसे घुड़दौड़के स्थानमें शीघ्रगामी घोड़ेको दौड़ाया जाता है, वैसे ही हमारे स्तोत्र अग्निको दौड़ा रहे हैं। उनके प्रसादसे हम सब धन जीत लें ।

२ अग्नि, जैसे तुमसे आश्रय पाकर हम गायोंको प्राप्त करते हैं । वैसे ही तुम अपनी सहायता देनेवाली सेनाके समान रक्षाको हमें दो, जिससे हम धन-लाभ करें ।

अग्ने स्थूरं रयिं भर पृथुं गोमन्तमश्विनम्। अङ्धि खं वर्तया पणिम् ॥३॥
अग्ने नक्षत्रमजरमा सूर्यं रोहयो दिवि। दधज्ज्योतिर्जनेभ्यः ॥४॥
अग्ने केतुर्विशामसि प्रेष्ठः श्रेष्ठ उपस्थसत्। बोधा स्तोत्रे वयो दधत् ॥५॥

१५७ सूक्त

विश्वदेव देवता। आप्त्य-पुत्र भुवन ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

इमा नु कं भुवना सीषधामेन्द्रश्च विश्वे च देवाः ॥१॥
यज्ञं च नस्तन्वं च प्रजां चादित्यैरिन्द्रः सह चीकॢपाति ॥२॥
आदित्यैरिन्द्रः सगणो मरुद्भिरस्माकं भूत्वविता तनूनाम् ॥३॥
हत्वाय देवा असुरान्यदायन्देवा देवत्वमभिरक्षमाणाः ॥४॥
प्रत्यञ्चमर्कमनयञ्छचीभिरादित् स्वधामिषिरां पर्यपश्यन् ॥५॥

---

३ अग्नि, बहुसङ्ख्यक गायों और अश्वोंके साथ धन दो। आकाशको वृष्टि-जलसे अभिषिक्त करो। वणिक्का वाणिज्य-कर्म प्रवर्त्तित करो।

४ अग्नि, जो सूर्य सदा चलते हैं, जो अजर हैं और जो लोगोंको ज्योति देते हैं, उन्हें आकाशमें तुम अवस्थित किये हुए हो।

५ अग्नि, तुम प्रजावर्गके ज्ञापक हो, प्रियतम हो, श्रेष्ठ हो। तुम यज्ञ-गृहमें बैठो, स्तोत्र सुनो और अन्न ले आओ।

१ ये सारे प्राणी हमारे लिये सुख दें। इन्द्र और सारे देवता भी इस अर्थ (सुख) को सिद्ध करें।

२ इन्द्र और आदित्यगण हमारे यज्ञ, देह और पुत्र-पौत्र आदिको निरुपद्रव कर दें।

३ इन्द्र आदित्यों और मरुतोंको सहकारी बनाकर हमारी देहके रक्षक हों।

४ जिस समय देवता लोग वृत्रादि असुरोंका बध करके लौटे, उस समय उनके अमरत्वकी रक्षा हुई।

५ नाना कार्योंके द्वारा स्तुतिको देवोंके निकट भेजा गया। अनन्तर आकाशसे वृष्टि-पतन देखा गया।



१५८ सूक्त

सूर्य देवता। सूर्य-पुत्र चक्षु ऋषि। गायत्री छन्द।

सूर्यो नो दिवस्पातु वातो अन्तरिक्षात्। अग्निर्नः पार्थिवेभ्यः ॥१॥
जोषा सवितर्यस्य ते हरः शतं सवाँ अर्हति।
पाहि नो दिद्युतः पतन्त्याः ॥२॥
चक्षुर्नो देवः सविता चक्षुर्न उत पर्वतः। चक्षुर्धाता दधातु नः ॥३॥
चक्षुर्नो धेहि चक्षुषे चक्षुर्विख्यै तनूभ्यः। सञ्चेदं वि च पश्येम ॥४॥
सुसन्दृशं त्वा वयं प्रति पश्येम सूर्य। विपश्येम नृचक्षसः ॥५॥

१५९ सूक्त

पुलोम-पुत्री शची देवता और ऋषि। अनुष्टुप् छन्द।

उदसौ सूर्यो अगादुदयं मामको भगः।
अहं तद्विद्वला पतिमभ्यसाक्षि विषासहिः ॥१॥

---

१ स्वर्गीय उपद्रवसे सूर्य, आकाशके उपद्रवसे वायु और पृथिवीके उपद्रवसे अग्नि हमारी रक्षा करें।

२ सविता, हमारी पूजाको ग्रहण करो। तुम्हारे तेजके लिये सौ यज्ञोंका अनुष्ठान करना चाहिये। शत्रुओंके जो उज्ज्वल आयुध आकर गिरते हैं, उनसे हमारी रक्षा करो।

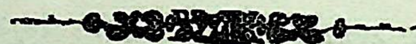
३ सविता देव हमें चक्षु दें, पर्वत चक्षु दें और विधाता चक्षु दें।

४ हमारे नेत्रको दर्शन-शक्ति दो। सारी वस्तुएँ भली भाँति दिखाई देनेके लिये हमें चक्षु दो। हम सारी वस्तुओंको संगृहीत रूपसे देख सकें।

५ सूर्य, तुम्हें हम भली भाँति देख सकें। मनुष्य जिसे देख सकते हैं, उसे हम विशेष रूपसे देख सकें।

१ सूर्योदय मेरा भाग्योदय है। मैं यह समझ चुकी हूं। मेरे पास सारी सपत्नियाँ परास्त हैं। मैं ने स्वामीको वशमें कर लिया है।

अहं केतुरहं मूर्धाहमुग्रा विवाचनी ।
ममेदनु क्रतुं पतिः सेहानाया उपाचरेत् ॥२॥
मम पुत्राः शत्रुहणोऽथो मे दुहिता विराट् ।
उताहमस्मि सञ्जया पत्यौ मे श्लोक उत्तमः ॥३॥
येनेन्द्रो हविषा कृत्व्यभवद्द्युम्न्युत्तमः ।
इदं तदक्रि देवा असपत्ना किलाभुवम् ॥४॥
असपत्ना सपत्नघ्नी जयन्त्यभिभूवरी ।
आवृक्षमन्यासां वर्चो राधो अस्थेयसामिव ॥५॥
समजैषमिमा अहं सपत्नीरभिभूवरी ।
यथाहमस्य वीरस्य विराजानि जनस्य च ॥६॥



२ मैं ही केतु और मस्तक हूं। प्रबल होकर मैं स्वामीके मुँहसे मीठा वचन सुनती हूं। मुझे सर्व-श्रेष्ठ जानकर मेरे स्वामी मेरे कार्यका अनुमोदन करते हैं, मेरे मतके अनुसार ही चलते हैं।

३ मेरे पुत्र बली हैं। मेरी ही कन्या सर्वश्रेष्ठ शोभासे शोभित हैं। मैं सबको जीतती हूँ। स्वामीके पास मेरा ही नाम आदरणीय है।

४ जिस यज्ञको करके इन्द्र बली और श्रेष्ठ हुए हैं, देवो, मैंने वही किया है। इससे मेरे सारे शत्रु नष्ट हो गये हैं।

५ मेरा शत्रु नहीं जीता रहता। मैं शत्रओंका बध कर डालती हूं। उन्हें जीतती हूं—परास्त करती हूं। जैंसे चञ्चल-बुद्धिवालोंकी सम्पत्ति दूसरे ले जाते हैं, वैसे ही मैं अन्य नारियोंका तेजउ ड़ा देती हूं।

६ मैं सब सपत्नियोंको जीतती हूँ—परास्त करती हूँ। इसीलिये मैं इन वीर इन्द्रके ऊपर प्रभुत्व करती हूं—कुटुम्बियोंके ऊपर भी प्रभुत्व करती हूं।

१६० सूक्त

इन्द्र देवता। विश्वामित्र-पुत्र पूरण ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

तीव्रस्याभिवयसो अस्य पाहि सर्वरथा वि हरी इह मुञ्च।
इन्द्र मा त्वा यजमानासो अन्ये नि रीरमन्तुभ्यमिमे सुतासः ॥१॥
तुभ्यं सुतास्तुभ्यमु सोत्वासस्त्वां गिरः श्वात्र्या आह्वयन्ति।
इन्द्रेदमद्य सवनं जुषाणो विश्वस्य विद्वाँ इह पाहि सोमम् ॥२॥
य उशता मनसा सोममस्मै सर्वहृदा देवकामः सुनोति।
न गा इन्द्रस्तस्य परा ददाति प्रशस्तमिच्चारुमस्मै कृणोति ॥३॥
अनुस्पष्टो भवत्येषो अस्य यो अस्मै रेवान्न सुनोति सोमम्।
निररत्नौ मघवा तं दधाति ब्रह्मद्विषो हन्त्यनानुदिष्टः ॥४॥
अश्वायन्तो गव्यन्तो वाजयन्तो हवामहे त्वोपगन्तवा उ।
आभूषन्तस्ते सुमतौ नवायां वयमिन्द्र त्वा शुनं हुवेम ॥५॥

---

१ यह सोमरस अत्यन्त तीव्र बनाया गया है। इसके साथ आहारीय सामग्री है। पान करो। अपने रथ-वाहक दो घोड़ोंको इधर लानेके लिये छोड़ दो। इन्द्र, अन्य यजमान तुम्हें सन्तुष्ट नहीं कर सकें। तुम्हारे ही लिये यह सब सोम प्रस्तुत किया गया है।

२ जो सोम प्रस्तुत हुआ है वा होगा, वह तुम्हारे ही लिये। यह सब स्तोत्र उच्चारित होकर तुम्हें बुलाते हैं। इन्द्र, हमारा यह यज्ञ ग्रहण करो। तुम सब जानते हो। यहाँ सोम-पान करो।

३ जो व्यक्ति तल्लीन मनसे, अकपट भावसे, प्रीति-युक्त अन्तःकरणसे और देव-भक्तिके साथ इन्द्रके लिये सोम प्रस्तुत करता है, उसकी गायें इन्द्र नहीं नष्ट करते—अतीव सुन्दर और प्रशस्त मङ्गल उसके लिये देते हैं।

४ जो धनी इनके लिये सोम प्रस्तुत करता है, इन्द्र उसके दृष्टि-गोचर होते हैं। इन्द्र आकर उसका हाथ पकड़ते हैं। जो पुण्य-कर्मोंके द्वेषी हैं, उन्हें इन्द्र, विना किसीके कहे-सुने, विनष्ट करते हैं।

५ इन्द्र, गाय, घोड़े और अन्नकी इच्छासे हम तुम्हारे आगमनकी प्रार्थना करते हैं। तुम्हारे लिये यह अभिनव और उत्तम स्तोत्र बनाकर और तुम्हें सुखकर जानकर हम तुम्हें बुलाते हैं।

१६१ सूक्त

इन्द्र देवता। प्रजापति-पुत्र यक्ष्मनाशन ऋषि। त्रिष्टुप् आदि छन्द।

मुञ्चामि त्वा हविषा जीवनाय कमज्ञातयक्ष्मादुत राजयक्ष्मात्।
ग्राहिर्जग्राह यदि वैतदेनं तस्या इन्द्राग्नी प्र मुमुक्तमेनम् ॥१॥
यदि क्षितायुर्यदि वा परेतो यदि मृत्योरन्तिकं नीत एव।
तमा हरामि निर्ऋतेरुपस्थादस्पार्षमेनं शतशारदाय ॥२॥
सहस्राक्षेण शतशारदेन शतायुषा हविषाहार्षमेनम्।
शतं यथेमं शरदो नयातीन्द्रो विश्वस्य दुरितस्य पारम् ॥३॥
शतं जीव शरदो वर्धमानः शतं हेमन्ताञ्छतमु वसन्तान्।
शतमिन्द्राग्नी सविता बृहस्पतिः शतयुषा हविषेमं पुनर्दुः ॥४॥
आहार्षं त्वाविदं त्वा पुनरागाः पुनर्नव।
सर्वाङ्ग सर्वं ते चक्षुः सर्वमायुश्च तेऽविदम् ॥५॥

---

१ रोगी, यज्ञ-सामग्रीके द्वारा मैं तुम्हें अज्ञातयक्ष्मा रोग और राजयक्ष्मासे छुड़ाता हूँ; इससे तुम्हारे जीवनकी रक्षा होगी। यदि कोई पाप-ग्रह इस रोगीको घेरे हुए हैं, तो इन्द्र और अग्नि, इसे उसके हाथसे छुडाओ।

२ यदि इस रोगीकी आयुका क्षय हो रहा है, यदि यह इस लोकसे गया हुआसा है और यदि यह मृत्युके पास गया हुआ है, तो भी मैं मृत्यु-देवता निर्ऋतिके पाससे उसे लौटा ला सकता हूं। मैंने इसे इस प्रकार स्पर्श किया है कि, यह सौ वर्ष जीता रहेगा।

३ मैंने यह जो आहुति दी है, उसके एक सहस्र नेत्र सौ वर्षकी परमायु और आयु देते हैं। ऐसी ही आहुतिके द्वारा मैं रोगीको लौटा लाया हूं। सारे पापोंसे छुड़ाकर इन्द्र इसे सौ वर्ष जीवित रखें।

४ रोगी, तुम एक सौ शरत, सुखसे एक सौ हेमन्त और एक सौ वसन्ततक जीवित रहो। इन्द्र, अग्नि, सविता और बृहस्पति हव्य द्वारा तृप्त होकर इसे सौ वर्षकी आयु दें।

५ रोगी, तुम्हें मैंने पाया है, तुम्हें लौटा लाया हूं। तुम पुनः नये होकर आये हो। तुम्हारे समस्त अङ्गों, चक्षुओं और समस्त परमायुको मैंने प्राप्त किया है।

१६२ सूक्त

गर्भ-रक्षण देवता । ब्रह्म-पुत्र रक्षोहा ऋषि । अनुष्टुप् छन्द ।

ब्रह्मणाग्निः संविदानो रक्षोहा बाधतामितः ।
अमीवा यस्ते गर्भं दुर्णामा योनिमाशये ॥१॥
यस्ते गर्भममीवा दुर्णामा योनिमाशये ।
अग्निष्टं ब्रह्मणा सह निष्क्रव्यादमनीनशत् ॥२॥
यस्ते हन्ति पतयन्तं निषत्स्नुं यः सरीसृपम् ।
जातं यस्ते जिघांसति तमितो नाशयामसि ॥३॥
यस्त ऊरू विहरत्यन्तरा दम्पती शये ।
योनिं यो अन्तरारेह्लि तमितो नाशयामसि ॥४॥
यस्त्वा भ्राता पतिर्भूत्वा जारो भूत्वा निपद्यते ।
प्रजां यस्ते जिघांसति तमितो नाशयामसि ॥५॥

---

१ स्तोत्रके साथ एक-मत होकर राक्षस-बध-कर्त्ता अग्नि यहांसे समस्त बाधाएँ, उपद्रव और रोग दूर कर दें, जिनके द्वारा, हे नारी, तुम्हारी योनि आक्रान्त हुई है।

२ नारी, जो मांसाहारी राक्षस, रोग वा उपद्रव तुम्हारी योनिको आक्रान्त करते हैं, राक्षस-हन्ता अग्नि, स्तोत्रके साथ एक-मत होकर, उन सबका विनाश करें।

३ नारी, पुरुषके वीर्य-पातके समय, गर्भमें शुक्र-स्थितिके समय, (तीन मासके अनन्तर) गर्भके गमनके समय अथवा (दस मासके अनन्तर) जन्मके समय जो तुम्हारे गर्भको नष्ट करता वा नष्ट करनेकी इच्छा करता है, उसे हम यहांसे दूर कर देते हैं।

४ गर्भ नष्ट करनेके लिये जो तुम्हारे दोनों जघनोंको फैला देता है, इसी उद्देशसे जो स्त्री-पुरुषके बीचमें सोता है अथवा जो योनिके मध्य पतित पुरुष-शुक्रको चाट जाता है, उसे हम यहांसे दूर कर देते हैं।

५ नारी, जो तुम्हारा भाई, पति और उपपति (जार) बनकर तुम्हारे पास जाता है और तुम्हारी सन्ततिको नष्ट करनेकी इच्छा करता है, उसे हम यहांसे दूर करते हैं।

यस्त्वा स्वप्नेन तमसा मोहयित्वा निपद्यते ।
प्रजां यस्ते जिघांसति तमितो नाशयामसि ॥६॥

१६३ सूक्त

यक्ष्म ाशन देवता। कश्यपगोत्रोय विवृहा ऋषि। अनुष्टुप् छन्द।

अक्षीभ्यां ते नासिकाभ्यां कर्णाभ्यां छुबुकादधि ।
यक्ष्मं शीर्षण्यं मस्तिष्काज्जिह्वाया वि वृहामि ते ॥१॥
ग्रीवाभ्यस्त उष्णिहाभ्यः कीकसाभ्यो अनूक्यात् ।
यक्ष्मं दोषण्यमंसाभ्यां बाहुभ्यां वि वृहामि ते ॥२॥
आन्त्रेभ्यस्ते गुदाभ्यो वनिष्ठोर्हृदयादधि ।
यक्ष्मं मतस्नाभ्यां यक्नः प्लाशिभ्यो वि वृहामि ते ॥३॥
ऊरुभ्यां ते अष्ठीवद्भ्यां पार्ष्णिभ्यां प्रपदाभ्याम् ।
यक्ष्मं श्रोणिभ्यां भासदाद्भंससो वि वृहामि ते ॥४॥

---

६ जो स्वप्नावस्था और निद्रावस्थामें तुम्हें मुग्ध करके तुम्हारे पास जाता है और जो तुम्हारी सन्तति । नष्ट करनेकी इच्छा करता है, उसे हम यहाँसे दूर करते हैं।

१ तुम्हारे दोनों नेत्रों, दोनों कानों, दोनों नासा-रन्ध्रों, चिबुक, शिर, मस्तिष्क और जिह्वासे मैं यक्ष्मा (रोग) को दूर करता हूं।

२ तुम्हारी ग्रीवाकी धमनियों, स्नायु, अस्थि-सन्धि, दोनों भुजाओं, दोनों हाथों और दोनों स्कन्धोंसे मैं रोगको दूर करता हूं।

३ तुम्हारी अन्ननाड़ी, क्षुद्रनाड़ी, वृहद्दण्ड, हृदयस्थान, मूत्राशय, यकृत और अन्यान्य मांस-पिण्डोंसे मैं रोगको दूर करता हूं।

४ तुम्हारे दो उरुओं, दो जानुओं, दो गुल्मों, दो पाद-प्रान्तों, दो नितम्बों, कटिदेश और मलद्वारसे मैं व्याधिको दूर करता हूं।

मेहनाद्वनंकरणाल्लोमभ्यस्ते नखेभ्यः ।
यक्ष्मं सर्वस्मादात्मनस्तमिदं वि वृहामि ते ॥५॥
अङ्गादङ्गाल्लोम्नोलोम्नोलोम्नो जातं पर्वणिपर्वणि ।
यक्ष्मं सर्वस्मादात्मनस्तमिदं वि वृहामि ते ॥६॥

---

१६४ सूक्त

दुःस्वप्न-नाश देवता । आङ्गिरस प्रचेता ऋषि । अनुष्टुप् आदि छन्द ।

अपेहि मनसस्पतेऽप क्राम परश्चर ।
परो निर्ऋत्या आ चक्ष्व बहुधा जीवतो मनः ॥१॥
भद्रं वै वरं वृणते भद्रं युञ्जन्ति दक्षिणम् ।
भद्रं वैवस्वते चक्षुर्बहुत्रा जीवतो मनः ।
यदाशसा निःशसाभिशसोपारिम जाग्रतो यत् स्वपन्तः ।
अग्निर्विश्वान्यप दुष्कृतान्यजुष्टान्यारे अस्मद्दधातु ॥३॥

---

५ मूत्रोत्सर्ग करनेवाले पुरुषाङ्ग, लोम और नख—तुम्हारे सर्वाङ्ग शरीरसे मैं रोगको दूर करता हूं।

६ प्रत्येक अङ्ग, प्रत्येक लोम, शरीरके प्रत्येक सन्धि-स्थान और तुम्हारे सर्वाङ्गमें जहाँ कहीं रोग उत्पन्न हुआ है, वहांसे मैं रोगको दूर करता हूं।

१ दुःस्वप्न देव, तुमने मनपर अधिकार कर लिया है। हट जाओ, भाग जाओ, दूर जाकर विचरण करो। अत्यन्त दूरमें जो निर्ऋति देवता हैं, उनने जाकर कहो कि, जीवित व्यक्तिके मनोरथ विशाल होते हैं; इसलिये वह मनोरथ-भङ्ग करती हैं।

२ जीवित व्यक्तिके मनोरथ विशाल होते हैं, वह उत्तम काम्य वस्तुको चाहते हैं, उत्तम और सुन्दर फल पानेकी कामना करते हैं। यम कल्याणमय नेत्रसे देखते हैं।

३ आशाके समय, आशा-भङ्गके समय, आशा सफल होनेके समय, जाग्रदवस्थामें और निद्रावस्थामें जो हम अपकर्म करते हैं, उन सब क्लेशकर पापोंको अग्नि हमारे पाससे दूर ले जायं।

यदिन्द्र ब्रह्मणस्पतेऽभिद्रोहं चरामसि ।
प्रचेता न आङ्गिरसो द्विषतां पात्वंहसः ॥४॥
अजैष्माद्यासनाम चाभूमानागसो वयम् ।
जाग्रत्स्वप्नः सङ्कल्पः पापो यं द्विष्मस्तं स
ऋच्छतु यो नो द्वेष्टि तमृच्छतु ॥५॥

१६५ सूक्त

विश्वदेव देवता । निर्ऋति-पुत्र कपोत ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

देवाः कपोत इषितो यदिच्छन्दूतो निर्ऋत्या इदमाजगाम ।
तस्मा अर्चाम कृणवाम निष्कृतं शन्नो अस्तु द्विपदे शं चतुष्पदे ॥१॥
शिवः कपोत इषितो नो अस्त्वनागा देवाः शकुनो गृहेषु ।
अग्निर्हि विप्रो जुषतां हविर्नः परि हेतिः पक्षिणी नो वृणक्तु ॥२॥

---

४ इन्द्र और ब्रह्मणस्पति, हमने जो पाप किया है, अङ्गिराके पुत्र प्रचेता उस शत्रु-कृत अमङ्गलसे हमारी रक्षा करें ।

५ आज हम विजयी हुए हैं; प्राप्तव्यको पा लिया है और हम अपराध-मुक्त हुए हैं । जाग्रदवस्था और निद्रावस्थामें अथवा सङ्कल्प-जन्य जो पाप हुआ है, वह हमारे द्वेषी शत्रुके पास जाय । जिससे हम द्वेष करते हैं, उसके पास जाय ।

१ देवो, यह कपोत निर्ऋतिके द्वारा प्रेरित दूत है । क्लेश देनेके लिये हमारे घरमें आया है । उसकी हम पूजा करते हैं । यह अमङ्गल हम दूर करते हैं । हमारे दास, दासी आदि और गौ, अश्व आदि अमङ्गल-ग्रस्त न हों ।

२ देवो, जो कपोत हमारे घरमें भेजा गया है, वह हमारे लिये शुभकर हो—हमारा कोई अमङ्गल न करे । बुद्धिमान् और हमारे आत्मीय अग्नि हमारा हव्य ग्रहण करें । यह पक्ष-युक्त अस्त्र हमें परित्याग कर जाय ।

हेतिः पक्षिणी न दभात्यस्मानाष्ट्र्यां पदं कृणुते अग्निधाने ।
शं नो गोभ्यश्च पुरुषेभ्यश्चास्तु मा नो हिंसीदिह देवाः कपोतः ॥३॥
यदुलूको वदति मोघमेतद्यत् कपोतः पदमग्नौ कृणोति ।
यस्य दूतः प्रहित एष एतत्तस्मै यमाय नमो अस्तु मृत्यवे ॥४॥
ऋचा कपोतं नुदत प्रणोदमिषं मदन्तः परि गान्नयध्वम् ।
संयोपयन्तो दुरितानि विश्वा हित्वा न ऊर्जं प्र पतात् पतिष्ठः ॥५॥



१६६ सूक्त

शत्रु-विनाशक देवता । वैराज ऋषभ ऋषि । अनुष्टुप् छन्द ।

ऋषभं मा समानानां सपत्नानां विषासहिम् ।
हन्तारं शत्रूणां कृधि विराजं गोपतिं गवाम् ॥१॥

---

३ पक्षधारी और अस्त्रस्वरूप वा हनन-हेतु कपोत हमें न मारे। जिस व्यापक स्थानमें अग्नि संस्थापित हुए हैं, उसी स्थानपर यह बैठे। हमारी गायों और मनुष्योंका मङ्गल हो । देवो, हमें यहाँ कपोत नहीं मारे।

४ यह उलूक जो अमङ्गल ध्वनि करता है, वह मिथ्या हो। कपोत अग्नि-स्थानमें बैठता है। जिनका दूत बनकर यह आया है, उन मृत्यु-स्वरूप यमको नमस्कार।

५ देवो, यह कपोत भगा देने योग्य है। इसे मन्त्रके द्वारा भगा दो। अमङ्गलका विनाश करके आनन्दके साथ गायको उसकी आहार-सामग्रीकी ओर ले चलो। यह कपोत अतीव वेग-से उड़ता है। यह हमारा अन्न छोड़कर दूसरे स्थानमें उड़ जाय।



१ इन्द्र ऐसा करो कि, मैं समकक्ष व्यक्तियोंमें श्रेष्ठ होऊ, शत्रुओंको हराऊँ, विपक्षियोंको मार डालूँ और सर्व-श्रेष्ठ होकर मैं अशेष गोधनका अधिकारी बनूं।

अहमस्मि सपत्नहेन्द्र इवारिष्टो अक्षतः ।
अधः सपत्ना मे पदोरिमे सर्वे अभिष्ठिताः ॥२॥
अत्रैव वोऽपि नह्याम्युभे आर्त्नी इव ज्यया ।
वाचस्पते निषेधेमान्यथा मदधरं वदान् ॥३॥
अभिभूरहमागमं विश्वकर्मेण धाम्ना ।
आ वश्चित्तमा वो व्रतमा वोहं समितिं ददे ॥४॥
योगक्षेमं व आदायाहं भूयासमुत्तम आ वो मूर्धानमक्रमीम् ।
अधस्पदान्म उद्वदत मण्डूकाइवोदकान्मण्डूका उदकादिव ॥५॥

१६७ सूक्त

इन्द्र देवता । विश्वामित्र और जमदग्नि ऋषि । जगती छन्द ।

तुभ्येदमिन्द्र परिषिच्यते मधु त्वं सुतस्य कलशस्य राजसि ।
त्वं रयिं पुरुविरामु नस्कृधि त्वं तपः परितप्याजयः स्वः ॥१॥

---

२ मैं शत्रु-ध्वंसक हुआ । मुझे कोई हिंसित वा आहत नहीं कर सकता । यह सब शत्रु मेरे दोनों चरणोंके नीचे अवस्थिति करता है ।

३ शत्रुओ, जैसे धनुष्के दोनों प्रान्तोंको ज्यासे बाँधा जाता है, । वैसे ही तुम्हें मैं इस स्थानमें बाँधता हूं । वाचस्पति, इन्हें मना कर दो कि, ये मेरी बातमें बात न कह सकें ।

४ मेरा तेज कर्मके लिये ही उपयुक्त है उसी तेजको लेकर मैं शत्रु-पराजय करनेको आया हूं । शत्रुओ, मैं तुम्हारे मन, कार्य और मिलनको अपहृत कर लेता हूं ।

५ तुम्हारी उपार्जन-योग्यताका अपहरण करके मैं तुम्हारी अपेक्षा श्रेष्ठ हुआ हूं—तुम्हारे मस्तकपर उठ गया हूं । जैसे जलमें मेढ़क बोलते हैं, वैसे ही तुमलोग मेरे पैरोंके नीचे चीत्कार करते हो ।

१ इन्द्र, यह मधुतुल्य सोमरस तुम्हारे लिये ढाला गया है । यह जो सोमीप कलस प्रस्तुत किया जाता है, उसके प्रभु तुम्हीं हो । हमारे लिये तुम प्रचुर धन और विशाल पुत्रादि दो । तपस्या करके तुमने स्वर्गको जीत लिया है ।

स्वर्जितं महि मन्दानमन्धसो हवामहे परि शक्रं सुताँ उप ।
इमं नो यज्ञमिह बोध्यागहि स्पृधो जयन्तं मघवानमीमहे ॥२॥
सोमस्य राज्ञो वरुणस्य धर्मणि बृहस्पतेरनुमत्या उशर्मणि ।
तवाहमद्य मघवन्नुपस्तुतौ धातर्विधातः कलशाँ अभक्षयम् ॥३॥
प्रसूतो भक्षमकरं चरावपि स्तोमं चेमं प्रथमः सूरिरुन्मृजे ।
सुते सातेन यद्यागमं वां प्रति विश्वामित्रयमदग्नी दमे ॥४॥

---

१६८ सूक्त

वायु देवता । वातगोत्रीय अनिल ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

वातस्य नु महिमानं रथस्य रुजन्नेति स्तनयन्नस्य घोषः ।
दिविस्पृग्यात्यरुणानि कृण्वन्नुतो एति पृथिव्या रेणुमस्यन् ॥१॥

---

२ जो इन्द्र स्वर्ग-विजयी हुए हैं और जो सोम-स्वरूप आहार पानेपर विशिष्ट रीतिसे आमोद करते हैं, उन्हीं इन्द्रको प्रस्तुत सोमरसके निकट आनेके लिये बुलाते हैं। हमारे इस यज्ञको जानो। आओ। शत्रु-विजयी इन्द्रके पास हम शरणापन्न हुए हैं।

३ सोम और राजा वरुणके यज्ञ तथा बृहस्पति और अनुमतिकी शरण वा यज्ञ-गृहमें वर्त्त-मान मैं, इन्द्र, तुम्हारे स्तोत्रमें प्रवृत्त हुआ हूं। धाता और विधाता, तुम्हारी अनुमतिसे मैंने कलसस्थ सोमका पान किया है।

४ इन्द्र, तुम्हारे द्वारा प्रेरित होकर मैंने चरुके साथ अन्यान्य आहारीय द्रव्य प्रस्तुत किये हैं। सर्व-प्रथम स्तोता होकर मैं इस स्तोत्रका उच्चारण करता हूं। (इन्द्रकी उक्ति—) विश्वामित्र और जमदग्नि, सोम प्रस्तुत होनेपर मैं जिस समय धन लेकर गृहमें आता हूं, उस समय तुम लोग भली भाँति स्तुति करना।

---

१ जो वायु रथके समान वेगसे दौड़ते हैं, उनकी महिमाका मैं वर्णन करता हूं। इनका शब्द वज्रके समान है। यह वृक्षादिको तोड़ते-ताड़ते आते हैं। ये चारो ओर रक्तवर्ण करके और आकाश-पथका अवलम्बन करके जाते हैं। यह पृथिवीकी धूलिको बिखेर करके जाते हैं।

सं प्रेरते अनु वातस्य विष्ठा ऐनं गच्छन्ति समनं न योषाः ।
ताभिः सयुक् सरथं देव ईयतेऽस्य विश्वस्य भुवनस्य राजा ॥२॥
अन्तरिक्षे पथिभिरीयमानो न नि विशते कतमच्चनाहः ।
अपां सखा प्रथमजा ऋतावा क स्विज्जातः कुत आ बभूव ॥३॥
आत्मा देवानां भुवनस्य गर्भो यथावशं चरति देव एषः ।
घोषा इदस्य शृण्विरे न रूपं तस्मै वाताय हविषा विधेम ॥४॥

१६९ सूक्त

गौ देवता। कक्षीवान्के पुत्र शबर ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

मयोभूर्वातो अभि वातूस्रा ऊर्जस्वतीरोषधीरा रिशन्ताम् ।
पीवस्वतीर्जीवधन्याः पिबन्त्ववसाय पद्वते रुद्र मृळ ॥१॥
याः सरूपा विरूपा एकरूपा यासामग्निरिष्ट्या नामानि वेद ।
या अङ्गिरसस्तपसेह चक्रुस्ताभ्यः पर्जन्य महि शर्म यच्छ ॥२॥

---

२ वायुकी गतिसे पर्वतादि पर्यन्त काँप जाते हैं । घोड़ियाँ जैसे युद्धमें जाती हैं, वैसे ही पर्वतादि वायुकी ओर जाते हैं। वायु घोड़ियोंकी सहायता पाकर और रथपर चढ़कर समस्त भुवनके राजाके समान जाते हैं।

३ आकाशमें गति-विधि करनेके समय किसी भी दिन स्थिर होकर नहीं बैठते। यह जलके बन्धु हैं, जलके आगे उत्पन्न होते हैं और यह सत्य-स्वभाव हैं। यह कहाँ जनमें हैं? कहांसे आये हैं?

४ वायुदेव देवोंके आत्म-स्वरूप और भुवनोंके सन्तान-स्वरूप हैं। यह यथेच्छ विहार करते हैं। इनका शब्द ही, अनेक प्रकारसे, सुना जाता है, इनका रूप प्रत्यक्ष नहीं होता। हविके साथ हम वायुकी पूजा करते हैं।

---

१ सुखकर वायु गायोंकी ओर बहें। गायें बलकारक तृण, पत्र आदिका आस्वादन करें। प्रभूत और प्राण-परितृप्तिकर जल ये पियें। रुद्रदेव, चरण-युक्त और अन्न-स्वरूप गायोंको स्वच्छन्दतासे रखो।

२ कभी गायें समानवर्ण होती हैं, कभी विभिन्न वर्णोंकी और कभी सर्वाङ्ग एक वर्णकी। यज्ञमें अग्नि उनको जानते हैं। अङ्गिराकी सन्तानोंने तपस्याके द्वारा उनको पृथिवीपर बनाया है। पर्जन्यदेव, उन गायोंको सुख दो।

या देवेषु तन्वमैरयन्त यासां सोमो विश्वा रूपाणि वेद ।
ता अस्मभ्यं पयसा पिन्वमानाः प्रजावतीरिन्द्र गोष्ठे रिरीहि ॥३॥
प्रजापतिर्मह्यमेता रराणो विश्वैर्देवैः पितृभिः संविदानः ।
शिवाः सतीरुप नो गोष्ठमाकस्तासां वयं प्रजया सं सदेम ॥४॥

१७० सूक्त

सूर्य देवता । सूर्य-पुत्र विभ्राट् ऋषि । जगती आदि छन्द ।

विभ्राड्बृहत् पिबतु सोम्यं मध्वायुर्दधद्यज्ञपतावविह्रुतम् ।
वातजूतो यो अभिरक्षति त्मना प्रजाः पुपोष पुरुधा वि राजति ॥१॥
विभ्राड्बृहत् सुभृतं वाजसातमं धर्मं दिवो धरुणे सत्यमर्पितम् ।
अमित्रहा वृत्रहा दस्युहन्तमं ज्योतिर्जज्ञे असुरहा सपत्नहा ॥२॥

---

३ गायें अपने शरीरको देवोंके यज्ञके लिये दिया करती हैं । सोम उनकी अशेष आहुतियोंको जानते हैं । इन्द्र, उन्हें दूधसे परिपूर्ण करके और सन्तान-संयुक्त बनाकर हमारे लिये गोष्ठमें भेज दें ।

४ देवों और पितरोंसे परामर्श करके प्रजापतिने मुझे इन गायोंको दिया है । इन सब गायोंको कल्याण-युक्त करके वह हमारे गोष्ठमें रखते हैं, ताकि हम गायोंकी सन्तति प्राप्त कर सकें ।

---

१ अत्यन्त दीप्तिवाले सूर्यदेव मधु-तुल्य सोमरसका पान करें और यज्ञानुष्ठाता व्यक्तिको उत्तम आयु दें । वह वायुके द्वारा प्रेरित होकर प्रजावर्गकी स्वयं रक्षा करते हैं, प्रजावर्गका पोषण करते और अशेष प्रकारकी शोभा पाते हैं ।

२ सूर्य्य-रूप और प्रकाशमय पदार्थ उदित हो रहा है । यह प्रकाण्ड, दीप्तिशाली भली भाँति संस्थापित और सर्वोत्कृष्ट अन्नदाता है । यह आकाशके ऊपर संस्थापित होकर आकाशको आश्रित किये हुए है । यह शत्रु-हन्ता, वृत्र-वध-कर्त्ता, असुरोंके घातक और विपक्षियोंके संहारक हैं ।

इदं श्रेष्ठं ज्योतिषां ज्योतिरुत्तमं विश्वजिद्धनजिदुच्यते बृहत् ।
विश्वभ्राड्भ्राजो महि सूर्यो दृश उरु पप्रथे सह ओजो अच्युतम् ॥३॥
विभ्राजं ज्योतिषा स्वरगच्छो रोचनं दिवः ।
येनेमा विश्वा भुवनान्याभृता विश्वकर्मणा विश्वदेव्यावता ॥४॥

१७१ सूक्त

इन्द्र देवता । भृगु-पुत्र इट ऋषि । गायत्री छन्द ।

त्वं त्यमिटतो रथमिन्द्र प्रावः सुतावतः । अशृणोः सोमिनो हवम् ॥१॥
त्वं मखस्य दोधतः शिरोऽव त्वचो भरः । अगच्छः सोमिनो गृहम् ॥२॥
त्वं त्यमिन्द्र मर्त्यमास्त्रबुध्नाय वेन्यम् । मुहुः श्रथ्ना मनस्यवे ॥३॥
त्वं त्यमिन्द्र सूर्यं पश्चा सन्तं पुरस्कृधि । देवानां चित्तिरो वशम् ॥४॥

---

३ सूर्य सारे ज्योतिर्मय पदार्थोंमें श्रेष्ठ और अग्रगण्य हैं । यह विश्वजित् और धनजित् हैं । यह प्रकाण्ड, दीप्तिशाली और सारी वस्तुओंको आलोक-युक्त करनेवाले हैं । वृष्टिकी सुविधाके लिये यह विस्तारित हुए हैं । यह बल-स्वरूप और अविचल तेजवाले हैं ।

४ सूर्य, तुम ज्योतिसे प्रकाशमय होकर आकाशके उज्ज्वल स्थानमें गये हो । तुम्हारा प्रताप सारे कर्मोंका सहायक है, सारे यज्ञोंके अनुकूल और सारे भुवनोंको पुष्टि देनेवाला है ।

१ इन्द्र, इट ऋषिने जिस समय सोम प्रस्तुत किया, उस समय तुमने उनके रथकी रक्षा की—सोम-युक्त उन इटकी तुमने पुकार सुनी ।

२ यज्ञ काँप गया- धनुर्द्धारी यज्ञका मस्तक शरीरसे तुमने पृथक् किया । सोमवाले इटके गृहमें तुम गये ।

३ इन्द्र, अस्त्र-बुध्नके पुत्रने बार-बार तुम्हारी स्तुति की; इसलिये तुमने वेन-पुत्र पृथुको उनके वशमें कर दिया ।

४ इन्द्र, जिस समय रम्य मूर्ति सूर्य पश्चिमकी ओर जाते हैं, उस समय देवता लोग भी नहीं जानते कि, वह कहां गये । तुम फिर उन सूर्यको पूर्वकी ओर ले आते हो ।

१७२ सूक्त

उषा देवता। आङ्गिरस संवर्त्त ऋषि। द्विपदा विराट् छन्द।

आयाहि वनसा सह गावः सचन्त वर्तनिं यदूधभिः ॥१॥

आ याहि वस्व्या धिया मंहिष्ठो जारयन्मखः सुदानुभिः ॥२॥

पितुभृतो न तन्तुमित् सुदानवः प्रति दध्मो यजामसि ॥३॥

उषा अप स्वसुस्तमः सं वर्तयति वर्तनिं सुजातता ॥४॥

१७३ सूक्त

राजस्तुति देवता। आङ्गिरस ध्रुव ऋषि। अनुष्टुप् छन्द।

आ त्वाहार्षमन्तरेधि ध्रुवस्तिष्ठाविचाचलिः।

विशस्त्वा सर्वा वाञ्छन्तु मा त्वद्राष्ट्रमधि भ्रशत् ॥१॥

इहैवैधि माप च्योष्ठाः पर्वतइवाविचाचलिः।

इन्द्राइवेह ध्रुवस्तिष्ठेह राष्ट्रमुधारय ॥२॥

---

१ चमत्कार तेजके द्वारा तुम आओ। परिपूर्ण स्तनके साथ गायें मार्गपर चली हैं।

२ उषा, उत्तम स्तोत्र ग्रहण करनेको तुम आओ। यज्ञकर्त्ता उत्तम दान-सामग्री लेकर श्रेष्ठ दातृत्वके साथ यज्ञ-सम्पादन करता है।

३ अन्न-संग्रह करके हम उत्तमोत्तम वस्तुओंका दान करनेको उद्यत हैं। सूत्रके समान इस यज्ञका हम विस्तार करते हैं। तुम्हें हम यज्ञ देते हैं।

४ उषाने अपनी भगिनी रात्रिका अन्धकार दूर किया। उत्तम रूपसे वृद्धि प्राप्त करके रथका संचालन किया।

---

१ राजन्, तुम्हें मैंने राष्ट्रपति बनाया। तुम इस देशके प्रभु बनो। अटल, अविचल और स्थिर होकर रहो। प्रजा तुम्हारी अभिलाषा करें। तुम्हारा राजत्व नष्ट न होने पावे।

२ तुम यहीं पर्वतके समान अविचल होकर रहो। राज्य-च्युत नहीं होना। इन्द्रके समान निश्चल होकर यहां रहो। यहां राज्यको धारण करो।

इममिन्द्रो अदीधरद्ध्रुवं ध्रुवेण हविषा ।
तस्मै सोमो अधि ब्रवत्तस्मा उ ब्रह्मणस्पतिः ॥३॥
ध्रुवा द्यौर्ध्रुवा पृथिवी ध्रुवासः पर्वता इमे ।
ध्रुवं विश्वमिदं जगद् ध्रुवो राजा विशामयम् ॥४॥
ध्रुवं ते राजा वरुणो ध्रुवं देवो बृहस्पतिः ।
ध्रुवं त इन्द्रश्चाग्निश्च राष्ट्रं धारयतां ध्रुवम् ॥५॥
ध्रुवं ध्रुवेण हविषाभि सोमं मृशामसि ।
अथो त इन्द्रः केवलीर्विशो बलिहृतस्करत् ॥६॥

१७४ सूक्त

राजस्तुति देवता । आङ्गिरस अभीवर्त्त ऋषि । अनुष्टुप् छन्द ।

अभीवर्तेन हविषा येनेन्द्रो अभिवावृते ।
तेनास्मान् ब्रह्मणस्पतेऽभि राष्ट्राय वर्तय ॥१॥

३ अक्षय्य होमीय द्रव्य पाकर इन्द्रने इस नवाभिषिक्त राजाको आश्रय दिया है । ब्रह्मणस्पतिने आशीर्वाद दिया है ।

४ जैसे आकाश, पृथिवी, समस्त पर्वत और सारा विश्व निश्चल है, वैसे ही यह राजा भी प्रजावर्गके बीच अविचल हों ।

५ वरुण राजा तुम्हारे राज्यको अविचल करें, बृहस्पतिदेव अविचल करें, इन्द्र और अग्नि भी इसे अविचल रूपसे धारण करें ।

६ अक्षय्य हविके साथ अक्षय्य सोमरसको हम मिलाते हैं; इसलिये इन्द्रने तुम्हारी प्रजाको एकायत्त और करप्रदानोन्मुख बनाया है ।

१ यज्ञ-सामग्री लेकर देवोंके निकट जाना होगा । यज्ञ-सामग्री पाकर इन्द्र अनुकूल हुए हैं । ब्रह्मणस्पति, ऐसी यज्ञ-सामग्रीके साथ हमने यज्ञ किया है; इसलिये हमें राज्य-प्राप्तिके लिये प्रवृत्त करो ।

अभिवृत्य सपत्नानभि या नो अरातयः ।
अभि पृतन्यन्तं तिष्ठाभि यो न इरस्यति ॥२॥
अभि त्वा देवः सविताभि सोमो अवीवृतत् ।
अभि त्वा विश्वा भूतान्यभीवर्तो यथाससि ॥३॥
येनेन्द्रो हविषा कृत्व्यभवद्द्युम्न्युत्तमः ।
इदं तदक्रि देवा असपत्नः किलाभुवम् ॥४॥
असपत्नः सपत्नहाभिराष्ट्रो विषासहिः ।
यथाहमेषां भूतानां विराजानि जनस्य च ॥५॥

१७५ सूक्त

सोमाभिषवकारी प्रस्तर देवता। सर्पर्षि अर्बुदके पुत्र ऊर्द्ध्वग्रावा ऋषि। गायत्री छन्द।

प्र वो ग्रावाणः सविता देवः सुवतु धर्मणा । धूर्षु युज्यध्वं सुनुत ॥१॥
ग्रवाणो अप दुच्छुनामप सेधत दुर्मतिम् । उस्राः कर्तन भेषजम् ॥२॥

---

२ जो विपक्षी हैं, जो हमारे हिंसक शत्रु हैं, जो सेना लेकर युद्ध करनेको आते हैं और जो हमसे द्वेष करते हैं, राजन्, उनको अभिभूत करो।

३ सविता देव तुम्हारे प्रति अनुकूल हुए हैं। सोम अनुकूल हुए हैं और सारे प्राणी तुम्हारे अनुकूल हुए हैं। इस प्रकार तुमने सबके पास आश्रय पाया है।

४ देवो, जिस यज्ञ-सामग्रीके द्वारा इन्द्र कर्म-कर्त्ता, अन्नवान् और उत्तम हुए हैं, उसीसे मैंने भी यज्ञ किया है। इसीसे मैं शत्रु-रहित हुआ हूं।

५ मेरे शत्रु नहीं हैं। मैंने शत्रुओंका बध किया है। मैं राज्यका प्रभु और विपक्ष-वारणमें समर्थ हुआ हूं। मैं सारे प्राणियों और मन्त्री आदिका अधीश्वर हुआ हूं।

---

१ प्रस्तरो, सविता देव अपनी शक्तिके द्वारा तुम्हें, सोम प्रस्तुत करनेको, नियुक्त करें। तुम अपने कर्ममें नियुक्त होओ और सोम प्रस्तुत करो।

२ प्रस्तरो, दुःख-कारणको दूर करो। दुर्मतिको दूर कर दो। गायोंको हमारे लिये औषध-स्वरूप बनाओ।

ग्रवाण उपरेष्वा महीयन्ते सजोषसः । वृष्णे दधतो वृष्ण्यम् ॥३॥
ग्रावाणः सविता नु वो देवः सुवतु धर्मणा । यजमानाय सुन्वते ॥४॥

१७६ सूक्त

ऋभु और अग्नि देवता । ऋभु-पुत्र सूनु ऋषि। अनुष्टुप् और गायत्री छन्द ।

प्र सूनव ऋभूणां बृहन्नवन्त वृजना ।
क्षामा ये विश्वधायसोऽश्नन् धेनुं न मातरम् ॥१॥
प्र देवं देव्या धिया भरता जातवेदसम् ।
हव्या नो वक्षदानुषक् ॥२॥
अयमु ष्य प्र देवयुर्होता यज्ञाय नीयते ।
रथो न योरभीवृतो घृणीवाञ्चेतति त्मना ॥३॥

---

३ परस्पर मिलकर प्रस्तर एक विस्तृत प्रस्तरकी चारो ओर शोभा पा रहे हैं । रस-वर्षक सोमके प्रति वे प्रस्तर अपने बलका प्रयोग करते हैं ।

४ प्रस्तरो, सविता देव सोमयज्ञकर्त्ता यजमानके लिये तुम्हें सोम प्रस्तुत करनेको नियुक्त करें ।

---

१ ऋभु लोग, घोर युद्ध करनेके लिये, निकले । जैसे बछड़े अपनी माता गायको घेरकर खड़े हो जाते हैं, वैसे ही वे संसारको धारण करनेके लिये पृथिवीकी चारो ओर व्याप्त हुए ।

२ ज्ञानी अग्निदेवको देव-योग्य स्तोत्रके द्वारा प्रसन्न करो । वह यथा-नियम हमारे हव्यका वहन करें ।

३ यह वही अग्नि हैं, जो देवोंके निकट जाते हैं । यह होता हैं । यज्ञके लिये इनकी स्थापना की जाती है । रथके समान यह हव्यका वहन करते हैं । यह पुरोहित-यजमानोंके द्वारा घिरे हुए हैं । यह किरण-युक्त हैं । यह स्वयं यज्ञ सम्पन्न करना जानते हैं ।

अयमग्निं रुरुष्यत्यमृतादिव जन्मनः ।
सहसश्चित् सहीयान् देवो जीवातवे कृतः ॥४॥

१७७ सूक्त

माया देवता। प्रजापति-पुत्र पतङ्ग ऋषि। जगती और त्रिष्टुप् छन्द।

पतङ्गमक्तमसुरस्य मायया हृदा पश्यन्ति मनसा विपश्चितः ।
समुद्रे अन्तः कवयो विचक्षते मरीचीनां पदमिच्छन्ति वेधसः ॥१॥
पतङ्गो वाचं मनसा बिभर्ति तां गन्धर्वोऽवदद्गर्भे अन्तः ।
तां द्योतमानां स्वर्यं मनीषामृतस्य पदे कवयो निपान्ति ॥२॥

---

४ अग्नि रक्षा करते हैं। इनकी उत्पत्ति अमृतके सदृश है। यह बलवान्‌की अपेक्षा भी बली हैं। परमायुर्वृद्धिके लिये यह उत्पादित हुए हैं।

१ मनमें विचार करके मानस चक्षुसे विद्वानोंने एक पतङ्ग (जीवात्मा) को देखा कि, उसे आसुरी माया आक्रान्त कर चुकी है। पण्डितोंने कहा कि, यह समुद्रके बीच घटित हो रहा है। वे (विद्वान् लोग) विधाताकी किरणोंमें जानेकी इच्छा करते हैं।*

२ पतङ्ग मन ही मन वचनको धारण करता है। गर्भके मध्यमें ही उसे गन्धर्वने वह वाक्य सिखाया है। वह वाणी दिव्य, स्वर्ग-सुख देनेवाली और बुद्धिकी अधीश्वरी है। सत्य मार्गमें विद्वान् लोग उस वाणीकी रक्षा करते हैं।+

---

* जीवात्मा मायासे आच्छन्न है— यह बात चिन्तनके द्वारा जानी जाती है। समुद्रवत् परमात्माके बीचमें ही जीवात्मा रहता है। परमात्माका धाम आलोकमय है। वहां जानेसे ही मायासे मुक्ति मिलती है।

+ जीवात्मा (पतङ्ग)में बीज-रूपसे सारे शब्द रहते हैं। गर्भावस्थामें ही गन्धर्व अर्थात् देवता उसके मनमें उस बीजको दे देते हैं। वाक्यकी शक्ति असीम है। बुद्धिमान् लोग उसे कभी मिथ्याकी ओर नहीं ले जाते।

अपश्यं गोपामनिपद्यमानमा च परा च पथिभिश्चरन्तम् ।
स सध्रीचीः स विषूचीर्वसान आ वरीवर्ति भुवनेष्वन्तः ॥३॥



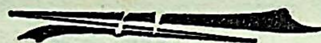
१७८ सूक्त

तार्क्ष्य देवता । तार्क्ष्यके पुत्र अरिष्टनेमि ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

त्यमू षु वाजिनं देवजूतं सहावानं तरुतारं रथानाम् ।
अरिष्टनेमिं पृतनाजमाशुं स्वस्तये तार्क्ष्यमिहा हुवेम ॥१॥
इन्द्रस्येव रातिमाजोहुवानाः स्वस्तये नावमिवा रुहेम ।
उर्वी न पृथ्वी बहुले गभीरे मा वामेतौ मा परेतौ रिषाम ॥२॥

---

३ मैंने देखा, गोपालक (जीवात्मा) का कभी पतन (विनाश) नहीं होता । वह कभी समीप और कभी दूर, नाना मार्गोंमें भ्रमण करता है। वह कभी अनेक वस्त्र एकत्र ही पहनता है और कभी पृथक्-पृथक् पहनता है। इस प्रकार वह संसारमें बार-बार आता—जाता है। †



१ जो तार्क्ष्य पक्षी (गरुड़) बली है, सोम लानेके लिये जिसे देवोंने भेजा था, जो विपक्ष-विजयी और शत्रुओंके रथोंका जयी है, जिसके रथका कोई ध्वंस नहीं कर सकता और जो सेनाओंको युद्धमें प्रेरित करता है, उसीको हम मङ्गल-कामनासे बुलाते हैं।

२ हम तार्क्ष्य पक्षीकी दान-शक्तिको बुलाते हैं। जैसे हम इन्द्रकी दानशक्तिका आह्वान करते हैं, वैसे ही आह्वान करते हैं। मङ्गलके लिये हम इस दानशक्तिका, विपत्तिसे पार पानेके निमित्त, नौकाके समान आश्रय करते हैं। द्यावापृथिवी, तुम विशाल, बृहत्, सर्वव्यापक और गभीर हो। जाने वा आनेके समय हम न मरें।

---

† जीवात्माओंका ध्वंस नहीं होता, वह नाना योनियोंमें भ्रमण करते हैं। किसी जन्ममें नाना गुण (वस्त्र) धारण करते हैं और किसी जन्ममें दो-एक। निकृष्ट योनिमें अल्प गुण रहता है और उत्कृष्ट योनिमें अनेक गुण देखे जाते हैं।

सद्यश्चिद्यः शवसा पञ्च कृष्टीः सूर्य इव ज्योतिषापस्ततान ।
सहस्रसाः शतसा अस्य रंहिर्न स्मा वरन्ते युवतिं न शर्याम् ॥३॥

१७९ सूक्त

इन्द्र देवता। १ मके उशीनर-पुत्र शिबि, २ यके काशीनरेश प्रतर्दन और ३ यके रोहिदश्व-पुत्र वसुमना ऋषि। अनुष्टुप् और त्रिष्टुप् छन्द ।

उत्तिष्ठताव पश्यतेन्द्रस्य भागमृत्वियम् ।
यदि श्रातो जुहोतन यद्यश्रातो ममत्तन ॥१॥
श्रातं हविरो ष्विन्द्र प्र याहि जगाम सूरो अध्वनो विमध्यम् ।
परि त्वासते निधिभिः सखायः कुलपा न व्राजपतिं चरन्तम् ॥२॥
श्रातं मन्य ऊधनि श्रातमग्नौ सुश्रातं मन्ये तदृतं नवीयः ।
माध्यन्दिनस्य सवनस्य दध्नः पिबेन्द्र वज्रिन् पुरुकृज्जुषाणः ॥३॥

---

३ जैसे अपने तेजके द्वारा सूर्य वृष्टि-वारिका विस्तार करते हैं, वैसे ही तार्क्ष्य पक्षीने अति शीघ्र चार वर्णों और निषादको परिपूर्ण-भाण्डार कर दिया। गरुड़की गति शत और सहस्र धनोंकी दात्री है। जैसे वाणके लक्ष्यमें संलग्न होनेपर उसमें कोई बाधा नहीं दे सकता, वैसे ही तार्क्ष्यके आगमनमें कोई बाधा नहीं दे सकता।

१ पुरोहितो, उठो। इन्द्रके समयोचित भागके लिये उद्योग करो। यदि वह पकाया जा चुका है, तो होम करो और यदि अभी अपक है, तो उत्साहपूर्वक पाक करो।

२ इन्द्र, हव्य-पाक हो चुका है। समीप आओ। सूर्य अपने प्रतिदिनके कुछ कम आधे मार्ग (विकलमध्य) में पहुंच चुके हैं। जैसे कुल-रक्षक पुत्र इतस्ततः विचरण करनेवाले गृहपतिकी प्रतीक्षा करते हैं, वैसे ही बन्धु लोग विविध-यज्ञ-सामग्री लेकर तुम्हारी प्रतीक्षा करते हैं।

३ प्रथम गायके स्तनमें दुग्ध वा 'दधिघर्माख्य हवि' का पाक होता है, पुनः, मुझे विदित है कि, वह अग्निमें पकाया जाकर अत्युत्तम पाककी अवस्थाको प्राप्त होता और अतीव पवित्र तथा नवीन रूप धारण करता है। बहुधन-वितरणकर्ता और वज्रधर इन्द्र, दोपहरके यज्ञमें तुम्हें जो 'दधिघर्माख्य हवि' का अर्पण किया जाता है, उस हविका, आस्थाके साथ, तुम पान करो।

१८० सूक्त

इन्द्र देवता। इन्द्र-पुत्र जय ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

प्र ससाहिषे पुरुहूत शत्रूञ्ज्येष्ठस्ते शुष्म इह रातिरस्तु।
इन्द्राभर दक्षिणेना वसूनि पतिः सिन्धूनामसि रेवतीनाम् ॥१॥
मृगो न भीमः कुचरो गिरिष्ठाः परावत आजगन्था परस्याः।
सृकं संशाय पविमिन्द्र तिग्मं वि शत्रून् ताळ्हि वि मृधो नुदस्व ॥२॥
इन्द्र क्षत्रमभि वाममोजोऽजायथा वृषभ चर्षणीनाम्।
अपानुदो जनममित्रयन्तमुरुं देवेभ्यो अकृणोरु लोकम् ॥३॥

१८१ सूक्त

विश्वदेव देवता। १ मके वासिष्ठ प्रथ, २ यके भारद्वाज सप्रथ और ३ यके सूर्य-पुत्र घर्म ऋषि। त्रिष्टुप् छन्द।

प्रथश्च यस्य सप्रथश्च नामानुष्टुभस्य हविषो हविर्यत्।
धातुर्द्युतानात् सवितुश्च विष्णो रथन्तरमा जभारा वसिष्ठः ॥१॥

---

१ बहुतोंके द्वारा आहूत इन्द्र, तुम विपक्षियोंका पराभव करते हो। तुम्हारा तेज सर्वश्रेष्ठ है। यहाँ तुम्हारा दान प्रवृत्त हो। इन्द्र, तुम दाहिने हाथसे धन दो। तुम धनके स्रोतके स्वामी हो।

२ जैसे पर्वतवासी और कुत्सित चरणवाला पशु घोराकृति होता है, इन्द्र, वैसी ही भयंकर मूर्त्ति-में तुम अति दूरवर्त्ती स्वर्गधामसे आये हो। सर्वग और तीक्ष्ण वज्रपर शान चढ़ाकर शत्रुओंको मारो और विपक्षियोंको दूर करो।

३ इन्द्र, तुम ऐसे सुन्दर तेजको लेकर जनमे हो, जिसके द्वारा दूसरेके अत्याचारका निवारण करते हो। तुम मनुष्योंकी कामनाको पूर्ण करते हो और शत्रुता करनेवाले लोगोंको ताड़ित करते हो। तुमने देवोंके लिये संसारको विस्तीर्ण कर दिया है।



१ जिन (वसिष्ठ) के वंशज प्रथ हैं और जिन (भरद्वाज) के वंशीय सप्रथ हैं, उनमेंसे वसिष्ठ धाता, दीप्त सविता और विष्णुके पाससे "रथन्तर" (साम-मन्त्र) ले आये हैं। वह अनुष्टुप् छन्दवाला और घर्म नामक हविको शुद्ध करनेवाला है।

अविन्दन्ते अतिहितं यदासीद्यज्ञस्य धाम परमं गुहा यत् ।
धातुर्द्युतानात् सवितुश्च विष्णोर्भरद्वाजो बृहदा चक्रे अग्नेः ॥२॥
तेऽविन्दन् मनसा दीध्याना यजुःष्कन्नं प्रथमं देवयानम् ।
धातुर्द्युतानात् सवितुश्च विष्णोरा सूर्यादभरन् घर्ममेते ॥३॥

१८२ सूक्त

बृहस्पति देवता । बृहस्पति-पुत्र तपुर्मूर्द्धा ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

बृहस्पतिर्नयतु दुर्गहा तिरः पुनर्नेषदघशंसाय मन्म ।
क्षिपदशस्तिमप दुर्मतिं हन्नथा करद्यजमानाय शं योः ॥१॥
नराशंसो नोऽवतु प्रयाजे शन्नो अस्त्वनुयाजो हवेषु ।
क्षिपदशस्तिमप दुर्मतिं हन्नथा करद्यजमानाय शं योः ॥२॥
तपुर्मूर्धा तपतु रक्षसो ये ब्रह्मद्विषः शरवे हन्तवा उ ।
क्षिपदशस्तिमप दुर्मतिं हन्नथा करद्यजमानाय शं योः ॥३॥

---

२ जिस अति निगूढ़ "बृहत्" (साम-मन्त्र) के द्वारा यज्ञानुष्ठान होता है और जो तिरोहित था, उसे सविता आदिने पाया था। धाता, दीप्त सविता, विष्णु और अग्निके पाससे भरद्वाज "बृहत्"को ले आये ।

३ अभिषेक-क्रिया-निष्पादक "घर्म" (यजुर्वेदीय मन्त्र) यज्ञ-कार्यमें, प्रधान रूपसे, उपयोगी है, धाता आदि देवोंने उसका मन ही मन ध्यान करके उसे पाया था। पुरोहित लोग धाता, विष्णु और सूर्यके पाससे "घर्म"को ले आये हैं ।

१ बृहस्पति दुर्गतिको नष्ट करें, पाप-नाशके लिये स्तुतिकी स्फूर्त्ति कर दें, अमङ्गलको नष्ट कर दें और दुर्मतिको दूर कर दें। वह यजमानके रोगका नाश कर दें और भयको हर ले जायं।

२ प्रयाज में नराशंस नामक अग्नि हमारी रक्षा करें । अनुयाजमें भी वह हमारा मङ्गल करें। अमङ्गलको नष्ट कर दें और दुर्मतिको दूर कर दें। वह यजमानके रोगका नाश कर दें और भयको हर ले जायँ।

३ स्तोत्र-द्वेषी राक्षसोंको प्रतप्त-शिरा बृहस्पति दग्ध करें। ऐसा होनेपर हिंसक मर जायगा। वह अमङ्गलको नष्ट कर दें और दुर्मतिको दूर कर दें। वह यजमानके रोगका नाश कर दें और भयको हर ले जायँ।

१८३ सूक्त

यजमान, यजमानपत्नी और होताका आशीर्वाद देवता । प्रजापत पुत्र प्रजावान् ऋषि । त्रिष्टुप् छन्द ।

अपश्यन्त्वा मनसा चेकितानं तपसो विभूतम् ।
इह प्रजामिह रयिं रराणः प्रजायस्व प्रजया पुत्रकाम ॥१॥
अपश्यन्त्वा मनसा दीध्यानां स्वायां तनू ऋत्व्ये नाधमानाम् ।
उप मामुच्चा युवतिर्बभूयाः प्रजायस्व प्रजया पुत्रकामे ॥२॥
अहं गर्भमदधामोषधीष्वहं विश्वेषु भुवनेष्वन्तः ।
अहं प्रजा अजनयं पृथिव्यामहं जनिभ्यो अपरीषु पुत्रान् ॥३॥

१८४ सूक्त

विष्णु आदि देवता । त्वष्टा ऋषि । अनुष्टुप् छन्द ।

विष्णुर्योनिं कल्पयतु त्वष्टा रूपाणि पिंशतु ।
आ सिञ्चतु प्रजापतिर्धाता गर्भं दधातु ते ॥१॥
गर्भं धेहि सिनीवालि गर्भं धेहि सरस्वति ।
गर्भं ते अश्विनौ देवावा धत्तां पुष्करस्रजा ॥२॥

---

१ यजमान मैंने मानस चक्षुसे तुम्हें देखा । तुम ज्ञानी हो, तपस्यासे उत्पन्न हो और तपस्याके द्वारा श्री-वृद्धि पायी है । यहां पुत्रादि और धन पाकर प्रसन्न होओ पुत्र ही तुम्हारी कामना है, इसलिये पुत्र उत्पन्न करो ।

२ पत्नी, मैंने मानस चक्षुसे देखा कि, तुम्हारी मूर्त्ति उज्ज्वल है । तुम यथासमय अपने शरीरमें गर्भाधानकी कामना करती हो । तुमने पुत्रकी इच्छा की है । मेरे पास आकर तुम तरुणी हो जाओ । तुम पुत्र उत्पन्न करो ।

३ मैं होता हूं । मैं वृक्षादिमें गर्भाधानका कारण हूं । मैं ही अन्य प्राणियोंमें भी गर्भाधान करता हूं । मैं पृथिवीपर प्रजा उत्पन्न करता हूं । अन्य स्त्रियोंमें भी मैं पुत्र उत्पन्न करनेवाला हूँ—यज्ञ करके सबमें पुत्र उत्पन्न कर सकता हूं ।

१ स्त्रीके वराङ्गको विष्णु गर्भाधानके उपयुक्त कर दें, त्वष्टा स्त्री-पुरुषके अभिव्यञ्जक चिह्नोंका अवयव कर दें, प्रजापति वीर्य-पातमें सहायक हों और धाता तुम्हारे गर्भका धारण करें।

२ सिनीवाली, गर्भका धारण करो । सरस्वती तुम भी गर्भका धारण (रक्षण) करो । स्वर्णमय कमलका आभूषण धारण करनेवाले अश्विद्वय तुम्हारा गर्भ उत्पादित करें ।

हिरण्ययी अरणी यं निर्मन्थतो अश्विना ।
तं ते गर्भं हवामहे दशमे मासि सूतवे ॥३॥

१८५ सूक्त

आदित्य देवता । वरुण-पुत्र सत्यधृति ऋषि । गायत्री छन्द ।

महि त्रीणामवोऽस्तु द्युक्षं मित्रस्यार्यम्णः । दुराधर्षं वरुणस्य ॥१॥
नहि तेषाममा चन नाध्वसु वारणेषु । ईशे रिपुरघशंसः ॥२॥
यस्मै पुत्रासो अदितेः प्रजीवसे मर्त्याय । ज्योतिर्यच्छन्त्यजस्रम् ॥३॥

१८६ सूक्त

वायु देवता । वातगोत्रीय उल ऋषि । गायत्री छन्द ।

वात आ वातु भेषजं शम्भु मयोभु नो हृदे । प्र ण आयूंषि तारिषत् ॥१॥
उत वात पितासि न उत भ्रातोत नः सखा । स नो जीवातवे कृधि ॥२॥
यददो वात ते गृहेऽमृतस्य निधिर्हितः । ततो नो देहि जीवसे ॥३॥

---

३ पत्नी, तुम्हारी गर्भस्थ सन्तानके लिये अश्विद्वय जो सुवर्ण-निर्मित दो अरणियोंका घर्षण किये हुए हैं, दसवें मासमें प्रसव होनेके लिये तुम्हारी उसी गर्भस्थ सन्तानको हम बुला रहे हैं।

---

१ हम मित्र, अर्यमा और वरुणका सतेज, दुर्द्धर्ष और महान् आश्रय प्राप्त करें।

२ गृह, पथ और दुर्गम स्थानमें उन तीनोंके आश्रित व्यक्तियोंके ऊपर किसी द्वेषी शत्रुकी चाल नहीं काम करती।

३ ये तीनों अदिति-पुत्र जिसे निरन्तर ज्योति देते हैं, उसकी जीवन-रक्षा होती है और उसपर किसी शत्रुकी नहीं चलती।

---

१ औषधके समान होकर वायु हमारे हृदयके लिये आवें। वह कल्याणकर और सुखकर हों। वह आयुका विस्तार करें।

२ वायु, तुम हमारे पिता, भ्राता और बन्धु हो। तुम हमारे जीवनके लिये औषध करो।

३ वायु, तुम्हारे गृहमें यह जो अमृतकी निधि स्थापित है, उससे हमारे जीवनके लिये अमृत दो।

१८७ सूक्त

अग्नि देवता । अग्नि-पुत्र वत्स ऋषि । गायत्री छन्द ।

प्राग्नये वाचमीरय वृषभाय क्षितीनाम् । स नः पर्षदति द्विषः ॥१॥

यः परस्याः परावतस्तिरो धन्वातिरोचते । स नः पर्षदति द्विषः ॥२॥

यो रक्षांसि निजूर्वति वृषा शुक्रेण शोचिषा । स नः पर्षदति द्विषः ॥३॥

यो विश्वाभि विपश्यति भुवना सञ्च पश्यति । स नः पर्षदति द्विषः ॥४॥

यो अस्य पारे रजसः शुक्रो अग्निरजायत । स नः पर्षदति द्विषः ॥५॥

१८८ सूक्त

ज्ञानी अग्नि देवता । अग्नि-पुत्र श्येन ऋषि । गायत्री छन्द ।

प्र नूनं जातवेदसमश्वं हिनोत वाजिनम् । इदं नो बर्हिरासदे ॥१॥

अस्य प्र जातवेदसो विप्रवीरस्य मीहूलुषः । महीमियर्मि सुष्टुतिम् ॥२॥

या रुचो जातवेदसो देवत्रा हव्यवाहनीः । ताभिर्नो यज्ञमिन्वतु ॥३॥

---

१ मनुष्यो, मनुष्योंके काम-वर्षक अग्निके लिये स्तुति प्रेरित करो । वह हमें शत्रुके हाथसे बचावें ।

२ अग्नि अत्यन्त दूर देशसे आकाशको पार करके आये हैं । वह हमें शत्रुके हाथसे बचावें ।

३ वृष्टि-वर्षक अग्नि उज्ज्वल शिखाके द्वारा राक्षसोंका बध करते हैं । वह हमें शत्रुके हाथसे बचावें ।

४ वह सारे भुवनोंका, पृथक्-पृथक् रूपसे, निरीक्षण करते हैं—मिलित भावसे भी पर्यवेक्षण करते हैं । वह हमें शत्रुके हाथसे बचावें ।

५ उन अग्निने द्युलोकके उस पारमें उज्ज्वल मूर्त्तिमें जन्म ग्रहण किया है । वह हमें शत्रुके हाथसे बचावें ।

१ पुरोहित-यजमानो, ज्ञानी अग्निको प्रज्वलित करो । वह चतुर्दिग्व्यापी और अन्नवान् है । वह आकर कुशपर बैठें ।

२ बुद्धिमान् यजमान अग्निके पुत्र हैं । अग्नि वृष्ट-वारिका सेचन करते हैं । इनके लिये मैं विस्तृत और शोभन स्तुति प्रेरित करता हूं ।

३ अग्नि अपनी काली, कराली आदि रुचिकर शिखाओंके द्वारा देवोंके पास हवि ले जाते हैं । वह उनके साथ हमारे यज्ञमें पधारें ।

१८९ सूक्त

सूर्य वा सार्पराज्ञी देवता। सार्पराज्ञी ऋषिका। गायत्री छन्द।

आयं गौः पृश्निरक्रमीदसदन्मातरं पुरः। पितरञ्च प्रयन्त्स्वः ॥१॥
अन्तश्चरति रोचनास्य प्राणादपानती। व्यख्यन्महिषो दिवम् ॥२॥
त्रिंशद्धाम वि राजति वाक् पतङ्गाय धीयते। प्रति वस्तोरह द्युभिः ॥३॥

१९० सूक्त

सृष्टि देवता। मधुच्छन्दाके पुत्र अघमर्षण ऋषि। अनुष्टुप् छन्द।

ऋतं च सत्यं चाभीद्धात्तपसोऽध्यजायत।
ततो रात्र्यजायत ततः समुद्रो अर्णवः ॥१॥
समुद्रादर्णवादधिसंवत्सरो अजायत।
अहोरात्राणि विदधद्विश्वस्य मिषतो वशी ॥२॥
सूर्याचन्द्रमसौ धाता यथापूर्वमकल्पयत्।
दिवं च पृथिवीं चान्तरिक्षमथो स्वः ॥३॥

---

१ गतिपरायण और तेजस्वी सूर्य उदयाचलको प्राप्त करके अपनी माता पूर्व दिशाका आलिङ्गन करते हैं। अनन्तर वह अपने पिता आकाशकी ओर जाते हैं।

२ इनकी देहमें दीप्ति विचरण करती है। वह दीप्ति इनके प्राणके बीचसे निकल कर आ रही है। महान् होकर इन्होंने आकाशको व्याप्त किया।

३ सूर्यके तीस स्थान (मुहूर्त =दो दण्ड) शोभा पाते हैं। गतिपरायण सूर्यके लिये स्तुति उच्चारित की जा रही है। वह प्रतिदिन अपनी किरणोंसे विभूषित होते हैं।

१ प्रज्वलित तपस्यासे यज्ञ और सत्य उत्पन्न हुए। अनन्तर दिन-रात्रि उत्पन्न हुए और इसके अनन्तर जलसे पूर्ण समुद्रकी उत्पत्ति हुई।

२ जल-पूर्ण समुद्रसे संवत्सर उत्पन्न हुआ। ईश्वर दिन-रात्रिको बनाते हैं। निमिष आदि-वाले सारे संसारके वह स्वामी हैं।

३ पूर्व कालके अनुसार ही ईश्वरने सूर्य, चन्द्रमा, सुखकर स्वर्ग, पृथिवी और अन्तरिक्षको बनाया।

१९१ सूक्त

प्रथमके अग्नि और शेषके संज्ञान (ऐकमत्य) देवता । संवनन ऋषि । अनुष्टुप् और त्रिष्टुप् छन्द।

संसमिद्युवसे वृषन्नग्ने विश्वान्यर्य आ ।
इलस्पदे समिध्यसे स नो वसून्या भर ॥१॥

संगच्छध्वं संवदध्वं संवो मनांसि जानताम् ।
देवा भागं यथा पूर्वे सञ्जानाना उपासते ॥२॥

समानो मन्त्रः समितिः समानी समानं मनः सहचित्तमेषाम् ।
समानं मन्त्रमभिमन्त्रये वः समानेन वो हविषा जुहोमि ॥३॥

समानी व आकूतिः समाना हृदयानि वः ।
समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति ॥४॥



१ अग्नि, तुम कामवर्षक और प्रभु हो। तुम विशेष रूपसे प्राणियोंमें मिश्रित हो। तुम यज्ञ-वेदीपर जलते हो। हमें धन दो।

२ स्तोताओ, तुम मिलित होओ, एक साथ होकर स्तोत्र पढ़ो और तुम लोगोंका मन एकसा हो। जैसे प्राचीन देवता, एक-मत होकर, अपना हविर्भाग स्वीकार करते हैं, वैसे ही तुम लोग भी, एक-मत होकर, धनादि ग्रहण करो।

३ इन पुरोहितोंकी स्तुति एकसी हो, इनका आगमन एक साथ हो और इनके मन (अन्तःकरण) तथा चित्त (विचारजन्य ज्ञान) एकविध हों। पुरोहितो, मैं तुम्हें एक ही मन्त्रसे मन्त्रित (संस्कृत) करता हूं और तुम्हारा, साधारण हविसे, हवन करता हूं।

४ यजमान-पुरोहितो, तुम्हारा अध्यवसाय एक हो, तुम्हारे हृदय एक हों और तुम्हारा अन्तःकरण (मन) एक हो। तुम लोगोंका सम्पूर्ण रूपसे संघटन हो।

अष्टम अष्टक समाप्त

सरल-हिन्दी-टीका-सहित ऋग्वेदसंहिता समाप्त

ओं तत् सत्

विवाहविषये

१०.फ. ऋश्रु.६.१. कन्यादान और पर्दा.

७-३२.११ [illegible] :—

८-१२५- [illegible]!

